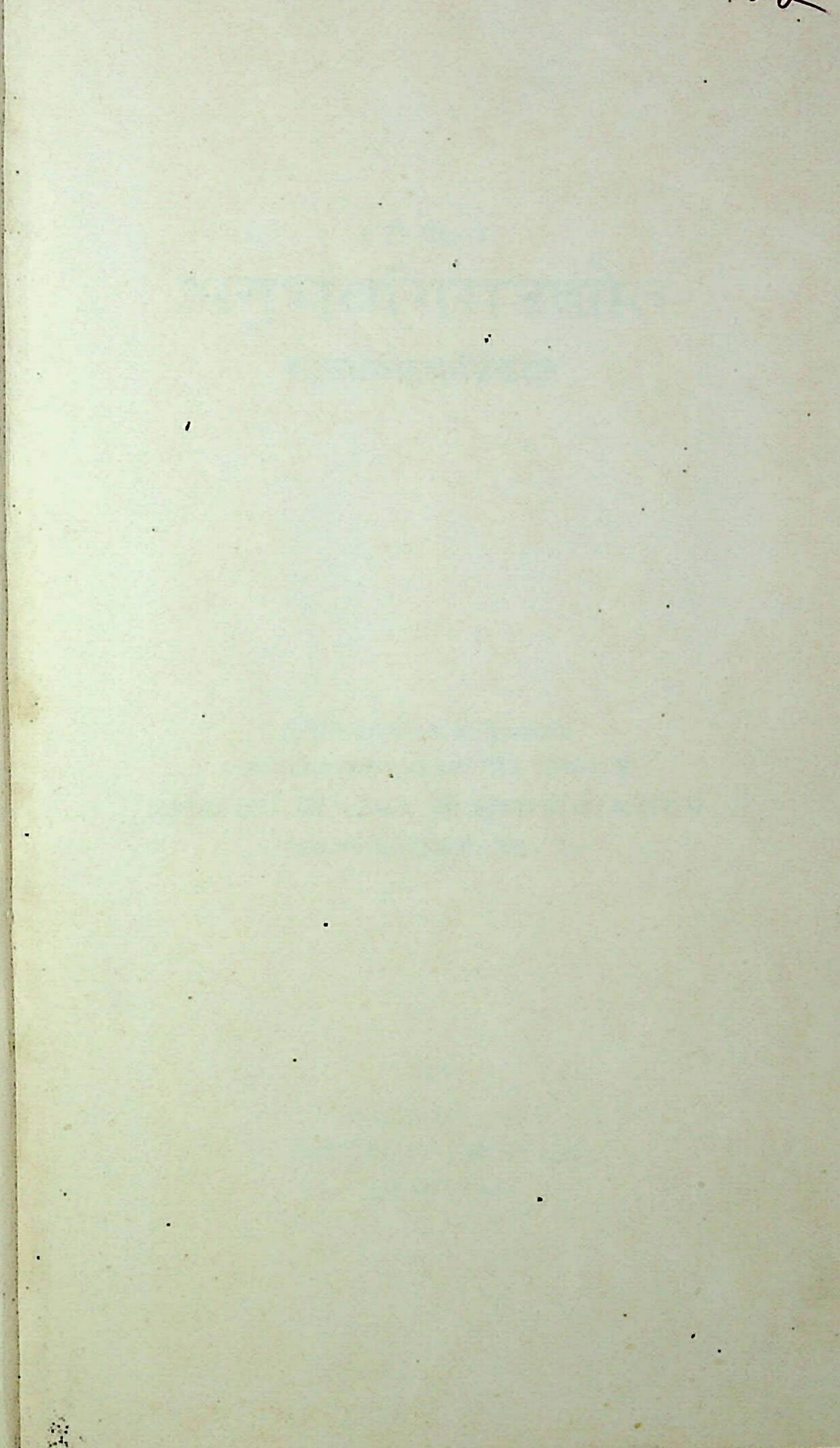
ॐ नमः श्रीमते हरिरामदासाय

श्रीरामस्नेहधर्मप्रकाश

आचार्य पीठ
श्री रामधाम सींथल
सींथल, बीकानेर





॥ श्री हरिः ॥

अनुभवगिराउद्योत

श्रीरामस्नेहधर्मप्रकाश

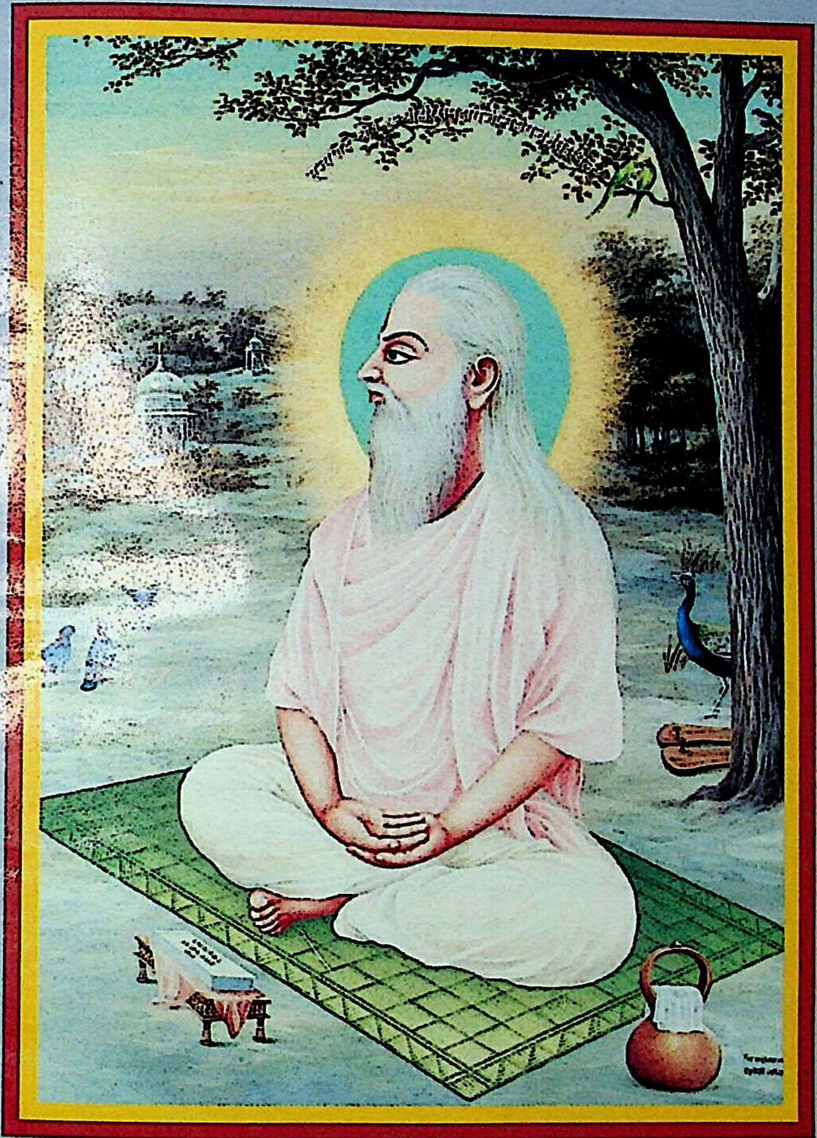
द्वितीय संस्करण के प्रकाशक
रामस्नेहिसम्प्रदायआचार्य पीठ सींथल के
दशमाचार्य श्री १००८ श्री क्षमारामजी महाराज
व्याकरणायुर्वेदाचार्य, एम० ए०

काल
रामस्नेह दिव्यवत्सर १०८८१
विक्रम संवत् २०५१, ईस्वी सन् १९९४
द्वितीयावृत्ति १५००

आदि प्रकाशक
रामस्नेहिसम्प्रदाय आचार्य पीठ सींथल के
सप्तमाचार्य श्री १००८ श्री चौकसरामजी महाराज
काल
रामस्नेहिदिव्यवत्सर १०८१४
विक्रम संवत् १९८७ ईस्वी सन् १९३१
प्रथमावृत्ति १०००

पुस्तक प्राप्तिस्थान
१. श्रीरामधाम सींथल
पो० सींथल
जिला बीकानेर (राज०)
२. श्री आनन्दाश्रम, बीकानेर (राज०)

मुद्रक
वाराणसी एलेक्ट्रानिक कलर प्रिण्टर्स प्रा० लि०, चौक, वाराणसी



पूज्यपाद अनन्तश्री विभूषित श्री हरिरामदासजी महाराज
श्री रामस्नेहि सम्प्रदायाद्याचार्य सिंहस्थल

॥ श्रीः ॥

ॐनमः श्रीमद्धरिरामरामदासेभ्यः ।

हरिया रत्ता तत्तका मतका रत्ता नाहिं ।
मतका रत्ता जो फिरै, तहँ तत पायो नाहिं ॥
भेद न जानै वेदको, वाच सुनावै वेद ।
हरिया भेदै भेदकों, वेद करै सब छेद ॥
दारकमें पावक वसै, यों आतम घट माहिं ।
हरिया पयमें घृत्तहै, विन मथियाँ कछु नाहिं ॥
ज्ञान ब्रह्मकी दृष्टि है, क्रिया जु ध्यान स्वरूप ।
जनहरिया मिल एकठा, आतमतत्त्व अनूप ॥
हरिया निर्गुण मूल है, सगुण जु शाखा पान ।
भक्ति बीज फल मुक्ति है, और धर्म सब आन ॥

(श्रीहरि० वाक्यम्)

रामनाम ततसार है, सबहीको आधार ।
रामा सुमरों रामकों, मेटो विषय जँजार ॥
दुनियाँ चाहै सुक्खकों, सुख सबही है झूठ ।
रामदास जो सुक्ख है, तासों रहिया रूठ ॥
हंसः सोहं जहँ नहीं, जहँ नहिं श्वासोच्छ्वास ।
विष्णु ब्रह्मा शिव शेष नहिं, जहँ है ब्रह्म विलास ॥
जीव शीव मेला भया, मिले ओत अरु प्रोत ।
रामा साँई एक है, जहाँ ब्रह्म निज जोत ॥
सलिल समाणा सिन्धुमें, सिंधु सलिल मिल एक ।
रामदास केवल मिल्या, जहँ कोई रूप न रेख ॥

(श्रीराम० वाक्यम्)

हरि वरषा सर भावमें, निजमन सीपि सदाय ।
गुरुसमाज स्वातीनक्षत्र, मुक्ता क्यों नहिं थाय ॥
अन्योअन्याभावमें, कारज अपनी दौर ।
प्रागभाव आत्यन्त मिल, गुरु सिद्धान्त पद ठौर ॥

(श्रीदयालु० वाक्यम्)

रामस्नेहीलक्षण

छप्पय

मिलतां पारख प्रसिद्ध विमल चित रामसनेही ।
उर कोमल मुख निर्मल प्रेम प्रवाह विदेही ॥
दरसरण परसण भाव नेमनित श्रद्धा दासा ।
साच वाच गुरूज्ञान भक्ति प्रणमत इक आसा ॥
देह गेह सम्पति सकल हरि अर्पण परमानिये ।
जनरामा मन वच कर्म रामस्नेही जानिये ॥१॥
खान पान पहिरान निर्मली दशा सदाई ।
सात्विक लेत आहार हिंसा करिहै न कदाई ॥
नीर छाण तन वरत दया जीवां पर राखै ।
बोलै ज्ञान विचार असत कबहू नहि भाखै ॥
साधु संगति पणव्रत सुद्दढ नेम प्रेम दासा लियां ।
रामस्नेही रामदास तन मन धन लेखै कियां ॥२॥
श्रद्धा सुमरण राम मीन मन रामसनेही ।
गुणग्राही गुणवन्त लाय लेखै हरि देही ॥
अमल तंबाखू भांग तजै आमिष मद पानं ।
जुआ द्यूतका कर्म नारि पर माता जानं ॥
साच शील क्षमा गहै राम राम सुमरण रता ।
रामा भक्ती भाव दृढ रामस्नेही ये मता ॥३॥

(श्रीदयालुमहाराज)

॥ श्रीहरिः॥

निवेदन

कोटिशः धन्यवाद है उन जगदाधार जगन्नियन्ता सर्वेश्वर परब्रह्म राम को जिनकी प्रेरणा से रामस्नेह-धर्मावलम्बी महानुभावों के लाभार्थ और सद्धर्म के प्रचारार्थ श्रीसद्गुरुवाणी के प्रथम पाँच बार छपजाने के अनन्तर अब फिर कई विशेष अंग छपवाकर प्रकाशित करने का सुअवसर प्राप्त हुआ । परञ्च शुद्ध करने का जैसा मनोरथ था वह सफल नहीं हुआ ।

आशा है समस्त महात्मा व सुज्ञ विज्ञ सज्जनगण इस अज्ञ की अल्पज्ञता को न देख अपनी कृतज्ञताका परिचय देकर मुझको विशेष आभारी करेंगे ।

दृष्टं किमपि लोकेऽस्मिन्न निर्दोषं न निर्गुणम् ।
आवृणुध्वमतो दोषान्विवृणुध्वं गुणान् बुधाः ॥१॥

विनीत

चौकसराम साधुः

द्वितीय संस्करण के सम्बन्ध में

रामस्नेह धर्म प्रकाश का प्रथम संस्करण सभी के लिए अत्यन्त उपादेय रहा । धीरे-धीरे इसकी प्रतियाँ कम होते होते अति सीमित रह गईं । अतः इसका द्वितीय संस्करण पृष्ठ सं० ४४ से अन्त तक ज्यों का त्यों आफसेट से छपवाया गया है । इस संस्करण में परम श्रद्धेय स्वामीजी श्री रामसुखदासजी महाराज द्वारा लिखित 'नम्र निवेदन' इस ग्रन्थ की महिमा बताने वाला है । साथ ही साधु श्री नवलरामजी शास्त्री साहित्यायुर्वेदाचार्य एम० ए० ने आचार्य परिचय एवं नादवंश परिचय का सामयिक विस्तार कर प्रशंसनीय कार्य किया है । श्री राधेश्यामजी खेमका वाराणसी वालों ने इसका पुनर्मुद्रण का दायित्व अपने पर लेकर हमकों निश्चिन्त किया । साथ ही दिवंगत श्री हरिप्रकाश जी ने अपने जीवनकाल में इसे प्रेस में देकर आर्थिक रुकावट को दूर किया । हमें खेद हैं कि उनके जीवन काल में इसका यह स्वरूप सामने नहीं आ पाया । अन्त में अन्य अवशिष्ट कार्यों के लिए साधु रामपाल रामस्नेही को हार्दिक शुभाशीर्वाद । *"सदा स्वस्त्यस्तु सर्वेषाम्"*

महन्त क्षमाराम शास्त्री

रामस्नेहि सम्प्रदाय सींथल पीठाचार्य

नम्र निवेदन

सम्पूर्ण ज्ञान का मूल वेद है । वेद अनादि है । यह अपौरुषेय है अर्थात् किसी का बनाया हुआ नहीं है, प्रत्युत ऋषियों के हृदय में प्रकट हुआ है । ऋषियों ने वेद के मन्त्रों को देखा है–'ऋषयो मन्त्रद्रष्टार:'। वेद अनादिकाल से एक ही था । बाद में श्रीवेदव्यासजी महाराज ने उसके चार विभाग कर दिये और उन्हें अलग-अलग शिष्यों को पढ़ाया । वेद के बाद स्मृतियाँ प्रकट हुईं । स्मृतियों को प्रकट करने वाले अनेक ऋषि हुए । श्रुति (वेद) और स्मृति–दोनों ही नित्य हैं । स्मृति के अनुसार दर्शनशास्त्रों की रचना हुई । दर्शन का अर्थ है–स्वयंका अनुभव । दर्शन अनेक हैं, जिनमें छ: दर्शन मुख्य माने जाते हैं–महर्षि गौतम का 'न्यायदर्शन', महर्षि कणादका 'वैशेषिकदर्शन', महर्षि पतंजलि का 'योगदर्शन', महर्षि कपिल का 'सांख्यदर्शन', महर्षि जैमिनी का 'पूर्वमीमांसादर्शन' और महर्षि वेदव्यासका 'उत्तरमीमांसादर्शन' (वेदान्तदर्शन अथवा ब्रह्मसूत्र) । न्यायदर्शन और वैशेषिकदर्शन मुख्यता से लौकिक पदार्थों का विवेचन करने वाले हैं । योगदर्शन और सांख्यदर्शन लौकिक और अलौकिक दोनों विषयों का विवेचन करने वाले हैं । पूर्वमीमांसा और उत्तरमीमांसा अलौकिक विषय का विवेचन करने वाले हैं । इन दोनों को 'मीमांसा' कहने का तात्पर्य है कि इनमें अपने विचार की मुख्यता नहीं है, प्रत्युत वैदिक मन्त्रोपर विचार की मुख्यता है ।

इसके बाद सन्तमत आता है । सन्त अनेक हुए हैं । प्रत्येक प्रान्त में बड़े-बड़े विलक्षण सन्त हुए हैं । जैसे आवश्यकता पड़ने पर भगवान् प्रकट होते हैं, ऐसे समय-समय पर सन्त प्रकट हुआ करते हैं । सन्तों की वाणी में निर्गुण-निराकार परमात्मा का विशेष वर्णन आता है । कारण कि जब मुसलमानों का शासन था, तब वे मूर्तियों को तोड़ते थे । अत: उस समय कबीर जी आदि सन्तों ने लोगों को बताया कि हमें मूर्तिपूजा की जरूरत नहीं है; क्योंकि हमारे परमात्मा केवल मूर्ति में ही सीमित नहीं हैं, प्रत्युत निराकार रूप से सब जगह व्याप्त हैं । सन्तों का तात्पर्य मूर्ति पूजा का खण्डन न होकर लोगों को किसी तरह से परमात्मा में लगाने का था । जिस समय जैसी आवश्यकता होती है, उस समय सन्त-महापुरुष प्रकट होकर वैसा ही कार्य करते हैं ।

जो वास्तविक तत्त्व स्वत: सिद्ध तथा सबको नित्यप्राप्त है, उसको सन्तों ने सहजावस्था अथवा सहज समाधि नाम से कहा है । उसको प्राप्त करना ही मनुष्यमात्र का चरम ध्येय है । सन्तों में कबीर साहेब ने इसका विशेष वर्णन

किया है; जैसे– 'साधो सहज समाधि भली' आदि । रामस्नेही सम्प्रदाय के आदि आचार्य श्रीहरिरामदासजी महाराज की वाणी में भी सहजावस्था का विशेष वर्णन आया है; जैसे–

सहजां मारग सहज का, सहज किया विश्राम ।
हरिया जीवरु सीव का, एक नाम अरु ठाम ॥

सहज तन मन सहज पूजा । सहज–सा देव नहीं और दूजा ॥

उन्होंने अपना परिचय भी इस प्रकार दिया है–

हरिया जैमलदास गुरु, राम निरंजन देव ।
काया देवल देहरो, सहज हमारे सेव ॥

रामस्नेही सम्प्रदाय के तीन मुख्य विभाग माने जाते हैं–१. सींथल तथा खेड़ापा २. रैण और ३. शाहपुरा । सींथल में श्रीहरिरामदास जी महाराज तथा खेड़ापा में उनके शिष्य श्रीरामदास जी महाराज हुए । रैण में श्रीदरियाव जी महाराज हुए । शाहपुरा में श्रीरामचरण जी महाराज हुए । रामस्नेही सम्प्रदाय का आविर्भाव 'सींथल' में हुआ । श्री हरिरामदास जी महाराज को श्रीजैमलदासजी महाराज से दीक्षा मिली थी । प्रस्तुत ग्रन्थ 'श्रीरामस्नेहधर्मप्रकाश' में ये सब बातें विस्तारपूर्वक वर्णित हैं ।

वेद, स्मृति, दर्शन और सन्तमत–इन सबका तात्पर्य जीव के कल्याण से है । वेद, स्मृति और दर्शन तो कठिन हैं, पर सन्तवाणी सुगम है । सन्तवाणी में वेद, स्मृति और दर्शन–सबका सार आ जाता है । सन्तों ने सीधी–सरल प्रान्तीय भाषा में बड़ा गहरा तत्त्व लिखा है, जिससे मनुष्य सुगमता से अध्यात्मतत्त्वको प्राप्त कर सकता है । पाठकों से विनम्र निवेदन है कि वे प्रस्तुत ग्रन्थका अध्ययन करके सन्तवाणी के अनुसार अपना जीवन बनायें और अपने मनुष्य जन्म को सार्थक करें ।

विनीत
स्वामी रामसुखदास

नियमपंचदशी

अर्थात्

रामस्नेहीधर्म के पन्द्रह नियम ।

(१) निर्गुण निराकार एक रामजी का ही इष्ट रखना और उन्ही निर्लेप निरंजन परमेश्वर की पराभक्ति से उपासना करनी ।

(२) वेद, श्रुति, स्मृति, गुरुवाणी, शास्त्र, आर्षग्रंथ, पुराण, आप्तवाक्यों को मानना और सद्विद्या का प्रचार करना ।

(३) पाठ पूजन संध्यावंदनादि नित्य कर्मों का पालन करना और शरीर के सारे सुखों को छोड़कर निरंतर रामस्मरणपूर्वक योगाभ्यासी होना ।

(४) सद्गुरु और सन्तों की आज्ञा मानना उनको ईश्वररूप जानना और सत्संग को परम लाभ समझना ।

(५) अपने सर्व व्यवहारों को ईश्वराधीन जानना और हिंसारहित सत्य धर्म युक्त सात्विक उद्यमी होना ।

(६) भोजनाच्छादन की चिन्ता न करना और न किसी से याचना करना केवल सर्व शक्तिमान एक ईश्वर का ही आश विश्वास रखना ।

(७) ईश्वर के अर्पण किया हुआ प्रसाद ग्रहण करना आन देवताओं के प्रसाद का स्पर्श तक न करना और न आन देवताओं को देवत्वबुद्धिकर मानना ।

(८) शील, सन्तोष, त्याग वैराग्य, क्षमा, सरलता, धृति आदि धारण करना और हित मित सत्यभाषी होना ।

(९) काम, क्रोध, लोभ, मोह, राग, द्वेष, अभिमान, ईर्षा, निंदा आदिका त्याग कर अन्तःकरण शुद्ध रखना । संयम नियम से रहना और स्त्रीमात्र को माता बहिन समझना ।

(१०) जल छान कर पीना, रात्रि में भोजन न करना, जीव रक्षार्थ पाँव देखकर धरना और चातुर्मास में विहार न करना अर्थात् एक जगह रहना ।

(११) दूसरों के सुख दुःख हानि लाभ को अपनी ही तरह समझना और सबकी उन्नति में अपनी उन्नति मानना ।

(१२) मानापमानरहित होकर तनमन बचन से परोपकार करना और संपूर्ण प्राणी मात्र को एक ही आत्मरूप से देखना ।

(१३) भाँग, तम्बाकू, अफीम, पोस्त, गाँजा, चरस, सुल्फा आदि नशों से तथा मांस, मदिरा, जूआ आदि सर्व व्यसनों से रहित होना और व्यसनी व बुरे पुरुषों की संगति से बचना ।

(१४) बाह्याडंबर में रत न हो शुक्ल अथवा सात्विकी रंग रंजित वस्त्र धारण करना और हर समय ईश्वर को याद करते रहना ।

(१५) भ्रमात्मक भीरुता में न फंस कर सद्‌गुरुद्वारा प्राप्त वेदानुकूल सत्पथ का अनुसरण करना ।

(गुरुवाणी से उद्‌धृत)

फल तरुतें तूटाँ, पछै, वथै न विलगे जाय ।
गुरुवेमुख नहिं नीपजै, भावै गोविन्द गाय ॥१॥
गुरूधर्म सिखका किया, गुरुका किया न मान ।
जनहरिया गुरुधर्मको, इसे आरसे जान ॥२॥
हरिया करणी क्या करै, गुरु से वेमुख थाम ।
तोरे तूटी वरत ज्यों, खपड़खत्त को जाय ॥३॥

(श्रीहरि, वाक्यम्)

तुम सद्गुरु मैं शिष्य हौं, मेरा किया न होय ।
सधर देख शरणों लियो, भव डर डारों खोय ॥४॥

(श्रीराम० वाक्यम्)



वाणी-विषय-सूची

(प्रथमपरिच्छेदः)

(द्वितीयपरिच्छेदः)

---

१. करुणासागर में ५२ कथाएँ और २ दृष्टान्त हैं ।

(तृतीयपरिच्छेदः)

(संग्रह-सार)

---

१ अज्ञात वश कोई टहनी टूट गई हो तो अपराध क्षमा करें ।

राग रागनियों के गाने का समय

(चार बजे से सूर्योदक तक)
विभास, जोगिया, ललित, कालिंगड़ा, भैरव ।
(सूर्योदय से १० बजे तक)
आसावती, टोडी, भैरवी, विलावल ।
(दिन के ११ से २ बजे तक)
सूहासुघराई, सारंग, भीमपलासी, जिंझोटी ।
(दिनके ३ बजे से सूर्यास्त तक)
जयश्री (जैतश्री) धनाश्री, पीलू, पूरबी, पूरिया, पहाड़ी, गौडी ।
(सूर्यास्त से लेकर रात्रि के १० बजे तक)
कल्याण, ईमनकल्याण, केदार हमीर, खम्बायच, पहाड़, नट, छायानट, भोपाली ।
(रात्रि के १० बजे से १२ बजे तक)
जैजैवन्ती, कान्हड़ा, माढ़, गिरनारी, देश, सोरठ, विहाग, मारू ।
(रात्रि के १२ बजे से ४ बजे तक)
मालकोंस, सोहनी, परज ।

॥ ॐ नमः श्रीमदाचार्येभ्यः ॥

परिचय

नित्यं शुद्धं निराभासं निराकारं निरंजनम् ॥
नित्यबोधचिदानंदं गुरुं ब्रह्म नमाम्यहम् ॥१॥
यावदायुस्त्रयो वन्द्या वेदान्तो गुरुरीश्वरः ॥
आदौ ज्ञानप्रसिद्ध्यर्थं कृतघ्नत्वापनुत्तये ॥२॥

श्रीसंप्रदायाचार्य[1] श्रीरामानुजस्वामी की २३ वीं पद्धति में श्रीरामानंदस्वामी हुए । और इनकी ११ वीं पद्धति में कोडमदेसर (बीकानेर) के रामानंदी वैष्णव महंत श्रीचरणदासजी महाराज के शिष्य श्रीजैमलदासजी महाराज हुए । आप सांवतसर ग्राम में विराजमान होकर परंपरानुसार वैष्णवधर्म की मूर्तिपूजनादि सगुणोपासना बाल्यावस्था में ही करने लगे । सं० १७६० के चौमासे में दोपहर के समय श्रीगोपालजी के मंदिर में आप श्रीमद्भगवद्गीता की कथा कर रहे थे । उसी समय परब्रह्मराम पथिक का रूप धारण कर वहाँ पधारे और श्रीजैमलदासजी महाराज को सम्बोधन करके कहा "अरे जैतराम[2] ! जल ला ।" आपने पथिक की ओर देखा तो अलौकिक दिव्यमूर्ति योगिराज दिखाई दिए । आपने झट अलांबु (तूम्बी) पात्र में जल हाजर किया । योगिराजने प्रेमदत्त जल का पानकर कहा कि भाई ! अगले ग्राम जाने का मनोरथ है, रास्ता बतावें ।

यों कहकर आप रवाने हो गये और जैमलदासजी महाराज को साथ लेलिये । फिर उनको एकांत में शमी (खेजडी) वृक्ष के नीचे ले जाकर कहा "अवधू तुम क्या साधन करते हो ?" जैमलदासजी महाराज ने अपना आद्योपांत सारा वृत्तांत कह सुनाया । भगवान् ने कहा, इनके करने से तुमको

---

१. संप्रदाय चार हैं:-

श्रीसंप्रदाय, शिवसंप्रदाय, सनकादिकसंप्रदाय, और ब्रह्मसंप्रदाय । जिनके चार ही आचार्य हैं ।

श्रीरामानुजस्वामी, श्रीविष्णुस्वामी, श्रीनिम्बार्कस्वामी, श्रीमध्वाचार्य ।

रमा पद्धति रामानुज, विष्णुस्वामी त्रिपुरारि ।
निम्बादित्य सनकादिका, माधव गुरुमुखचारि ॥१॥

२. दीक्षा के प्रथम का नाम है.

कुछ निश्चय हुआ या नहीं ? आपने कहा, "भगवन् ! आपही बतलावें"। तब महापुरुष परब्रह्मराम ने शुद्धान्त:करण देख ब्रह्म की प्राप्ति के लिये योग-क्रियासहित मूलतारकमंत्रका उपदेश दिया । पूजनादि सब क्रियाकांड छुड़वाकर आप वहीं अंतर्धान हो गये । इस बात का जैमलदासजी महाराज को बड़ा आश्चर्य हुआ और उनकी चारों ओर बहुत खोज की परंतु कुछ पता नहीं मिला । फिर आप मंदिर में पधारे तो भी आपको यही चिन्ता थी कि मुझे कहीं स्वप्न तो नहीं आ गया है ! अथवा किसी ने मुझको धोखे से छला है । इसी विचार में उन्होंने कुछ न खाया न पिया निराहार ही रहे । निद्रा भी नहीं आई । अर्धरात्रि हो गई तब विचार आया "स्वयम् ईश्वर ने ही ऐसा किया है । परंतु मेरा ऐसा भाग्य कहाँ ? मैंने ऐसा कौन सा जप तप किया है जिससे ऐसा होता" । उसी समय आकाशवाणी हुई "हे बालक ! तू मेरी खोज में इतना आतुर क्यों हो रहा है ? साक्षात् सच्चिदानन्द अविनाशी पूर्णब्रह्म प्रकाशमान महापुरुष मैंने ही दिव्यरूप धरकर उपदेश और दर्शन दिए हैं और सत्य कहता हूँ, आदि अन्त में तू मेरा ही जन है । संकल्प विकल्प छोड दे । तेरा अन्त:करण शुद्ध हो गया है । इसलिये ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति के लिये सगुणउपासना को छोड कर ध्यानावस्थित हो और राम राम रटता हुआ निर्गुण भक्ति कर" । इस आकाशवाणी को सुनते ही चित्त में शान्ति आ गई और भेष[1] पंथका सारा झमेला छोड़कर योगाभ्यासपूर्वक राम राम रटन करते हुए योगारूढ़ हो गए । और अलौकिक वैराग्योत्पादक निर्गुण पद वाणी का वर्णन किया । दर्शनार्थ यात्रियों की भीड़ अधिक रहने से आप खिन्न होकर दुलचासर पधार गए । कुए पर एक हजार प्रेत रहते थे उनकी गति कर आप धोरे (टीबे) पर निवास करने लगे । यहाँ पर भी भीड़ अधिक होने लगी तब तो आप रोड़े ग्राम में पधार गए और यहीं माघ शुक्ला ११ संवत् १८१० को पांचभौतिक शरीर को त्यागकर परमधाम पधारे ।

भगवद्दर्शनोपदेश से पहले आपके एक रामदासजी नामक शिष्य हुए थे जो दीक्षा लेते ही अयोध्याजी की तरफ चले गए और आपने जीवन

१. भेषपंथ का संग तज दीया ।
होय निरंतर हरिपद लीया ।
(श्रीराम, परची विश्राम ६)

का सारा समय भगवद्भक्ति आदि सगुणोपासना में उधर ही बिताया । वृद्धावस्था होने पर आप दुलचासर पधारे उस समय गुरुदेव तो परमधाम पधार ही चुके थे । फिर आपने यहाँ पर एक ठाकुरमंदिर बनवाया और उनकी सेवा पूजा में लवलीन रहने लगे । अकस्मात् एक दिन मंदिर के बारे में एक राजपूत से बोल चाल हो गई तब केवल मंदिर की सेवा के लिए अपने एक शिष्य को वहाँ छोड कर आप रोड़े को मुख्य गुरुस्थान समझकर वहीं पधारे और वहाँ भगवन्मंदिर बनवाया, भगवत् सेवा में समय व्यतीत किया और दो चार नये शिष्य भी हो गए । आपके परलोक पधारने पर रोड़ा दुलचासर में आपकी दो गद्दी हुई जो अभी तक चली[1] आती हैं और उनके गद्दीघर रामानंदी बैरागियों में (रामावत साधुओं में) महंत कहलाते हैं । गुरुपरंपरा से ये दोनों सिंहथल के गुरुस्थान हैं और सिंहथल में जब दोनों स्वामीजी महाराज को पधराते हैं तब बधावणा भेट पूजादि क्रम प्राचीन रीतिअनुसार किया जाता है ।



१. विक्रम संवत् १९८७ में इन पंक्तियों के लिखते समय दोनों ही गद्दी-परम्परायें कायम थी, किन्तु रोड़ा गद्दी की परम्परा संवत् २०१० तक एवं दुलचासर गद्दी की परम्परा संवत् २०२७ तक ही चल पाई । हमें खेद है कि वर्त्तमान में दुलचासर एवं रोड़ा दोनों ही जगह कोई गद्दीधर नहीं है ।

अथ सिंहस्थल आचार्य परिचय

१. श्रीहरिरामदासजी महाराज

बीकानेर राज्यांतर्गत सिंहथल नामक ग्राम के ब्राह्मण भाग्यचंदजी जोशी के घर आपने शुभनक्षत्र में शरीर धारण किया। पिता ने शास्त्रविहित संपूर्ण संस्कार कराकर शुभनाम श्रीहरिरामदासजी महाराज रक्खा। अत्युग्र बुद्धि होने से बाल्यावस्था में ही वेदांतादि शास्त्रों में पारंगत हो गये और गणित (ज्योतिष) विद्या में प्रथमश्रेणी के पंडित गिने जाते थे। पूर्वजन्मोपार्जित पुण्यप्रभाव से छोटी अवस्था में ही योगांगों में योग्यता संपादन कर लेने के बाद किसी ब्रह्मनिष्ठ गुरुदेव के शरण होने की अभिलाषा प्रगट की तो रामसर ग्राम के उदयरामजी नामक सद्गृहस्थ ने आपको साथ लेजाकर दुलचासर ग्राम में श्रीजैमलदासजी[1] महाराज के दर्शन करवाये। आपने साष्टांग[2] दंडवत प्रणाम पूर्वक विनय[3] की और नम्रता के साथ श्रीजैमलदासजी महाराज के उपदेश से अपनी शंकाओं का

---

१. रामानन्द अनन्तानन्द कर्मचन्द देवाकर ।
पूरणमालवि शिष्य दामोदरदा स उजागर ॥
नारायण मोहनदास माधव मैदानी ।
ता शिष सुन्दर दास चरणदास निज ज्ञानी ॥
जिन जैमल प्रगटे नमो हरिरामदास के सब सुतन ।
रामदास वन्दन करत पदपङ्कज अनुचर यतन ॥१॥

२. साष्टांग दंडवत प्रणाम
दे पुनि पाँच प्रदक्षिणा, अष्ट* अंग परणाम ।
स्वामी जैमलदास के, परसे पद हरिराम ॥१॥

३. विनय—
धन्य धन्य मम भाग आज अनुराग दरस्सं ।
धन्य धन्य मम भाग मिले वैराग्यपुरुस्सं ॥
धन्य धन्य मम भाग प्रेम अरु क्षेम प्रकासं ।
धन्य धन्य मम भाग जाग भव भर्म विनासं ॥
धन्य आज मम जन्म धन्य तातें तुम दर्शन भयो ।
जा काज सकल पूछत फिरत सो मनबांछित फल लयो ॥१॥

---

१ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८
* उर शिर दृष्टी वचन मन पद कर जानु प्रमान ।
अष्ट अंग से होत है नमस्कार सविधान ॥१॥



पुज्यपाद अनन्तश्री हरिरामदासजी महाराज
श्रीरामस्नेहि सम्प्रदायाद्याचार्य सिंहस्थल
(प्राचीन चित्र से)



निवारण कर संवत् सत्रहसो के सईके में अर्थात् १८०० में आषाढ़ कृष्णा त्रयोदशी को दीक्षा धारण[1] की ।

श्रीगुरुदेव ने प्रसन्न हो आशीर्वाद[2] प्रदान किया । बाद आप आज्ञा मांग सिंहथल पधारे और नियम किया कि सिंहथल से दुलचासर जो ७ कोश है वहाँ पर संध्या होते ही श्रीगुरुदेवजी के पास चला जाना और रातभर गुरु सत्संगति कर प्रातः सूर्योदय से पहले ही वापिस आजाना। इस प्रकार छः मास बीत गये । श्रीगुरुदेव ने आपको कहा कि तुम अब वहीं पर भजन किया करो । पर आप माने नहीं तो दश दश दिन का नियम किया । इस के कुछ दिन बाद फिर गुरुदेव ने एक एक मास से आने की आज्ञा दी तो आपने हठ करना अनुचित समझ शिरोधार्य की और उसीपर चलते रहे । शिलोंछवृत्ति से निर्वाह कर भजन करते करते थोड़े ही काल में दशमद्वारसमाधिस्थ पूर्ण योगिराज हो गये । और जीवों के परमकल्याणार्थ वेद, वेदान्त, उपनिषद्, योगसारगर्भित अनुभववाणी का प्रकाश किया । आपके सैंकड़ों शिष्य हुए, अनेक परचे हुए, परन्तु विस्तार भय से थोड़े से लिखने में आते हैं ।

छप्पय

१. परा परम को धरम गुरु उर परम गुनायो ।
दे करमें परसाद राम निज मंत्र सुनायो ॥
नासा निरतहु सुरति आन घर एक हुयातें ।
जो जुगति की बात कही सब परम कृपातें ॥
उर भये जबहु मंगल परम, करम भरम सब कप्पिया ।
हरिरामदासकूं परमगुरु, यह उपदेश जु अप्पिया ॥१॥
मंत्र सजीवन जास, जो गिरिजाप्रति शिव कह्यो ।
श्रीगुरु जैमलदास, (सो) यह उपदेशजु अप्पयो ॥१॥

कुंडलिया

२. धन्य धन्य शिषधर्म यह, कहे निगम लछ जेम ।
परस्यो मम तुम उरन मध, परा परम जन प्रेम ॥
परा परम जन प्रेम, नेम नित क्षेम निवासा ।
बहुत बढै परताप मान, सत वचन सु दासा ॥
निज हरिजन दिनकर धरनि, गुरु रहै सो केम ।
धन्य धन्य शिषधर्म यह, कहे निगम लछ जेम ॥१॥

एक बार भजन कर रहे थे कि देवताओं की भेजी हुई एक अप्सरा परीक्षा के लिये आई और आपके पास बैठ गई । ध्यान से आप की आंख खुली तो मालूम हुआ कि छलने के लिये माया आई है तो आपने उसके उलटे हाथ की थाप मारी और पूर्ववत् ध्यानावस्थित हो गये ।

एकवार आपके शिष्य बिहारीदासजी महाराज से एक विद्वेषी निष्कारण द्वेष करने लगा तो आप अनुचित समझ वहाँ से एक कोश दूरी पर नापासर ग्राम में पधार गये । वहाँ पर ठाकुर देवीसिंह जी ने ग्रामसहित आपका बहुत स्वागत किया । पीछे से उस पुरुष के तीन पुत्र एक ही दिन में पंचत्व को प्राप्त हो गये और अग्नि के प्रकोप से घर धन सब स्वाहा हो गया । तब घबराकर विलाप[1] कलाप करने लगा । लोगों ने उसे समझाया कि यह फल महात्माओं से विद्वेष करने का है । सारे गाँव के लोग डरने लगे । तब तो करणीदान जी ने ढोल बजवाकर पाँचों वास इकट्ठे किये और उस को साथ लेकर नापासर आये और श्रीहरियानन्द जी महाराज के चरणों में पड़कर अपराध क्षमा कराकर वापस पधराये ।

बीकानेर शहर के दो वैश्य जिनका नाम नेतराम और मुरलीदास था, उन्होंने विचार किया कि रात ही रात में चलकर सिंहथल श्रीजी महाराज के दर्शन कर आवें । ऐसी सलाह कर घरवालों से कहदिया कि हम लक्ष्मीनाथ भगवान् के दरबार में ही आज जागरण करेंगे और सिंहथल का रास्ता लिया । बीकानेर से ९ कोश दूरी होने के कारण अर्धरात्रि को वहाँ पहुँचे । श्रीमहाराज ध्यानावस्थित हो चुके थे और दीपक रोशनी का कुछ भी प्रकाश नहीं था तो उनके लिये यह बहुत दुःख की बात हुई कि हम बिना दर्शन किये पीछे कैसे जाँय । श्रीजी महाराज ने उनकी ऐसी उत्कट इच्छा जान एक ऐसा दिव्य प्रकाश प्रकट किया कि वे आश्चर्य में भरगये और आपके दर्शन किये और स्तुति की । तब श्री महाराज ने उनसे फरमाया कि यह सब ईश्वर की माया है इसके विषय में किसी से कुछ मत कहना । इस आज्ञा को शिरोधार्यकर रातकी रात में वे दोनों पीछे बीकानेर आ गये ।

---

१. पुत्र मुवां अति दुख पर्‌यो, छीन भयो धन साज ।
घर छिरणाट्यो हुयगयो, कहा हम कियो अकाज ॥१॥
(श्रीहरि, परची)

स्वरूपसिंह जी नामक बारट जो दैवयोग से निर्धन हो गये थे अत: उनके घर वारादि सब गिरवी हो गये । जब बहुत ही दु:खित होकर आप श्रीजी महाराज के पास आये और अपना सारा वृत्तांत कह सुनाया तब श्रीमहाराज दयार्द्रचित्त हो उनको शिष्य बनाकर लक्ष्मीपात्र[1] बना दिया ।

एकवार सब शिष्यों ने आपके जीवितमहोत्सव (मेला) के लिये संवत् १८३४ चैत्रकृष्णा ७ का निश्चयकर सबको आमंत्रण दे दिया । मेले की सारी तय्यारियाँ होने लगी । अकस्मात् ऐसा हुआ कि आप १५ दिन पहले ही शरीर को छोड़ परलोक पधार गये । शिष्यों को बहुत दु:ख और चिंता हुई । उनकी ऐसी स्थिति देख आप भगवान् से एकमास[2] की आज्ञा लेकर पीछे पधारे तब तो सारे काम बड़ी धूमधाम से होने लगे । नियत तिथि पर सारा आमंत्रित समाज एकत्रित हो गया । और जिनको पानी का ठेका दिया गया था वे पर्याप्त पानी नहीं देसके । इसलिये लोगों को पानी बिना कष्ट होने लगा । शिष्यों ने ये सारी बातें श्रीगुरुदेव से अर्ज की । आपने फरमाया कि ईश्वर सब इच्छाओं को पूर्ण करेगा । और आप अपनी कुटी में ध्यान लगाकर विराजगये । इसके दो घड़ी बाद ही उत्तर की तरफ से एक छोटी सी बादली उठी और उसका इतना विस्तार हुआ कि उसने वहाँ बरस कर पानी ही पानी कर दिया । फिर महोत्सव पाँच दिन तक बड़े समारोह के साथ मनाकर सब लोग अपने अपने स्थान को चले गये । तब कई दिन के बाद आप अपनी प्रतिज्ञा को यादकर संवत् १८३५ मिति चैत्रशुक्ला ७ शुक्रवार को तीन पहर पहले से ही अन्त्येष्टि क्रिया की सारी सामग्री मंगवाली । दर्शनार्थ हजारों पुरुष इकट्ठे हुए । उस समय बीठू चारणों ने आपकी बड़ी सेवा बजाई । तब आपने जीवनदान् चारण को बुलवाया और उसे कुछ सैन से कहा । वह जहाँ अब देवल बने हैं उस स्थान को गया और वहाँ पर बेरी वृक्ष के पास एक रेत का दूँबा जो महोत्सव के पहिले

---

१. गायो गुण गोविंद को, पायो द्रव्य अमाप ।
आयो साच स्वरूप के, सतगुरु दयाल प्रताप ॥१॥
(श्रीहरि. परची)

२. कारज करवा कारणे, शरणायक रिछपाल ।
करवाचा करतार सूं, आये यहाँ दयाल ॥२॥
(श्रीहरि. परची)

ही से बनाथा वह ज्यों का त्यों मिला•। और जैसे ही उसके हाथ लगाया इधर श्रीजी महाराज ने इस पंच भौतिक शरीर को त्याग दिया । आपका विमान जो बनाया गया वह बडा बनगया । लोगों को चिंता हुई इसको बारणे (दरवाजे) में से किस तरह से निकालेंगे । तब पूर्ण विश्वस्त बीदा नामक सुथार ने कहा आपकी गती अपरंपार है "कैतो होय वारणो चोड़ो के बैकुंठ होय जावै सोड़ो" यों कह विमान बाहर पधराया तो झट बाहर आ गया । देवलोंके स्थान में पधराकर अगर कपूर घृत खोपरा (गिरी) चंदनादि से आपकी अन्त्येष्टि क्रिया की । चिता ठंडी होने पर नारायणदासजी महाराज की प्रार्थनानुसार अबोट एक नारियल एक गादी और पांच सात पटल दर्शनार्थ मिले । और भी ऐसे आपके अनेक परचे हुए ।

भूत ग्रह दुज पीडा पंगुल, अंधु मूक जड़ दीन ।
दृष्टि देखतां किये सुखारी, पर उपकार प्रवीन ॥१॥





श्री १००८ श्री मोतीरामजी महाराज
रामस्नेहि सम्प्रदायाचार्य सिंहस्थल (३)



२. श्रीहरिदेवदासजी महाराज

आप श्री बिहारीदासजी महाराज के शिष्य थे । श्री बिहारीदासजी महाराज अपने गुरुवर्य अनन्तश्री आद्याचार्य श्री हरिरामदासजी महाराज के जीवनकाल में ही परमधाम सिधार गये । अतः आद्याचार्य अनन्त श्री हरिरामदासजी महाराज के चैत्र शुक्ला ७ वि० सं० १८३५ के दिन परमधाम पधारने के पश्चात् वैशाख कृष्णा ८ वि० सं० १८३५ को आप रामस्नेही सम्प्रदाय सींथल पीठ के द्वितीय आचार्य पद पर अभिषिक्त किये गये । आपकी उस समय आयु केवल १० वर्ष के लगभग थी, किन्तु आद्याचार्य अनन्त श्रीहरिरामदासजीमहाराज ने आपके भावी जीवन की आध्यात्मिक विलक्षणताओं का पूर्वानुमान कर महाप्रयाण से पूर्व अपने सुयोग्य शिष्य श्री नारायणदासजीमहाराज को यहा आदेश दिया कि "हे नारायण ! यह हरिदेव बालक आगे चलकर महान् सन्त होने वाला है । तुम इसकी पूर्ण देखभाल करते रहना ।" अतः श्री नारायणदासजी महाराज ने आद्याचार्य श्री के आदेश का पालन कर तथा उससे अन्य सभी सन्तों को अवगत कराकर श्री हरिदेवदासजी महाराज को इस गद्दी पर आसीन कर दिया एवं स्वयं गुरु आज्ञा का पालन कर आजीवन आचार्य श्रीहरिदेवदासजी महाराज की सेवामें ही रहे ।

आचार्य श्रीहरिदेवदास जी महाराज एक उच्चकोटि के अनुभवी महापुरुष थे । आपकी अनुभववाणी भी अत्यन्त विद्वत्तापूर्ण एवं साधना पूर्ण होने के कारण गूढ़ भावार्थ को बताने वाली है । आपकी वाणी "सन्त साहित्य संगम, सींथल" से प्रकाशित है । आप फाल्गुन कृष्णा ५ विं० सं० १८६४ को ३६ वर्ष की अल्पायु में ही परमधाम पधार गये ।

३. श्रीमोतीरामजीमहाराज

अपने गुरु महाराज आचार्य श्रीहरिदेवदास जी महाराज के परमधाम पधारने के पश्चात् फाल्गुन शुक्ला ६ विं० सं० १८६४ के दिन आपको रामस्नेही सम्प्रदाय सींथल पीठ की गद्दीपर तृतीय आचार्य के रूप में प्रतिष्ठित किया गया । किन्तु काल की गति अत्यन्त विचित्र है, आप केवल दो वर्ष तक ही आचार्य पद पर विराजमान रहे और आषाढ़ कृष्णा १० विं०

१८६६ को परमधाम सिधार गये । आपके अति संक्षिप्त आचार्यकाल में भी कई शिष्य प्रशिष्य हुए ।

४. श्रीरघुनाथदासजी महाराज

आप आचार्य श्री मोतीरामजी महाराज के शिष्य थे । आचार्य श्रीमोती रामजी महाराज के परमधाम पधारने के समय आपकी भी आयु लगभग १० वर्ष की थी । अतः सारा समाज इस विषय में चिन्तित था कि इस पद पर अब किसे अभिषिक्त किया जावे । उस समय खैड़ापा के द्वितीय आचार्य श्री दयालुदासजी महाराज अपने गुरुधाम श्री सींथलधाम पधारे हुए थे । श्रीदयालुदासजी महाराज ने अपने दिव्य ज्ञान से आपकी छिपी प्रतिभा का ज्ञानकर समस्त समाज को आश्वस्त किया एवं आषाढ़ शुक्ला ११ विं० सं० १८६६ को इस पूजनीय गुरुगद्दी [श्री सींथलधाम की पाटगादी] पर आपको अभिषिक्त किया । इतना ही नहीं कहीं गुरुधाम की सेवा में कमी न रह जाये ऐसा विचारकर श्रीदयालुदासजी महाराज ने सूरसागर रामद्वारा के तत्कालीन परमहंस श्री परसरामजीमहाराज को आपकी सेवा में नियुक्त किया । आप कुशाग्र बुद्धि तो थे ही, अनुभवी महात्माओं का सानिध्य मिलने के कारण थोड़े ही दिनों में आप बहुत ही योग्य सन्त हो गये । धीरे-धीरे आपकी ख्याति दूर दूर तक फैलने लगी और आपके शिष्यों की संख्या में वृद्धि होने लगी । बड़े-बड़े राजा महाराजाओं के दरबारों में आपकी पधरावनी होने लगी । आपके भजन के प्रभाव से सभी आकृष्ट होने लगे । यह लिखने में हमें कोई संकोच नहीं है कि रामस्नेही सम्प्रदाय सींथल पीठ की खालशाही शाखाओं का विस्तार जितना आपके द्वारा हुआ है उतना और किसी से नहीं हुआ है । आपकी शाखा परम्परा में बड़े विलक्षण महापुरुष हुए हैं । अन्त में आप मिंगसर वदी १० वि० सं० १६०६ को इस नश्वर शरीर का त्यागकर परमधाम पधार गये ।

५. श्री चेतनदासजी महाराज

आचार्य श्री रघुनाथदासजी महाराज के परमधाम पधारने के पश्चात् उनके शिष्यों में किन्हें गद्दी पर प्रतिष्ठित किया जाय ? इस प्रश्न पर विचार



श्री १००८ श्री रघुनाथदासजी महाराज
रामस्नेहि सम्प्रदायाचार्य सिंहस्थल (७)





श्री १००८ श्री चेतनदासजी महाराज
रामस्नेहि सम्प्रदायाचार्य सिंहस्थल (५)





श्री १००८ श्री रामप्रतापजी महाराज
रामस्नेहि सम्प्रदायाचार्य सिंहस्थल (६)



करते हुए एक ज्योतिषी ने श्री चेतनदासजी महाराज के चरणों की रेखाओं और अंगुलियों की विलक्षणताओं को देखकर इन्हें ही विराजमान करने का निर्णय दिया । अत: मिंगसर सुदी ११ विं सं० १६०६ को श्री चेतनदास जी महाराज रामस्नेही सम्प्रदाय सींथल पाट गादी पर पंचम आचार्य के रूप में विराजमान किये गये । आप महान् तपस्वी महापुरुष थे । आपका प्रभाव खूब फैलने लगा । बीकानेर रियासत के सामन्तों ठाकुरों तक तो आपका यश फैला ही था, साथ ही खुद बीकानेर राजदरबार में भी आपका कई बार पधारना हुआ और तत्कालीन महाराजाओं ने आप से ज्ञान प्राप्तकर आत्मसंतोष का अनुभव किया । आपके जीवन में भगवद्भजन के कारण अनेक चामत्कारिक घटनाएँ घटीं, किन्तु आपने चमत्कारों एवं सिद्धियों को कोई महत्त्व नहीं दिया, प्रत्युक्त केवल भगवान् के भजन में ही लगे रहे तथा दूसरों को भी भगवान् के भजन के लिये ही उपदेश दिया । आपके समय में श्रीरामधाम सींथल में ''चेतन प्रासाद'' के नाम से निर्माण कार्य हुआ जो अपने समय की आश्चर्यमयी चित्रकारी से युक्त है । वि० सं० १६५० में आपने जोधपुर में चातुर्मास किया और इसी क्रम में आश्विन कृष्णा १४ विं० सं० १६५० के दिन आप जोधपुर में ही परमधाम पधार गये । आज भी जोधपुर में राम मोहल्ला रामद्वारा (नागौरीगेट) में आपके दाहसंस्कार स्थल पर छतरी बनी हुई है ।

६. श्रीरामप्रतापजी महाराज

अपने गुरु महाराज आचार्य श्री चेतनदासजी महाराज के परमधाम पधारने के पश्चात् आश्विन शुक्ला पूर्णिमा वि० सं० १६५० को रामस्नेही सम्प्रदाय सींथल पाटगादी पर षष्ठम आचार्य के रूप में आपको विराजमान किया गया । आप परम भजनान्दी महापुरुष थे । सन्तों की सेवा में आपकी अत्यन्त रुचि रहती थी । भगवद्भजन एवं सन्तसेवा के प्रभाव से आपका स्वंभाव अत्यन्त कोमल हो चुका था । सन्त समुदाय के साथ आप कई बार दूर दूर तक रामतों में पधारे एवं जनता में भगवद्भावों का प्रचार किया। आपके आचार्य काल में स्थानों का विस्तार भी पर्याप्त मात्रा में हुआ । आपके कई शिष्यों में सर्वश्री चौकसरामजी म०, श्रीपरमलदासजी, श्री रामजीदासजी, श्री श्रीरामजी, श्रीहरखारामजी, श्रीबलदेवदासजी आदि

प्रमुख शिष्य रहे हैं । आपने इस पद पर विराजमान रहकर ४६ वर्ष तक सुदीर्घ सेवा की। अन्त में ज्येष्ठ कृष्णा १ वि० सं० १६६६ को आप परमधाम पधार गये।

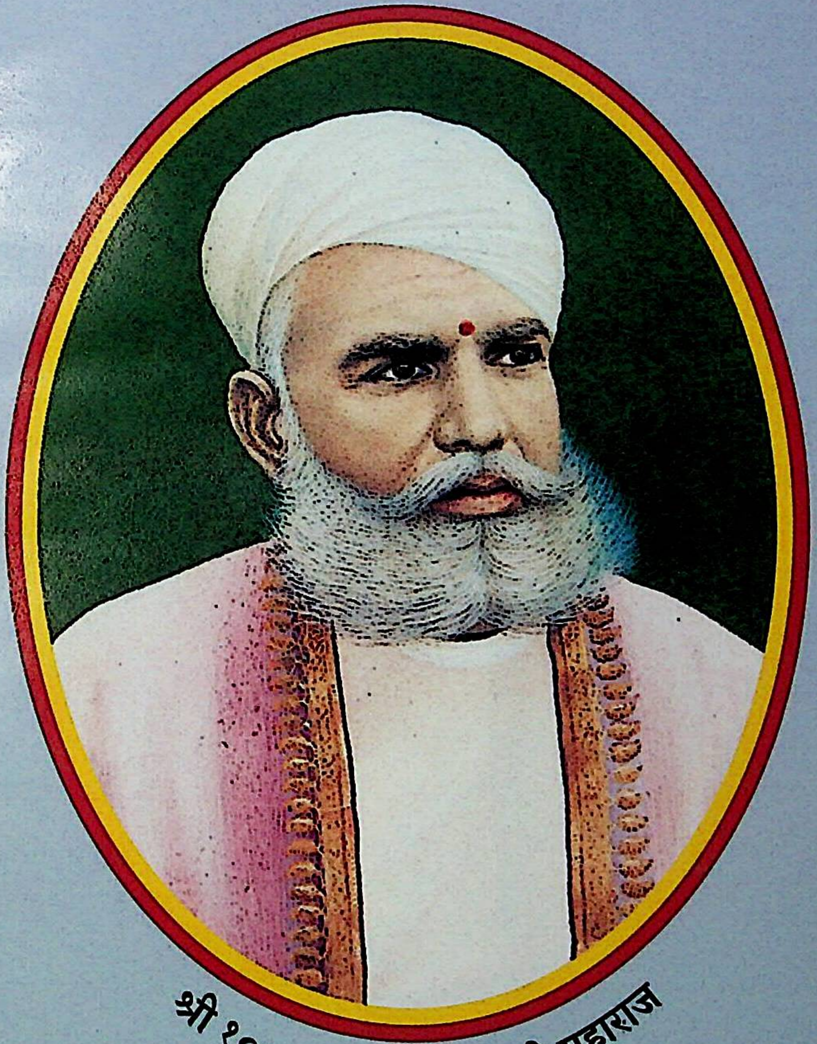
७. श्रीचौकसरामजी महाराज

आप बाल्यकाल से ही अपने गुरुमहाराज आचार्य श्री रामप्रतापजी महाराज के चरणों में रहे । प्रारंभिक शिक्षा के पश्चात् आपने प्रसिद्ध वैद्य श्री तुलसीरामजी महाराज एवं आयुर्वेदमार्तण्ड ख्यातनामा स्वामी श्री लक्ष्मीरामजी महाराज (जयपुर) की छत्रछाया में आयुर्वेद का गहन अध्ययन किया । धीरे-धीरे आपकी आयुर्वेदीय ख्याति सर्वत्र प्रसृत होने लगी । आपका नाड़ी विज्ञान आज भी विज्ञजनों में प्रशंसित हो रहा है । रोगों के निदान एवं निवारण में आपकी बुद्धि बहुत गहराई से काम करती थी । आपकी आयुर्वेदीय सेवा से धनी-निर्धन आदि लोगों ने भरपूर, लाभ उठाया ।

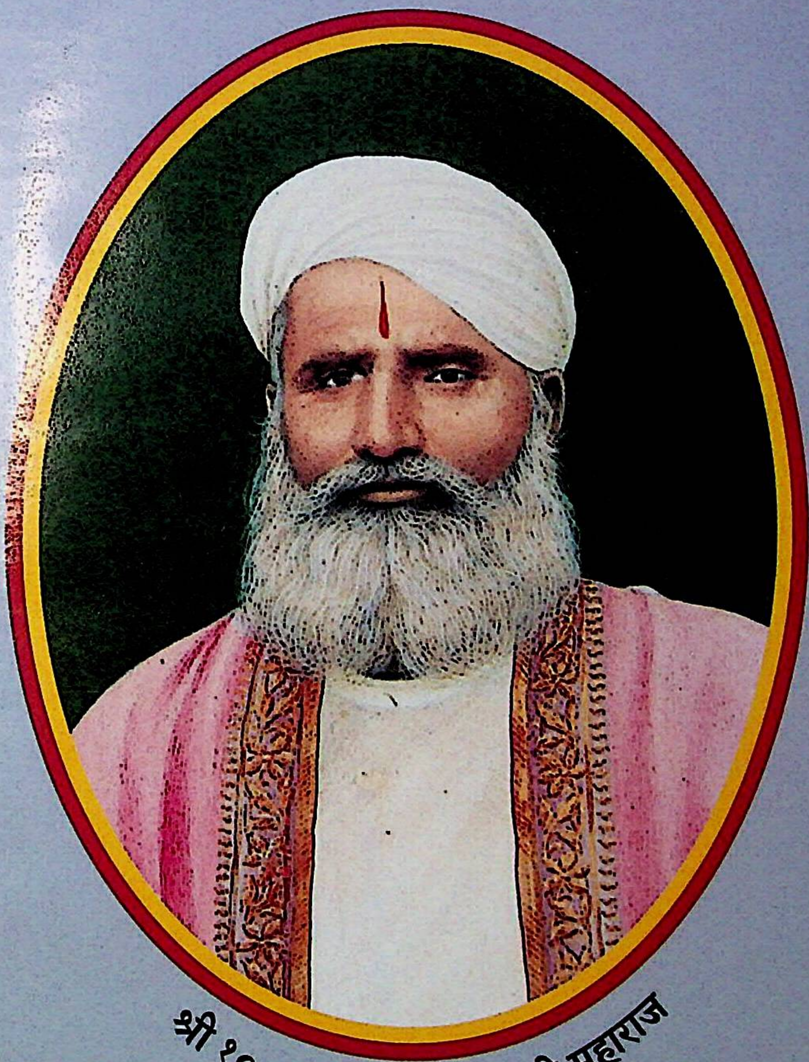
आयुर्वेदीय ज्ञान के अतिरिक्त आप अपने आध्यात्मिक जीवन में 'नामजप' की साधना के प्रति पूर्ण निष्ठावान् थे । सन्तसाहित्य के प्रति आस्था होने के कारण "रामस्नेह धर्म प्रकाश" का संपादन किया । अपने गुरु महाराज आचार्य श्री रामप्रताप जी महाराज की आज्ञा से आपने पीठस्थान की हर दृष्टि से सेवा की । आपके गुरु महाराज आचार्य श्री रामप्रतापजी महाराज के परमधाम पधारने के पश्चात् आपको इस वन्दनीय सिंहस्थल पाटगादी पर ज्येष्ठ शुक्ला २ वि० सं० १६६६ केदिन अभिषिक्त किया गया । किन्तु भगवान् का विधान अत्यन्त प्रबल है । आप इस पद पर केवल दो वर्ष ३ माह के लगभग ही रहे और भाद्रपद पूर्णिमा वि० सं० १६६८ को परमधाम पधार गये । आपके दो प्रमुख शिष्य थे । सर्वश्री रामनारायणजी महाराज एवं श्री भगवद्दासजी महाराज जो आगे चलकर दोनों ही इस गद्दी के आचार्य हुए ।

८. श्रीरामनारायणजी महाराज

आचार्य श्री चौकसराजी महाराज के परमधाम सिधारने के पश्चात् आश्विन शुक्ला प्रतिपदा वि० सं० १६६८ के दिन आपको रामस्नेही



श्री १००८ श्री चौकसरामजी महाराज
रामस्नेहि सम्प्रदायाचार्य सिंहस्थल (७)



श्री १००८ श्री रामनारायणजी महाराज
रामस्नेहि सम्प्रदायाचार्य सिंहस्थल (८)





श्री १००८ श्री भगवद्दासजी महाराज
रामस्नेहि सम्प्रदायाचार्य सिंहस्थल (९)



सम्प्रदाय सींथल पीठ गद्दी पर अष्टम आचार्य पद पर विराजमान किया गया । आपने अपने गुरु महाराज आचार्य श्री चौकसरामजी महाराज के पास ही आयुर्वेद का विशेष अध्ययन किया । आपको गुरुमहाराज ने एक सिद्धहस्त वैद्य बना दिया था । आचार्यपद पर विराजमान होते हुए भी आपने आयुर्वेद के द्वारा प्राणियों की अनुपम सेवी की । आपके हृदय में प्राणियों के प्रति करुणा रहती थी, साथ ही सन्त होने के कारण वैराग्य की भी प्रबल भावना थी । इसी कारण आपने वि० सं० २००५ भाद्रपद पूर्णिमा पर अपने ही गुरुभाई श्रीभगवद्दासजी महाराज को रामस्नेही सम्प्रदाय सींथल पाटगादी पर सर्वानुमति से विराजमान कर एक सामान्य साधु जीवन की परम्परा में रहकर वैराग्य का अनुपम आदर्श प्रस्तुत किया । धन्य हो ! हमारे सम्प्रदाय में कैसी कैसी दिव्य विभूतियाँ हुई हैं । आचार्यपद से मुक्त होने के पश्चात् आप भगवद् भजन में लगे रहे । अन्त में मिंगसर वदी ११ वि० सं० २०२१ को आप परमधाम पधार गये ।

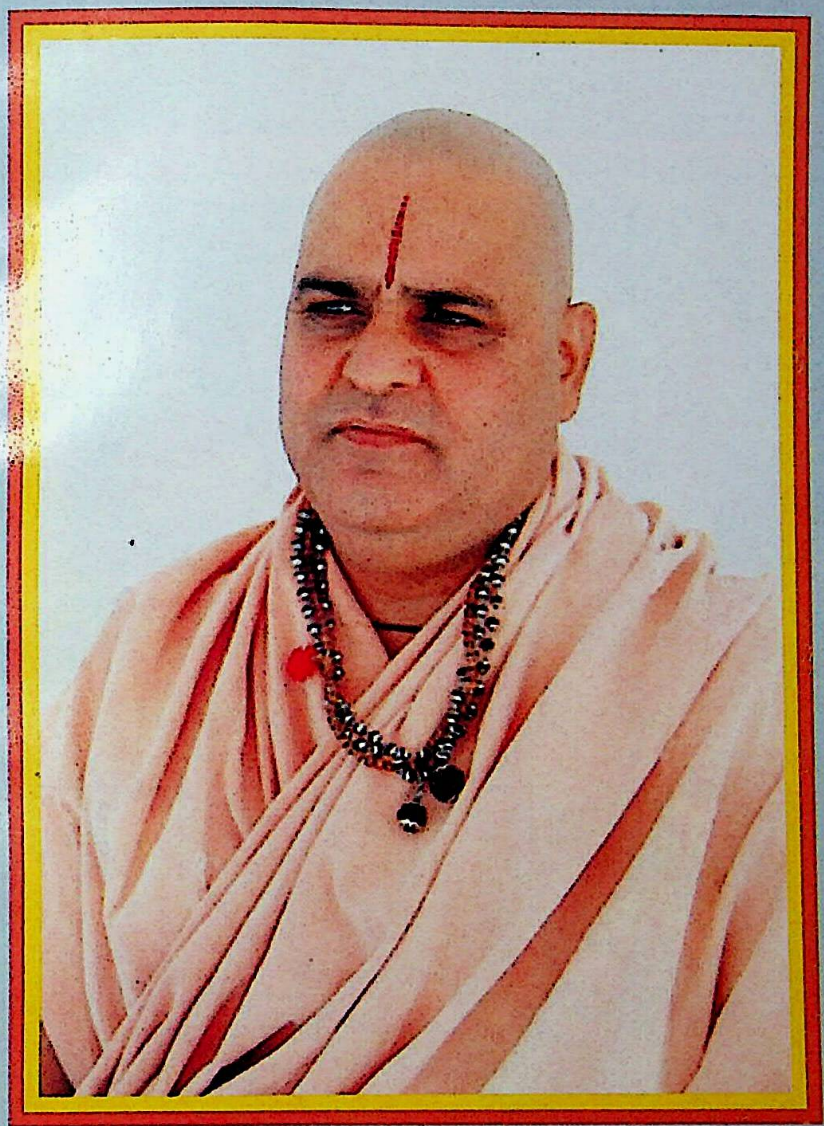
९. श्री भगवद्दासजी महाराज

आप आचार्य श्री चौकसरामजी महाराज के शिष्य थे । आपको बाल्यकाल से ही असाध्य रोगों ने घेर रखा था । उस समय आचार्य श्री रामप्रताप जी महाराज के शिष्य श्रीरामजीदासजी ने आपकी बहुत सेवा की । इसी कारण आप उनका बहुत आदर करते थे । प्रारंभिक शिक्षा के पश्चात् आपका अध्ययन लाहौर विश्वविद्यालय एवं शार्दूल संस्कृत कॉलेज बीकानेर में हुआ । आयुर्वेद का विशेष अध्ययन आपने अपने गुरु महाराज आचार्य श्री चौकसरामजी महाराज तथा बड़े गुरु भाई आचार्य श्री रामनारायणजी महाराज के पास ही किया । इस प्रकार आप "शास्त्री" एवं "आयुर्वेदाचार्य" की उपाधि से विभूषित हुए । अपने गुरु महाराज आचार्य श्री चौकसरामजी महाराज के परमधाम पधारने के पश्चात् आप आचार्य श्रीरामनारायणजी महाराज की आज्ञा से स्थानों का प्रबंध करते रहे । इधर आचार्य श्रीरामनारायणजी महाराज का विचार आचार्य पद पर रहने का नहीं रहा तो उन्होंने रामस्नेही सम्प्रदाय सींथल एवं खेड़ापा के समस्त सन्तों की अनुमति एवं सहयोग से आपको भाद्रपद पूर्णिमा वि० सं० २००५ के शुभ दिन रामस्नेही सम्प्रदाय सींथल पीठ के आचार्य पद

पर विराजमान कर दिया । इस प्रकार आप इस गद्दी परम्परा में 'नवम' आचार्य हुए । आपके आचार्य काल में पीठ स्थान के सुप्रबन्ध के साथ-साथ "सन्त साहित्य संगम, सींथल" की स्थापना की गई, जिसके तत्त्वावधान में रामस्नेही सम्प्रदाय के सन्तों की बहुत सी हस्तलिखित अप्रकाशित वाणियों का अभूतपूर्व प्रकाशन हुआ । आयुर्वेद के साथ-साथ आध्यात्मिक सेवा करते हुए ३३ वर्ष तक आचार्य पद पर विराजमान रह कर सींथल पीठ स्थान की अनुपम सेवी की । अन्त में चैत्र शुक्ला १३ वि० सं० २०३८ तदनुसार १७ अप्रैल १९८१ शुक्रवार को ब्राह्ममुहूर्त में रामस्मरण पूर्वक आप परमधाम सिधार गये । वर्त्तमान आचार्यश्री जी महाराज साहब के अतिरिक्त मैं नवलराम, श्री जगदीशरामजी, श्री तुलसीरामजी, श्रीगोकुलरामजी, श्री सोहनरामजी, श्रीगोविन्दरामजी, श्रीगोविन्ददासजी 'सूर', उमारामजी, स्व० श्रीरामकृष्णदासजी उर्फ श्रीरामदासजी आदि आपके अनेक शिष्य हुए ।

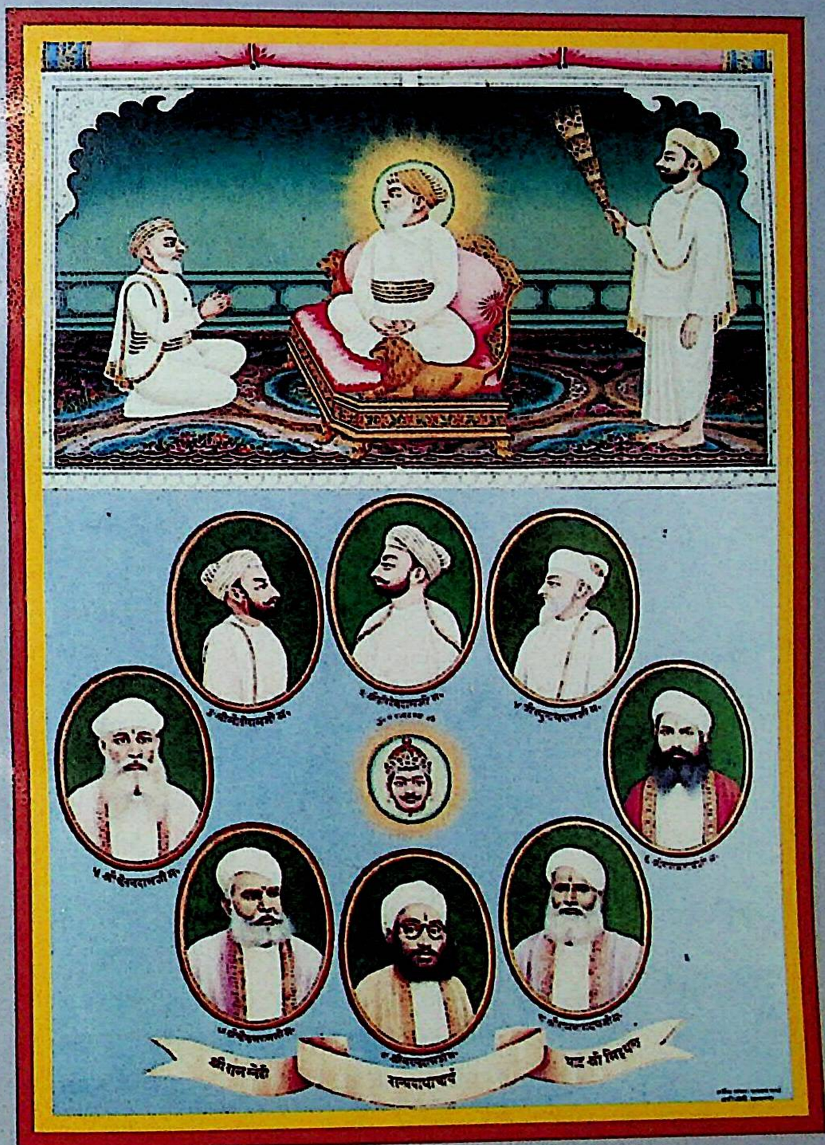
१०. श्री क्षमारामजी महाराज

आप बाल्यकाल में ही गुरु महाराज श्री भगवद्दासजी महाराज के चरणों में समर्पित कर दिये गये थे । आपका प्रारंभिक कक्षाओं से लेकर 'व्याकरण शास्त्री' पर्यन्त अध्ययन 'श्री दादू महाविद्यालय, जयपुर' में हुआ । तत्पश्चात् आप शार्दूल संस्कृत कॉलेज, बीकानेर में अध्ययन कर सम्पूर्ण राजस्थान में 'व्याकरणाचार्य' परीक्षा में 'सर्वप्रथम' श्रेणी में उत्तीर्ण हुए । डूंगर कॉलेज बीकानेर में अध्ययन कर राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर की संस्कृत विषय की एम० ए० परीक्षा भी प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की । इसके साथ निखिल भारतवर्षीय आयुर्वेद विद्यापीठ दिल्ली से आयुर्वेदाचार्य परीक्षा द्वितीय श्रेणी में उत्तीर्ण की । गुरु महाराज आचार्य श्री भगवद्दासजी महाराज के परमधाम पधारने के पश्चात् आपको वैशाख कृष्णा १४ विं० सं० २०३८ तदनुसान ३ मई १९८१ रविवार के दिन रामस्नेही सम्प्रदाय सींथल खैड़ापा के समस्त सन्त महात्माओं ने रामस्नेही सम्प्रदाय सींथल पाट गादी पर 'दशम' आचार्य के रूप में विराजमान किया । वर्तमान में आप पीठ स्थान के प्रबन्ध के साथ साथ परम श्रद्धेय स्वामी जी श्रीरामसुखदास जी महाराज के पावन सान्निध्य में आध्यात्मिक लाभ के लिये प्रयत्न कर रहे हैं ।



श्री १००८ श्री क्षमारामजी महाराज
रामस्नेहि सम्प्रदायाचार्य सिंहस्थल (१०)

पूज्यपाद अनन्तश्री हरिरामदासजी महाराज, सिंहस्थल



श्रीरामस्नेहि सम्प्रदायाचार्य पाट श्री सिंहस्थल



अथ खैड़ापा आचार्य परिचय

१. श्रीरामदासजी महाराज

जोधपुर राज्य के वीकोंकोर नाम ग्राम में राष्ट्रीय शार्दूलजी[1] के घर में संवत् १७८३ फाल्गुण कृष्णा १३ के दिन शुभ मुहूर्त में आप प्रगट हुए । आपके जन्मसमयमें बहुत आनंदोत्सव हुआ । बड़े होने पर थोड़े काल में विद्या प्राप्त करली और शाक्तिक मतावलंबी होकर वैराग्य धारण कर जहाँ तहाँ विचरने लगे । द्वादश गुरु किये परन्तु चित्त की शांति कहीं भी नहीं हुई । ऐसे विचरते विचरते बीकानेर पधार गये । वहाँ एक सद्गृहस्थ के मुख से श्रीहरिरामदासजी महाराज का रेखता[2] सुना । सुनते ही उस गृहस्थ से सारा पता पूछ आप सीधे सिंहथल पधारे । और श्रीहरिरामदासजी महाराज के चरणों में पड़ विनय[3] की कि महाराज ! मैं बहुत जगह भटक

---

१. क्षेत्र भक्त ऋषभसुत नामा, मुरधरदेश प्रकट तनु धामा ।
अवनीपति इस्म ऋषि जानो, अजगुण मास प्रगटदरसानो ॥
उदय अंकूर अनवरत वरषा, भयो सुकाल भक्तजन हरषा ।
सादूनाम लकार सिधंता, धन धन पिता पुत्र जन्मंता ॥
(श्रीराम.परची)

२. रेखता—
अगम अगाध में ज्ञान पोथी पढ्या भरम अज्ञान कूँ दूर डार्‌या ।
नाम निरधार आधार मेरे भया गहर गुम्मान मन मोह मान्या ॥
तीन चक चूर करि चित्त चौथे गया नाभि अस्थान धुनि धम्मकारा ।
सास उस्सास में वास निरभै किया रम रह्या एक आतम्य यारा ॥
सहज में साम सुखराम ऐसे मंडे रोम में रोम रंकार जागे ।
दास हरिराम गुरुदेव प्रताप तें हद्दकूँ जीत वेहद्द लागे ॥१॥

३. छप्पय—
भले होण के काज लाज छांडी जगकेरी ।
हठ पच किया अनेक तृषा उर मिटी न मेरी ॥
द्वादश गुरु फिर किया लिया मत मिल्या सजोई ।
मन उद्वेग अपार काज सरिया नहिं कोई ॥
अनुक्रम सिधांत कायब अनंत आप अग्र भाखे सबै ।
अनाथ नाथ अशरण शरण महरबान हूजै अबै ॥१॥
दोहा—अरज हमारी एह नित, दुष्कर कठिन तरास ।
लाखां बातां बात इक, वस्यो रावरे बास ॥१॥
(श्रीराम. परची)

लिया और द्वादश गुरु भी कर चुका परंतु मुझे सच्चा और पूर्ण ज्ञान किसी से नहीं मिला । अब मुझकों सिवाय आपके कहीं पर भी आश्रय नहीं है। अत: कृपाकर इस दास को दीक्षा दीजिये । श्रीजी महाराज ने आपके ओघड़ रूप को देखकर फरमाया—भाई ! रामस्नेही ऐसा रूप नहीं रखते हैं । यह सुनते ही आपने सेली, सिंगी, टामण, टूणादि सारे आडंबरों को दूर फेंक दिये । तब श्रीगुरुदेव ने आज्ञा दी कि एक वर्ष के अनंतर तुम शिष्य बनाए जावोगे । तब आपने अधीर होकर प्रतिज्ञा के साथ कहा कि, या तो आप अपना शिष्य बनालें, नहीं तो अन्न और जल परित्याग का शरीर छोडदूँगा । यह सुन एक दूसरे शिष्य को परीक्षा लेने के वास्ते आज्ञा दी कि वास्तव में इनकी दीक्षा लेने की सच्ची इच्छा है या नहीं । परंतु सोने को जितना तपाया जाय उतना ही वह उत्तम होता है इसी तरह आपभी कसोटी पर पूर्ण उतरे । तब तो आपको सच्चे जिज्ञासु समझ संवत् १८०९ वैशाख शुक्ला ११ को प्रात: काल सिद्धियोग में सन्मुख[1] आसन लगवाकर राममंत्रोपदेश दे शिष्य बना लिये । और राममंत्र का प्रभाव भक्ति ज्ञान योग क्रिया, सहित भजन की सारी विधि बताकर सदुपदेश दे रामस्नेहधर्म में संपूर्ण नियम बतलाये । और फरमाया कि इस रामस्नेह[2] संगत में आज से तुम्हारा नाम रामदासजी है । ऐसा सुनते ही आप तो कृतकृत्य हो गये । श्रीजी महाराज के फरमाए हुए सारे उपदेशों को शिरपर

---

१. गुरु धर्म मर्यादारीति अनुसार खैडापा के महन्त आज दिनपर्यंत सिंहथल में सन्मुख ही विराजते हैं ।

२. रामदास तोहि नाम सदाई । राम सनेह संगति के माँई ॥१॥
आन सन्देह जाल जग झूँट्य । जामण मरण काल क्रम कूटा ॥२॥
मोह सनेह जन्म धर धरणा । जाति सनेह चौरासी फिरणा ॥३॥
काम क्रोध के लोभ सनेही । खान पान अन मनूं मिलेही ॥४॥
देह अवस्था प्रकृति सनेहा । कर्म प्रधान संजोग मिलेहा ॥५॥
पाँच पचीस सनेह सनेहा । पाँच कोस मध चितवन देहा ॥६॥
एता नेह तजैरे भाई । एक प्रीति गुरुचरण संभाई ॥७॥
रामसनेही जाको नामा । हरि गुरु साधु संगति विश्रामा ॥८॥
श्री गुरुदेव कृपा भइ भारी । मान लई सिख परा परारी ॥९॥

(श्रीराम. परची विश्राम ८)

चढ़ा प्रणाम कर आज्ञा ले विनयकर[1] मारवाड में महलाणें ग्राम पधारे । लोगों ने एक पर्णकुटी बनवा दी तो आप वहीं पर श्वासोच्छ्वा भजन करने लगे । दो मास के अनंतर कुछ घट चिन्ह दिखाई दिए और गुरुदर्शन की इच्छा हुई तब तो आप रवाने होकर रामसर गाँव जो गुरुधाम से चार कोश है वहीं से पनही परित्याग कर दंडवत प्रणाम करते हुए सिंहथल पधारे और श्रीगुरुदेवजी के चरणारविंदों में पड़कर साष्टांग दंडवत प्रणाम किया और सब गुरु भाइयों से मिले ।[2] गुरुदेव ने संबोधन किया तो आपने और कुछ नहीं कहा । केवल यही कहा कि ''परचै नाद हमारे स्वामी'' । तब श्रीगुरुदेव ने आज्ञा दी कि अभी तुम भ्रम में हो । दूसरे शिष्यों के साथ तुम्हारी भी परीक्षा ली जायगी । और ली[3] गई । उसमें आप सब से पीछे रह गये । तो आपको इस बात का अत्यंत खेद हुआ । श्रीगुरुदेव ने आप की ऐसी स्थिति देख फरमाया कि तुम इस बात का क्या दु:ख करते हो ? तुम्हारी भक्ति मेरे प्रति सबसे अधिक है । और आगे चलकर तुमही सबसे बढ़कर होवोगे । ऐसा आशीर्वादात्मक गुरुवाक्य सुनकर आप बड़े प्रसन्न हो एक पखवाड़ा और कुछदिन गुरुचरणों में निवास कर पीछे महलाणें ही पधार गये । छ मास के अनंतर आप फिर गुरुदर्शनार्थ सिंहथल पधारे तब श्रीगुरुदेवने आपको अपने उत्तम शिष्य बताये । और शिष्य बनाने तथा उपदेश[4] देने की आज्ञा दी । आप कई दिन गुरुधाम में निवास कर पीछे ही पधार गए और भजन करने लगे । नाभी चिन्ह प्रगट होने पर फिर

---

१. वार वार कर जोर के, बहु विधि कर्‌यो प्रणाम ।
श्रीगुरु शरणै राखियो, खाना जाद गुलाम ॥१॥
(श्रीराम. परची विश्राम ११)

२. अधिकारीजन विहारीदासा, तासूँ मिले रामजनदासा ।
गुरु भाई वृध होते जेता, सबसूँ मिले परस्पर हेता ॥
(श्रीराम. परची विश्राम १३)

३. भीर भरका दूर कराए । श्रीगुरू सनमुख दास बैठाए ।
अब सनमुख होय भजन कराओ । आतम परचै सुरत लगावो ।
(श्रीराम. परची विश्राम १३)

४. दो उपदेश जिग्यासी आवै । गुरुपद दरस्यां गुरुपद पावै ।
(श्रीराम.परची विश्राम १३)

सिंहथल पधारे। अपना बनाया हुआ "ज्ञानविवेक" ग्रंथ श्रीजी महाराज को सुनाया, सुनकर महाराज ने फरमाया कि पुत्र ! तुम्हारे घट में ज्ञान प्रगट हो गया है।

दोहा

नाभि लयो विश्राम मन, वंक नाल रस लेत ।
रामदास पच्छिम दिशा, शब्द चलण का नेत ॥१॥

चौपाई

श्रीगुरु आगम यों वरणै । तिरसी जीव तुम्हारे शरणैं ॥१॥
रामदास कहै मैं जु अनाथा । आप प्रताप आप मम नाथा ॥२॥
(श्रीराम. परची विश्राम १४)

गुरु आज्ञा ले फिर पीछे पधार गए। इस भाँति श्रीगुरुदेवजी के दर्शनार्थ आप कई बार पधारे। बहुत से पुरुष आपके शिष्य होने को पहले आए थे पर आपने उनको दीक्षा नहीं दी। फिर श्रीगुरुदेवजी की आज्ञा[1] से दीक्षा देनी आरंभ करदी। आपके ५२ शिष्य हुए। शिष्यों के आग्रह से मालवा, मेवाड़ आदि देशों में रामत कराते हुए पहिले गुरुदर्शनार्थ सिंहथल पधारे, फिर मारवाड़ वडूग्राम पधारे, वहाँ कुछ समय विराजे और वहाँ से आसोप पधार गए। वहीं पर आपके दशवें द्वार की समाधि सिद्ध हुई। और गुरुमहिमा, भक्तमाल, चेतावनी, जमफारगती आदि अनेक ग्रंथ तथा अंगबद्ध अनुभव वाणी की रचना हुई, जिन वाणी के दास, उदास, शांभवी, और खुदव करके चार भेद हैं। इस प्रकार वाणीरचना के बाद फिर आप सिंहथल पधारे। यहाँ एक दिन बाहिर की तरफ आप संध्या करा रहे थे इतने में ही तो आपको श्रीकबीर साहब का दर्शन हुआ और कबीर साहब ने फरमाया कि रामदासजी जाझाँ में रहना। आपने आकर श्रीगुरुदेव से कहा तो श्रीगुरुदेवजी ने जाझाँ का अर्थ सत्संगति और सवाई भक्ति का बताया। आज्ञा माँग वहाँ से आप शीलवा नामक ग्राम में पधारे। प्रातः काल में आप स्नान पधरा रहे थे कि इतने ही में आकाशवाणी, हुई

---

१. रामभजन को दो उपदेसा, परा परायण गावत शेसा ।
(श्रीराम.परची विश्राम१५)

कि "हे रामदासजी ! यह हमारा सत्य वचन है कि तुम्हारे, धर्म[1] की खूब वृद्धि होगी ।" फिर वहाँ से आसोप और अरटिया ग्राम होते हुए पुरोहितजी पद्मसिंहजी के अत्याग्रह से आप सं० १८२२ में खैड़ापें पधारे और यहां पर आपका स्थान बना और हजारों शिष्य हुए । कुछ समय के उपरांत आपने अपने मनोभाव को शिष्यों से प्रकट किया कि, यहाँ पर श्रीगुरुदेवजी महाराज को पधरावें तो बड़ा आनंद हो । ऐसा फरमाकर तत्क्षण बैलगाड़ी जुड़वा आपने कान्हड़दासजी और हेमदासजी को सिंहथल श्रीजी महाराज को पधराने के लिये रवाने कर दिये । यह समाचार चपला की चमक की भाँति सारे गामों में फैल गया । तमाम बाल वृद्ध नर और नारियों के आनंद की सीमा न रही । और सारे मांगलिक साज सजाने लगे । इतना ही नहीं, रास्ते के जिस ग्राम से श्रीगुरुदेवजी महाराज पधारने को थे उनमें भी उसी तरह आनंद मंगल बधाइयाँ होने लगीं । श्रीगुरुदेव जिस ग्राम से होकर पधारते थे वहाँ के निवासी बड़े आवभाव से एक दो दिन विराजमान कर फिर आगे पधारने देते थे । इस भाँति ४४ कोसकी रामत कराते हुए कई दिन से खैड़ापें पधारे । आप पधार गए हैं इस आनंदवर्धक बधाई को सुनते ही श्रीरामदासजी महाराज अपने साधु गृहस्थ आदि तमाम शिष्यों के सहित गाजेबाजे से वधावणे की सब सामग्री सजाय दंडवत् प्रणाम करते हुए श्रीगुरुदेवजी को वधाने के लिये सन्मुख पधार वधावणे की रीति से बधाय बाजोट पर श्रीजी महाराज को विराजमान कर पूजन आरती की, और पगमंडा निवछावर करते हुए स्थान में पधराए । उस समय के सुख आनंद बताना इस निर्जीव लेखनी की शक्ति से बाहर है । हाँ अलबत्ते श्रीदयालुदासजी महाराज के फरमाये हुए उस वक्त के वधावणें के दो पदों[2] से कुछ आनंद का अनुभव कर सकते हैं । श्रीजी महाराज के पधारणें की खुशी में प्रत्येक दिन नित्य नए उत्सव होने लगे । एक महीना और पांच दिन क्षण समान चले गए । अत्यंत हठ के साथ सीख

---

१. रामदास पंथ चले तुम्हारो । यह सद्वायक सदा हमारो ।

(श्रीराम. परची विश्राम १८)

२. म्हारे मन आज उमावो हो, राम सनेही आविया निज भाव वधावो हो ॥१॥
या दिन कों मैं बलि जाऊँ हो, मिले पियारे रामजन सन्मुख शिर नाऊँ हो ॥२॥
यह दोनों वधावणें इसी पुस्तक के वधावणा प्रकरण में है ।

माँगने पर अपने शिष्यों से फूल डोल के मेले पर प्राप्त हुई जो आदि अंत की भेट थी वह सारी की सारी श्रीरामदासजी महाराज ने श्रीगुरुदेवजी महाराज को अर्पण[1] कर दी । श्रीगुरुदेवने कुछ अपने लिए भी रखने को फरमाया तो भी आपने नहीं रखी और विनय की कि, इसमें मेरा क्या किरावर है ? मैंने तो मालधणी को माल अर्पण किया है, यहाँ तक कि मेरे प्राणभी आप के न्योंछावर हैं । यों विनय कर फिर शाल दुशालें धातु बर्तन आदि बहुत वस्तुएँ भेंट्र की और आपको दो[2] कोस तक पहुँचाने के लिये पधारे । वापस लौटने पर भी पीछे नही लौटते हैं । बड़े मुश्किल से पीछे लोटवाये । ऐसी भाँति श्रीगुरुदेवजी महाराज की पधरावणी कई बार हुई । एकबार आपने श्रीगुरुदेव से अर्ज की कि महाराज ! गाँव के अंदर का स्थान आपके परिवार के लिये छोटा है अतः अब कोई बड़ा स्थान बनवाने की आज्ञा फरमावें । तब आपने ग्राम से पूर्व की ओर पहाड़ी की तलहटी में जगह बतलाई कि यहाँ बनवा लो । तब तो श्रीजी महाराज की आज्ञा से वहीं पर संवत् १८३४ फाल्गुण कृष्णा ४ के दिन स्थान की नीव डलदी गई और कई वर्षों में जाकर वह आलिशान स्थान संपूर्ण हुआ । आप के जीवनकाल में जितने परचे हुए हैं वे सब परची में श्रीदयालुदास जी महाराज ने सविस्तृत वर्णन किए हैं । जिनका संक्षिप्त सार जो श्रीअर्जुन दास जी महाराज ने बनाया गया है वह यहाँ पर उद्धृत किया जाता है ।

---

१. आई भेट समर्पण सारी, आदि अंत पूजा पूजारी ।
जीव जिंद धिन प्राण निछरावर, माल धणी देतां नहि किरावर ॥
(श्रीराम. परची विश्राम २०)
स्वामी कह्यों क्यों न तुम राखी, अरपण करी आन कर आखी ।
रामदास कहै तन मन धन तेरा, मैं तो सदा चरनका चेरा ॥
(श्रीहरि० परची)
पूजन भेट धरे निज भावं, पाट पीतांबर सोभ श्रीपावं ।
श्रीगुरुपूज नमो हरिरामं, या अधिकारि विहारि प्रणामं ।
ओर सबै सिख अंबर सुभायं, संत विदा हुय पंथ सिधायं ।
(परची श्रीबालकदासजीकृत)
२. जोजन अर्ध पहुँचावण गया, रामस्नेही व्याकुल भया ।
श्रीगुरुआज्ञा दीनी जबही, अब जावो तुम घरकूँ सबही ॥
रामदास ऐसे मुख गायक, श्रीगुरुचरणसरोज घर लायक ।
या विन ठौर नहीं मम कबहू, जीव विश्राम जिवारी सबहू ॥
(श्रीराम. परची विश्राम २०)

अथ परची सार

श्रीहरि गुरु हरिराम धिन, रामदास मुझ सांम ।
द्यालपुरुषपूरण प्रती, अर्जुन की परणाम ॥१॥

दोहा

नित अवतारी संत धिन, जीवां करण उधार ।
भरतखंड मुरधर धरा, आन लियो अवतार ॥१॥

छप्पय

संवत सतरहसो जान वर्ष तँयास्यों कहिये ।
फागण वद त्रयोदशी रामदासं जनमइये ॥
खोजत वर्ष पचीस मिले गुरु हरियानंदा ।
नव को वर्ष प्रसिद्ध शुक्ल वैशाख लहंदा ॥
लेह ग्यारस अग्या रमता आए देशमज ।
गाँव मेलाणै विराजकर सुमरण विध एकंत सज ॥१॥
वर्ष तीन इम भये जुगलमत अड़िग सधीरा ।
वर्ष दुकाल जु मांहि नाजकी अतिशय भीरा ॥
नारखान जदुवंश सुभी है गाँवज ठाकर ।
उपज भावना ताह भेट रुपियों ले आकर ॥
कहे साधु हम राखाँ नहीं करो पुण्य दूजा घणा ।
रामराय पूरे सबन हम शरणागत त्यां तणा ॥२॥

इंदव छंद

मान लई सत बात तिही दिन नित्य रसोई सु आन जिमावै ।
काल थारोतड़े लोक दुखी तब संत को चित अत्यन्त दुखावै ॥
लेत उदे कण पंच पियै जल पूछ तिनां प्रति सांच बतावै ।
एम भये दिन सात अखंडसु तो पण ध्यान अडिग्ग लगावै ॥१॥
सेवगरुप घरे तब माधव चून गेहूँ घृत दाल ले आए ।
साधु हि राम रसोई करो तुम राम गुरू पति भोग लगाए ॥
आजहुँ ते दुख दूर भयो तुम कहकर आपन धाम सिधाए ।
नार जु खान आए ढलते दिन संतहुते सब दुःख जु गाये ॥२॥

३१ (१)

मनहर छंद

कहै नारखान अहो बड़ो दुःख समय मांहि
पुसी गूघरी जु पाय आज हमें आये हैं ।
साधूराम कहे तुम आये परभात इहां
लायके रसोई हमें कह्यो गांव जाये हैं ।
तबै नारखान भाखै गांव जो बिराई हूंत ।
आए तुमे पास जेज घड़ी नाँहि लाये हैं ।
साधूराम हूंत कह्यो रामदास बोल एम
इने केश बधे पटफटे देख थाये हैं ॥१॥

दोहा

नारखान मन विसम हुय, अद्भुत बात निहार ।
भाग बड़ो मेरो अहो, इसे संत हम द्वार ॥१॥

कवित्त

ताहि समें देशमाँझ दिखणी फौज लेरु आए
राज विरोध राज काज देश पेसवार है ।
गाम जो मेलाणा हूत लोक सबै भाग चले
भाटी आय संत पास स्वाल एम डार है ॥
मात आज्ञा देहु सो तो चलत कबीला साथ
आप हमें चढां पाड़ वहाँ सँभ्या सार है ।
रामदास कहै तुम मेरी चिंत करो नाहि
तुम्हें घट सोई राम उनमें निहार है ॥१॥
तबै नारखान कहै आज्ञा, आप सोई करूँ
बोल संत कह्यो साम्हाँ जाय जाब कीजिये ।
चले आज्ञा पाय तबी जायके वकार माँझी
हमें तुम्हें जुद्ध है वकार पहल दीजिये ॥
पीछे मेरा हाथ देख मरूँ में निशंक अब
तोहि मोहि जोड़ कहा गढ़्ढपति छीजिये ।
तबै सैनपति पाग वदल जु भ्रात भयो
ऐसो रजपूत कहाँ मिले मोहि रीझिये ॥२॥

आय गाँव कहै तोहि कौन ऐसी मत्त भई
तबै नारखान कहै गुरू परतापही ।
आय सेनापत्ति संग संत को नवाय शीश
घरी भेट कहै ये तो रामरूप आपही ॥
लई नाँहि संत सोई कियो हठ बेर बहू
ऐसे ही अचाही ताके दर्श जाय पापही ।
नारखान दृढ धार लेऊँ दीक्षा आज अहो
लाय के प्रसाद कह्यो देवो मंत्र जापही ॥३॥
तबै रामदास मान गुरू कह्यो सत्य सोई
आदू रीत जान नारखान दीक्षा दए हैं ।
धर्यो दाम ताके वस्त्र साधुराम किया जबै
जान राम हेत संत दास आस लए हैं ॥
भए शिषशाखा बहु रामत करत गए
रहे वडू गाँवमाँझ द्याल जन्म भए हैं ।
फेर कई मास गाँव आसोप विश्राम लयो
करे भाव भक्ति जहाँ सँत आय रए हैं ॥४॥

इंदव छंद

एक दिनाँ सँत आये खेड़ापे हि, प्रोहित नाम पदम्म मिलानो ।
बोल कहै एक गाँव तुमारो है, यांहि कृपाकर वासहि ठानो ॥
जानि आँकूर उदै जहाँ विराजत, वर्ष बाईस के धाम बंधानो ।
शिष्यशाखा बहुते मिलतां प्रति, श्रीगुरु आखत मो गुरु आनो ॥१॥

दोहा

हरियानन्द आए यहाँ, उच्छव करे अपार ।
एक समय जा प्रातही, गुरु शिष गुष्ट विचार ॥१॥
रामदास कीनी अरज, आज्ञा दीजै मोय ।
आप काथ मावै नहीं, करांज अस्थल सोय ॥२॥
गाँव हूत पूर्ब दिशा, पँचशत पैंडसु जाय ।
शुभ पुल इच्छा जोय के, सतगुरु दई वताय ॥३॥

३१ (३)

छंद पद्धरी

शुभ संवत अठारहसो प्रवान । भल वरष तिये चोके निधान ॥
फागन वद चौथज नींव दीध । यह राम चौक कोठार कीध ॥१॥
उतराद दषिन भंडार सोय । चहुं कोट इन्द्र पौलसजु होय ॥
फिर उरधखंड महलाँ झरोख । छवि अद्भुत वरनूं केम गोख ॥२॥
तहाँ व्राजमान गुरुदेव आप । शिषहूँत मेट तन त्रिविधि ताप ॥
अब राम भजन को वन्यो ठाट । चत वरण न्हाय गुरू चरण घाट ॥३॥
कर रामत मुरधर देश माँहि । लद उष्ट्र घोड़ा वहल ताँहि ॥
तंबू कनात सब रीत जोय । द्वेषी तब देखे दुखी होय ॥४॥
इम भाव अभावी पक्ष दोय । कोउ साध असाधहु कहै सोय ॥
कोउ भुरकी मोहनिमंत्र भाख । कोउ आदि अबीको पंथ आख ॥५॥
इन तीर्थ मंदिर सेव नाँहि । सब शूद्र विप्र मिल एक ठाँहि ॥
इम दुष्ट जाय गुरुराज पास । सब अधिकी ओछी कही तास ॥६॥
इक आज खैड़ापे पंथ जोय । सो वजै आप महाराज होय ॥
इनको नहिं पूछै कोन जाय । नब विजयसिंह राजा रिसाय ॥७॥
लिख हुकुम[1] दिवाणीपत्र जोय । चत अश्व चढ़े भृत चले सोय ॥
उन राम महोलै आय देख । अद्भुत सतसंगति भजन पेख ॥८॥
मुख से अति सेवक भाव वात । कित स्वामीजी को दरश पात ॥
सब द्याल दीन मरमत्त जान । श्रीरामदास तहाँ विराजमान ॥
कर दरश बोल नाँहिन कहाय । जो लिख्यो पत्रिका माँय ताय ॥१०॥

दोहा

कौन जाति पुज्यक पधति, यो कैसो उपदेश ।
कोप नृपति ऐसो कह्यो, छोडो म्हारो देश ॥१॥
पद्धति जानो रामजी, रामजनाँ उपदेश ।
रामजनाँ ऐसो कह्यो ओ लै थारो देश ॥२॥

(परची)

---

१. दिवानी हुक्म सं० १८४६ फा०सु०६ को हुआ

चौपाई

इतना कहकर चले[1] ते सारा । राम जनागति अगम अपारा ॥
जैसे संग सराय वसेरा । पनग कांचली दृष्टि न हेरा ॥१॥
आवनहारा देखत वाता । कहाँ जानूँ का करिहै दाता ॥
पैदल हुय कर संग चलाये । रामदास जुत शिष सरसाये ॥२॥
कोस तीन पैदल सब आए । वहां से वैल दास जोताए ॥
आगेहूँता थाट सवाया । दिनदिन विभो वधत दरशाया ॥३॥
देवगढ़में भक्त सवाए । राज रैत सब वंदत पाए ॥
प्रेत इग्यारै भयो उद्धारह । विराजे एक मास दिन तेरह ॥४॥
वहाँ से आगे गाँव करेड़े । राव गोपालदास तहाँ तेड़े ॥
दिव तेवीस विराजे स्वामी । दिन दिन प्रेम भाव विध पामी ॥५॥
आज्ञा मांग चले गुरुदरसन । सिंहथल महंत मिले मन परसन ॥
माँडेल्याँ में आन विराजे । सेवक भाव वरष दोय राजे ॥६॥

दोहा

मंडलावत ठाकुर शुभी, इंद्रसिंह तेहि नाम ।
सारूंडे हितभाव कर, परचो पायो ताम ॥१॥
संत छोड़ चाले जबी, मारवाड़ दुख थाय ।
पितापुत्र भृत वदल सब, खोसा रिलमिल खाय ॥२॥
दखिणी जात न पाँति कछु, आँण फिरी तिण वे़र ।
वड़ी जात सो रुल़ गया, हरि की गति नहिं हेर ॥३॥
बीकाणें का राज में, सुख संपति वरताय ।
सारूँडे में आयकर, मुरधर रहे लुकाय ॥४॥

---

१. श्रीगुरुभ्यो परणाम करि, हरियानंदप्रताप ।
रामदेस में रामदास, राम हमारे छाप ॥१॥
हाथ छड़ी गुरुदेव की, कंबली गुरु अस्थान ।
बैठे ज्यूंई उठचले, हरि धनजीवनप्रान ॥२॥

(श्रीराम, पारची वि. २

चोपाई

मुलक चोखले करिहै निंदा । जैसो भाव फलै कर बंदा ॥
हिंदू राममहोले माँही । मारे जीव मरजाद हटाँही ॥१॥
ठाकुर मूरति निकसी तामें । परचो भयो देख भय पामे ॥
अद्भुत संतचरित कुन जानै । हरिमरजाद ताहि को भानै ॥२॥
अस्थल माँहि चीज थी सारी । रामदास हरिजन सब डारी ॥
सूंगी जानर लीन्हीं सोई । अजरी भोजन जिमि गति होई ॥३॥
लीजै हरिजन माल तुमारो । नहिं लाँ हरिअरपन है सारो ॥
रामदास ऐसे अनचाही । सुरत सिंह ऐसी सुन पाई ॥४॥
हे महाराज हाल का मेरो । धिन धिन धनी रामजी तेरो ॥
रामदास कै नहीं सिधाई । जिसी भावना फलै सदाई ॥५॥
रामदास ऐसे अनचाई । सुरतसिंह मनभाव जु थाई ॥
चातुर्मास की अर्ज करावो । लिखो पत्रिका तुरत बुलावो ॥६॥
संत भाव वस जानो सारा । करी वीनती आवनहारा ॥
रामदास संग शिष ले सबही । बीकानेर पधारे तबही ॥७॥
राजा के विश्वास विशेषा । विन वरषा निंदक कर घेषा ॥
स्थतः शिष्य साषी[1] जना आई । सो सुरतेश सुनी मनभाई ॥८॥
दिवस तीसरे मेह जु कीयो । सूरसागर सूताँ भरदीयो ॥
दिन दिन भाव उछाह जु सारा । सतसंगति बहु भीर अपारा ॥९॥
दिनप्रति राज रसोई आवै । पंच पकवान मिठाई लावै ॥
राजस भोजन काम न काई रामदास यों कहे समुझाई ॥१०॥
मोदी एक बुलायो राजा । रुचै रसोई सो विधि साजा ॥
चातुरमास दिन दिन अधिकाई । राजा परजा भाव वधाई ॥११॥

---

१. मेह वरषावो बापजी, दुनिया पावै दुःख ।
रामदास की वीनती, जनां ऊपजै सुक्ख ॥१॥
मेह बूठा हरिया हुआ, भाजगया भयकाल ।
रामदास सुख ऊपज्या, जहँ तहँ भया सुकाल ॥२॥

दोहा

विजयसिंह भृत सबनसों, कहीं हमें दुख काय ॥
गढ़ छूटो सुत बदलियो, पासवान मरवाय ॥१॥
चंडावल ठाकुर शुभी, कहि हरिसिंह बखान ।
रामदास कूँ सीख दी, ता दिनते दुख जान ॥२॥
कह राजा साची कही, क्यों ऐसी बुधि आय ।
होनहार सो नाँ टरै, को अब कौन उपाय ॥३॥
संत पधारै सो विधी, कीजै राज विजेश ।
ता दिन अपने आश्रमहिं, आयाँ सब सुख देश ॥४॥

छंद पद्धरी

लिख पत्र भाव भक्ती समेत, दे भेट पठाये संत हेत ।
सो बाँच पत्रिका संत राज, लखि भाव चलनको कियो साज ॥१॥
सुरतेश नृपति बहु भाव लाय, दिन सप्त फेर थिरता कराय ।
मो भाव, सफल कीजै दयाल, धरै अग्र वसन दुपटा दुसाल ॥२॥
सेंजूप रत्थ उष्ट्र लदाय, तम्बू कनात पर्यंक साय ।
गदराजु बिछायत भेट कीन, हंडवाई बरतन अति नवीन ॥३॥
बहुभाँति विनय कीनी नरेश, तब संग शिष्य ज्ञानोपदेश ।
पुनि पूरब राजजु मिल्यो आय, फिर कीजै कमज्या समझ राय ॥४॥
लख लोक हुक्म में चले सोय, ज्यूँ राज करे त्यूँ रैत जोय ।
ह्वै देग फतै तिन तेग जीत, गुरु ज्ञान रखै सो चलै नीत ॥५॥
प्रतिबोध एह जन उचर ताम, विचरत्त भये गुरु राम साम ।
पधरावण आयें सोइ पास, गुरुधाम चलां कह रामदास ॥६॥
सिंहथल नगर पहुँचेसु जाय, गुरु गादी महँतां मिले आय ।
निजधर्म जान तहाँ भेट की, हरिदेव महन्त सो संग लीन ॥७॥
हुय गाँव-गाँव मनबारताय, भृत विजयसिंह चांपर कराय ।
नृपभाव जान तब देश लोय; धन धन्य करत नरनारि सोय ॥८॥

दोहा

खेडापै आवत भये, पुरोहितजी कर भाव ।
रामसनेही हरष बहु, राम महोले चाव ॥१॥

संवत अठारहसो प्रसिध, वरष उनचासो जान ।
काती वद चोथहु दिने, अस्थल विराजे आन ॥२॥
भाटी रणछोड़जु सुबुधि, जालम खीची ताय ।
जोधाणे जावत भया, संताँ सीख सुपाय ॥३॥
भृत राजापें जायकर, कही अनुक्रम बात ।
संत बिराजे सदन में आनंद में गुनगात ॥४॥
सहत भूप सुण गोरधन, यह विधि करो विचार ।
मेरो पातक दूर व्है, संत सेवा बण सार ॥५॥

चौपाई

नृप पठये भृत रामजनाके, आये अस्थल भाव तिनाके ।
करी बीनती भूप कही सो, लीजे अपनी वस्तु रही सो ॥१॥
भेट गाम इक अस्थल लारे, संत वचन से काज हमारे ।
राम जना कह पटा[1] सदाई, चढ़ै ऊतरै नाँहि कदाई ॥२॥

दोहा

भाष माँहि सब जान ज्यो, व्है निश्चै मन थाय ।
गढ़ चढ़ नौबत बाजसी, बार प्रताप सवाय ॥१॥
परगट परचो दीसियो, भाव अभाव कराय ।
आगे अबै नजीक है, भक्तीबस हरि राय ॥२॥
फिर सिख पीथो दास की, पूरन कीनी आस ।
रामत कर रतलाम दिशि, अनत जीव सुख रास ॥३॥

छन्द पद्धरी

जन चले पंथ निर्भय सदाय, मँझ गाम गाम विश्राम थाय ।
मिल राम सनेही भाव चाव, रतलाम धाम उच्छव बनाव ॥१॥
सिष कनीराम गुरू धर्म काज, तन मन धन अरपे सर्व साजं ।
नित प्रति रसोई नवी विद्धि, गुरु भोग धरै अक्खूट ऋद्धि ॥२॥

---

१. और पटा किसकामका, चढभी ऊतरजाय ।
राम पटा है रामदास, दिन दिन दुणा थाय ॥१॥

(श्रीराम० वाक्यम्)

तहाँ अखै राजप्रोहित प्रवीन, उच्छव में उच्छव करसु लीन ।
फिर गाँव सारंगी दासभाव, पधराय संतकर चित्त चाव ॥३॥
इक गाँव दोतरिये दुष्ट पत्ति, बहु विकट घाट झाड़ीसु अत्ति ।
उन तेड़े संताँ पत्र मेल, हरिजन के हरिका करै खेल ॥४॥
मनमांहि हुतो खोसण विचार, कर दरश पलट सब कुबुधि टार ।
पड़ चरन माँहि कर गुना माफ, मै दास तुमहारो गुरु आप ॥५॥
जिन भाव रसोई भेट कीन, सँग सचिव मेल पहुँचाय दीन ।
हुइ महिमा सबही मुलक माँय, फिर संत शहर रतलाम आय ॥६॥

दोहा

दिन तेवीश बिराजिया, रामदास महाराज ।
सिष पीथल परिवार के, पहुँचावन संग काज ॥१॥
सोंखेड़े आये जना, दुष्टी जित ललचाय ।
सारंगी भाटी प्रसिध, ठीकरिया के माँय ॥२॥
रिल मिल खोसा सामठा, दोबे दबिया आय ।
याँसे बाबा जावसी, लेसां माल छिनाय ॥३॥
लछमण कहै दयालसों, दुई दिन विराजों और ।
इतने बीखर जावसी, गाँव मरजादन तोर ॥४॥

छन्द भुजंगी

तबै द्याल बोले सुणो दास सांची, कहूं बात तोकूँ कदे नाहि काची ।
हमैं राम रिच्छा नितूप्रत्ति करही, उन्हें दुष्ट इच्छा दिनां तीन भरही ॥१॥
अधू पात्र भरियो अबे नाश पासी, सबै लोक मोकूँ बड़े सिद्ध गासी ।
तुमे मत्त चिन्ता करो दास मेरी, जिन्हेशरण लीन्हों तिन्हें लाज केरी ॥२॥
हरी मत्त फेरी खोसा और सूजी, लगै जेज साधां करो धाड़ दूजी ।
चले रात आधी खोसे गाम जाई, एको ठोड माँझी धसे गेह माँई ॥३॥
तहाँ हाथ नारी फट्यो शीश जोये, लखै संगवाला मनां माँहिरोये ।
रुक्यो कंठदुखियो नहीं नीरपायो, मरेदिवस तीजे वचन संत गायो ॥४॥

दोहा

रामदास महाराज इम, सबकूँ कह्यो सुनाय ।
चलो अभी जेजन करो, हुइ आज्ञा हरि राय ॥१॥

छन्द त्रोटक

हरि पाय आज्ञा विचरे जबही, सब दास उदास भये तबही ।
पहुँचावण कहे तुम भाव इसो, रछ पाल गुरु तब शंक किसो ।
थिरताय सबै सँत पंथ लयो, इम आनंद मग्ग न दुःख भयो ॥२॥
कहै लोक तुमें सिधराज खरे, उन महाजन राज में दंड भरे ।
फिर चोकिय नाम न लेत कहूँ, जहँ जावत जोरत हाथ सहूँ ॥३॥

दोहा

मांगरोल चीतोड़ हुय, घाटे उतरे आय ।
खेड़ापै[1] अस्थल महीं, उच्छव करे सवाय ॥१॥
रामदास महाराज का, परचा अगम अपार ।
मो बुधिसम वरणन कर्‌या, षष्ठ छंद अनुसार ॥२॥

कवित्त मूल

रामदास महाराज का फिर परचा.वरणन कर्‌या ।
प्रेमदास शिष व्याधि अंत जमदूत जु आये ।
करि करुणा गुरु हूत ततच्छिन आन बचाये ॥
यो बालक है राम तुम्हारो काम न कोई ।
गुरु बेमुख अघधाम सोध तुम लेवो सोई ॥
मुख फेर हाथ थिर ताय सिख आधि व्याधि दूरे हर्‌या ।
रामदाम महाराजा का परचा फिर वरणन कर्‌या ॥१॥
प्रेमदास सतसंगते देवपुरी को दुख टर्‌यो ।
वैश्य वरण में जन्म गुसाँई भेष बनायो ।
भैरव जुग बस करे जगत में परचा थायो ॥
के दिन बीतां कह्यो मोर भोपो हुय भाई ।
नहितों सान्यों करों गुसाँई मना न लाई ।
तब विकल चित्त सुधि नाँहि तन पीपाड़ भ्रमतो आपर्‌यो ।
प्रेमदास सतसंगते देवपुरी को दुख टर्‌यों ॥२॥
नित नेम हजूरी महन्त गुरु, देह लग तिनके संग रह्यो ।
प्रेमदास ता प्रती पूछ सब कह्यो राम भज ।

---

१. सं० १८५२ पीछे खैड़ापै पधारे ।

देवपुरी द्दढ़ धार राम मुख रट्यो रात मँझ ॥
भैरव दूरे हूत क्रोध कर बहुत डराये ।
राम टेक विश्वास धार गुरु दरशन आये ॥
गुरु रामदास महाराज की ले दीक्षा आनन्द भयो ।
नित नेम हजूरी महन्त गुरु देह लग तिनके संग रह्यो ॥३॥

छन्द मनहर

राजगुरु पुरोहित नाम सगरामदास ।
ईडरके मध्यवास साधुसंग भयो है ॥
देवी देव मात त्याग साचो राम इष्ट जान ।
सत्तगुरु रामदास शरण आन लयो है ॥
राजा शिवसिंह कहै पूज तमें बेचरा की ।
छोड़दई ताको फल अबी पाय गयो है ॥
भ्रात रामसिंह हू की बधू स्यानगत्त हुई ।
साधु शोभाराम पास दुःख सबे कयो है ॥१॥
तबै साधु कह्यो एम मास एक मध्य खेम ।
धरो प्रण प्रीति नेम गुरु साच आनियो ॥
ताहीदिन रामसिंह लियो खण मिष्टहू को ।
जाऊँ रामधाम तबै पाऊँ एम जानियो ॥
एक दिन भूलचूक वटत प्रसाद साथ ।
लेतही शयन माँझ गैब छड़ी हानियो ॥
बोल कह्यो मूढ तुम किरी चूक गयी अहो ।
ऊठ के किवाड़ देखे जड्यो हाथ जानियो ॥२॥

दोहा

मास दिवस आयो जबै, शुद्ध भई ता नार ।
फिर गुरुदर्शन आयके, लह्या दर्श सुखसार ॥१॥
दास सगराम जु भक्तिभल, गुर्जर वधी सवाँय ।
अनता जीव चेतायके, मिले मोक्षके माँय ॥२॥

कवित्त

विप्र एक याही शहर राज कामदार हुतो ।
देख चूक भाकसी में बेड़ी घाल डार है ।
कहत सगराम ताहि सुनो बात मेरी अहो ।
गुरु रामदास तोहि दुःख से निवार है ॥
ताही निशा जाम दोय गयाँ भयो दर्श दिव्य ।
कह्यो ताहि आव अब डर्‍यो ताहि वार है ॥
तीसरी निशाहू फेर भयो दर्श वाही वेर ।
काढ भाखसीसें बेड़ी काट कीयो पार है ॥१ ॥

दोहा

यह परचो ईडर मही, जानत अजहूँ लोय ।
राम गुरू अंतर नहीं, शिष विश्वास जु होय ॥१ ॥

कवित्त

रामा राम शिष्य नदी डूबत पुकार सुन ।
धाररूप गहे बाँह कर्‍यो गुरु क्षेम ही ॥
एक समय भावी गाँव डेरो सर पाल शोभै ।
व्याल दौरि आय गोदमांहि कीयो प्रेम ही ॥
जीभ हूत चरण चाट गयो वृक्ष तणी वाट ।
कहै संत इने जीभ ठंढी गड़े जेमही ॥
कहाँ लग गाऊँ परचा रामदास गुरु तणां ।
काल आदि बंदे पाँव और कहो केमही ॥१ ॥
सर्प एक गाँव जो खैड़ापा माँझ कहूं सोय ।
झाल्यो झले नाँहि कोऊँ सबी हार थाके हैं ।
गुरु रामदास आय कहै साप राम सुनो ।
थानक तुम्हारे अभी जाय हम नाखे हैं ।
सुन्यो स्वाल संत मुख नसजु पसार दई ।
झाल डार ताही बेर फेर नहीं झाके हैं ॥
शीत काल ऊँट एक संत पंथ आन अर्‍यो ।
रहे खड़ो दूर एम रामदास भाखे हैं ॥२॥

कुंडलिया

उष्टर चल्यो न पेंड इक, धणि आयो पचिहार ।
विनय करी संता प्रती, कहू इनको उपचार ॥
कहो इनको उपचार तबै सो छड़ी झलाई ।
या तुम देहु लगाय होय आगे जिम जाई ॥
(उन) जाय सोई विधि करि तबै, उष्टर चल टोलै गयो ।
रामदास महाराज को अद्भुत परचो सब लयो ॥१॥

छंद मनहर

शिष्य फेर सेवादास पुत्र सोधने की आस ।
गुरु रामदासपास मांग आज्ञा चाले हैं ॥
विकट पहाड़ झाड़ी अकोलो चलत तहाँ ।
देख सिंह रूँख आय आगे रींछ भाले हैं ॥
टेर रामदास हूँत मींचसे बचाय अबी ।
करत हुँकार यहाँ तहाँ दुःख टाले हैं ॥
पायके अंदेश जु शिष्य अर्ज करत भये ।
फरमायो राम कहो तबै चुप्प झाले हैं ॥१॥
वहाँ रूप धार छड़ी हाथ साम ताम मारे ।
गये भालु सिंह दोऊं दास सुक्ख भयो हैं ॥
गाँव घटपाड़ी माँझ संत विराजमान भए ।
आयके दरश लह्यो कह्यो दुःख पयो है ।
अहो अँतर्यामी आप जानत सबै ही बात ।
पूछे शिष दूसरा हूँ तबै भर्म गयो है ।
संत राम एकरूप भिन्न भेद नांहि कबै ।
आगे अबै देखि लेहु कछू नाहि नयो है ॥२॥

॥ इति ॥

इस प्रकार अनेक परचे हुए । आप एक अद्वितीय महात्मा थे सम्वत् १८५५ आषाढ़ कृष्ण ७ मंगलवार को आप परम धाम पधारे । आपका इस संसार में प्राकट्य लोगों के कल्याणार्थ ही हुआ था । आप गुरुधर्मी भी एक ही थे । आपके बचन जो श्रीगुरुदेवजी के प्रति कहे गये हैं वे कितने गुरु भक्ति से सराबोर हो रहे हैं । यथा–

"अमर लोक सूँ आय सिंहथल माँहि विराजे ।
तेज पुंज परकास वजे अनहद के वाजे ॥"
"सता समाधि अगम जहाँ आसण सुखमण सहज समादी।
आय रामियों चरणाँ लागो सिख है आद अनादी ॥"
"चरणां चाकर रामियो, सतगुरु है महाराज ।
चार चक्क चवदै भवन, ताहि परे संतराज ॥"

(श्रीगुरुमहिमा)

"मैं अबला हूँ रामदास आँधो अंत अचेत ।
तुम सतगुरु हो शीशपर, हमको करो सचेत ॥"

(श्रीभक्तमाल)

"सतगुरू मेरे शिर तपै, मैं चरणांकी रज्ज ।
शरणे आयो रामियो, लखचौरासी तज्ज ॥"

(जमफारगती)

"सतगुरु दीनदयालु कहीजे, सन्मुख करसूँ सेवा ।
पार अपंपर पावे नाहीं, किस विधि लहिये भेवा ॥"

(मनराड़)

"सतगुरु है हरिरामजी, मेरा प्राण अधार ।
चौरासीका जीव था, शरणे लिया संभार ॥"

(श्री ब्रह्मजिज्ञास)

कहाँ तक लिखा जाय? जबतक आपका पांचभौतिक शरीर इस पृथिवीतलपर विराजमान रहा तब तक तो गुरुधर्म को निभाना ही था, परंतु परमधाम पधारने के उपरांत भी आपने विचारा कि मेरा सनातन गुरुशिष्यधर्म मेरे तक ही न रह जाय । जहाँ तक मेरा नाम रहे तहाँ तक मेरे शिष्य गुरुस्थान सिंहथल को न भूलें । इस लिये परमधाम पधारने के तीन दिन बाद असह्य विरहवेदना से पीड़ित श्रीदयालुदासजी महाराज की कातरता[1] देख साक्षात् अपना स्वरूप धारण कर दर्शन दिया और

---

१. करुं काई अपघात, मन तन चित अति विकलता ।
लह्यो न सतगुरु, साथ, यो कारज कैसे भयो ॥१॥
पूरणब्रह्म दयाल, बाबाजी कीजै कृपा ।
यो जिव लेहु सँभाल, नहितर यो तन त्यागसूँ ॥२॥

(श्रीराम. परची वि० ४१)

मस्तकपर हस्तकमल धर तत्त्वज्ञानोपदेश दे धीरज बंधाई, और फरमाया कि मैंने जो सद्गुरु गादी की टेक निभाई है, वैसी ही सर्वदा तुम भी निभाते रहना तथा अंतसमय में जैसी मेरी साँच भावना फली है उसका भेद[1] आज से चौथे दिन सिंहथल से श्रीहरदेवदासजी महाराज पधारकर तुमको जतावेंगे । ऐसा फरमाकर आप अंतर्धान हो गये ।

ऐसे गुरुधर्मी सत्पुरुषों को धन्य है और उनको कोटिशः दंडवत् प्रणाम है ।

धन्य है उस धाम को जिसमें आपने वास किया । साक्षात् उस धामके दर्शन करने से मुक्त हो जाय इसमें तो आश्चर्य ही क्या है । अगर स्वप्न में भी दर्शन हो जाय तो वह प्राणी कृतकृत्य हो जाता है । उस धामका आजतक भी इतना प्रभाव है कि कोई भी प्राणी भूत प्रेत डाकिनी शाकिनी आदि से पीड़ित हो और वह धाम की शरण में आता है तो उपरोक्त सब दुःखों से मुक्त हो परम पदवी को प्राप्त होता है ।



---

१. श्रीरामदासजी महाराज इस पांचभौतिक शरीर को त्याग कर दिव्य शरीर से प्रथम सिंहथल श्रीगुरु धामके दर्शनकर फिर वैकुंठ पधारे थे । इस भेदको श्रीहरदेवदासजी महाराज जानते थे और आप आजसे चतुर्थदिन खेड़ापा पहुँचने वाले थे इसलिये श्रीरामदासजी महाराज ने फरमाया कि—
साच भावना फलै सदाई, सो देवी हरिदेव जनाई, चौथै दिवस समझ में वायक, सिख तुम जानो साच सदाइक, शीश नमावो गुरुस्वस्थाना, मनवचक्रमलग एक विधाना, आदि संप्रदाभेद विचारो, सतगुरु गादी टेक निभारो ।
(श्रीराम. परची वि० ४१)

२. श्रीदयालुदासजी महाराज

श्रीदयालुदासजी महाराज की अगाध महिमा का वर्णन करना अति कठिन है । आप ब्रह्मवेत्ता अनुभवी बड़े ही सच्चरित्र महात्मा हुए । श्रीपूर्णदासजी महाराज की बनाई हुई जन्मलीला नामक ग्रंथ से अनुभव कर सकते है कि आप कैसे प्रभावशाली गुरुभक्त अद्वितीय तेजोमयी दिव्य मूर्ति थे ।

उसी जन्मलीला का यहाँ उल्लेख किया जाता है ।

।।अथ जन्मलीला।।

हरिरामा रामा नमो, द्यालबाल मुझसाम ।
मन बच क्रम करिये सदा, पूर्ण ताहि प्रणाम ।।१।।

दोहा

बंदन श्री परब्रह्म को, पुनि गुरु को प रणाम ।
सब संताँ सिर नाय हूँ, खानाजाद गुलाम ।।१।।
रामदास महाराज के, द्याल शिरोमणि शिक्ख ।
जन्म सुलीला वर्णि हूँ, निज गुन रूप प्रत्यक्ष ।।२।।
दयारूप धरि प्रग्गटे, पूरण के शिरताज ।
जीव अनेक उधारणे, प्रगट किये यह साज ।।३।।

छप्पय

निर्गुण निज निरकार दृष्टि कहुँ मुष्टि न आवै ।
अपरमपार अलेख नेति तिहि निगमसुगावै ।।
जोगधारणा धार ध्यान कर ध्यावत कोई ।
दुरलभ दुष्कर कठिन ताहि दरशन नहिं होई ।।
स्वयं ब्रह्म अवतार धर द्याल अवनि प्रगटे प्रत्यक्ष ।
ऐसो न कोई देख्यो अवर देख्यो दीनदयाल इक ।।१।।
अविगत आज्ञाकरी प्रगट मम भक्ती कीजै ।
कलीकालविकराल ताहिको शिक्षा दीजै ।
कामी कुटिल कुजात अधम अघगामी सारा ।
दो भक्ती उपदेश राम निज मंत्र हमारा ।।

तब आयसु शिर पर धारिके द्याल लिए अवतार इल ।
रामदास पितु पाय धिन सुंदर माता कूख भल ॥२॥
वडूँ गाँव शुभ वास जहाँ इक सदन कहीजै ।
नमो द्याल तहाँ जन्म प्रथम परचो सु लहीजै ॥
सुरपति घन वरसाय गड़ा जहाँ पड्या अपारा ।
सदन निकट ही नाँहि दूर धरनी दल गारा ॥
चरणामृत गुटकी दई महाप्रसाद गुरुदेव भल ।
द्याल जन्म उच्छव भयो नर सुर कीरति करत कल ॥३॥
समत अठारह जान वरष षोडश परवानो ।
तामध मिगसर मास शुक्ल एकादशि जानो ॥
भृगू वार परसिद्ध रेवती नखत भणीजै ।
अमृत पुल सिधिजोग गुरु लगनेश गिणीजै ॥
सब सोम ग्रह शुभ ठौरपर द्याल लिए अवतार तब ।
कहुँ सुक्षम स्थूल जिव चर अचर वर्ष हर्ष मान हुय मुदित सब ॥४॥
आनँद अगम आपर अनत जहाँ वाजा वाजे ।
अनत उदित अंकूर सकल शभु मंगल साजे ॥
सर तरु नदी निवान वनी परवत घन धारा ।
वापी कूप तड़ाग अमी अमृतरस सारा ॥
उद्योतकार जीवां सकल संत प्रगट अवतार हरि ।
नरदेह धर्यां विन हरिहुते संत भये नरदेह धरि ॥५॥
भरत खंड परसिद्ध दीप जांबू सुखकंदन ।
देश मुरधरा नमो गाँव खैड़ापो बंदन ॥
गाँमधणी पति नाम पदमसिंह प्रोहित राजे ।
विजयसिंह नरनाथ वार परताप सदा जे ॥
नर नारि सकल धरधाम धिन तहाँ संत अवतार धर ।
आनँद अपार उच्छव अनत मंगल पर विनोद कर ॥६॥
ज्यों दशरथ के राम सूर कश्यपके राजे ।
परशुराम जमदग्नि कपिल करदमके छाजे ॥
कृष्णाजन्म वसुदेव व्यास के शुक मुनि त्यागि ।
उद्दालकके प्रगट नासकेत जु वडभागी ॥

हँसरूप हँसा धरे भिन्नभेद नहि सार है ।
परब्रह्मपूरणकला सागे अंश अवतार है ॥७॥
उदित वंश मध सूर मिटे अज्ञान अँधारा ।
कमलरूप निजदास उतम सिख चकवा सारा ॥
विमुख कमोदनि जान इन्द्रि उडगन सब मुरझे ।
वाद उलू भ्रम भूत चंद्रमन तामें उरझे ॥
शिशुमारचक्र प्राणसु प्रगट काम क्रोध मोह चोर है ।
वेद पहरवा सोय रहे संत सूर वड जोर है ॥८॥
सतजुग सतव्रत सार तप्प त्रेताजुगमांही ।
द्वापर दान विशेष क्रिया धर्म सब वरताही ॥
तीन जुगनको धर्म प्रगट सारे वरतायो ।
कलीकाल विकराल नीति गति माग दुरायो ।
अवसान कोइ एको नहीं कलीराज थाना थपे ।
तब द्याल संत करुनाअयन नीशान शक्तिनिश्चलरुपे ॥९॥

दोहा

ठौर ठौर सब ठांम पर, भक्ति प्रगट परभाव ।
चकवे राज नरेश पद, गुरुध्रम सुमरण चाव ॥१॥

छंद पद्धरी

नृप भए चक्रवर्ती सुजान । जिन प्रगट कर्‌यो गुरुधर्म ज्ञान ।
उपदेश जीव दे मुक्तिदान । थिर भक्ति राज अविचल निशान ॥१॥
कलि रह्यो नाहि कहुँ ठाँ प्रवेश । शुभ जाग माग ज्ञानोपदेश ।
तब भगे चोर जारान मार । तपतेज नीति थिर थपे वार ॥२॥
मुख अग्र आन कोउ जुर्‌यो नाहिं । परमानँद उपज्यो आप माँहिं ।
महाज्ञान ध्यान धीरज अपार । गम अगम बचन आगम उचार ॥३॥
गुरुधर्म टेक धारण सधीर । गिरिगोम व्योमगंगा गँभीर ।
सोभायमान गुरुगुराँमांय । सब ग्रंथ अर्थ निरणै वताय ॥४॥
अरि मित्र सबे धिन धिन उचार । कर नाम संज्ञा साचे प्रकार ।
कहुँ नैना नहि देखे दयाल । सब नख चख देखो दास द्याल ॥५॥

जिन बचन द्याल तन मन दयाल । चखश्रवन ह्रदय बाहू विशाल ।
सोभायमान शिर उतुंग भाल । कप्पोल पूर बिम्बौष्ठ लाल ॥६॥
भ्रूबंक अंक नक तीख जान । चिबुक अंब कँबूप्रमान ।
उर बड विशाल नाभी गंभीर । कटि जंघ जानु गुल्फाँ अमीर ॥७॥
पदकंज रज्ज अलि शिष सुचाय । रज चरन परस मिल मोक्ष माँय ।
अनुभव प्रकाश उद्योतकार । अविरल अनूप नहिं वार पार ॥८॥
धन धारा पहुमी रह न पार । यों अनुभव बाणी तत्त्व सार ।
उबक्यो पयाल गरज्यो समंद । फाट्यो अकाश बरष्यो सु छंद ॥९॥
घन छिनवे क्रोडाँ मेघमाल । गिरि मेरु झड़ी अमृत रसाल ।
कूद्यो अकाश हनुमंत बीर । उड्ड्यो खगेश कन चक्रधीर ॥१०॥
तूटो वज्राँक रूठो महेश । कीनो भ्रम खंडन काम देश ।
छूटो रघुपतिकर बान पानि । सोख्यो सर मोहा आदि मानि ॥११॥
उचक्यो उढाले मुचक्यो मराल । सुचक्यो सुरेश रसना वयाल ।
उछल्यो क्षिरोद हाल्यो समीर । घन घटा घोर भादौं गँभीर ॥१२॥
कर वेद चार निरणै विचार । दश अठ पुराण षट भाष सार ।
व्याकरण अष्ट निरताय सोय । षट शास्त्र भिन भिन लिये जोय ॥१३॥
रस रामायण शिर मोर सार । भागवत वचन भगवत उचार ।
भारत भगवद्गीता विशेष । सो सार सार सब लिया देख ॥१४॥
करि प्रश्न दियो निर्णय बताय । अनधन नहि ऊणत रखी काय ।
दत दान मान करुणादि आधि । दुखिया दे औषध मेट व्याधि ॥१५॥
जाके शिर कर धर कह्यो सोय । अजरामर आनँद तुरत होय ।
दैत्यादि भूत डाकिनी नारि । मरजाद सींव नहिं पाँव धारि ॥१६॥
हिड़क्यो तन मिरगी अबुध होय । फीयो लिप बहुविधि रोग कोय ।
नर नारि पशू जो शरण आय । जल पियाँ तृषा ज्यूँ रोग जाय ॥१७॥
जाच्याँ नहिं ऊणत रखी कोय । लघुउ दीरघ भिन्न न भेद होय ।
अनबी नुय लागे आन पाय । कर दरशन चरचा पोष थाय ॥१८॥
उपदेश राम निज मंत्रसार । दशहूँ दिशि सिषसाखा अपार ।
कर रामत मालागर मँझार । नृप गूंड देश दक्षिन सुधार ॥१९॥
गुर्जर घर पावन करी सोय । थलवट मुरधर धिन धन्य होय ।
दिग्विजय अगंजी भक्ति साज । कहुँ जगत मेख तप तेज़ राज ॥२०॥

निःशंक सदा आनंद सोय । औघट विन थाटी विकट होय ।
सुख दुख हरष न शोक मान । शत्रूज मित्र सब एक जान ॥२१॥
निज धर्म सनातन सारसार । गहिलयो हंस ज्यूँ खीर वार ।
अज चींटी कुंजर एक जान । कहुँ हानि वृद्धि नहिं भेद मान ॥२२॥
सब विश्व ब्रह्ममय दृष्टि देख । उर उपज महा उद्योत एक ।
रत ब्रह्मवाद विद्या प्रकाश । मद मोह द्रोह कर काम नाश ॥२३॥
रह प्रसन्न सदा सम भाव दास । विज्ञान ज्ञान पूरण प्रकास ।
मत अडिग सदा कूटस्त जान । मिथ्या भ्रम ग्रंथी ह्रदय भान ॥२४॥
मन बाच काय पीयुष प्रवीन ॥ त्रय भवन सवै उपकार कीन ।
सब बूझ साधुपद गमन कीन । पापान मान मद सजा दीन ॥२५॥
मान्या न मान संत सेव कीन । अति दुखी दरिद्री सार लीन ।
लूले कहूँ पंगू मूक सोय । चषहीन बधिर पुनि वृद्ध हौय ॥२६॥
कहुँ ठीक ठौर ताके न काय । बल बिना निबल चाल्यो न जाय ।
निरधाराँ आधार जान । सबहीके रक्षक ढाल मान ॥२७॥
बुधि भल क्षम मति चित उक्तसार । बानी विवेक अविरल उचार ।
अनुभव रस छोलाँ जुगति जोर । नित बधे पँचालीचीर कोर ॥२८॥
दीरघ वपु दरशन दीपमान । उद्योत कार ज्यों प्रगट भान ।
सोभंत सभाको रूप सार । मोहंत करत चरचा उचार ॥२९॥
काव्य जु बँध कविता छंदसार । ततकाल कहत नहि लहत पार ।
सरस्वति गनपति शुक वेदव्यास । शिव बालमीकि कवि शुक्र जास ॥३०॥
यह भए कवी बागे प्रत्यक्ष । देख्यो दयाल संशय न चिक्ख ।
नहिं हुते प्रगट पहुमी दयाल । कलि दाब देत भक्ती पयाल ॥३१॥
निज राममंत्र प्रग्गट प्रताप । घटघट प्रति व्यापक ब्रह्म आप ।
कुन जानत निर्गुन सगुन जोत । कलि काल द्याल सँत नाहि होत ॥३२॥
दधि मथ कर काढ्यो घृत्तसार । लीनो तत छोई दई डार ।
फल कतक करत करदम विछोर । निरमल जल करिहै शक्ति जोर ॥३३॥
गुनमयी ज्ञान भक्ती विरोल । यों भिन भिन कीन्हा तोल तोल ।
सब जुक्ति चेताए जठर जीव । मिट गये दोष सुखिया सदीव ॥३४॥

कटि गये करम सब भरम भाज । डूबत ले तारे नाम ज्याज ।
तिर आप और तारे कितान । तरणी दृष्टान्त गुरु साच मान ॥३५॥
कर भजन प्रथम निर्मल शरीर । रसना रस अमृत लहे सीर ।
परकार चार सुमरण विधान । अध मध उतम अति उतम जान ॥३६॥
मुखकमल पंखड़ी चार भास । कँठ कमल पंखड़ी षट प्रकास ।
खुल अष्ट पंखड़ी उरमँझार । नाभी खुल षोडस पंख सार ॥३७॥
मन पवन मिले दोनों प्रकार । हुब थुब हुय भेला कर गुँजार ।
फिर शब्द गमन आगे चलाय । भिद मूलचक्र पाताल जाय ॥३८॥
उलटा सु पलट यह अगम खेल । जीता गढ बंकी मेर पेल ।
मिणिया इकवीसूं छेद जाय । निकसे गज नाके सुई माँय ॥३९॥
वहाँ कमल पंख बत्तीस होय । शत्रू सब मित्री भया सोय ।
आगे चल त्रिकुटी तख्त माँय । तहाँ जीव शिव मिल एक थाय ॥४०॥
सहस्त्रादि पंखड़ी कमल भास । जहाँ जन्ममरणकी मिटी त्रास ।
जहाँ सुरत शब्द मिल करत केल । मिल हँस परमहँस अगम खेल ॥४१॥
नवधाम परे अपरम अपार । सो सता समाधी संत सार ।
महामाया ज्योति प्रकृति सार । शुन आतम इच्छा भावपार ॥४२॥
पर भावे केवल ब्रह्म होय । जहां जीव शीव मिल नहीं दोय ।
आया जहाँ मिलिया संत जाय । कर केवल भक्ती मुक्ति माँय ॥४३॥
कर विष्णुउछव वैकुंठमाँहिं । मम प्राण बलभ लीजे वधाँहि ।
लक्ष्मी ले परकर सर्ब साथ । धन धन्य करत वैकुंठनाथ ॥४४॥
कर भक्ति प्रगट मम नाम सोय । वंशोधर सुत सम नहीं कोय ।
यों उर्ध लोक उच्छव अपार । यहाँ द्याल आप निज सुरत धार ॥४५॥
दे सैन प्रथम सबको जनाय । इक पद फरमायो राग माँय ।
हम हैं परदेशी लोक साध । कब आन मिलेंगे मेटि व्याध ॥४६॥
ततकाल दई पत्री लिखाय । निजगुरुद्वारेसूँ महंत आय ।
सब भाई बाई मिले जाय । करदरशन परसन पोष पाय ॥४७॥

दोहा

इह प्रकार निरधार करि, आदि अंत मध सोय ।
दीन दयाल दयालु वित्त, भिन्न भेद नहिं कोय ॥१॥

छंद गीतक

थिन द्याल सतगुरु प्रगट इल पर मनुज तन धर आविया ।
अंकूर जीवाँ उदय कारन भूरि मोसर पाविया ॥
अरु समत एके आठ ऊपर वर्ष षोडश सारही ।
पुनि मास मिंगसर तिथि उजाली अग्यारस भृगुवारही ॥
ता दिवस धर अवतार नर तनु जगत सारो जीतिया ।
महा अंगजी दिग्‌विजय करिके वरष गुनतर वीतिया ॥
इक मास ऊपर प्रगट पुनि तो दिवस पनरे पर भए ।
तब करी इच्छा मोक्ष की निज लोक की चितवन ठए ॥
तहाँ माघ वद तिथि भई दशमी मध्यदिनमणि आवियो ।
तब स्पर्शन[1] उर्धा खैंचिके निज सुरत शब्द मिलावियो ।
सब बये विलखे रामजन किमु दर्श विछुरन सहि सके ।
विन नीर मच्छी कमल विन दिन बचन बानी सब थके ॥
है नैन सहजल हियो भरभर रुदन कर कर उच्चरे ।
इक बेर द्याल कृपालु दरशन देहु सब संकट टरे ।
पुनि सभामंडन भर्म खंडन तार ग्रंथाँ कुन करे ।
ऐवास सर तरु नारि नर अरु सकल दुख दूभर भरे ॥
निज जान अनुचर कृपा कर कर हाथ शिर धर दाखियो ।
वरदान पूरणदास माँगे सदा चरणाँ राखियो ॥१॥

सोरठा

रटके मनके माँहि, चित भटके दशहूं दिशा ।
किनके खटके नाँहि, द्याल तणा दुख दरद की ॥११॥
तटके तूटो नाँहि, फटके नहि फूटो हिया ।
अटके किम उरमाँहि, लटके लोह लंगर जड़यो ॥२॥
शरणागतकी, लाज, आन परी है आपकूँ ।
ले वहियो महाराज, पतती पूरणदास कूं ॥३॥

---

१. स्पर्शन = वायु । श्वसनः स्पर्शनो वायुरित्यमरः ।

दोहा

लीला जन्म दयालुकी, के करि सके विचार ।
बुधि प्रमाण वर्णन करी, सदगुरू अगम अपार ॥१॥

॥ इति ॥

इस उक्त जन्मलीलाग्रंथ से निश्चय होता है कि, आप साक्षात् भगवत अवतार ही थे । आपके अनेक परचे हुए और सामने जगद्धितार्थ बहुतसी अनुभवबाणी प्रगट की ।

आप की सिंहथल धाम में जो गुरुभक्ति थी वह तो गुरुप्रकरण और बाणी से स्पष्ट ही प्रगट हो रही है । सम्बत् १८५५ आषाढ शुक्ला ८ गुरुबार को श्रीहरदेवदासजी महाराज के आग्रह से आप गादी विराजे ।

सबसे पहिले दर्शनार्थ गुरुधाम सिंहथल पधारकर फिर रामत[1] वगेरह में पधारे । बीसोंहीबार खेड़ापे तथा अन्य मेलों में महन्त महाराज श्रीरघुनाथदासजी महाराज को पधराए । सम्बत् १८८० में मालवा व गूँडवाणे की बड़ी रामत तथा सम्बत् १८८३ में गुजरात की बड़ी रामत साथ ही में करवाई[2] ।

कहाँतक आपका गुरुधाम में प्रेम वर्णन किया जाय? धामपधारने के समय श्रीगुरुधाम सिंहथल पत्रिका भेज महन्त महाराज श्रीरघुनाथदासजी महाराज को पधराय दर्शन कर फिर माघ कृष्ण १० वि० सं० १८८५ को परलोक पधारे ।

३. श्रीपूर्णदासजी महाराज

आपने मालवा प्रान्त ग्राम मेलकी में सम्बत् १८२८ चैत्र कृष्ण २ को वैश्यकुल में जन्म धारण किया । सम्बत् १८३८ के खेड़ापा फूल डोलके मेले पर दीक्षा धारण की और सम्बत् १८८५ में गादी विराजे ।

---

१. देशाटन । जिस रामतसे सं०१८८३ फागण शु० १३ को दोनों महन्त महाराज पीछे खेड़ापे पधारे थे ।

२. संवत् १९०६ में एक सिंहथल महन्त महाराज कीही मालवा और गूंडवाने की रामत हुई ।

आप बड़े अद्वितीय योगिराज महात्मा हुए । आपका बनाया हुआ गुरुमहिमा नामक ग्रंथ अत्यंत सुंदर और दर्शनीय है ।

श्रीदयालुदासजी महाराज की तरह आपने भी गुरुधर्म पूर्णरीति से निभाया, परंतु खेद की बात है कि आप कार्तिक शुक्ला ५ वि० सं० १८६२ को इहलीला संवरण करने के कारण सात ही वर्ष गादी विराजे ।

४. श्रीअर्जुनदासजी महाराज

आप बड़े तेजस्वी राजा पृथु के समान मर्यादी प्रख्यातकीर्ति राजमान्य सत्पुरुष हुए और योगियों में एक अग्रगण्य योगिराज थे । आपने खेड़ापे ठिकाना और भेख की बहुत ही उन्नति की ।

आपकी सिंहथलधाम में गुरुभक्ति थी वह अलौकिक ही थी । आपका नियम था कि हर साल नहीं पधार सकें तो भी तीसरे वर्ष तो सब संतों को साथ लेकर दर्शनार्थ गुरुधामको अवश्य पधारना ही, साथ में आये हुए सब साधुवों से पहिले गुरुधाम की भेंट करवाकर फिर स्वयं करना, देखिये महीने में पांच दफेही क्यों न हो जितनी बार श्रीसिंहथल महन्ताँमहाराज का दर्शन करना तो भेंट[1] करके ही करना ।

श्रीमहंत महाराज संध्यावंदन दंडवत आरती करवाते उतने आप चरणों भाल रहते ।

कहां तक आपके गुरुधर्म की मर्यादा वर्णन करें ? श्रीसिंहथल महन्ताँ महाराज के सामने कोई भी साधु आपको महन्त महाराज कह देते तो उसको झिड़क कर फरमाते "अरे मूर्ख ! बोलने का खयाल नहीं है, सिंहथल महन्त महाराज के सामने मेरे को किन लफ्जों में बतला रहा है।"

देखिये खुद आप खेडापा के महन्त महाराज थे परंतु सिंहथल महन्त महाराज के सामने आप इतनी भी बेअदबी का बरताव करना नहीं चाहते

---

१. नीतिः-'रिक्तपाणिन पश्येत राजान भिषजं गुरुम्' ।

थे । और कितनी भावना व नम्रता के साथ आप गुरुधाम को विनयपत्र[1] लिखाया करते थे ।

---

१. विनयपत्र—

॥ श्रीरामजी ॥

स्वस्ति श्रीसिंहथल राम मोहल्ला शुभस्थाने ऋद्धि वृद्धि जयो मंगल रामधाम साकेत धाम परम पुनीत सप्त श्रोत गंगा अड़सठ तीर्थ आनन्द धाम सार २ स्थान रमणीक भजनानन्द विराजतम् त्रिविधताप जन्माजन्म कल्मष पाप हरता ऐसी २ अनेक ओपमा गुरु दयालु विराजे जिणदिश हमारो प्रणाम बारम्बार श्रीगुरुदयालजी बाणी निहाल कारण कृपालु बन्दी छोड़णा महरबान महाराज परउपकारी सिधकारी सच्चिदानन्द आनन्दघन श्रीगुरुसाहिब भक्तिपुंज अज्ञानहरणकारणकरण ज्ञानमूर्ति ध्यानमूर्ति जत सत साच शील संतोष दिव्य भक्तिप्रकाशक भण्डार ज्योतिरूप महन्त भगवन्त पूर्ण कलाजीवम मुक्तिगामी निर्धारॉं आधार अशुचाँ शुचि अनाथाँ सनाथ कर्ता विघ्नहर्ता गुरु इष्ट भगवन्त गुरुप्रेम दाता दशदोषहर्ता ज्ञान वैराग्य भक्ति के दाता सर्व सिद्धिकारी आत्मशान्ति मनभावन सिद्धस्वरूपी शरणप्रतिपालक श्रीगुरुमहाराज श्रीगुरुभ्यो प्रणम्य नमस्तु ते शिष्य के साधारणसुरत के ज्योति मन उमेदता के सुथानक मीनके नीर आधार खगके पर आधार प्राण के श्वास आधार प्रजाके राज प्रतिपालक आधार राजा के तपस्या सदपुनीत आधार सर्प के मणि आधार पंडित के विद्या आधार कृषाण के कृषि आधार कमल के सूरज आधार चकोर के शशि आधार जोगी के जोगबल आधार तरवरके जल आधार शिष्य के श्रीगुरुदेवजी महाराज को आधार दृढ़भावना आधार श्रीमहन्तामहाराज चरणकमलायनुँ षट् सरोज प्रकाशन चरणरविन्द आनन्दकन्द श्रीगुरुदयालजी जीवाँरी जहाज तरणतार मुक्ति के दाता महाराज राजन के राजा हो ।

चन्द्रायणा

ओपम और अनेक मंड में कहत है तमकुँ सबही शोभ बड़ागुण महन्त है ।
धीरज मेरूसमान तरणिज्युँ भास हो हरिहाँ शीतलचन्द समान शीलकी रास हो ॥१॥
नीर क्षीर निरताय हंसमतिज्ञान है सांच झूठ कर भिन्न सर्व विधि जान है ।
धीरज ध्यान समाधि इन्द्रिमन जीत हौ हरिहाँनिराकार निर्लेप ब्रह्मा अद्वैत हौ ॥२॥

अहो महाराज श्रीदयालु पूर्णब्रह्म कृपानिधान स्वयं ब्रह्म सच्चिदानन्द श्री श्री श्री श्री श्री श्री १०८ एति श्रीशोभितम् देहरूप नाम महाराज श्रीमहन्तमहाराज श्री चेतनदासजी महाराज के हजूर लिखितम् खेड़ापा राममोहल्लासूँ खानाजाद गुलाम पदरज पन्है उठावणहार चरणाँरो अनुचर दासानुदास अर्जुनदास दामोदरदास का दंडवत् परिक्रमा विनतीसहित रामराम मालूम होसी ।

सोरठा

यहाँ सदा सुख ऐन, प्रसिद्ध आपरे तेजही ।
वहाँ सदा सुखचैन, सदाघणाभल चाहिए ॥१॥

श्रीमहन्त महाराज के सामिल आपने तीन चौमासे जोधपुर करवाए। राजामहाराजों में कई पधरावणियें साथ में हुई और कई रामतें सामिल करवाई । अन्य मेलोंपर साथ में पधारने की तो गिनती ही क्या है ।

आपने सम्बत् १९४६ में जीवित महोत्सव (मेला) करवाया जिसमें श्रीगुरुधाम सिंहथल महन्तमहाराज श्रीचेतनदासजी महाराज का हाथी होदे वधावणा, मुहर मोतीयों से तिलक, आरती, जरी पग मंडा भेट पूजा, शाल दुशाला ओढ़ावणी आदि से कितने सत्कार के साथ स्वागत किया उस समय के उत्सव आनन्द को वही जान सकते हैं जिन्होंने दर्शन किये हैं। वैशाख कृष्ण ७ सम्बत् १९५० को आप धाम पधारे ।

तमतो करुणानिधान, ज्योतिरूप जगदीश हो ।
कागदमाँहि विधान, हमको लिखियो चाहिए ॥२॥
कागद लिखत समाज, आप कृपानित राखजो ।
बाँह गह्याँकी लाज, विरद रावरो जानिके ॥३॥

अहो महाराज ! आपरे शरीर रो जल प्रसाद सुखवास सुख पोढ़न सुख असवारी आनन्द रा परम जतन रखावसी । जतन तो श्रीरामगुरुदयालजी करण समर्थ छै । परन्तु दासरो योही परापरी धर्म छै सु हाथ जोड़ अर्ज मालूम करी चाहिजै । अहो महाराज । उठै साध थानारामजी रतनदासजी जेसारामजी भुगारामजी लछीरामजी मगनीरामजी दयारामदासजी पीतमदास निर्भेराम नेतराम हीरदास मोहनदास निश्चलदास आशाराम जैतराम जसुराम रतिराम जुगतिराम छोटियो आशाराम आदि राम परिवार में सर्वने राम राम फरमावसी । और अठै साध ब्रह्मदासजी स्वरूपदासजी तुलसीदासजी प्रल्हाददास जसारामजी जगजीवनदासजी जैतराम रामरतन आत्माराम हरलाल नगाराम दूजो आत्माराम दूजो तुलसीदास भवानदास कोमलदास स्वरूपराम विरक्त श्यामदास चतुर्दास ज्ञानदास मुकुन्ददास आसाराम मोहनदास केशवदास सेवादास रामजीदास मगनीराम रामकृष्णादास गजाराम रामप्रताप दुर्गदास शिवरामदास नानगदास हिम्मतराम और हाली विसनों देवो चतुरो रूपाराम आदि सर्वका दंडवत् परिक्रमासहित रामराम मालूम होसी । कृपा अनुग्रह घणी रखावसी और मेह पाणी मोकला छै । शाखाँ बाड़ी छोटकी छै और समाचार आत्माराम मालूम करसी सो जणावसी सम्बत् १९१३ भादवासुदि १ वार अदितवार.

५. श्रीहरलालदासजी महाराज

आपभी गुरुमहाराज के समान प्रभावशाली शुद्धान्तः करण सुशील महात्मा हुए । आप दयालुता वात्सल्य उदारता की तो मानो मूर्ति ही थे। आपमें अहंकाराभिमान का तो नाम निशान ही नहीं था । सम्बत् १९५० में आप गादी विराजे । साधुओं पर आपका अगाध प्रेम था । देशी परदेशी दर्शनार्थ आए हुए कोई भी साधु पीछा जाने के लिए आज्ञा मांगता तो आप फरमाते, "भाई ! जाने का नाम मतलो, जाने के नामसे ही मेरा चित दुखित होता है । मेरी आज्ञा तो यही है कि इसी धाम में मेरे पास निवास करो" यों फरमाते २ ही प्रेम से गद्गद् बाणी हो जाते । जबभी आपका ऐसा माईतपणा स्मरण हो जाता है तो हृदय थाँभने के लिए सिवाय आँखों में से पानी निकालने के दूसरा उपाय ही क्या है ।

गुरुधर्मी भी आप पूर्ण थे । गुरुधाम सिंहथल में आपकी पूरी गुरुभावना थी । श्रीमहन्ताँ महाराज के चरणाविंदो में जिस कदर आपका प्रेम था वह लेखनी से लिखना अशक्य है ।

आपका प्रेम था वैसाही श्रीमहन्ताँ महाराज का आपपर प्रेम था । प्रायः आप दोनों साथ ही विराजे । साथ ही मेलों पर पधारते । साथ ही रामत[1] करवाते । जोधपुर चातुर्मासा करवाया तो साथ ही करवाया । यहाँ तक प्रेम था कि सिंहथल से श्रीमहन्ताँ महाराज को पधराय दर्शनकर पौष कृ० ७ वि० सं० १९६८ को आप परलोक सिधार गये ।

६. श्रीलालदासजी महाराज

देश ढूंढाड़ घाड़नामक ग्राम में सोलंखी सरदार के घर आपका जन्म हुआ । सम्बत् १९६८ में गादी विराजे । आपभी बड़े वैराग्यवान् भजनानन्दी महात्मा हुए । गुरुधर्म और नित्यनियम के धारण करने में तो आप जैसे आप ही थे । हर समय ईश्वर चिन्तवन में लवलीन रहा करते थे ।

करुणासागर का पाठ तो आपके मनहीमन में होता ही रहता था ।

---

१. देशाटन

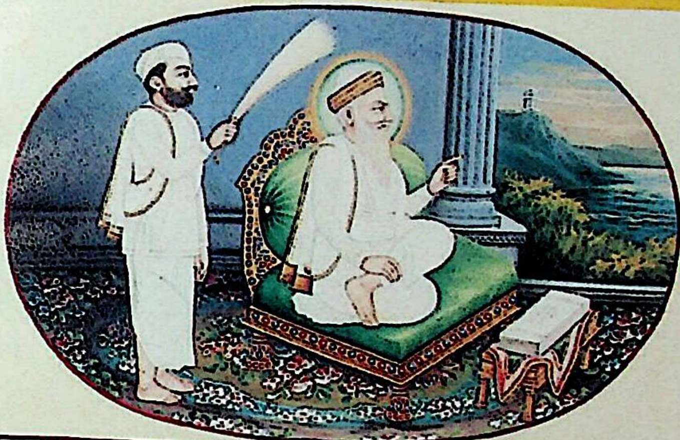
श्रीगुरुधाम महन्ताँ महाराज श्रीरामप्रतापजी महाराज के चरणारविंदों में जो आपका प्रेम था वह प्रशंसनीय था । साथ ही में मेले महोत्सव जोधपुर राममहोले चातुर्मास आदि करवाए । बूँदी रतलाम आदि रजवाड़ों की पधरावणी में साथ ही पधारे ।

श्रीअर्जुनदासजी महाराज के समान ही आपने सम्बत् १९८१ में जीवित महोत्सव (मेला) किया जिसमें गुरुधाम सिंहथल महन्तां महाराज श्रीरामप्रतापजी महाराजको पधराय हाथी होदे वधावणा, मुहर मोतियोंसे तिलक, जरीपगमंडा, भेट पूजा आदि उत्सव कर गुरुद्वारा सिंहथल के साधुसन्तों को अपने हाथ से चादर, ओढावणी ओढाकर मेले में देशी परदेशी सब साधु रामस्नेही भावस्नेही आये थे उन सबको दर्शन दे पाँच महीने बाद जोधपुर विष्णुदासजी के चातुर्मास की पधरावणी में सं० १९८२ भाद्रपद कृष्णा ४ को मध्यान्ह के २ बजे श्री सिंहथल महन्तां, महाराज के चरणारविन्दों में मस्तक रख जिस तरह परगाम जाते हों इसतरह परलोक जाने की आज्ञा मांग तत्क्षण परलोक पधार गये ।

ज्योंही महन्त महाराज अपने हस्तकमल से आपका मस्तक उठाते हैं तो आप सचमुच ही इस लोक से विदा हो गए । धन्य है गुरुभक्त हो तो ऐसे ही हो ।

७. श्री केवलरामजी महाराज

श्री लालदासजी महाराज के परमधाम पधारने के पश्चात् सर्व सन्त महात्माओं ने रामस्नेही सम्प्रदाय खैड़ापा की गद्दी पर भाद्रपद शु० ४ वि० सं० १९८२ के दिन आपको प्रतिष्ठित किया गया । आपकी जितेन्द्रियता एवं दयालुता तो बड़ी ही सराहनीय रही । आप षट्शास्त्र निष्णात थे । आपके धर्मोपदेश की कथ की छटा की घटा का आनन्दामृत बरसना तो अपूर्व रहा । गुरुधाम श्री सिंहस्थल धाम में आपका प्रेम अनहद रहा । स्वयं सिंहस्थल पधारना एवं श्रीसिंहस्थल महन्ताँ महाराज को पधराना इस सनातन परम्परा को आपने अन्त तक अच्छी तरह निभाया । अन्त में आप पौषसुदी ३ वि० सं० २००९ को परम धाम पधार गये ।





श्रीरामस्नेहि सम्प्रदायाचार्य पाट श्री खैड़ापा



८. श्रीहरिदासजी महाराज

आपका जन्म मध्यप्रदेश हौशंगाबाद जिले के अन्तर्गत 'बाबई' नामक ग्राम में हुआ । आपके माता-पिता प्रारंभ से ही खैड़ापा गद्दी के अनुयायी रहे । अतः आपको छोटी अवस्था में ही श्री केवलरामजी महाराज के चरणों में समर्पित कर दिया । आप बाल्यकाल से ही कुशाग्रबुद्धि थे। अध्ययन में आपकी रुचि देखकर श्रीकेवलरामजी महाराज ने आपके अध्ययन की सम्पूर्ण व्यवस्था करवा दी । थोड़े ही समय में आपने दर्शनआयुर्वेद आदि विषयों की आचार्य पर्यन्त शिक्षा प्राप्त कर लो । आप एक अच्छे विद्वान् होने के साथ साथ कथावाचक भी थे । आपकी कथा विद्वत्तापूर्ण होते हुए भी सर्वजनप्रिय थी । आचार्य श्री केवलरामजी महाराज के परमधाम पधारने के पश्चात् आपको खैड़ापा रामस्नेहि सम्प्रदाय की गद्दी पर माघ कृ० ४ वि० सं० २००९ को विराजमान किया । आपने सन्त साहित्य का प्रकाशन करवाया । स्थानों का सुप्रबन्ध करते हुए आप कथा आदि कार्यक्रमों में भी व्यस्त रहते थे । आप गद्दीपर केवल १३ वर्ष ही विराजे । अन्त में फाल्गुन शुक्ला ८ वि० सं० २०२२ को आप परमधाम सिधार गये ।

९. श्रीपुरुषोत्तमदासजी महाराज

आपका जन्म जोधपुर जिल में 'भोपालगढ़' तहसील के अन्तर्गत 'बागोरिया' ग्राम में हुआ । आपको बाल्यकाल में ही खैड़ापा के आचार्य श्री हरिदास जी महाराज को सुपुर्द कर दिया गया था । श्रीहरिदास जी महाराज ने आपको सुयोग्य विद्वान् बनाकर अपना 'उत्तराधिकारी' घोषित कर दिया । श्रीहरिदासजी महाराज के परमधाम पधारनें के पश्चात् चैत्र कृ० १० वि० सं० २०२२ को आप रामस्नेहि सम्प्रदाय खैड़ापा पीठ के नवम आचार्य पद पर विराजमान किये गये । तब से आप सम्प्रदाय एवं स्थान की अनुपम सेवा कर सभी को परमानन्दित कर रहे हैं । आपकी भी गुरुधाम श्री सिंहस्थल धाम में पूर्वाचार्यों की तरह अनुपम श्रद्धा है एवं उसी निष्ठा से सम्पूर्ण रीति-नीति का निर्वहन कर रहे हैं ।

(इति रामस्नेहिसम्प्रदायखेड़ापापीठाचार्याणां परिचयः)

"'श्री सिंहस्थल' खेड़ापा के गुरुशिष्य भाव का जहाँ इतना घनिष्ठ संबंध है, जहाँ परस्पर इतना प्रेम भाव है तो भला दो कैसे कहे जाँय "गिरा अर्थजल बीचि सम कहियत भिन्न न भिन्न" अर्थात् "जैसे वाणी और अर्थ ये दोनों जल और उसकी तरंगों के समान कहने में जुदे हैं किन्तु यथार्थ में जुदे नहीं हैं" इसीलिए थांमायत खालशाही ठिकानों के सन्त महात्मा मेले महोत्सव चातुर्मास आदि में सिंहस्थल-खेडाप गुरुधाम के दोनों आचार्यों को जैसे पहिले पधराते थे वैसे ही आज दिन पर्यन्त पधराते हैं।

'सिंहथल धाम में तो आप सबका यहाँ तक प्रेम है, मेले पर सिंहथल महन्तां महाराज को पधारने के वास्ते खुद आप तो विनय पत्र देते ही हैं परन्तु अवश्य पधारने वास्ते खेड़ापा महन्त महाराज के हस्तकमल से भी दिलवाते हैं।'

'फिर देखिये कैसी गुरुधाम में भावना है—अधिकारी सहित हाजरी में सात सात मूर्तियों (सन्तों) से छड़ी सवारी श्रीमहन्ता महाराजाओं को पधारने में हमेशह धाम की टहल बंदगी करने वाले साथ नहीं आसकते तो वे ऐसा न समझलें कि हमको भूल गये। इसलिए उन बड़भागी' बन्दगीदारों को प्रसन्न रखने के लिए धर्म मर्यादानुसार प्रत्येक मेले की चार चार (अब पाँच-पाँच) चद्दरें बहीं भेज देते हैं। धन्य हैं साधुओं में परस्पर प्रेम हो तो ऐसा ही हो।'

'श्रीराम गुरुदेवजी महाराज! आप सब महात्माओं की गुरुधाम में निरन्तर ऐसी ही अटल भक्ति बनाए रखे।'

'श्रीपरमात्मा से यही प्रार्थना है कि कठिन कुटिल कलिकाल की कुचाल से अनाक्रान्त हमारे इस रामस्नेह धर्म की सिंहस्थल खेड़ापा के आचार्य अपनी छत्रछाया में प्रथमतः जिस प्रकार सुरक्षित रखते आये हैं उसी प्रकार पुनरपि रखते हुए सुखी समृद्धिशाली और चिरंजीवी होवें।'

'इन गुरुधामठिकानों में साधु-सेवा शिष्टाचार सद्धर्मोपदेश, विद्याध्ययन, अतिथिसत्कार, अनाथों का पालन, रोगियों को औषधिप्रदान, गरीबों को सदावर्त, गौरक्षा, पक्षियों को चूण' आदि के प्रबन्धों की परम्परा से जैसी मर्यादा चली आ रही है और उदारबुद्धि से जिसका पालन हो रहा है इसी प्रकार प्रभु सदाकाल इसको निभाते रहें।'

(श्री रामनारायणजी महाराज के वचनामृत)

इस प्रकार श्रीसिंहस्थल, खैड़ापा रामस्नेही सम्प्रदाय के यशस्वी, तपस्वी, त्यागी, वीतराग महापुरुष आचार्यों के चरित्रों से पवित्र हुई अपनी बुद्धि को उन्हीं में समर्पित कर इस विषय का यहीं उपसंहार करना उचित समझता हूँ । अन्त में रामस्नेही सम्प्रदाय सींथल पीठ के वर्तमान आचार्य श्री १००८ श्री क्षमारामजी महाराज के प्रति विशेष कृतज्ञ हूँ जिन्होंने रामस्नेह धर्म प्रकाश का द्वितीय संस्करण प्रकाशित कर मुझे आचार्य परिचय एवं नादवंश विस्तार के लिए सौभाग्य प्रदान किया । आचार्य श्री के आदेशानुसार शिष्य रामपाल रामस्नेही ने इस कार्य में सहयोग दिया उसके लिए धन्यवाद ! आशा है कि सभी प्रेमी विज्ञ विद्वज्जन, संत महात्मा, साधक, कल्याणकामी पुरुष इस महाग्रन्थ का विशेष लाभ उठावेंगे ।

अन्त में इस सबके लिए मैं परम श्रद्धेय स्वामीजी महाराज श्रीरामसुखदासजी महाराज के चरणों में अत्यन्त कृतज्ञतापूर्वक श्रद्धा सुमन अर्पित करता हूँ जिनके पावन संकल्प से यह सब सुकृत्य हो पाया है । ''आछी करे सो रामजी के सद्‌गुरु के सन्त'' अर्थात् इस जगत् में अच्छे काम भगवान् या सद्‌गुरु या सन्तों की कृपा से ही सम्पन्न होते हैं । अत: मेरी अल्प बुद्धि के अनुसार यह सब सन्त-महात्माओं की कृपा का ही सुपरिणाम है ।

ॐ शान्तिः पुष्टिस्तुष्टिश्चास्तु

विनीत

गुरु पूर्णिमा संवत् २०५१

साधु नवलराम शास्त्री
साहित्यायुर्वेदाचार्य एम० ए०
श्रीरामधाम सींथल
बीकानेर (राज०)

ॐ राँ रामाय नमः ।

रामानन्दमहं वन्दे श्रीरामांशावतारकम् ।
आचार्य्याणां शिरोरत्नं मंत्रराजप्रचारकम् ॥ १ ॥

अथ श्री १०८ श्रीरामानन्दजी महाराजकृत मानसी सेवा ।

शालग्राम शब्द करि सेऊं तन तुलसी कर लीजै ।
आतम चंदन घसि घसि चरचूँ इस विधि सेवा कीजै ॥ १ ॥
ज्ञानजनेऊ ध्यानधोवती शुचि का अँचला कीजै ।
काया कुंभ प्रेम का पानी हरिदरिया भर लीजै ॥ २ ॥
दया आचार विवेक सुचौका उर अज्ञान करीजै ।
इच्छा पुहुप चढाऊं पूजा मनसा सेवा कीजै ॥ ३ ॥
त्रिगुणी त्रिकुटी मन करि अर्घा संपुट ध्यान धरीजै ।
पांचौं वाती जोय करेनै इच्छा सेवा कीजै ॥ ४ ॥
कलह कल्पना धूप अंगारी ब्रह्म अग्निकर खेऊं ।
उलटी वास गगन कूं लागी इस विधि सेवा सेऊं ॥ ५ ॥
गुरु गम मंतर जाप अजप्पा हिरदा पुस्तक कीजै ।
अनुभव कथा कहूं भाइ साधो इस विधि पाठ पढीजै ॥ ६ ॥
अनहद घंटा झालर वाजै अलख पुरुष की सेवा ।
पुरुष निरंतर बैठा साधो रोम रोम में देवा ॥ ७ ॥
गंगा जमुना वहै सरस्वती जहँ जाय ध्यान धरीजै ।
त्रिकुटि मँदिर में बैठा साधो वहाँ जाय दर्शन कीजै ॥ ८ ॥
सहज सिंहासन निर्भय सेऊं चित की चंवरी कीजै ।
चष्मा मांहि चंग ढलकाऊं धीरज बैठारीजै ॥ ९ ॥
कोई एक साधो मिलिया आई सब संतनका मेला ।
सतगुरु मेरे शिरपर ठाढा मुँहडा आगै चेला ॥ १० ॥
या मेरि सेवा या मेरि पूजा ऐसी आरति कीजै ।
आत्मा तत्त्व विचारी लीजै ध्यान निरंतर कीजै ॥ ११ ॥
जल पाषाण भरम की सेवा भूल भटक नहिं मरना ।
सतगुरु मेरे जुक्ति बताई तब भवसागर तिरना ॥ १२ ॥
बाहिर भरम कबहु नहि जाऊं अंतर सेवा जागी ।
रामानंद गंगा निर्भय आणी पारब्रह्मलिव लागी ॥ १३ ॥

दोहा ।

लिवलागी परब्रह्मसूँ, रतीनखंडे तार ।
रामानंद आनंदमें, गुरुगोविंद आधार ॥ १ ॥

इति ।

अथ ज्ञानलीला ।

चौपाई ।

मूरख तन धरि कहा कमायो । रामभजन विन जन्म गमायो ॥
रामभक्ति गति जानी नाहीं । भोंदू भूल्यो धंधा माहीं ॥ १ ॥
मेरी मेरी करितो फिरियो । हरि सुमरण तो कबहु न करियो ॥
नारी सेती नेह लगायो । कबहू हृदय राम नहिं आयो ॥ २ ॥
सुखमाया सूं खरो पियारो । कबहु न सुमर्‍यो सिरजन हारो ॥
जोबन मद मातो अभिमानी । पर घर भटकत शंक न आनी ॥ ३ ॥
स्वारथ माँहिं चहूँ दिशि ध्यायो । गोविंद को गुण कबहु न गायो ॥
ऐसे ऐसे करत व्यवहारा । आया साहिब का हलकारा ॥ ४ ॥
बांध्यो काल कियो चौरंगा । सुत बेटी नारि न कोइ संगा ॥
जे तैं कर्म किया है भारी । सो अब संग सु चलै तुम्हारी ॥ ५ ॥
जम आगै ले ठाढो कीनो । धर्म राय बूझणकूं लीनो ॥
कीधा कौल किया तुम कर्मा । सिरजनहार न भज्यो निशर्मा ॥ ६ ॥
जिन पाणी सूं पैदा कीयो । नर सो रूप तोहिकूं दीयो ॥
जो तूं विसर्‍यो मूरख अंधा । तो तूं आयो जम के बंधा ॥ ७ ॥
हरि की कथा सुणी नहिं काना । तो तूं नाहीं जम सूं छाना ॥
साधुसंगति में कबहु न रह्यो । मुख सूं राम कबहु नहिं कह्यो ॥ ८ ॥
हरिकी भक्ति करो नर नारी । धर्मराज यों कहै विचारी ॥
मोकूं दोष न दीजो कोई । जैसा कर्म भुगताऊं सोई ॥ ९ ॥
पाप पुण्यकूं न्यारा ठाणूं । जो तुम कर्म करो सो जाणूं ॥
तुमरा कर्म तुम्हैं भुगताऊं । आदिपुरुष की आज्ञा पाऊं ॥ १० ॥
साहिब की आज्ञा है मोकूं । महा कसोटी देहूं तोकूं ॥
घड़ी घड़ी का लेखा लेऊं । कर्मादिक तेरा भरि देऊं ॥ ११ ॥
है हरि विना कौन रखवारो । चित दे सुमिरो सर्जनहारो ।
संकटतें हरि लेहि उबारी । निशिदिन सुमिरो नाम मुरारी ॥ १२ ॥
नाम निकेवल सब तें न्यारा । रटत अघट घट होय उजारा ॥
रामानंद यों कहै समझाई । हरि सुमिरे जमलोक न जाई ॥ १३ ॥

इति ।

ॐ राँ रामाय नमः ।

रामानन्दमहं वन्दे श्रीरामांशावतारकम् ।
आचार्य्याणां शिरोरत्नं मंत्रराजप्रचारकम् ॥ १ ॥

अथ श्री १०८ श्रीरामानन्दजी महाराजकृत मानसी सेवा ।

शालग्राम शब्द करि सेऊं तन तुलसी कर लीजै ।
आतम चंदन घसि घसि चरचूँ इस विधि सेवा कीजै ॥ १ ॥
ज्ञानजनेऊ ध्यानधोवती शुचि का अँचला कीजै ।
काया कुंभ प्रेम का पानी हरिदरिया भर लीजै ॥ २ ॥
दया आचार विवेक सुचौका उर अस्नान करीजै ।
इच्छा पुहुप चढाऊं पूजा मनसा सेवा कीजै ॥ ३ ॥
त्रिगुणी त्रिकुटी मन करि अर्घा संपुट ध्यान धरीजै ।
पांचों वाती जोय करेनै इच्छा सेवा कीजै ॥ ४ ॥
कलह कल्पना धूप अंगारी ब्रह्म अग्निकर खेऊं ।
उलटी वास गगन कूं लागी इस विधि सेवा सेऊं ॥ ५ ॥
गुरु गम मंतर जाप अजप्पा हिरदा पुस्तक कीजै ।
अनुभव कथा कहूं भाइ साधो इस विधि पाठ पढीजै ॥ ६ ॥
अनहद घंटा झालर वाजै अलख पुरुष की सेवा ।
पुरुष निरंतर बैठा साधो रोम रोम में देवा ॥ ७ ॥
गंगा जमुना वहै सरस्वती जहँ जाय ध्यान धरीजै ।
त्रिकुटि मँदिर में बैठा साधो वहाँ जाय दर्शन कीजै ॥ ८ ॥
सहज सिंहासन निर्भय सेऊं चित की चंवरी कीजै ।
चष्मा मांहि चंग ढलकाऊं धीरज बैठारीजै ॥ ९ ॥
कोई एक साधो सिलिया आई सब संतनका मेला ।
सतगुरु मेरे शिरपर ठाढा मुँहडा आगै चेला ॥ १० ॥
या मेरि सेवा या मेरि पूजा ऐसी आरति कीजै ।
आत्मा तत्त्व विचारी लीजै ध्यान निरंतर कीजै ॥ ११ ॥
जल पाषाण भरम की सेवा भूल भटक नहिं मरना ।
सतगुरु मेरे जुक्ति बताई तब भवसागर तिरना ॥ १२ ॥
बाहिर भरम कबहु नहि जाऊं अंतर सेवा जागी ।
रामानंद गंगा निर्भय आणी पारब्रह्मलिव लागी ॥ १३ ॥

दोहा ।

लिवलागी परब्रह्मसूँ, रतीनखंडे तार ।
रामानंद आनंदमें, गुरुगोविंद आधार ॥ १ ॥

इति ।

अथ ज्ञानलीला ।

चौपाई ।

मूरख तन धरि कहा कमायो । रामभजन विन जन्म गमायो ॥
रामभक्ति गति जानी नाहीं । भोंदू भूल्यो धंधा माहीं ॥ १ ॥
मेरी मेरी करितो फिरियो । हरि सुमरण तो कबहु न करियो ॥
नारी सेती नेह लगायो । कबहू हृदय राम नहिं आयो ॥ २ ॥
सुखमाया सूं खरो पियारो । कबहु न सुमर्‍यो सिरजन हारो ॥
जोबन मद मातो अभिमानी । पर घर भटकत शंक न आनी ॥ ३ ॥
स्वारथ माँहिं चहूँ दिशि ध्यायो । गोविंद को गुण कबहु न गायो ॥
ऐसे ऐसे करत व्यवहारा । आया साहिब का हलकारा ॥ ४ ॥
बांध्यो काल कियो चौरंगा । सुत बेटी नारि न कोइ संगा ॥
जे तैं कर्म किया है भारी । सो अब संग सु चलै तुम्हारी ॥ ५ ॥
जम आगै ले ठाढो कीनो । धर्म राय बूझणकूं लीनो ॥
कीधा कौल किया तुम कर्मा । सिरजनहार न भज्यो निशर्मा ॥ ६ ॥
जिन पाणी सूं पैदा कीयो । नर सो रूप तोहिकूं दीयो ॥
जो तूं विसर्‍यो मूरख अंधा । तो तूं आयो जम के बंधा ॥ ७ ॥
हरि की कथा सुणी नहिं काना । तो तूं नाहीं जम सूं छाना ॥
साधुसंगति मैं कबहु न रह्यो । मुख सूं राम कबहु नहिं कह्यो ॥ ८ ॥
हरिकी भक्ति करो नर नारी । धर्मराज यौं कहै विचारी ॥
मोकूं दोष न दीजो कोई । जैसा कर्म भुगताऊं सोई ॥ ९ ॥
पाप पुण्यकूं न्यारा ठाणूं । जो तुम कर्म करो सो जाणूं ॥
तुमरा कर्म तुम्हैं भुगताऊं । आदिपुरुष की आज्ञा पाऊं ॥ १० ॥
साहिब की आज्ञा है मोकूं । महा कसोटी देहूं तोकूं ॥
घड़ी घड़ी का लेखा लेऊं । कर्मादिक तेरा भरि देऊं ॥ ११ ॥
है हरि विना कौन रखवारो । चित दे सुमिरो सर्जनहारो ।
संकटतें हरि लेहि उबारी । निशिदिन सुमिरो नाम मुरारी ॥ १२ ॥
नाम निकेवल सब तें न्यारा । रटत अघट घट होय उजारा ॥
रामानंद यौं कहै समझाई । हरि सुमिरे जमलोक न जाई ॥ १३ ॥

इति ।

॥ श्रीगुरुभ्यो नमः ॥

अथ स्वामीजी श्री १००८ श्रीजैमलदासजी महाराज की अनुभवबाणी ।

राग काफी ।

पद १

दीस रह्या दिलमाँहि दर्शन साँईदा
साँईदा साँईदा झिगमिग झाँईदा ॥ टेर.
शून्यमंडलमें सुण रह्याबे, वाजै अनहद बेणं ।
भया उजाला गैबका बे, सहजां मिलिया सेण ॥ १ ॥
निगम खोज पावै नहीबे, जपतप लहे न कोय ।
सो साँई तनमैं वसैबे, निमष न न्यारा होय ॥ २ ॥
साचा साँई यूँ खडा बे, संताँही सुखदैण ।
सांसौ न्यारा करदियाबे, देख्या नैंणा नैंण ॥ ३ ॥
जैमलदास अवसर मिल्याबे, सन्मुख सिरजणहार ।
भरमज भागा जीवका बे, दरश्या है दीदार ॥ ४ ॥

पद २

लागिरह्या निजनेह दशवैं द्वारीदा
द्वारीदा द्वारीदा औघट वारीदा ॥ टेर.
घटमैं औघट यूं वसै बे, जैसे तिलमें तेल ।
नैडा जबही जाणियाबे, शब्दां लागा सेल ॥ १ ॥
शशिमैं सूर समाइया बे, भागा है अंधकार ।
दीपक हूवा निर्मलाबे, विनवाती अंगार ॥ २ ॥
रत्न प्रज्ञान प्रकाशिया बे, मिटिया संशय मोह ।
किंचित् लौं जिन जानियाबे, तिन सहज पिछान्या सोह ॥ ३ ॥
अरस परस है मांहिसमाणा, मनमिलिया उलटा उरसै ।
जैमलदास जुगे जुग तेरा, आतम राम सदा दरसै ॥ ४ ॥

पद ३

दशवैं द्वार मंझार मुरली बाजै सोहणी ।
सोहणीरे सुनमांहि मुनिवर मोहणी ॥ टेर.
जंघन पर कर धारिकै बे, सम आसण चितलाय ।
निरंतधरै निज नासिकाबे, सुनमें सुरत समाय ॥ १ ॥

---

१ दशमद्वार । २ वंसी । ३ परोक्ष । ४ संशय । ५ ओतप्रोत । ६ दृष्टि ।

संत शुणै सरधापणै बे, छिनही विसरै नांहि।
सुरनर मुनिजन रीझिया बे, लागिमगन धुन मांहि ॥ २ ॥
वांसविहूणी वांसली बे, वोलै अमृत वैण।
नितही नैडी बाजही बे, अंतर लागा नैण ॥ ३ ॥
जैमलदास धुन ध्यानमें बे, ऊगा निर्मल सूर।
मुरली माँहि अगोचरी बे, ऊपर अनहद तूर ॥ ४ ॥

पद ४

मेरी जिन्द कुरवाण सांईदी सूरत पर वारी हो ॥ टेर.
सांईदी सूरत मेरे दिलविच बसदी लागै मोहि पियारी हो ॥ १ ॥
दर्शन तेरो जीवन मेरो मेटौ भरम अंधारी हो ॥ २ ॥
आसन तेरो सहज सिंहासन पाँचूं प्रेम पुजारी हो ॥ ३ ॥
जैमलदास करै अरदासा राखो शरण तुम्हारी हो ॥ ४ ॥

पद ५

कदे न उतरै खुमार हरि रंग यूं लागो।
यूं लागो यूं लागो यो तो भ्रम यूं भागो ॥ टेर.
चित्तमें चेतन ठाह्या बे, परम तेज प्रकास।
वेद पुराणां गम नहीं बे, दरशन पावै दास ॥ १ ॥
दूर ध्वजा धुन में खड़ीबे, घुरै दमामा घोर।
मुरली बाजै सोहणी बे, लागि रह्या है टोर ॥ २ ॥
मन ही में मनजानिया बे, कहबे कूं कछु नाहिं।
मूरख भूल्या भरम में बे, बाहिर ढूंढण जाँहिं ॥ ३ ॥
गगन मंडल बादल झरेबे, बूठा नाम निरास।
पाँवस तूटा पेमका बे, भीना जैमलदास ॥ ४ ॥

पद ६

राम भजन में मन लावै संतो अनहद तार बजावै ॥ टेर.
आतम मांही आप विचारै शब्द सुणै सुख रासी।
निरख निरख हिरदै में हरखै आय मिले अविनासी ॥ १ ॥
साँचा ज्ञान ध्यान धरि हिरदै गगनमंडल मठ छावै।
निर्मल नूंर नैन रह लागा विन रसना गुण गावै ॥ २ ॥

---

१ तुरीका बाजा। २ छाक। ३ बाजा विशेष जिसको बजानेसे दमामी कहलाते हैं दमामा=तासा वा नगारा। ४ वर्षा। ५ तेज।

अगम निगम[1] गति जाय न जानी परखणहार न कोई ।
जैमलदास अंतर जिन खोज्या देखै अचरज सोई ॥ ३ ॥

राग गूजरी ।

पद ७

राम रट्यो गलतान भयो ॥ टेर.
सारको सार सकल तै ऊँचो सो या तनमें साधि लयो ॥ १ ॥
आदि अनादि किता जन चीन्हो ताको सांसो दूरि भयो ॥ २ ॥
वेद[2] पुराण सकल में बोलै भक्ति मुक्ति विश्राम लयो ॥ ३ ॥
जैमलदास लग्यो चित निश्चै दीपक ज्यूं परकास भयो ॥ ४ ॥

पद ८

मन रहै लागो मनसूं ॥ टेर.
अंतर मांहि अगम घर देखै भेद लहै परघर सूं ॥ १ ॥
चेतन में चित जाय समावै विरच रहै विषया घन सूं ॥ २ ॥
त्रिकुटी ध्यान लगावै ताली तोडि चलै तांतो तन सूं ॥ ३ ॥
जैमलदास सांईके शरणै ऐसो भेद लहै जन सूं ॥ ४ ॥

पद ९

देखो निरंजन की छबिताई ॥ टेर.
ज्यों ज्यों प्रीति लगी निशिवासर त्यों ही भई है ज्योति सवाई ॥१॥
जोग विरोध विमोहको[3] नातो याकों छेद रही निज पाई ॥ २ ॥
अवगति परस भया जे ऐसा लागै नहीं शुभाशुभ[4] काई ॥ ३ ॥
जैमलदास चरण चित लागा या विधिसें सतगुरु हीतैं पाई ॥४॥

पद १०

मेरो नेह लग्यो निर्मल धुन सूं ॥ टेर.
तेज प्रकाश भयो या तनमें रीझरह्यो मनही मन सूं ॥ १ ॥
अंतर ज्योति जगी झिगासिग चित्त लग्यो उनही उन सूं ॥ २ ॥
दिल मांही दीया निज दर्शन क्या कहूं किनही किन सूं ॥ ३ ॥
जैमलदास परस पिउ प्यारा आतम भिन्न सदा तनही तनसूं ॥ ४ ॥

पद ११

तुझे आय मिलैंगे रसना राम पुकारसी ॥ टेर.
तन मन लाय लाय चित चरणै तोहि करैगा पार ॥ १ ॥

---

1 जिसकी गम नहो । 2 वेद । 3 मम । 4 पुण्य पाप ।

सुमरण साझि उदास उलटि धुनि है सारां निज सार ॥ २ ॥
सत करि मान असत करि कानै करगहि देगा तार ॥ ३ ॥
जैमलदास हरि भक्ति विहूणी वाजी वणी असार ॥ ४ ॥

पद १२

अवधि सिराणी रे तेरी हरि सुमरै क्यों नाँहिं ॥ टेर.
आव[2] गई चेतै तूं नाँहीं अवसर वीतो जाँहि ॥ १ ॥
नरपति भूपति ऐसे जानै संपति स्वप्नै माँहि ॥ २ ॥
हय[1] दल हस्ती दास घणा संग ऊठि अकेलो जाँहि ॥ ३ ॥
झूँठे सुखमें राचि रह्यो है हरि सुख विसरै काँहि ॥ ४ ॥
जैमलदास भव नीर तिरन कों राम नाम घट माँहि ॥ ५ ॥

पद १३

अजहूं चेतै नांही आँव[2] घटंती जाय ॥ टेर.
ज्यों तरु छाया तेरी काया देखत ही घटि जाय ॥ १ ॥
ऐसो दाव वहुरि नहिं लाभै पीछे ही पछिताय ॥ २ ॥
जैमलदास काचँ[3] करि कानै तँतही[4] लेणा ताय ॥ ३ ॥

पद १४

सोझि रे घट मांहि तोसे साँई नैड़ा रे ॥ टेर.
राम संभाल शब्द करि सोधो भवसागर में बेड़ा रे ॥ १ ॥
सूक्ष्म स्थूल सकल में व्यापक त्योंही है घट तेड़ा[5] रे ॥ २ ॥
जैमलदास शरण सुख पाया नित चरणों का चेड़ा[6] रे ॥ ३ ॥

पद १५

ठग बाजी संसार दुनिया सब भूली मोह्या है हद ऊली ॥ टेर.
लागि भरम चित मोहिया चेतन विसऱ्या जाय ।
निर्मल मूरति मांहिली ताकों देखै नांहि ॥ १ ॥
इन विधि सांई मांहि है ताहि न देखै कोय ।
सार विचाऱ्या शब्द का नैड़ा ही निज होय ॥ २ ॥
साहिब शब्द समाइया जे कोइ लेवै खोज ।
पेम पियाला भरि पियै जब लागै मनमें मोज ॥ ३ ॥
जैमलदास भव नीर तिरणकूं आतमराम आधार ।
परिग्रँह[7] छूवा पारबती अनुभव हूवा पार ॥ ४ ॥

---

१ अश्व । २ आयु । ३ साँग । ४ तत्त्व । ५ तेरा । ६ चेरा । ७ स्त्रीपुत्रधनादि ।
८ अलग ।

पद १६

क्या परदेशीड़ारी प्रीति जावतो वार न लावै ॥ टेर.
आत न देख्या जात न जाण्या क्या कहियाँ वन आवै ॥ १ ॥
काया विनसै जीव परदेशी झूठा नेह लगावै ॥ २ ॥
ऐसे वास फूलनते विछुरे माँहीं माँहि समावै ॥ ३ ॥
जैसे संग सराय को दिन ऊगाँ उठि जावै ॥ ४ ॥
जैमलदास अगम रस घटमें जो खोजै सो पावै ॥ ५ ॥

पद १७

बटाऊ रे लोक तूँतो मारग भूलो रे ॥ टेर.
निर्मल नूर शरीर समाणा मनही मांहि महोलो रे ॥ १ ॥
साचा राम सोई संग तेरे और झूठ सुख ऊलो रे ॥ २ ॥
पाँच पचीस मोह मच्छर मद या सँग सूं तू डूलो रे ॥ ३ ॥
रहता रूप सही करि राखो वहता देख न भूलो रे ॥ ४ ॥
जैमलदास भव भ्रम वंधन तजि कोइक हरिजन खूलो रे ॥ ५ ॥

पद १८

विदेसी जीव यो जग झूठड़ो जोय ॥ टेर.
दिना च्यारका लिया वसेरा निश्चै चलणा तोय ॥ १ ॥
सुमर सनेही ज्यूं सुख होई फिर फिर मरण न होय ॥ २ ॥
तन धन तेरा पीछै रहेगा जाँहि अकेलो रोय ॥ ३ ॥
पाणी माँहि पतासा जैसे यूं तन छीनो जाय ॥ ४ ॥
जैमलदास भजो हरि निश्चै वेगा वार न लाय ॥ ५ ॥

इति ।

ॐनमः श्रीमद्हरियानंदेभ्यः ।

अथ श्री १००८ श्रीहरिरामदासजी महाराज की अनुभव-गिरा उद्योतकार ।

ब्रह्मस्तुतिः ।

छंद गीतक ।

पर[1]म बंदन परम सेवा परम दीन दयाल तू ।
परम आतम परम यारी परम स्वर्ग पयाल तू ॥

---

१ समस्त पद ४७ श्लोक मेधा २०० । २ उत्कृष्ट, अग्रसर, सबसे बढा चढा, आद्य ।

नमो निर्गुण नमो नाथू नमो देव निरंजनम् ।
नमो समर्थ नमो स्वामी नमो सकल सिरंजनम् ॥
नमो अविगत[1] नमो आपू नमो पार अपंपरम्[2] ।
नमो महरम[3] नमो न्यारा नमो पद परमेश्वरम् ॥
नमो चेतन नमो तारी[4] नमो निज निराशनम् ।
नमो आदि न नमो अंता नमो ब्रह्म प्रकाशनम् ॥
नमो प्रीतम नमो प्यारा नमो नाम निकेवलम् ।
नमो कायम नमो कर्ता नमो राम निरमलम् ॥
नमो निकलंक नमो नकुला नमो नित्य नरायनम् ।
नमो अमर नमो अधरा नमो पीव परायनम् ॥
नमो हरदम[6] निराकारं नमो निगम निरूपनम् ।
नमो अविचल[5] नमो अणभै नमो एक अनूपनम् ॥
नमो साहिब नमो सहजां नमो काल निकंदनम् ।
दास हरिया नमो दाता नमो तम निर्द्वंदनम् ॥

अथ श्रीगुरुदेवजी को अंग ।

साखी ।

परब्रह्म सतगुरु प्रणम्य पुनि सब सन्त नमोय ॥
हरिरामा मुर भवन में या पद समान कोय ॥ १ ॥
प्रथम सेव गुरुदेव की पीछे हरि की सेव ।
जन हरिया गुरुदेव विन भक्ति न उपजै मेव ॥ २ ॥
गुरु सेवा कै राम की या तुल नांही और ।
गुरु तो भांजै भरम कूं राम मुक्ति की ठौर ॥ ३ ॥
पहिली दाता हरि भया तिनते पाई जिंद ।
पीछे दाता गुरु भया जिन दाखे गोविंद ॥ ४ ॥
पहिली गुरु आदर दिवै तो हरि आघा लेह ।
हरिया गुरु आदर विना हरि ही मान न देह ॥ ५ ॥
हितू न सतगुरु सारिखा मुझ दीया गुँझि ज्ञान ।
हरिया मैं तैं मेटिकै अधर धराया ध्यान ॥ ६ ॥
हितु न सद्गुरु सारिखा अर्थ बताया एक ।
हरिया तन मन वचन का अनरथ सिट्या अनेक ॥ ७ ॥

---

१ अनिर्वचनीय अथवा जो जाना न जाय । २ अपरंपार । ३ भेदका जाननेवाला । ४ तारनेवाले । ५ अचल । ६ नित्य । ७ जो विचल न हो ।

हरि है दाता देह का तातैं भया सकाम।
गुरु है दाता ज्ञान का मनका मेटि विराम ॥ ८ ॥
जब तैं उर अज्ञानता हरि सुख उपजै नाँहिं।
जन हरिया गुरु ज्ञान दे किया निदुख मन माँहिं ॥ ९ ॥
सतगुरु जो मिलता नहीं हरिया होते रीछ।
आपो आप न ओलखै औरां ईछे पलीछ ॥ १० ॥
सतगुरु जो मिलता नहीं आती नाहि सुमत्ति।
हरिया हरि सूं आंतरो करते काय कुमत्ति ॥ ११ ॥
सतगुरु जो मिलते नहीं होती तनकी हानि।
ज्यूं पासो चोपड़ तणो हरिया हाथ न जानि ॥ १२ ॥
हरिया पासो हाथ को होय न अपने हाथ।
सतगुरु केरे शब्द विन मन आवै नहिं हाथ ॥ १३ ॥
जन हरिया चोपड़ तणा आवै दाव अनेक।
सतगुरु केरे शब्द सों औसर मिलैन एक ॥ १४ ॥
सुरति सारी निरंत[2] चौपड़ सतगुरु दाव दिखाय।
हरिया पासा पेम का खेलज हरि सूं लाय ॥ १५ ॥
ऐसे दिनकर[3] भेटियाँ निशिकर[4] गए नसाय।
जन हरिया गुरुभेटियाँ अघ अंधारा जाय ॥ १६ ॥
जन हरिया गुरु भेटिया मेट्या अघ अंधार।
ज्ञान गुरू प्रकासिया देख्या दिल दीदार ॥ १७ ॥
घर घर में दीपक जगै दुनियाँ देखै नाँहि।
सतगुरु विन भाजै नहीं पड़दा अंतर माँहि ॥ १८ ॥
लखचौरासी नगर में कोड़ी धज कोइ साह।
लखां हजारां एक सौ जग मांही बहुताह ॥ १९ ॥
सतगुरु साहूकार है शिष सौदागर जान।
जन हरिया राखै नहीं रती न अंतर[5] कान ॥ २० ॥
हरिया सौदो साह को लेसी सिरदे मोल।
विन तोलां विन ताकड़ी तत्त तराजू तोल ॥ २१ ॥
सौदा सतगुरु सूं किया राम नाम धन काज।
लाभ न कोई छेहड़ो तोटा सबही भाज ॥ २२ ॥
सतगुरु विन सौदा किया जन हरिया बेकाम।
साकट ऐसे सूकरा हांडै[6] घर घर जाम ॥ २३ ॥

---

१ राजीकरना, लटापोरी करना। २ दृष्टि। ३ सूर्यप्रकाश। ४ चंद्र, अंधेरा। ५ पार। ६ फिरै।

सतगुरु संग सौदा किया गाहिक ज्ञान विचार।
जन हरिया जब जाणिये पूंजी पार उतार ॥ २४ ॥
राम नाम सौदागरी करि करि लीजै लाह।
जन हरिया हक साहके ना कोइ अनहक राह ॥ २५ ॥
हरिया सौदा शब्द का दूजा सौदा नांहि।
दूजा सौदा सो करै खांड़[1] परै मुखमांहि ॥ २६ ॥
राम नाम सौदा किया दूजा दाण[2] चुकाय।
जन हरिया गुरु ज्ञान का ताँडा[3] देह लदाय ॥ २७ ॥
ताँडै नायक[4] नाम निज गुण की गूंण[5] भराय।
लदै पलाणै सुरति मन ज्ञान वलधिया थाय ॥ २८ ॥
आडा पड़दा दूर करि अगम दिखाई वाट।
जन हरिया गुरु महर तें लंघिया अवघट घाट ॥ २९ ॥
अवघट घाटी नीसऱ्या देख्या देव अपार।
जन हरिया शिर ऊपरै सतगुरु सिरजन हार ॥ ३० ॥
सतगुरु मिलियाँ[6] बाहिरो होती हाँसा खेल।
कूवै गोसीं कोस ज्यूं हरिया पाछो ठेलै ॥ ३१ ॥
जबरो गोसी कूप जग बारो आवै जाय।
हरिया गुरु बांही गहै आत जात अटकाय ॥ ३२ ॥
सतगुरु मोकूं धीरदे एकजदाखी सीख।
जन हरिया गुरु सीख बिन भरूँ न दूजी वीखं ॥ ३३ ॥
सीख सुनाई सुध भई तन आँपो विसराय।
जन हरिया मन गर्क[11] हुय तर्क[12] फर्क नहिं थाय ॥ ३४ ॥
सतगुरु वाह्या शब्द सर मूक्याँ[13] हृदय मँझार।
भोंदू[14] था सो भाजिग्या भेदी रह्या विचार ॥ ३५ ॥
सतगुरु वाह्या शब्द सर सनमुख लागा आय।
सुगुरा सोई चेतसी निगुँरा[15] गम्म न काय ॥ ३६ ॥

---

१ खांड़ व्यंग है अर्थात् धूड़। २ कर। ३ बालद, सोबत। ४ मुखिया। ५ छटिया। ६ विनाँ। ७ चड़स झेलनेवाला। ८ धक्कादेना। ९ डग। १० अपनापन। ११ मग्न। १२ वादविवाद। १३ छोडा। १४ अज्ञानी।

१५ गुरु उपदेश कहाकरै दुराराध्य संसार।
वसै सदा जाके उदर जीव पंचपरकार ॥ १ ॥
ढूँघा प्रभु चूँघा चतुर सूँघा रोचक शुद्ध।
ऊँघा दुर्बुद्धी विकल घूँघा घोर अबुद्ध ॥ २ ॥

हरिया सतगुरु शब्द की मुखभर[1] वाहै[2] मूठ।
आगै शिष सामा खड़ा दियाँ जगत कूँ पूठ ॥ ३७ ॥
जन हरिया गुरु सूरवा करै शब्द की चोट।
सिख सूरा तन जो लहै आनि धरै नहि ओट ॥ ३८ ॥
सतगुरु का सिख सूरवां त्यागै तन मन प्रान।
हरिया सालै रैन दिन शब्द लगाया वान ॥ ३९ ॥
भागां सूर न बज्जई भागां गुरु नै गाल।
अणियां एकल मल लड़ै दोऊ दलां विचाल ॥ ४० ॥
सतगुरु वाह्या मूठ भर शब्द संताणा एक।
जन हरिया उर वीच में करिग्या छेक अनेक ॥ ४१ ॥
पर उपकारी गुरु मिल्या भक्ति वताया भेव।
योही सुमरण हरि कथा याही सहजाँ सेव ॥ ४२ ॥
जन्म जन्म के वीसरे अव क्यूं आवै ठाँय।
जन हरिया गुरु आपना पलमांही समझाँय ॥ ४३ ॥
जन हरिया गुरु आपना लेपहुँचे पर गाँव।
जिन गुरु शब्द न जानिया धका वीचमें खाँव ॥ ४४ ॥
कीड़े खाई लक्कडी ज्यूं काया कूं काल।
गुरु विन कोइ न ऊबरै मध्य स्वर्ग पाताल ॥ ४५ ॥
ब्रह्म अग्नि तन वीच में मथकरि काढै कोय।
उलटि काल कूं खात है हरिया गुर गम होय ॥ ४६ ॥
सतगुरुती संसा मिट्या भया निसंसै जीव।
जन हरिया मुझि प्रामिया आदि अंतका पीव ॥ ४७ ॥
सतगुरु जो मिलता नहीं तो लेते कुल खोज।
जन हरिया सतगुरु मिल्या हसोन आवै रोज ॥ ४८ ॥
जन हरिया सतगुरु इसा जिसा कँमागर[3] होय।
शब्द मँसकला[4] फेर करि दाग न राखै कोय ॥ ४९ ॥
जन हरिया सतगुरु इसा जैसा होय लोहार।
तन लोहा ज्यूं ताव दे काट न राखण हार ॥ ५० ॥
जन हरिया सतगुरु इसा जिसा सरँकरा[5] होय।
मन तरँकस[6] का तीर ज्यों वांक न राखै कोय ॥ ५१ ॥

ढूँघा सिद्ध कहै सब कोऊ सूँघा ऊँघा मूरख दोऊ।
घूँघा घोर विकल संसारी चूँघा जीव मोक्ष अधिकारी ॥ ३ ॥

१ मुट्ठीभरकर। २ जोरसे। ३ चिकलीगर। ४ शाण। ५ बाणबनानेवाला। ६ भाथाण।

जन हरिया सतगुरु इसा जैसा होवे भृंग।
कीट परांसे पोखदे करै आप से रंग ॥ ५२ ॥
जिन गुरु ती हरि प्रामियाँ भरम न राख्या कोय।
जन हरिया क्या अरपियै दीजै तन मन दोय ॥ ५३ ॥
जन हरिया भव जुगन में सतगुरु करी सहाय।
आदू अपना जानिके हाथ लिया विलमाय ॥ ५४ ॥
लोह पलट कंचन भया पारस का परताप।
जन हरिया सतगुरु करै आप सरीपा आप ॥ ५५ ॥
जन हरिया सतगुरु करै ऐसा है इकतार।
जैसे कूं तैसा करै ज्यों दरपन दीदार ॥ ५६ ॥

इति।

अथ गुरु शिष्य को प्रसंग।

शिष सतगुरु पै जायके चरण नवाए शीश।
जन हरिया सतगुरु किया चेला राम वरीशै[1] ॥ १ ॥
शिष सेती सतगुरु कहै परा परीकी रीत।
और भरम कूं छांडि दे राम नाम सूं प्रीत ॥ २ ॥
शिष मन को नारेल करि ले गुरुचरणां चाढि।
हरिया सतगुरु देत है अपना अंतर काढि ॥ ३ ॥
अंतर जिसकूं दीजिये हरिया अंतर देह।
आपा अंतर वाहिरो जासूं किसा सनेह ॥ ४ ॥
हरिया भेद न दीजिये वाके अंतर खोट।
तन तैं नान्हा[3] हुय मिलै मन तैं वड्डिम[4]मोट ॥ ५ ॥
हरिया तन का क्या दिया जो मन दुविधा[5] आनि।
तन मन भीतर एक है ताहि दिया सव जानि ॥ ६ ॥
ताहि दिया सव जानिया वाके अंतर साच।
हरिया कवहूं मुख ते असँत[6] न आखै वाच ॥ ७ ॥
मुख तैं मीठा बोलणा अंदर भरिया खार।
वाके कूड़ रु कपट का हरिया वहुत व्योहार ॥ ८ ॥
हरिया तन हरि का दिया मन हरि कै नहिं हाथ।
मन कूं गुरु पँरवोधिके[7] दई नाम सी आथ[8] ॥ ९ ॥

---

१ श्रेष्ठ। २ वारीश=समुद्र। ३ छोटा। ४ वडप्पन। ५ भेदभाव। ६ झूठ।
७ प्रवोधिके=सचेतकर। ८ संपत्ति।

वा गुरु कूं क्या दीजिये दीजे अपनो मन्न ।
मन के पूठे सब दिया हरिया तनरु बचन्न ॥ १० ॥
मन को देवो दुलभ है जो कोइ मन कूं देत ।
जन हरिया मन देत है तन करि जानै रेत ॥ ११ ॥
मन मेरा सेवग भया लग्या शब्द गुरु कान ।
रोम रोम में भिद गया हरिया किधून जान ॥ १२ ॥
दास भाव सब ही किया दीया मन अरु तन्न ।
हरिया पीछे क्या रह्या गुरु दरशन परसन्न ॥ १३ ॥
हरिया गुरु दरशन कियाँ कटै कोटि अपराध ।
सोई निशि दिन धिन घड़ी होय समागम साध ॥ १४ ॥
साधु समागम सफल है हरिया तन मन जानि ।
जैसा बाहै बीज कूं तैसा लुणसी आनि ॥ १५ ॥
हरिया गुरु का सत शबद साँचे मनसूं धारि ।
भवसागर में डूबताँ लेसी पार उतारि ॥ १६ ॥
जन हरिया गुरु आपनै शब्द कह्या समझाय ।
दूजा भ्रम अरु कर्म कूं पल में देह बहाय ॥ १७ ॥
हरिया जैमलदास गुरु राम निरंजन देव ।
काया देवल देहरो सहज हमारे सेव ॥ १८ ॥

चंद्रायणा ।

सतगुरु का शिष जानि विचारै ज्ञान कूं ।
तन मन सौंपै सीस धरै उर ध्यान कूं ॥
निशि दिन सुमरै राम कबू नहि भूलरे ।
हरिहां दास कहै हरिराम ताहि नहिँ तूलरे ॥ १९ ॥

इति ।

अथ उपदेश को अंग ।

तन मन का अर्पण करै, वाचा सूर नरेश ।
जन हरिया हरिनाम का, ऐसा है उपदेश ॥ १ ॥
कारन कारनवंत कै, उर आपस में आन ।
जन हरिया यों ब्रह्म है, सही हृदय करि जान ॥ २ ॥
तेरू जल तिर नीसरै, का बेरै[1] सिर बेठि ।
जन हरिया जग क्यूं तिरै, विना ज्ञान गुरु पैठि ॥ ३ ॥

---

1 बेड़ा=डूंडा ।

राम नाम कूं छांडि कै, हरिया धरै न और।
जे कोई धारै दूसरा, हरि दरगै[1] नहि ठौर ॥ ४ ॥
अविनाशी कूं याद करि, परिहरि दूजी आस।
हरिया गुरु समझाय के, दीया नाम निरास ॥ ५ ॥
पोथी पुस्तक टीपणो, जग पंडित को काम।
हरिया हिरदै संतके, रामनाम विश्राम ॥ ६ ॥
जैसा भोजन जीमिये, तैसा आवै स्वाद।
या तन का सारा नहीं, मनसा इसी मुरांद[2] ॥ ७ ॥
जाकै मन जैसी वसै, तैसी मन वरताय।
जन हरिया जो आदि है, अंत खड़ी है आय ॥ ८ ॥
रामनाम विन मुक्ति की, जुक्ति न ऐसी और।
जन हरिया निशिदिन भजो, तजो दूसरी ठौर ॥ ९ ॥
जन हरिया समझाय कै, गुरू बताया भेव।
रामनाम तुल दूसरा, देव न कोई सेव ॥ १० ॥
रामनाम जपता रहै, तजै न आसा आन।
जन हरिया उन जीव की, मिटै न खांचा तान ॥ ११ ॥
रामनाम ज्यों ज्यों भजै, त्यों त्यों तजै सकाम।
जन हरिया सुन सेझमें, मनवा करै मुकाम ॥ १२ ॥
जोजरै[3] वेड़ै बैसतां, जल में जोखा होय।
हरिया हरि सुमिरन विना, भवजल तिरै न कोय ॥ १३ ॥
जानीतल कूं जाणि कै, मारग बूझ्या नाहिं।
जन हरिया बिन बूझियाँ, आंधा ऊझड़ जाहिं ॥ १४ ॥
रामनाम कूं सुमरियै, आपो तन मन सोध।
हरिया मारग मुक्ति का, याही गुरु परबोध ॥ १५ ॥
रामनाम निज मूल है, और सकल विस्तार।
जन हरिया फल मुक्ति कूं, लीजै सार संभार ॥ १६ ॥
जन हरिया निशि दिन भजो, रसना सेती राम।
नाम विना जीतब किसो, आय जाय वेकाम ॥ १७ ॥
हरिया जब लग जीवियै, तब लग नाम उचार।
तन सूं पड़सी अंतरो, पीछै कौन विचार ॥ १८ ॥
जन हरिया पहली करो, गुरु गोविंद सूं प्रीति।
ता पीछै मन सूं तजो, लोक लाज कुल रीति ॥ १९ ॥

---

१ दरगाह=दरबार। २ इच्छा। ३ पुराणा।

राम नाम निशि दिन भजो, तजो विड़ाणी तात ।
जन हरिया नर देह सो, औसर वीतो जात ॥ २० ॥
राम भजो रे प्राणियाँ, मन परतीति लगाय ।
जन हरिया परतीति विन, जन्मअकारथ[1] जाय ॥ २१ ॥
इन औसर भजि राम कूं, करि करि मन में ख्यांति ।
हरिया पेम पियास विन, चढ़ै न चोली भांति ॥ २२ ॥
बंदा करियै बंदगी, आतम सूं आधीन ।
जन हरिया दम दम घटै, यो तन होसी छीन ॥ २३ ॥
सहजां सांई सुमिरिये, आलस ऊंघ न आन ।
जन हरिया तन पेखणो ज्यों जलपंडर[2] जान ॥ २४ ॥
हरिया राम संभारिये, दूजी चिंत निवार ।
दूजी चिंता जो करै, तो तन जासी हार ॥ २५ ॥

इति ।

अथ ज्ञान संजोग विरह को अंग ।

दीपक पावक तेल भरि, विच बाती संजोय ।
जन हरिया जब एकठा, पड़ै पतंगा जोय ॥ १ ॥
तन दीपक मन तेल भरि, जीव पतंगा जेम ।
पावक रूपी राम है, हरिये लाया पेम ॥ २ ॥
विरहा आया ज्ञान का, आपो अंतर मेट ।
जन हरिया जब विरहिनी, पिउ परमानंद भेट ॥ ३ ॥
विरह सजोड़ा ज्ञानका, सुधि बुधि गुणां गँभीर ।
जन हरिया अज्ञान कूं, काढ़ि निकासै तीर ॥ ४ ॥
और विरह किस काम का, विना विचार्‍यां ज्ञान ।
जन हरिया विरह जाणियै, अंतर उपजै ध्यान ॥ ५ ॥
विरहा मेरे सिरधणी, छड़ैत छाँड़ूं नाँहि ।
जन हरिया विरह लेचले, सुखसागर के माँहि ॥ ६ ॥
इनको प्याणो दुलभ है, ज्यों खांडा की धार ।
हरिया सरवर नीर कूं, विरही पीवन हार ॥ ७ ॥
जन हरिया बन बन फिरी, साँई कारण तुज्झि ।
विरहा ज्ञान प्रकासिया, अंदर पाया मुज्झि ॥ ८ ॥
हरिया मेरे को नहीं, तमसा आतम राम ।
तूं घट घट में रमि रह्या, सारत है सब काम ॥ ९ ॥

---

१ वृथा । २ परनाल ।

विरह स तीरा तन वहै, सो जाणै तन पीर।
जन हरिया तन पीर विन, क्या जाणै बेपीर ॥ १० ॥
पीर पराई सो लहै, ता तन पीरा होय।
जन हरिया बेपीर तन, पीर न बूझै कोय ॥ ११ ॥
विरह सतीरा वहिगया, हरिया अंतर माँहि।
लागत ही सूं गिर पऱ्या, ऊठण की सुधि नाँहि ॥ १२ ॥
विरह भाल जाकै लगी, अंग अंग में एक।
जन हरिया तन बीचमें, करिगी छेक अनेक ॥ १३ ॥
विरह भालका[1] वहि गया, करिग्या देह दुसार[2]।
का लागी सो जाणसी, का ऊ वाहण हार ॥ १४ ॥
विरह भाल सूं मरिगया, सूरा संत सुजाण।
जन हरिया सेजीवता, पड्या तलप्फै प्राण ॥ १५ ॥
भली करी तैं आवतैं, विरहा मेरे अंग।
एक रामैंयो रसि रह्यो, लगै न दूजा रंग ॥ १६ ॥
विरहा तू आयो भलाँ, हरिया अंतर माँहि।
राम दिवानी[3] करि गयो, और किसी की नाँहि ॥ १७ ॥
विरहनि मारी विरह की, सुधि बुधि विसरी सार।
हरिया सिर सूं डारिया, हीर चीर सिणगार ॥ १८ ॥
जन हरिया जोवन गयो, तनतैं जरजर होय।
मारी मरूं न विरह की, राम निजर भरि जोय ॥ १९ ॥
पाँवां सेती पंगली, कर सूं काम न होय।
वाहण वहिग्यो विरह को, हरिया अंग थकोय ॥ २० ॥
जन हरिया विरह परजल्या, धूआं निकसै नाँहि।
का झल लाई सो लहै, का जिसकै घट माँहि ॥ २१ ॥
विरहा मोकूं ले चल्या, गंग जमुन की तीर।
जन हरिया जल विच अगनि, अब कहँ जाऊं बीर ॥ २२ ॥
ब्रह्म अग्नि जलमें जगै, जहाँ विरह का खेल।
जन हरिया जहां विलंबिया, जाल न मच्छी झेल ॥ २३ ॥
जहाँ झींवर का जाल है, विरहा कदे न जाय।
हरिया घट विरहा वसै, जाकूं काल न खाय ॥ २४ ॥
मुँहरेड़ी[4] आया भला[5], विरहा ज्ञान विचार।
जन हरिया अब आवसी, सुखसागर भरतार ॥ २५ ॥

इति।

---

१ भाला। २ आर पार छेद। ३ बावली। ४ प्रधान। ५ अच्छा।

अथ परचै को अंग ।

प्रथम ध्यान पूरब दिसा, गगन गरजिया जाय ।
ठाम ठाम पाताल कूं, पछै पंछिम[1] कूं थाय ॥ १ ॥
सुरति चली आकास[2] कूं, दे जालंधर बंध ।
जन हरिया जहँ जाणिये, हद बेहद की संध ॥ २ ॥
वीच मेरु तें गिर पड्या, धरणी धरै न पाव ।
जन हरिया जब सूर कूं, खरै खेतै[3] का दाव ॥ ३ ॥
लगी चोट मन मरम की, खूला ब्रह्मकपाट[4] ।
मेवासा[5] सब जीत कै, वस्या नगर वैराट[6] ॥ ४ ॥
वाट विकट वैराट की, पोहँचेगा कोई सूर ।
हरिया कायर थकि रह्या, दरगै रहिया दूर ॥ ५ ॥
दृष्टि देख सबको कहै, सुपनेऊ कह सोय ।
जन हरिया गम अगम कूं, ताहि बतावै कोय ॥ ६ ॥
सुरति बतावै ब्रह्म कूं, कहै अगम की बात ।
जन हरिया जहँ की कहै, तहां नहीं दिन रात ॥ ७ ॥
सुरत वसी अमरा पुरी, बरत ब्रह्म की आण ।
बिन वाणी हरियो पढै, जहँ नहि वेद पुराण ॥ ८ ॥
तीन पोलँ तर्किया सिरै, बीच मँडे मैदान ।
जन हरिया घर शून्य में, सहज घुरै नीसान ॥ ९ ॥
जीव सीव की संध में, लगे पात उंत्तान ।
जन हरिया जहँ होत है, केती विधि का तांन ॥ १० ॥
झालर ताल मृदंग डफ, घन अनहद की घोर ।
हरिया एक अखंड है, ररंकार की टोर ॥ ११ ॥
शब्द एक ररंकार की, महिमा कही न जाय ।
जन हरिया बिन देखियां, और न को पति आय ॥ १२ ॥
शब्द एक ररंकार की, महिमा कोटि अनंत ।
कहि कहि थाके मुनि जना, हरिया आदि न अंत ॥ १३ ॥
अखंड एक ररंकार की, रोम रोम धुनि होय ।
जन हरिया जा विच लगी, ता तन जानै सोय ॥ १४ ॥

---

१ पश्चिमतान । २ त्रिकुटी । ३ युद्ध । ४ सुषुम्णाद्वार । ५ गढ । ६ लंबा चौडा, विस्तृत । ७ मुख हृदय वंकनाल । ८ आश्रयलेनेका स्थान । ९ योगसाधन की एक मुद्रा । १० उनचास तानोंसे ८३०० कूटतान निकलेहैं ।

देखत ही दिल परचिया, मिट्या अपरचा मन्न।
जन हरिया विन देखियाँ, ताहि न परचै तन्न ॥ १५ ॥
विन पाँवाँ जहाँ नाचिवो, विन कर ताल वजाय।
विना राग रीझायवो, विना कंठ सुर गाय ॥ १६ ॥
विना ज्ञान गुण बूझिवो, विना सीख समझाय।
विना दृष्टि जहां देखिवो, हरिया ध्यान लगाय ॥ १७ ॥
विना नीव जहाँ देहरो[1], विना पूज जहँ देव।
विन वाती दीपक जगै, विन मूरति जहँ सेव ॥ १८ ॥
विना पेड जहां वृक्ष है, विना फूल फल लाय।
विना पंख जहां भँवर है, अधर विलंबे आय ॥ १९ ॥
विना नीर जहां कमल है, विन वरषा वरसाल।
विना मास विन रुत्त[2] है, मात पिता विन बाल ॥ २० ॥
विना जात विन वरण है, विना भ्रात विन वैन।
हरिया ऐसा ब्रह्म है, सुन्या न देख्या नैन ॥ २१ ॥
हरिया बाल न वृद्ध ऊ, ना तरणा ऊ तन्न।
निरालंब सुन में रमै, निराकार निरँजन्न ॥ २२ ॥
विन तीरथ जहँ न्हाइवो, विना वाट विन घाट।
जहँ कोइ शहर न सोवती, हरिया विणज न हाट ॥ २३ ॥
वहँ कोइ भर्म न कर्म है, वहँ कोइ लिपै न लेस।
जन हरिया जहँ की कहै, तहँ नहि देस न वेस ॥ २४ ॥
जहँ कोइ जोग न जुगति है, जहँ नहि देग न तेग।
हरिया दवा न वेदवा, जहँ नहि पौन न वेग ॥ २५ ॥
वहँ नहिं राग न दोष है, वहँ नहिं राज न तेज।
वहँ नहिं नारि न पुरुष है, हरिया लेज न देज ॥ २६ ॥
वहँ कोइ रिद्धि न सिद्धि है, वहँ नहिं पुण्य न पाप।
हरिया विषय न वासना, वहँ उत्थप नहि थाप ॥ २७ ॥
वहाँ न हद वेहद है, वहाँ नाद नहि विंद।
जन हरिया वहां ब्रह्म है, जरा न व्यापै जिंद ॥ २८ ॥
वहँ कोइ चंद न सूर है, वहँ नहि धर आकास।
हरिया एको अधर है, ब्रह्मानंद विलास ॥ २९ ॥
तीन लोक चवदै भवन, उत्पति परलै होय।
हरिया एको अमर है, मरै न जीवै कोय ॥ ३० ॥

---

१ देवालय। २ ऋतु।

वहँ कोइ ऊंच न नीच है, वहँ नहि नाम न ठाम।
हरिया आपो आप है, संतन का विश्राम ॥ ३१ ॥
बंधन तैं निर्बंध भया, मिल्या सून्य घर जाय।
हरिया सुरति रु शब्द का, निर्भय ध्यान लगाय ॥ ३२ ॥
लगी सुरति सत शब्द सूं, कबहूं खंडै नांहि।
जन हरिया मन मिल रह्या, आर पार पद मांहि ॥ ३३ ॥
अध ऊरध के बीच में, हरिया झिलमिल जोत।
सुरति शब्द परचा भया, मिले ओत अरु पोत ॥ ३४ ॥
सुरति समाणी ब्रह्म में, ब्रह्म निरंतर वास।
जन हरिया जहँ काल का, जोर जबर नहिं जास ॥ ३५ ॥
जन हरिया दिल भीतरै, दोसत अपना राम।
करूं न दूजा दोसती, या जग जाया जाम ॥ ३६ ॥
आतम का सुख जाणिया, भया परम संतोष।
जन हरिया जब जाणिये, याही जीवतमोष ॥ ३७ ॥
पारब्रह्म के देस का, दो राहां विच राह।
जन हरिया मन संचरे, भेटण दिल दरगाह ॥ ३८ ॥
पारब्रह्म के देसड़ै, अदल[1] नको फदलाह[2]।
हरिया जामण मरणका, मेट्या दुइ वदलाह ॥ ३९ ॥
जन हरिया उन देसड़ै, बारह मास वसंत।
सदा फलैगी वनस्पति, विलँब्या जीव न चिंत ॥ ४० ॥
जन हरिया उन देसडै, बारै मास सुकाल।
भूख तृषा नहिं व्यापई, दुर्भख पड़ै न काल ॥ ४१ ॥
जन हरिया उन देसड़ै, मास दिवस नहिँ रित्त।
है जहँ गाज न बीजरी, सरवर भरिया नित्त ॥ ४२ ॥
जन हरिया उन देसड़ै, अविनासी की आन।
और किसी का डर नहीं, हिंदु न मुस्सलमान ॥ ४३ ॥
जन हरिया उन देसड़ै, आतम एको यार।
दानव कोइ न देवता, निरदावै संसार ॥ ४४ ॥
लख चौरासी नगर का, हरिया ब्रह्म नरेश।
है जहँ चूक न चाकरी, पटा न पलटै देश ॥ ४५ ॥
हरिया पाटन[3] पुर नगर, राव रंक नहिं भूप।
अलख अभंगी आप है, नारि न पुरुषारूप ॥ ४६ ॥

---

१ इंसाफ़। २ गैर इंसाफ़। ३ प्राचीन वडा शहर। पुर, पुरी, नगर, नगरी, पत्तन, पट्टन, पटभेदन, निगम, कटक, स्थानीय, पट्ट, इनमें कुछकुछ भेद है।

हरिया हरिजन एक है जीव सीव नहिं दोय।
नीर सिलाना नीर में, फिर न्यारा नहिं होय ॥ ४७ ॥
जन हरिया मन मेरु करि, चढ़्या त्रिवेणी गंग।
गंगा जमुना गोमती, नाहत है अण भंग ॥ ४८ ॥
उलटा चढ़ असमान कूं, मिले त्रिवेणीतट्ठ।
जन हरिया जहँ मंड़िया, सुरति शब्द का मठ्ठ ॥ ४९ ॥
सुरति शब्द के मठ्ठ की, है अजरायल वाट।
जन हरिये जहँ घर किया, लोक वेद सूं फाट ॥ ५० ॥
सुरति शब्द मिल एकठा, ता विच रही न काण।
जन हरिया सुन सेझ का, सहजांई सुख माण ॥ ५१ ॥
तट तिरवेणी नीर की, चलै सीर चहुँ ओर।
जन हरियै सो चक्खिया, चिक्ख न रक्खी कोर ॥ ५२ ॥
पड़ै पुंड़ंग तहँ पेम की, एक अखंडी धार।
हरिया हरिजन पीवसी, दुनिया सुधी न सार ॥ ५३ ॥
बादल वूठा पेम का, नख सिख भीना रोम।
हरिया सो सुख जाणसी, जिन पाई पर भोम ॥ ५४ ॥
अरध कमल में वैस करि, भँवरो रह्यो लिपट्ट।
जन हरिया जब जीवको, सांसो गयो सिमट्ट ॥ ५५ ॥
भँवरो बास विलंवियो, फूल न आयो गढ्ढि।
हरिया आशा छांड़िके, रह्यो निराशा मढ्ढि ॥ ५६ ॥

इति।

अथ चेतावनी को अंग।

भेर नगारा आरबी, केते गये वजाय।
जन हरिया किन बहुरि के, बात न बूझी आय ॥ १ ॥
बात बटाऊ देसकी, कहै सुनै सब कोय।
जन हरिया उन देसकी, कहै सुनै नहिं कोय ॥ २ ॥
नैणा नेह निहारती, न्यारी निमिष न होय।
जन हरिया तन भीतरै, पड़्या दिनंतर जोय ॥ ३ ॥
पान तंबोली चावते, मसी कवाड़े दंत।
जन हरिया दिन एक में, मुख धूडी बूकंत ॥ ४ ॥
जन हरिया कर कंपिया, डोलण लागा शीश।
तोइ न अंधा चेतही, आपनपौ जगदीश ॥ ५ ॥

---

१ अमिट। २ थोड़ी। ३ बोछाड़। ४ लगाना। ५ डालना, लफ।

निसि दिन दोड़ै धन कैर, सहै घाम सिर सीत।
जन हरिया नर छाँडिग्यो, खांट खटांऊ मीत ॥ ६ ॥
खांटी दांटी रहगई, कुछी न चाली साथ।
जन हरिया जग दीन विन, हाल्यो रीते हाथ ॥ ७ ॥
ओछे पाणी मच्छली, किसी जिंदकी आस।
हरिया सास सरीर में, वसै किता दिन वास ॥ ८ ॥
ऊंचा नीची सकल में, एक किसी में नाहिं।
जन हरिया जामण मरण, लख चौरासी माहिं ॥ ९ ॥
लख चौरासी जीवड़ा, सवै काल की चारि।
जन हरिया जब ऊवरै, सत का शब्द सँभारि ॥ १० ॥
सब जग वंध्या जेवड़ी, निर्वंधन नहिं कोय।
हरिया सो निर्वंध है, राम सनेही होय ॥ ११ ॥
जग मांही केतो धका, टाऱ्या केम टरंत।
जन हरिया गहु राम कूं, पड़ि पड़ि भी ऊठंत ॥ १२ ॥
पांच सात पच्चीस में, वरष एकसो वीस।
घरटी ऊऱ्या अन्न ज्यों, कै पीस्या कइ पीस ॥ १३ ॥
पछितावैगो प्राणिया, हरिसूं पड़ि से दूर।
जन हरिया मन चेतलै, है तन सास हजूर ॥ १४ ॥
कुल के मारग जग चलै, ज्यों कीड़ी कुल नाल।
हरिया टलै त ऊवरै, नहि तो लूटै काल ॥ १५ ॥
पान पड़ंते यूं कह्यो, सुण तरवर की टाल।
मेरो तो दिन पूंजिग्यो तेरो आयो काल ॥ १६ ॥
टाल पुकारै डाल कूं, सुणो हमारी वात।
मेरी ऊमर खूटिगी, तेरी आई घात ॥ १७ ॥
डाल पुकारै मूल कूं, वारी आई तुज्झि।
जन हरिया अब चेतलै, जगमें मरणो मुज्झि ॥ १८ ॥
वारो वारी ऊठिगे, कली काल के लोग।
हरिया पूंठै पुंगड़ां, उनका आया जोग ॥ १९ ॥
हरिया राग न रीझिबो वेद न विद्या पाठ।
काया जासी एकली, साथै कप्फण काठ ॥ २० ॥

---

१ खाट खटोला=बधना बोरिया, गृहस्थीका सामान। २ कीहुई कमाई। ३ दटी हुई। ४ खाली। ५ रस्सी। ६ चक्की। ७ छोटी टहनी। ८ आयु खूट गई। ९ पीछे। १० बच्चा बच्ची।

पलंग पथरणे पौढ़ने, लेले सीरख सौड़।
सोवे सीढ़ी साथरे, दौड़ि सके तो दौड़ ॥ २१ ॥
मीठा मेवा जीमते, वहु भोजन वहु भांत।
तासूं तन छेती पड़े, जन हरिया कर ख्यांत ॥ २२ ॥
अमल कटोरा गालते, मावा भरि भरि लेह।
जन हरिया दिन दस्सके, का कोइ वरस करेह ॥ २३ ॥
प्याला भरि भरि पद्मणी, पिवै पिलावे पीव।
जन हरिया जव क्या करै, जम लेजासी जीव ॥ २४ ॥
पैड़ी पैड़ी पाँव दे, सूते मन्दिर माहिं।
जन हरिया तोइ जीवकी, घात टरैगी नाहिं ॥ २५ ॥
कनक महल ता वीच में, ढोले अंगन काच।
हरिया एकै नाम विन, नाच गये वहु नाच ॥ २६ ॥
खासा कपड़ा पहरते, सोंधा अंग लगाय।
जन हरिया वे मानवी, मिले खाक दरें जाय ॥ २७ ॥
आडे तेढे चालते, खांगी पाघ झुकाय।
हरिया छाया निरखते, सेभी गये विलाय ॥ २८ ॥
ऊंचा मंदिर वीच घर, जहँ करते घरवास।
होसी घोरां वीच घर, लेण नदे इक सास ॥ २९ ॥
सुंदरि विना न सारते, निशि दिन करते नेह।
से जंगल में पोढ़िया, हरिया एकल देह ॥ ३० ॥
कुल मरजाद न लोपते, मरते लोका लाज।
नागा करि करि काढ़सी, हरिया कालक आज ॥ ३१ ॥
माटीका देवल किया, काची कली लगाय।
नहीं भरोसा रहनका, हरिया वार न लाय ॥ ३२ ॥
मांड़्या सो ढ़ह जायगा, माटी तणा मँड़ाण।
जन हरिया जमरायका, आवैगा फरमाँण ॥ ३३ ॥
पाटँण मंडँप पुर नगर, ढहि ढहि होसी ढेर।
जन हरिया जग जावसी, जे कोइ लावै घेर ॥ ३४ ॥
देवल ढहता देखिया, देख न भया उदास।
जन हरिया उन मूढ़को, हदौ न खूलै जास ॥ ३५ ॥
नहीं गरीबी दीनता, साहिव को डर नाहिं।
जन हरिया तन लूटसी, गाम गली के माहिं ॥ ३६ ॥

---

१ बारीक। २ सुगंधित मसाला। ३ राख। ४ गड्ढा। ५ फरमान=परवाना=राजकीय आज्ञापत्र। ६ छत, दूसरी मंजिल। ७ बारह दरी।

हरिया साँई सुमरियै, परहरियै पर निंद।
साचै साँई बाहिरो, झूठी तेरी जिंद ॥ ३७ ॥
जब लग साँई याद कर, तब लग पिंजर सास।
हरिया पाणी ओस का, ऐसी तन की आस ॥ ३८ ॥
बाल पणै नहीं चेतियो, तन तरुणापोथाय।
जन हरिया वृद्धहि भयो, तोइ न चेत्यो जाय ॥ ३९ ॥
हाथ पाँव सिर कंपिया, आंख्या भयो अंधार।
कालाँ ती पंडर भया, हरिया चेत गिवार ॥ ४० ॥
मात न तात न भ्रात सुत, सगा न सुंदरि साथ।
हरिया जासी एकलो, करि बोलाऊ हाथ ॥ ४१ ॥
वाट वटाऊ सब चले, विड़ें में वासो होय।
जन हरिया साँई विना, यार न तेरा कोय ॥ ४२ ॥
जन हरिया संसारमें, देख पाँख मत भूल।
तेरा सज्जन को नहीं, नारायणसे तूंल ॥ ४३ ॥
घाट विड़ाणी लोक विड़, विड़ही विड़में वास।
हरिया हरि विन दूसरा, ताहि किसो विश्वास ॥ ४४ ॥
हरिया संगी राम विन, या कलि माँहि न कोय।
काल पकड़ि ले जावसी, ऊभा देखै लोय ॥ ४५ ॥
हरिया संगी राम है, का सतगुरु की सीख।
जिन पैंडे दुनियाँ चलै, भरूं न काई बींख ॥ ४६ ॥
चंगाँ थका न चेतिया, मंदा क्या पछिताय।
हरिया लागी लाय ज्यूँ, भार न काढ़्या जाय ॥ ४७ ॥
राव रंक बड़ भूपती, बासो वसे सराय।
आये ज्यूँ सब ऊठिगे, हरिया थिर नहिं थाय ॥ ४८ ॥
खंड खंड हुय जाहिंगे, नाना नवं परकार।
जन हरिया निरकार थिर, और अथिर आकार ॥ ४९ ॥
रामनाम चेत्यो नहीं, गाफिलपणै गँवार।
हरिया रहिसी पारकै, हाँली घर घर बार ॥ ५० ॥
रामनाम नहिं चेतियो, करि करि मनकी ढ़ील।
जन हरिया सर जल भर्यो, प्यासा मरै पिपीलें ॥ ५१ ॥

---

१ साथी। २ पराया। ३ पक्ष। ४ तुल्य। ५ विराना। ६ कदम। ७ निरोग, तंदुरुस्त। ८ सुस्त, मूर्ख। ९ नव प्रकारके खंड। १० नौकर। ११ चिउँटी।

रामनाम नहिं चेतियो, करी विड़ाणी आस ।
हरिया से घर गोरवें, सरँक्यां सेती वास ॥ ५२ ॥
रामनाम चेत्यो नहीं, आलस करि करि अंग ।
हरिया से रीता रह्या, शूरां कूकर संग ॥ ५३ ॥
रामनाम नहिं जाणियो, कीया और कलौंप ।
हरिया जा घर संपदा, होसी साँडा साप ॥ ५४ ॥
रामनाम नहिं जाणियो, हाल्यो अवसर हारि ।
बंध्यो बार नरेश के, गज सिर धूरी ड़ारि ॥ ५५ ॥
गज पाँवाँ सिर चंपियो, करि अंकुसकी मार ।
हरि अंकुस मान्यो नहीं, हरिया सहसी भार ॥ ५६ ॥
रामनाम विन जाणिया, वासो वसै वंबूल ।
जे पागोथे पग धरूं, हरिया भाजै सूल ॥ ५७ ॥
रामनाम विन जाणिया, वात विंणंठी मूल ।
हरिया जव होसी कहा, अंत भयो अस्थूल ॥ ५८ ॥
या जगमाँही जीवणो, ज्यूँ तरवर का फूल ।
जन हरिया इन जीव का, तन करं पहिली सूंल ॥ ५९ ॥
रूप रंग ज्यों फूलड़ा, तन तरवर ज्यों पान ।
हरिया झोलो काल को, झड़ि झड़ि हुवै झँफान ॥ ६० ॥
हरिया झोलौं कालको, सवही निकसै मांहि ।
कोइक हरि जन ऊवरै, जाकै दिशा न जांहि ॥ ६१ ॥
हरिया कलिमें आयकै, कहा करत है कूर ।
आसी विरियाँ अंतकी, मुखाँ परैगी धूर ॥ ६२ ॥
धकाधकीमें दिन गया, सूतां रैन विहाय ।
हरिया हरि की भक्ति विन, कहा कियो नर आय ॥ ६३ ॥
सूती सपनै रैन के, पाय विंलंबी सैनं ।
हरिया जाणूं उठि सिलूं, ऊघरि आये नैन ॥ ६४ ॥
सूती सपनै ओझंकी, वोली अटपट वैन ।
जन हरिया घर आंगनै, सही पधारे सैन ॥ ६५ ॥
जेतूं सपना साँच है, साँचा सैन मिलाय ।
जव नहिं देखूं नैन भरि, तव कैसे पति आय ॥ ६६ ॥

---

१ गाँवका किनारा । २ सरकनेकी छपरी । ३ क्रियाकलाप, समूह । ४ नाश । ५ भला । ६ झंखूर । ७ वनस्पतिको नाश करनेवाली हवा । ८ समय । ९ विल-मना । १० सज्जन । ११ चौंकना ।

सपने ही साँई मिलै, सो साँई का मित।
जन हरिया सो चिंतवै, सोई आय मिलंत ॥ ६७ ॥
जा दिन राम न जाणियो, ता दिन भयो अकाज।
जन हरिया संसारमें, आय मुवा नहिं लाज ॥ ६८ ॥
जन हरिया कायंम[1] किया, मानव तेरा मुख्ख।
मुखतें करता ना भजै, कैसे होय निदुःख ॥ ६९ ॥
साँचा मुख मानव तणा, जा मुख निकसै राम।
जन हरिया मुख राम विन, सोई मुख वेकाम ॥ ७० ॥
सोई मुख पसुवै दिया, सोई मुख नरदेह।
गुरुमुख सुमरै रामकूं, पसुवा खाय मरेह ॥ ७१ ॥
चरन पिवनकूं मुख दिया, उदर भरनके काज।
हरिया राम न संचरै, सो मुख जाणि अकाज ॥ ७२ ॥
अधम उधारण याद करि, नर तेरा निस्तार।
हरिया अधम उधार विन, और किसो आधार ॥ ७३ ॥
अधम उधारण याद करि, तन मन राखि निचिंत।
जन हरिया कुण मेटसी, साँई विना सचिंत ॥ ७४ ॥
अधम उधारण एक है, दूजा ऊथंप[2] थाप[3]।
हरिया थापी थापना, जाका जपियै जाप ॥ ७५ ॥
एक रामकूं सुमरियै, दूजा धरो न चित्त।
जन हरिया नहिं राम विन, तो रखवाला नित्त ॥ ७६ ॥
राम विना कुण राखसी, ज्यूं खेती किरसान।
नहि तो चिड़ै विगाड़सी, हरिया चेत अजान ॥ ७७ ॥
हरिया निज मन चेतलै, जो परवंछै ठौर।
एकै साँई बाहिरो, धणी न दूजा और ॥ ७८ ॥
धणी विहूँणा धवलैंहर[4], ढहि ढहि ढेर थियाह।
हरिया पाछा आयके, वास न को वसियाह ॥ ७९ ॥
हरिया तन को गीरबो[5], कहा करै नर देख।
बेहैमाता[6] दाणो दलै, औरां लिखती लेख ॥ ८० ॥
इन कायाको गीरबो, मूढ करो मति कोय।
हरिया रावणके घरां, हुई जिका नर जोय ॥ ८१ ॥

---

१ मुकर्रर। २ उखडी हुई। ३ स्थिति। ४ मीनार यादगार। ५ गर्व।
६ विधातृ=सृष्टि रचनेवाला।

हकाँ[1] बेली[2] हक्क[3] है, बे हक्कां वे हक्क।
हरिया एकै हक्क विन, सब दिन जाहि अनहँक्क ॥ ८२ ॥
एता सुख संसार का, जेता सुक्ख न जानि।
जन हरिया सोइ सुक्ख है, जो कोइ विरला जानि ॥ ८३ ॥
सब कोइ चाहै सुक्ख कूं, दुःख न कोई चाहि।
हरिया दुख सुख सिरजिया, सोई ले निरवाहि ॥ ८४ ॥
दुनिया रोवै रोवणा, देखि विड़ाणी खाल[4]।
हरिया नाम सनेह विन, यो तन होय विहाल ॥ ८५ ॥
हरिया रोवैस रोवणा, किसके आगे जाय।
मात पिता सुत बंधवा, सवही जाँहि विलाय ॥ ८६ ॥
दुनिया रोवै रोवणा, रोय रोय करै पुकार।
हरिया ऊ भांजै घड़ै, ज्यूं भांडा कुंभार ॥ ८७ ॥
आवण जावण आदि का, आज काल का नाहिं।
हरिया क्या पछिताइये, मौत सकल के माहिं ॥ ८८ ॥
घर घर लागो लायणो, घर घर धाँह[6] पुकार।
जन हरिया घर आपणो, राखै सो हुशियार ॥ ८९ ॥
यो सिनखा तन पाइकै, भज्यो नहीं भगवान।
जन हरिया तन मानखो, मिलै नहीं आँसान[7] ॥ ९० ॥
यो तन जोबन देख नर, क्या परफूलत होय।
जन हरिया जलवाहला, वहतां वार न क्रोय[8] ॥ ९१ ॥
तू क्यों सूतो नींद भरि, कहा निचिंतो होय।
हरिया जगमें जीवका, साथी सैण न कोय ॥ ९२ ॥
कुण बेली संसारमें, जीव एकलो जाय।
हरिया हरि विन दूसरा, स्वारथ केरा थाय ॥ ९३ ॥
रामनाम विन दूसरा, संग न कोई बंगं[9]।
हरिया तन जोबन थकै, करो जीवका ढ़ंग ॥ ९४ ॥
सबही स्याणा हुय रह्या, नहीं अयाणो कोय।
स्याणो सोई जाणिये, अलख ओळखै सोय ॥ ९५ ॥
राज पाठ सुत वित सबै, सुंदरि महल विलास[10]।
जन हरिया हरि सुख विना, ज्यों जंगल का घास ॥ ९६ ॥

---

१ सचाँ। २ साथी। ३ सत्य। ४ व्यर्थ। ५ शरीर। ६ जोरसे चिल्लाकर रोना। ७ सुगम। ८ किसका। ९ मूर्ख, उद्दंड। १० आनंद।

हरिया जंगल घासकूँ, हरया देख मति भूल।
दिष्टिं[1] गहै दिन च्यार का, जाय जड़ां सूं खूल ॥ ९७ ॥
जन हरिया जग जात है, रहता कोऊ नाहिं।
रहता एको राम है, न्यारा सब घटमाहिं ॥ ९८ ॥
हरि थोड़ो करि जाणियो, इन औसर नर आय।
हरिया घणौ चितारसी, पर हथ पड़सी जाय ॥ ९९ ॥
हाथ पड़ै जब और के, वींचैगी[2] तन माँहि।
हरिया दोली पालि जल, पहलां बंधी नाँहि ॥ १०० ॥
हरिया पाल तलाव की, फाटी जब क्या होय।
पहल किया सो खूब है, पीछै दाँव न कोय ॥ १०१ ॥
हरिया तन जोबन थकै, किया दिया जो जाय।
कीजै सुमरण रामको, दीजै हाथ उठाय ॥ १०२ ॥
हरिया दीया हाथ का, आडा आसी तोय।
राम नाम कूं सुमरतां, पार उतारै सोय ॥ १०३ ॥
हरिया राम संभारियै, ढ़ील करो मति कोय।
सांझां वीच सवेरमें, क्या जानू क्या होय ॥ १०४ ॥
हरिया राम संभारियै, जब लग पिंजर सास।
सास सदा नहिं पाहुणा, ज्यूं सावण का घास ॥ १०५ ॥
जन हरिया खड़ै[3] सांवणूं, सदा न हरियो होय।
ऐसे सास सरीरमें, थिर नहिं दीसै कोय ॥ १०६ ॥
हरिया हरिसो को नही, सज्जन तेरे और।
मेटै जामण मरण कूं, दै अमरापुर ठौर ॥ १०७ ॥
हरिया जहँ अमरापुरी, तहँ हरि भक्ति सुहाय।
से नर हरि की भक्ति विन, दौड़्या जमपुर जाय ॥ १०८ ॥
हरिया हरि सुमरत रहो, हालो अपने हक्क।
पहिली तन का बल थकै, पीछै रसना थक्क ॥ १०९ ॥
हरिया थाके जीभड़ी, जासी सुमरण छूटि।
किया जाय सो कीजिये, लेसी तन धन लूटि ॥ ११० ॥
तन कूं जमरो लूटसी, लूटै धनकूं लोक।
नान्हो करि करि वालसी, हरिया हाड ठँठोक[4] ॥ १११ ॥
खावण पीवण छोड़िया, छोड़्या घर घर वास।
हरिया वसती छांडिके, करसी जंगल बास ॥ ११२ ॥

१ दृष्टि। २ वीतेगी। ३ घास। ४ ठंठोर।

हरिया सास सरीरमें, वास किता दिन होय।
सासो सासा घटत है, कहा निचिंतो[1] सोय॥ ११३॥

हरिया दोळी[2] कीजिये, राम नाम की वाड़।
नहि तो जँमरो[3] आइके, वाड़ी जाय विगाड़॥ ११४॥

हरिया वाड़ी वीगड़ै, सिरपर धणी न होय।
चिड़ियां खाया खेतड़ां, हाँकल[4] करै न कोय॥ ११५॥

जन हरिया सिर पर धणी, खड़ा खेतके माहिं।
करि ढोहाली[5] नामकी, विगड़न कूं कुछ नाहिं॥ ११६॥

इति।

अथ ज्ञानविचारको अंग।

तिमिर[6] गया रवि तेज तें, तेज गया निशि[7] पास।
हरिया ज्ञान विचार तें, होय कर्म का नास॥ १॥

नाम लिया गुण ना मिट्या, तिमिर न भागा तेज।
हरिया ज्ञान विचार विन, रही जेज की जेज॥ २॥

गुरु पै ज्ञान न बूंझिया[8], बूझ न किया विचार।
हरिया कर दीपक दिया, अंधे के अंधार॥ ३॥

उर अंधारो जहँ नराँ, सतगुरु कूं नहि भेट।
आये थे हरि मिलन कूं, लगी और ही फेट[9]॥ ४॥

कहियाँ माया संपजै, मनसूं जाण्या ब्रह्म।
हरिया होवे मुक्खतें, उदक्यां सेती धर्म॥ ५॥

कह्याँ न माया संपजै, जाण्याँ ब्रह्म न होय।
हरिया मुख तें उदकियां, धर्म न हूवा कोय॥ ६॥

माया दत्त[10]बतें भई, राम भज्या सूं ब्रह्म।
जन हरिया कुछि होत है, कर सूं दीया धर्म॥ ७॥

कह्या सुण्या तो क्या भया, विना सुद्धबुंध[11] सार।
हरिया आपो उलटि के, आतमज्ञान विचार॥ ८॥

इति।

---

१ निश्चिंत। २ घेरा। ३ मृत्यु, काल। ४ हाँक मारना। ५ किलकारी। ६ अंधेरा। ७ रात्रि। ८ पूछा। ९ झपट। १० दान। ११ सुधबुध=होश हवास।

अथ शून्य सरोवरको अंग ।

साँसा सोग संताप तज, आपा होय अबीह[1] ।
शून्य सेज[2]में पाइया, हरिया अविनाशीह ॥ १ ॥
हरिया मन साँसे पड़्यो, कहि समझावै कौन ।
हसतो रमतो बोलतो, ऊ कहँ करिग्यो गौन[3] ॥ २ ॥
हरिया सब साँसा मिट्या, गुन मिलग्या निर्गुन्न ।
आवन जावन रहित हुय, सुरति समाणी सुन्न ॥ ३ ॥
सुन सरवर चहुं फेरमें, सुख सीतलता सीर[4] ।
हरिया एक अखंडमें, ध्यान धरूं ता तीर ॥ ४ ॥
दिल दरिया मन मच्छली, नीर सिरज्जन हार ।
हरिया सबसूं ढूंकडै[5], विरला जाणै सार ॥ ५ ॥
जन हरिया मन जहँ किया, सुन सरवरमें वास ।
भले[6] न जामण मरण की, धरै न हंसो आस ॥ ६ ॥
जन हरिया सरवर सवै, ठाम ठाम भरपूर ।
जहँ पायो तहँ परम सुख, दुखी रह्या से दूर ॥ ७ ॥
अपणे घरकी गम नहीं, परघर थाँगै[7] काँय ।
हंस हंस की गम[8] चले, काग काग की पाय ॥ ८ ॥
हंस गयो उडि आप घर, करि सायर की सुद्धि ।
हरिया सरवर सुद्धि विन, बूडो काग कुबुद्धि ॥ ९ ॥
जन हरिया जल पंछियै, पीयो चंचु भराय ।
ऐसा कोइ न देखिया, सब सरवर पी जाय ॥ १० ॥

इति ।

अथ माया ब्रह्म निर्णयको अंग ।

ज्यों माया सूं ब्रह्म है, त्यों काया से जीव ।
जन हरिया जब अंतरै, पाया जीव रु सीव[9] ॥ १ ॥
माया ओलै[10] ब्रह्म है, आकारे निरकार ।
हरियै देख्या जुगति सूं, न्यारा दिल दीदार[11] ॥ २ ॥
माया जब काया खड़ी, काया जब लग जीव ।
हरिया जीव रु सीव का, मेला कैसे थीव[12] ॥ ३ ॥

---

१ निर्भय । २ शय्या । ३ गमन । ४ पानीका सोता । ५ नजदीक । ६ फिर । ७ खोजता है । ८ राह । ९ ब्रह्म । १० ओट । ११ दर्शन । १२ होवै ।

काया माया कारवीं[1], जैसे करवा[2] जान।
जन हरिया भागाँ पछै, चाक[3] न चड़सी आन ॥ ४ ॥
जिन जलती भांडा[4] किया, करत न लाई बार।
हरिया वाकूं सुमरिये, सव का सिरजनहार ॥ ५ ॥
काया छाया एकठी, ज्यों माया से ब्रह्म।
हरिया न्यारा जाणसी, जिन पाई गुरु गम्म ॥ ६ ॥
जन हरिया चाल्यां चलै, थिर सेती थिर होय।
काया वंधी कर्म सूं, छाया लिपै न कोय ॥ ७ ॥
माया जोड़ो ब्रह्म सूं, छाया जोड़ो देह।
काया माया जावसी, हरिया देखंतेह ॥ ८ ॥
शस्त्तर सूं नहिं छेदियै, पावक लगै न शीत।
हरिया कहियै ब्रह्म की, ऐसी अद्भुत रीत ॥ ९ ॥
रहता नारि न को पुरुष, रहै न तेऊँ[5] लोयँ[6]।
रहता एको ब्रह्म है, हरिया सव घट सोय ॥ १० ॥
रहता सोई जाणिये, रहता सूं मिल जाय।
हरिया रहता राम विन, काल गिरासै आय ॥ ११ ॥

इति।

अथ वेहदको अंग।

हरिया हद आसँमुखी[7], ताहि न करिये हेत।
वेहद वास निरास घर, ताकूँ अंतर देत ॥ १ ॥
केइ वावाँ केइ दाहणा, हद वहु मारग होय।
जन हरिया इन वीचमें, भटक मुवा तिहुँ[8] लोय ॥ २ ॥
हरिया हद का जीव कूं, वेहद की गम नाहिं।
कीड़ी केरै नाल ज्यूं, कइ आवै कइ जाहिं ॥ ३ ॥
हरिया हद कूँ छाँडि के, वेहद पहुँता जाय।
दिल दरगा[9] दीवान में, धका न धूमी काय ॥ ४ ॥
हद छाँडी वेहद भया, हरिया राम हुजूर।
अखंड उजाला गै[10]वै[11] का, निसा न ऊगै सूर ॥ ५ ॥
हद का रत्ता हद्द में, वेहद का वेहद्द।
हरिया वेहद पाइके, हद्द भई सव रद्द ॥ ६ ॥

---

१ वनावटी, झूठी काररवाई। २ मट्टीका वनाहुआ टूंटीदार लोटा, आफ तावा। ३ कुलालचक्र। ४ वासण। ५ तीन। ६ लोक। ७ आसगीर। ८ तीन। ९ दरवार, राजसभा। १० समक्षता। ११ परोक्ष।

हद सूं हरि दूरै बसै, बेहद ठांवो ठीक ।
हद बेहद की पाइ सुधि, हरिया राम नजीक ॥ ७ ॥
हरिया बेहद के घरां, नहीं हद की आस ।
संसा सोग न ताप तन, नाम निरासा वास ॥ ८ ॥
जन हरिया बेहद घरां, घन अनहद की घोर ।
बाजा राग अखंड धुनि, एक अखंडी टोरै ॥ ९ ॥
जन हरिया हदमें घणा, सुख दुख भरम सनेह ।
बेहद काम न कल्पना, अति आनंद अछेह ॥ १० ॥
बेहद कांठै घर किया, निज सुख पाया नाम ।
हरिया भागी भरमना, भया सकल सिध काम ॥ ११ ॥
चित चंचल निश्चल भया, पूरी मनकी आस ।
हरिया हद कूं छांडिके, बेहद कीन्हा बास ॥ १२ ॥
हद बैठा हद की कहै, वेद पुराना बाँचि ।
हरिया बेहद बावरा, रह्या राम सूं राचि ॥ १३ ॥
जन हरिया बेहद कथा, किन सूं कहियै बोल ।
महैरम आगै दाखियै, दिल का पुस्तक खोल ॥ १४ ॥
बचन सुन्या बेहद का, हद न आवै दाय ।
हरिया सुनमें साँइयां, तासूं ध्यान लगाय ॥ १५ ॥
सुरत बसी बेहद में, हरिया एक अभंग ।
पड़े पुड़ंगा पेम की, भीना नख सिख अंग ॥ १६ ॥
हरिया अनहद शब्द की, तार कबू नहिं तूटि ।
घोर सुनत है गगनमें, सुर बाहिर नहिं फूटि ॥ १७ ॥
हरिया हद का जीवड़ा, ताकूं धका अनंत ।
जहँ गुरु पाया बेहदी, ले निरवाणं चड़ंत ॥ १८ ॥
जन हरिया हमकूं कह्या, सतगुरु ऐसा दाव ।
हद का पासा छांडि दे, बेहद साम्हा आव ॥ १९ ॥
हरिया हद सागर तणो, थँग थोड़ो थहरेह ।
जग सारो तिसियो फिरै, जल बूठो धारेह ॥ २० ॥
बेहद सुख सागर भख्यो, पंथ न पग पारेहं ।
हरिया हरिजन पीवसी, हद सूं हुय न्यारेह ॥ २१ ॥

---

१ स्थान, ठिकाना । २ चाल । ३ किनारै । ४ भेदी, मरमी । ५ मोक्ष । ६ थाह । ७ कम । ८ थाहरा=जोगहरा न हो । ९ परेवा=तेज उडनेवाला पक्षी ।

बेहद कूँ पहुँचै नहीं, हरिया हद के लोग।
तन तो माटीमें मिल्यो, मन गयो सांसै सोग ॥ २२ ॥

इति।

अथ भ्रमनिश्चयको प्रसंग।

हरिया घट में घड़त है, केताई नर घाट।
आडा पड़दा भर्म का, ब्रह्म न दरसै वाट ॥ १ ॥
हरिया आतम एक है, दूजा कोऊ नाहिं।
मनकी मैं तैं मेटि करि, पद पाया घट माहिं ॥ २ ॥
घट में तारा चन्द रवि, घट माहीं ब्रह्मंड।
हरिया घट में राम है, जाकी ज्योति अखंड ॥ ३ ॥
हरिया आवै देखमें, ए तो माया रूप।
आतम दृष्टि न मुष्टि है, अनुभव अकल अरूप ॥ ४ ॥
हरिया घट में अघट है, वाकी ठोड़ विकट्ट।
विन गुरुगम खूल्है नहीं, भर्म कर्म का पट्ट ॥ ५ ॥
भर्म भूत भागा विनां, कर्म कटै नहिं काहि।
हरिया पडुल आँखि में, ताका तिमर न जाहि ॥ ६ ॥
दत्तव ते धन पाइये, धर्म दया ते होइ।
हरिया हरिजन औरका, भर्म गमावै सोइ ॥ ७ ॥
हरिया तन मन वचन ते, आतम निश्चय जानि।
वाकों नित्य आनन्द है, शोक न संशय आनि ॥ ८ ॥
जन हरिया निश्चय भया, भर्म दूसरा नाहिं।
आस पास की मिट गई, आतम आपा माहिं ॥ ९ ॥
जल खाने वहि नीसरै, हरिया तेरू होइ।
वहिग्यो खाने भर्मके, हाथ पड़ै नहिं कोइ ॥ १० ॥
हरिया भाँजै भर्मकूं, सतगुरु मिलै सधीर।
भवसागर में डूबतां, पार उतारै तीर ॥ ११ ॥

इति।

अथ निर्गुणगुणको प्रसंग।

निर्गुण तें गुण ऊपजै, गुण तें निर्गुण ताहिं।
जन हरिया फल वेल तें, फल विन वेली नाहिं ॥ १ ॥
हरिया निर्गुण मूल है, सगुणजु साखा पान।
भक्ति बीज फल मुक्ति है, और धर्म सब आन ॥ २ ॥

सोरठा ।

फूल डाल तजि पान, एक पकड़ रहु पेड कूँ ।
ऊंचा चढ़ असमान, हरिया निज फल चाहिये ॥ ३ ॥

साखी ।

केइक पाना फूलड़ाँ, केई विलँब्या डाल ।
हरिया मूल बिलंबिया, फल पाया असराल[1] ॥ ४ ॥
चढ़ि ऊंचा फल चाखिया, हाथ पांव विन मूँह ।
हरिया निर्गुण रूंखड़ो, कह गुण माँहि किसूँह ॥ ५ ॥
सगुणां में सगुणो सिरै, रूखां मांहि न रूँख ।
जन हरिया फल चाखियां, फेर न आवै कूख ॥ ६ ॥
गुण में औगुण अनँत है, आपा भुगतै आय ।
जन हरिया निर्गुण वसै, जग में आय न जाय ॥ ७ ॥

इति ।

अथ ब्रह्मसमाधिको प्रसंग ।

चित मन पवना थिर करै, उलटि पंच[2] कूँ साधि ।
जन हरिया जब जाणियै, याही ब्रह्म समाधि ॥ १ ॥
मन पवना मिल एकठा, शब्दे सुरति मिलाय ।
हरिया ब्रह्म समाधि का, जब सहजां घर पाय ॥ २ ॥
हरिया ब्रह्म समाधि को, है सुख सहज अनंत ।
काम न ऊठै कल्पना, तन की सुधि विसरंत ॥ ३ ॥
जन हरिया मुख द्वार तैं[3], चली शब्द की सीर ।
जाय मिली सुख सहज में, गंग जमुन की तीर ॥ ४ ॥
गंगा जमुना सरस्वती, नितको न्हावन होय ।
जन हरिया जहँ न्हाइया, घाट वाट नहिं कोय ॥ ५ ॥
सीरां छूटी चहुं दिसाँ, अंत न कोई पार ।
जन हरिया पी मगन हुय, तन की सुधी न सार ॥ ६ ॥
रसना नख सिख बीच में, रोम रोम रँकार ।
जन हरिया सुख ब्रह्म का, होत नहीं ममँकार ॥ ७ ॥
इडा पिंगला बीचमें, सुखमण हंदा घाट ।
हरिया ब्रह्म समाधि की, सहजां पाई वाट ॥ ८ ॥

---

१ निरंतर । २ पंचप्राण । ३ से ।

चंद विना जहां चाँदणा, सूर विना अ[1]वास।
जन हरिया घर ब्रह्म का, तेजपुँज परकास ॥ ९ ॥
पवन न पाणी चंद रवि, जहँ नहिँ धरा अकास।
जन हरिया घर ब्रह्म का, आस न पास निरास ॥ १० ॥
सुरति चड़ी अस[2]मान कूँ, जाय मिली निरकार।
जन हरिया घर ब्रह्म का, [3]ओथि नहीं आकार ॥ ११ ॥
हरिया [4]धुं धुं धुनि उठै, [5]तनक [6]थेइततकार।
वाजै पिंड ब्रह्मंड में, एक अखंडी तार ॥ १२ ॥
इला दुहाँरी[7] पिंगला, षोड़[8]श द्वा[9]दश गाय।
जन हरिया मति मट्ठ की, लिया तत्तकूँ ताय ॥ १३ ॥
संतन की गति संत कूं, दुनियन की दुनियाँह।
जन हरिया अवि[10]गत्त की, [11]गत्त न को सुनियाँह ॥ १४ ॥
पाँव विना जहँ चालिवो, राह विना जहँ राह।
जन हरिया घर ब्रह्म का, सुर नर सकै न जाह ॥ १५ ॥

इति।



---

१ अवास=घर। २ आकाश:। ३ वहाँ। ४ नगारेका शब्द। ५ मेघ-रागकी रागिनी। ६ ततकारसहित थेई अर्थात् ततताथेई=नृत्यका शब्द, नाचका बोल। ७ दोहनेवाली ८ चंद्रकला। ९ सूर्यकला। १०-अविगत=त्रिकालाऽबाध्य। ११ गत्त=नाश।

निसाणी का भूमा।

यह निसाणी नामक ग्रन्थ योग के विषय का है। योग शब्द सँस्कृत के युज धातु से बना है (युजिर् योगे) जिसका अर्थ जोड़ना है। अपने मनको एक ध्येयसे जोड़ना अर्थात् मनको स्थिर करना ही योग है। भगवान् पतंजलि ने ऐसा कहाहै "योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः"। एकाग्रता योग का शरीर है, जिसमें केवल एकाग्रता ही हो वह व्यावहारिक योग, और जिसमें अहंता ममता का नाम लेश भी न हो वह पारमार्थिक योग है। गीताके[1] साम्यगर्भित कर्मयोग में यही कथन है। ज्ञानयोग ही श्रेष्ठ है, विनाज्ञानका योग निष्फल है। योग के पहले का ज्ञान अस्पष्ट होता है इसलिये गीता[2] में ज्ञानी से योगी को ही अधिक कहा, वास्तव में सच्चा ज्ञानी वहीहै जो योगी है इसी का गीता[3] में वर्णन है। ब्रह्मविद्योपनिषद्, क्षुरिकोपनिषद्, चूलिकोपनिषद्, नादबिन्दु, ब्रह्मबिन्दु, अमृतबिन्दु, ध्यानबिन्दु, तेजोबिन्दु, योगशिखा, योगतत्त्व, हंस आदि उपनिषद् भी इसी का वर्णन करती हैं। अतएव ज्ञानकी एक मात्र कुंजी योगही है। योगवाशिष्ठ[4] में लिखाहै कि योग बिनाका ज्ञानी ज्ञानबन्धु है अर्थात् ज्ञानियों

---

१ योगस्थः कुरु कर्माणि सङ्गं त्यक्त्वा धनञ्जय।
सिद्ध्यसिद्ध्योः समो भूत्वा समत्वं योग उच्यते॥
(गीता अ० २–४८)

२ तपस्विभ्योऽधिको योगी ज्ञानिभ्योऽपि मतोऽधिकः।
कर्मिभ्यश्चाधिको योगी तस्माद् योगी भवार्जुन॥
(गीता अ० ६–४६)

३ यत्सांख्यैः प्राप्यते स्थानं तद्योगैरपि गम्यते।
एकं सांख्यं च योगं च यः पश्यति स पश्यति॥
(गीता अ० ५–५)

४ व्याचष्टे यः पठति च शास्त्रं भोगाय शिल्पिवत्।
यतते न त्वनुष्ठाने ज्ञानबन्धुः स उच्यते॥ १॥
आत्मज्ञानमनासाद्य ज्ञानान्तरलवेन ये।
सन्तुष्टाः कष्टचेष्टंते ते स्मृता ज्ञानबन्धवः॥ २॥
(योगवाशिष्ठ निर्वाणप्रकरण उत्तरार्ध सर्ग २१–)

में अधम है। ज्ञान और योग का बहुत अधिक सम्बन्ध है इसीलिये "ज्ञान-क्रियाभ्यां मोक्षः" ज्ञान और क्रियासेही मोक्ष होना कहा गया है। इसी योग का वर्णन भिन्न भिन्न शास्त्रकारोंने भिन्न भिन्न प्रकार से किया है। भगवान् पतंजलिविरचित "पातंजलयोगदर्शन" तो खास योगकाही ग्रन्थ ठहरा अतएव इसमें तो सांगोपांग वर्णन होना हीं चाहिये। और दूसरे शास्त्रकारोंने भी योग के विषय में विशेष जानने के लिये योगदर्शन

---

१ ज्ञान क्रिया करि ऊतरे हरिया हरिजन पार।
ऐसे अन्धे कन्ध करि, पंगो आन उतार ॥ १ ॥
पंगा सोई ज्ञान है, किरिया अंधी जान।
जन हरिया मिल एकठा, मुक्ति भई आसान ॥ २ ॥
ज्ञान बिना किरिया न कुछ, किरिया बिना न ज्ञान।
हरिया किरिया ज्ञान बिन, यो ही आतमध्यान ॥ ३ ॥
ज्ञान ब्रह्म की दृष्टि है, किरिया ध्यान सरूप।
जन हरिया मिल एकठा, आतम तत्त्व अनूप ॥ ४ ॥
ज्ञान सहित किरिया भई, मोक्ष माँहि पद जान।
हरिया किरिया ज्ञान बिन, भक्ति भई आसान ॥ ५ ॥

(श्री हरि० वाक्यम्)

जो विन ज्ञान क्रिया अवगाहै, जो विन क्रिया मोक्षपद चाहै।
जो विन मोक्ष कहै मैं सुखिया, सो अज्ञान मूढन में मुखिया ॥ १ ॥

२ न्यायदर्शनः—

समाधिविशेषाभ्यासात् ४-२-३८। अरण्यगुहापुलिनादिषु योगाभ्यासोपदेशः ४-२-४२। तदर्थं यमनियमाभ्यामात्मसंस्कारो योगाच्चाध्यात्मविध्युपायैः ४-२-४६ ॥

वैशेषिकदर्शनः—

अभिषेचनोपवास-ब्रह्मचर्यगुरुकुलवास-वानप्रस्थ-यज्ञदान-प्रोक्षण-दिङ्नक्षत्र-मंत्र-काल-नियमाश्चादृष्टाय ६-२-२ अयतस्य शुचिभोजनादभ्युदयो न विद्यते नियमाभावाद्, विद्यते वाऽर्थान्तरत्वाद्-यमस्य ६-२-८

सांख्यसूत्रः—

रागोपहतिर्ध्यानम् ३-३०। वृत्तिनिरोधात् तत्सिद्धिः ३-३१। धारणासनस्वकर्मणा तत्सिद्धिः ३-३२। निरोधश्छर्दिविधारणाभ्याम् ३-३३ स्थिरसुखमासनम् ३-३४।

ब्रह्मसूत्रः—

आसीनः सम्भवात् ४-१-७। ध्यानाच्च ४-१-८। अचलत्वं चापेक्ष्य। ४-१-९ स्मरन्ति च ४-१-१०। यत्रैकाग्रता तत्राविशेषात् ४-१-११

देखने की आज्ञा दीहै[1]। जिस योग का वर्णन उपनिषदों में व सूत्रोंमें भलीप्रकार किया गयाहै उसीका श्रीमद्भगवद्गीता के तीनों षट्कों में कर्म, भक्ति और ज्ञान के साथ श्रीभगवानने समावेश कर दिया है, समावेश क्या करदिया है, गीता के छठे और तेरहवें अध्याय में तो योग के सारें मौलिक सिद्धान्त और प्रक्रियायें ही वर्णन करदी हैं।

योगवाशिष्ठ तो बस "यथा नाम तथा गुणः" खास योग का ग्रन्थराज ही है। श्रीमद्भागवत के स्कन्ध ३ अध्याय २८। स्कन्ध ११ अध्याय १५–१९–२० में योग का ही वर्णन है। इतना ही नहीं इसके उपरांत योगवृक्ष इतना फैला कि उसकी कई शाखायें बन गई और उनके अलग ही ग्रन्थ बनगये जैसे तंत्रशास्त्रमें "महानिर्माणतंत्र" और "षट्चक्रनिरूपणतंत्र" बहुत ही उत्तम योग के तांत्रिक ग्रन्थ हैं। इनके सिवाय और भी कितने ही योग के ग्रन्थ बनगये हैं, हठयोगप्रदीपिका, शिवसंहिता, घेरण्डसंहिता, गोरक्षपद्धति, गोरक्षशतक, योगतारावली, बिन्दुयोग, योगबीज, योगकल्पद्रुम, योगनिबन्ध आदि अनेक योग के ग्रन्थ हैं।

योग यहींतक नही बढ़ा किन्तु देशी और विदेशी महात्माओंने अपने अपने अनुभव के अनुसार लोगोंको ज्ञान कराने के लिये महाराष्ट्री, गुजराती, बंगला, तैलंगी, तामिली, औत्कली, द्राविड़ी और इंग्लिश आदि अलग अलग भाषाओंमें योगका वर्णन किया। कवीर साहब, नानकसाहब, दादूजी, हरिदासजी, सुन्दरदासजी, जनतुरसीजी, चरणदासजी, सेवादासजी, सन्तदासजी, दरियासाजी आदि महात्माओंने हिन्दी साहित्यमें उसी योगवाणी का वर्णन किया कि जिनसे मुमुक्षुओं को बड़ा ही लाभ पहुँचा और पहुँच रहाहै।

जिस योग की मुक्तकंठ से प्रशंसा की गई और जिस योग की प्राप्ति महापुरुष परब्रह्मराम के उपदेश द्वारा श्रीजैमलदासजी महाराज को हुई[2]

---

१ योगशास्त्राच्चाध्यात्मविधिः प्रतिपत्तव्यः (न्यायद० २–४–४६ भाष्य)

२ सुणरे बालक बात हमारी, तोकूं दाखूं गुंझ हृदारी।
गेले में गुरु ज्ञान सुणाया, जोग सहित निजनाम बताया॥
(श्रीराम० भक्तमाल)

आपने पूर्ण कृपा करके श्रीहरिरामदासजी महाराज को उसीका तारकमंत्र[1] सहित उपदेश देकर रामस्नेह सम्प्रदाय प्रवृत्त करने की नींव लगाई। उसी योग का वर्णन लोकोद्धार के अर्थ पूज्यपाद श्रीहरिरामदासजी महाराजने इस ग्रन्थके निशानी नामक छन्दों में किया है। अतएव इस ग्रन्थ को अत्यन्त ही उपयोगी समझकर इस की टीका बनाकर सर्व साधारणके लाभार्थ प्रगट कीगई।

श्रीमान् माननीय ज्योतिषी पं० श्रीनिवासजी पाठक महोदय रतलाम-निवासी का मैं विशेष आभारी हूं जिन्होंने बहुत कष्ट उठाकर इसकी टीका करने में परिश्रम किया है।

जिन पुस्तकों से या जिन महात्माओंसे सहायता ली गई है उनके प्रणेताओं तथा उन महात्माओं का भी विशेष आभारी हूं।

भवदीय
चौकस राम वैद्य.

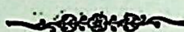
---

१ तारकमंत्रः—ॐ नमः सत्यरामाय चिदानन्दैकमूर्तये।
प्रत्यक्षतत्त्वबोधाय गुरुवेदोक्तलब्धये ॥ १ ॥

॥ श्रीः ॥

ध्यानमूलं गुरोर्मूर्तिः पूजामूलं गुरोः पदम् ।
मंत्रमूलं गुरोर्वाक्यं मोक्षमूलं गुरोः कृपा ॥ १ ॥

घघर[1] निसा[2]णी प्रारंभः ॥



प[3]द्मापूजितपादपद्मयुगलं रामं दधंतं हृदि
रागद्वेषकरालजालमखिलं वृंदं रिपूणां हरम् ।
याता ये शरणं विशुद्धमनसस्तेषां प्रबोधादिदं
वंदे श्रीहरिरामदासमनिशं रामा[4]य सन्मंत्रदम् ॥ १ ॥
हरिरामं गुरुं नत्वा कृत्वा चारुप्रदक्षिणाम् ।
निसानीनामग्रन्थस्य भाषाटीकां करोम्यहम् ॥ १ ॥

साखी ।

हरिया सम्वत् सत्रहसे वर्ष सईको जान ।
तिथि तेरस आषाढ वदि सतगु[5]रु पड़ी पिछान ॥ १ ॥

---

१ घटघट । २ चिह्न । ३ पं० दिगंवरेण रचितमिदं पद्यम् । ४ रामदासाय ।
५ सद्गुरुलक्षणः—

श्रीगुरुः परमेशानि शुद्धवेशो मनोहरः ।
सर्वलक्षणसंयुक्तः सर्वावयवशोभितः ॥ १ ॥
सर्वागमार्थतत्त्वज्ञः सर्वमंत्रप्रधानवित् ।
लोकसंमोहनकरो देववत्प्रियदर्शनः ॥ २ ॥
सुमुखः सुलभः स्वच्छः शुद्धांतश्छिन्नसंशयः ।
इंगिताकारतत्त्वज्ञो दूरतः कृतदुर्जनः ॥ ३ ॥
अंतर्मुखो बहिर्दृष्टिः सर्वज्ञो देशकालवित् ।
आज्ञासिद्धिस्त्रिकालज्ञो निग्रहानुग्रहक्षमः ॥ ॥ ४ ॥
वेदवेदांतविच्छांतः सर्वजीवदयापरः ।
स्वाधीनेंद्रियसंचारः षड्वर्गविजयक्षमः ॥ ५ ॥
अग्रगण्योऽतिगंभीरः पात्रापात्रविशेषवित् ।
निर्मलो नित्यसंतुष्टो निर्द्वंद्वो नित्यशक्तिमान् ॥ ६ ॥
सद्भक्तवत्सलो धीरः कृपालुः स्मितपूर्ववाक् ।

श्रीहरिरामदासजी महाराज स्वयं अपने मुखारविंद से अपने को ही संबोधित कर वर्णन करते हैं कि, संवत् सत्रह सौ का सईका वर्ष अर्थात् अठारहवीं शताब्दी के आषाढ कृष्णा त्रयोदशी के दिन मेरे को सद्गुरु की पहिचान पड़ी ॥ १ ॥

छंद निसानी ।

सतगुरु पहिचानी परचे प्रानी सब सिध काम सरंदा है ॥ १ ॥

सद्गुरु की पहिचान होने से सर्व कार्य सिद्ध होगये ऐसा परचा (प्रत्यक्षबोध) जीवको होगया अर्थात् अनुभव प्राप्त होगया ॥ १ ॥

सतगुरु से मिलिया अंतरभिलिया सार[1]शब्द ओलखंदा है ।

भक्तिप्रियः सर्वसमो दयालुः शिष्यशासिता ॥ ७ ॥
स्वेष्टदेवगुरुः प्राज्ञो विनयी पूजनोत्सुकः ।
नित्ये नैमित्तिके काम्ये रतः कर्मण्यनिंदिते ॥ ८ ॥
रागद्वेषभयक्रोधदंभाहंकारवर्जितः ।
सद्विद्यानुष्ठानरतो विद्यानां च प्रकाशकः ॥ ९ ॥
यदृच्छालाभसंतुष्टो गुणदोषविभेदकः ।
स्त्रीद्रविणेष्वनासक्तो दुःसंगव्यसनोज्झितः ॥ १० ॥
अलोलुपोऽहिंसकश्चापक्षपाती विचक्षणः ।
वित्तविद्यादिभिर्मंत्रयंत्रतंत्राद्यविक्रयी ॥ ११ ॥
निःसंकल्पो निर्विकल्पो निर्णीतात्माऽतिधार्मिकः ।
तुल्यनिंदास्तुतिर्मौनी निष्पक्षोऽतिनियामकः ॥ १२ ॥
इत्यादिलक्षणोपेतः श्रीगुरुः कथितः प्रिये । (कुलार्णव)

१ सारशब्द—

एक शब्द में कहि समझाऊं, सुनहो सब संसारा ।
रामनाम सो सारशब्द है, और कथन है छारा ॥ १ ॥
(श्रीहरि० वाक्यम्)

कहै कबीर सुनो हो साधो, परगट कहूं बजाई ।
रामनाम सो सारशब्द है, और कथन सब बाई ॥ १ ॥
(कबीर)

स्वप्रकाशः स्वयंज्योतिः स्वानुभूत्यैकचिन्मयः ।
तदेष मंत्रराजस्य मनुराड् द्व्यक्षरः स्मृतः ॥ १ ॥
अखंडैकरसानंदस्तारको ब्रह्मवाचकः । (रामोपनिषद्)

सुप्रकेतैर्द्युभिरग्निर्वितिष्ठिन् रुशद्भिर्वर्णैरभिराममस्थात् ।

अर्थः—रामं कृष्णवर्णं शर्व्वरं तमः अभ्यस्थात् सायं होमकाले अभिभूय तिष्ठति इति तद्भाष्ये सायणाचार्याः (जिनका उत्तराश्रममें विद्यारण्यस्वामी नाम है)।

(ऋग्वेद १० अ. ३ व. ३)

गाणपत्येषु शैवेषु शाक्तसौरेष्वभीष्टदः ।
वैष्णवेष्वपि मंत्रेषु राममंत्रः कलाधिकः ॥ १ ॥ (श्रीहयशीर्षपंचरात्र)

शतकोट्यो महामंत्रा उपमंत्रास्त्रयोदश ।
एक एव महामंत्रो रामनाम परात्परम् ॥ १ ॥ (शिवतन्त्र)

गाणपत्यादिसौराश्च हरिः शेषः शिवः शिवा ।
तेषां प्राणो महामंत्रो रामेति चाक्षरद्वयम् ॥ १ ॥
गणेशे भास्करे चैव शिवे शक्तौ हरावपि ।
राममंत्रप्रभावेण सामर्थ्यं जायते ध्रुवम् ॥ २ ॥ (भारद्वाजसंहिता)

विना शक्तिं कथं कार्यं किं कर्तव्येन वा बलम् ।
तदाकाशाद्भवेद्वाणी रामनाम हृदं कुरु ॥ १ ॥
तदासंसरति विश्वं लयं यांति मुमुक्षुभिः ।
तस्माद्राम महामंत्र आदिमंत्र उदाहृतः ॥ २ ॥ (जैमिनि)

श्रीरामेति परं मंत्रं तदेव परमं पदम् ।
तदेव तारकं विद्धि जन्ममृत्युभयापहम् ॥ १ ॥ (हिरण्यगर्भसंहिता)

श्रीरामेति परं जाप्यं तारकं ब्रह्मसंज्ञकम् ।
ब्रह्महत्यादिपापघ्नमिति वेदविदो विदुः ॥ १ ॥ (सनत्कुमारसंहिता)

यथा घटश्च कलशः पदार्थस्याभिधायकः ।
तथैव ब्रह्मरामश्च नूनमेकार्थतत्परः ॥ १ ॥ (अगस्त्यसंहिता)

रमन्ते योगिनो यत्र नित्यानंदे चिदात्मनि ।
इति रामपदेनासौ परं ब्रह्माभिधीयते ॥ १ ॥ (रामतापिनी)

राम एव परं ब्रह्म राम एव परं तपः ।
राम एव परं तत्त्वं श्रीरामो ब्रह्म तारकः ॥ १ ॥ (हनुमदुपनिषद्)

श्रीराममंत्रराजस्य माहात्म्यं गिरिजापतिः ।
जानाति भगवाञ्छंभुर्ज्वलत्पावकलोचनः ॥ १ ॥ (बृहद्ब्रह्मसंहिता)

मंत्रराजं प्रवक्ष्यामि श्रृणु नारद तत्परः ।
रकारादिर्मकारांतो मंत्रः षड्वर्णसंयुतः ॥ १ ॥

अकारः प्रथमाक्षरो भवति उकारो द्वितीयाक्षरो भवति मकारस्तृतीयाक्षरो भवति अर्धमात्राश्चतुर्थाक्षरो भवति बिंदुः पंचमाक्षरो भवति नादः षष्ठाक्षरो भवति तारकत्वा-त्तारको भवति तदेव रामेति तारकं ब्रह्म त्वं विद्धि ।

प्रणवं केवलमकारोकारोर्धमात्रासहितं तस्मात्प्रणवस्याकारस्योकारस्य च रकारः मकारश्चार्धमात्रस्य इति । (रामोपनिषद्)

अंशांशै रामनाम्नश्च त्रयः सिद्धा भवन्ति हि ।
बीजमोंकारः सोहं च सूत्रसूक्तमिति श्रुतिः ॥ १ ॥
रामनाम्नः समुत्पन्नः प्रणवो मोक्षदायकः ।
रूपं तत्त्वमसेश्चासौ वेदतत्त्वाधिकारिणः ॥ २ ॥ (महाप्रभुसंहिता)
रकारश्च परब्रह्म नादमोंकारसंयुतम् ।
ॐविंदुश्च मकारोयं जातं रामाक्षरद्वयम् ॥ १ ॥
रकारस्तत्पदं ज्ञेयं त्वंपदाकार उच्यते ।
मकारोसिपदं ज्ञेयं तत्त्वमसि सुलोचने ॥ १ ॥
चिद्वाचको रकारः स्यात्सद्वाच्याकार उच्यते ।
मकारानन्दवाच्यं स्यात्सच्चिदानंदमव्ययम् ॥ २ ॥ (श्रीमहारामायण)
प्रणवं केचिदाहुर्वै बीजश्रेष्ठं तथापरे ।
तत्त्वतो रामवर्णाभ्यां सिद्धिमाप्नोति मे मतम् ॥ १ ॥ (महाशंभुसंहिता)

ॐ भृगुर्वै वारुणिः । वरुणं पितरमुपससार । अधीहि भगवो ब्रह्मेति । सोऽब्रवीद्राम एव परं ब्रह्म रामादन्यन्न किंचन यत एते रामाद्देवा उत्पद्यंते राम एव विलीयंते राम एव स्थितिं वसंति तस्माद्राम एव विभुरिति तैत्तिरीयश्रुतिः (रामतापनी)

यथैव वटबीजस्थः प्राकृतोऽस्ति महाद्रुमः ।
तथैव रामबीजस्थं जगदेतच्चराचरम् ॥ १ ॥ (याज्ञवल्क्य)
रकाराज्जायते ब्रह्मा रकाराज्जायते हरिः ।
रकाराज्जायते शंभू रकारात्सर्वशक्तयः ॥ १ ॥ (रुद्रयामलक)
ब्रह्मविष्णुमहेशाद्या यस्यांशा लोकसाधकाः ।
तं रामं सच्चिदानंदं नित्यं रामेश्वरं भजेत् ॥ १ ॥ (हनुमत्संहिता)
रामनाम परं जाप्यं ज्ञेयं ध्येयं निरंतरम् ।
कीर्तनीयं च बहुधा मुमुक्षुभिरहर्निशम् ॥ १ ॥ (जाबालिसंहिता)
अद्यापि रुद्रः काश्यां वै सर्वेषां त्यक्तजीविनाम् ।
दिशत्येतन्महामंत्रं तारकं ब्रह्मनामकम् ॥ १ ॥
विनैव दीक्षां विप्रेंद्र पुरश्चर्यां विनैव हि ।
विनैव न्यासविधिना जपमात्रेण सिद्धिदम् ॥ २ ॥
तस्मात् सर्वात्मना रामनामरूपं परं प्रियम् ।
मंत्रं जपेत्सदा धीमान् संविहायान्यसाधनान् ॥ ३ ॥ (हारीतस्मृति)
जपतः सर्ववेदांश्च सर्वमंत्रांश्च पार्वति ।
तस्मात्कोटिगुणं पुण्यं रामनाम्नैव लभ्यते ॥ १ ॥

योगिनो ज्ञानिनो भक्ताः सुकर्मनिरताश्च ये ।
रामनाम्नि रताः सर्वे रमुक्रीडा त एव वैं ॥ २ ॥ (पद्मपुराण)

रामेत्यक्षरयुग्मं हि सर्वमंत्राधिकं द्विज ।
यदुच्चारणमात्रेण पापी याति परां गतिम् ॥ १ ॥ (क्रियायोगसार)

श्रद्धया हेलया नाम वदंति मनुजा भुवि ।
तेषां नास्ति भयं पार्थ रामनामप्रसादतः ॥ १ ॥

प्रमादादपि संस्पृष्टो यथानलकणो दहेत् ।
तथौष्ठपुटसंस्पृष्टं रामनाम दहेदघम् ॥ २ ॥ (आदिपुराण)

रकारोऽनलबीजं स्याद्ये सर्वे वड़वादयः ।
कृत्वा मनोमतं सर्वं भस्म कर्म शुभाशुभम् ॥ १ ॥

आकारो भानुबीजं स्यात् वेदशास्त्रप्रकाशकः ।
नाशयत्येव सो दीप्त्या हृत्स्थमज्ञानजं तमः ॥ २ ॥

मकारश्चंद्रबीजं स्याद्यदपां परिपूरणम् ।
त्रितापं हरते नित्यं शीतलत्वं करोति च ॥ ३ ॥

वैराग्यहेतुः परमो रकारः कथ्यते बुधैः ।
अकारो ज्ञानहेतुश्च मकारो भक्तिहेतुकः ॥ ४ ॥

आकृष्टिः कृतचेतसां सुमहतामुच्चाटनं चांहसा-
माचांडालममूकलोकसुलभो वश्यश्च मोक्षश्रियः ।
नो दीक्षां न च दक्षिणां न च पुरश्चर्यामनागीक्षते
मंत्रोयं रसनास्पृगेव फलति श्रीरामनामात्मकः ॥ ५ ॥

(श्रीमद्वाल्मीकीयरामायण)

छत्ररूपो रकारोऽस्ति अनुस्वारः शिरोमणिः ।
राजराजाधिराजेति तस्माद्रामः शिरोमणिः ॥ १ ॥ (पद्मपुराण)

निर्वर्णं रामनामेदं केवलं च स्वराधिकम् ।
सर्वेषां मुकुटं छत्रं मकारो रेफव्यंजनम् ॥ १ ॥

यन्नामसंसर्गवशाद्विवर्णौ
नष्टस्वरौ मूर्ध्निगतौ स्वराणाम् ।
तद्रामपादौ हृदये निधाय
देही कथं नोर्ध्वगतिं प्रयाति ॥ २ ॥

रेफोच्चारणमात्रेण बहिर्निर्याति पातकम् ।
पुनः प्रवेशसंदेहात् मकारश्च कपाटवत् ॥ १ ॥ (नारदपंचरात्र)

तुलसी राके कहत ही, निकसत पाप बहार ।
फिर आवन पावत नहीं, देत मकार किवार ॥ १ ॥

तावदेव इदं तेषां महापातकदाहनम् ।
यावन्न श्रूयते रामनामपंचाननध्वनिः ॥ १ ॥	(शिवसंहिता)

कल्याणानां निधानं कलिमलमथनं पावनं पावनानां
पाथेयं यन्मुमुक्षोः सपदि परपदप्राप्तये प्रस्थितस्य ।
विश्रामस्थानमेकं कविवरवचसां जीवनं सज्जनानां
बीजं धर्मद्रुमस्य प्रभवतु भवतां भूतये रामनाम ॥ १ ॥	(हनुमन्नाटक)

रामरामेति रामेति रमे रामे मनोरमे ।
सहस्रनाम तत्तुल्यं रामनाम वरानने ॥ १ ॥
(पद्मपुराण उत्तरखंड ६ अध्याय श्लो० ७१)

य एतत्तारकं ब्रह्मणो नित्यमधीते स पाप्मानं तरति स मृत्युं तरति स ब्रह्महत्यां तरति स भ्रूणहत्यां तरति स वीरहत्यां तरतीत्यादि द्रष्टव्यम् ।
(रामतापिनीयो० द्वि० कंडिका० मंत्र० ४)

अंतःकरणसंशुद्धिर्नान्यसाधनतो भवेत् ।
कलौ श्रीरामनामैव सर्वेषां सम्मतं परम् ॥ १ ॥	(मार्कंडेयसंहिता)

जपे यस्य लाभोऽजपे यस्य हानिः
सदा सर्वथा सर्वसिद्धान्ततत्त्वम् ।
शिवो नारदो व्यासमुख्या वदंति
कलौ केवलं राजते रामनाम ॥ १ ॥	(इति)

शृणुष्व मुख्यनामानि वक्ष्ये भगवतः प्रिये ।
विष्णुर्नारायणः कृष्णो वासुदेवो हरिः स्मृतः ॥ १ ॥
नाम्नामेव च सर्वेषां रामनामप्रकाशकः ।
ग्रहाणां च यथा भानुर्नक्षत्राणां यथा शशी ॥ २ ॥	(इति)

नारायणादिनामानि कीर्तितानि बहून्यपि ।
आत्मा तेषां च सर्वेषां रामनामप्रकाशकः ॥ १ ॥	(इति)

सप्तकोटिमहामंत्राश्चित्तविभ्रमकारकाः ।
एक एव परो मंत्रो राम इत्यक्षरद्वयम् ॥ १ ॥	(वृद्धमनुस्मृतिः)

श्रीरामाय नमो ह्येतत्तारकं ब्रह्मनामकम् ।
नाम्नां विष्णोः सहस्राणां तुल्य एव महामनुः ॥ १ ॥ (हारीतस्मृतिः अ० ४)

अहं भवन्नाम गृणन् कृतार्थो
वसामि काश्यामनिशं भवान्या ।
मुमूर्षमाणस्य विमुक्तयेऽहं
दिशामि मंत्रं तव रामनाम ॥ १ ॥	(अध्यात्मरामायण)

पेयं पेयं श्रवणपुटके रामनामाभिरामं
ध्येयं ध्येयं मनसि सततं तारकं ब्रह्मरूपम् ।
जल्पं जल्पं प्रकृतिविकृतौ प्राणिनां कर्णमूले
वीथ्यां वीथ्यामटति जटिलः कोऽपि काशीनिवासी ॥१॥ (काशीखंड)

रामनाम परं ब्रह्म सर्वदेवप्रपूजितम् ।
महेश एव जानाति नान्यो जानाति वै मुने ॥ १ ॥
(जैमिनि० व्यासवाक्यम्)

रामेति द्व्यक्षरं नाम यत्र संकीर्त्यते बुधैः ।
तत्राविर्भूय भगवान् सर्वदुःखं विनाशयेत् ॥ १ ॥ (लोमशसंहिता)

यस्य नामप्रभावेण सर्वज्ञोऽहं वरानने ।
रामनाम्नः परं तत्त्वं नास्ति किंचिज्जगत्त्रये ॥ १ ॥ (शिववा०)

रामेति वर्णद्वयमादरेण सदा स्मरन्भक्तिमुपैति जंतुः ।
कलौ युगे कल्मषमानसानामन्यत्र धर्मे खलु नाधिकारः ॥ १ ॥
कवले कवले कुर्वन् रामनामानुकीर्तनम् ।
यः कश्चित्पुरुषोऽश्नाति सोऽन्नदोषैर्न लिप्यते ॥ २ ॥
सिक्थे सिक्थे लभेन्मर्त्यो महायज्ञादिकं फलम् ।
यः स्मरेद्रामनामाख्यं मंत्रराजमनुत्तमम् ॥ ३ ॥ (वैष्णवस्मृतौ)

दैवाच्छूकरशावकेन निहतो म्लेच्छो जराजर्जरो
हा रामेति हतोस्मि भूमिपतितो जल्पंस्तनुं त्यक्तवान् ।
तीर्णो गोष्पदवद्भवार्णवमहो नाम्नः प्रभावात्पुनः
किं चित्रं यदि रामनामरसिकास्ते यांति रामास्पदम् ॥ १ ॥ (वराहपुराण)

द्विजो वा राक्षसो वापि पापी वा धार्मिकोऽपि वा ।
त्यजन्कलेवरं रामं स्मृत्वा याति परं पदम् ॥ १ ॥ (अध्यात्मरामायण)

ॐ अथाह भारद्वाजो याज्ञवल्क्यं सहोवाच श्रीराममन्त्रस्य माहात्म्यं नो ब्रूहि भगवन् सह उवाच याज्ञवल्क्यः तारकत्वात्तारको भवति तदेव तारकं ब्रह्म त्वं विद्धि तदेवोपास्यं य एतत्तारकं ब्रह्मणो नित्यमधीते स पाप्मानं तरति स मृत्युं तरति स ब्रह्महत्यां तरति स भ्रूणहत्यां तरति स वीरहत्यां तरति स सर्वहत्यां तरति स संसारं तरति स विमुक्तात्मा भवति स महान् भवति सोऽमृतत्वं च गच्छतीति (सामवेदपिप्पलायनशाखा)

हरिः ॐ द्वापरान्ते नारदो ब्रह्माणं जगाम कथं भगवन् गां पर्यटन् कलिं संतरेय-मिति । सहोवाच ब्रह्मा साधु पृष्टोस्मि सर्वं श्रुतिरहस्यं गोप्यं तच्छृणु । येन कलिसंसारं तरिष्यसि भगवत आदिपुरुषस्य नारायणस्य नामोच्चारणमात्रेण निर्धूतकलिर्भवति । नारदः पुनः पप्रच्छ । तन्नाम किमिति । स होवाच हिरण्यगर्भः—

हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे ।
हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे ॥

इति षोडशकं नाम्नां कलिकल्मषनाशनम् । नातः परतरं प्रायः सर्ववेदेषु दृश्यत इति षोड़शकलावृतस्य पुरुषस्यावरणविनाशनं । ततः प्रकाशते परं ब्रह्म मेघापाये रविरश्मिमंडलीवेति । पुनर्नारदः पप्रच्छ भगवन्कोऽस्य विधिरिति । तँ्होवाच नास्य विधिरिति । सर्वदा शुचिरशुचिर्वा पठन् ब्रह्मणः सलोकतां समीपतां सरूपतां सायुज्यतामेति । यदास्य षोड़शकस्य सार्धत्रिकोटिर्जपति । तदा ब्रह्महत्यायास्तरति । स्वर्णस्तेयात् पूतो भवति । वृषलीगमनात्पूतो भवति । सर्वधर्मपरित्यागपापात्सद्यः शुचितामाप्नुयात् । सद्यो मुच्यते सद्यो मुच्यत इत्युपनिषत् । हरिः ॐ सहनाववत्विति शांतिः शांतिः शांतिः । हरिः ॐ
(कलिसंतारणोपनिषद्)

राम एव परं ब्रह्म परमात्माभिधीयते ।
रामात्परतरं नास्ति यत्किंचित्स्थूलसूक्ष्मकम् ॥ १ ॥ (पराशरस्मृति)
रामान्नास्ति परो देवो रामान्नास्ति परं व्रतम् ।
नहि रामात्परो योगो नहि रामात्परो मखः ॥ १ ॥
राशब्दो विश्ववचनो मश्चापीश्वरवाचकः ।
विश्वेषामीश्वरो यो हि तेन रामः प्रकीर्तितः ॥ २ ॥ (पद्मपुराणे)
पदश्रवणकराननवाणी त्वग्नयननासिकादीन्द्रियविषयाधीशैः ।
विवर्जितो रामः साक्षात्परब्रह्मविग्रहः सच्चिदानंदात्मकः स्वयम् ॥ १ ॥
(शिवस्मृतिः)

रकारार्थो रामः सगुणपरमैश्वर्यजलधिः
मकारार्थो जीवः सकलविधकैंकर्यनिपुणः ॥
तयोर्मध्याकारो युगलमथ संबंधप्रमुखः
अनन्यार्हो ब्रूते त्रिनिगमसरूपोऽयमतुलः ॥ १ ॥ (आचार्यवाक्यम्)
श्रीरामं ये च हित्वा खलमतिनिरता ब्रह्मजीवं वदंति
ते मूढा नास्तिकास्ते शुभगुणरहिताः सर्वबुद्ध्यातिरिक्ताः ॥
पापिष्ठा धर्महीना गुरुजनविमुखा वेदशास्त्रैर्विरुद्धा-
स्ते हित्वा गांगमंभो रविकिरणजलं पातुमिच्छंति त्रस्ताः ॥ १ ॥
(शिववाक्यम्)

श्रीमद्भानुसुतातटे प्रविलसद्दिव्यं महत्पत्तनं
तत्कंसस्य जगत्रयेऽपि विदितं वर्णैः शुभैर्वह्निभिः ।
अन्त्याद्यौ विबुधाः स्मरंति भुवि ये धन्याः कुलं पावितं
तौ तेषां न भजंति स्याच्च वदने मध्यस्थितं चाक्षरम् ॥ १ ॥
पठति सकलशास्त्रं वेदपारं गतोपि
यमनियमपरो वा धर्मशास्त्रार्थवेत्ता ।
अटति सकलतीर्थं राजिता वा हुताग्नि-
र्यदि भजति न रामं सर्वमेतद्वृथा स्यात् ॥ २ ॥

कबीर कसौटी रामकी, झूठा टिकै न कोय ।
राम कसौटी सो सहै, जो मरजीवा होय ॥ १ ॥
कबीर कहताहूँ कहजातहूँ सुणता है सब कोय ।
राम कह्यां भल होयगा, नहिंतर भला न होय ॥ २ ॥ (कबीर०)
मूरख तन धर कहा कमायो ।
राम भजन बिन जन्म गुमायो ॥ (श्रीरामानन्दजीम०)
रसना राम उचार रे तुझे आयमिलेंगे ।
अर्धनाम उद्धार करेगो, नहिं तो फिरिफिरि जन्म धरेगो ॥
(श्रीजैमलदासजी म०)
रामनाम निजमूल है, और सकल विस्तार ।
जन हरिया फल मुक्ति कूं, लीजै सार संभार ॥ १ ॥
(श्रीहरि० वाक्यम्)
राम कह्या सबही सझ्या, सबहि राम के माहिं ।
रामदास इक राम बिन, दूजा कोऊ नाहिं ॥ १ ॥
धिन साधू संसार में, सुमरावे निजनाम ।
रामदास सत शब्द दे, पहुंचावे सुन गाम ॥ २ ॥
बडा बडेरा मंडका, ब्रह्मा विष्णु महेश ।
रामदास उन भी कह्यो, राम सर्व उपदेश ॥ ३ ॥ (श्रीराम० वाक्यम्)
एक राम के नाम बिन जिवकी जरनि न जाय ।
दादू केते पचि मरे करि करि बहुत उपाय ॥ १ ॥
रामनाम गुरु शब्द सूं, रे मन पेल भरम्म ।
निहकरमी सूं मन मिल्या, दादू काट करम्म ॥ २ ॥ (दादू दयाल)
राम नाम जपिबो श्रवनन सुनिवो, सलिलमोहमें वहि नहिं जइबो ।
(नामदेव)
रे मन राम नाम संभार, माया के भ्रम कहा भूलो चलेगो कर झार ।
(रैदासजी)
दया बोधमाँहीं कही, करि करि ऊंची बाँह ॥
दयावंत जिनके बसै, राम राम उरमाँह ॥ १ ॥ (गोरखनाथजी)
सुंदर कहत एक दियो जिन राम नाम ।
गुरुसो उदार कोउ देख्यो नाँहि सुन्यो है । (सुंदरदासजी)
रज्जब मिनखा देह धृक, आतमराम न जानियो । (रज्जबजी)
हरिहां वाजींद रामभजन में, देह गले तो गालिये । (बांजीदजी)
रसना रटै न रामकूँ, आन कथा मुख चोल ।
जन हरिदास ते मानवी, काग बिलाई कोल ॥ १ ॥ (हरिदासजी)

मृगतृष्णा ज्यूं जगरचना, यह देखो हृदय विचार।
कह नानक भज रामनाम, नित जातें हो उद्धार ॥ १ ॥ (गुरुनानक)
माया त्याग भजै नित राम, सो अरिहंत हते सब काम।
जैनशास्त्र दशलाख गरथ, तिनमें भाख्यो यही अरथ।
राम राम सो अरि हंत कहिये, ताही भज अरिमनकूँ गहिये ॥ १ ॥
(जैनमत समयसारनाटक)

राम राम सब कोइ कहै, ब्रह्मा विष्णु महेश।
राम चरण साचा गुरू, देवे यो उपदेश ॥ १ ॥
राम चरण शिव धर्म कूं, जानत नाँहीं कोय।
शिव सुमरे ताकूं भजे, सो शिव धरमी होय ॥ १ ॥
(श्रीमद्वीतराग रामस्नेही पूज्यपादाचार्य रामचरणजी महाराज)

को काहू के शब्द से, फाट जाय आकाश।
संत नमाने संतदास, विना राम विश्वास ॥ १ ॥
पाई न गति केहि पतित पावन, राम भज सुनु शठ मना।
गणिका अजामिल गृध्र व्याध, गजादि खल तारे घना ॥
आमीर यवन किरात खल, श्वपचादि अति अघरूप जे।
कहि नामवारक तेपि पावन, होत राम नमामि ते ॥ १ ॥
न मिटै भव संकट दुर्घट है, तपतीरथ जन्म अनेक अटो।
कलिमें न विराग न ज्ञान कहूं, सब लागत फोकट झूट जटो ॥
नट ज्यों जनि पेट कुपेटक कोटिक चेटक कौतुक ठाठ ठटो।
तुलसी ज सदा सुख चाहिये तो, रसना निशि वासर राम रटो ॥ १ ॥
राका रजनी भक्ति तव, राम नाम सोइ सोम।
अपर नाम उडगण विमल, वसहु भक्त उर व्योम ॥ १ ॥
यद्यपि प्रभु के नाम अनेका। श्रुति कह अधिक एकते एका ॥
राम सकल नामनते अधिका। होउ नाथ अघखगगणवधिका ॥ (रामायण)
राम नाम मणिदीपधर, जीह देहरी द्वार।
तुलसी भीतर बाहिरे, जो चाहसि उजियार ॥ १ ॥
हिय निर्गुण नैनन सगुण, रसना राम सुनाम।
मनहु पुरट संपुट किये, तुलसी ललित ललाम ॥ २ ॥
जन मन वन नहिं कर सकै, कलिमल गज पैसार।
उभय सिंह गरजत सदा, नाथ रकार मकार ॥ ३ ॥ (तुलसी)
जा घट चौकी रामकी, विघ्न धसै नहि चौर।
ज्यों सूरज मंडल विषै, नहीं तिमिर को ठौर ॥ १ ॥

सद्गुरु के मिलने से (साक्षात्कार हो जाने से) जीवात्मा में जो भेदभाव का अंतर था वह सब मिटगया और अभेद (अद्वैत) भाव होकर सारशब्द जो ब्रह्मवाचक राम नाम है जिसकी श्रुति, स्मृति, उपनिषद्, इतिहास, पुराण, आप्तवाक्य (महापुरुषवाक्य) संस्कृत प्राकृत सर्व ग्रंथों में मुक्तकंठ से प्रशंसा की है उस रामनाम की ओलखान हो गई।

तन मन कर हेती रसना सेती रामहि राम रटंदा है॥ २॥

तब तन मन उसी में तल्लीन होगया और अनन्य प्रेमपूर्वक रसना (जिह्वा) से राम ही राम शब्द की रटना अहर्निश (दिनरात) होने लग गई॥ २॥

---

१ रसना से राम नाम रटन—

राम नाम को कीजिये, आठों पहर उचार।
हरिया बंदीवान ज्यों, करिये कूक पुकार॥ १॥ (श्रीहरि० वाक्यम्)
रसना सों रटिवो करै, आठों पहर अभंग।
रामदास उण संत को, राम न छांडै संग॥ १॥ (श्रीराम० वाक्यम्)
कबीर राम राम कहि कूकिये, ना सोइये असरार।
रात दिवस के कूकने, कबहुक लगे पुकार॥ १॥
राम नाम जपते रहो, जब लग घटमें प्रान।
कबहुक दीन दयालुके, भनक परेगी कान॥ १॥
रामनामको नित भजो, रसना होट समेत।
हरिया जोग रु जुगति विन, सहज न को सिवरेत॥ १॥
राम नाम रसना रटै, सोई जग में साध।
हरिया सुमिरन सहज का, वांका मता अगाध॥ २॥

स्मरण के स्थान—१ रसना २ कंठ ३ हृदय ४ नाभी।

स्मरण के भेद—१ अधम २ मध्यम ३ उत्तम ४ अत्युत्तम।

प्रथम राम रसना सुमरि, द्वितिये कंठ लगाय।
तृतिये हिरदै ध्यान धरि, चौथे नाभि मिलाय॥ १॥

प्रथम सो प्रथम अध नाम रसना लिया, दूसरे नाम मध कंठ धारा।
तीसरे उत्तम सो नाम हिरदै कह्या चतुरथै नाभि अतिउत्तमयारा॥
(श्रीहरि० वाक्यम्)

तुरसी अध सुमरिण यौं एह, रसना राम राम जपिलेह।
यह आलंबन तोलों करै, मध सुमिरण की सोझी परै॥ १॥

वरस्या है प्रेमा दरस्या नेमा कंठ कमल फूलंदा है।
भँवरा गुंजारू खुल्ला बारू मुरली टेर सुणंदा है॥ ३॥

और प्रेम की वर्षा होने लगी, जिससे स्वयं ही (आपोआप) योगशास्त्रोक्त षट्चक्र भेदन तथा क्रमानुसार राम नाम रटने (जपने) के नियम (विधि) जान पड़ने लग गये और राम नाम की रटना अहर्निश अखंड होती रहने से प्रथम ही प्रथम कंठस्थ कमल का विकास हो गया (कंठ-कमल फूलगया), जब कंठ में स्मरण होने से कंठ कमल फूला तब जैसे भ्रमर (भँवरा) शब्द करता है उसके समान कंठ में (राम नाम रटन) गुंजार शब्द होने लगा और कंठ कमल का द्वार खुलगया जिससे उस नाद की टेर बांसुरी की टेर के सदृश सुनाई पड़ने लगी॥ ३॥

श्वास रु उच्छासा हिरदैवासा सुमिरेण ध्यान धरंदा है।
नाभी घर आया नाच नचाया सहजाँ मुख सुमरंदा है॥ ४॥

तुरसी मध सुमिरण जु यह, कंठ कमल अस्थान।
राम नाम उच्चार हुय, घायल करै सो प्रान॥ १॥
उत्तम सुमिरण हिरदा में, आरंभै धरि ध्यान।
श्वासोच्छ्वास रव्यो करे, तुरसी नाम निर्बान॥ २॥
तुरसी अति उत्तम भजन, कापें वरण्या जाय।
लख्यो ज कापे परै, भाग हुवै तो पाय॥ १॥ (जन तुरसी)
आठ पहर चौसठ घड़ी, रहै राम से रत्त।
जब जाय फाटै संतदास, चौरासी का खत्त॥ १॥ (संतदासजी)

१ विशुद्धिचक्र।

२ गदगद सुमरण कंठ में, अमृत की सी धार।
एक अखंडी होत है, भवर पंख भणकार॥ १॥ (श्रीहरि० वाक्यम्)

३ रसना कंठ और हृदय इन तीन स्थानों में स्मरण क्रम से पहुँचने में श्रीहरिरामदासजी महाराज को ७ वर्ष और २ मास की अवधि लगी थी।

राम राम रसना किया, मास दोय विश्राम।
हरिया हिरदै कंठ बिच, सागर वर्ष मुकाम॥ १॥ (श्रीहरि० वाक्यम्)

४ गुण तारे माया तिमिर, शीत भरम मन चन्द।
रज्जब सुमिरण सूरतें, सहज पड़े सब मन्द॥ १॥

५ हृदि प्राणो गुदेऽपानः समानो नाभिमंडले अर्थात् हृदयमें प्राणवायु, गुदामें अपानवायु और नाभिमें समानवायु रहता है एवम् उदानः कंठदेशे स्यात् व्यानः

तदनंतर हृदयस्थान (अनाहत चक्र) में श्वास और उच्छ्वास की गति का ठहरना हुवा और मन ही मनमें स्मरण का ध्यान धरने लगा, हृदय में स्मरण होने के पश्चात् नाभिस्थान (मणिपुरचक्र) में स्मरण करता हुवा प्राणवायु समानवायु में आकर मिला (प्राणवायु समानवायु के घर में अर्थात् नाभिस्थान में जब आया) तब अनेक प्रकार के नाच नचाने लगा और सहज में ही आपसे आप मुखसे रामनाम का स्मरण होने लग गया ॥४॥

रग रग आरंभा भया अचंभा छुच्छम वेद भणंदा है।

और व्यानवायु जो सर्व शरीर में व्यापक हो रहा है उससे प्राण और समानवायु का योग होनेसे रग रग में (नस नसमें) आश्चर्यजनक एक क्रिया का आरंभ हुवा जिसका भेद वर्णन करना बडा सूक्ष्म है।

ओऊँ अरु सोऊँ देख्या दोऊँ पारब्रह्म परसंदा है ॥ ५ ॥

ऐसी स्थिति होने के पश्चात् ओऊँ=हंसः और सोऊं=सोहं इन दोनों

सर्वशरीरगः इति अर्थात् कंठ में उदानवायु और सर्व शरीरमें व्यानवायु निवास करता है।

६ नाभि स्थान में जब स्मरण होने लगता है तब सहज स्मरण होता है।

रंकार सुमरण सहज, नाभि कमल अस्थान।
हरिया पच्छिमदेशकों, पहुँचन का परमान ॥ १ ॥
ज्यूं जल सेझै सिंधुका, बाका थाह न कोय।
हरिया सुमिरन सहजका, निशिदिन घटमें होय ॥ २ ॥

सोरठा।

हरिया मुख ममकार, जब सहजाँ सुमिरण नहीं।
मरे धरे आकार, मेला जीव रु शीव बिन ॥ १ ॥

अर्थात् सहज सुमिरण नाभिस्थान में जब रकारका स्मरण होने लग जाय तो पश्चिम देश को पहुंचने का प्रमाण समझना। सहज सुमरण में मकार का स्मरण बंद होकर केवल रंकार शब्द की रात दिन रटना होने लग जाती है तभी जीव और शिव एक हो जाते हैं।

१ छुछम वेदः—यह महात्माओंका सांकेतिक शब्द है जिसमें सूक्ष्म भेद (वार्ताओं) का वर्णन है अथवा स्वसंवेद्य गुण को भी कहते हैं अथवा भगवानके श्वासोच्छ्वास रूप वेदको भी कहते हैं अथवा छंदांसि यस्य पर्णानि यस्तं वेद स वेदवित् इसको भी कहते हैं।

के "हंसः सोहं सोहं हंसः" इस अजंपा नाम गायत्री के जप का ज्ञान प्राप्त होने से परब्रह्म परमात्मा के दर्शनकी प्राप्ति होतीहै वह हुई ॥ ५ ॥

---

१ अजपा के जप से परब्रह्म परसता है—

ओऊं सोऊं जाप अजप्पा, घटमें कीया संप असंपा। (श्रीहरि० वाक्यम्)

ओऊं सोऊं अर्थात् हंसः सोहं अजपा जप है इसने घट में असंप (जीव ब्रह्मका भेद) का संप (अभेद) करदिया ठीक वाच्यार्थं सफल कर दिया।

उलटा अजपा जाप जपाया। हद को जीत वेहदमें आया ॥

(श्रीराम० वाक्यम्)

नासापथसमाकृष्टः पवनः फुस्फुसं गतः।
शोधयेच्छोणितं दुष्टं तेन जीवंति जंतवः ॥ १ ॥
सोहंशब्देन जीवानां श्वासोच्छ्वासौ निरंतरम्।
स्यातां वा हंसशब्देनोच्छ्वासश्वासौ विपर्य्ययात् ॥ २ ॥
इत्ययं द्व्यक्षरो मंत्रो जीवजप्योऽजपा मता।
जपारंभो हि जननं मरणं तत्समापनम् ॥ ३ ॥

इसी अजपा मंत्र को अजपा गायत्री कहते हैं।

एकविंशतिसाहस्रं षट्शताधिकमीश्वरि।
जपते प्रत्यहं प्राणी सान्द्रानन्दमयीं पराम् ॥ ४ ॥
विना जपेन देवेशि जपो भवति मन्त्रिणः।
अजपेयं ततः प्रोक्ता भवपाशनिकृंतनी ॥ ५ ॥ (दक्षिणामूर्तिसंहिता)
अजपा नाम गायत्रीं जीवो जपति सर्वदा।
षट् शतानि दिवारात्रौ सहस्राण्येकविंशतिः ॥ १ ॥
एतत्संख्यान्वितं मंत्रं हंसः सोहं क्रमेण वै। (कुलार्णव)
जातः स इति वैशब्दमुच्चार्यारभते जपम्।
महाप्रयाणसमये हमुच्चार्य समापयेत् ॥ १ ॥ (दक्षिणामूर्तिसंहिता)

यह अजपा जप तो स्वाभाविक रीत्या अहर्निश होता ही रहता है, परंतु यही अजपा जप राममंत्र के सहित जपने से फलदायक होता है।

ओऊं सोऊं ऊंबरा, दोऊं खाली ओड़।
नाम विना ऊगै नहीं, पच पच मरो करोड़ ॥ (रज्जबजी)
ओऊं सोऊं देह लग, निशि दिन आवे जाय।
एक अखंडी शब्द में, हरिया सुरति समाय ॥ १ ॥

अर्थात् हंसः सोहं यह श्वासोच्छ्वास शब्द, शरीर है तबतक रात दिन आता जाता रहता है, इसी के द्वारा एक अखंडी शब्द जो ररंकार आत्मा स वाचक शब्द है उसमें सुरति समाय दो यानी समावेश करदो—

मम्मा हुय पासै कमल विकासै अर्ध नाम आखंदा है ।
ऊ नामज केवल बडे महाबल रोम रोम उचरंदा है ॥ ६ ॥

जिससे राम राम शब्द जो मैं जपताथा उसमें से मकार बोलना बंद होगया अर्थात् माया से रहित अद्वैतरूप अर्धनाम जो केवल रकार है उसी रकार का (राँ राँ राँ राँ राँ राँ) स्मरण होने लग गया नाभिकमल का विकास होगया जिससे शुद्ध निर्गुण (मायारहित) पार परब्रह्म का दर्शन हुवा तब महाबलशाली अर्धनाम रकार जो अद्वैतरूप है केवल उसी का उच्चारण रोम रोम में होरहा है ऐसा मालूम होने लगा ॥ ६ ॥

रहता से रत्ता है निज तत्ता न्यारा हुय निरखंदा है ।
ऐसा अविनासी आय न जासी भाग बडे भेटंदा है ॥ ७ ॥

यह रकार का स्मरण इस शरीर में रहनेवाले आत्मामें रत (लवलीन) होने से निज तत्व रूप होजाने के कारण न्यारा होकर देखने लग गया अर्थात् द्रष्टा होकर अपने आपको देखने लगा, जिस परब्रह्मको अलग होकर देखने लगा वह परब्रह्म ऐसा अविनाशी है जो न तो कहीं से आता है न कहीं जाता है अपने में ही सदा सर्वदा विराजमान रहता है उस परब्रह्म की भेट बड़े महाभाग्य होते हैं तब ही होती है ॥ ७ ॥

ओऊं सोऊं शब्द की, सहजाँ सुणी अवाज ।
जन हरिया इन ऊपरै, ररंकार का राज ॥ १ ॥
ओऊं सोऊं शब्द की, तीन लोक लग सोय ।
जन हरिया ररंकारका, आर पार नहिं कोय ॥ २ ॥ (श्रीहरि० वाक्यम्)

अजपाजपनिष्कृष्ट लक्षण—

मन पवना अरु सुरति से, आतम पकड़े आप ।
रज्जब लावे सुरति सो, एहै अजपाजाप ॥ १ ॥ (रज्जबजी)
अजपाजाप लगावे हेत, नीरक्षीर न्यारा करिदेत ।
विष छांडे अमृत कूं पीवे, समझ्न पिछाणै सुमरिण साच ।
अन्तर एक राम सुख राखे, और सकल सुख मानै काच ॥
(श्रीजैमलदासजी महाराज)

१ मनुष्याणां सहस्रेषु कश्चिद्यतति सिद्धये ।
यततामपि सिद्धानां कश्चिन्मां वेत्ति तत्त्वतः ॥ १ ॥
बहूनां जन्मनामंते ज्ञानवान्मां प्रपद्यते ।
वासुदेवः सर्वमिति स महात्मा सुदुर्लभः ॥ २ ॥ (गीता)

रेचक अरु पूरक कर विन कुंभक थांप उलटि पलटंदा है।

विना हाथ की सहायता के जब आपसे आप स्वयं बाँये से दहिना और दहिने से बाँई तरफ़ उलट पुलट रेचक पूरक होकर कुंभक होने लगता है, अथवा रेचक और पूरक के करे विना "केवल कुंभक" ही होने लगै।

---

१ प्राणायामः—

प्राणायामस्त्रिधा प्रोक्तो रेचपूरककुंभकैः ।
सहितः केवलश्चेति कुंभको द्विविधो मतः ॥ १ ॥
यावत्केवलसिद्धिः स्यात्सहितं तावदभ्यसेत् ।
रेचकं पूरकं मुक्त्वा सुखं यद्वायुधारणम् ॥ २ ॥
न रेचको नैव च पूरकोऽत्र नासापुटे संस्थितमेव वायुम् ।
सुनिश्चलं धारयते क्रमेण कुंभाख्यमेतत्प्रवदंति तज्ज्ञाः ॥ ३ ॥

(हठयोगप्रदीपिका)

अर्थात् जबतक "केवल कुंभक" सिद्ध न हो तबतक रेचक पूरकादि क्रिया करके कुंभक का अभ्यास करता रहै, जब रेचक और पूरक के विना ही स्वयं वायु नासापुट में ही सुनिश्चल स्थिर होकर कुंभक होजावे उसको केवल कुंभक कहते हैं, यह जिसके सिद्ध हो जाता है उसको—

कुंभके केवले सिद्धे रेचपूरकवर्जिते ।
न तस्य दुर्लभं किंचित्त्रिषु लोकेषु विद्यते ।
शक्तः केवलकुंभेन यथेष्टं[1] वायुधारणात् ॥
राजयोगपदं चापि लभते नात्र संशयः ।
कुंभकात् कुंडलीबोधः कुंडलीबोधतो भवेत् ॥
अनर्गला सुषुम्ना च हठसिद्धिश्च जायते ।
हठं विना राजयोगो राजयोगं विना हठः ॥
न सिध्यति ततो युग्ममानिष्पत्तेः समभ्यसेत् ।

तीन लोक में कुछ भी दुर्लभ नहीं होता है। जो केवल कुंभक करने को समर्थ हो जाता है और जो यथेष्ट वायु धारण कर सकता है वह राजयोग के पदको प्राप्त होता है इसमें किसी प्रकार का संदेह नहीं। कुंभक से कुंडली का प्रबोध होता है और कुंडली के प्रबोध होनेसे सुषुम्ना सरल हो जाती है जिसमें हठयोग की सिद्धि हो जाती है।

---

1 स्पर्शान्कृत्वा बहिर्बाह्यांश्चक्षुश्चैवांतरे भ्रुवोः ।
प्राणापानौ समौ कृत्वा नासाभ्यंतरचारिणौ ॥
यतेंद्रियमनोबुद्धिर्मुनिर्मोक्षपरायणः ।
विगतेच्छाभयक्रोधो यः सदा मुक्त एव सः ॥ (श्रीमद्भगवद्गीता)

त्राटक हुय ध्यानू वात विज्ञानू आपा पट खूलंदा है ॥ ८ ॥

त्राटक[1] (विना पलक झपकाये एक सरीखे नेत्र किसी सूक्ष्म लक्ष्य की ओर जमाकर एकाग्र अनन्य भाव का चित्त हो) ध्यान करने से विज्ञान (भूतभविष्यवर्तमानज्ञान) प्राप्त होता है तब अपने आपका पड़दा खुल जाता है और अपने आपको पहिचानने लग जाता है। अर्थात् "अहं ब्रह्मास्मि" ज्ञान होजाता है।

सुखमण की घाटी चढियावाटी अरसघरां ठहरंदा है।

उपरोक्त प्रकार से प्राण वायु का कुंभक एकाग्रता से रकार रटण पूर्वक होता हुवा सुषुम्णा[2] की महाघाटी के पथ में जब प्राणवायु अपानवायु के

---

१ त्राटकः—

निरीक्षेन्निश्चलदृशा सूक्ष्मलक्ष्यं समाहितः।
अश्रुसंपातपर्यंतमाचार्यैस्त्राटकं स्मृतम् ॥ १ ॥
मोचनं नेत्ररोगाणां तंद्रादीनां कपाटकम्।
यत्नतस्त्राटकं गोप्यं यथा हाटकपेटकम् ॥ २ ॥ (हठयोगप्रदीपिका)

अर्थात् इधर उधर नहीं देखते हुए विना पलक झपकाये निश्चल दृष्टि से किसी लक्ष्य को एकाग्र चित्त होकर जब तक नेत्रों में से पानी टपकने न लगजाय तब तक देखते रहने को आचार्यों ने त्राटक कहा है। यह त्राटक नेत्र के सर्व रोग को और तंद्रा आदि को मिटाने वाला यत्नपूर्वक गुप्त रखनेयोग्य है।

शुचौ देशे प्रतिष्ठाप्य स्थिरमासनमात्मनः।
नात्युच्छ्रितं नातिनीचं चैलाजिनकुशोत्तरम् ॥ ११ ॥
तत्रैकाग्रं मनः कृत्वा यतचित्तेंद्रियक्रियः।
उपविश्यासने युंज्याद्योगमात्मविशुद्धये ॥ १२ ॥
समं कायशिरोग्रीवं धारयन्नचलं स्थिरः।
संप्रेक्ष्य नासिकाग्रं स्वं दिशश्चानवलोकयन् ॥ १३ ॥
प्रशांतात्मा विगतभीर्ब्रह्मचारिव्रते स्थितः।
मनः संयम्य मच्चित्तो युक्त आसीत मत्परः ॥ १४ ॥
युंजन्नेवं सदात्मानं योगी नियतमानसः।
शांतिं निर्वाणपरमां मत्संस्थामधिगच्छति ॥ १५ ॥

(भगवद्गीता अध्याय ६)

२ सुषुम्णाः—इडा और पिंगला नाडी के मध्य में सुषुम्णा है।

---

1 कितनेक ललाट देशमें प्राण निरोध करने को भी त्राटक कहते हैं।

दोहा।

इला चंद रवि पिंगला, मध सुखमण का घाट।
हरिया गुरु परसाद ते, खूला सहज कपाट ॥ १ ॥ (श्रीहरि० वाक्यम्)

इड़ा भगवती गंगा, पिंगला यमुना नदी।
तयोर्मध्ये प्रयागस्तु यस्तं वेद स वेदवित् ॥ १ ॥ (वृहत्सामब्राह्मण)

सुषु इत्यव्यक्त शब्दं म्नायति म्ना-कः मेरुदंड बाह्ये इडा पिंगला नाड़ी मध्यस्थ नाड़ीविशेषः।

मेरोर्बाह्यप्रदेशे शशिमिहिरशिरे सव्यदक्षे निषण्णे।
मध्ये नाड़ी सुषुम्ना त्रितयगुणमयी चंद्रसूर्याग्निरूपा ॥ १ ॥

(शब्दकल्पद्रुम)

मेरुवाह्ये इड़ा नाड़ी पिंगला या समन्विता।
सुषुम्ना भानुमार्गेण ब्रह्मद्वारावधिस्थिता ॥ १ ॥ (योगस्वरोदय)

नाडीर्दश विदुस्तासु मुख्यास्तिस्रः प्रकीर्तिताः।
इड़ा वामे तनोर्मध्ये सुषुम्णा पिंगला परे ॥
मध्या तास्वपि नाड़ी स्यादग्निसोमस्वरूपिणी ॥ १ ॥

अत्रेड़ा वामवृक्काधःस्था धनुर्वक्रा वामनासापर्यंतगता, एवं पिंगला दक्षिणांडाधःस्था धनुर्वक्रा दक्षिणनासांतं गता, पृष्ठवंशांतर्गता सुषुम्णा इत्यर्थः। (शारदातिलक)

तात्पर्य यह है कि, मेरुदंड के बाहर के बाँये भागमें इड़ा नाम की नाड़ी बाये अंड के मूलसे निकलकर धनुष के समान टेढी होकर वामनासा के अंतपर्यंत गई है, एवं दक्षिण अंडके मूलसे निकलकर धनुषके समान टेढी होकर मेरुदंडके दक्षिणभागमें रहकर पिंगलानामकी नाड़ी दक्षिणनासिका के अंतपर्यंत गई है, और इन दोनों (चंद्रसूर्यस्वरूपिणी) इड़ा पिंगला नाड़ी के मध्यमें (मेरुदंड के बीचमें अर्थात् मेरुदंड के भीतर के मध्यभागमें अग्निरूपिणी सुषुम्नानाड़ी मूलाधार से निकलकर ब्रह्मद्वारपर्यंत गई हुई है, यह नाड़ी त्रिगुणात्मिका चंद्रसूर्याग्निरूपा है। मेरुदंड को ही पृष्ठवंश कहते है। इसी पृष्ठवंश के भीतर के भागमें सुषुम्णा नाड़ी रहती है और बाहर के भागमें बाँई ओर इड़ा दहिनी और पिंगला नाम की नाड़ियें आजु बाजु मिली हुई रहती हैं। इन्हीं तीनों नाड़ियों को गंगा यमुना और प्रयाग भी कहते हैं।

सुषुम्णा को पश्चिमद्वार अथवा वंकनाल अग्निरूपिणी भी कहते हैं। इसके और भी कई नाम शास्त्रों में इस प्रकार कहे हैं—

सुषुम्ना शून्यपदवी ब्रह्मरंध्रं महापथः।
श्मशानं शांभवी मध्यमार्गश्चेत्येकवाचकाः ॥ १ ॥

इस सुषुम्णा नाड़ी के विषय में विशेष विवेचन इस प्रकार है—

मस्तिष्क का स्वरूप कछुए की खोपड़ी के समान है, इस में श्वेत रुई के समान चरबी की गिल्टियां बारीक झिल्लियों में लिपटी हुई भरी हैं जिनको मेजा कहते हैं। इसके चौड़ाई में दो भाग नारंगी की फांकों की समान हैं और लम्बाई में भी दो भाग हैं। सामने का भाग पेशानी की तरफवाला डाक्टरीमें (CEREBURM) सेरीवर्म कहलाता है और पिछला भाग (CEREBLLUM) सेरीव्लूम कहलाता है। यह पिछला भाग पतला होता हुवा बारीक सूतकी तरह रीढ की हड्डी में फैला हुआ है। जिसको हराम मगज कहते हैं। इस रीढ की हड्डीमें शरीर की सम्पूर्ण शक्तियों और प्रत्येक प्रकार के स्नायुओं के केंद्र हैं। सम्पूर्ण केंद्रों में गांठ लगी हुई है, जिससे मनुष्य अपनी शक्ति को प्रयोग में नहीं ला सकता। कुंडलिनी नाम केंद्र यदि जगाया जावे तो यह जोर में भरकर इन गांठों को तोड़ सकता है, क्योंकि जीवात्मा इसी में लिपटा हुआ अचेत रहता है, जो इच्छाओं की व कर्मोंकी जंजीर में बंधकर शरीर के अंदर कैद है। शरीर में ऐसे आत्मिक केंद्र तो चौदह हैं परन्तु इनमें से छः अधिक विख्यात हैं जो षट्चक्र कहलाते हैं। डाक्टरों की सम्मति में ये वे स्थान हैं जहां किसी प्रकार के स्नायु के झुंड आकर इकट्ठे होते हैं, और जहां अत्यंत अधिक बल दूसरे अंगों की अपेक्षा इकट्ठा रहता है और इनमें प्रतिसमय शक्ति भरी और वहती रहती है।

रीढ की मेरुदंड (SPINAL CORD) स्पाइनल कोर्ड में जो हराम मगज भरा है उसके बीचों बीच वालके बराबर बारीक नाली मस्तिष्क से लेकर नीचे गुदातक चली गई है जिसको अंग्रेजीमें (CANAL OF STRING) केनाल आफ स्ट्रिंग और संस्कृत में सुषुम्ना कहते हैं, यह रंग तेजी से भरी हुई है, और यही स्थान शक्ति व जिंदगी का घर है। और जिस प्रकार वेंत में गांठ होती है इसी तरह इस में षट्चक्रों का स्नायु केंद्र है और इनके स्थान की ठीक पहिचान यह है कि, इस स्थान के सामने शरीर में जरासा गड्ढा व खाली स्थान अवश्य होता है। (षट्चक्रों का विशेषवर्णन षट्चक्रवर्णन के प्रसंग में आगे लिखने में आयगा)। इड़ा नाम की नाड़ी सुषुम्ना के बांई तरफ होती हुई आज्ञाचक्र तक आती है, फिर वहां से मुड़कर सीधे नथने में पहुंचती है। और पिंगला सुषुम्ना के सीधी तरफ लिपटी हुई आती है फिर वहां से मुड़कर बाँये नथने में जाती है। सुषुम्ना रीढ के भीतर होकर जाती है। इसके मध्यमें खाली स्थान है जिसको चित्रा कहते हैं इसी में आत्मा रहता है। इस नाड़ीके छः दरजे हैं जिनमें केवल पांच साधारणतया प्रगट किये जा सकते हैं। डाक्टरी मत से तो नाडियाँ रुधिर ले जानेका काम करती हैं परंतु योगशास्त्र में ऐसा माना है कि वे वायु और शक्ति भी ले जाती हैं। यह गिनती में सब चौदह हैं, परंतु इनमें से उपरोक्त (इड़ा पिंगला सुषुम्ना) तीन अधिक विख्यात और आवश्यकीय हैं। यह नाड़ियां बारीक सूतके समान स्नायु हैं जो कि हड्डियों से निकलती हैं। योगी का अभीष्ट यह होता है कि रीढ की नाड़ी अर्थात् सुषुम्ना को स्वच्छ रक्खे जिससे तेजी की लहर बराबर जारी रहै और सम्पूर्ण केंद्र स्वतंत्र और दृढ रहै जिससे इच्छानुसार काम दे सके।

साथ मिलकर सुषुम्णा नाड़ी के मार्ग में चढा तब अरसघर (शून्यस्थान) में जाकर ठहरा।

फिरिया मन पूरब चले अपूरब ठांम ठाम ठमकंदा है ॥ ९ ॥

तत्पश्चात् पूर्व से मन फिरकर कंठ हृदय नाभि में क्रमसे ऊपर से नीचे स्थान २ पर श्वास ठहरता हुवा (स्थिर होता हुवा) पश्चिम के तरफ याने सुषुम्णा मार्ग के द्वार की ओर चलने लगा ॥ ९ ॥

जालंधर बंधा उरधे कंधा मन अरु पवन मिलंदा है।
उलट्या है आसण पलट्या वासण सुरत शब्द परसंदा है ॥ १० ॥

कंधे के ऊपर का जालंधर बंध करने से प्राणवायु की ऊर्ध्वगति रुक जाती है और पश्चिमतानसे ब्रह्मनाड़ी में जाने लगता है। तथा मूलबंध करने से अपानवायु उलटकर ऊर्ध्व गामी होता है एवं जालंधरबंध और मूलबंध करने पर प्राण अपान वायु.के आसन उलट पुलट होने के कारण दोनों मिलजाने से सुरत शब्द का स्पर्श हुवा।

इस प्रकार सुषुम्ना के स्वरूप का वर्णन योगशास्त्र में किया हुआ है। इस परसे सुषुम्ना का मार्ग कितना अधिक कठिन है यह सहज ही ध्यान में नहीं आसकता है। इसी अति कठिन मार्ग की घाटी को अर्थात् गांठें बीच बीचमें जो आडमारनेवाली हैं उन को लांघ के छेदन करके प्राण की गति जब सुषुम्ना में होती है तब शनैः शनैः ठहरता हुवा ब्रह्मद्वार पर त्रिकुटी में पहुंचता है।

प्रथम ध्यान पूरब दिशा, गगन गर्जिया जाय।
ठाम ठाम पाताल कूं, पछे पिछम कूं थाय ॥ १ ॥

१ बंध तीन प्रकार के होते हैं जालंधर, मूल, और उड्डियान।

१ जालंधर बंधः—

कंठको सिकोड़ कर मजबूती से चिबुक अर्थात् ठोडीको हृदय में जमा के सीधा बैठने को जालंधर बंध कहते हैं।

कंठमाकुंच्य हृदये स्थापयेच्चिबुकं दृढम्।
बंधो जालंधराख्योऽयं जरामृत्युविनाशकः ॥ १ ॥
है जालंधर बंध में, मन पवना की गांठ।
हरिया मिल्या उतान में, सुरत शब्द की सांठ ॥ १ ॥
सुरत चली आकाश कूं, दे जालंधर बंध।
जन हरिया जहां जाणिये, हद बेहद की संध ॥ २ ॥

बहती वँकनाड़ी खुली किवाड़ी भँवरगुफा भणकंदा है।
उलंध्या मेरा गुरुसिलचेरा चहुँ चकडोल फिरंदा है॥ ११॥

चलती हुई बंक नाड़ी (सुषुम्ना) की किवाड़ी खुलगई (सुषुम्ना नाड़ी का द्वार खुलगया) जिससे भँवर गुफा (ब्रह्मरंध्रस्थान) में पहुंचने का

हरिया शब्द पयाल को, चल्या गगनतें होय।
जब जालंधर बंध को, विरला जाने कोय॥ ३॥

(श्रीहरि० वाक्यम्)

२ मूलबंधः–

एडी से योनिस्थान को दबाकर गुदाको संकोचकरै और नीचे जाने वाले अपान वायु को बलपूर्वक ऊपर खींचके चढाते रहने को मूलबंध कहते हैं।

पार्ष्णिभागेन संपीड्य योनिमाकुंचयेद्गुदम्।
अपानमूर्ध्वमाकृष्य मूलबंधोऽभिधीयते॥ १॥
अधोगतिमपानं वा ऊर्ध्वगं कुरुते बलात्।
आकुंचनेन तं प्राहुर्मूलबंधं हि योगिनः॥ २॥

३ उड्डियानबंधः–

नाभी के ऊपर के भागको पीठ की ओर खींचके चिपका रखने को ऊड्डियानबंध कहते हैं।

उदरे पश्चिमं तानं नाभेरूर्ध्वं च कारयेत्।
उड्डियानो ह्यसौ बंधो मृत्युमातंगकेसरी॥ १॥
मूलस्थानं समाकुंच्य उड्डियानं तु कारयेत्।
इड़ां च पिंगलां वध्वा वाहयेत्पश्चिमे पथि॥ २॥
बंधत्रयमिदं श्रेष्ठं महासिद्धैश्च सेवितम्॥ ३॥

इन तीनो बंधों के करने से सुषुम्णामार्ग में दोनों वायु का गमन होजाता है।

मूलबंधादपानस्य गतिरूर्ध्वं प्रजायते।
जालंधरात्तथा प्राणस्त्वधोगामी भवेत्पुनः॥ १॥
प्राणापानौ मिलित्वाऽधः सुषुम्नावदनांतरे।
उड्डियानेन बंधेन विशते नात्र संशयः॥ २॥
एवमभ्यासतो नित्यं कुंभकस्य निरंतरम्।
ब्रह्मरंध्रं प्रविश्याथ प्राणो भवति निश्चलः॥ ३॥ (मोक्षगीता)

मूलबंधसे अपान वायु की ऊर्ध्वगति होती है और जालंधरबंधसे प्राणकी अधोगति होती है एवं दोनों प्राण अपान मिलके सुषुम्ना के मुखके भीतर उड्डियान बंध के करने से निःसंशय प्रवेश होते हैं। इस प्रकार नित्य कुंभक करने का अभ्यास निरंतर करते रहने से प्राण ब्रह्मरंध्र में प्रवेशकर निश्चल होजाता है।

ज्ञान होगया। तत्पश्चात् जालंधर बंध और मूलबंध के करने से प्राणवायु अपानवायु से मिलके उड्डियान बंधद्वारा सुषुम्ना नाडी के खुले हुए द्वार में प्रवेश करगया। उड्डियानबंध के अभ्यास से प्राण को कहीं जाने का मारग नहीं मिला अतः वह पीठ की तरफ से मेरुदंड मध्यस्थित सुषुम्ना के मेरु को उलंघ कर गुरु चेला दोनों (प्राण अपान वा प्राण मन) मिलके च्यारों तरफ चकडोल (नीचेसे ऊपर ऊपरसे नीचे) चक्र के समान फिरने लगे। अर्थात् तीनों प्रकार के बंधनों के साधनद्वारा कुंडलिनी जागृत हो जो अपने मुखसे सुषुम्ना के मार्ग को रोक रखा है उस को खुला करदेती है और प्राण अपान दोनों मिलके उस सुषुम्ना के विवर में प्रवेश कर नीचे से ऊपर और ऊपरसे नीचे फिरने लगते हैं।

षट्चक्कर भेद्या भवदुख छेद्या साँसा शोक नसंदा है॥
गरजत है गेणूं बरजतवेणूं सरवर शून्य वसंदा है॥ १२॥

---

१ षट्चक्रः—

१ मूलाधार २ उपस्थ ३ नाभिमूल ४ हृदय ५ तालुमूल ६ ललाट इन छः स्थानों में एकत्रित हुए स्नायुसमूह मूल के केंद्रों को षट्चक्र कहते हैं।

आधारे लिंगनाभौ प्रकटितहृदये तालुमूले ललाटे
द्वे पत्रे षोडशारे द्विदशदशदले द्वादशार्धे चतुष्के।
वासांते बालमध्ये डफकठसहिते कंठदेशे स्वराणां
हंक्षंतत्त्वार्थयुक्तं सकलदलगतं वर्णरूपं नमामि॥ १॥

षट्चक्रों का कोष्ठक।

संख्या	नामचक्र	स्थान	पद्मपत्र-संख्या	वर्ण	शक्ति	मतांतर
१	मूलाधार	मूलाधार	४	व से स पर्यंत.	उत्पत्तिशक्ति.	अधःशक्ति.
२	स्वाधिष्ठान	लिंग	६	ब से ल ,,	ब्रह्मा	शिव
३	मणिपुर	नाभि	१०	ड से फ ,,	विष्णु	
४	अनहद	हृदय	१२	क से ठ ,,	महादेव	ब्रह्मा
५	विशुद्ध	तालुमूल	१६	स्वर सोलह	दुर्गा	सुषुम्णा
६	आज्ञा	ललाट	२	ह क्ष	शून्यस्थान	

सहस्रारचक्र (सहस्रदल) यह सातवां चक्र है इसका ब्रह्मरंध्र स्थान है इसके सहस्र १००० दल हैं और परमपद इसकी शक्ति है। इनके उपरांत किसी किसी ने सूर्यचक्र और मनश्चक्र नामक २ चक्र और माने हैं।

शरीरस्थ पद्माकार षट्प्रकारचक्रम् ।

सप्त पद्मानि तत्रैव सन्ति लोका इव प्रभोः ।
१ गुदे पृथ्वीसमं चक्रं हरिद्वर्णं चतुर्दलम् ॥ १ ॥
२ लिंगे तु षट्दलं चक्रं स्वाधिष्ठानमिति स्मृतम् ।
त्रिलोकवह्निनिलयं तप्तचामीकरप्रभम् ॥ २ ॥
३ नाभौ दशदलं चक्रं कुंडलिन्या समन्वितम् ।
नीलांजननिभं ब्रह्मस्थानपूर्वकमन्दिरम् ॥ ३ ॥
मणिपूराभिधं स्वच्छं जलस्थाने प्रकीर्तितम् ।
४ उयदादित्यसंकाशं हृदिचक्रमनाहतम् ॥ ४ ॥
कुंभकाख्यं द्वादशारं वैष्णवं वायुमन्दिरम् ।
५ कंठे विशुद्धिशरणं षोडशारं पुरोदयम् ॥ ५ ॥
शांभवी वरचक्राख्यं चंद्रबिंदुविभूषितम् ।
६ षष्ठमाज्ञालयं चक्रं द्विदलं श्वेतमुत्तमम् ॥ ६ ॥
षट्चक्राणीह भेद्यानि नैतद्भेद्यं कथंचन ।
राधाचक्रमिति ख्यातं मनःस्थानं प्रकीर्तितम् ॥ ७ ॥
७ सहस्रदलमेकार्णं परमात्मप्रकाशकम् ।
नित्यज्ञानमयं सत्यं सहस्रादित्यसन्निभम् ॥ ८ ॥

पहिलाः—मूलाधार चक्र=यह रीढ की हड्डी के आखीर या सबसे नीचेवाला स्थान है जो गुदा का कमल भी कहलाता है, इसको अंग्रेजी में SACRAI PLEXUS सेक्रे प्लेक्सस कहते हैं। योगी लोग इसको सूरज का स्थान कहते हैं। इसमें सत-रज-तम तीनों का भंडार समझते हैं। इसीपर संपूर्ण जीवन निर्भर मानते हैं। इस स्थान पर कुंडलिनी देवी साढे तीन आंटे देके लिपटी है जो उत्पत्ति की शक्ति रखती है। इसका चक्र पृथ्वी के समान हरे रंग का है, इसमें चतुर्दल कमल है, उनमें व, श, ष, स, ये चार वर्ण हैं इसको ब्रह्मचक्र भी कहते हैं।

दूसराः—स्वाधिष्ठान नाम का चक्र है=यह उपस्थ इंद्री के ऊपर दबाने से जो खाली स्थान ज्ञात होता है इसके ठीक सामने रीढ की हड्डी में है, यह कमल छः दल का है, इसमें ब, भ, म, य, र, ल, ये छः व्यंजनाक्षर हैं, इसको ब्रह्मा का स्थान बतलाते हैं। कोई कोई शिव का स्थान भी कहते हैं। यह संपूर्ण संसार का उत्पन्न करनेवाला है और यही त्रिलोक में अग्नि का स्थान है और तपाये हुए सुवर्ण के समान रंगवाला है।

तीसराः—मणिपुर नाम का चक्र है=यह नाभि के मुकाबले में है, इसको अंग्रेजी में SOLAR PEXUS सोलर पेक्सस कहते हैं। इसमें दशदल का कमल चक्र है। जिनमें ड, ढ, ण, त, थ, द, ध, न, प, फ, ये दश अक्षर क्रम से विराजमान हैं

यह विष्णु का स्थान है और नील कमल के समान घनश्याम वर्ण का है इस को स्वच्छ जल का स्थान और ब्रह्मस्थान भी कहते हैं।

चौथाः—अनाहत नाम का चक्र है=इसको अंग्रेजी में CARDIAE PLEXUC कारडिये प्लेक्सेस कहते हैं। यह छाती के मध्यमें जो गड्ढा कौडी कहलाता है उसके मुकाबिले में है और महादेव का स्थान है, इस में द्वादश १२ दल का कमल है, बारहों दलों में क्रमसे क, ख, ग, घ, ङ, च, छ, ज, झ, ञ, ट, ठ, ये बारह वर्ण हैं, इसका रंग उदय होते हुए सूर्य के समान है. और इसको कुंभक स्थान वायु का स्थान तथा विष्णु का स्थान भी कहते हैं। कितनेक इसको ब्रह्मा का भी स्थान कहते हैं।

पाँचवाँः—विशुद्धि नाम का चक्र है यह गले में हँसली की हड्डी के ऊपर जो गड्ढासा है इसके मुकाबिले में है। इसमें सोलह १६ दल का कमल है जिनमें क्रमसे सोलह ही स्वर अनुस्वारयुक्त विराजमान हैं (अं, आं, इं, ईं, उं, ऊं, ऋं, ॠं, लृं, ॡं, एं, ऐं, ओं, औं, अं, अः,) इसको दुर्गाका स्थान कई पार्वतीपति का स्थान तथा सुषुम्नाका स्थान भी कहते हैं। यह महत्प्रभ धूम्रवर्ण का है, कितनेक शुक्ल वर्ण का भी कहते हैं। यह जीव की विशुद्धि करने वाला है। कंठ में सुषुम्ना, इडा, पिंगला इन तीनों नाडियों का वेष्टन, मनुष्यों के रहता है। यह षट्कोण आकृतिका और छः अंगुल प्रमाण का है।

छठाः—आज्ञा नाम का चक्र है=यह दोनों भ्रुवों के मध्यमें नाक की जड के स्थान पर है। यहां इडा, पिंगला, सुषुम्ना इन तीनों नाडियों का प्रांत आकर मिला है इस कारण इस को त्रिपथ स्थान कहते हैं। यह षट्कोणाकृति चार अंगुल का रक्तवर्ण है। इसमें दो दल का उत्तम श्वेतवर्ण का कमल है इसमें ह और क्ष इन दो अक्षरों का निवास है। इसको राधाचक्र तथा मनका स्थान व शून्य स्थान अथवा शून्य सरोवरभी कहते हैं। इसका ध्यान करने से वायु, जल, अग्नि पर अधिकार होता है, भय जाता रहता है और कर्म के बंधन से छूट जाता है।

सातवाँः—सहस्रदल कमल चक्र का स्थान वह है=जो ईश्वरी ज्ञान से संबंध रखता है जिसका वर्णन करना जिह्वा और लेखनी से बाहर है, परंतु कुछ योगीजन ऐसा कहते हैं। कि तालू के ऊपर एक सहस्रदल का कमल है जिसमें चन्द्रमा का स्थान है और जो सुषुम्ना की जड है, इसीके ऊपर ब्रह्मरंध्र है इस चंद्रमा से प्रतिसमय अमृत वर्षा होती रहती है, जिसकी दो धार होकर नीचे सूरज के स्थान तक जाती है, एक रीढ की बाँईं ओर को जो इडा कहलाती है. दूसरी रीढके अंदर होकर जो सुषुम्ना कहलाती है। रीढ के नीचे का केंद्र जो सूर्यस्थान कहलाता है, इसमें से एक आतशी किरण निकलती है जो सीधी होकर ऊपर चढती है मानों स्नायु शक्ति की लहर बांईं ओर से सीधी ओर को प्रतिसमय जाती और चक्कर लगाती रहती है। मूलाधार कमल से एक प्रकार का विष निकलता है। जो सीधे नथने में आता है और नाशकारी है, परंतु उसको चंद्र का अमृत प्रभावित करता रहता है इसीसे उसका

असर जाता रहता है। सहस्रदल पद्म एक महासागर के समान है इसमें परमात्म तत्त्व का प्रकाश हो रहा है जो नित्य ज्ञानमय सत्यस्वरूप एक हजार सूर्य के प्रकाश-के तुल्य प्रकाशवाला है यही ब्रह्मस्थान है, इसी को परमपद स्थान कहते हैं, इसमें जो योगी अपनी योगसाधन क्रियाद्वारा पहुँचजाता है वह परमपद को प्राप्त होजाता है और जन्म मरण से रहित होजाता है। "यद्गत्वा न निवर्तते तद्धाम परमं मम"।

इस प्रकार के ये षट्चक्र हैं, इनको भेदकर जो सातवें ब्रह्मरंध्र चक्र में पहुँच जाता है उसको कुछभी कष्टसाध्य नहीं रहता है।

मूलाधार चक्र की विवेचनाः—पीछे कह आये हैं कि छःस्थानों में एकत्रित हुए स्नायुसमूह मूलके केन्द्रों को षट्चक्र कहते हैं।

स्नायु (नाड़ी) समूह ७२००० बहत्तर हजार हैं उनमें से २४ मुख्य हैं। उनमें से भी १० मुख्य हैं।

नाडीनां संवहो देवि कन्दयोनिः खगांडवत्।
तत्र नाड्यः समुत्पन्नाः सहस्राणां द्विसप्ततिः ॥ १ ॥
प्रधाना दक्षवाहिन्यो भूयस्तत्र दश स्मृताः।
इडा च पिंगला चैव सुषुम्ना च तृतीयका ॥ २ ॥
गांधारी हस्तिजिह्वा च पूषा चैव यशस्विनी।
अलंबुषा कुहूश्चैव शंखिनी च दश स्मृताः ॥ ३ ॥
एवं नाडीमयं चक्रं विज्ञेयं शक्तिचक्रके।
इडायाः पिंगलायाश्च मध्ये या सा सुषुम्निका ॥ ४ ॥
इयं च त्रिगुणा ज्ञेया ब्रह्मविष्णुशिवात्मिका।
रजोगुणा च वज्राख्या चित्रिणी सत्वसंयुता ॥ ५ ॥
तमोगुणा ब्रह्मनाडी कार्यभेदक्रमेण च ॥ (निरुत्तरतंत्र)

तात्पर्य यह है कि बहत्तर हजार नाड़ियों में इडा १ पिंगला २ सुषुम्ना ३ गांधारी ४ हस्तिजिह्वा ५ पूषा ६ यशस्विनी ७ अलंबुषा ८ कुहू ९ शंखिनी १० ये दश नाड़ी और इनके अतिरिक्त वज्रा ११ चित्रिणी १२ और ब्रह्मनाडी १३ कुंडली मुख्य नाड़ियें हैं, इनमें इडा पिंगला के मध्य में त्रिगुणात्मिका सुषुम्ना रहती है, यह ब्रह्म-विष्णु-शिवात्मिका है। सुषुम्ना के मार्ग को रोक के कुंडलिनी नाडी स्थित है। वज्रा इसी के पास में और चित्रिणी (चित्रा) सुषुम्ना के मध्यमें खाली स्थान में रहती है। इन नाडीसमूहों में जब तक कुंडलिनी नाडी जाग्रत न हो तब तक सब योगसाधन वृथा के समान ही होता है। जब यह कुंडलिनी नाड़ी जागृत होकर सुषुम्णा के द्वार को खुला कर सरल हो सुषुम्णा में प्रवेश करती है तब योगसाधन होता है। इसलिये प्रथम मूलाधार जो षट्चक्र का प्रथम चक्र है उसमें कुंडलिनी का निवास रहता है उस कुंडलीका वर्णन इस प्रकार है—

कुंडली को कुंडलिनी, कुंडली, कुटिलांगी, भुजंगी, नागन, बालरंडा, शक्ति, ईश्वरी, और अरुंधती नाम से भी पुकारते हैं।

गुह्यलिंगयोर्मध्ये अंगुलिद्वयमितस्थानं। तत्तु शरीरस्थसकलनाडीनां मूलस्थानं। अत्र व-श-ष-साक्षरयुक्तं स्वर्णवर्णं चतुर्दलपद्ममस्ति। तन्मध्ये इच्छा-ज्ञान-क्रिया-स्वरूपं त्रिकोणं वर्तते। तन्मध्ये कोटिसूर्यसमप्रभस्वयंभूलिंगमस्ति। अत्र पृथिवी वर्तते। तत्रैव मृणालसूत्रवत् सूक्ष्म-सार्धत्रिवलयाकार-स्वयंभूलिंगवेष्टितविद्युत्तुल्यप्रभ-कुल-कुंडलिनी वर्तते। यथा—

मूलाधारे त्रिकोणाख्ये इच्छाज्ञानक्रियात्मके।
मध्ये स्वयंभूलिंगं तु कोटिसूर्यसमप्रभम्॥
तद्बाह्ये हेमवर्णाभं वसवर्णं चतुर्दलम्॥ १॥ (इति तंत्रसारः)

अथाधारपद्मं सुषुम्नाख्यलग्नं ध्वजाधो गुदोर्ध्वं चतुःशोणपत्रम्।
अधोवक्त्रमुद्यत्सुवर्णाभवर्णैर्वकरादिसांतैर्युतं वेदवर्णैः॥ १॥
असुष्मिन्धरायाश्चतुष्कोणचक्रं समुद्भासि शूलाष्टकैरावृतं तत्।
लसत्पीतवर्णं तडित्कोमलांगं तदंतः समास्ते धरायाः स्वबीजम्॥ २॥

वज्राख्या वक्त्रदेशे विलसति सततं कर्णिकामध्यसंस्थम्
कोणं तत्त्रैपुराख्यं तडिदिव विलसत्कोमलं कामरूपम्।
कन्दर्पो नाम वायुर्निवसति सततं तस्य मध्ये समंतात्
जीवेशो बंधुजीवप्रकरमभिहसन् कोटिसूर्यप्रकाशः॥ ३॥

तन्मध्ये लिंगरूपिद्रुतकनककलाकोमलः पश्चिमास्यो
ज्ञानध्यानप्रकाशः प्रथमकिसलयाकाररूपः स्वयंभूः।
विद्युत्पूर्णेंदुबिंबप्रकरकरचयस्निग्धसंतानहासी
काशीवासी विलासी विलसति सदिवावर्तरूपः प्रकारः॥ ४॥

अस्योर्ध्वे विषतंतुसोदरलसत् सूक्ष्मा जगन्मोहिनी
ब्रह्मद्वारमुखं मुखेन मधुरं साच्छादयंती स्वयम्।
शंखावर्तनिभा नवीनचपला माला विलासास्पदा
सुप्ता सर्पसमा शिरोपरिलसत् सार्धत्रिवृत्ताकृतिः॥ ५॥

(तत्त्वचिंतामणिः)

इत्यादि वचनों के भावार्थ पर से कुंडली मूलाधारस्थान में अर्थात् गुदा और लिंगके मध्यमें दो अंगुल प्रमाण का भगस्थान है, वह शरीरस्थ सकल नाडियों का मूलस्थान एक वालिस्त लम्बा और चार अंगुल चौड़ा शुभ्र और कोमल वेष्टनांबर (लपेटनेके वस्त्र) के समान (कंद) है। यहां चतुर्दल की आकृति का एक पद्म है उसमें चार दल हैं उनमें व, श, ष, स, ये चार वर्ण स्वर्ण के तुल्य देदीप्यमान हैं। उस चतुर्दल पद्म में इच्छा ज्ञान क्रिया स्वरूप एक त्रिकोण है और यह पश्चिममुखी है अर्थात् पीछे

को मुख है ऐसे वंकनाल में ही से ऊर्ध्वगमन होता है । इसकी कर्णिका में वज्रा नाम नाड़ी रहती है और त्रिकोणमें कोटिसूर्यसमप्रभ स्वयंभू लिंग है यहाँ पृथ्वी है इसी पर कमल के तंतु के समान सूक्ष्म विद्युत्तुल्यप्रभावाली कुंडलिनी स्वयंभू लिंग को और सब नाडियों को घेरकर साढे तीन आंटे देकर कुटिल आकृति से अपने मुख में पूंछ को दबाकर ब्रह्मद्वार (सुषुम्ना का द्वार) को आच्छादित करके बैठी हुई है । इसके जागृत करने पर जब यह सुषुम्ना के मार्ग से अपना मुँह हटाती है तब ब्रह्मद्वार का कपाट खुलजाता है इसी कारण योगियों को इसके जानने और जगाने का प्रयत्न करते रहना चाहिये ।

अथवा यह कुंडलिनी नाड़ी सब नाडियों के ऊपर स्थित होकर मणिपूरक चक्र कर्णिका को आवृत करके ब्रह्मरंध्र के द्वारको सर्वदा रोके रहती है और सुषुम्ना के द्वार को बन्द किए रखती है । इसलिये प्राणवायु और अपानवायु को धोंकनेवाला अर्थात् उत्तेजित करनेवाला जो पुरुष है वह उस प्राण और अपानवायु की एकता से उत्तेजित हुई अग्नि से जागृत होकर मन और प्राण वायुसहित सुषुम्ना को सूचितंतुन्याय[1] से ऊपर लेजाता है, इनके ऊपर जाने से वह अपने इच्छित परमानंद को प्राप्त होजाता है ।

अथवा कुंडलिनी नाड़ी सोते हुए सर्प के समान है उसको जागृत करने के लिये पहिले अपानवायु और प्राणवायु से विधिपूर्वक बीचकी अग्नियों के स्वरूप को तेज करे उनकी तेजी से उसे जगाकर वह पुरुष ज्योतिर्मय स्वरूप होकर सुषुम्ना मार्ग से आत्मा में लय होजाता है ।

अथवा वज्रासन (सिद्धासन) लगाकर हाथों से पावों की एड़ी पकड़ कर कन्दस्थान को दृढतासे दबावे और वज्रासन से ही धोंकनी को कुंभक वायु से प्रचलित करे उसके प्रचलित होने से अग्नि प्रज्वलित होता है । उसकी गरमी से वह बालरंडा मुख फैला देती है उस समय में सुषुम्नाद्वारा ही योगीश्वर अपने स्वरूप के आनंद को पाते हैं ।

अथवा नाभिदेशमें सूर्य रहता है । उस का आकुंचन कर चार घड़ीपर्यंत नित्य निर्भय होकर शक्ति (कुंडली) का चालन करे तो कुंडली कुछ ऊपर को खिंचती है जिससे प्राणवायु स्वयं (आपही) सुषुम्ना में प्रवेश कर जाता है ।

सुप्ता गुरुप्रसादेन यदा जागर्ति कुंडली ।
तदा सर्वाणि पद्मानि भिद्यंते ग्रंथयोपि च ॥ १ ॥

(हठयोगप्रदीपिका)

इस प्रकार क्रिया करने से गुरु की कृपासे जब सोती हुई कुंडली जागृत हो जाती है तब सब पद्म (संपूर्ण षट्चक्र) भेदित होकर ब्रह्मग्रंथि, विष्णुग्रंथि, रुद्रग्रंथि, ये तीनों ग्रंथियें भी भेदित होजाती हैं ।

1 जैसे सूई में डोरा पिरोया हुआ हो तो वह सूई कपड़े के अनेक सूतों में से तंतु-सहित ऊपर को निकल आती है उसको सूचितंतुन्याय कहते हैं ।

उपरोक्त प्रकार से सुषुम्ना मार्ग में प्राण अपान दोनों मिलके प्रवेश करने के वाद मेरुदंड के मध्य जो षट्चक्र के स्थान की गाँठें सुषुम्ना में पहिले बता आये हैं उन ही षट्चक्र की गाँठों को शनैः शनैः क्रमसे भेदते (छेदते) हुए (प्राण अपान मिलके) जब ब्रह्मरंध्रमें पहुँच गये तब सर्व भवसागर का दुःख छेदन (नाश) होगया और संशय तथा शोक नष्ट होगया और जिस शून्य सरोवर में अकथनीय गगन गर्जना का अलौकिक गंभीर नाद होरहाहै उसमें वास (निश्चल निवास) प्राप्त होगया ।

हंसा सुन होती मंझे मोती मुख विन चूण चुगंदा है ॥
आतम ब्रह्मंडा एक अखंडा विन रसना गावंदा है ॥ १३ ॥
अंबर घर आये ब्रह्म वधाये अनहद नाद घुरंदा है ॥
नोबत नीसाणा दिल दीवाणा बाजा भेरि वजंदा है ॥ १४ ॥

---

१ नादकी चार अवस्था—

आरंभश्च घटश्चैव तथा परिचयोऽपि च ।
निष्पत्तिः सर्वयोगेषु स्यादवस्थाचतुष्टयम् ॥ १ ॥

१ आरंभावस्था—

ब्रह्मग्रन्थेर्भवेद्भेदो ह्यानंदः शून्यसंभवः ।
विचित्रः क्वणको देहेऽनाहतः श्रूयते ध्वनिः ॥ १ ॥

हृदय स्थान के द्वादशदल अनाहत चक्र में ब्रह्मग्रंथि है । जब प्राणायाम के अभ्यास से सुषुम्ना मार्गद्वारा इस ग्रंथी को प्राण भेदन करता है तब शून्य हृदयाकाश में आनंद हो जाता है और उस हृदाकाशोत्पन्न आनंद में विचित्र (नानाविध) प्रकार का आभूषण का नाद अर्थात् स्त्रियों के पाँव में पहनने के आभूषणों की मधुरध्वनि श्रवण होने लगती है इस को आरंभावस्था कहते हैं । जब आरंभावस्था प्राप्त हो जाती है तब वह पुरुष दिव्य देहवाला, तेजस्वी (प्रतापवान्) उत्तम सुगंधिवाला और रोगरहितदेहवाला होजाता है । और जब हृदाकाश में नाद का आरंभ होजाता है उस समय हृदाकाश, विशुद्धाकाश, और भ्रूमध्याकाश को योगीजन शून्य, अतिशून्य और महाशून्य पद के नाम से मानते हैं और उनके नाद का श्रवण क्रमसे करते जाते हैं ।

२ घटावस्था—जब प्राणवायु हृदाकाशस्थ ब्रह्मग्रंथि को भेदन कर प्राण, अपान और नादबिंदु से मिलकर कंठस्थान के षोडशदल विशुद्धिनामक चक्र को जिसको मध्यचक्रभी कहते हैं और जो विष्णुग्रंथि का स्थान है इसको भेदन करता है तब परमानंद (ब्रह्मानंद) सूचक अतिशून्य नामक आकाश में अनेक प्रकार के नादों की

ध्वनि को संमर्दन करनेवाली मेरीकीसी ध्वनि सुनाई देने लगती है और वह योगी दृढासन और पूर्व की अपेक्षा विशेष ज्ञानी देव के समान दिव्यदेहवाला हो जाता है। यह मध्यचक्र षोडशाधार का बंधक है

मध्यचक्रमिदं ज्ञेयं षोडशाधारबंधनम् ॥

जो षट्चक्र, षोडशाधार, द्विलक्ष्य और पंचाकाशको नहीं जानता उसको योगसिद्धि कैसे हो सकती है—

षट्चक्रं षोडशाधारं द्विलक्ष्यं व्योमपंचकम् ।
स्वदेहे यो न जानाति कथं योगी स सिध्यति ॥ २ ॥

इतनी बातें योगी को अवश्य जान लेना चाहिये—

षट्चक्र—१ मूलाधार, २ स्वाधिष्ठान, ३ मणिपुर, ४ अनाहत, ५ विशुद्ध, ६ आज्ञाचक्र।

सोलह आधार—१ पग का अंगुष्ठ, २ मूलाधार, ३ गुह्याधार, ४ वज्रोली, ५ उड्डियानबंध, ६ नाभिमंडलाधार, ७ हृदयाधार, ८ कंठाधार, ९ क्षुद्रकंठाधार, १० जिह्वामूलाधार, ११ जिह्वा का अधोभागाधार, १२ अर्धदंत मूलाधार, १३ नासिकाग्राधार, १४ नासिकामूलाधार, १५ भ्रूमध्याधार, और १६ नेत्राधार।

मतांतर से सोलह आधार—१ मूलाधार, २ स्वाधिष्ठान, ३ मणिपुर, ४ अनाहत, ५ विशुद्ध, ६ आज्ञाचक्र, ७ विंदु, ८ अर्धेन्दु, ९ रोधिनी, १० नाद, ११ नादांत, १२ शक्ति, १३ व्यापिका, १४ शमनी, १५ रोधिनी, १६ ध्रुवमंडल।

द्विलक्ष्य—१ बाह्यलक्ष्य (भ्रूमध्य तथा नासिकाग्र) २ आभ्यंतरीयलक्ष्य (मूलाधारादिषट्चक्रों को अंतर्दृष्टि से देखना)

पांच प्रकार के आकाश—
पहिला—श्वेतवर्ण ज्योतीरूप आकाश।
दूसरा—पहिले के भीतर धूम्रवर्ण ज्योतीरूप महाकाश।
तीसरा—दूसरेके भीतर नीलवर्ण ज्योतीरूप महत्तत्त्वाकाश।
चौथा—तीसरेके भीतर पीतवर्ण ज्योतीरूप महाशून्याकाश।
पांचवाँ—चौथे में विजलीके वर्ण ज्योतीरूप सूर्याकाश।

उपरोक्त प्रकार से शरीर में ६ चक्र १६ आधार २ लक्ष्य और ५ आकाश हैं इनको जो योगी नहीं पहिचानता उसको योगकी सिद्धि नहीं होती है।

३ परिचयावस्था—जब प्राण ब्रह्मग्रंथि और विष्णुग्रंथि को भेदन कर भ्रूमध्यमें द्विदल आज्ञाचक्र को जो सर्वेश्वर का पीठस्थान है जिसमें रुद्रग्रंथि है इस रुद्रग्रंथि को प्राण भेदन करता है तब भ्रूमध्याकाश (महाशून्याकाश) में प्राण पहुंचता है इसको परिचयावस्था कहते हैं। इसमें एक विशेष जानने योग्य मर्दल (एक प्रकार का बाजा) की ध्वनि सुनाई पड़ती है, इस अवस्था में सहजानंद और सर्व सिद्धियों की

प्राप्ति, दोष, दुःख, जरा, व्याधि, भूख, प्यास और निद्रा का नाश हो जाता है और अहर्निश स्वाभाविक आत्मसुख में योगी मग्न हो जाता है।

४ निष्पत्तिअवस्था—जब प्राणवायु ब्रह्म, विष्णु और रुद्र ग्रंथि के भेदने पर ब्रह्मरंध्र में प्रवेश करता है तब चतुर्थावस्था प्राप्त होती है। उस समय वंशी के समान मधुर शब्द मानों बडी सुंदर मनमोहक वंशी का शब्द होरहा हो (परब्रह्म श्रीकृष्ण परमात्मा की वंशी की अनुपम ध्वनि के समान जिसको सुनकर गोपियों ने मुग्ध होकर सांसारिक सर्व सुखों को भुला दिया) वैसी वंशी की ध्वनि होने लगती है तब अंतःकरण एक तल्लीन हो जाता है। चित्तकी एकाग्रता को ही राजयोग कहते हैं। इस अवस्था में जो योगी प्राप्त हो जाता है वह सृष्टिकर्ता तथा संहारकर्ता अर्थात् "कर्तुमकर्तुमन्यथाकर्तुं" ईश्वर के समान समर्थ हो जाता है तथा अखंड सुख को पाजाता है।

इस अवस्था में अनेक प्रकार के बाजों की ध्वनि सुनाई पड़ने लगती है सुंदरदासजी ने इसका वर्णन इसभाँति किया है।

प्रथम भँवर गुंजार शंख ध्वनि दुतिय कहीजे।
तृतिये बजई मृदंग चतुरथे ताल सुनीजे॥
पंचम घंटानाद षष्ठ वीणाधुन होई।
सप्तम बजई भेरि अष्टमे दुंदुभि दोई॥
नवमे गर्ज समुद्र की दशम मेघ घोषइ गुनै।
कह सुंदर अनहदनाद को दशप्रकार योगी सुनै॥ १॥

३६ प्रकार के कुल बाजे होते हैं—

मंडल वीन रबाब अनोप तंबूर उपंगह।
बख सुसुरह पिनाक कुमायच पुंग सुरंगह॥
वंशी परगह बांश कानूटक ताल सुपिंगी।
तूर भेरि सहनाइ पाव रणसंग दर सिंगी॥
करनाट पणव आनक मुरज डफ सुडाक डमरू छजै।
जलतरँग जाँझ मंजीर मिल खटहत्रिंशबाजा बजै॥ १॥

कोई कहते हैं कि कुल बाजाओं का भेद साढ़े तीन प्रकारकाही है।

ताल फूँक अरु तार के अर्ध नकीरी लीन।
सब ही या संसार में बाजे साढ़े तीन॥ १॥

चाहे जितने बाजे क्यों न हो अनहद नाद के आगे तो सर्व संसारभर के बाजे तुच्छ हैं, उसकी उपमा तो हद के बाहर ही है इसीसे उसका नाम अनहद है। अथवा स्वयमेव बजने से अनाहत है इसलिये उसका वर्णन अवर्णनीय है। इस अनहद नाद की प्राप्ती होने के पश्चात् तो परमपद को प्राप्त हो ही जाता है।

जब षट्चक्रों को भेदन करता हुआ प्राणरूपी हंस शून्य सरोवर पर (त्रिकुटी में) पहुंच जाता है, तब वह सुन (निश्चल तथा शून्य स्थिति का) होजाता है और उस शून्य सरोवर में ब्रह्मानंदरूपी मोती का चूण मुख के विना ही हंसरूपी प्राण चुगने लगता है (आनंदास्वादन करने लगता है) जिस से आत्मा और अखिल ब्रह्मांड एकही मालूम होने लगता है, इसलिये "सर्वं खल्विदं ब्रह्म" "एकमेवाद्वितीयं ब्रह्म" इत्यादि महावाक्यों का जो अर्थ है उसका ज्ञान प्राप्त होजाता है और विना जिह्वा के ("यतो वाचो निवर्तंते अप्राप्य मनसा सह") "प्रज्ञानमानंदं ब्रह्म" इस प्रकार आनंददायक पद के गुण गाने लग जाता है ॥ १३ ॥

ऐसी स्थिति होने के पश्चात् जब प्राणरूपी हंस अंबर घर (ब्रह्मरंध्र-रूपी महा आकाश) में प्रवेश करता है और ब्रह्मसे साक्षात्कार होने में तत्पर होता है तब मानों उसको परब्रह्म की ओर से तदाकार वृत्ति करने को बधाने के लिये अनहदनाद बजने लगता है। जिसमें नोबत, निसाण, दिल, दिवाण, भेरी, मृदंग आदि अनेक बाजों का नाद सुनाई पड़ने लगता है ॥ १४ ॥

मन शिक्खर मिलिया त्रयगढ भिलिया पद चोथा पावंदा है ॥
अध मिल उर्धो पवन निरुध्धा ध्यान समाधि लगंदा है ॥ १५ ॥

अनाहतस्य शब्दस्य ध्वनिर्य उपलभ्यते।
ध्वनेरंतर्गतं ज्ञेयं ज्ञेयस्यांतर्गतं मनः ॥ १ ॥
मनस्तत्र लयं याति तद्विष्णोः परमं पदम् ॥
(हठयोगप्रदीपिका प्र० उप० ४)

१ ध्यान और समाधि के लक्षणः—

ध्यान—

१ तत्र प्रत्ययैकतानता ध्यानम्।
नाभि आदि देशों में ध्येय का जो ज्ञान होता है वह ध्यान है।

२ ध्यातृ-ध्येय-ध्यान-कलना वद् ध्यानम्।
ध्यान करनेवाला और जिसका ध्यान किया जाय तथा ध्यान इन तीनों का अभेद जिसमें प्रतीत हो वह ध्यान कहलाता है।

३ धारणयोग्यदेशे अखंडतैलधारावत् प्रवाहो ध्यानम्।

३ ध्येय की और अखंड मनोवृत्ति तैलधारा के समान लगी रहे उसको ध्यान कहते हैं। तद्रहित समाधि कहाती है।

१ ध्यान के भेद दो प्रकार के होते हैं—

१ एक पूर्व ध्यान।

२ दूसरा पश्चिम ध्यान।

पूर्वध्यानः—नाभिदेश से तथा पादांगुष्ठ से हठ क्रियाद्वारा प्राण को ऊपर चढाने को कहते हैं। इसमें ॐकार का जप करना होता है और इस ध्यान में अनेक विघ्न उपस्थित होते हैं। पूर्व ध्यानी पुनर्जन्म पाता है।

पश्चिमध्यानः—राममंत्र का स्मरणपूर्वक पश्चिमतान से प्राण को ऊपर चढाने को कहते हैं इस से मोक्ष की प्राप्ति होती है।

द्वावेव शोभनौ मुक्तिपन्थानौ योगसंमतौ।
एकस्तु पश्चिमश्चैव द्वितीयः पूर्व उच्यते ॥ १ ॥
राममंत्रं चाधिकृत्य पन्थास्तिष्ठति पश्चिमः ॥
ओमित्यधिकृत्यास्ते पन्थास्तु पूर्वसंज्ञितः ॥ २ ॥
पूर्वस्मात् पुनरावृत्तिः पश्चिमान्मोक्षमश्नुते ॥ (गुह्योद्घाटनतंत्र)

पश्चिममार्ग का सविस्तर वर्णन देखना चाहैं वह "योगशिखोपनिषत्" देखलेवें।

पश्चिममार्ग के ध्यान की रीति कुछ वर्णन की जाती है—

योगशास्त्र में नाना प्रकार के आसन कहे हैं, जितने प्रकार के जीव हैं उतने ही प्रकार के आसन हैं। जीव चौरासी लाख बतलाये गये हैं अतः आसन भी उतने ही हैं, इन सब में से ८४ आसन मुख्य हैं। इनमें भी सिंहासन, भद्रासन, मयूरासन, कुक्कुटासनादि १६ आसन उत्तम माने हैं। इन सोलह में भी १ पद्मासन २ सिद्धासन सर्वोत्तम माना है। इन दो आसनों में भी सिद्धासन उत्तमोत्तम माना है। इस लिये पश्चिमध्यान साधन समय में सिद्धासन लगाकर बैठना चाहिये।

सिद्धासन के लक्षण हठयोगप्रदीपिका में इस प्रकार लिखे हैं—

योनिस्थानकमंघ्रिमूलघटितं कृत्वा दृढं विन्यसेत्
मेढ्रे पादमथैकमेव हृदये कृत्वा हनुं सुस्थिरम्।
स्थाणुः संयमितेन्द्रियोऽचलदृशा पश्येद्भ्रुवोरन्तरम्
ह्येतन्मोक्षकपाटभेदजनकं सिद्धासनं प्रोच्यते ॥ १ ॥

तात्पर्य—बायें पाँव की एडी को योनिस्थान के मध्य में लगाके (गुदा और उपस्थेंद्रिय के मध्य भाग का नाम भग किंवा योनि है जिसको सीवन भी कहते हैं) उस स्थान को बाँये पाँव की एडी से जोर से दबावे और दहिने पाँव को उठाकर इंद्री की जड़ में एडी को लगाकर नीचे को दबावे (मूलबंध करे) इस रीति से सीधा बैठकर फिर ठोडी को हृदय से ४ अंगुल ऊपर मजबूती से जमावे (जालंधरबंध करे)

और सूखे काष्ठके समान करड़ा होकर सर्व इन्द्रियों को अपने काबू (वश) में करके नेत्रों को अचल दृष्टि से भृकुटी के मध्य में लगाकर बैठने को सिद्धासन कहते हैं। यह सिद्धासन मोक्षद्वार के कपाट को भेदन करनेवाला (मुक्ति को देनेवाला) कहा है।

योगशास्त्र में इस आसन का नाम सिद्धासन कहा है और इसको ही वज्रासन, मुक्तासन, गुप्तासन आदि कई नामों से पुकारते हैं। और फलस्तुति में भी "मोक्ष-कपाटभेदजनकम्" यह वाक्य कहकर "नासनं सिद्धसदृशम्" परमावधि लिखा है इससे प्रमाणित होता है कि इस के समान कोई अन्य आसन नहीं है, परंतु इसकी जितनी महिमा वर्णन की है उतना उसका कारण नहीं बताया गया। यदि कारण बताया जाता तो इसकी महत्ता हृदयंगम होने से सिद्धासन की सिद्धियों का पता चल जाता। इसको परमोत्तम बताने का कारण जानने योग्य है इसका सविस्तर वर्णन कहीं नहीं मिलता है अत एव यहां उस का वर्णन करना आवश्यक जानकर किया जाता है।

"योनिस्थानकमंघ्रिमूलघटितं" इस पूर्वोक्त श्लोक में सिद्धासनसाधन की ५ बातें मुख्य मानी गई हैं—

१—योनिस्थान को दृढता से एड़ी से दबाना।

२—ठोडीको हृदयसे ४ अंगुल ऊपरवाले स्थानमें सुस्थिर (दृढ) जमाना।

३—स्थाणु (काष्ठ) के समान सीधा कड़ा होकर बैठना।

४—संयमितेंद्रिय अर्थात् इंद्रियों को दमन करना।

५—नेत्रों को अचलदृष्टि से भ्रुकुटि के मध्यमें जमाना।

इन पांच बातों के करने से सिद्धासन होता है। इनका क्रमानुसार वर्णन इस तरह है।

पहिली—योनिस्थान को एडी से दबाने का प्रयोजन सुषुम्ना को जागृत करने का है। योनिस्थान (सीवन) में सुषुम्ना का ठीक विवरस्थान है। सुषुम्नाको सिद्ध करना ही योग का पर्यवसान है। इस ग्रंथ मे श्रीहरिरामदासजी महाराजने फरमाया है—"सुख-मण की घाटी चढिया वाटी अरस घराँ ठहरंदा है" तथा "सुषुम्ना शून्यपदवी ब्रह्मरंध्र-महापथः" इत्यादि वाक्यों से सुषुम्ना ही मोक्षपदवी है इसी सुषुम्ना के द्वारा पश्चिम योग ध्यानसाधक योगी का वंकनाल से ऊर्ध्वगमन होता है। सुषुम्ना के विवर में कुंडलिनी नाड़ी साढ़े तीन आंटे लगाकर कुटिलाकृति से सर्पिणी के समान अपने मुख में पूँछको दबाकर सुषुम्नामार्ग के द्वार (छिद्र) को रोके बैठी है जो योगीको सुषुम्नातक जाने देती नहीं है इसीलिये बाँये पाँव की एड़ी से योनिस्थान को दृढ दबाने से मूल-बंध होगा और अपान वायु की ऊर्ध्वगति होगी जिससे एक प्रकार की प्रबल ऊष्मा उत्पन्न होती है उसी के कारण वह योनिस्थानस्थ कुंडलिनी जागृत होकर सुषुम्नामार्ग को अपना मुख हटाकर रास्ता दे देती है। जिससे योगीलोग सुषुम्नामार्ग में प्राण अपान को प्रवेशकर अपने स्वरूप के आनंद को प्राप्त होते हैं।

दूसरी—हृदय में चिबुक को दृढता से जमाने की है=उससे जालंधरबंध होता है। जालंधरबंध होने से प्राण वायु की गति अधोगामिनी होती है और प्राण अपान

वायु से मिलकर सुषुम्ना के द्वार में प्रवेश करने योग्य हो जाता है इस कारण हृदयमें चिबुक (ठोडी) को दृढता से जमा के बैठने के लिये लिखा है ।

तीसरी—स्थाणु के समान सीधा बैठना=उसका प्रयोजन है, कि सीधा अकड़ कर बैठने से श्वासोच्छ्वास की गति बराबर सीधी आने जाने से सुषुम्ना में प्रवेश होने में कठिनाई नहीं पडती, तथा अन्य किसी नाड़ी में प्राण अपान प्रवेश नहीं कर सकते अगर (ऋजुकाय नहीं बैठने से) अन्य नाडी में वायु प्रवेश हो जावे तो मृत्यु तथा महाव्याधियों का उत्पन्न होना संभव है ।

समं कायशिरोग्रीवं धारयन्नचलं स्थिरः ।
संप्रेक्ष्य नासिकाग्रं स्वं दिशश्चानवलोकयन् ॥ १ ॥
प्रशांतात्मा विगतभीर्ब्रह्मचारिव्रते स्थितः ।
मनः संयम्य मच्चित्तो युक्त आसीत मत्परः ॥ २ ॥

श्रीमद्भगवद्गीता के उक्त श्लोकों में भी ऋजुकाय (सीधा अकडकर) बैठकर योगाभ्यास करने के लिये लिखा है जिससे कुंभकादि साधन अच्छी तरह से हो जाय ।

और प्राण अपान वायु दूसरी नाडियों में प्रवेश न करे इसी कारण स्थाणु पद देकर भी सिद्धासन में बैठना लिखाहै । सच पूछो तो एक सिद्धासन ही सर्व योगसाधन की कुँजी है । इसीलिये सिद्धासन मोक्षद्वार के किवाड़ तोड़ने का बडा वज्रासन है ।

चौथी—इंद्रियों को काबू में रखकर बैठने की है । अगर इनको स्वाधीन न की जाय तो मन स्थिर नहीं होगा और इसके स्थिर न होने से योग की सिद्धि प्राप्त करना भी असंभव है । अतः इंद्रियों का दमन करना ही पहिला काम है।

यततो ह्यपि कौंतेय पुरुषस्य विपश्चितः ।
इंद्रियाणि प्रमाथीनि हरंति प्रसभं मनः ॥ १ ॥
तानि सर्वाणि संयम्य युक्त आसीत मत्परः ।
वशे हि यस्येंद्रियाणि तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता ॥ २ ॥ (श्रीमद्भगवद्गीता)

इंद्रियों के दमन करने के लिये प्रयत्न करनेवाले विद्वान् के भी मन को हे कुंतीपुत्र ! ये प्रबल इंद्रियां बलात्कार से मनमानी और खींच ले जाती है । अतएव इन सब इंद्रियों का संयमन कर युक्त अर्थात् योगयुक्त और मत्परायण होकर रहना चाहिये । इस प्रकार जिसकी इंद्रियां अपने स्वाधीन हो जाँय (कहना चाहिये) उस की बुद्धि स्थिर होगई ।

ऐसा स्थिर बुद्धि होकर बैठने के लिये ही "संयमितेंद्रिय" यह पद सिद्धासन में दिया है ।

इतना तो मालूम हो ही गया है कि इंद्रियों का वेग बडा ही बलवान् होता है परन्तु इनमें भी शिश्न और रसना दो इन्द्रियाँ बडी प्रबल हैं प्रायः इन्ही से सैतानी

और चपलता होती है। इन नाड़ियों का स्थान पाँव के पीछे बाहर की तरफ टखने और नड़े के बीच में है। जो यहां से ये नाड़ियाँ पिंडली और जंघा में से ऊपर को जाती हैं। और इन्हीं से इन्द्रियों को प्रबलता प्राप्त होती है। (डाक्टर लोग भी सैतान आदमियों की इन नाड़ियों को काट देते हैं जिससे उनकी ये इंद्रियां निकम्मी हो जाती हैं) योगमें इसके लिए बहुत ही सरल उपाय बताया गया है। जिससे किसी प्रकार की तकलीफ न हो और वे प्रबल इंद्रियें स्वाधीन हो जाती हैं। योगिराज श्रीजैमलदासजी महाराज ने सिद्धासन में भी एक नया लक्षण दिखाया है जिससे ये प्रबल इंद्रियां स्वयं विना कठिनाई के स्वाधीन हो जाती है—

"जंघनपर कर धारि के वे सम आसण चितलाय"

अर्थात् हठयोगप्रदीपिका के अनुसार ही सिद्धासन कर के बैठो परंतु दोनों हथेलियों के तलवों को जाँघोंपर धारणा करो। तात्पर्य यह है कि हथेली तलके दबाव से एक प्रकार की विद्युत् शक्ति उत्पन्न होती है वह सर्व शरीर में अपने प्रभाव का प्रसार कर उन प्रबल इन्द्रियों के वेग को दमन कर अपने स्वाधीन कर लेती है। अत एव सिद्धासन से बैठकर सर्व इन्द्रियों का दमन और मन को समाहित करने के लिये दोनों हाथों की हथेलियों को जोर से जांघों पर जमा कर बैठना चाहिये।

पांचवीं—नेत्रों को अचलदृष्टि से भृकुटी के मध्य जमाकर बैठने की है। ऐसा करने का मुख्य प्रयोजन मन की चंचल वृत्ति को स्थिर करना और ध्येय में तल्लीनता प्राप्त कर समाधि अवस्था प्राप्त करना है।

भ्रूमध्यस्थान में नेत्रों को अचल दृष्टि से जमा कर बैठने से खेचरी नामकी मुद्रा होती है।

सूर्याचन्द्रमसोर्मध्ये निरालम्बांतरं पुनः।
संस्थिता व्योमचक्रे या सा मुद्रा नाम खेचरी ॥ १ ॥

(हठयोगप्रदीपिका)

अर्थात् इड़ा पिंगला नाडी के बीच में निरालंब भ्रूप्रदेश (आकाशस्थान) में मनोवृत्ति स्थित हो जाने को खेचरी मुद्रा कहते हैं।

इस खेचरी मुद्रा के अभ्यास से उन्मनी अवस्था स्वयंसिद्ध हो जाती है।

"अभ्यस्ता खेचरी मुद्राप्युन्मनी संप्रजायते"

इसलिये खेचरी का एक भेद उन्मनी है ऐसा कहसकते हैं।

शंखदुंदुभिनादं च न श्रृणोति कदाचन।
काष्ठवज्जायते देह उन्मन्यावस्थया ध्रुवम् ॥ १ ॥

उन्मनी अवस्थामें असंप्रज्ञात निर्विकल्प समाधि के लक्षण हो जाते हैं इससे चतुर्थपद की प्राप्ति होती है।

चतुर्थ पद के लक्षण—

भ्रुवोर्मध्ये शिवस्थानं मनस्तत्र विलीयते ।
ज्ञातव्यं तत्पदं तुर्यं तत्र कालो न विद्यते ॥ १ ॥

भ्रूमध्यस्थान में शिव का स्थान है उसमें जब मन विलीन हो जाता है तब तुर्य पद (चतुर्थपद) प्राप्त हो जाता है ऐसा जानो । इसमें कोई कालकी (समयकी) अवधि नहीं है । क्योंकि भ्रूमध्यस्थानमें अचलदृष्टि जमाके मनको उसमें विलीन करनेसे ही चतुर्थपद की प्राप्ति होती है । इसीलिये सिद्धासन में अचल दृष्टिसे भ्रूमध्यको देखना बतलाया है ।

रामस्नेहिसंप्रदायके आदि योगिराज श्रीजैमलदासजी महाराज ने भी चाचरी अगोचरी मुद्रा को इंगितकर यही बात कही है—

"निरत धरे निजनासिका वे सुनमें सुरत समाय"

अर्थात् निज नासाग्रभाग पर दृष्टि जमा के स्थिर होने को चाचरी मुद्रा कहते हैं । गीताजी में भी इसीको जमानेका लिखाहै—

"संप्रेक्ष्य नासिकाग्रं स्वं दिशश्चानवलोकयन्"

तथा "सुनमें सुरत समाय" इस पदसे चौथी अगोचरी मुद्रा बताई हैं ।

मुद्रा पांच होती हैं:—

चाचरि, भूचरि, खेचरी, और अगोचरि नाम ।
उन्मनि मिल यह मुद्रिका, पंच लखहु सुखधाम ॥ १ ॥
अब सुन मुद्रा पंचविध, प्रथम खेचरी होय ।
मुखमें तास निवास है, बढवे जीभ विलोय ॥ २ ॥
दूसरि मुद्रा भूचरी, नासा जासु निवास ।
प्राणापान जुदी जुदी, कर देवे इक पास ॥ ३ ॥
तीजी मुद्रा चाचरी, वसे दृगन विच सोपि ।
नासा आगे दृष्टि धरि, देखे अचरज कोपि ॥ ४ ॥
चोथी मुद्राऽगोचरी, करत श्रवणमें वास ।
ज्ञान सुरत इक होत है, अनहद शब्द प्रकाश ॥ ५ ॥

पांचवी उन्मनी मुद्रा है जिसका स्थान दशमद्वार है, इसकी सिद्धिके लिये ही तो सब कुछ करना पड़ता है । समाधि की सिद्धि इसी से ही होती है । यह स्वयं समाधि-रूप है । इस प्रकार पांचों मुद्राओं का साधन सिद्धासन से सिद्ध होता है । ये पांचों मुद्रा निश्चल दृष्टि से नासांत (भ्रूमध्यभाग) वा नासाग्रभाग मे दृष्टि जमाने से सिद्ध होती है । अतएव भ्रूमध्यमें निश्चल दृष्टि जमा के सिद्धासन में बैठने से सर्व मुद्रा सिद्ध होना बतलाया है । उपरोक्त पाँचों बातों को लक्ष्य में रखकर देखा जाय तो सिद्धासन कोई साधारण नहीं है, क्योंकि योगशास्त्रमें सारभूत और मोक्षद्वार के कपाट का भेदन कर सिद्धिका दाता यही कहा है, इसलिये ऐसा विश्वास है कि जिसको

केवल यह सिद्ध हो जाता है, वह परमपदका भागी होता है। इस प्रकार सिद्धासन लगाकर पश्चिमध्यानाभ्यासी योगी बैठे और मुखसे राममंत्र का जप करता हुवा रसना १ कंठ २ हृदय ३ नाभि ४ इन चार स्थान में क्रम से प्राणों का निरोध करे। प्रथम पूर्व ध्यान जो नाभि से सीधा हृदयादि स्थान में होकर भ्रुकुटीदेश में जाता है वहीं त्राटक ध्यान होता है।

पूरब ध्यान भया जब ताटक।
खुला सहज गगन का फाटक॥

भ्रूमध्य में प्राण के रुकने को त्राटक कहते हैं, यह होने के पश्चात् क्रम से जिन जिन स्थानों में होता हुआ ऊपर गयाथा उन्हीं स्थानों में से होता हुआ नीचे नाभी में आकर पाताल में (आधार चक्र से नीचे के अंगों की पातालसंज्ञा मानी है, जैसे कटिप्रदेश को अतल, लिंगप्रदेश को वितल, गुह्यप्रदेश को सुतल, जंघाप्रदेश को तलातल, गुल्फप्रदेशको रसातल, पादप्रदेश को महातल, पादतल को पाताल माना है) जाकर फिर बंकनाल में पृष्ठ वंशांतरगत सुषुम्ना में प्रवेश होकर मेरुदंड में जो २१ ग्रंथियाँ हैं उनको छेदन करता हुआ पृष्ठ त्रिकुटी में पहुँच कर सुषुम्ना नाड़ी के द्वारा दशमद्वार (ब्रह्मरंध्र) में प्रवेश करता है। तब योगी जीवन्मुक्त हो जाता है। त्रिकुटी तक तो माया तथा मृत्यु है।

त्रिकुटी ताँईं रामदास, पड़ै काल की घात।
त्रिकुटी पहुँता सुन गया, जाकी पूरण वात॥ १॥
मन मनसा का रामदास, त्रिकुटी ताँईं सूत।
आगै केवल ब्रह्म है, जहाँ माया नहिं भूत॥ २॥
रामदास वीसोवरष (१८२०), तामें काती मास।
ता दिन छाँडी त्रिकुटी, किया ब्रह्म में वास॥ ३॥

(श्रीरामवाक्यम्)

इस प्रकार ध्यान करने को पश्चिमध्यान कहते हैं इस ध्यान को करनेवाले मुक्त हो जाते हैं। एवं ध्येय का ध्यान करते करते जब ध्याता की वृत्ति अभेदात्मक स्थिर हो जाती है तभी समाधि अवस्था प्राप्त होती है।

२ समाधि—

१ तदेवार्थमात्रनिर्भासं स्वरूपशून्यमिव समाधिः।
२ धातृ-ध्येय-ध्यान-कलनावद् ध्यानं तद्रहितं समाधिः।

ध्यान अर्थ मात्र रहजाय और स्वरूप शून्यसा प्रतीत हो उसे समाधि कहते हैं। ध्येय में एकाग्रचित्तवृत्ति की स्थिति को समाधि कहते हैं। इस स्थिति में ध्याता (योगी) ध्यान (चिंतवन) ध्येय (वस्तु) इन त्रिपुटी की कल्पना जिसमें हो वह सविकल्प तथा संप्रज्ञात समाधि कहाती है। और जिसमें ध्यातृ आदि त्रिपुटी का

स्फुरण तक नहीं हो वह निर्विकल्प समाधि तथा असंप्रज्ञात समाधि कहाती है। इसके लक्षण योगशास्त्र में ये हैं।

सलिले सैंधवं यद्वत् सात्म्यं भजति योगतः।
तथात्ममनसोरैक्यं समाधिरभिधीयते ॥ १ ॥

अर्थात् जिस प्रकार जलमें सैंधव (नमक का टुकड़ा) एकरूप हो जाता है इसी प्रकार योगी समाधि अवस्थामें आत्मा और मनकी एकता को प्राप्त हो ब्रह्ममें लीन हो जाता है। और उसको देहसंबंधी कुछ भी ध्यान नहीं रहता उसी को समाधि अवस्था कहते हैं।

यह समाधि दो प्रकार की होती है।

एक जड़समाधि. दूसरी चेतनसमाधि.

चेतनसमाधि के दो भेद हैं.

एक पिपीलिकामार्ग. दूसरा विहंगममार्ग.

विहंगममार्ग के भी दो भेद हैं—

एक युंजानयोगी. दूसरा युक्तयोगी.

परंतु ये सब भेद संप्रज्ञात तथा असंप्रज्ञात समाधिके अंतर्गत आचुके हैं। अतएव मुख्य समाधि दो प्रकार की ही हैं

समाधि के पर्यायवाचक शब्द १५ हैं—१ राजयोग २ समाधि ३ उन्मनी ४ मनउन्मनी ५ अमरत्व ६ लय ७ शून्याशून्य ८ परंपद ९ अमनस्क १० अद्वैत ११ निरालंब १२ निरंजन १३ जीवन्मुक्ति १४ सहजावस्था १५ तुर्या।

समाधि का दूसरा क्रम स्कंदपुराण में इस प्रकार लिखा है।

एकश्वासमयी मात्रा प्राणायामे निगद्यते।
प्राणायामद्विषट्केन प्रत्याहार उदाहृतः ॥ १ ॥
प्रत्याहारद्विषट्केन धारणा परिकीर्तिता।
भवेदीश्वरसंगत्यै ध्यानं द्वादशधारणम् ॥ २ ॥
ध्यानद्वादशकेनैव समाधिरभिधीयते।
यत्र समाधौ परं ज्योतिरनंतं स्वप्रकाशकम् ॥ ३ ॥

प्राणायाम में एक श्वास की मात्रा।

बारह प्राणायाम का एक प्रत्याहार।

बारह प्रत्याहार करने से एक धारणा।

बारह धारणा का साधन करने से एक ईश्वर से संगति प्राप्त करनेवाला ध्यान प्राप्त होता है।

इस प्रकार के ध्यान वारंवार करने से एक समाधि होती है। इस समाधि अवस्थामें परमज्योति अनंत स्वप्रकाशमय परब्रह्म परमात्मामें तल्लयता प्राप्त हो जाती है।

धारणा पंचनाडीभिर्ध्यानं षष्टिकनाडिकम् ।
दिनद्वादशकेन स्यात्समाधिः प्राणसंयमात् ॥ १ ॥ (गोरक्षपद्धति)
निर्गुणो ध्यानसंपन्नः समाधिं च ततोऽभ्यसेत् ।
दिनद्वादशकेनैव समाधिं समवाप्नुयात् ॥ १ ॥ (मार्कंडेयपुराण)
षट् श्वासा की एक पल, इसा सास सो खाय ।
छठे महीने खेतसी, सुरति मेरु चढ जाय ॥ १ ॥ (खेतसीयोगीराज)

ऐसी दशा प्राप्त होने का मुख्य साधन योग है । इस विषय के संबंध में पहिले बहुत कुछ लिखा जा चुका है उससे जो कुछ अवशिष्ट रहगया है उसीका दिग्दर्शन संक्षेप से यहां कराया जाता है ।

योग का सब खेल यथावत् मन और वायु के ऐक्य होनेसे ही सिद्ध होता है। क्योंकि जब इनकी एकता होगी तब चित्त एकाग्र होकर जिस काम में लगेगा तो वह कार्य अवश्य ही सफल होगा । भगवान् पतंजलि ने भी योगदर्शन में लिखा है ।

१ योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः ।
२ युज्यतेऽसौ योगः ।
चित्त की वृत्ति के निरोध को योग कहते हैं । १ ।
जो युक्त किया जाय उसको योग कहते हैं । २ ।
योग दो प्रकार का होता है—
एक हठयोग और दूसरा राजयोग ।

हठयोग में आसनाभ्यास की तथा आग्रहयुक्त और हठयुक्त नियमों की प्रधानता होती है ।

राजयोग में ध्यानधारणाद्वारा मनःसामर्थ्य वढानेका महत्त्व विशेष है तथा आत्मशक्ति का अनुभव लेना मुख्यतया होता है इन दोनों में से राजयोगकी प्रशंसा अधिक की है । राजयोग को ही सहजयोग, सहजावस्था और समाधि कहते हैं । सर्व हठयोग के उपाय राजयोगकी सिद्धि के लिये ही किये जाते हैं जब राजयोगसिद्ध हो जाता है तो पुरुष मृत्यु को भी जीत लेनेवाला हो जाता है ।

सर्वे हठलयोपाया राजयोगस्य सिद्धये ।
राजयोगसमारूढः पुरुषः कालवंचकः ॥ १ ॥

अतएव राजयोग ही योगों में प्रधान माना गया है ।

योग के अष्टांग

१ यम, २ नियम, ३ आसन, ४ प्राणायाम, ५ प्रत्याहार, ६ धारणा, ७ ध्यान, ८ समाधि ।

यम—१ अहिंसा २ सत्य ३ अस्तेय ४ ब्रह्मचर्य ५ अपरिग्रह ।
नियम—१ शौच २ संतोष ३ तप ४ स्वाध्याय ५ ईश्वरप्रणिधान ।

आसन—चौरासी लक्ष हैं उनमें से जो मुख्य हैं उन का वर्णन पश्चिमध्यान साधन में देखिये।

प्राणायाम—तस्मिन् सति श्वासप्रश्वासयोर्गतिविच्छेदः प्राणायामः। पद्मासन सिद्धासन में से कोई भी आसन लगाके श्वास प्रश्वास की गति को रोक कर बैठने को प्राणायाम कहते हैं। इसके तीन प्रकार हैं १ पूरक २ कुंभक और ३ रेचक।

लक्षण—

इडया पवनं पिब षोडशभिश्चनुरुत्तरषष्टिकमौदरकम्।
त्यज पिंगलया शनकैः शनकैर्दशभिर्दशभिर्दशभिर्द्व्यधिकैः॥ १॥

अर्थात्—वाम नासापुट से सोलहवार प्रणवस्मरण करता हुवा वायु को ऊपर खींच-कर पान करे (इसी को पूरक कहते हैं) तत्पश्चात् उस वायु को ६४ चौसठ वार ॐकार का स्मरण करने पर्यंत उदर के भीतर धारण कर रखे (इसको कुंभक कहते हैं) तत्पश्चात् दाहिने नासापुट से उस वायु को धीरे धीरे बतीस वार ॐकार स्मरण की मात्रा के प्रमाण से बाहर निकाले फिर कुछ देर बाहर श्वास को रखे फिर दहिने नासापुट से १६ सोलह वार वायु खींचे। इस भाँति ६४ वार में कुंभक (धारण करना) ३२ वार में रेचक और १६ वार में पूरक करे ऐसा तीन वार करने से एक प्राणायाम होता हैं।

इस प्राणायाम के दो भेद हैं सगर्भ और अगर्भ। जिस में ॐकार तथा राममंत्र का जप और ध्यान हो वह सगर्भ है। और जिसमें प्राणायाम के सिवाय जप ध्यान वगैरह कुछ भी नहीं किया जाता है वह अगर्भ है। अगर्भ से सगर्भ प्राणायाम १०० गुणा अधिक फलदायक है।

जपध्यानं विनाऽगर्भः सगर्भस्तत्समन्वयात्।
अगर्भात् गर्भसंयुक्तः प्राणायामः शताधिकः॥ १॥ (महाभारत)
जाप्येन तु जपं कुर्यादविलंबितमद्रुतम्।
मनसैव प्रसंख्यातं प्राणायामविधौ सदा॥ २॥ (नंदिपुराण)

अर्थात् सगर्भ प्राणायाम में जप करना वह न तो अधिक धीरे से न अधिक जल्दी से करना समानवृत्ति से मन ही मन में गिनती लगाके जप करना चाहिये। इस रीति के साधन को प्राणायाम कहते हैं। इसके और भी कई भेद हैं यथा १ जघन्य, २ मध्यम, ३ उत्कृष्ट। और कुंभक ८ प्रकार का है १ सूर्यभेदन, २ उज्जाई, ३ सीत्कारी, ४ शीतली, ५ भस्त्रिका, ६ भ्रामरी, ७ मूर्छा, ८ प्लावनी, इनके करने से कुंडलिनी जागृत होती है।

प्रत्याहार—जो पांचों इंद्रियों के शब्दादि विषयों से मनको हटाने से होता है। इसके भी पांच भेद हैं कई कई इसके अठारह भेद भी कहते हैं।

ऐसे अनहद नाद को श्रवण करता हुवा मन जब ब्रह्मरंध्र में प्रवेश कर परब्रह्म से मिलजाता है तब त्रिगढ़ अर्थात् हृदय, कंठ, भ्रूमध्य, स्थानस्थ तीनों प्रबल ग्रंथिरूप गढ़ (किले) को भेदकर ब्रह्मपद, विष्णुपद और रुद्रपदरूपी तीनों पदसे भी पर परब्रह्मरूपी चौथे परमानंद पद को प्राप्त हो जाता है। इस प्रकार से जब अपानवायु प्राणवायु से मिलकर कुंभकद्वारा निरुद्ध होता है तब चित्तका ध्यान उस परब्रह्म परमात्मा की ओर लगने और ध्येयाकार वृत्ति प्राप्त होने से समाधि लगाने की अवस्था प्राप्त हों जाती है।

अष्टादशसु यद्वायोर्मर्मस्थानेषु धारणम्।
स्थानात् स्थानात् समाकृष्य प्रत्याहारो निगद्यते ॥ १ ॥

धारणा—एक लक्ष्य पर वा ध्येय पर चित्तवृत्ति स्थिर करने को कहते हैं। यह धारणा ५ प्रकार की है—१ स्तंभनी २ द्राविणी ३ दाहिनी ४ शोषणी ५ भ्रामणी। ये पृथिव्यादि पंचभूतों की है। शरीर में इनके ये स्थान हैं

१ पादादिजानुपर्यंतं पृथिवीस्थानमुच्यते।
२ आजानोः पायुपर्यंतमपांस्थानं प्रकीर्तितम् ॥ १ ॥
३ आपायोर्हृदयान्तं यद्वह्निस्थानं तदुच्यते।
४ हृन्मध्यात्तु भ्रुवोर्मध्ये यावद्वायुकुलं भवेत् ॥ २ ॥
५ आभ्रूमध्यात्तु मूर्धान्तमाकाशस्थानमुच्यते ॥

इन पांचों स्थानों में पांच पांच घटिकापर्यंत प्राण रोक कर ब्रह्मादि देवता का ध्यान करने से भूमि आदि पांच तत्वों का जय हो जाता है।

ध्यानः—तत्र प्रत्ययैकतानता ध्यानम्।

समाधिः—तदेवार्थमात्रनिर्भासं स्वरूपशून्यमिव समाधिः। इनके सिवाय नेती, धोती, ब्रह्मदाँतन, गजकर्म, नौली, वस्ती, गणेशक्रिया, वागीशकर्म, शंखपखाली, त्राटक आदि साधन तथा १ महामुद्रा २ बंधमुद्रा ३ महावेधमुद्रा ४ खेचरीमुद्रा ५ उड्डियानमुद्रा ६ मूलबंधमुद्रा ७ जालंधरमुद्रा ८ विपरीतकरणीमुद्रा ९ वज्रोलीमुद्रा १० शांभवीमुद्रा ये दश महामुद्रा हैं। इनका साधन करने से चित्तको शांति प्राप्त होती है। और लयावस्था भी शीघ्र प्राप्त होती है इनका विस्तारपूर्वक वर्णन "गोरक्षपद्धति" "हठयोगप्रदीपिका" "शिखोपनिषद्" आदि योग के ग्रंथों में देखिये। इन पूर्वोक्त साधनोंके क्रमाभ्याससे लयावस्था प्राप्त होती है।

आज कल के धूर्त योगी पाषंडी शरीरशुद्धिपूर्वक आत्मानुभव के लिये नही किंतु लोकमान्यता के लिये केवल नेती, धोती, ब्रह्मदांतुन, उड्डियानबंध, त्राटकादि क्रिया

धरिया नहिं धारूं अधर आधारूं सहजाँ सेवकरंदा है ।
दशमें मिल द्वारी लाई तारी अम्मर बींद वरंदा है ॥ १६ ॥
मनवा थिर पवना पांचूं दमना प्याला अजर पिवंदा है ।
निरमल जहां नूरा उदय अंकूरा परमानंद परसंदा है ॥ १७ ॥
तिरवेणी छाजै ब्रह्म विराजै निरभै राज करंदा है ।
झिलमिल्ला जोती ओत रु पोती जीव रु शीव मिलंदा है ॥ १८ ॥

जब समाधि अवस्था प्राप्त होती है उस समय नाम रूप धारण करनेवाले सगुण ब्रह्म की ध्यान धारणा मिटजाती है । और नाम रूप रहित निरंजन निराकार परब्रह्म परमात्मा का आश्रय (अवलंबन) प्राप्त कर स्वतः स्वाभाविक रीति से ही (आपसे आप) सेवा करने लगता है । एवं दशम द्वार (ब्रह्मरंध्र) में मन और प्राण मिलकर अमर बींद (परम पुरुष

दिखाकर योगकी बडी बडी डींगें मारते हैं । उन फर्रा वाजोंको योगी मत समझो, ये तो पेटभराई का रस्ता इन्होंने निकाल लिया है । इन धूर्तचालाक योगियों के फन्दे में आगये तो जर और जान दोनों से ही हाथ धो बैठोगे, सिवाय लोकमान्यताके खाली इन दिखाने की क्रियाओं में क्या पड़ा है—

मनकी मिटी न वासना नवतत कियो न नास ।
तुलसी केते पचिमरे देदे तनकों त्रास ॥ १ ॥
पाणी[1]मांही परगटी पावक[2] एक प्रचंड ।
सात[3] द्वीप साबत रह्या दग्धभया नवखंड[4] ॥ २ ॥

यदि आपको इसकी चाट लगगई है अभ्यास करना चाहते हैं तो चेटकमेटक बातें बनानेवाले चुट्टपुट्टियों के कथन को छोडकर अच्छे भजनानंदी योगिराज सद्गुरु की तलास करो कि जिस गुरु के पास अभ्यास करने से अपना जन्म सफल कर आप कृतकृत्य होजाँय ।

(टिप्पणीकार)

१ जाप न अजपा जहँ नहीं, तहँ नहिं सास उसास ।
हरिया जीव रु शीव का, एक अखंडी वास ॥ १ ॥
(हरि० वाक्यम्)

इसी अवस्था को निर्विकल्प समाधि कहते हैं ।

---

1 अंतःकरण । 2 ब्रह्मज्ञान । 3 सात धातु । 4 नव तत्व ।

परमात्मा) का करमेलन करता है। मानों मन प्राणरूपी स्त्री ने परब्रह्म-रूपी वरसे कर मेलन (हथ लेवा जोड़) कर विवाह किया है ॥ १६ ॥

मन की गति स्थिर होजाती है तब पांचों ही पवन (प्राण, अपान, समान, उदान, व्यान नाम के वायु) दमन (वशीभूत अथवा काबूमें) होजाते हैं। और अजर प्याला (ब्रह्मानंद रूपी प्याला) पीने लगजातेहैं। जहाँ निर्मल निर्विकार शुद्ध सच्चिदानंद स्वरूपी नूर (ज्योति) के दर्शन का अंकुर उदय होता है तहाँ परमानंद परब्रह्म की प्राप्ति होती है ॥ १७ ॥

जहां त्रिवेणी (त्रिकुटी स्थान) पर परब्रह्म विराजमान होकर निर्भय राज्य करता है उसी की झिलमिलज्योति (प्रकाशमानज्योति) में जीव और शिव (ब्रह्म) तिलमें तैल के समान ओतप्रोत होकर मिल जाते हैं ॥ १८ ॥

हरि हीरा पाया विणज हलाया तोल न मोल लहंदा है।
हरि हीरा होती पारख कोती खोट न चोट चढंदा है ॥ १९ ॥
मन पंचे रहता मुखा न कहता अंतर लिव लावंदा है।
सुध बुध को विसरी सुरत न निसरी पूरण ब्रह्म अनंदा है ॥ २०॥
जीवत जहाँ मुक्ती शिवसिल शक्ती जन्म न फेर मरंदा है।
अम्मी रस पीया जुगजुग जीया खालिक सिल खेलंदा है ॥ २१ ॥

हरिरामदासजी महाराज ने फरमाया कि मैंने ध्याता ध्यान ध्येय इस त्रिपुटी के ऐक्यतारूपी अनमोल हीरे को पाया फिर उसका विणज (व्यापार) शुरू किया तो न तो तोल ही ज्ञात हुआ और न मोल ही ज्ञात हुआ (अचिंत्य अतुल अमूल्य है) इस हीरे की परीक्षा कठिन है। यह हीरा ऐसा प्राप्त हुआ कि जो न तो कभी खोटा होवे न कभी चोट ही चढने का प्रसंग आवै ॥ १९ ॥

पंच=पंचायत में बैठकर निर्णय करनेवाला विचार करता जैसे मध्यस्थ पुरुष होता है वैसे ही इस शरीर में अंतःकरण का अगुआ मन-

रूपी पंच है उस हीरे की परीक्षा करनेवाला रहते हुए भी वह (मन) अपने मुखसे कुछभी वर्णन नहीं कर सका और भीतर ही भीतर लो लगादी और सब सुध बुध भूलगया, परंतु जो सुरत पूरण ब्रह्म आनंदरूप में बस गई थी वह नहीं निकली ॥ २० ॥

शिव और जीव का योग (मेल) सुषुम्ना में जहाँ हुआ बस यही जीवन्मुक्ति है और इसीसे जन्म मरण का फेरा मिट जाता है और अमृत-रस का पान कर युगोयुग जीवित रह अखिल ब्रह्मांड के स्वामी सच्चिदानंद आनंदकंद पूरण परब्रह्म परमात्मा से मिलकर खेलता रहता है ॥ २१ ॥

हंसा परहंसा एको अंसा सुन पर सुन सोहंदा है।
उड्डे विन पंखा मिले असंखा पार न को पावंदा है ॥ २२ ॥
जाहर जुग जोगी है अणभोगी ओघट घाट रमंदा है।
नाथन के नाथू मस्तक हाथू शिव ब्रह्मा सेवंदा है ॥ २३ ॥
हरिजन हरि जाणी वेद वखाणी शेष विष्णु ध्यावंदा है।
धरिया अवतारू अनँत न पारू रहता एक रहंदा है ॥ २४ ॥

जब आत्मा और परमात्मा दोनों एकरूप होकर परम शून्य स्थानमें विराजमान (सुशोभित) होते हैं अर्थात् आत्मा परमात्मा में तदाकार हो जाता है तब उसको विना पंख के उडनेकी सामर्थ्य प्राप्त हो जाती है। ऐसे अनगिनत आत्मा इस प्रकार लय होजाते हैं जिनका कोई पार नहीं है ॥ २२ ॥

जाहिरात में (प्रकटरूपमें) योगाभ्यासी योगी जान पडता है, परंतु अभोक्ता होकर वह औघट घाट में रमता रहता है। जिस के मस्तक पर ईश्वर के भी ईश्वर परमेश्वर का हाथ होजाता है। (परब्रह्म परमात्मा की जिसपर पूर्ण कृपा होजाती है) उसकी शिव ब्रह्मादि सर्व देवता सेवा करने लगजाते हैं ॥ २३ ॥

वेद कहते हैं जिनका शेष और विष्णु ध्यान करते हैं उन भगवान् को हरि के जनों ही ने जाना है। जिसने अनेक अवतार धारण किए जिसका न आदि है और न अंत है और जो सर्वदा एकही रहता है ॥ २४ ॥

अंतः नहिं करणू बाल न तरणू वृद्ध न को वरषंदा है।
पाषाण न पाती छाप न ताती थान न आन थपंदा है ॥ २५ ॥
अणघड़ अज्ञातू मात न तातू निराकार निर्द्वंदा है।
हाट न कोइ शहरू विणज न बोहोरू खरच न को खूटंदा है ॥२६॥
सूरा नहि सत्ती जोग न जत्ती जरा न जम पूजंदा है।
तीरथ नहि वरतू आभ न धरतू अकल कला आपंदा है ॥ २७ ॥
नारि न को पुरुषा चतुर न मुरखा वेद न चार वचंदा है।
अनुभव पद बोल्या अंतर खोल्या विधि विरला बूझंदा है ॥२८॥

जिसके अंतःकरण (मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार) नहीं हैं। और जो न बालक, न तरुण, (जवान) न वृद्ध है न आयुवाला है। और जो न पाषाण न पत्ता है और तप्तमुद्रा भी जिसके नहीं है और न जिसके कोई स्थान है न आन है ॥ २५ ॥

वह अनघड़ (आकाररहित) अजात (अजन्मा) माता-पिता-रहित है। जो निराकार निर्द्वंद्वस्वरूप है। उसका न कोई शहर है न कोई दुकान है। न वाणिज्य करनेवाला है न लेन देन करनेवाला बोहरा है। न उसके खरच है न कमी उसके खूट ही आती है ॥ २६ ॥

न वह शूर है न सती (दानादि देनेवाला) है, न वह जोगी है न जती है, और जिसके पास न कभी जरा (बुढापा) और जम (मृत्यु) पहुंच सकते हैं। न वह तीर्थ है न कोई व्रत है। न आकाश है और न धरती (पृथ्वी) है अर्थात् निरंजन निराकार निर्विकल्प निर्गुण आदि-मध्यांतरहित वह अजन्मा और अकल है और कला का देनेवाला है ॥ २७ ॥

न स्त्री है न पुरुष है न चतुर है न मूरख है और चारों वेद भी जिसकी महिमा नहीं बांच सकते हैं और नेति २ कहते हैं। यह अनुभव की वार्ता जो गुप्त थी उस को पदों में और छंदों में प्रकट की है जिसकी विधि कोई विरला ही समझ सकता है ॥ २८ ॥

सिलिया गुरु आदू पाय अनादू पूरबले लेखंदा है।
आप्या हम जैसा कहिये कैसा कछु इक मन सरमंदा है ॥ २९ ॥

कायम कुरबाणी कर आसाणी तुहि तुहि काम कमंदा है।
तूही है रामा तु ही रहीमा जन हरिराम जपंदा हैं॥ ३०॥

पूर्व जन्म के लेख से आदिगुरु मिलगये और उनकी कृपा से अनादि रूप को पाया (जाना) जैसा हमने जाना है उसको कैसे वर्णन किया जाय? क्योंकि वह अवर्ण्य है इसलिये मन बतलाने में कुछ संकोच करता है॥ २९॥

यदि उपरोक्त विधि से स्थिर होकर अपने को इस पर कुर्बान कर-दोगे तभी आसानी से सफलता प्राप्त करोगे। ग्रंथ की समाप्ति में श्रीहरि-रामदासजी महाराज ईश्वरके प्रति प्रार्थना करते हैं कि हे भगवन्! आपही राम हो आपही रहीम हो और जो कुछ हो सो आप ही आप हो॥ ३०॥

॥ इति श्रीहरिरामदासजी महाराजकृतनिसानी संपूर्णा॥

पद-

१ भाई नाम समझीने बेसी रहिये आत्मा चीन्हीने मनमा मगन थईये। टेक
रामने रहिमान तमे एक कर जानज्यो कृष्ण ने करीम एक कहिये।
विष्णु विस्मिल्ला में भेद नथि भाई अल्लाह अलख एक लहिये॥ १॥ भाई०॥
गफूर गोविंद तमे एक कर जाणज्यो मोलाने माधव गुण गहिये।
हरि हक ताला नो भेद तमे जाण्यो हवे चोरासी मार नव सहिये॥ २॥ भाई०।
परवरदिगार प्रभु एक कर जानिये नब्बी नारायण चोंव्यो हइये।
चांवल ने चोखा पण डांगर छे एक एवुं समझे तेना थई रहिये॥ ३॥ भाई०।
साहेब नाम पाकछे प्रभु नो बीजो नापाक सब कहिये।
जे जे साधन कीधा तेमा पडे छे सांसो एथी ब्रह्मज्ञान नित न्हइये॥ ४॥ भाई०।

अथ ग्रंथ नाम परचा प्रारंभः ।

सत गुरु के सत शब्द तें, उपज्यो मन विश्वास ।
राम नाम छाँड़ूं नहीं, धरूं न दूजा पास ॥ १ ॥
प्रथम राम रसना सुमर, द्वितिये कंठ लगाय ।
तृतिये हिरदै ध्यान धरि, चौथे नाभि सिलाय ॥ २ ॥

चौपाई ।

अध मध उत्तम त्रय घर ठानू । चौथे अति उत्तम अस्थानू ॥
यह चहुँ भिन देखे आसरमा । रामभक्ति को पावै मरमा ॥ १ ॥
अध सुमरन जू ऐसें कहिये । रसना राम राम कूं गहिये ॥
निशिदिन रसना राम उचारा । ज्यों दर[1] बंदीवान पुकारा ॥ २ ॥
ज्यों रसना तन यों तृण वेली । तन तृण संग तंतु वा मेली ॥
वेली पान फूल फल लागा । रसना राम सुमिरि भव भागा ॥३॥
अध सुमरन रसना से करिया । करताँई मुझि पार उतरिया ॥
रसना राम सुमर अध तालू । मध सुमरन की आया नालू ॥४॥
मध सुमरन जू ऐसा भाई । मुख सुमरन हालत रह जाई ॥
गदगद कंठहि कमल विकासा । पाया प्रेम भया परकासा ॥ ५ ॥
ज्यों घायल उर सालैपीरा । त्यों त्यों व्यापे राम सरीरा ॥
घायल की घायल सो जानै । राम भजै सोई मन मानै ॥ ६ ॥
निश्चय रामनाम लिव लागी । भ्रमना कंठ कमल की भागी ॥
मध सुमरन की ये परतीति । अब उत्तम सुमरन की रीति ॥ ७ ॥
उत्तम सुमरन हृदय स्थानू । माँहो माँहि भया धरि ध्यानू ॥
रसना लेत राम का नामा । उर भीतर पाया विश्रामा ॥ ८ ॥
सहजाँ साला शब्द पिछानी । रसना सहत नाम निर्बानी ॥
उत्तम सुख सुमरन हिरदामें । यूं नारी पुरुषा मन कामें ॥ ९ ॥
उत्तम सुमरन की सुधि आई । टुकि इक ध्यान रह्या ठहराई ॥
अध मध उत्तम सुमर सुजाना । अति उत्तम के माँहि सिलाना ॥१०॥
अति उत्तम सुमरन जू ऐसा । या उपमा बरनूं मैं कैसा ॥
अति उत्तम सुमरन परकारा । रोम रोम लागा ररँकारा ॥ ११ ॥
अति उत्तम नाभी अस्थानू । मन संकल्प विकल्प न ठानू ॥
अति उत्तम सुमरन सरवंगा । अक्षर एक भया अणभंगा ॥ १२ ॥

---

१ दरवाजा ।

साखी ।

सुमरन मारग संतका, ताते भरम नसाय ।
हरिरामा हरि वंदगी, करिहों चित्त लगाय ॥ १ ॥

छंद प्रयात भुजंगी ।

नाम चेतन्न कूं चेत भाई । नाम तें चित्त चौथे मिलाई ॥ १ ॥
नाम तें केवला होय भजना । नाम तें सहज सुमिरन्न रसना ॥ २ ॥
नाम तें अज्जपा जाप ओऊं । नाम तें सास उस्सास सोऊं ॥ ३ ॥
नाम तें हक्क है एक अल्ला । नाम महमान की आखि गल्ला ॥ ४ ॥
नाम तें चंद सूरा समेला । नाम तें करत मन सुक्ख केला ॥ ५ ॥
नाम तें खोलि कप्पाट गैणूं । नाम तें ध्यान ताटक्क नैणुं ॥ ६ ॥

साखी ।

नाभी परचा नामका, गुरु तें पाया ज्ञान ।
हरिया पूरब एक पल, धऱ्या गगनमें ध्यान ॥ १ ॥

छंद प्रयात भुजंगी ।

पलटि पूर्व अपुरव्व प्याणा । करि वंकनाली लिये मेरु थाणा ॥ ७ ॥
ध्यान आकास धरि अधर छाजै । सुरति अरु शब्दका एक राजै ॥ ८ ॥
मन वुद्धि चित अरु अहंकारा । पाँच पच्चीस सिल एक यारा ॥ ९ ॥
नाद अनहद्द जहाँ तूर वाजै । विन वादलाँ[1] वीज विन अंबु[2] गाजै ॥ १० ॥
विन गंग जमुना वहै नीर पारा । चलै सुषमणा सीर अमृत्त धारा ॥११॥
झिलमिला होत जहाँ अखंड ज्योती । निर्मला नूर तहाँ ओत पोती ॥१२॥
अगम अप्पार अवगत्त यारा । मिला मुझ्झमें मुझ्झ पीतम्म प्यारा ॥१३॥
फदल कूँ जीत पति अदल साँई । सुन्य का सहर निरभै वसाँई ॥ १४ ॥

साखी ।

हंसा सुन सरवर सिल्या, सरवर हंस सिलाय ।
हरिया पैर[3] सर खेलताँ, सहजाँ रहे समाय ॥ १ ॥

छंद प्रयात भुजंगी ।

सहज तन मन्न करि सहज पूजा । सहज सा देव नहिं और दूजा ॥१५॥
सहज का जोग साझन्न पवना । सहज थिर नाद अरु विंद गगना ॥१६॥
सहज तीर्थ जप तप्प ध्यानू । सहज षट्कर्म सेवा सनानू ॥ १७ ॥
सहज कछ काछ कीर्तन्न काजा । सहज का शब्द सुर वाय वाजा ॥१८॥

---

१ गहन । २ मेघ, जल । ३ परसर, सबके ऊपर का सर ।

सहज में नाच दे नृत्य ताली । सहज आकाश पर भोम भाली ॥ १९ ॥
वंदना सहज करि शीस धरिया । सहज हरिनाम बकसीस करिया ॥२०॥
सहज का भेद सोइ भेद भेदै । सहज विन और दूजा न खेदै ॥ २१ ॥
सहज का भेद सोइ संत जाणै । हद्द कूं जीत वेहद्द माणै ॥ २२ ॥
सहज आसण किया सहज वासा । सहज में खेल अज्जीत पासा ॥२३॥
सहज का खेलणा खूब भाई । सहज सम्माधि सहजां सिलाई ॥ २४ ॥

साखी ।

सहजाँ मारग सहज का, सहज किया विश्राम ।
हरिया जीव रु सीव का, एक नाम अरु ठाम ॥ १ ॥

छंद प्रयात भुजंगी ।

जीव अरु सीव मिल एक राई । पूरणा ब्रह्म जहाँ सुख्ख दाई ॥ २५ ॥
आदि अरु अंत ना मध्य कोई । जीव जहाँ शिव मिल एक होई ॥ २६ ॥
जीव अरु सीव का ओथि वासा । ना आभ धरती न होते निरासा ॥२७॥
जीव अरु सीव करि एक जाणी । मिले सिंधु सिंधौ जिसि बूंद पाणी ॥२८॥
ब्रह्म निरपाय[1] गुण गर्व गलिया । जरा नाहिं झंफै भय कंप टलिया ॥२९॥
ब्रह्म भवतार भव रहत होई । ब्रह्म अवगत्त आनंद सोई ॥ ३० ॥
ब्रह्म निर्बंध निर्वाण[2] निचुं । ब्रह्म पी अपी परमा निरचुं ॥ ३१ ॥
ब्रह्म अनहद्द अनवी नवीसा[3] । ब्रह्म अन्नाथ के नाथ ईसा ॥ ३२ ॥
ब्रह्म विदेह[4] देवन्न देवा । ब्रह्म निर्‌पाप निर्‌पुण्य लेवा ॥ ३३ ॥
ब्रह्म अड्डोल भय नाहिं डोलै । ब्रह्म अब्बोल ता नाम बोलै ॥ ३४ ॥
ब्रह्म अत्तोल नहिं मोल माया । ब्रह्म अप्पार किन पार पाया ॥ ३५ ॥
ब्रह्म निरंजन निर्गुण न्यारा । ब्रह्म परमात्मा आतम्म प्यारा ॥ ३६ ॥
ब्रह्म अग्गाध कोइ साधु जाणी । और खुर घींस सिर नाक ताणी ॥३७॥

साखी ।

जीव सीव मिल एकठा, रहे निरंतर छाय ।
हरिया ब्रह्मानंद में, ना कोइ और समाय ॥ १ ॥

छंद भुजंगी ।

न को रस भोगी । न को रहत न्यारा ॥
न को आप हरता । न कर्तुं व्यवहारा ॥ १ ॥

---

१ नाशरहित । २ शान्त । ३ लेखक, कातिब, नमनेवालोंके ईश है । ४ जिसकी उत्पत्ति मातापितासे न हो ।

न को विष्णु ब्रह्मा। न कोई नगेशं ॥
न को आदि शक्ती। न कोई महेशं ॥ २ ॥
न को नाद बिंदु। न को जीव ज़िंदा ॥
न को आभ धरती। न कोई गिरिंदा ॥ ३ ॥
न को मोह माया। न को काम क्रोधं ॥
न को वृद्ध तरुणा। न को बाल बोधं ॥ ४ ॥
न को खाणि च्यारै। न को च्यार वाणी ॥
न को चंद सूरा। न को पौंन पाणी ॥ ५ ॥
न को मास पक्षं। न को तिथ्थि वारा ॥
न को राति दिन्नं। न को अंधियारा ॥ ६ ॥
न को सात द्वीपं। न को नव्व खंडा ॥
न को तेज तारा। न को ब्रह्म अंडा ॥ ७ ॥
न को सिंधु सरिता। न को ढ़ारै भारूं ॥
न को तीन लोका। न को जुग्ग च्यारूं ॥ ८ ॥
न को ऋद्धि सिद्धं। न को मान धाता ॥
न को आय जावै। न को नेह नाता ॥ ९ ॥
न को नारि पुरुषा। न को जाति पाँती ॥
न को ऊंच नीचा। न को छोति भ्राँती ॥ १० ॥
न को लोक लज्जा। न को कुटुंब धर्मा ॥
न को पित्त मातं। न को भर्म कर्मा ॥ ११ ॥
न को थान मानं। न को पान पाती ॥
न को देव दोसं। न को जग्ग जाँती ॥ १२ ॥
न को शुद्धि किरिया। न को वेद पाठं ॥
न को मुख वाणी। न को मौनं काठं ॥ १३ ॥
न को तन्न त्यागी। न को गृह चारा ॥
न को नव्व नाथूं। न को पंथं बारा ॥ १४ ॥
न को जोग जुगता। न को जत्तजोखा ॥
न को सांत सुख्खं। न को दंश्श दोखा ॥ १५ ॥

---

१ सुमेरु आदि। २ अठारह भार वनसति। ३ एक चक्रवर्ती राजा। ४ जात देनेवाला। ५ काष्ठवत् मौन. न बोले न चेष्टा करै। ६ नवनाथ=आदिनाथ, परमानन्दनाथ, प्रकाशानन्दनाथ, काकुलेश्वरानन्दनाथ, कोलेश्वरानन्दनाथ, भुगानन्दनाथ, सहजानन्दनाथ, गगनानन्दनाथ, विमलानन्दनाथ। ७ नाथोंके तथा बाममार्गमें १२ पन्थ हैं. बारहबाट अठारह पेड़ा। ८ जतजोखा=इंद्रियदमनका हिसाब=नववाड़ यथा—

न को मन्न वाचा । न को ख्याल शब्दी ॥
न को हद्द माही । न को वेह हद्दी ॥ १६ ॥
न को राग दोषं । न को बंध मोषा ॥
न को घाटि वाधं । न को आध ओषा ॥ १७ ॥
न को राज तेजं । न को देश पत्ती ॥
न को महल छाजा । न को रूप रत्ती ॥ १८ ॥
न को खवास दासी । न को आसपासं ॥
न को साथ संगी । न को सास वासं ॥ १९ ॥
न को राग वागं । न को षट्ट[2] भाषा ॥
न को हाल[3] माली[4] । न को लक्ख पाषा ॥ २० ॥
न को सूर सत्ती । न को खग्ग धारा ॥
न को आगि लागै । न को जूझ[5] मारा ॥ २१ ॥
न को शाँख[6] सौंई । न को दूज दाखै ॥
न को जाति जूई[8] । न को पक्ख राखै ॥ २२ ॥

तियथलवास प्रेमरुचि निरखन दे परिच्छ भाखन मधु वैन
पूर्वभोग केलिरस चिंतन गुरुअ अहार लेत चित चैन ।
करि शुचि तन शृंगार वनावत तिय परपंक मध्यसुखसैन
मन्मथकथा उदर भरि भोजन ये नववाड़ जानमत जैन ॥ १ ॥

अथवा यतिजोखा दशनामका हिसाब नही है । दशनाम=तीर्थ[1] आश्रम[2] वन[3] अरण्य[4] गिरि[5] पर्वत[6] सागर[7] सरस्वती[8] भारती[9] पुरी[10] ये दशनाम शंकराचार्य्य स्वामीके चार प्रधान शिष्योंसे चला है जिन चारोंके नाम=पद्मपादाचार्य्य[1] हस्तामलकाचार्य्य[2] मण्डनाचार्य्य[3] तोटकाचार्य्य[4]।

स्वामी पद्मपादके २ शिष्य तीर्थ, आश्रम ।
,, हस्तामलकके २ शिष्य वन, अरण्य ।
,, मण्डनके ३ शिष्य गिरि, पर्वत, सागर ।
,, तोटकके ३ शिष्य सरस्वती, भारती, पुरी ।

स्वामी शंकराचार्य्य के स्थापन किये हुए चार मठोंमें इन दस प्रशिष्योंकी शिष्य-परंपरा चली जाती है ।

मठ ४:—शृंगेरीमठ[1] शारदामठ[2] गोवर्द्धनमठ[3] जोशीमठ[4] पर्याय (बद्रिकाश्रम[1] करवीरपीठ[2] द्वारकापीठ[3] शारदापीठ[4])

शृंगेरीमठ	शारदामठ	गोवर्द्धनमठ	जोशीमठ
पुरी	तीर्थ	वन	गिरि
भारती	आश्रम	अरण्य	पर्वत
सरस्वती			सागर

९ प्रथमसुख निरोगी काया आदि । १० कायिक वाचिक मानसादि ।

१ संपूर्ण । २ सँस्कृत[1] प्राकृत[2] शौरसेनी[3] मागधी[4] यावनी[5] अपभ्रंश[6] । ३ परिस्थिति । ४ मालदार अर्थात् माली हालत । ५ युद्ध । ६ गना, भाग । ७ सम्बन्ध, वही । ८ जुदी ।

न को ध्वज्ज नेजा[1] । न को तूरवाजैं[2] ॥
न को मेघ वरषा । न को वीज गाजै ॥ २३ ॥
न को दैत्य देवा । न को दसावतारा ॥
न को खेल जूवा । न को जीत हारा ॥ २४ ॥
न को भक्ति नवधा । न को षट्ट वरनूं[3] ॥
न को कान्ह गोपी । न को कीरतनूं ॥ २५ ॥
न को मूर्ति सेवा । न को देव द्वारा ॥
न को भोग चाढ़ै । न को खाण हारा ॥ २६ ॥
न को तीर्थ व्रत्तू । न को असनाना ॥
न को होम जापू । न को तप्प दाना ॥ २७ ॥
न को पिंड पोहरा । न को चोर लागै ॥
न को रैण सूता । न को दिन्न जागै ॥ २८ ॥
न को च्यार वेदं । न को है पुराना ॥
न को है कतेवा । न को है कुराना ॥ २९ ॥
न को अवल हिंदू । न को कोल[4] मुल्ला ॥
न को दाय पालं । न को मंह[5] रसुल्ला[6] ॥ ३० ॥
न को राह पीरां । न को तेग मरदां ॥
न को हक्क मूवां । न को हक्क करदां[7] ॥ ३१ ॥
न को सुनत काजी । न को वंग न्वाजा ॥
न को ईद रोजा । मक्का नाहिं ख्वाजा ॥ ३२ ॥
न को राव रंक्कू । न को सुल्लताना[8] ॥
न को खाक पाकं । न को मस्सताना ॥ ३३ ॥
न को भूत प्रेतं । न को जक्षजूणा ॥
न को काल जालं । न को तत्त टूणा ॥ ३४ ॥
न को स्वप्न जागै । न को सुक्ख पत्ती ॥
न को पद्द तुरिया । न को मोक्ष मुक्ती ॥ ३५ ॥

साखी ।

ज्यों देख्या त्यों मैं कह्या काणं न राखी काय ।
हरिया परचा नाम का तन मन भीतर पाय ॥ १ ॥

---

१ निशान । २ तुरी, नगारा । ३ जोगी[1] जंगमें[2] सेवड़ा[3] संन्यासी[4] दरवेष[5] । छव्यों दर्शन विप्रेका[3] जामें मीन न मेष ॥ १ ॥ ४ म्लेच्छजाति । ५ मुहम्मद । ६ रसूल=पैगंबर । ७ छुरी । ८ बादशाह, सम्राट् । ९ मर्यादा ।

दारुकमें पावक वसै यूं आतम घट माहिं ।
हरिया पयमें घृत्त है विन मथियाँ कछु नाहिं ॥ २ ॥

इति नाम परचा ।

अथ पदबत्तीसी ।

चरण ।

एक शब्द में कहि समझाऊँ, सुनिहो सब संसारा ।
रामनाम सो सारशब्द है, और कथन है छारा ॥ १ ॥
आपा भेद विना सोइ सुरता, कहै सुणै सो झूठा ।
जबलग अनुभव तत्व न दरसे, मरि मरि आवे पूठा ॥ २ ॥
मनकों उलटि गहै जो गाढ़ा, पकड़े पाँचू खाना ।
तीन गुणां की माया त्यागै, पद पावै निरबाना ॥ ३ ॥
माया मोह विषय संसारा, दुस्तर मारग दूरा ।
कायर ताहि वीचमें गडिया; डाकि परे सो सूरा ॥ ४ ॥
सूर महातम सझि संग्रामा, स्वामि काम इक धारा ।
खाग त्यागि दोऊँ तड़ जोड़ै, मोड़ै खल दल मारा ॥ ५ ॥
जोग जज्ञ जपतप अस्नाना, ये सब आशा बंधी ।
पूरण ब्रह्म सकल ते न्यारा, दुनी न जानै अंधी ॥ ६ ॥
निर्गुण पद का भेद नियारा, कह्या सुण्या नहिं पावै ।
आपा उलटि आपमें देखै, जब ते मन पतियावै ॥ ७ ॥
भाव हीण करि पृथिवी होसी, पूजा दांभिक चाड़ा ।
नानाविधि का मारग होसी, रामनाम वटवाड़ा ॥ ८ ॥
मैं नहिं कहत कहत परज्ञाना, सुनिहो सबे सयाना ।
मैं तैं रागद्वेष जग बंधे, ये कलि के अहनाना ॥ ९ ॥
दुनियाँ दुष्ट बुद्धिता होसी, मनमुख ज्ञान समर्था ।
धर्ता कों कर्ता करि जाने, अर्थां करे अनर्थां ॥ १० ॥
वक्ता वेद वकै वहुतेरा, सहजाँ सुद्धि न आवै ।
नाटक चेटक करिकरि ऊला, पेला पार न पावै ॥ ११ ॥
बावू पलटि नाम धरि बावा, वहुरँग भसी लाया ।
देहदशा करि भया दिगंबर, मन वैराग्य न पाया ॥ १२ ॥
वाहिर हेम रामका वाना, भीतर भरा भँगारू ।
या तनको कारी नहिं लागै, मनवा भरा विकारू ॥ १३ ॥

---

१ काष्ठ । २ विषय ।

तनके काज धरा बहु बाना, मन स्थिर करि नहिं लीया।
चंचल चित्त चहूँ दिशि डोलै, पकड़ि काल वस कीया ॥ १४ ॥
देखा देखि सकल जग भरम्या, पखा पखी के सरमा।
आशा तृष्णा भई अखंडी, लोक लाज कुल करमा ॥ १५ ॥
दुइ अक्षर का सकल पसारा, यामें कौंन सनेहा।
एके लागि सकल जग मोह्या, एक रह्या निरछेहा ॥ १६ ॥
तन मन वचन ज्ञान दृढ़ करिके, एक शब्द गुँझि आखूं।
जाताकों जावनदे भाई। रहताकों गहि राखूं ॥ १७ ॥
सुमरण सार सकल का सौदा, रामनाम निज एकू।
अलख पुरुष आतम अविनासी, माया और अनेकू ॥ १८ ॥
माया तीन लोक मुंसि खाया, सुरनर नाग नरेसा।
याकों जीति चले कोइ साधू, सद्गुरु के उपदेसा ॥ १९ ॥
रामनाम गुरु शब्द हमारे, सो सवते सिरताजू।
और शब्द गुरु मेरे भावे, कहन सुनन के काजू ॥ २० ॥
रामनाम परताप सदाई, तारे पतित अनेका।
शिव सनकादिक ऋषि नारद से, पाया ज्ञान विवेका ॥ २१ ॥
अधः ऊर्ध्व को किया पयाना, जानें विरला जोगू।
मन पवना पश्चिम की घाटी, आया नाम तिरोगू ॥ २२ ॥
सुधि वुधि पलटि गया गुण देहा, ररंकार रस पीया।
ऐसा अछक छक्या अवधूता, जुग जुग अनभय जीया ॥ २३ ॥
ऐसी अकथ कथा औरन से, कहिये कौंन विवेखी।
आपा अजर जरे अवधूता, सो जन विरला देखी ॥ २४ ॥
अजरामर का मारग औला, सौला सन्त पिछाणै।
वंकनाल में मेरु सँचरि के, भँवर गुफा सुख माणै ॥ २५ ॥
इला पिंगला नाड़ी सिल करि, सुषमण किया पिछानी।
अरस परस पीया से खेलै, मग्ना भई दिवानी ॥ २६ ॥
घर अंबर के वीच कलाली, विन कर प्याला पावै।
भट्ठी अधर पिये मतवाला। रोम रोम रुचि आवै ॥ २७ ॥
तीनू पेल खेल घर चोथे, दिल अंदर सिल यारा।
पाँचूं उलटि एक घर आया, पाया दशमद्वारा ॥ २८ ॥
षोडश द्वादश गऊ सिलाई, अजपा मही जमाया।
तन मटकी मन किया झेरणा, मुक्त जु माखण आया ॥ २९ ॥

---

१ ठगकरिके। २–१६ चन्द्रकलारूप गउ। ३–१२ सूर्यकलारूप गउ।

शुन्य सुभर में बालक जाया, त्वचा हाड नहिं माँसू।
जाति पाँति वरण नहिं वाके नाम ज धरिये काँसू॥ ३०॥
अगम निगम बिच खेल हमारा, जहँ एको निरवासा।
रूप रेख नख शिख नहिं वाके, देह न गेह न सासा॥ ३१॥
जैमलदास गुरू परतापे, तोड्या भर्म किवारू।
जन हरिराम कहत है सन्तो, पदबत्तीस विचारू॥ ३२॥

साखी।

पदवत्तीस विचारिके, उपज्यो आतम ज्ञान।
आपा ले उन्मन रहै, लहै परम निज ध्यान॥ १॥

इति।

अथ प्रश्नोत्तरी।

चौपाई।

प्रश्न।

कहो कौन घर प्रेम निवासा। कहो कौन घर ध्यान प्रकासा॥
कहो कौन घर मन मिल पवना। कहो कौन घर सहज सुमरना॥ १॥
कहो कौन घर अभरा भरि है। कहो कौन घर नीझर झरि है॥
कहो कौन घर अनहद तूरा। कहो कौन घर परसत नूरा॥ २॥
कहो कौन घर उन्मनि लाई। कहो कौन घर सुरति समाई॥
कहो कौन घर पीव मिलावे। कहो कौन घर आय न जावे॥ ३॥

उत्तर।

कंठ कमल घर प्रेम निवासा। हृदय कमल घर ध्यान प्रकासा॥
नाभि कमल घर मन मिल पवना। रोम रोम घर सहज सुमरना॥४॥
वंक नाल घर अभरा भरि है। अधः ऊर्ध्व घर नीझर झरि है॥
सून्य शिखर घर अनहद तूरा। दशम द्वार घर परसत नूरा॥ ५॥
ललाट घर उन्मनि लाई। सुरत निरत घर माहिं समाई॥
तिरवेणी घर पीव मिलावे। शिवसत्ता घर आय न जावे॥ ६॥
जन हरिराम जहाँ घर पाया। जन्म मरण सन्देह मिटाया॥
विन गुरुगम देखे नर दूरा। ब्रह्म वताया आप हजूरा॥ ७॥

साखी।

गुष्ट हमारी जो करै, सोई हमारा यार।
हरिरामा दूजी दुनी, जाकों ऊभ जुहार॥ ८॥

इति।

अथ रेखता।

(१)

जिंदरी भीतरै अजब जोगी बसै। जुक्ति बिन जाणिया नाहिं जाई।
प्रथम गुरुदेवकी आय सस्तूति करि। मन्त्र अरु तन्त्रकूं देत भाई॥
रस्सना राम कूं सुमरि नहिं ढ़ीलकरि। एक बिन दूसरी आस नाहीं।
पाट हिरदा खुलै कमल नाभी फुलै। बोलता पुरुष कूं देख माहीं॥
आप गुरु देवका दस्त राखै नहीं। और कूं ज्ञान उपदेश देवै।
आठही पहर हरिनाम जो उच्चरै। साच नहिं जानि गुरुविमुख सेवै॥
आवता एक अरु एक ही जात है। अंध अज्ञान बहु करत मोहा।
दास हरिराम निज भेद पायाँ बिना। हाथ कंचन गह्या होत लोहा॥

(२)

प्रथम गुरु ज्ञान अरदास तन वंदगी। शील संतोष लघु दीन यारा।
राग अरु द्वेष तिहुं ताप मनतैं तजै। झूठ अरु कपटसूं रहत न्यारा॥
एक अभ्यास दिल आस नहिं दूसरी। ब्रह्मका ध्यान मन सुरत सेती।
जोग जिग दान तप नेम व्रत तीरथा। तुल्य तिहुँ लोक नहि नाम जेती॥
भर्म कूं भांजि कछु कर्म कूं काटिकरि। साहि शमशेर सत शब्द सूरा।
दास हरिराम कहै दिल दीवानमें। राज सोइ करत है संत पूरा॥

(३)

आपकूं खोज पर ज्ञान की खबर करि। अलख आराध मन साधि प्यारा।
जीव अरु जिंदकी झूठ यारी तजो। भेष भगवान करि देख न्यारा॥
अणक्षरी वेद कूं निरख निरतायले। अगम अरु निगमका भेद वाचै।
तन मन वचन तैं दोष निर्दोष रहि। साम सूं सरषैरु संत साचै॥
साँझ सव्वेर क्या करत नर बावरे। बेग भजि वेग अब दाव आई।
दास हरिराम तन खाक मिल जाहिंगे। चूक मत जानि जग चतुराई॥

(४)

भरम अज्ञान की भींत कूं ढाहि के। ज्ञान चोगान में खेल सूरा।
कूड़ अरु कपट की झपट कूँ छाँडिदे। त्रिगँढ सिर वाय अनहद्द तूरा॥
पांच पच्चीस गँनीमकूं साझिले। मन्न कूं जीत महरँम्म होई।
आदि जुग्गादि ले नाम निरभै भया। भरै सब संत वा साख सोई॥

---

१ हाथ। २ तलवार। ३ सन्मुख। ४ हृदय, कंठ, भ्रूमध्य। ५ बजाना।
६ दुस्मन। ७ महरम=भेदी।

ब्रह्म कूं भेद कछु कर्म कूँ छेद करि। वेद कत्तेब से निरख न्यारा।
दास हरिराम कहै उलटि आपा विचै। परस लै परम दीदार प्यारा॥
(५)
मन्न की मूँठ पहलूंण[1] गाढ़ी गहौ। तत्त का तीर करि हाथ साहो।
ज्ञान कब्बाण कर ध्यान घोरा धरो। आन अज्ञान का ढ़िग्ग[2] ढाहो॥
अरस[3] का अश्व पर नृप्प नीकां चढ़ो। नाम नीसाण सिर डंक लावो।
एक असवार अरु पंच प्यादा पुलै। लारि ललकार हरि वेग ध्यावो॥
तन्न की नालि करि चित्त दारू भरो। सुरति की जामकी[4] शब्द गोला।
भूसिया[5] भरम कूँ मारि मुजरा करो। पांच परधान कूं पालि पोला॥
सत्त का सेल करि खाग क्षम्मा तणी। दोय दल मोड़ि गढ़ तीन तोड़ो।
दास हरिराम सब राज एको भया। साम सम्मूह मिल हाथ जोड़ो॥
(६)
तन्न का तखूत पर मन्न राजा भया। मान गुमान के महल माहीं।
पाँच परधान पच्चीस चीरांगरी[6]। करत है काम किल्लोल वाहीं॥
जाणिरे जाणि जग माहिं जन सूरमा। दोय दल वीच में रोळ घालै।
निरति असवार अरु सुरति घोड़ा लियां। काम अरु क्रोध कूँ दबाँटि पालै॥
ज्ञानकी गुरज ले पाणि आघाधसै। तत्त तरवार करि हाथ साहै।
पांच परधान मन मारि राजान कूँ। मान गुम्मान का महल ढ़ाहै॥
नाम नृप कोट सिर चाढि तावै किया। भक्ख अरु सिक्ख बिच एक राई।
दास हरिराम सब राज अविचल भया। दशमें द्वार नौबत्त वाई॥
(७)
समझि रे समझि मन मूढ मेरा कह्या। कुटुँब परिवार कह कौन केरा।
सकल संसार सराय की सोबती। एक पल माहिं हुय कूच डेरा॥
एक मन चित्त नित नाम निरभै भजो। तुज्झि सिरकाल नहिं करत जोरा।
वेद कत्तेब सब जानि काची कथा। देखि भूलै मतै मन्न भोरा॥
तप्प तीर्थ व्रत साझि एकादशी। सातही द्वीप नव खंड डोलै।
जोग जिग जाप षट्कर्म खाली रह्या। आपकूं उलटि आपा न खोलै॥
आदि अरु अंत सतशब्द कूं ध्यायले। पायले दशमो[7]द्वार सोई।
दास हरिराम तहाँ मुक्ति संसा नहीं। जीव अरु सीव मिल एक होई॥
(८)
खबर करि खबर गाफिल तुमसे कहूँ। वहुरि नहि पाय नरदेह धारी।
एक एकतार सिर धारि दूजा नहीं। मानि मेरा कह्या पुरुष नारी॥

---

१ प्रत्यंचा। २ ढिगा। ३ अरसनाम है महल का जहाँ राजा बैठे। ४ वत्ती।
५ ग्रामदेवता वा भूमि का असल मालिक। ६ मसालचन। ७ दाट।

लोभ लालच्च मद मोह लागा रहै । आपदा पासि पडपंच ठाणै ।
आन उप्पाधि बहु ताप हिरदै उठै । राग अरु द्वेष मनमान ताणै ॥
काम अरु क्रोध भय जोध जोरावरी । जहर अरु कहर जग माहिं जाडा ।
काल कब्बाण तव कसी सिर ऊपरै । मारसी जोय नहिं कोय आडा ॥
मात अरु तात सुत भ्रात भृत भामिनी । कुटुंब परिवार की प्रीति झूठी ।
दास हरिराम कहै खेल वीतां पछै । मेल सौह ऊठिग्यो झाड़ि मूठी ॥

(९)

सत्तगुरु देव की गम्म कैसे लहै । कान गुरु फूंकिया मान लीया ।
भाव निज भक्तिकी गम्म कैसे लहै । सेच कृत्रिम्म कुल काज कीया ॥
साधु सतसंग की गम्म कैसे लहै । जगत जंजालमें फिरत हूला ।
ज्ञान विज्ञान की गम्म कैसे लहै । आन अज्ञानमें जात भूला ॥
अज्जपा जाप की गम्म कैसे लहै । जुगति से जाप नहिं करत जाणी ।
आतमा देवकी गम्म कैसे लहै । वेद कत्तेब की देखै पुराणी ॥
रोम ररंकार की गम्म कैसे लहै । शब्दके संग ममकार होई ।
दास निर आस की गम्म कैसे लहै । आस दुनियानकी करत सोई ॥
नाम निर्गुण्ण की गम्म कैसे लहै । ताप तिर्गुण्ण के पंथ पुलिया ।
उन्मनी ध्यान की गम्म कैसे लहै । नाम कूं लेत है कान सुणिया ॥
सुरति अरु निरत की गम्म कैसे लहै । विषय मन वासना रहत माहीं ।
अधः अरु ऊर्ध्व की गम्म कैसे लहै । कंठ रसना हृदै ध्यान नाहीं ॥
पिंड ब्रह्मंड की गम्म कैसे लहै । खंड फिर मंडका देख देखै ।
नाम निर्वाण की गम्म कैसे लहै । वाद बकवाद के राग धेखै ॥
बात विदेह की गम्म कैसे लहै । हद्द में रातदिन रहत राता ।
ब्रह्म आनंद की गम्म कैसे लहै । मोह माया तणै मद्द माता ॥
जाण विज्जाण की गम्म कैसे लहै । शुद्ध बुधि आपणी सार चूका ।
दास हरिराम सिर भार कैसे मिटै । भर्म अरु कर्म के ढिग्ग ढूका ॥

(१०)

गुरु परचै विना ज्ञान कैसे गहै । नाम परचै विना ठाम नाहीं ।
जीव परचै विना पीव कैसे मिलै । आप परचै विना क्यूँ न काहीं ॥
मन परचै विना ध्यान कैसे धरै । त्याग परचै विना शान्ति नावै ।
अधः परचै विना ऊर्ध्व कैसे चरै । नाद परचै विना बिंद जावै ॥
अखंड परचै विना अनहद कैसे घुरै । अगम परचै विना निगम बोलै ।
साँच परचै विना झूठ कैसे मिटै । दास हरिराम कहै दिल्ल खोलै ॥

---

१ विपत्ति, आफत, गजब । २ कृत्रिम=नकली । ३ खुशी, आनंद । ४ चलताहै ।

(११)

सत्त का शब्द विन सहज दरसै नहीँ। तत्त दरस्याँ विना मत्त डोलै।
सुरति उलटी विना ब्रह्म भेदै नहीँ। दिल दरस्याँ विना साले फोलै॥
पेम वरषा विना नाम निपजै नहीँ। आत्मा देव विन सेव दूजै।
भाव उपज्याँ विना भक्ति भावै नहीँ। साधु दरस्याँ विना सिद्ध पूजै॥
जुंक्ति जाणी विना जोग दरसै नहीं। एक दरस्याँ विना अनंत धारै।
वार दरस्या विना पार कैसे लहै। दास हरिराम सब रब्ब सारै॥

छप्पय।

राम वखानै वेद राम कूं दाख पुरानै।
राम शाखा स्मृति राम शास्त्र सुजानै॥
राम गीता भागवत राम रामायन गावै।
राम विष्णु शिव शेष राम ब्रह्मा मन भावै॥
राम नाम तिहुँलोकमें ऐसा और न कोय।
जन हरिया गुर गम विना कह्या सुण्याँ क्या होय॥ १॥
प्रथम गुरू शिव जानि नाम पार्वती दीया।
तासेती नारद नाम तन मन करि लीया॥
दे नारद उपदेस नाम सनकादिक जान्यो।
गुरुतें जनक विदेह पीव उर माहिं पिछान्यो॥
सतगुरुतें शुकदेव सुनि किया भर्म सब दूर।
जन हरिया गुरुगम अगम ताहि लहै कोई सूर॥ २॥

छंद इंदव।

अंग सुकोमल पेम सरोवर चूंप सवै चित रंग चितारो।
साधु सती जति राग रसायन सूरक्षमा कवि दास दतारो॥
ज्ञान विज्ञान ये जानि सवै विधि रूप तपो मन मोह धुतारो।
दास कहै हरिराम विना हरि होय नहीँ नर को निस्तारो॥ १॥
राग न द्वेष न कोप कहूँ पुनि संशय शोक न पिंड प्रकासै।
मैं तैं मान अमान न को उर कूड़ कपट्ट कों दूरि निकासै॥
आपा पासि न और धरै दिल सुरति लगी सतशब्द अकासै।
दास कहै हरिराम भजो हरि ज्ञान दियो गुरु होय सँकासै॥ २॥

---

१ साल निकालना या शालवृक्षका तोडना। २ आहारविहारादिनियम। ३ उला-किनारा। ४ रब्ब=परमेश्वर, खुदा। ५ सकाश=समीप।

शील संतोष सदा तन शीतल आनंदरूप रहै जहँ ताहीं।
प्रेम प्रवाह भये उर अंतर और विकार लिपै नहिं काहीं॥
द्वंद्व न को सुख दुःख न हिंसा कूड़ कपट्ट दिशा नहि जाहीं।
दास कहै हरिराम वसो वन भावै बैसि रहो घर माहीं॥ ३॥
तूं कहा चिंत करै नर तेरी हि तो करता सोइ चिंत करैगो।
जो मुख जानि दियो तुझि मानव सो सवहनको पेट भरैगो॥
कूकर एक ही टूकके कारन नित्य घरोघर वार फिरैगो।
दास कहै हरिराम विना हरि कोई न तेरो काज सरैगो॥ ४॥

मनहर छंद।

राजी राव रंक भूप नारी ही पुरुष राजी
झूठी सी वनाई वाजी खुसी सव खाल में।
संन्यासी दुहाई दत्त[2] जोगी आदिनाथ जानै
जतीही वखानै जैन रता मता हाल में॥
भोपना शक्ति सेवै वैष्णव अवतार ध्यावै
वंभना के वेद पाठ चतुराई चाल में।
पखाई पखी में लोक निरापखी जन कोई
हरिया के राम एक नहीं लाल पाल में॥ १॥

राग बिलावल।

पद १

एकै माहिं अनंत है अनंता में एको।
मन महरम कूं पायके हूवा एक मेको॥ टेर॥
अछती माहीं छति है छति माहीं अछती।
वसती माहीं शून्य है शून्य माहीं वसती॥ १॥
या जल सेती लूण हुय लूंणा फिर नीरा।
सतगुरु सेती सिख भया सिखसूं गुरु पीरा॥ २॥
पाणी तें पाला हुवा पाला फिर पाणी।
यूं सीव हुतां जीव हुवा जीव सीव समाणी॥ ३॥
सासामाहिं उसास है उसास में सासा।
हरिरामां हरि मुझि में हरि में हरि दासा॥ ४॥

---

१ भक्ति कल्पतरु पात गुण, कथा फूल बहु रंग।
नारायण हरि प्रेमफल, चाखत सन्तविहंग॥ १॥

२ दत्तात्रेय।

पद २

ता घर सतांसमाधि[1] है हम सो घर लहिया ।
एक अखंड घट भीतरै अकहा जु कहिया ॥ टेर ॥
रहता से रहता रहै जाता नहिं जाणी ।
रोम रोम ररंकार हुय ताही सुखमाणी ॥ १ ॥
उलंघ मेरु आकाश में वाए अनहद्दा ।
निर्दावै निर्द्वंद्व हुय वसिया वेहद्दा ॥ २ ॥
पद परमानंद परसिकै जीवत ही मूवा ।
अपना आपा पलटिकै निजमनवा हूवा ॥ ३ ॥
दृष्टि न आवै मुष्टि में नहिं रूप न रेखा ।
हरिरामा पर शून्य में मुझि सिल्या अलेखा ॥ ४ ॥

राग आसा ।

पद ३

संतो दोनूं राह हरामी खून करै विन खामी[3] ॥ टेर ॥
हिंदू घात करै अजको[2] हरि सूं बेफरमाणी[4] ।
मुख सूं स्वाद करै मनसेती जीव दया नहिं जाणी ॥ १ ॥
पहली तरपण करै गऊको पुण्य दे पाप नसाई ।
पीछै धन धाड़ो करि लावै दुष्ट दया नहिं आई ॥ २ ॥
सहजे जीव जिंद कुं छाँडै ताकूं कहत हरामा ।
काजी करद[5] गऊ सिर सारै विना दोस विसरामा ॥ ३ ॥
मुई हराम कहै हक मारी पसुवो करत पुकारा ।
काजी जाब कौनसा देसी सांई के दरबारा ॥ ४ ॥
मुहम्मद पीर जब्है[6] गउ कीन्ही वा फिर मारि जिवाई ।
होनहार सिटै नहि जिव की तूं सिर लै क्यों भाई ॥ ५ ॥
मूई मटिया मुरदार कहत है मारै हक्क निवाँला[7] ।
देख देख दुनिया कर भूली काजी कौन हवाला ॥ ६ ॥
हिंदू के पण जाणि गऊ को सो सूअर तुरकाणै ।
दोऊ मारि भखै मुख माँसा घट वधि कोन वखाणै ॥ ७ ॥
विषय कर्म कूं सब कोउ आघा हरि धर्म सेती पाछा ।
जन हरिराम राम रस पीजै छाडि सुअर गउ वाछा ॥ ८ ॥

---

१ असंप्रज्ञातसमाधि । २ बकरे का । ३ विनाँ हुक्म । ४ विधिविरुद्ध । ५ बड़ा छुरा । ६ कुरवानी, हलाल । ७ ग्रास, लुकमा ।

राग गोड़ी ।

पद ४

संतो ऐसे लोक निपूती ।
अपनो साँई याद न आनै औराँ जानि सपूती ॥ टेर ॥
घर घर देवस्थान थापना नरनारी मिल पूजै ।
आप स्वार्थ करै ईछना[1] परमारथ सूं दूजै ॥ १ ॥
गहली दुनिया ज्ञान विहूणी गोगा पाबू गावै ।
पंचपीर[2] पाखँड से राती राम भक्ति नहिं भावै ॥ २ ॥
चाँवड आगै भैंसा चाढै भलो आपणो भावै ।
झूठे तन का जतन करत है जीव दया नहिं आवै ॥ ३ ॥
आन देव कूँ करै ईछना पिता पूत के ताँई ।
जिन ऐ जीव सकल कूँ सिरज्या सो सूझै नहिं साँई ॥ ४ ॥
मुवै मुड़े[3] को धौसो राखै चेतन सेती चोरी ।
खालिक छोडि खलक सूं लागा धोकै गौरां होरी ॥ ५ ॥
आनदेव का आखा देखे आप न देखै माहीं ।
आदम[4] और नहीं कोई आडो जब जम पकड़ै बांही ॥ ६ ॥
लाडो लाडी जाय लडावण रात्यूँ ओजक सारै ।
जन हरिराम फिरै मन फीटी ध्यान न हरि का धारै ॥ ७ ॥

पद ५

संतो यूंतो भक्ति न होई ।
इंद्री हठ निग्रह करि मूवा पारन पहुँता सोई ॥ टेर ॥
नाड़ी निरख भया बैदंगर[5] अनंत औषधी कीन्हा ।
सारी धात रसायण करि करि आतम एक न चीन्हा ॥ १ ॥
गाबण बावण[6] ताना तूनी करि करि लोक रिझावै ।
मुख तें राग छतीस अलापै धुनि अधिकेरी लावै ॥ २ ॥
वेद पाठ बहु करत विचारा ज्ञान ग्रंथ भरपूरा ।
उडत गडत राखत थिर देहा साधु सती सिध सूरा ॥ ३ ॥
ज्योतिष सीख ज्योतिषी हुवा अगम अगोचर आखै ।
औराँ कूं ग्रह गोचर लाँवै आप लैण की राखै ॥ ४ ॥

---

१ इच्छा करना । २ गोगा चोहाण, रामदेव तँवर, हड़बू साँखला, मेहो माँगलिया, पाबू मल्लीनाथ । ३ सिरजनहार । ४ इबरानी और अरबी लेखकों के अनुसार मनुष्यों का आदि प्रजापति । ५ वैद्यराज । ६ वजाना । ७ लगावै ।

तप तीरथ व्रत मरत कलांपा करि मत भरमो भाई ।
जन हरिराम राम भज निश्चै नहिं तो परलै जाई ॥ ५ ॥

राग सोरठ ।

पद ६

हे जाए जिंदरी तें जोगियो, न जान्यो भूंडी भेव ।
जोगी आदि जुगादिरो, तूं करि मुई कुसेव ॥ टेर ॥
जोगी एक न जाणियो, बहु मन बैठी लाय ।
जोगण जोगी बाहिरो, पलमें गई विलाय ॥ १ ॥
चेतन थकी न चेतियो, पीछै भई अचेत ।
जो न गहेसी मौन मुख, रसना रांम न लेत ॥ २ ॥
सैणाँ सेती रोषणो, असैणाँ सूं गुंझि ।
साम सनेही नां किया, औराँ रही अलुँझि ॥ ३ ॥
निरंजन देख्या जोगिया, रही निहार निहार ।
सारा तन फिर जोइया, नहीं जोगीरी उनिहार ॥ ४ ॥
जोगी राख्या ना रहै, जोगी रमता राम ।
सुरति निरति कर देखिया, जोगी तणा मुकाम ॥ ५ ॥
जननी जन्यो न जोगियो, पिता न इन के कोय ।
हरिरामा आतम जोगी, जिंद भीतर जोय ॥ ६ ॥

पद ७

हंसा सुन सरवर रय कररे ।
चंच विना चुग चुग निजमोती ध्यान न दूजा धररे ॥ टेर ॥
पाँव रु पंख बिना इक हंसो वास किया सुन घररे ।
अधर महल जहाँ अजब झरोखा है हरि रास अटर रे ॥ १ ॥
तहाँ नहिं धर अंबर नहिं तारा चंद न सूर संचर रे ।
वेद पुराण कथा नहिं कीर्तन वहाँ अण अच्छर उचर रे ॥ २ ॥
नर सुर असुर लोक नहि नागा दिवस रैन नहिँ पर रे ।
जन हरिराम मिल्या परहंसै जरा न जम का डर रे ॥ ३ ॥

पद ८

मनवा रामभजन करि बल रे ।
तज संकल्प विकल्प कों तबही आपा हुय निर्बल रे ॥ टेर ॥

---

1 समूह ।

देखि कुसंग पाँव नहिं दीजे जहाँ न हरि की गल रे।
जो नर मोक्ष मुक्ति कूं चाहै संतां वैसि मिसल रे ॥ १ ॥
संशय शोक परै करि सबही द्वंद दूर करि दिल रे।
काम क्रोध भर्म करि कानै राम सुमर हक हल रे ॥ २ ॥
मनवा उलटि मिल्या निजमनसूं पाया प्रेम अटल रे।
पांच पचीस एक रस कीना सहज भई सब सल रे ॥ ३ ॥
नख सिख रोम रोम रग रग में ताली एक अटल रे।
जन हरिराम भये परमानंद सुरति शब्द सूं मिल रे ॥ ४ ॥

राग मल्हार।

पद ९

रे नर सतगुरु सौदा कीजै।
इन सौदा में नफा बहुत है एक मना होय लीजै ॥ टेर ॥
मात पिता सुत भ्रात सनेही चौरासी लख हीजै ॥ १ ॥
जे कोइ चाहै रामभक्ति कूं गुरु की शरण गहीजै ॥ २ ॥
गुरुविन भरम न भाजै भवका कर्म न काल कटीजै ॥ ३ ॥
गुरु गोविंद विन मुक्ति न जिव की कहियो वेद सुनीजै ॥ ४ ॥
जन हरिराम और सब कूकस राम शब्द सत बीजै ॥ ५ ॥

पद १०

रे नर राम नाम सुमरीजै।
यासूं आगै संत उधरिया वेदाँ साखि भरीजै ॥ टेर ॥
यासूं धू प्रह्लाद उधरिया करणी साँच करीजै ॥ १ ॥
यासूं दत्त मछंदर उधरे गोरख ज्ञान गहीजै ॥ २ ॥
यासूं गोपीचंद भरथरी पैलै पार लंघीजै ॥ ३ ॥
यासूं रंका वंका उधरे आपा अजर जरीजै ॥ ४ ॥
यासूं रामानंद उधरिये पीपा जुग जुग जीजै ॥ ५ ॥
यासूं दास कबीर नामदे जम का जाल कटीजै ॥ ६ ॥
यासूं जन रिवदास उधरिये मीरां बात वनीजै ॥ ७ ॥
यासूं कालू कीता उधरे वास अमरपुर कीजै ॥ ८ ॥
यासूं जन हरिदास उधरिये दादू दीन भनीजै ॥ ९ ॥
जन हरिराम कहै सबही कूं जपताँ ढील न कीजै ॥ १० ॥

---

१ समूह।

राग विभास।

पद ११

प्रभुजी प्राण सकल के दाता।
दूजा देव किया दुनिया का तेरै तात न माता ॥ टेर ॥
जोतिस्वरूप सकल घट जोती रमता राम कहायो।
दृष्टि न मुष्टि सुन्यो नहिं देख्यो आप ऊपनो आयो ॥ १ ॥
सांख्य योग भक्ति सव जान्या एकते एक सवायो।
रामभजन विन कोइ न सीधा वेद पुराना गायो ॥ २ ॥
तीन लोक में नाम न तुमसा हमसा संत अनेकू।
मुख भरि वोल करूं क्या महिमा रोम रोम रटि एकू ॥ ३ ॥
तुम निर्मल दातार दयानिधि में मंगन मल धारी।
जन हरिराम शरण तेरी आयो दोय दुख मेटि मुरारी ॥ ४ ॥

पद १२

प्रेम भक्ति मोहि आपो।
मांग मांग दाता हरि आगै जपूं तुमारा जापो ॥ टेर ॥
आठ नवे निधि रिधि भंडारा क्या मांगूँ थिर नाहीं।
दे मोकूं हरिनाम खजाना खूट कवहु नहिं जाहीं ॥ १ ॥
इन्द्र अपूसरा सुख विलासा क्या मांगूँ छिन भंगा।
दीजै मोहिं परम सुख दाता सेवत ही रहुं संगा ॥ २ ॥
तीन लोक राज तप तेजूं क्या मांगूँ जम ग्रासा।
दीजे राज अभै गुरु देवा अटल अमरपुर बासा ॥ ३ ॥
आठ पहर औलंग[1] अणघड़ की ता सेती निस्तारू।
जन हरिराम स्वामि अरु सेवक एकमेक दीदारू ॥ ४ ॥

राग बड़हंस।

पद १३

प्राणी करलो राम सनेही।
विनस जायगी एक पलकमें या गंदी नरदेही ॥ टेक ॥
रातो मातो विषय स्वाद में परंफूलित[2] मनमाहीं।
जीवतणा आया जमकिंकर पकड़ि लेगया बाहीं ॥ १ ॥
मूरख मगन भयो माया में मेरी करि करि मानै।
अंतकाल में भई विड़ाणी सूतो जाय मसानै ॥ २ ॥

---

१ औलग=फरियाद। २ प्रफुल्लित।

राग रंग रूप नर नारी सब हुय जाहिंगे खाका।
जन हरिराम रहैगा अम्मर एको नाम अल्लाह का ॥ ३ ॥

पद १४

रे नर या घर में क्या तेरा।
जीव जंतु न्यारा घर माहीं सोई कहै घर मेरा ॥ टेक ॥
चीटी चिड़ी कमेड़ी उंदर घर माहीं घर केता।
आया ज्यों सबही उठि जासी वासो दिन दस लेता ॥ १ ॥
मैड़ी मंदिर महल चिणावै मारै ऊंडी नीवां।
दिन पूगे नर छांडि चलैगो ज्यूं हाली हल सीवां ॥ २ ॥
नव रंग रूप सोलह सिणगारा माया विषै विलासा।
जन हरिराम राम विन दुनिया होसी खासर[1] फासा ॥ ३ ॥

राग धनाश्री।

पद १५

मँगन कूँ दान देवो राम राय ॥ टेक ॥
मैं मंगन जन द्वार तुह्मारे राखो हरि शरणाय ॥ १ ॥
मैं भिखियारी भया बापुरा तुम दातार सदाय ॥ २ ॥
दीजै दान अभय पद दाता ऊणत रहै न काय ॥ ३ ॥
आठ पहर औलंग[2] हरि आगै करिहों चित्त लगाय ॥ ४ ॥
रीझैगा जब अमर गुसाँई दैगा पटा लिखाय ॥ ५ ॥
खातां कबू न खूटै रोजी दिन दिन अधिकी थाय ॥ ६ ॥
जन हरिराम भक्ति बगसीजै मुक्ति न मांगूँ काय ॥ ७ ॥

पद १६

ऐसे हैं राम गरीब निवाज ॥ टेक ॥
भीर परी प्रह्लाद उबारे हिरण्यकशिपु हण ताज ॥ १ ॥
मा उपदेस दियो ध्रुव सेती अटल बसायो राज ॥ २ ॥
टेर सुनत बेग हरि आये तार लियो गजराज ॥ ३ ॥
जन द्रौपां को चीर वधान्यो भई पंच भरताज ॥ ४ ॥
देवल फेर कियो जन साम्हो भक्तनामदे काज ॥ ५ ॥
दास कबीर घरे लदि बालद आन उतारे नाज ॥ ६ ॥
मीरां जहर कियो चरणोदक राखि भरोसो राज ॥ ७ ॥
सब संतन के कारज सारे भक्त विरद की लाज ॥ ८ ॥

---

१ खसर फसर। २ फरियाद।

जन हरिराम सदा सिध कामा राम सुमर महाराज ॥ ९ ॥

पद १७

परम सनेही प्यारो प्रीतमो देख्यो दिलड़ा के माहिं ॥ टेक ॥
वादल वादल वीजली ऐसे घट घट राम ।
मूरख मर्म न जाणियो पायो नाम न ठाम ॥ १ ॥
सतगुरु तो वोहरा भया सिख सौदागर होय ।
हरि सौदो चित चोहटो तोल न मोल न कोय ॥ २ ॥
सतगुरु बोहरा होय के वस्तु अमोलक देह ।
सिख साचा गाहक भया मन अरु तन करि लेह ॥ ३ ॥
विषम सरोवर नीर की अति ऊंडी बहु धार ।
एक मना तिर जाहिंगा दूजा डूबणहार ॥ ४ ॥
अगम देस अमरा पुरी जहाँ हरिजन का वास ।
तहाँ हरिरामें घर किया जन्म मरण तजि आस ॥ ५ ॥

राग गोढ़वाड़ी धनाश्री ।

पद १८

ब्रह्म विदेही वालिमा जीव नियारो नाहिं ।
एक अखंडी रमिरह्यो सून्य सेझड़ियाँमाहिं ॥ टेक ॥
सुरति सुहागिन सुंदरी लाडो शब्द सुजाण ।
सदा सनेही ऊपरै वारूं मन अरु प्राण ॥ १ ॥
धरिया कूँ नहिं धारती धुनि अधराँ सूं धारि ।
गगन मंडल में घर किया संशय शोक निवारि ॥ २ ॥
जन हरिरामा सुंदरी वर अजरामर पाय ।
अरस परस हुय मिलरही आवण जाण मिटाय ॥ ३ ॥

राग आसा ।

पद १९

अव नर चेतो रे कहुँ भाई तोकूं वार वार समुझाई ॥ टेक ॥
यो संसार भयो भवसागर ऊंडो अथग अपारा ।
बीच वहै विषयन की लहरां के वहग्या के पारा ॥ १ ॥
यो मन जानि भयो वाजीगर बाजी बहु विस्तारा ।
सुरति निरति की राँमति मंडी के जीता के हारा ॥ २ ॥
मोह माया की बांवरि मंडी भरम करम का फंदा ।

१ जाल ।

जाया जीव सब काल अहेरै[1] के छूटा के बंधा ॥ ३ ॥
तूं नर कोन पसाय[2] नचीतो जम सारीषा जोधा ।
जन हरिराम राम भजि लीजै तजियै काम रु क्रोधा ॥ ४ ॥

पद २०

पांडे देख पाखि मति भूलो आयो ओसर दूंलो[3] ॥ टेक ॥
एको पिंड एक है पाणी एक जोणि में आया ।
यामें ऊंच कौन है नीचा सब अवगत की माया ॥ १ ॥
कुल आचार करी कठिणाई ज्ञान विचार न पाया ।
वेद पुराण पढ़े पढ़ि पंडित आपा जग भरमाया ॥ २ ॥
चारों वरण चार आसरमा यामें आतम एक ।
जन हरिराम राम सुमरीजै या संतन की टेक ॥ ३ ॥

राग गवड़ी ।

पद २१

संतो देख पाख पग धरियै अंध कूप नहिं परियै ॥ टेक ॥
यो संसार भयो अँध कूपा पाँच विषय पनिहारी ।
तृष्णा वरत काम का चड़सा सीचत है मन सारी ॥ १ ॥
माया मोह वण्या कूसेटा[4] कूड़ कपट की क्यारी ।
जेपै दुख सुख भया अनेका भुगतै नर अरु नारी ॥ २ ॥
तीन लोक अरु भवन चतुर्दश जनम जनम मरि जासी ।
जन हरिराम रहैगा सोई राम भजो अविनासी ॥ ३ ॥

पद २२

संतो है इक मरणा सबकूं ।
जो कुछ किया जाय अब करणा वेग सुमरणा रबकूं ॥ टेक ॥
धंधे माहिं भयो नर अंधो मनवो माया सेती ।
एक राम नाम बिन तेरे मुखां पड़ेगी रेती ॥ १ ॥
घुंघा गोली ज्यूं धन गहला खिण खिण ऊंडा घालै ।
जब ते जीव पकड़ि ले जावै तब धन साथ न हालै ॥ २ ॥
वेद पुरान पढे पढि पंडित खंडित करै न कोई ।
अच्छर एक अखंडित ही बिन जावै दोझख़ सोई ॥ ३ ॥
बालापण तरुणा भयो वूढो तोइ न आपो चेती ।
जन हरिराम बीज बिन वाह्याँ कहा निपावै खेती ॥ ४ ॥

---

१ शिकार । २ प्रसाद । ३ दुलह=दुर्लभ । ४ मुरबाबन्दी ।

पद २३

संतो माया सबकूं लूटै ।
है जगमें ऐसा जन कोई राम नाम कहि छूटै ॥ टेक ॥
काया कोट दसुंदरवाजा ताक भरम का भारी ।
काम करम की भोगल मारी खसि खसि गया संसारी ॥ १ ॥
बलवंत मोह मारको सबमें मन मेवासी[1] राजा ।
दोड़ै माहिं थकौ गढ बाहिर एक न राखै साजा ॥ २ ॥
आस पास माया को घेरो विच है जीवका वासा ।
पांच पचीस मोरचा लागा वँचैगा कोइ दासा ॥ ३ ॥
जमरै आय जीव वस कीया देस दुहाई फेरी ।
जन हरिराम एक पल माहीं कोट भया ढिग ढेरी ॥ ४ ॥

पद २४

संतो ऐसा रे कोई सूरै काया गढ कूं चूरै ॥ टेक ॥
छूटा सारशब्दका गोला मुँही मोरचा भागा ।
ज्ञान ध्यान का हाथ खड्ग ले मनसूं लड़वा लागा ॥ १ ॥
साथी सबल मारि संशय कूं मन मोहादिक पाड़्या ।
मान गुमान घालि मुँह आगै काम क्रोध कूं ताड़्या ॥ २ ॥
नाम किया गढ़ के विच ड़ेरा अनहद नाद बजाया ।
एकै घरमें राग छतीसूं आनंद मंगल गाया ॥ ३ ॥
जन हरिराम बैसि छबि छाजै अटल अमर पद पाया ।
नाम नृपति की फेर दुहाई चहुँ दिस राज जमाया ॥ ४ ॥

राग मारू ।

पद २५

सयाने साच गहीजे हो ।
झूटी माया मोह में काँइ राच रहीजे हो ॥ टेक ॥
मात पिता सुत बांधवा को आगे को पूठ ।
म्हारो थारो करतड़ाँ आय गये सब ऊठ ॥ १ ॥
राम नाम कूं सुमरिये और निवारो फंध ।
एकै साँई वाहिरो जान सकल जग अंध ॥ २ ॥
वाद विरोध विकार कूं वेवे नाहिं गिवार ।
अंध धुंध में वहि गयो बिन गुरु ज्ञान विचार ॥ ३ ॥

---

१ किलेमें रहनेवाला ।

सुमति सुमारग सोध के चालैगा कोइ सूर।
हरिरामा दरगाह में भेटेगा निज नूर ॥ ४ ॥

पद २६

इन मन कूँ जान न दीजै हो।
मनसा साजन को नही तन भीतर लीजै हो ॥ टेक ॥
मन राख्याँ सब रस रहै मन ग्याँ सब रस जाय।
मन ही प्याला प्रेम का मन पीव प्यारा पाय ॥ १ ॥
सेझड़ियां सुख सुंदरी रमैं राम दिन रैन।
उर परमानंद ऊपजै अब और न को दुख दैन ॥ २ ॥
काम न काई कल्पना संसा गया नसाय।
नेह लग्यो रहमान सूं दिल दूज न आवै दाय ॥ ३ ॥
मैं मनसूं करि जानती सो मुझि सिलिया आय।
हरिरामा निज मन विचै कुछ अंतर रही न काय ॥ ४ ॥

पद २७

पाऊं मुझ पीतम प्यारा हो।
तन मन सोपूं तुझिसूं मिल यार हमारा हो ॥ टेक ॥
जो दम अहला जात है सुमरन विन सारा हो।
आपा उलटि विचारियै ब्रह्म वारंवारा हो ॥ १ ॥
तन जोबन हुय जावसी छिनमाहीं छारा हो।
सासोसास सँभारिये आतम आधारा हो ॥ २ ॥
सुख दुख सब संसार का अकूर अकारा हो।
अधर विना धर को नहीं भर दूभर भारा हो ॥ ३ ॥
जन हरिराम प्रकासिया अंतर उजियारा हो।
दर्शन हरि दीदार का दसवैँ हुय द्वारा हो ॥

पद २८

साजन सुख दीजै न्यारा हो।
रोम रोम में रसि रहे पीरन के प्यारा हो ॥ टेर ॥
अबला अति आतुर भई आपनपो दीजै हो।
साँइयां तुझ विन नाँ सरै मुझ वेग सिलीजै हो ॥ १ ॥

---

१ बड़ा दयालु। २ गडबड में। ३ कोमल। ४ बेकार, व्यर्थ। ५ दुःसाध्य, मुश्किल।

तन मन तेरा तूं धणी मेरा नहिं सारा हो ।
भली बुरी सब जीव की तुही जाननहारा हो ॥ २ ॥
मैं मध्यम तन हीनता तुम उत्तम यारा हो ।
प्रीति पूरबली जान के होवत नहिं न्यारा हो ॥ ३ ॥
आपा अंतर मेटिके अपनी करलीन्हीं हो ।
जन हरिरामें दोस्ती आतम से कीन्हीं हो ॥ ४ ॥

राग विहागड़ो ।

पद २९

देख्या राम निरंजन राया ।
शोभा अनँत कही नहिं जावै वाजा अनहद वाया ॥ टेक ॥
काया कोट वन्यो विन टाँची चूनो कली न लाया ।
करता पुरुष भया कारीगर छाजा खूब वनाया ॥ १ ॥
यामें एक विदेही पुरुषा इला पिंगला राणी ।
सुषुमन सदा सुहागनि सुंदरि मोक्ष मुक्ति जहाँ जाणी ॥ २ ॥
अणभै राज करत अविनाशी जहाँ चित चाकर लाया ।
जन हरिराम छाँड़ि हदवासा बेहद वास वसाया ॥ ३ ॥

पद ३०

संतो सतगुरु करण सिहाई ।
अंतर माहिं निरंतर देख्या सहजाँ भेद बताई ॥ टेक ॥
सहजाँ पुस्तक वेद पुराना सहजाँ अंछर वाचै ।
सहजाँ तार तबल घन तूरा सहज नचइया नाचै ॥ १ ॥
सहजाँ गंग जमुन का मेला सहजाँ करत स्नाना ।
सहजाँ देव सेव घट भीतर सहजाँ ब्रह्म ज्ञाना ॥ २ ॥
सहजाँ जोग जुगति भी सहजाँ सहजाँ ऋधि सिधि दासी ।
सहजाँ गगन ध्यान धुनि लागी सहज मिल्या अविनाशी ॥३॥
सहजाँ सहजाँ एक भया सब रामनाम कूं जाण्या ।
मोक्ष मुक्तिका ना कोई संसा सहजाँ शब्द पिछाण्या ॥ ४ ॥
सहजाँ सुरति निरत भी सहजाँ सहज मंदिर में वासा ।
सहज पिया सूं सेझ रमंता सहज किया घर वासा ॥ ५ ॥
सहजाँ इला पिंगला सहजाँ सहजाँ सुषुमणि नारी ।
जन हरिराम सहज घटभीतर पाया देव मुरारी ॥ ६ ॥

राग केदारो।

पद ३१

रहियै राम रंग मैं डूब चंगा राखि तन मन खूब ॥ टेक ॥
सावा पीला लाल सपेता केता रंग लगाया।
जबलग राम रंग नहिं लागा उडताँ वार न लाया ॥ १ ॥
सिरपर सांग पहरि भयो स्वामी छापा तिलक बणाय।
जबलग हरि की भक्ति न जानी संग दुनी के जाय ॥ २ ॥
करि करता पूजै कृत्रिम कूं हेत घणै हितकार।
जबलग प्रेम पियास न हरिका मोह्या मोह विकार ॥ ३ ॥
वेद कथा बहु करत उचारा अनुभव ज्ञान सुणाय।
जबलग आपा खोजत नाही भूलो और भुलाय ॥ ४ ॥
बाजा राग छतीसूं सा रे करि तणतण तांत बजाय।
जब अंतर अनुराग न उपज्यो गाय भाँवै मत गाय ॥ ५ ॥
जन हरिराम रची है रंगत करि करि अधिकी ख्याँति।
प्रेम पास दे रंगी पिछोरी लगै न दूजी भाँति ॥ ६ ॥

पद ३२

रहियै नाम मैं गलतान नहि तो जाहिंगो निसतान ॥ टेक ॥
मारि द्वंदर मेट दुबध्या धारि अधरा ध्यान।
होइ तन मन माहिं परचा दाखिया गुर ज्ञान ॥ १ ॥
शब्द कुहाड़ी सूड़ साँसौ सुकृत करि किरसान।
नाम निज कण बहुत नेपै भूख दुःख नसान ॥ २ ॥
मन पवना सिल लियो लाटो सिखर आई साख।
ज्ञान की भरि गुण गाढी लदे बालद लाख ॥ ३ ॥
तत्त ताँडै तणो नायक जाय समदाँ पार।
हरिरामां जब आय बैठा आर भार उतार ॥ ४ ॥

पद ३३

जिंदरिया जाहिंगी रहता है हरिनाम ॥ टेक ॥
जिंद थकी नहि जाणियो प्राण आपणो पीव।
आँथ पड़ै कर पारकै जम लेंजासी जीव ॥ १ ॥
बालपणै नहिँ जाणियो भर जोबनमैं काम।
तन तरुणा वृद्धा भयो तोइ न चेतै राम ॥ २ ॥

---

१ काला। २ एक प्रकार का निकृष्ट लोहा।

हल चल सास सरीर में मन छाँड्यो अहंकार।
पूत पिता परिवार में संग न चालणहार ॥ ३ ॥
पिंड धरती पोढावियो कह तेरा नर कौन।
राम भजन विन दूसरा सब ही आवागौन ॥ ४ ॥
हरिरामा सतगुरु मिल्या सतका शब्द सुनाय।
राम नाम कूं सुमरताँ जीव न परलै जाय ॥ ५ ॥

पद ३४

भगरिया ज्ञान की जाविच अधरा ध्यान ॥ टेक ॥
काया काची वेलड़ी विच पाका फल जानि।
चाखत ही चेतन भया अंधा रह्या अजानि ॥ १ ॥
नर मूरख निश्चै विना दूर दिसंतर डोल।
सोसाहिब घट भीतरै ताहि न देखै खोल ॥ २ ॥
जग सागर विष लहरियाँ के आवै के जाय।
हरि वेमुख से वहिगया हरिजन पार कराय ॥ ३ ॥
पीव मिलन के कारणै लंघिया अवघट घाट।
अगम अगोचर धामकी सहजाँ पाई वाट ॥ ४ ॥
हरिरामा हद छाँडिके वेहद में लवलीन।
अलख अजोनी आतमा सोई दोसत कीन ॥ ५ ॥

राग सोरठ।

पद ३५

कोई मन मृगे कूं मारै रे।
तन खेती में चरि चरि जावै है नहिं मेरे सारै रे ॥ टेक ॥
मृग एक पाँच है हिरणै लारि पचीस लवारै रे।
भर्म कर्म इनका है संगी जे कोई दूरि विडारै रे ॥ १ ॥
निशि दिन नाम करत रुखवाली ज्ञान ध्यान शर धारै रे।
उलटी दृष्टि मुष्टि विन संधै सुरति निरति नहिं टारै रे ॥ २ ॥
शील की वाड़ सँवार चहुँ दिशि प्रेम की पासी डारै रे।
जन हरिराम मारि मन मिरगा सब ही काम सुधारै रे ॥ ३ ॥

पद ३६

माधव का चाकर मैं हूं हो।
आदि अंत मध्य नाम तुम्हारो पार उतारण तैं हूं हो ॥ टेक ॥
मैं दुखिया काहे दारिद्री तेरै कमी न काई।
दीनबंधु दाता सबही का भाग परापति पाई ॥ १ ॥

तीन लोक का ठाकुर तुम हो और किसी को जाचूँ।
तुम हरता तुमही करता नाच नचावो नाचूँ ॥ २ ॥
का तो देश दिशंतर डोलूं का बैठूं घर माहीं।
डिग सिग मिटै नहीं जब जीवकी कारज सरै न काहीं ॥ ३ ॥
जो मैं वास करूं बन बनमें मनवो रहण न पावै।
घरमें धका धूम बहुतेरी कहु कैसे बनिआवै ॥ ४ ॥
मुझि औगुणका छेह न कोई तुझि गुणवंता साँई।
जन हरिराम कहै जहां राखो हरि तरवर की छाँई ॥ ५ ॥

पद ३७

संतो करक कलेजा माहीं हरि बिन भाजै नाहीं ॥ टेक ॥
सूती ही स्वप्ने में जानूँ सही पधारे सैन।
आधी हुय हुय मिलबा लागी ऊघरि आये नैन ॥ २ ॥
तुम तो अंतरजामी कहियो मुझ माहिंलैरी जानो।
मुश्किल होय हमारे मन मैं तुम करता आसानो ॥ ३ ॥
राज पाट सुंदरि सुत वित ही दूजा सुख संसारा।
एता परंत न माँगूं कबहू रामनाम विन खारा ॥ ४ ॥
जन हरिराम कहै सो कीजै दीजै दरशन तेरा।
अरस परस मिल मोहि मिटावो आवन जावन फेरा ॥ ५ ॥

पद ३८

जीव रे जुगति सों कर जीण।
पांच पायक पेल पैतॆल मान का गढ़ लीण ॥ टेक ॥
सुरति घोड़ा निरति साखॆति क्षमा करि खोगीर।
पागड़े पग देत सासा डाक पैलै तीर ॥ १ ॥
चौकॆडै चित धारि चौकस लगाम लिवकीलाय।
प्रेम की सिर पहर पाखॆर अगम दिशि कूँ ध्याय ॥ २ ॥
तन तॆरकस बांधि गाढा ज्ञान गह कॆम्बाण।
ध्यान मूॆठी धारि उन्मनि शब्द लावो बाण ॥ ३ ॥
साच की बंदूक संाहो बचन गोली वाहि।
जामकी सिलगाय जतना डिॆग्गे द्वंदर ढाहि ॥ ४ ॥

---

१ तह। २ पेरोंके नीचे। ३ साटका, ताजना। ४ घोड़ेकी काठी के थड़े। ५ चौफाल कुदान। ६ बख्तर। ७ भाथाण। ८ कब्जा, काबू। ९ डिग=दिसा या आसपास।

सेल सुमरण सांहि सहजाँ तत्त कर तरवार।
हरिरामा जन एह औसर जीत भावै हार ॥ ५ ॥

पद ३९

मन रे गुरू का उपकार।
विना कूंची खोल ताला मुक्ति का भंडार ॥ टेक ॥
वेद विन इक भेद भेद्या कह्या सुणिया नाहिं।
सहज ब्रह्मा पढै पोथी एक अक्षर माहिं ॥ १ ॥
उलट हद कूं चढ़्या वेहद वंकनाली पूर।
इला पिंगला वीच सुषुमण निरख आतम नूर ॥ २ ॥
विना वाती ज्योति झिलमिल अखंड दीया लोय।
देह विन विदेह पुरुषा लहै महरम सोय ॥ ३ ॥
पंख विन इक जान भँवरा विना वाड़ी वीच।
हरिरामा रहु ऐसे न्यारा कमल कंदम न कीच ॥ ४ ॥

पद ४०

भरम कोई सतगुरु भांजैरे। साचो नाम सुनाय ॥ टेक ॥
सतगुरु मेरे सिरधणी मैं सतगुरु का दास।
वाके पास विलंबियै काटै जम के पास ॥ १ ॥
योग यज्ञ जप तप करै अठ सठ तीरथ न्हाहिं।
उर आतम इक तार विन जग के गेलै जाहिं ॥ २ ॥
वेद कथा सुन सीख के वाचै देवै विचार।
नाम नियारो रहिगयो करि करि लोकाचार ॥ ३ ॥
विन गुरु गम निश्चय विना कहै कहावै कूर।
हरिरामा उन जीव सूं देख रहीजै दूर ॥ ४ ॥

राग जैतश्री।

पद ४१

सोई अभागिया रे हरि सूं नाहिं सनेह।
माया मोह मगन भयो मनमें विषयां सेती नेह ॥ टेक ॥
रामनाम चेत्यो नहीं बालक तरुणां माहिं।
पीछै पांव थकै सिर कंपै अँखियां सूझै नाहिं ॥ १ ॥
औसर मिनखा देह को भोंदूपणै न भूल।
आयो हीरो गांठि सूं जाहि जतन विन खूल ॥ २ ॥

---

१ साहनी=फोज। २ चरण।

कूड़ कपट फिर फिर किया जहँ तहँ आधा होय।
आवै विरियां अंतकी कारज सरै न कोय ॥ ३ ॥
विणज बटा धन बहु किया अपने स्वारथ जानि।
निज परमारथ बाहिरो आखिर ह्वैगी हानि ॥ ४ ॥
वार वार मैं क्या कहूं कह्यो न मानै कोय।
ऐसे कीड़ो आक को अंब कहां रे होय ॥ ५ ॥
या जग माहीं आयके केता काम कमाय।
जन हरिराम भजन विनएकै न्याय रीता नर जाय ॥ ६ ॥

पद ४२

सोई वडभागिया रे खालिक से मिल खेल।
द्वंद वाद से रहत है पाँच पचीसूं पेल ॥ टेक ॥
उलटा मन गगन किया आसन हट पचि मरना नाहिं।
पिंड ब्रह्मंड अखंड भया परचा सुरति शब्द के माहिं ॥ १ ॥
अष्ट प्रहर आनँद रहै मनमें रोम रोम जस गाय।
जाति न पाँति वरण नहिं वाकै तासे ध्यान लगाय ॥ २ ॥
चोथे चित चेतन किया मेला बोलै अनहद वैन।
आतम एक सकल करि देखै दुर्जन ना कोई सैन ॥ ३ ॥
भर्म कर्म संशय नहिं सोगा आसा छांडि निरास।
जन हरिराम शब्द किया सुनमें एक निरंतर वास ॥ ४ ॥

पद ४३

सुणो नर नारिया रे अपनो पीव पुकार।
नहिं तो परलै जावसी लख चौरासी धार ॥ टेक ॥
सतगुरु शब्दांसों कहै मनवा ताहि न भूल।
एसो जुगमें को नहीं रामनाम से तूल ॥ १ ॥
साधु विना कुन सीखवै रामभजन की रीति।
बूडा से नर वापड़ा करि करि जग सूं प्रीति ॥ २ ॥
यारी हरि सूं कीजिये दूजा दाव निवारि।
पासो पिउसों खेलतां कदे न आवै हारि ॥ ३ ॥
साधु सिल्या सुख संपज्या उपज्या परम आनंद।
जन हरिराम कहै बलि जाऊं जिन मेट्या दुखद्वंद ॥ ४ ॥

इत्यपूर्णम्।[1]

---

१ समस्त बाणी श्लोक मेधा ४३६८।

अथ श्रीविहारीदासजी महाराज का झरझरा ।

वदत संत ररकार लगत रग धमक मृदंग तत शब्द नचकता ।
अध मध उतम उतमअति सुमरण कीर्तन करण कल्याण गवकता ॥
कमंडलु जल स्नान खल़ल़ जल निर्मल चरचत अंग तिलकता ।
अधःकमल पर अमृत वर्षत छकत अकथ छक अकबक बकता ॥
ऊर्ध्वे घरर घर अंवर घणणण भणण भृंग मध सिंधु खलकता ।
विधिविधि वाज अनँत गम उरमध घटघट प्रगट अघट ध्वनि गुनता ॥
सब तनु थरर रोम रग ररर्र फरर पंचसखि रंग रुचकता ।
फ्रिगटि फिरत पग गूघर घणणण चणणण मधुरिसि टेर वजकता ॥
करग्रह ताल स्तबक जब झरझर घरघर झणणण जींझ झणकता ।
त्रिकुटि अघट ध्वनि मुनिवर तणणण तार तबल ततकार तनकता ॥
शिवपद अचल अमल घट हल़ल़ल़ वदन भल़ल़ वपु चन्द झलकता ।
नमस्कार पद परम चरित्र नित्य करत विहारी वारी तुमारि पलकता ॥१॥

॥ इत्यलम् ॥

श्रीसिंहथल धाम की जितनी पाठ-वाणी की पुस्तकें हैं उन सब का क्रम इस भांति है । श्रीरामानन्दजी महाराज, श्रीजैमलदासजी महाराज, श्रीहरिरामदासजी महाराज, श्रीनारायणदासजी महाराज, श्रीहरदेवदासजी महाराज, श्रीरामदासजी महाराज, श्रीदयालुदासजी महाराज की वाणी तदनन्तर श्रीकवीर साहब, नामदेवजी, और रैदासजी की वाणी लिखी हुई हैं जिनका नित्यं प्रति पाठ होता है । तथा श्रीखेड़ापा[1] धाममें श्रीहरिरामदासजी महाराज, श्रीरामदासजी महाराज, श्रीदयालुदासजी महाराज, श्रीपूरणदासजी महाराज, और श्रीअर्जुनदासजी महाराजकी वाणी का पाठ होता है बाकी पाठ पूर्वोक्त ही है । परन्तु अब कई महानुभावों के हृदय में शंका होने लगी है कि श्रीनारायणदासजी महाराज थांभायत थे अतः श्रीसिंहथल पाटगादी पर विराजमान आचार्यों की वाणी से पहिले श्रीनारायणदासजी महाराज की वाणी का यह विपरीतक्रम किस कारण से हुवा । श्रीरामदासजी महाराजनें भक्तमाल में थाँभायतों से पहले पाटगादी ही का क्रम वर्णन किया है । यथाः—श्रीहरिरामदासजी महाराज के वर्णन के वाद—

"रोम रोम सहजाँ लिव लागी । व्यारीदास मिल्या वडभागी" ॥

पाटगादी के अधिकारीजी का वर्णन कर फिर थांभायतों के लिये फरमाया—

"दास नारायण अमी धियाया । आदूराम रामगुण गाया" ॥

इन क्रम वाक्यों से यह निश्चय हुवा कि पहिले पाटगादी का और फिर थांभायतों का वर्णन है ।

आगे चलकर श्री दयालदासजी महाराज की वाणी देखते हैं तो पहिला ही क्रम दिखाई देता है । श्रीहरिरामदासजी महाराज के वाद ही

"व्यारीदास अपार बुधि राम संत जस उच्चर्यो" ।

फिर हरदेवदासजी महाराज का वर्णन किया—

"हरदेव भेव सतगुरु कृपा भक्त अंश परगट भए" ।

इस प्रकार क्रमशः पाटगादी का लेख देकर पश्चात् संवत् १८०६ में सबसे पहिले दीक्षा धारण करने की वजह से थाँभायतों में वडे जो श्रीनारायणदासजी महाराज है उनको स्थान दिया

"निर्मल दशा निर्दोषता नारायणदास विचार बुधि" ।

ऐसा नारायणदासजी महाराज के वास्ते लिखकर फिर श्रीरामदासजी महाराज के लिये वर्णन करते हैं ।

"भक्त समय भूमंडमें वलि वलि वारंवार नित ।
समत अठार प्रसिद्ध वर्ष नवको भल आयक ।
शुक्ल पक्ष वैशाख तिथी एकादशि लायक ॥

---

१ श्रीखेड़ापा थाँभायतों के ठिकानो में भी इसी प्रकार पाठ है । केवल थाँभायत महात्माओं की वाणी अधिक हैं जिसका कई ठिकानों में अनुक्रम से श्रीदयालुदासजी महाराजकी वाणीका पाठ न करके अपने महात्माओं की वाणीकाही पाठ करलेते हैं ।

तादिन उदय उद्योत परस सतगुरु पद पूरा ।
आप आप मिल आप राम भज उदय अंकूरा ॥
सद्गुरु मिल सद्गुरु भया द्याल बाल धर ध्यान चित ।
भक्त समय भूमंडमें बलि बलि वारंवार नित ॥ १ ॥"

यह द्याल महाराज विरचित भक्तमालका लेख है । आगे चलकर श्रीपूरणदासजी महाराज की वाणी को देखते हैं तो आपने भी यही क्रम दर्शाया है, श्रीहरिरामदासजी महाराजका वर्णन कर फिर

"दास विहारी विमल बाणी जासु सिख हरदेव ।
तासु मोतीराम धिन रघुनाथ सतगुरु सेव ।
तो निजमेवजी निजमेव पायो भक्ति को निजमेव ॥ १ ॥"

इस प्रकार पाटगादी का वर्णन कर फिर श्रीरामदासजी महाराजके लिये वर्णन करते हैं

"हरिराम सिख धिन रामदासजु और नहिं कोइ आज ।
निरख सब निरताय निर्णय करण जीवां काज ।
तो महाराज जी महाराज मंडमें अवतरे महाराज ॥ १ ॥"

इस प्रकार श्रीरामदासजी महाराज श्रीदयालुदासजी महाराज और श्रीपूरणदासजी महाराज के फरमाने के अनुसार पाटगादी के क्रमसे उन उन आचार्यों की वाणीका यथाक्रम पाठ बराबर होता चलाआता है सिरफ श्रीनारायणदासजी महाराज की बाणीके पाठ में पूर्वोक्त आशंका होती है. परंतु यह शंका तो श्रीदयालुदासजी महाराजने अपने गुरुप्रकरणके प्रकरण ७ में पहिलेही निवारण करदीहै ।

सं. १८३४ के चैत्रकृष्णा ७ को श्रीहरिरामदासजी महाराजके शिष्योंने श्रीगुरुदेवजी श्रीहरिरामदासजी महाराजका जीवित महोत्सव (मेला) मनाया जिसमें श्रीजी महाराजके सब शिष्य प्रशिष्योंको कुंकुमपत्रिका दीगई सैंकडो कोसों से हजारों यात्री दर्शनार्थ आये जिसके बारे में श्रीरामदासजी महाराजने अपनी वाणी में फरमाया है—

"मेलो कर गुरुदेवजी सब कों लिए बुलाय ।
दर्शण दे पावन किए मिले ब्रह्म में जाय" ॥ १ ॥

श्रीहरिरामदासजी महाराजकी परची का वर्णन—

"धाये जबै महोत्सव माथे जहँ जहँ पूगे समंचार ।
भाई बाई रामसनेही सब आये स्वामी के द्वार ॥
रामप्रताप कमी नहिं काई इहाँ धन ईशतणा भंडार ।
मावै नहीं लोक पुर माहीं ऐसो थटियो थाट अपार ॥ १ ॥

दोहा ।

अष्टसिद्धि नवनिधिजु पुनि, हाजर हुई सो आन ।
श्रीस्वामी के भवनमध्य, सब विधि भए समान ॥ १ ॥"

इस प्रकार बडे धूम धाम के साथ पांच दिन तक मेलेका उच्छवसमाज होता रहा, इसका आनंद तो वेही जानते हैं जिन्होंने उसका अनुभव किया ।

"वह शोभाजु समाज सुख, कहत न वनैं खगेश ।
वरणै शारद शेष पुनि, सो रस जान महेश ॥ १ ॥ (रामायण)

महादेव के समान इस आनंदको पाकर लोक कृतकृत्य हो आज्ञा माँग माँग सब चलेगए। तत्पश्चात् श्रीरामदासजी महाराजभी श्रीजीमहाराज श्रीहरियानंदजी महाराजसे आज्ञा लेकर दिव्य अलौकिक गुरुमूर्तिका ध्यान करते हुए पीछे खेड़ापे पधार गये ।

जीवित महोत्सव से पंद्रहवें दिन अर्थात् संवत् १८३५ के चैत्र शुक्ल ७ शुक्रवारके दिन श्रीहरिरामदासजी महाराज ने परम धाम पधारनेका दृढ निश्चयकर विरहदुःख से दुःखित श्रीनारायणदासजी महाराज को जिसप्रकार अंतिम शिक्षा, आज्ञा और जो महत्त्व प्रदान किया उनका वर्णन श्रीदयालुदासजी महाराज गुरुप्रकरणमें श्रीकृष्ण उद्धव रूपसे इस तरह करते हैः—

निजपुर हरिजाताँह प्रसन्न हुइ उद्धव कह्यो ।
शब्द ब्रह्म साथाँह कलेवर हित कीज्यो मती ॥ १ ॥ (गुरुप्रकरण)

अर्थात् परमधाम पधारते हुए कृष्णस्वरूप गुरुमहाराज श्रीहरियानंदजी महाराज उद्धवरूप नारायणदासजी महाराजको निज विछोहके कारण अत्यंत दुःखित देखकर आपने उपदेश किया कि शब्दब्रह्म तो अपने साथ है और कलेवर (शरीर) के लिए सोच करना मत । क्योंकि यह तो पांचभौतिक नाशवान् ही है ।

महापुरुषवाक्य हैं–जो तूं चेला शब्द का शब्द ब्रह्म कर जान ।
जोतूं चेला देहका देह खेह की खान ॥ १ ॥

इसलिये सोच तो तीन ही कालमें नहीं करना चाहिये । फिर आप श्रीमुखसे फरमाते हैं—

"मैत्रेय रामदास सखा एक मेरो यहाँ ।
धीरज ध्यान प्रकास हरदेवो होसी इसो ॥ १ ॥ (गुरुप्रकरण)

अर्थात् हे नारायणदासजी, यहां एक मेरा रामदासजी जो है वह साक्षात् मैत्रेय

---

१ "यूं रामै जन मांगी आज्ञा । लागत जान गुरांकी आग्या ॥
स्वामी कह्यो रहो तुम याहीं । इन कारण ठहरे जब नाहीं ॥
कर परणंत बहुत परकारै । ध्याये मुरधर देश मँझारं ॥
(परची श्रीहरि०)

२ इस सोरठेमें सखापद जी है सो उद्धव के लिये ही है क्योंकि भगवान् के सखा उद्धवजी ही थे—

ऋषि हैं बडे धैर्यवान् हैं औ ज्ञान का प्रकाश करने वाले हैं । तत्रापि उनके लिये भी यही कहना है कि इस नाशवंत शरीरके लिये सोच न करें, और हरदेवजी रामदासजी के तुल्य ही धैर्यवान् और ज्ञान का प्रकाशक होगा; परंतु अभी बालक है इसलिये इसको धीरज दिलासा बंधाते रहना; इस प्रकार फरमाकर जैसे परमधाम पधारते हुए भगवान्ने उद्धवजी के लिये महत्त्व प्रदान किया—

नोद्धवोऽण्वपि मन्न्यूनो यद्गुणैर्नार्दितः प्रभुः ।
अतो मद्वयुनं लोकं ग्राहयन्निव तिष्ठतु ॥

(श्रीमद्भागवत स्कंध ३ अध्याय ४ श्लोक ३१)

अर्थात् उद्धव मुझसे अणुमात्र भी न्यून नहिं है क्योंकि यह विषयोंसे बिलकुल क्षोभयुक्त न हुआ, इसलिये यह समर्थ उद्धव लोकों को मद्विषयक ज्ञानका उपदेश करता यहीं रहना चाहिये ।

दयालुदासजी महाराजने गुरुप्रकरणमें इसका रूपक इस प्रकार वर्णन किया कि उद्धवरूप नारायणदासजी महाराजको महत्त्वता दिराते हुए श्रीजीमहाराज फरमातेहैं—

"नारायण आज्ञा आदि, इण संज्ञा रहजे यहां ।
दासा सेव समाधि, भक्ति प्रेम सुमरण सदा" ॥ (गुरुप्रकरण)

हे नारायणदासजी, तुम्हें आदि आज्ञा है अर्थात् सबसे पहलही पहल तुम शिष्य हुए हो और दासातन, सेवा, समाधि, तथा प्रेमभक्ति और सुमरणमें तुम सदैव बडे तत्पर हो । अधिकारी बिहारीदासजीका तो देहान्त होगया है और हरदेवजी छोटे १० वर्षके बालक हैं और यह गुरुपरंपरा शिक्षा प्रणाली लोकोद्धारार्थ शुरू रखनेकी जरूरत है इसलिये तुमसे अंतिम यही आज्ञा है कि तुम्हारे शिष्य बेशक थांभायत बनें परंतु तुम इन संज्ञामें इसी धाममें निवास करना । इस आज्ञाको सुनकर श्रीनारायणदासजी महाराज विरहसमुद्रमें विकल होने लगे तब तो श्रीजीमहाराजनें फिर उनको दिलासादे आशीर्वादात्मक दो शब्द फरमाए—

प्रमाणः—वृष्णीनां प्रवरो मंत्री कृष्णस्य दयितः सखा ।
शिष्यो बृहस्पतेः साक्षादुद्धवो बुद्धिसत्तमः ॥

श्रीमद्भागवत स्कंध १० अध्याय ४६ श्लो० १

शुद्धि बुद्धि संतो सुनो धराधर्म आधार ।
कृष्णसखा जेहि विधि रहत उद्धव बुद्धि उदार ॥ १ ॥

रघु० भक्तमाल द्वापरखंड कथा २०

इस प्रमाण से सखा शब्द उद्धव काही संबोधन है ।

सोरठा ।

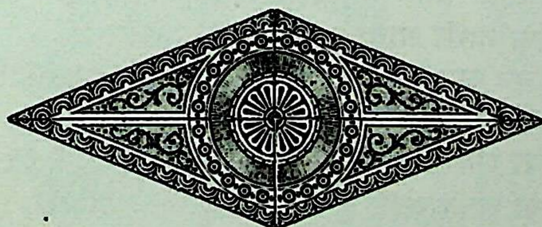
सब मेरा मुझ माँय, रामशब्द राता जिके ।
दूरा कदे न थाय, शब्दरूप मिलसां उठे ॥ १ ॥

दोहा ।

आनंदमें रह ज्यो सदा, कहज्यो सुमरण सार ।
रामसनेही रामजन सांचो एह विचार ॥ १ ॥ (गुरुप्रकरण)

यह अंतिम उपदेश फरमाकर अपनी वाक् वाणी बंधकर मोक्ष पधार गए । इस अंतिम गुरुवाक्योपदेशको धारणकर श्रीनारायणदासजी महाराजने जहाँतक आपका शरीर विद्यमान रहा तहाँतक श्रीसिंहथल निजधाम को छोडकर अन्यत्र कहींभी चरण न धरा । यहीं आप धाम पधारे; सिंहथल देवलोंमें श्रीजीमहाराजके देवलके पास सामनेही आपपर छत्री बनीहुई है । सब थांभायतों का वर्षी मेला अपने अपने स्थान ठिकानोंमें होता है परंतु नारायणदासजी महाराजकी वर्षी तो सिंहथलमें ही श्रीपाट कोठारसे सालानी होती चली आती है ।

अब देखिये श्रीहरिरामदासजी महाराजने जिन नारायणदासजी महाराज़को इतना महत्त्व दिया और श्रीदयालदासजी महाराजने गुरुप्रकरण में जिनके महत्त्वका पूरा पूरा वर्णन किया क्या ये वचन अप्रमाणिक समझे जा सकते हैं ? पाठकवृंद स्वयंही विचार करलें । वास्तवमें महात्माओंकी अनुभववाणीमें पहले पीछेकी शंका करणी ही व्यर्थ है क्योंकि उन महापुरुषोंके अनुभवशब्द हृदयांधकारको मिटानेके लिये साक्षात् सूर्यरूप हैं । उनमें पहिले पीछे क्या ।



---

१ वर्षे पेंतीसा चैत सुदि, सातम शुक्करवार ।
हरिरामा तन छांडिके, जाय मिले निरकार ॥ १ ॥

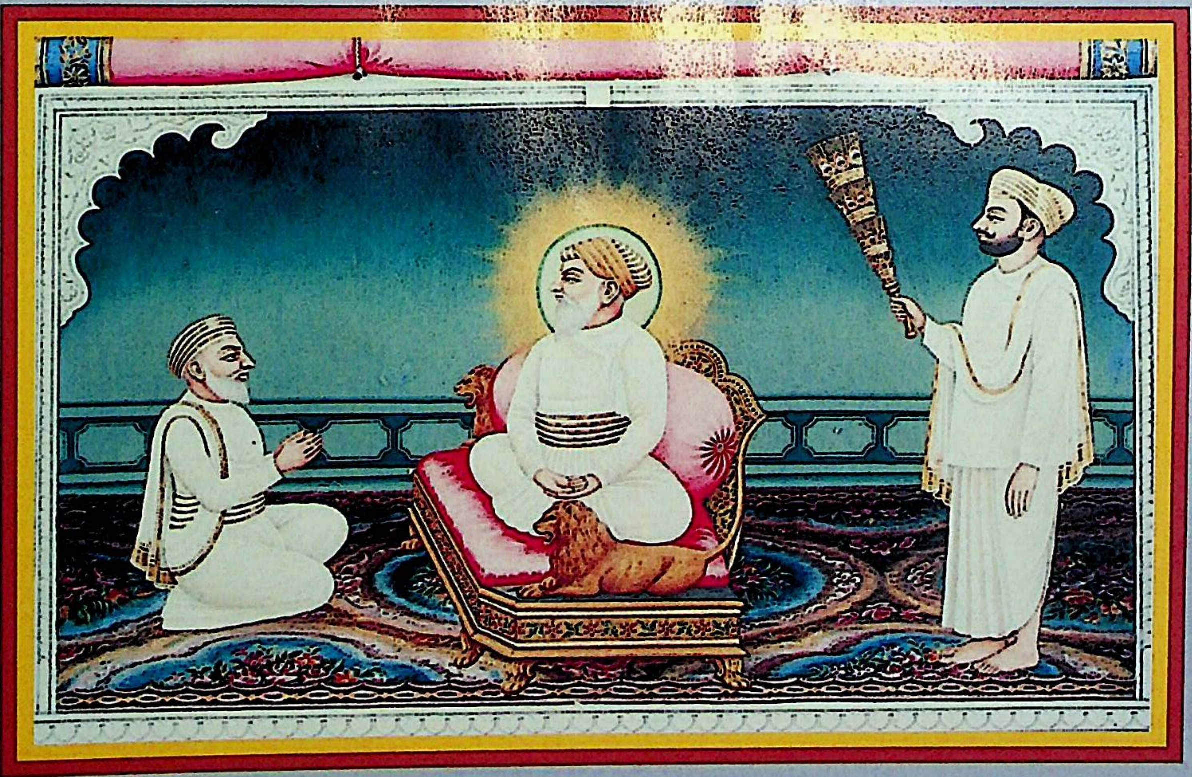
अथ श्रीनारायणदासजी महाराज की अनुभव बाणी ।

साखी ।

सत्त गुरू अरु सन्त जन, राम निरंजन देव ।
दास नारायण बीनवै, दीजै परभू सेव ॥ १ ॥
नरिया मन का दुःखड़ा, किसकूं कहै सुनाय ।
मन विषयारी विष दशा, दमदम दोड़यो जाय ॥ २ ॥
मन माया के संग फिरै, अंतर करै विकार ।
मन करि मनको मारिहो, हरि से करूं पुकार ॥ ३ ॥
सद्गुरु की आज्ञा हुई, मुखसें सुमऱ्या राम ।
नरिया निश्चो पाइयो, तजिया कुल बेकाम ॥ ४ ॥
तीन लोक का राजवी, राम निरंजन राय ।
सतगुरु के परताप तें, नरिया तन में ध्याय ॥ ५ ॥
नरिया गुरु आछी करी, चेतन चरण लगाय ।
भरम विषै वह जावता, अपणा जान समाय ॥ ६ ॥
नरिया गुरु ऐसी करी, तैसी करै न कोय ।
जग सागर संग जावतां, राखलियो है मोय ॥ ७ ॥
नरिया रामहिं सुमरियै, टालै जमकी घात ।
आलस ऊंघ न कीजिये, अवसर वीतो जात ॥ ८ ॥
नरिया रसना राम कह, कंठ कमल सुमराय ।
प्रेम पियाला भर पिया, पीवत पाप नशाय ॥ ९ ॥
हिरदै धुन लागी रहै, सुमरै मांहो माहिं ।
तन सारो चेतन भयो, नरिया सुख उपजाहिं ॥ १० ॥
नरिया नाभी आवतां, हूआ सास उसास ।
मन तन सबही नाचिया, सुमरन रग रग पास ॥ ११ ॥
रसना नाभी वीचसें, एक अखंडी तार ।
नरिया रोम हि रोम में, सार शब्द झणकार ॥ १२ ॥
नरिया भाग्य उदय हुआ, वनि है विधी अपार ।
रोम रोम में रम रह्यो, एक शब्द ररकार ॥ १३ ॥

अथ चेतावनी प्रारंभः ।

चेतावनि सुन चेतरे, मूरख मन्न गँवार ।
राम निरंजन ध्यायलै, दैगो सुक्ख अपार ॥ १ ॥



सिंहासन पर विराजमान - अनन्तश्री हरिरामदासजी महाराज
हाथ जोड़े हुए सम्मुख विराजमान - श्री नारायणदासजी महाराज



छन्द जाति ऊधोर ।

फिरियो जीव जन्मां माहिं । कित्थे चैन पायो नाहिं ।
अब तो मिनख करि मोकूंह । साँई सुमरसूं तोकूंह ॥ १ ॥
नायक जन्म देवो मोहि । हिरदै वीसरूं नहिं तोहि ।
करसूं संत की सेवाक । भज सूं राम कूं देवाक ॥ २ ॥
दीया गर्भ ही में वास । जठराअग्नि ही के पास ।
कीया देह का आकार । सारा अंग ही सुध्धार ॥ ३ ॥
उद्दर माहिं कीवी सार । ऊंधै मुक्ख अम्मी धार ।
राख्यो मास ही नव जाण । उद्दर वीच ओखो प्राण ॥ ४ ॥
माहीं करत है पुकार । वाहिर लाव हो कर्तार ।
मेरे तोहि को आधार । करसूं याद प्रियतम यार ॥ ५ ॥
श्वासोश्वास ही संभार । प्यारा राखसूं उरधार ।
अब तो जन्मियो है बाल । दया करी है दय्याल ॥ ६ ॥
दाई कहै सुधर्‍यो काम । वाहिर काढियो है जाम ।
माता हर्ष करि परसैह । बालो कान्ह सो दरसैह ॥ ७ ॥
पिता कहै हूओ न्याल । बेटो कमासी धनमाल ।
भाई कहै अपनो वीर । बल तो बंधियो शरीर ॥ ८ ॥
बहिनड़ बाल लेवै पास । राखै मनां मोटी आस ।
कडुंवै हुओ मंगलचार । गावै गीत बैठी नार ॥ ९ ॥
माता पिता सेती प्यार । सबसें करत है हितकार ।
बालो रमै खेलै सोय । माता पिता विकसै जोय ॥ १० ॥
मही दूध पीवै आय । लाड्डू चूरमाँही खाय ।
अब तो साथियाँ में जात । खेलै बहुत ही दिनरात ॥ ११ ॥
कूदै फैल ही करैक । किनता विढ़ही मरैक ।
राखै पिताही समझाय । मानै नहीं जोरै जाय ॥ १२ ॥
ख्याली खलकसूं खुशियाल । अब तो बीसर्‍यो गोपाल ।
खाँगी पाघ ही झुकाय । चंगा चौलणा लग्गाय ॥ १३ ॥
आछो करत है श्रृंगार । जोवै रूप ही दीदार ।
हूवो मरद ही मोट्यार । माहीं ऊपज्या विकार ॥ १४ ॥
करमी करै जागी जाय । कसराँ काढ़सी जमराय ।
राखै जोश ही मनमाहिं । मोसा और कोई नाहिं ॥ १५ ॥
मुखसे बुरो ही भाखैह । सब सूं वैर ही राखैह ।
हरि से हुओ गुनहै गार । जमरो मार करसी ख्वार ॥ १६ ॥

गाफिल समझ रे अज्ञाण। माथै राख पति कूं जाण।
कीयो नीरसे पैदाक। ताकूं भज्जरे गन्दाक॥ १७॥
दौलत दिवी है तोईक। गोविंद गाय रे सोईक।
अव तो व्याहि लायो नार। पासै वांधियो घरबार॥ १८॥
माता पिता से करि जुद्ध। माया वाँटि ली वेसुद्ध।
गाडै व्याज ही देवैज। दूणा दाम ही लेवैज॥ १९॥
पिव सूं प्रेम ही भागोक। लोभ रु मोह सूं लागोक।
नेहा नारि सें दिनरात। वूहो कामना में जात॥ २०॥
बंदो घिरत रोटी खाय। सोवै नींद ही अघ्घाय।
चाँवल खाय चंगा माल। सांई विना भूंडो हाल॥ २१॥
हत्त्या करै मारै जीव। वदला मांगसी रे पीव।
मांसहु खाय पीवै मद्द। ह्वैगो मरद ही गरद्द॥ २२॥
पीवै पोस्त ही को लाय। पोसत पिंड ही को खाय।
पीवै तमाकू अरु भंग। जावै नीच जूणाँ संग॥ २३॥
पांचूं पसरिया अप्पार। कीया कर्म ही हुशियार।
मनवो विषै सूं भरियोह। स्वादाँ लागके मरियोह॥ २४॥
बंदा छाँड मैला खाज। मांहे सुमर लै महाराज।
निश्चै नाम लै निराश। नहिं तो होय सत्यानाश॥ २५॥
दया दीनता कर भाय। माया राम लेखै लाय।
मन को देत है विच्चार। समझै नाहिं रे गंव्वार॥ २६॥
कीयो संपदा विस्तार। मेरै पूत पोता नार।
मेरै गाय गोधा अन्न। मेरै ऊंठ घोड़ा धन्न॥ २७॥
आंधो अहूं में डोलैह। मुख ता राम नहिं बोलैह।
कहारे भरमियो भइयाह। हरि से दूर ही रहियाह॥ २८॥
झूठै बंधियो रे जाल। बंदा खायसी रे काल।
हिरदै नाहिं हरि का हेत। मुंहडे पड़ेगी वहु रेत॥ २९॥
कीया श्याम से वचन्न। जासूं झूठ पड़ियो मन्न।
रक्षा करी दोहरी माहिं। तासें प्रीति कीवी नाहिं॥ ३०॥
कीया गुण ही अप्पार। ऐसा भूलग्यो करतार।
जान्यो नाहिं सिरजन हार। माथै पड़ैगी बहु मार॥ ३१॥
अब तो जरा जोजर थाय। वूढो अंग ही धूजाय।
कुड़ियो डांगड़ी संभाय। आंखे धुंध लागी जाय॥ ३२॥
वूढ़ा काम होवै नाहिं। आंधा अकल नाहीं माहिं।
नारी कहै कैसे काम। नाखो छानड़ी में चाम॥ ३३॥

बेटा कहै घरमें साल। पापी पड़्यो है बेहाल।
शूको टूक देवै लाय। गल में ऊलड़ै नहिं भाय॥ ३४॥
तन से काम करता सब्ब। आदर भाव करता जब्ब।
अब तन थाकियो म्हारोक। सब कूं लागियो खारोक॥ ३५॥
यो तो स्वारथी संसार। तेरो नाहिं रे परिवार।
बूढो दुखी है मनमाहिं। यामें कोई मेरो नाहिं॥ ३६॥
घर में घणो रे कीतोक। कुछ इक द्योह रे पूतोक।
पूतां कियो है विचार। पिता करांगा कुछ लार॥ ३७॥
दुनिया लोक बूझैंआय। बूढ़ा व्यथा तेरै काय।
खोटा कर्म लागा आय। पीड़ा पिंड सारै दाय॥ ३८॥
बूढ़ा राम कहै भाईह। दुष्टी हायही लाईह।
अब तो मौतही आईह। संगी कोई नहीं भाईह॥ ३९॥
नर तूं वीसर्‍यो वेकाम। संगी नाहिं कीयो राम।
चेत्यो नाहिं रे गंवार। आछो जन्म चाल्यो हार॥ ४०॥
नर तूं काहे कूं आयोह। हरि को नाम नहिं पायोह।
कंठ कूं काल रोक्यो आय। सब ही द्वार वूंघ्या लाय॥ ४१॥
मारां दिवी मांहो माहिं। दोहरो पिंड छूटै नाहिं।
बहुतो कष्ट ही हूवोह। माया मोह करि मूवोह॥ ४२॥
लोकां बाल कीयो छारि। देखा देखि रोवै नारि।
जमरो मारि लेग्यो जीव। आडो नाहिं आयो पीव॥ ४३॥

साखी।

पति सूं बे मुख होय करि, मिल्यो मायाके साथ।
अज्ञानी नर अहूं मे, पड़्यो पराये हाथ॥ २॥

छंद जाति ऊधोर।

अब तो लेचल्या जमदूत। कीयो मार करि धर पूत।
लेग्या धर्मके आगैहू। लेखा सर्व ही मांगैह॥ ४४॥
झूठा बोल कंह नहिँ सोय। सुकृत नाहिं कीयो कोय।
मैला काम ही कीयाक। हरि का नाम नहिं लीयाक॥ ४५॥
जापर कोपिया जमराय। माराँ दिवी जाझी लाय।
लातां मारियो पिच्छाड़। गल में घाल घींस्यो नाड़॥ ४६॥
ऊंधो टेर दीवी मार। जम्माँ जोर कूट्यो जार।
हिरदै नांहि हरिका लेस। नाँख्यो मुगदरां सूं फेस॥ ४७॥

आगै अग्नि का दव्वार। तपती भाय ताता सार।
ऊपर ताहिकै फेऱ्योह। बंदो बाल करि गेऱ्योह ॥ ४८ ॥
नाख्यो नरक ऊंडै ताण। कीड़ा तोड़ चूंटै प्राण।
कूकै पड़ै माथै मार। बंदा तोहि कूं धिरकार ॥ ४९ ॥
सापां विच्छुवां का कुंड। तामें डार दीयो रुंड।
विच्छू साँप पिंजरखांहि। दूतां मुगदराँ की लाहि ॥ ५० ॥
ऐसी त्रास दीवी ताहि। प्राणी पड्योही विललाहि।
एहा नरक ही भुगताहिं। भुगतै बहुत जुग्गां माहिं ॥ ५१ ॥
जग में स्वाद ही लीयाह। साहिब याद नहिं कीयाह।
यो तन फेर पावै काँय। पड़ियो अनंत ऊंडै माँय ॥ ५२ ॥
बंदा राम सुमऱ्यो नाहिं। दुःखां पार कैसे पाहिं।
मनमें राखता अभिमान। जोधा गया मैली खान ॥ ५३ ॥
करता गर्व ही गुम्मान। गया नरक ही निद्दान।
ऊंचा महल ही अव्वास। करता नारि नर विल्लास ॥ ५४ ॥
खाता मेवा मीठा भात। प्याला पीवता निव्वात।
निर्गुण नाम राता नाहिं। गया गंदकी कै माहिं ॥ ५५ ॥
मांही केई जुग्गां ताहिं। पीछै चोरासी कूं जाहिं।
जूणाँ अनेक ही भुगताय। जामें ऊपजै खपजाय ॥ ५६ ॥
बहुतो दुःख पावै जीव। सुमऱ्यो नांहिरे तैं पीव।
तातें कष्ट तन पायोक। जुग जुग माहिं भटकायोक ॥ ५७ ॥

साखी।

सतगुरु शरणै ऊबऱ्या, नरिये सुमऱ्या राम।
नहिं तो भरम्या जावता, दुख पड़ता वे काम ॥ ३ ॥

छंद जाति ऊधोर।

शरणै संत के आयाक। भावरु भक्ति ही भायाक।
सेवा धाल की लागाह। दुबिधा दोष ही भागाह ॥ ५८ ॥
रसना नाम ही लीयाह। अमृत कंठ ही पीयाह।
हिरदै ध्यान ही धरियाह। तन मन सहज थरहरियाह ॥ ५९ ॥
नाभी नाम ही निरधार। सुमरण सहज ही उच्चार।
संगी साँचही धाऱ्याह। झूठा पास ही डाऱ्याह ॥ ६० ॥
पति सूं प्रेम ही लायाह। हरि गुण हेत सूं गायाह ॥
सहजाँ ज्ञान ही आयाह। मनवै शान्ति ही पायाह ॥ ६१ ॥

उलटा पछिम कूं ध्यायाह । ऊंचा मेरु करि थायाह ।
वाजा गगन ही वायाह । निरँजन शून्य ही पायाह ॥ ६२ ॥
सुन में शब्द ही निरकार । लागी सुरत ही इकतार ।
शुन में सुक्ख ही भइयाह । दूजा दुःख ही गइयाह ॥ ६३ ॥
पूरण ब्रह्म ही कूं पाय । सहजाँ रहे सुख सम्माय ।
मिटिगे जनम अरु मरणाक । अब तन फेर नहिं धरणाक ॥६४॥
मिलिया नीर में हुय नीर । हंसा चुगत है हरि हीर ।
पाया राम ही महाराज । सरिया सहज जनका काज ॥ ६५ ॥

साखी ।

सतगुरु के परताप तें, नरियै नाम पियाह ।
प्यासा प्राण पिलाइया, पीवत ही जीयाह ॥ ४ ॥
और सकल कूं छाँडि करि, परस्या आतमराम ।
नरिया साँसा को नहीं, जाय मिल्या निजधाम ॥ ५ ॥

इति चेतावनी ।

अथ प्राण-परचा प्रारंभः ।

साखी ।

जन्म जन्म जिव भरमियो, माया मोह लगाय ।
भवसागर में डूबताँ, सद्गुरु लियो रखाय ॥ १ ॥

चौपाई ।

सद्गुरु न्यारा है निर्बाणी । दे दे ज्ञान तारिया प्राणी ॥
सद्गुरु पूरण ब्रह्म पियारा । दर्शन पायाँ विले विकारा ॥ १ ॥
सद्गुरु एकमेक है साँई । भूल पड्या जग जाणै नाँई ॥
सद्गुरु सेव करौं मैं थाँरा । मैं हौं तन मन जीव तुम्हारा ॥ २ ॥
सद्गुरु मोकों शरण उबारो । निशिदिन मेरे तोहि अधारो ॥
सद्गुरु मोकों डूबत तारो । भव सागर तें पार उतारो ॥ ३ ॥
सद्गुरु ऐसी दया उपावो । दुख दोज़क कों दूर गमावो ॥
सद्गुरु काम क्रोध कों पालो । मैं तो कपटी विषय विहालो ॥ ४ ॥
सद्गुरु आशा तृष्णा जालो । स्वादी मन माया मोह टालो ॥
सद्गुरु मैं तो अन्ध अज्ञानी । काटो कर्म करौ निज ज्ञानी ॥ ५ ॥
सद्गुरु मो मन दौड़ मिटावो । लालच लोभ रु मोह हटावो ॥
सद्गुरु देवो शील सन्तोषा । मारो मन्न करो निर्दोषा ॥ ६ ॥

सद्गुरु देवो ज्ञान विचारा। अवगुण मेटि करौ निस्तारा॥
जन हरिरामजु भर्म गमाया। संशय शोक रु कर्म नसाया॥ ७॥

साखी।

सद्गुरुसिरजन हार है, सब का समर्थ साम।
अवगुण मेट्या चालजी, दिया मोहि निज नाम॥ २॥

चौपाई।

राम राम रसना से लीया। प्रेम प्रकाश कंठमें कीया॥
मनवा माहिं नाम से लाया। हिरदै सुमरण हेत लगाया॥ १॥
नाभी भजन किया अधिकारा। पिंड सारेमें रमै पियारा॥
रोम रोम में अर्ध उचारा। अंग अंग में है विस्तारा॥ २॥
सहजाँ सुरति शब्द उलटाया। छांड्या देश विदेशां ध्याया॥
वंकीनाल चलै इक धारा। मेरुदंड में हुआ करारा॥ ३॥
वर्षा सहज वणी चहुँ खंडे। उलटा नीर चढ्या ब्रह्मंडे॥
सुनसागर के माहि समाया। अनहद गाज गगन गणणाया॥ ४॥
पहुँता सन्त अमीरस पीया। तृष्णा घटी जिके नर जीया॥
परब्रह्म से प्राण पिलाया। निशिदिन चरणे ध्यान लगाया॥ ५॥
जित्थे काल कर्म नहिं काया। जित्थे विषय विघ्न नहिं माया॥
राम निरंजन जग से न्यारा। दिया नरैकों सुक्ख अपारा॥ ६॥

साखी।

मैं हौं प्राणी आपका, कहां न कीजै दूर।
प्रेम भक्ति नरैकों दिवो, राखो नित्य हजूर॥ ३॥

चौपाई।

शरणै आइ दीनता दाखे। सद्गुरु मोकों चरणाँ राखे॥
सो गुरु दीया ज्ञान विचारा। भर्म कर्म तें कीया न्यारा॥ १॥
सद्गुरु मेरे किरपा कीनी। भाव भजन की आज्ञा दीनी॥
सद्गुरु सतका शब्द सुणाया। मुखते रामनाम सुमराया॥ २॥
रामनामसा नाम न कोई। भावे मॉंड सकल फिर जोई॥
राम राम कहि राम मिलावै। लख चौरासी कबहु न जावै॥ ३॥
सद्गुरु ऐसा तत्त्व बताया। निश्चय एको राम कहांया॥
सद्गुरु ऊपर प्राण अँवारी। तन मन शीश चरण में डारी॥ ४॥
रसना रटत जु नेह लगाया। कंठ कमल में सुमरण आया॥
गद्गद होइ प्रेमरस पाया। पी पी प्राणी कर्म नसाया॥ ५॥
मन इकतार नाम निज भाया। हिरदै ध्यान धणी का आया॥
दया दीनता ज्ञान विचारी। दिलकी दुर्मति दूर निवारी॥ ६॥

चेतन चलकरि नाभि सिधाया। श्वास उश्वासे सुमरण लाया॥
तन मन सब ही सहज नचाया। भाँति भाँतिका नृत्य कराया॥ ७॥
रग रग भीतर सहज पसारा। रोम रोम में है ररकारा॥
नाड़ि नाड़ि में जीव जगाया। सारशब्द के संग लगाया॥ ८॥
जीव पलटिया ब्रह्म जु होई। और विकार लिपे नहिं कोई॥
विरहनि झूरी अती अपारा। अब तो पाया पीतम प्यारा॥ ९॥
दया करी मोहि दुःख सिटाया। चरणकमल के बीच रखाया॥
ररंकार सहजाँ लिव लाया। प्राणी बहुत परम सुख पाया॥ १०॥
पीया ऐसी कृपा जु कीनी। शरणै सदा आपमें लीनी॥
सहाय करी अरु सुलटा थाया। पातोत्ताने बंध लगाया॥ ११॥
शिख्खर चढ़िया पूरब ध्याना। ठाम ठाम का पाट खुलाना॥
खूला ध्यान धरणि कों आया। पातालां में पन्थ जु पाया॥ १२॥
उलटा शब्द पछिम कों ध्याया। मन पवनाका बंध लगाया॥
वंकनाल में सहजाँ वहिया। मेरु मंझि मेवासा दहिया॥ १३॥
अधः ऊर्ध्वें विच राह चलाया। आकाशाँ में अनहद वाया॥
चंद रु सूर गगन घर लाया। नाद बिन्दु के माहिं समाया॥ १४॥
गहरी ग़ाज गगन गणणाया। वर्षे अमृत प्राण पिलाया॥
पी पी सन्त शुन्य में आया। चित शान्ती घर सहज सिलाया॥१५॥
मन पवना स्थिर दशम द्वारा। पांच पचीसों बंध्या सारा॥
इड़ा पिंगला सुषमण मेला। सुरति शब्द जहँ हूआ मेला॥ १६॥
शब्द निरंजन काज सुधारा। भवसागर ते पार उतारा॥
शब्द नकेवल ऊपर वारी। अपना जान रु लिया उवारी॥ १७॥
उत्तर दक्षिण ध्यान सिलाना। पूर्व पश्चिम माहिं समाना॥
परम शून्य है सरजनहारा। सहजाँ सिलिया प्राण हमारा॥ १८॥
सुखसागर है निर्गुण राया। दर्शन किया परम सुख पाया॥
त्रिबेणी में पीव निवासा। सिली पियारी लील विलासा॥ १९॥
पती ऐसी प्रीति लगाई। झिलसिल ज्योती से लिपटाई॥
भव कों वीसर चरणाँ आई। सहजाँ रहे अखँड लिवलाई॥ २०॥
संशय शोक सकलही मेटा। निर्भय निराकार कों भेटा॥
पूर्ण भया परम सुख पाया। तातें अंतर ध्यान लगाया॥ २१॥

साखी।

जीव शीवमें सिल रहे, दूर कहाँ नहिं जाय।
नरियै नाम जु ध्याइया, सहजाँ रहे समाय॥ ४॥

चौपाई ।

तहाँ न त्रिगुण मोह न माया । पांच तत्व नहिं कर्म न काया ॥
धरती वायु न आभ न तारा । राति दिवस नहिं अंध न कारा ॥ १ ॥
चंद सूर नहिं इंद न पानी । घाट न वाट न दुख न प्रानी ॥
जीव न जिंद न खानि न वानी । काम न क्रोध न लोभ न जानी ॥२॥
तीन लोक नाहीं ब्रह्मंडा । सात द्वीप नाहीं नव खंडा ॥
सात समुद्र नहिं नदी नहाया । भार अठारह वनी न राया ॥ ३ ॥
चार चक्र नहिं भटक न मरणा । जत्त न सत्त न भेष न धरणा ॥
काज़ी कुरान न वेद न ब्रह्मा । राव न रंक न रूप न रंभा ॥ ४ ॥
योग यज्ञ जप तप नहिं वरता । सेव न पूज न मूर्ति न धरता ॥
देव न दानव जोध न जुद्धा । जरा न जाल काल नहिं फंधा ॥ ५ ॥

साखी ।

एकाएकी ब्रह्म है, न्यारा सव घट माहिं ।
संत सयाना मिल रहा, दुनिया को गम नाहिं ॥ ५ ॥
बाहिर भीतर एक है, घट घट में निरकार ।
जिन पाया जिन सुमरि के, आप उपावनहार ॥ ६ ॥
परचा बहुता प्रानमें, हुआ लेवताँ नाम ।
कहनी को आवे नहीं, नरियो मिल्यो मुकाम ॥ ७ ॥

इति प्राणपरचा ।

पद १

गुरु दर्शन दो महाराजा ।
अब प्राणी पर दया करीजै सार सकलही काजा ॥ टेर ॥
सगुरु विछड़्याँ दुःख अपारा निशि दिन रहत उदासा ।
कृपा करो जन्म बेहाला कलपत पल पल प्यासा ॥ १ ॥
या जग माहीं सबै विड़ाणा किसका लेऊं अधारा ।
हरिरामा निजधाम पहूंता प्राणी करत पुकारा ॥ २ ॥
अवगुण गारो जीव हमारो शरणै करो सहाई ।
झूरै तन मन माहिं विचारा सतगुरु चरण लगाई ॥ ३ ॥
दरशन पायाँ पावन होई भय साँसा सब जाई ।
कहै नारायण गुरु सुखसागर सुखमें लौ जी मिलाई ॥ ४ ॥

पद २

मोहिं राखो राम हजूरा ।
जन्म जन्म के अवगुण मेटो जान न दीजै दूरा ॥ टेर ॥



श्री १००८ श्री हरिदेवदासजी महाराज
रामस्नेहि सम्प्रदायाचार्य सिंहस्थल (२)



दया करी गुरुदेव हमारे रसना राम रटाया।
कंठ हिरदा विच सुमरण साझ्या प्रेम पियाला पाया ॥ १ ॥
नाभिकमल निज नाम उचार्‍या रग रग में ररंकारा।
सारशब्द का सकल पसारा तन सारे ततकारा ॥ २ ॥
करता ऐसी कृपा कीनी उलटा ध्यान लगाया।
दास नारायण निरभै नैड़ा चरणां चाकर लाया ॥ ३ ॥

॥ इत्यंपूर्णम् ॥

अथ श्रीहरिदेवदासजी महाराजकृत ब्रह्मस्तुतिः।

छप्पय।

नमो आदि अविगत्त अगम हो आप अरूपी।
अवरण सदा अथाह लहै कुण थाह स्वरूपी ॥
ब्रह्म सार निरकार परापर नूर पियारो।
वसो सर्व जहँ वास नाथ निज आप नियारो ॥
अणदेह अखंड अजन्म अलख आप आप सम आचिए।
हरिदेव स्वांसि सस्तूति निज वायक तन मन वाचिए ॥ १ ॥
ब्रह्म नूर भरपूर सर्व निज इष्ट सधारा।
दृष्टि सार अनदृष्टि सृष्टि सब आप अधारा ॥
जीवन जाति सजीव पीव सबही का पेखो।
परै सकल अणपार वीच तहाँ सार विसेखो ॥
निज उहाँ नाथ अविगत अरस परम परा पुरुषोत्तमो।
हरिदेव स्वांसि निज राम हो नमो नमो निर्गुण नमो ॥ २ ॥
नमो नमो निरकार सकल सिर सार सहाई।
कला अकल अणक्रीत महा निज नीति कहाई ॥
देखण हार दयालु सर्व गत पेख सयाना।
पोषण भरण विचार करै हरि सहज पयाना ॥
परकार अघट घट घट प्रगट सुघट होय अणघट सता।
हरिदेव ब्रह्म हित उर प्रणम्य धर्म सबै निज हरि मता ॥ ३ ॥
सुख सागर हरि सोइ अगम आगर अति आनँद।
सुमर्‍याँ देह संतोष प्रीति परस्यां परमानँद ॥
अह निशि ताहि आधार संत उर धार सदाई।
सुख आपण दुख हरण शरण शीतल हरि थाई ॥

---

१ समस्त बाणी श्लोक मेधा ३४०।

मेटै जु मरण भव जा जनम सोइ मेटे साहिब सचा।
हरिदेव स्वासि हरि है सही कवहू नह काई कचा ॥ ४ ॥
अलख आप अण रूप पलक में विश्व पसारे।
कारण आप कल्याण देव कारज उन सारे ॥
समरथ नाम सचाह थाट ऐसो जग थाए।
घट मठ एह अकार करे हरि सहज किताए ॥
आतम्म आप आपै सहित रूप शक्ति एही रचे।
हरिदेव ताहि प्रणमै सरस साहिब हो साहिब सचे ॥ ५ ॥
सर्व रूप सर्वज्ञ अंग अन अंग अनेका।
संग रहत नहिं संग रंग अनरंग है एका ॥
अंश आप अवतार धार आतम अनपारा।
गुणां रहित सो रूप रहै निज रूप नियारा ॥
केताहि नूर विधि विधि कला करै नाथ सहजां मही।
हरिदेव दास वंदै हरष सोइ स्वासि समरथ सही ॥ ६ ॥
सहाय करण सब जान एक भगवान अनेका।
विश्व बहुत विस्तार आप सबही में एका ॥
पोषै सहज प्रकार परम तोषै सोइ प्यारे।
आदि मध्य अंत एक आप हरि होय अधारे ॥
निज पीव शीव जीवन सरब मेटै जन जामण मरण।
हरिदेव दास आनन्द करण नमो नाथ अशरण शरण ॥ ७ ॥
हरि गहरा गंभीर धीर हरि समा न होई।
सीर सुधा निज सार पीर पर जाणै सोई ॥
हरि दीरघ दीदार पार हरि नको पुणीजै।
हरि वैराट हकीम महा निज मूल सुणीजै ॥
हरि समा आप हरि है सही पाप जीव करि है परा।
हरिदेव वाप सब का अगम ताप तुरत मेटंतरा ॥ ८ ॥
दाता दीन दयालु जीव किरपालु सदाई।
अधः मूँह उरमात होय हरि जहाँ सहाई ॥
नख शिख सोंज सुरेश वणै हरि सहज वडालै।
दई जान नर देह प्रीति पाली सोइ पालै ॥
जीवियां जुगत मूवां मुगत हरि विन कुण ऐसी करै।
हरिदेव स्वासि सस्तूति निज तन वायक मन उच्चरै ॥ ९ ॥
हरि अथाह गुण होय सर्व कहा कथहि सयानो।
केइ अरबां जन कहै परम अनपार पयानो ॥

हरि सायर गुण तोय कहा सुगुरा नर सारै।
उक्ती आपै प्यास वाच गुण पियै सुवारै॥
निज व्राज ब्रह्म उर विच अवश्य कर उराह अवगाहियो।
हरिदेव धारि तन मन वचन चरण शरण हम चाहियो॥ १०॥

इति।

अथ गुरुस्तुतिः।

गुरु दाता निज ज्ञान ब्रह्म सत्ता विधि वाचे।
अनुभव दत्त अपार लेह सिख जाचक जाचे॥
भक्ति सार सोइ वाच वयण कर देह विचारा।
गुरु यह गम गंभीर कुरँद अघ मेटण हारा॥
आत्म कला ऐसी अगम सुगम करै संपति सची।
हरिदेव शिखाँ आनँद सरस वन्दन गुरु याविधि वची॥ १॥
गुरु विन भक्ति न भेव गुराँ विन जुक्ति अजुक्ती।
गुरु विन शिख ना सुखी परम गुरु विना न मुक्ती॥
गुरु विन सुधी न सार पार गुरु विना न पहुंचै।
गुरु विन किरिया कूर नाहिं गुरु विना सुनिहचै॥
गुरु विना काय न ह्वै गमा शून्य समा गुरु विन सिको।
हरिदेव कहै गुरु विन तिके जग जल वूहा नर जिको॥ २॥
गुरु विन सर्व गँवार पुनः पंडित ह्वै प्यारे।
गुरु विन कथनी कूर विना गुरु कहा विचारे॥
गुरु विन अर्चा किसी विना गुरु चर्चा अंधी।
गुरु विन नहिं व्यवहार सूंज गुरु विना न संधी॥
गुरु विना जिको गुण है अगुण सर्व सगुण गुरु साहिबी।
हरिदेव दास गुरु के शरण चरण कमल चित चाहिबी॥ ३॥
गुरु है दीन दयाल करै सिखपाल सदाई।
अखै भक्ति परसंग सदा सेवक सुखदाई॥
गुरु पावन गुरु परम जीव सिख जीवन जानो।
गुरु का गुण गंभीर दिपै रस राम दिवानो॥
गुरु समा आप गुरु है गहर मिटै सर्व जग वासना।
महाराज गुरां प्रणमूं तुझै यह हरिदेव उपासना॥ ४॥
दर्पण भयाँ मलीन दृष्टि मुख नूर न दरशै।
हीर जबै अणघाट शोभ सागी नहिं परशै॥
पंडित पूत अपाठ असत ह्वै जगमें आदर।
हय गति होय हठील मोल के समैं वेआदर॥

पता जु आदि कुल है सगुण गुरु बिन अगुण गिणीजिया।
हरिदेव मिले जब गुरु सही तब गुणवान सुणीजिया ॥ ५ ॥

इति ।

अथ करुणानिधान ग्रंथ प्रारंभः ॥

आदि ब्रह्म जन अनँत के, सारे कारज सोय।
जेहि जेहि उर निश्चो धरे, तेहि ढिग प्रग्गट होय ॥ १ ॥

छन्द त्रिभंगी ।

राक्षस ठगवाने ब्रह्मा ज्ञाने जाय लुकाने अपथाने।
मच्छा धरि प्राने जद भगवाने जलवहराने तिहठाने ॥
शंखासुर हाने निगम लराने श्याम दराने विधिसेतम्।
ब्रह्म हो अविनाशी आनंदराशी दोष विनाशी सुखदेतम् जिय० ॥१॥
हिरणख जब ठाढ़े कौन समाढ़े धर पय चाढ़े तब डाढ़े।
वेरा हरिताढे आयस गाढ़े वाराहगाढ़े तन वाढ़े ॥
राक्षस हणि दाढ़े इल गह काढ़े सो थिर माढ़े निजखेतम्।
ब्रह्म हो अविनाशी० ॥ २ ॥
अवनीके तवरे अगनिज अवरे मंजा कँवरे विच मवरे।
सिरियादे सिवरे हरि हित हिवरे न्याही निवरे जो जिवरे ॥
स्वालत सुत सँवरे वहँ विन भँवरे खेलत नँवरे निजखेतम्।
ब्रह्म हो अविनाशी० ॥ ३ ॥
प्रह्लाद पुकारे जिह ररकारे निश्चय भारे गमसारे।
हिरणाकश धारे नहीं हमारे क्रोध विचारे खगसारे ॥
प्रगटे अवतारे खंभ प्रहारे राक्षस मारे जनहेतम्।
ब्रह्म हो अविनाशी० ॥ ४ ॥
बालक धू ध्याये पिता बेठाये माँइ रिसाये दुखपाये।
गम पूछी माये हरि नहि गाये जब लिव लाये वनधाये ॥
धन धाम धमाये सब छिटकाये हरि उर पाये निज हेतम्।
ब्रह्म हो अविनाशी० ॥ ५ ॥
धूमर जब आये शिव भरमाये कँकण लराये उठधाये।
अखीक जिताये लारि पठाये शंभू भाये हरि आये ॥
तिरिया तन थाये नाच नचाये कर शिर आए भसेतम्।
ब्रह्म हो अविनाशी० ॥ ६ ॥
धाये तजि आरण करि जल कारण ग्राह विदारण जुध सारण।
बूडत वहँ वारण परे पुकारण उर इक धारण ररकारण ॥

सुनिये जव तारण चक्र सँभारण कपे वधारण करमुकतम् ।
ब्रह्म हो अविनाशी० ॥ ७ ॥
भवपुज के अंगा कुलधर्म भंगा गणिकासंगा विषरंगा ।
अजमेल अनंगा दोष उपंगा कर्म कुसंगा नितसंगा ॥
हो नारण चंगा सुतहित वंगा जव जम जंगा छूटेतम् ।
ब्रह्म हो अविनाशी० ॥ ८ ॥
अमरीष भुवाले ऋषि सुखपाले जेहि करआले दुखटाले ।
वह्नी वहु चाले उलटी भाले दुख असराले तपवाले ॥
दुर्वासा पाले सोह भवनाले राजा टाले दुखदेतम् ।
ब्रह्म हो अविनाशी० ॥ ९ ॥
आये जल अगरे सोइ ऋषि सगरे बाहरन लगरे स्त्रीवगरे ।
तासूं ऋषि झगरे दीनी तगरे जलरत रगरे नय जगरे ॥
प्रिय रजवा डगरे शवरी पगरे परशत सगरे जलनेतम् ।
ब्रह्म हो अविनाशी० ॥ १० ॥
कौरव मद भरिये है पंड हरिये द्रौपां डरिये थरहरिये ।
दुःशासन लरिये गहन कवरिये अंवर परिये कर अरिये ॥
विलखी जव तिरिये तो हरि विरिये चीर वधरिये निजचेतम् ।
ब्रह्म हो अविनाशी० ॥ ११ ॥
कौरव पंड भारे जुद्ध करारे गयंद हजारे जहँ गारे ।
सुत वहँ टीटारे श्याम सँभारे गज घँट डारे दुखटारे ॥
राखे जव सारे इसा मुरारे तो कुण पारे पेखेतम् ।
ब्रह्म हो अविनाशी० ॥ १२ ॥
तुरकज तन साले नर अनभाले वेहपराले इह ह्वाले ।
मगचल पयपाले डगडगटाले शूकरवाले हतयाले ॥
कहियो अँतकाले हराम आले जेहि जमजाले छूटेतम् ।
ब्रह्म हो अविनाशी० ॥ १३ ॥
चातक तरु ठाणे शिर अरि जाणे पारधि बाणे दिसताणे ।
जाकूँ अहि हाणे शर छूटाणे जाय लगाणे सीचाणे ॥
पप्पीह जु प्राणे टल विघनाणे हरिहि पिछाणे निजहेतम् ।
ब्रह्म हो अविनाशी० ॥ १४ ॥
निज भक्ता नामा अरि पति गामा हते वछामा क्रिगतामा ।
जीवादे जामा तो तेहि रामा नतो हतामा इह कामा ॥
गोगमने धामा लाय लगामा मुगल सिलामा करिहेतम् ।
ब्रह्म हो अविनाशी० ॥ १५ ॥

कबीर जन भारे द्विज दुख धारे पतिया फारे दिश चारे।
आये जव सारे भेष अपारे वणि निज प्यारे विणजारे॥
वालद जन द्वारे आनि उतारे सोइ विधि सारे पोखेतम्।
ब्रह्म हो अविनाशी० ॥ १६ ॥

रैदासजु लागा हरि प्रतिमागा ब्राह्मण जागा सब सागा।
किन से नहिं रागा ना अणरागा धेषै लागा मँदभागा॥
काढ़े उरतागा साम सुहागा जय द्विजभागा सबसेतम्।
ब्रह्म हो अविनाशी० ॥ १७ ॥

मीरां सोइ नारी निज हरिप्यारी राणै विचारी विषगारी।
अंजलि भरि सारी मुखमें डारी हरि हितकारी दुख टारी॥
भूपति पच हारी निज वलदारी भक्ति करारी भावेतम्।
ब्रह्म हो अविनाशी० ॥ १८ ॥

जनसे दुख दाये कुलके ताये रामत भाये नर ध्याये।
नरसी के नाये अंक लिखाये हुंडी आये जेहि गाये॥
साँवल हुय साये दिवी भराये सब सुख दाये जनसेतम्।
ब्रह्म हो अविनाशी० ॥ १९ ॥

दादू दुख धारे लोक पुकारे मुगल दवारे हुय प्यारे।
कीने सब ख्वारे कुल धर्म हारे एह विचारे धेखारे॥
जन दिश झोकारे महमँत भारे बंदन सारे शुंडेतम्।
ब्रह्म हो अविनाशी० ॥ २० ॥

तारे जन सारा अधम अपारा असंख्य जुगाँरा नहिं पारा।
आपै बुध सारा कहै विचारा लह कुण पारा विर्दभारा॥
ऐसे निरकारा जिवके प्यारा तारणहारा उरहेतम्।
ब्रह्म हो अविनाशी० ॥ २१ ॥

दोहा।

जहँ जिव उर करुणा धरे, वहाँ करे हरिपाल।
अपनो विरद विचारियो, करुणामयी कृपाल ॥ १ ॥
अधम जीव तुम तारिया, तुम ही तारे संत।
अब किरपा मोपर करहु, यों हरिदेव कहंत ॥ २ ॥

इति।

अथ प्रश्नोत्तर ।

चौपाई ।

निश्चल कहा ब्रह्म सुखदाई । चंचल कहा माया है भाई ॥
जीवन कहा सुजस भलजानो । मृतक कहा अपयशहि बखानो ॥१॥
जागै कौन विवेकी होई । सोवै कौन मूढमति सोई ॥
बडा कौन जरणा उरपेखो । दाता कौन सत्यगुरु देखो ॥ २ ॥
गहियै कहा वचन गुरुमानो । तजियै कहा विकर्म अज्ञानो ॥
सद्गुरु कौन तत्व के वेता । धन्य कौन ब्रह्म निज हेता ॥ ३ ॥
बुधिवंत कौन जोनिसे टारै । मोक्ष कहा निजज्ञान विचारै ॥
जानै कहा सांख्य विधिसारी । साधै कहा मन पवन विचारी ॥ ४ ॥
शुचिहै कौन दमन इंद्रयांको । पंडित कौन विचारै नीको ॥
कौन विचारै नित्य अनित्य । विषसु कहा गुरु निन्दा चित्त ॥५॥
कृतघ्न कौन प्रीतिही चोरै । नदी कहा तृष्णा बहु बोरै ॥
सार कहा चित शुद्ध विचारै । वचन कहा सत वचन उचारै ॥६॥
अंध कौन अति क्रोध अनीता । सूर कौन मनसे जुध जीता ॥
सुनै कहा हरिगुन उपदेश । पीयै कहा प्रेम रस वेश ॥ ७ ॥
जिहरस कहा वचन सुध भाखै । दान कहा ज्ञानागुण दाखै ॥
शीतल कहा हिरदै सन्तोप । तप्त कहा आहीं अतिदोष ॥८॥
सुखी कौन जग वांछा तजै । दुखी कौन भव बन्धन भजै
अथिर कहा धन जोवन जानो । गरवा कौन सन्त सो मानो ॥ ९ ॥
नरक कहा गर्भवासा सोई । बन्धन कहा पराधिन होई ॥
मुक्ति कहा स्वाधीन अदोष । भूषण कहा शील सन्तोष ॥ १० ॥
करियै कहा सतसंगति सोई । सन्त कौन उपकारी होई ॥
मित्र कौन अशुभतें टारै । वैरी कौन आलस ठग मारै ॥ ११ ॥
बुरा कौन हरि विमुख विराम । चिन्ता कहा चिन्तवन साम ॥
निंदियै कहा मिथ्या संसार । वँदियै कहा सन्तजन सार ॥१२॥
दुर्लभ कहा प्रीति निरवाय । सुमरियै कहा राम निज राय ॥
विसरियै कहा पर अवगुण सोई । पापमूल कहा लोभहि होई ॥ १३ ॥
दुःखमूल कहा मूर्ख से प्रीति । तीर्थ कहा सत्संगति नीत ॥
शुभहि कहा सबसे मित्राई । धन्य कहा हरिनाम सदाई ॥ १४ ॥
पढ़ियै कहा भगवन्त वाच । सुनियै कहा हरि कथा जु साच ॥
जीतिय कहा लोभ अरु मोह । सोभ कहा हरि भजन अदोह ॥ १५ ॥
डरसो कहा कालको मानो । तपभय कहा विषय सो जानो ॥
वश कहा कीजै मन मतवारो । मीठो कहा जग चाह विचारो ॥ १६ ॥

बोवै को भव मान वडाई । तारै को निर्मल बुधिताई ॥
सन्त मिल्यां सारा सुख भाई । दुष्ट मिल्यां होवै दुखदाई ॥ १७ ॥
प्रश्नोत्तर माला सुन लीजै । वाच विचार हृदय शुध कीजै ॥
ज्ञान सार वरण्यो इन माहीं । आन अज्ञान दियो छिटकाहीं ॥१८॥

दोहा ।

प्रश्नोत्तर माला करी, ज्ञान ध्यान को भेव ।
जासे शुध हिरदो हुवै, दाखै जन हरिदेव ॥ १ ॥
भक्ति ज्ञान वैराग्य भल, बुधि निर्मल चित सार ।
शान्ती हिरदो है सरस, वाचै करै विचार ॥ २ ॥
प्रश्नोत्तर सन्तां करी, अर्थ वचनका ज्ञान ।
सो हरिदेव विचारके, कियो चौपई ज्ञान ॥ ३ ॥

इति प्रश्नोत्तर ।

अथ आत्मकृते विज्ञानक्रियायाः पंचमः समुल्लासः ।

दोहा ।

विन भक्ती भगतं विविध, जुक्ति सीख सब जानि ।
ऐसा आदिम जग अनंत, अखूं असिध सिध आनि ॥ १ ॥
अक्षर उभय उचार विन, अंतर सोझि अरूप ।
विन पग पारे क्या परसि, सागी दृष्टि स्वरूप ॥ २ ॥
त्यागी तन मन तास विन, आस बहुत उर आन ।
पास ब्रह्म किह विध लहत, नास विना गमनान ॥ ३ ॥
जोग अष्ट साझन जुगति, कष्ट देह अनकाज ।
वयःवृद्ध ह्वै सिध विगति, जीव मुगति नै साज ॥ ४ ॥
कारज शुभ करता करम, अशुभ कछू नहिं एह ।
अशुभ शुभ पाखै अलख, न को ताहि विध नेह ॥ ५ ॥
करि हठ मारै तन करम, इंद्री भोग अनोह ।
राजकाज को सिध शक्ति, भक्ति ब्रह्म नह कोह ॥ ६ ॥

छंद भुजंगी ।

पखै सहज श्यामं लहै भेव सारा । उभै अंक ऐसा रहै जीह न्यारा ।
रहै सोय रत्ता सबै अंग रासी । विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥ १ ॥
करै जोग अष्टा दिवै कष्ट काया । सझै अंग सारा सबै देह साया ।
तनू सहज साझै पखै सहजतासी । विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥ २ ॥

तजै वास आसा वने धाम तन्नू । रहै संग पाखै सदासोय रन्नू ।
थपै सोय थानं जहाँ अडिगथासी । विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥३॥
धरै ध्यान ऐसे रहै एक सारा । सवै श्रुती साझन करै कृत्तकारा ।
सबै धर्म सासाज आसा उसासी । विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥४॥
गहै सहज काया महा दोष साझै । वसै गेह न्यारा न को जाल वाझै ।
पखै होय निचुं प्रियै देह पासी । विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥ ५ ॥
सझै आप ऐसा सबै देह सरमा । कला सीख करणी करै नोलि करमा ।
मलूं अँतर धोये सवै निर्मल थासी । विना रामनामं न को ब्रह्म वासी ॥६॥
बसै सुरत सोई सदा जीव वासा । सवै अंग साझै गिनै आप सासा ।
रहै माहिं राता सदा जोति रासी । विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥७॥
लहै भेव नासा सुरति श्वास लध्धुं । खरूँ देख सोई करै काम सिध्धुं ।
सबै खरजु फेरै एकै गृह लासी । विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥ ८ ॥
फुरै वाक सोई करै बहुत फत्तूं । नमै लोक सारा सको सेव नित्तूं ।
सबै सोय मानूं तबै ताँह चासी । विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥ ९ ॥
तजै आस तारां सजै सहज तनमां । अनंत सिध्दि आवै सहत सोय अनमां ।
छडै आप काया परा देह थासी । विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥१०॥
चहै सोय आपा धरै आनि चित्तूं । नवी देह थापै सही आप नित्तूं ।
जहँ धार मन्नूं छिनक देह जासी । विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥११॥
धरै सोय धारै इती दृष्टि ध्याना । बसै वास देवा लहै स्वर्ग वाना ।
रमै संग अमरा सदा रंगरासी । विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥ १२ ॥
इसौ अँतर आना लहै भेव आपा । तनूं दोष वीया तजै सोय तापा ।
करै ऋध्दि निरधं निरिधं ऋध्दि थासी । विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥१३॥
यही विध्ध बहुती महासिध्दि आवै । धरै सोय अंगू गुणह तास ध्यावै ।
यही भांति आपा महा मान आसी । विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥१४॥
करै अंग आचार सुच्चार केता । लजा कर्म किरिया सबै साझि लेता ।
इसा ब्रह्म या भव करै आन आसी । विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥१५॥
विद्या वेद पाठी कदा ठीक वारा । सई होम जापा करै अंग सारा ।
सबै आप धर्मा गहे अंग थासी । विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥ १६ ॥
करै वेदअभ्यास जो द्विज्ज केता । वडा सोय वाचीक सो ज्ञान वेत्ता ।
सबै आप हेताज श्रोता सुनासी । विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥ १७ ॥
वदै सोय आपा सही ब्रह्मवाना । बिया लोक सारै तजै खानपाना ।
गिनै आन छोती इसै हेत तासी । विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥ १८ ॥

नितूं पाठ गीता करै आप नामी। प्रियै नेम सहतं मनू धार पामी।
सही टेक वाचै सदा नेक प्यासी। विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥ १९ ॥
कथै सोय गाथा मुखाँ आप केती। हुवै अंग हरखा वदै नेम सेती।
परा ज्ञान साखा सवै भाषिलासी। विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥२०॥
करै ईशपूजा सोई षट्टकर्मा। सझै हेत भूतादिका अंग सर्मा।
सवै सेव प्रतिमा करै वास कासी। विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥२१॥
निवै अंग भक्तां करै सेव नामी। सझै भेव एती तनू भेख सामी।
विष्णु सेव पूजा हियै हेत भ्यासी। विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥२२॥
मनूँ हेत नवधा मधे अंग मानै। जिके सेव धर्मा सवै अँतर जानै।
सोई जहाँ सेव मनू माहिं थासी। विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥ २३ ॥
इति पूज्य प्रतिमा सवै अंग आनै। मनु हेत सोई नाना भाँति मानै।
प्रिय प्रेम सहितं सको नेम प्यासी। विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥२४॥
सवै देवपूजा करै भांति सारी। नमै हेत हीयै सदा रीत न्यारी।
दिवै देव परचा रमै निकट रासी। विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥२५॥
पखै ग्रेह लोका पुलै पंथ पारा। सहूं अष्टतीथूं न्है देह सारा।
नऊं खंड जोये फिरै ग्रह आसी। विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥२६॥
दिवै दान विप्रां सवै मानि देवा। सोई भांति सारी करै ख्यात सेवा।
सवै आथि आपा द्विजां पूज थासी। विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥२७॥
वटै आथि बहुती वना लोक वांचै। जिके दूर सोभा सुनै आय जांचै।
गुणै लोय गाथा तिके विरद गासी। विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥२८॥
सती आग मंझे करै गेह साचो। कनै लोय केता गिनै नेह काचो।
जरै आप काया तनू वाच प्यासी। विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥२९॥
महाजुद्ध माँहे करै मार माराँ। तजै आस काया सोई सूर ताराँ।
लड़ै हेत ऐसे पऱ्या नेह थासी। विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥ ३० ॥
सवै शुभ कर्मा सोई आप साझै। जके नाम पाखै जपै नेह जाझै।
इता धर्म आना सवै भुगति आसी। विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥३१॥

दोहा।

आन धर्म साझै अनँत, मरम पखै निज नाम।
कव वाकूं हरिदेव कह, न को ब्रह्मको धाम ॥ १ ॥
ज्ञान कथै सीखै ग्रंथ, अर्थ अगम का आखि।
विना भजन नहिँ ब्रह्मघर, ए हरिदेवो दाखि ॥ २ ॥

(अपूर्ण)

अथ हरिजस लिख्यते।

राग आसा।

पद १

रामराय मैं हूं मंगन तेरा तुम दानपती सबकेरा॥ टेर॥
तुम दाता मैं जाचक तोरा द्वार खड़ा निज देवा।
निशि दिन अडिग नूर तुम निरखूं सदा करूं तोहि सेवा॥ १॥
तोरा संत विरद कहै आदू सो सुनि तो ढ़िग आयो।
मैं तो मनू वाच उरसेती साचो नाम संभायो॥ २॥
औलग करूं अभंग हरि आगै विरहवचन निशिवासा।
वाचूं विरद न को उर वीजा एक तुम्हारी आसा॥ ३॥
सुनिहो वचन दीनका साहिव अभै दान मोहि आपो।
दाखै अरज इसी हरिदेवो। कुरंद करमरा कापो॥ ४॥

पद २

राम राय मैं हूं वालक तोरा पिताज तुम हो मोरा॥ टेर॥
मैं वालक मति भोर रहे उर कह नहीं जानूं काई।
दीनवंधु देख हम शिशु मति आप विरद निरवाई॥ १॥
सेवा साज न जानूं साहिव है मति हीन हमारी।
करिहो अवै मुझै मांहि करता सो ह्वै रजा तुमारी॥ २॥
मैं तो वाल केलि संग राता का तो मन गृह मोहा।
का तो असन वार वस्त्रादिक ए उर सदा समोहा॥ ३॥
तुम हो पिता मुझै हरि नीका मैं मति भोर अजाना।
जानूं नहीं कछू हम काई तुम हो श्याम सुजाना॥ ४॥
मैं मतिहीन किया अति औगुण तुम ना गिनो दयाला।
कह हरिदेव पिता हरि सुनिज्यो वाल करो प्रतिपाला॥ ५॥

राग सोरठ।

पद ३

कृपा निधान करियो कछु कृपा दीन माथै॥ टेक.
मैं आदि तुम के अंसा। अव विसर गए निजवंसा॥
साँसै में आव विहावै। प्रभु तोहि दया सुख थावै॥ १॥
तुम जीवों के प्रतिपाला। निज देवा देव दयाला॥
सव के जो अंतरजामी। अव मोहि दया करि स्वामी॥ २॥

हम दीना दीन पुकारै । तुम सुणौ सिरजन हारै ॥
अब तारण विरद विचारो । साँई वेग मुझै तुम तारो ॥ ३ ॥
हमसूं कुछ नाहिं लहीजै । तुम देव दया निज कीजै ॥
हरिदेव सदा हरि तेरो । चित चरण कमलको चेरो ॥ ४ ॥

पद ४

विरदां निधान वहियो निज विरदां आप केरा ॥ टेक ॥
अजामेल से अघभारे । अंत पुत्र हेत पुकारे ॥
साद सुणे सुण ध्याये । जमदूतां पासि छुडाये ॥ १ ॥
गजराज की सुणि वाणी । सो ध्याये सारंगपाणी ॥
निज आगै चक्र चलाये । गज ग्राह के दुःख मिटाये ॥ २ ॥
आगै अधम अपारे । सो अर्ध टेर सुणि तारे ।
हम औगुण अधिके यातैं । प्रभु साद सुणो नहिं तातैं ॥ ३ ॥
मुझ औगुण तुझ ना लहियो । सो अधमतार तुम कहियो ।
निज आपा विरद विचारो । हरिदेव दया करि तारो ॥ ४ ॥

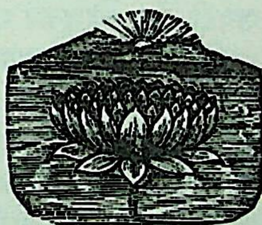
इत्यपूर्णम् ।

१ समस्त वाणी श्लोक मेधा ३०१४ ।

द्वितीयपरिच्छेदः ।

धुरमेल ।

बानी सुखदानी विमल श्रीरामदास महाराजकी ।
अद्भुत आनंदकंद द्वन्द मायाकृत कटि है ।
आदि अन्त सिद्धान्त दान्त ररकार सुरटि है ॥
अनआतम अध्यास भ्यासकृत निश्चय हट्टै ।
गुरुगम करत विचार पार भवमूल जु पट्टै ॥
मनुसृष्टि वृष्टि प्रश्न हु करत घनघुमंड मृदु गाजकी ।
बानी सुखदानी विमल श्रीरामदास महाराजकी ॥ १ ॥



॥ श्रीः ॥

पद १

चेतनराम शरण मैं तेरी। अबकी वेर अरज सुन मेरी ॥ टेर.
जो रीझो तो भक्ति मोहि दीजै। अपनो जानि कृपा हरि कीजै ॥ १ ॥
आदि अन्त मध्य सकल पसारा। सोई आतमराम हमारा ॥ २ ॥
अचरज देख अचंभो माहीं। तेरे जनको संशय नाहीं ॥ ३ ॥
जिके वात तनहीमें पाया। जैमलदास शरण तेरी आया ॥ ४ ॥

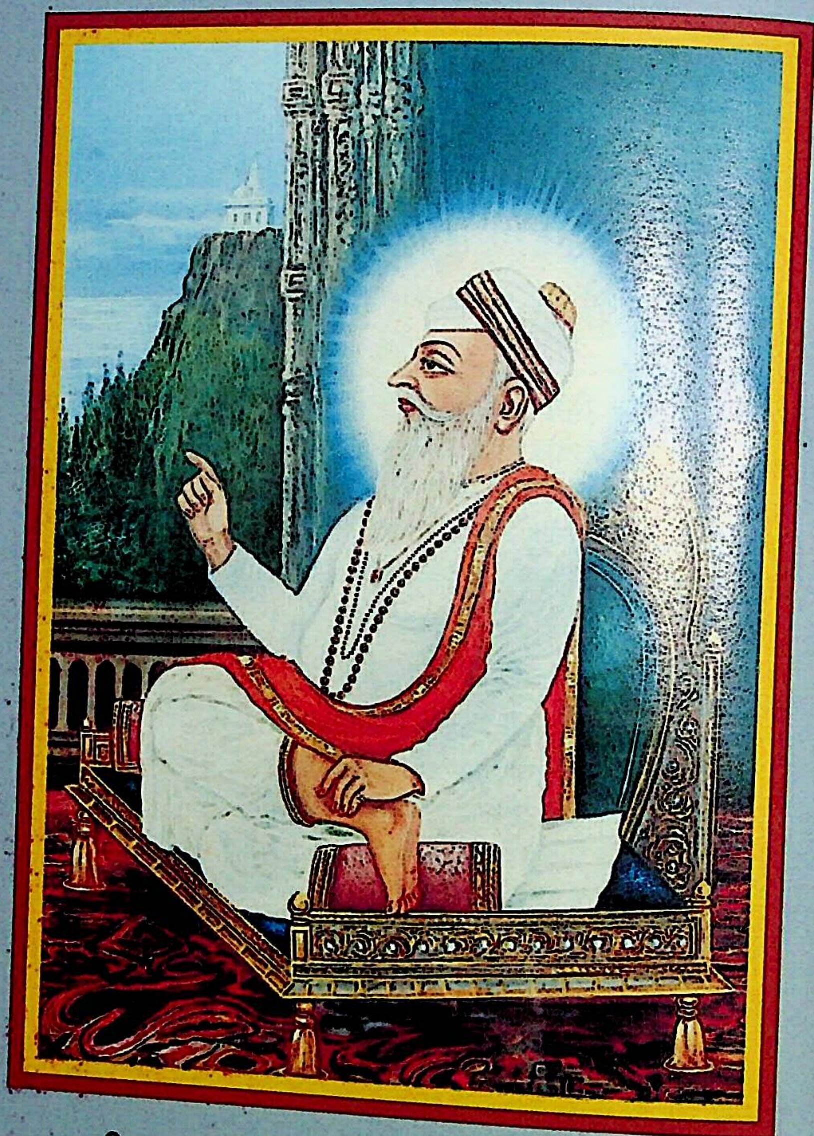
पद २

मन रे जो तू राम पिछानै। नेड़ाहै सो निश्चय आनै ॥ टेर.
पांच तत्त्व ले किया पसारा। जल स्थल जीव सकल संसारा ॥ १ ॥
तीन भवन के बाहिर माहीं। हरि विन काज सरै को नाहीं ॥ २ ॥
पालन पोषण करण सँहारण। दीन दया करि दुस्तर तारण ॥ ३ ॥
जैमलदास साच मन भजियै। राम विमुख विषय रस तजियै ॥ ४ ॥

अष्टपदी।

वाद विषयास्वाद तज मन, गहो ज्ञान विज्ञान रे।
और ऐसो नाहिं जगमें, राम सम कोइ ध्यान रे ॥ १ ॥
भूल मत भ्रम माहिं भोंदू, अलख करियै याद रे।
उलटि आपा देख दिलमें, प्रेमविन पशु वाद रे ॥ २ ॥
नाम निश्चय ध्याय निशि दिन, परम पीतम पाय रे।
शोक संशय मेट, सबही, भेंट त्रिभुवन राय रे ॥ ३ ॥
राम विन विश्राम नाहीं, स्वर्ग मध्य पयाल रे।
जीव हरि विन केम छूटै, कर्म कूटै काल रे ॥ ४ ॥
भलो पूरण भाग तेरो, जिन्द जबलग जाग रे।
आयु दम दम घटै निशिदिन, रहो निजमन लाग रे ॥ ५ ॥
मानुषो अवतार वीछुरि, बहुरि आवै नाहिं रे।
भक्ति विन बहु भया दुखिया, चौरासी लख माहिं रे ॥ ६ ॥
राम घट घट माहिं न्यारा, रूप ताहि न रेख रे।
और माया खपै उपजै, आप अमर अलेख रे ॥ ७ ॥
अखंड इक धुन होइ सुनमें, लगन लागी जाय रे।
हरिराम ब्रह्मानन्द माहीं, सुरति सहज समाय रे ॥ ८ ॥





श्री १००८ श्री रामदासजी महाराज
रामस्नेहि सम्प्रदायाचार्य खैड़ापा (१)

॥ श्रीरामो जयति ॥

विभुं पद्मनेत्रं दधानं तुरीयं प्रकाशस्वरूपं नतं विश्वदेवैः ।
श्रुतिज्ञानगम्यं शुभं विश्वनाथं स्तुवे वेदवेद्यं गुरुं रामदासम् ॥ १ ॥[1]

अथ श्री १००८ श्रीरामदासजी महाराजकी अनुभव गिरा प्रकाश।

स्तोत्रमंत्र ।

सतगुरु सेती वीनती, परब्रह्मसूं परणाम ।
अनँत कोटि सँत रामदास, निशिदिन करूं सलाम ॥ १ ॥
प्रथम वंदि परब्रह्म नित, जिना दिये सिरपाव ।
दुतिय वंदि गुरुदेवकूं, दिये भक्तिके भाव ॥ २ ॥
तृतिय वंदि धिन संतकूं, सब के लागूं पाय ।
परब्रह्म गुरु संतकूं, रामदास नितगाय ॥ ३ ॥
प्रथम वंदि गुरुदेवकूं, जिनाँ दियो ततज्ञान ।
दुतिय वंदि परब्रह्मकूं, अंतर प्रगटे आन ॥ ४ ॥
तृतिय वंदि सब संतकूं तिहूँ ठोरलौं मान ।
नाम तीन वपु एक है, रामदास कह ज्ञान ॥ ५ ॥
नमस्कारतें रामदास, कर्म सबै कटिजाइ ।
जाइ मिलै परब्रह्ममें, आवागमन मिटाइ ॥ ६ ॥
परब्रह्म सब घट रम रह्या, दूजा कोऊ नाहिं ।
रामदास दुबिधा मिटी, जब देख्या घटमाहिं ॥ ७ ॥
परब्रह्म गुरु संतकूं, एकमेक दरसाय ।
रामदास या ऊपजी, जदही मुक्ति कहाय ॥ ८ ॥

इति।

अथ गुरुदेव को अंग ।

अटल बैण गुरुदेव के, रामदास सत मान ।
एता पूठा ना फिरै, गिरिवर गंग ज्ञान ॥ १ ॥
गिरी मेरु अरु गंगकी, या हद ऊली बात ।
रामदास गुरुशब्दतें, मिलै निरंजन नाथ ॥ २ ॥
तिलक राम रस चरणामृत, लिया प्रेम निजनूर ।
सतगुरु शब्दाँ रामदास, दुखदारिद भव दूर ॥ ३ ॥

---

1 निर्मातास्य पद्यस्य पं. दिगम्बरदासः ।

दुःख दारिद्र भाजिगे, मिल्या निरंजन नाथ।
ररंकार रट रामदास, कर सतगुरु को साथ ॥ ४ ॥
सतगुरु समँदस्वरूप है, सिख नदी हुइ जाइ।
रामदास मिल एकता, सहजाँ रहे समाइ ॥ ५ ॥
रामनाम तो दुलभ है, जैसी खाँडा धार।
सतगुरु सेती संगरमें, से जन उतरै पार ॥ ६ ॥
सतगुरु सेती प्रीतड़ी, जे करि जाणै कोइ।
रामनाम धन पाइबो, आवागमन न होइ ॥ ७ ॥
राम रसायन भरपियै, सतगुरु सेतीसंग।
रामदास लागा रहै, रोम रोम बिच रंग ॥ ८ ॥
रोम रोममें रुचि पिया, मनमें भया मगन्न।
अर्ध नाम रत्ता रहै, रामदास हरिजन्न ॥ ९ ॥
गुरु जैसा गुरुदेव है, रामा दूजा नाहिं।
भवसागरमें डूबताँ, काढ़ि लिया गहि बाहिं ॥ १० ॥
रामदास सतगुरु मिल्या, भरम किया सब दूर।
निशि अँधियारा मिटगया, ऊगा निर्मल सूर ॥ ११ ॥
रामदास गुरुदेव की, मैं बलिहारी जाहिं।
साँसा सबही मेटकै, ब्रह्म बताया माहिं ॥ १२ ॥
रामदास सतगुरु मिल्या, कह्या अमोलक बैण।
सुन सागर साँईं मिल्या, आदि आपका सैण ॥ १३ ॥
सतगुरु का मुख देखतां, पाप शरीरां जाइ।
साधुसंगति सत राम दास, अटल पदी लेजाइ ॥ १४ ॥
ब्रह्म बिलासी संत जन, अगमी गम्म अपार।
सायरसा सूभर भऱ्या, सतगुरु सिरजणहार ॥ १५ ॥
सतगुरु मेरे शीसपर, मैं चरणांकी रज्ज।
शरणै आयो रामियो, लख चौरासी तज्ज ॥ १६ ॥
चौरासी का जीव था, शरणै लिया सँभाय।
औगुण मेट्या रामदास, सतगुरु करी सहाय ॥ १७ ॥
रामदास की बीनती, साँभलिये गुरुदेव।
और कछू माँगूं नहीं, जुग जुग तुमरी सेव ॥ १८ ॥
रामदास की बीनती, साँभलिये गुरु द्याल।
रामनाम सुमराइयै, मेटो विषय जंजाल ॥ १९ ॥
किरपा की गुरुदेवजी, शब्द दिया निजसार।
रामदास निशिदिन भजो, छाँडो सबै विकार ॥ २० ॥

भवसागर में डूबताँ, सतगुरु काढ्या आय ।
रामदास गुरुदेव जी, सहजाँ करी सहाय ॥ २१ ॥
गुरुकी महिमा रामदास, कहियै कहा वणाय ।
हमसा पतित उधारियाँ, जमपै लिया छुडाय ॥ २२ ॥
गुरुसा दूजा को नही, भवसागर के माहिं ।
अनँता जीव उधारिया, मिल्या आदि घर जाहिं ॥ २३ ॥
सतगुरु ऐसा रामदास, जैसा पारस जाणि ।
लोहाती कंचन करै, तन मन सौंपै आणि ॥ २४ ॥
सतगुरु ऐसा रामदास, जैसा सूर प्रकास ।
रात अज्ञान मिटाइ कर, अंतर करै उजास ॥ २५ ॥
सतगुरु ऐसा रामदास, जैसा पूरण चंद ।
सिखकूं अमृत पाइ कर, अमर किया आनंद ॥ २६ ॥
सतगुरु ऐसा रामदास, जैसा इंदर जान ।
किरपा करि वरषा करी, भीज गया सब प्रान ॥ २७ ॥
दिया एकही रामदास, घर घर दीया जोय ।
सबै अंधारा मिटगया, जगै अखंडित लोय ॥ २८ ॥
सतगुरु दीपक रामदास, सिख चल आया पास ।
अनँता जीव जगाइया, अंतर भया उजास ॥ २९ ॥
गुरु जैसा गुरु देव है, सांची कहूं विचार ।
गुरू मिलावै ब्रह्म कूं, और वार के वार ॥ ३० ॥
सतगुरु ऐसा रामदास, जैसा चंदन होइ ।
सिख सेती सीतल करै, विषिया डारै खोइ ॥ ३१ ॥
सतगुरु ऐसा रामदास, जैसी तरुवर छाहिं ।
शीतल छाया मुक्ति फल, ता बिच केलि कराहिं ॥ ३२ ॥
गुरुकी महिमा कहा कहूं, मोपै कही न जाय ।
चौरासी का जीव कूं, मुक्ति देश लेजाय ॥ ३३ ॥
गोविंदतैं गुरु अधिक है, रामैं कह्या विचार ।
गुरू मिलावै रामकूं, राम अमर भरतार ॥ ३४ ॥
राम सबैही सिरजिया, लख चौरासी जीव ।
रामदास सतगुरु विना, परत न पावै पीव ॥ ३५ ॥
लख चौरासी जोणिमें, सबही बंध्या जीव ।
सतगुरु बंद छोडाइ कर, मेल्या आदू पीव ॥ ३६ ॥

रामदास सतगुरु मिल्या, मिलिया राम दयाल।
सुख सागर में रमरह्या, मेट्या विषय जंजाल॥ ३७॥

इति।

अथ गुरुवंदन को अंग।

गुरु वंदनतें रामदास, मिटजाइ आल जंजाल।
जाइ मिलै परब्रह्ममें, आठ पहर मत वाल॥ १॥
गुरुकूं वंदन कीजिये, मुख सूं कहिये राम।
रामदास सो सिक्ख जन, पावै आदू धाम॥ २॥
सतगुरु वंदन अधिक फल, जाका वार न पार।
रामदास मैं क्या कहूं, कहिगए संत अपार॥ ३॥
सतगुरु वँदियाँ अधिक फल, चौरासी मिट जाइ।
स्वर्ग नरक दोनों मिटै, जामण मरण मिटाइ॥ ४॥
सतगुरु वँदियाँ रामदास, टलि जाइ कोटि विकार।
करम कटै सबजीव का, मिलै मुक्ति के द्वार॥ ५॥
सतगुरु वँदियाँ बाहिरो, राम न पावै कोइ।
चौरासी में रामदास, जीव जूण बहु होइ॥ ६॥
वंदन कर निंदा करै, जाका मूंह मदीठ।
रामदास वा जीवकूं, जम दरगा मे पीठ॥ ७॥
वंदन कर निंदा करै, भुगतै नरक दुवार।
रामदास वा दुःख को, है कोइ वार न पार॥ ८॥
किरपा की गुरु देवजी, अंतर किया उजाल।
रामदास निंदा कियां, आँन झपेटै काल॥ ९॥
सतगुरु जो सिख ऊपरै, कोप करै सोवार।
तोही सिख शीतल हुवै, आणै नहिं अहँकार॥ १०॥
सतगुरु लोभी लालची, क्रोधरूप बहु होइ।
बलिराजा प्रहलाद कूं, देख निवाज्या सोइ॥ ११॥
सतगुरु का गुण अनंत है, औगुण एक न जाण।
रामदास घट भीतरै, आपा लेह पिछाण॥ १२॥
सतगुरु दीया रामनाम, निराकार निरबाण।
या में औगुण को नहीं, आपालेहु पिछाण॥ १३॥
पारसरूपी सतगुरू, सिख है लोह निराट।
रामदास मिलियाँ समा, पलट और ही घाट॥ १४॥

लोह पारस की क्या कहूं, सतगुरु अगम अपार।
तन मन सौंप्या रामदास, करै आप दीदार ॥ १५ ॥

इति।

अथ गुरुधर्म को अंग।

सतगुरुसूं पूठा फिरै, जाकै अंतर काण।
रामदास ताकूं वँच्यां, वहुती हैगी हाण ॥ १ ॥
सतगुरु सूं पूठा फिरै, सो अपती बहु जीव।
अति निंदा गुरुदेव की, परत न पावै पीव ॥ २ ॥
निंदक का मुंहडा बुरा, दीठां लागै पाप।
गुरुद्रोहीसूं रामदास, अलगा रहियै आप ॥ ३ ॥
गुरुधर्मी का रामदास, दर्शण कीजै जाइ।
दर्शण सूं अवगुण मिटै, कर्म विलै हुइजाइ ॥ ४ ॥
सतगुरु बड़ सिख साखहै, रुपी धरणि में आइ।
रामदास बड़ लग गया, गगन गरजिया जाइ ॥ ५ ॥
गगन गरजिया रामदास, फूल्या सून्य मँझार।
डाल चली चहुं कूंटमें, सिख फल लगे अपार ॥ ६ ॥
डाल चली वड पेडतें सब वड़ का विस्तार।
रामा पेड जु सींचिया, सब हरियाली टार ॥ ७ ॥
विट लागा सो नीपना, जल पड़ियां कँद जाइ।
गुरु त्यागै हरि कूं भजै, निश्चय नरकां जाइ ॥ ८ ॥
गुरु हितकारी रामदास, दिन दिन दूणा थाइ।
उलटि समावै ब्रह्म में, ओत पोत हुइ जाइ ॥ ९ ॥
सिख जो ऐसा चाहिये, रह सतगुरु सूं रत्त।
सतगुरु जो न्यारा रहै, सिक्ख न छांडै तत्त ॥ १० ॥

इति।

अथ सुमरन को अंग।

प्रथमहि सुमरन जीभसूं, चोड़ै करो वजाइ।
दो अक्षर रट रामदास, साँई साद सुणाइ ॥ १ ॥
सुमरन कीजै रामदास, रोम रोम भरपूर।
सुमरन सूं सांई मिलै, सेवक सदा हजूर ॥ २ ॥
रामदास सुमरन कियां, रोम रोम सुख स्वाद।
नाड़ि नाड़ि स्वर सांभलै, घुरै अनाहद नाद ॥ ३ ॥

रामदास सुमरन कियाँ, सुमरन निपजै साधि ।
सुमरनसैं सुन गढ़ चढ़ै, सुमरन लगै समाधि ॥ ४ ॥
श्रवणाँ सुणियाँ रामदास, मुखसूं सुमऱ्याँ राम ।
रसना हिरदै नाभि विच, सहज किया विश्राम ॥ ५ ॥
रसना सूं सुमरण किया, अंतर लागी तार ।
रोम रोम बिच रामदास, ऊठत एक पुकार ॥ ६ ॥
मुख सेती सुमरण किया, मन आयो इतबार ।
दूजा सब ही झूट है, रामा सुमरण सार ॥ ७ ॥
रामा सुमरण सार है, श्वासोच्छ्वासाध्याय ।
किया करम सबही कटै, दूजा लगै न आय ॥ ८ ॥
केताही कुकरम किया, जाण्यां नहीं विचार ।
सरब पाप पल में कटै, रामनाम चितधार ॥ ९ ॥
कुकरम करूं न विष भखूं लगी शब्द की चोट ।
सतगुरु शरणैं रामदास, पाई हरि की ओट ॥ १० ॥
बुरा भला सब तुम किया, घटमें बैठे राम ।
मैं तैं मिटगी रामदास, सहज मिल्या निज धाम ॥ ११ ॥
बुरा किया सब मैं किया, तुम केवल हो राम ।
रामदास की वीनती, मेटो सकल विराम ॥ १२ ॥
रामदास सुमरण विना, कदे न छूटै जीव ।
अनंत जन्म जोइ पुण्य करै, तोइ न पावै पीव ॥ १३ ॥
पाप पुण्य सूं रामदास, स्वर्ग नरक में जाय ।
सुमरण बिन छूटै नहीं, कोटिक करो उपाय ॥ १४ ॥
सुमरण एको सार है, दूजा आलजंजाल ।
रामदास सब सोझिया, हरिविन परलै काल ॥ १५ ॥
हरि सुमरण कर लीजिये, सास उसासाँ ध्याय ।
रामदास सुमरण कियां, साहब मिलसी आय ॥ १६ ॥
सब इन्द्री सुमरण करै, मन ही करै पुकार ।
रामदास अब पाविया, सुखसागर भरतार ॥ १७ ॥
रामदास सुमरण तणा, विवरा देउँ बताय ।
घट माँहीं अजपा हुवै, सुणो सकल चित लाय ॥ १८ ॥
रामदास सुमरण कियाँ, प्रथम जगी इक नार ।
सहस्र एक चौबनमही, शब्द करत गुँजार ॥ १९ ॥
कंठ में प्रेम प्रकासिया, हृदै होत धमकार ।
नाड़ि नाड़ि चेतन भई, मन आयो इतबार ॥ २० ॥

नाभि कमल में संचर्‍या, सहस्र चार परकास।
नाड़ि नाड़ि न्यारी घुरै, सुणत रामिया दास ॥ २१ ॥
वहत्तर नाड़ी वंक की, मिली वंक में आय।
रामदास सब घेरकै, उलटा अभर भराय ॥ २२ ॥
नाड़ि सवासै एक ही, सहस्र पांच परवाण।
रामदास घट भीतरै, ए वडि नाड़ि वखाण ॥ २३ ॥
मही नाड़ि दूजी घणी, तीन लोक विस्तार।
रामदास तन सोझकर, सब का करो विचार ॥ २४ ॥
नाड़ी वहत्तर हजार हैं, सब ही तनके माहिं।
सवहि मिलाणी तीनसूं, त्रिवेणी में जाहिं ॥ २५ ॥
इड़ा पिंगला सुषमणा, त्रिवेणी के तट्ट।
रामदास ता ऊपरै, मंड्या सहज ही मट्ट ॥ २६ ॥
वाँसे चल आघा गया, परम सून्य के माँय।
गगन कूप में रामदास, अमृत भरभर पाँय ॥ २७ ॥
नाड़ि नाड़ि अमृत झरै, पीवत सवै सरीर।
रोम रोम विच रामदास, चलत सुखम की सीर ॥ २८ ॥
साढ़ा तीन करोड़ में, एक होत ररकार।
सहजे सुमरण रामदास, ताका अंत न पार ॥ २९ ॥
उर अंतर नख सिख विचै, एक अजप्पा होय।
राम दास या संत गति, साधू जाणै कोय ॥ ३० ॥
जाप कियाँ मुख द्वार तें, रसना चाली सीर।
अजपा सुमरण घट विषै, को जाणै गुरु पीर ॥ ३१ ॥
गगनमंडलमें रामदास, अनहद घुरिया नाद।
रोम रोम साँई मिल्या, सुमरण पायो स्वाद ॥ ३२ ॥

इति।

अथ विरह को अंग।

नैण हमारा रामदास पिव विन रह्या विसूर।
अंतर दारुण विरह की तन इंद्रिय मनझूर ॥ १ ॥
अंतर दारुण अति घणी, पिंजर करै पुकार।
नैण रोय राता किया, तो कारण भरतार ॥ २ ॥
घाव कलेजै भाल बिन, रामा सालै नित्त।
रात दिनां खटकत रहै, तुझ कारण मुझ मित्त ॥ ३ ॥
विरह भाल उरमें लगी, अंतर सालै नित्त।
रामदास सुख उपजै, आप मिले मुझ मित्त ॥ ४ ॥

वांझ नारि कै पुत्र बिन, नित झूरत दिन जाय।
रामदास यों तुझ बिना, तालाबेली माँय ॥ ५ ॥
निरधन झूरै धन विना, फल बिन नागरबेल।
रामा झूरै राम बिन, विरही साले सेल ॥ ६ ॥
विरह आय घायल किया, रोम रोम में पीर।
रामदास दुखिया घणा, हृदै खटूकै तीर ॥ ७ ॥
कुंजर झूरै बन्न कूं, सूवा अंबा काज।
विरहिन झूरै पीव कूं, कबै मिलो महाराज ॥ ८ ॥
बैनड़ झूरै वीर कूं, वर कूं झूरै नार।
रामा झूरै पीवकूं, दरसण द्यो भरतार ॥ ९ ॥
दरसण कारण रामजी, तलफतहूं दिनरात।
रामा पिव पायो नहीं, आन हुवो परभात ॥ १० ॥
आठ प्रहर चोसठ घड़ी, झूरत मेरा जीव।
रामदास दुखिया घणा, दरसण दो अब पीव ॥ ११ ॥
तुमरे दरसण वाहिरो, सब दिन अहला जाय।
सो दिन नीका होयगा, तुमहि मिलोगा आय ॥ १२ ॥
तुम मिलवाके कारणै, रामा झूरै सास।
तालावेली जीवमें, कद पूरोगे आस ॥ १३ ॥
विरह आय अंतर वसै, सतगुरु के परताप।
रामदास सुख ऊपजै, आय मिलोगे आप ॥ १४ ॥
तुमरे मिलियाँ बाहिरो, दाझै वारंवार।
रामा विरहन कारणै, आण मिलो भरतार ॥ १५ ॥
तुम मिलियां विन मैं दुखी, विरही ऊठै लाय।
रामदासके तुम विना, दम दम अहला जाय ॥ १६ ॥
रामा स्वारथ कारणै, झूरै सब संसार।
मैं झूरूं परब्रह्म कूं, अंतर द्यो दीदार ॥ १७ ॥
अंतर दारुण विरह की, तुमकारण निज राम।
तुमरे दरशण वाहिरो, सकल अलूणो काम ॥ १८ ॥
तुम मिलबा के कारणै, विरहन वूझै धाय।
राम तणो संदेसड़ो, कहो बटाऊ जाय ॥ १९ ॥
बाट बटाऊ सब थक्या, थकिया मेरा प्राण।
रामदास तन भीतरै, विरहजु लागो बाण ॥ २० ॥
पाँव पंख मेरे नहीं, मैं अबला बल नाहिं।
मिलबा की श्रद्धा नहीं, झुरणो पिंजर माहिं ॥ २१ ॥

मो झुरबाको जोर है, दूजो कछू न होहि ।
तुम हो जैसा कीजिये, दरशण दीजै मोहि ॥ २२ ॥
विरह विलापां कर रही, दुखी होय बहु जन्न ।
रामदास निजपीव कूं, झूरै रैण रु दिन्न ॥ २३ ॥
रैण विहाणी जोवतां, दिन भी वीतो जाय ।
रामदास विरहिन झुरै, पीव न पाया मांय ॥ २४ ॥
रामदास विरहिन दुखी, दुखी होत बहु जिंद ।
दुखी जीव करुणा करै, तोहि विना गोविंद ॥ २५ ॥
रामदास कह विरहिनी, जाल करूं तन छार ।
हरि दरसण पायाँ विना, धृक जीतब जम्मार ॥ २६ ॥
धिक हमारा जीविया, भाँग करूं तन भुःख ।
रामदास सांई विना, रोम रोम में दुःख ॥ २७ ॥
विरही तणो संदेसड़ो, सुणो पियारे मित्त ।
तुम विन झूरै रासियो, सास उसासा नित्त ॥ २८ ॥
तुम आवो अब रामजी, तुम विन दुखिया जीव ।
तुम विन झूरै विरहिनी, परम सनेही पीव ॥ २९ ॥
तुम मिलवा के कारणै, दिन दिन दूणी चाय ।
रामदास विरही भया, अंदर लागी लाय ॥ ३० ॥
आठ प्रहर विरही जगै, जाका मोटा भाग ।
रामा प्रीतम कारणै, उनमुन अति वैराग ॥ ३१ ॥
अंतर दारुण विरहकी, ताकूं लखै न कोय ।
रामदास सो जाणसी, जा घट लागी होय ॥ ३२ ॥
लागी जबही जाणियै, आठों पहर विसूर ।
रामा प्रीतम कारणै, रोम रोम सब झूर ॥ ३३ ॥
पिव मिलवाके कारणै, विरहिन ऊठै लाय ।
रामदास कैसे मिटै, पीव विना दुख पाय ॥ ३४ ॥
तुम सुखसागर साँइयाँ, विरही दाझ मिटाय ।
दव लागो तन भीतरै, तुम मिलियाँ सुख थाय ॥ ३५ ॥
रामदासके विरह की, अंतर लगी पुकार ।
रात दिनां लागी रहै, सतगुरु के उपकार ॥ ३६ ॥

इति ।

अथ मन मृतक को अंग ।

रामदास मन मारिया, मार रु कीया ख्वार ।
मूबां पीछै भूत हुय, फेर त्यार को त्यार ॥ १ ॥

रामदास मन मारिया, मार रु दीया बाल।
घर लागो अग्नी वुझी, फेर उठेगी झाल ॥ २ ॥
सरप मार अरु नाखियो, रामा साम्है वाय।
वायु लाग चेतन भयो, उलट उणीकों खाय ॥ ३ ॥
मन कूं मृत्तक जाण कर, मत कीजो विश्वास।
रामदास मन सरप ज्यूं, जद तद करै विनास ॥ ४ ॥
रामदास मन मारियो, मार रु काढ़ी खाल।
घायलिया खरगोस ज्यूँ, फेर ऊठिग्यो चाल ॥ ५ ॥
मन कूँ मृत्तक जाणकर, मत कोइ रहो नचीत।
रामदास कव ऊठ कर, अंतर करै कुपीत ॥ ६ ॥
मन मृत्तक सो जाणियै, घायल ज्यूं किरराय।
रामदास दुखिया रहै, हरि सुमिरत दिनजाय ॥ ७ ॥
जन रामा सतगुरु सिल्या, अर्थ बताया एक।
मन मृत्तक हुय लगि रह्यो, आद अंत या टेक ॥ ८ ॥

इति।

अथ सूक्ष्म मारग को अंग।

सो मारग पाया नहीं, साधु पहूंता ध्याय।
रामदास आगै रह्या, कलह कल्पना माँय ॥ १ ॥
रामदास घर अलग है, जाका थाह न कोय।
अंतर निश्चय किम हुवै, है वाका मग सोय ॥ २ ॥
कोन दिसा सूं आविया, कहो कोन दिस जाय।
रामदास अब भूलग्या, इहाँ पड़ेहैं आय ॥ ३ ॥
रामदास उण देस सूं, चाल न आया कोय।
कहु कुण कूं ले वूझिये, मेरे मन की सोय ॥ ४ ॥
रामदास उण देस सूं, जावै सव संसार।
भार सीस पर शीत को, जाकी सुद्ध न सार ॥ ५ ॥
बादल आडा जगतके, सूर आभ विच नाहिं।
साधु देह संसार में, ब्रह्म पटंतर माहिं ॥ ६ ॥
साधु राम तो एक है, विरला जाणै कोय।
रामा साधू ब्रह्म में, ब्रह्म साधु में होय ॥ ७ ॥
ब्रह्मदेस सूं संतजन, आन धर्‍यो अवतार।
रामदास उणदेसको, अनुभव कियो विचार ॥ ८ ॥
रामदास यूँ समझ कर, साधू शरण सँभाय।
साँसा दूर गमाय कर, अमर देश लेजाय ॥ ९ ॥

धरती अरु असमान विच, उभय वेलि असराल।
रामदास सब सोधिया, तंतु चल्या चहुं नाल ॥ १० ॥
सिध साधक जोगी जती, सबही किया विचार।
रामदास समझ्याँ विना, धोखो वारंवार ॥ ११ ॥
आशा तृष्णा वेलड़ी, जामण मरण अखूट।
समझ्या सो तो सिध हुवा, अणसमझ्या सो झूट ॥ १२ ॥
मारग अगम अथाह सा, मोपै लख्या न जाय।
जन रामा सतगुरु मिल्या, पलमें दिया वताय ॥ १३ ॥

इति।

अथ पीव पहिचान को अंग।

पड़दामें रहै रामदास, सोतो धणी न जाण।
सकल मंडमें रमरह्या, तासूं करो पिछाण ॥ १ ॥
सब सूँ न्यारा रामदास, दुनिया जाणै नाहिं।
मैं हूं सेवग जासका, सकल मंड ता माहिं ॥ २ ॥
माय बाप जाकै नही, है अणघड़ अलेख।
रामा ऐसा झीण है, रंग रूप नहिं रेख ॥ ३ ॥
सब का करता एक है, परब्रह्म निजदेव।
रामदास घड़िया तजो, करो जास की सेव ॥ ४ ॥
रामा एक पिछाणिया, ताहीसूं लिवलाय।
जो दूजा मुख नीकसै, तो घ्यूं जीभ कटाय ॥ ५ ॥
सतगुरु के परताप सूं, लीया पीव पिछाण।
रामदास मुख आपणे, दूजी चहूं न वाण ॥ ६ ॥

इति।

अथ शब्द को अंग।

रामदास सतशब्द का, भीतर लागा भेद।
वाहिर घाव न दीसही, रोम रोम विच छेद ॥ १ ॥
छेद पड़्या सत शब्द का, भेद गया तन माहिं।
रामदास लागी इसी, करक कलेजा माहिं ॥ २ ॥
लगी शब्द की रामदास, अधःऊर्ध्व विच चोट।
रोम रोम रंकार की, सब घट एको दोट ॥ ३ ॥
दोट लगी सत शब्द की, व्रह्मांड निकसी जाय।
रामदास व्रह्मांड में, शब्द रह्यो गुंजाय ॥ ४ ॥

सोरठा ।

शब्दतणी सब मार, साराई शरीर में ।
रामा अणी न धार, रोम रोम विच वहगई ॥ १ ॥

साखी ।

शब्द बाण सूं मारिया, सबही मनका खोट ।
रामदास आकाश में, लगी अखंड इक चोट ॥ ५ ॥
धर अंबर विच रामदास, एक शब्द गुंजार ।
उहाँसे आघी उलटि के, निकसी दशवैं द्वार ॥ ६ ॥
शब्द गाज ब्रह्मांड में, जाण भणंकी वीण ।
रामदास सुर संभलै, महा झीण सूं झीण ॥ ७ ॥
रामदास घायल भया, सत्त शब्द की मार ।
आठ पहर घूमत रहै, सांई हंदा यार ॥ ८ ॥
शब्द मार करड़ी घणी, विरला झेलै कोय ।
रामदास सो झेलसी, विरह विकलता होय ॥ ९ ॥

सोरठा ।

रामा शब्द संभाय, सतगुरु बाह्या तन्नमें ।
आठ प्रहर घूमाय, घावलग्या सो जाणसी ॥ १ ॥

साखी ।

जन रामा सतगुरु मिल्या, शब्द जु वाह्या तीर ।
उर अंतर नख सिख विचै, सारै भिद्या शरीर ॥ १० ॥
इति ।

अथ ब्रह्म एकता को अंग ।

सगुण जु निर्गुण रामदास, तू एको कर जाण ।
एक ब्रह्म सब बीच में, समरथ पद निरबाण ॥ १ ॥
सगुण जु माया रामदास निर्गुण माहिं समाय ।
एक ब्रह्म विस्तार है, दूजा कह्या न जाय ॥ २ ॥
पाला गल पाणी हुवा, जीव पलट हुवा ब्रह्म ।
निर्गुण सगुण जु एक हुय, रामा छूटा भर्म ॥ ३ ॥
जीव सिलाणा सीव में, पलट हुवा निज ब्रह्म ।
हरिजन हरितो एक है, रामा कहां है क्रम ॥ ४ ॥

एक ब्रह्म सब वीच में, ताका वार न पार।
रामदास तासूं मिल्या, दुबध्या दूर निवार॥ ५॥
इति।

अथ ग्रंथ–गुरु–महिमा।

आये संत सधीर, लिये जगमें अवतारा।
खोले भक्ति भंडार, मिट्याहै तिमिर अंधारा॥ १॥
अमर लोक सूं आय, सिंहथल माहिं विराजे।
तेजपुंज परकास, वजे अनहदके वाजे॥ २॥
सतासमाधि अगम जहँ आसण, सुखमण सहज समाधी।
आय रामियो चरणाँ लागो, सिख है आदि अनादी॥ ३॥
हरिरामा हरि है अवतारा, अंतर कला कवीरूं।
नामदेवसा दृष्टि देखताँ, सूरा संत सधीरूं॥ ४॥
पत प्रहलाद चाल सनकादिक, ज्ञान सहित शुकदेवू।
ध्रुवसा ध्यान अटल अनुरागी, गोरख जैसा सेवू॥ ५॥
दादूसा दीदार दुरंस, कोइ दर्शण पावै।
काल जाल सब जाय, भरम अघ दूर गमावै॥ ६॥
दीर्घसा दिग्पाल, मेरुसा अविचल कहिये।
सूरजसा परकास, समँदज्यूं थाह न लहिये॥ ७॥
समँद सँख्यामें होय, सत्तगुरु असँख कहाये।
गोविंदतें दीरघ्घ, चंदतें शीतल थाये॥ ८॥
ब्रह्म विलासी संत, ब्रह्म का है व्योपारी।
ज्ञान ध्यान गलतान, दीसतां दर्शण भारी॥ ९॥
मुरधरके मँझ माहिं, प्रगट्या सच्चा साँई।
देख्या जगत रु भेख, और ऐसा कुछ नाँई॥ १०॥
ऐसा है कोई संत, सूरवाँ कहियै सादू।
हरिरामा गुरुदेव, मिल्या पूरब पुन आदू॥ ११॥
जो पावै दीदार, दुरस होय चरणा लागै।
भर्म कर्म सब जाय, काल अघ दूरा भागै॥ १२॥
सिख कूं ज्ञान बताय, ब्रह्म के माहिं मिलावै।
ऐसी औषधि लाय, जन्मका रोग मिटावै॥ १३॥
सुणिया था सुरलोक, देवता वायक पूगा।
अधिक ज्योति परकास, अनँत जहँ सूरज ऊगा॥ १४॥

---

१ असंप्रज्ञातसमाधि। २ सहोदरभाई।

मिटिया तिमिर अनेक, तेज परकास्या माँही ।
रामाकूं गुरुदेव मिल्या, एक सच्चा साँईं ॥ १५ ॥
ऐसा है गुरुदेव, हमारे शीश विराजै ।
जेती महिमा होय, गुरां कूं एती छाजै ॥ १६ ॥

साखी ।

गुरुमहिमा सीखै सुणै, आपा लेह विचार ।
भजन करै गुरुदेव को, सो जन उतरै पार ॥ १७ ॥
गुरुकी महिमा रामदास, करता है दिनरात ।
सतगुरुसा दूजा नहीं, सत भाखतहूं वात ॥ १८ ॥

चौपाई ।

सद्गुरु समी नहीं पर-दखिणा । सद्गुरु समा प्रेम नहिं चखणा ।
सद्गुरु समा तीर्थ नहिं तिरणा । सद्गुरु समा और नहिं शरणा ॥ १ ॥
सद्गुरु समा धूप नहिं रूपम् । सद्गुरु सम नहिं तत्व अनूपम् ।
सद्गुरु समा पुण्य नहिं दाना । सद्गुरु समा ज्ञान नहिं ध्याना ॥ २ ॥
सद्गुरु समा जोग नहिं जग्गा । सद्गुरु समा और नहिं सग्गा ।
सद्गुरु समी कहत नहिं कहणी । सद्गुरु समी रहत नहिं रहणी ॥ ३ ॥
सद्गुरु समा उडत नहिं गडिता । सद्गुरु समा पढ्या नहिं पँडिता ।
सद्गुरु समा पिता नहिं माता । सद्गुरु सा नहिं तत्त्व विधाता ॥ ४ ॥
सद्गुरु समा वीर नहिं वन्धू । सद्गुरु समा और नहिं सन्धू ।
सद्गुरु विना नरक में जावै । सद्गुरु विन कहु कौन छुडावै ॥ ५ ॥
सद्गुरु विना कबहु नहिं छूटै । जहँ जावै जहँ जमरो लूटै ।
सद्गुरु विना बहुत फिर भटकै । जहँ जावै जहँ जमरो पटकै ॥ ६ ॥
सद्गुरु विना सवैं कों ध्यावै । गोगा पावू मात सरावै ।
सद्गुरु विना सवैं कों जाणै । क्षेत्रपाल वहु भूत वखाणै ॥ ७ ॥
सद्गुरु विना सवैं कों सेवै । धूप रूप सो बहु दिन खेवै ।
सद्गुरु विना सवैं कों जोवै । करामात ऋधि सिधि कों रोवै ॥ ८ ॥
सद्गुरु विना एक नहिं सूजै । अनँत देवकों फिर फिर पूजै ।
सद्गुरु विना वहु देव वखाणै । हदकी वात सफल कर जाणै ॥ ९ ॥
सद्गुरु विना राम नहिं पावै । रसना कंठ किमु प्रेम सिलावै ।
सद्गुरु विना हृदय नहिं सूधा । निज्जनाम विन कमलज्जु ऊंधा ॥ १० ॥
सद्गुरु विना नाभि नहिं आवै । श्वासोच्छ्वास कहो किमु लावै ।
सद्गुरु विन रगरग नहिं वोलै । अन्तर ध्यान कहो किमु खोलै ॥ ११ ॥

सद्गुरु विन अजपा नहिं जाणै । रोम रोम रस किसविधि माणै ।
सद्गुरु विना वंक नहिं पीवै । कैसे मिलकर जुगजुग जीवै ॥ १२ ॥
सद्गुरु विना पंच नहिं उलटै । काग वंश कहु किसविधि पलटै ।
सद्गुरु विना अधः नहिं जाणै । ऊर्ध्व कमल कहँ किसविधि माणै॥१३॥
सद्गुरु विना मेरु नहिं छेदै । आकाश कमल कहु किसविधि भेदै ।
सद्गुरु विन अनहद नहिं वावै । त्रिवेणी तट कैसे न्हावै ॥ १४ ॥
सद्गुरु विना लिव्व नहिं लागै । ब्रह्मजोति कहु किसविधि जागै ।
सद्गुरु विन दशमा नहिं जाणै । सहज समाधि किसीविधि माणै॥१५॥

साखी

सद्गुरु विन सुधि ना लहै, कोटिक करो उपाय ।
रामदास सद्गुरु विना, सब जग जमपुर जाय ॥ १ ॥

चौपाई ।

कोटि कोटि वहु ज्ञान दिढावै । कोटि कोटि धुन ध्यान लगावै ।
कोटि कोटि बहु देव अराधै । कोटि कोटि किरिया जो साधै ।
तोहि गुरु गोविंद विन मुक्ति न जावै । सतगुरु विना काल सब खावै ॥१॥
कोटि कोटि तीरथ फिर आवै । कोटि कोटि असनान करावै ।
कोटिइक दै पृथ्वी परदखिणा । निज्ज नाम विन प्रेम न चखणा ॥ २ ॥ तो० ।
कोटि कोटि वहु तुलाविसावै । सोना रूपा दान दिरावै ।
और द्रव्य वहुतेरा देवै । सहस्र नाम निशीदिनलेवै ॥ ३ ॥ तोहि० ।
कोटि कोटि जिग होम करावै । कोटिक ब्राह्मण नोत्ति जिमावै ।
कोटिक गउवाँ दान दिरावै । कोटि कोटि वहु हेत लगावै ॥ ४ ॥ तोहि० ।
धर्म करै कन्या परणावै । दत्त दायजो कोटि दिरावै ।
कोटि कोटि कन्या फल लेवै । सर्व भेष कूँ वहु धन देवै ॥ ५ ॥ तोहि० ।
कोटि कोटि जत सत्त कमावै । कोटिक तपस्या तप्प करावै ।
कोटिक वरत करै वहुतेरा । पोत पहर लूटावत डेरा ॥ ६ ॥ तोहि० ।
कोटि कोटि ऋधि सिद्धि कमावै । कोटि कोटि भंडार भरावै ।
सदावरत वहुतेरा देवै । कानगुरुकूँ निशिदिन सेवै ॥ ७ ॥ तोहि० ।
कोटिक कहत कहत वहु कहणी । कोटिक रहत रहत वहु रहणी ।
रेचक कुंभक जोगजु साजै । ताटक ध्यान धरै मन छाजै ॥ ८ ॥ तोहि० ।
कोटि कोटि उडता बहु गडिता । कोटिक पढ्या होय जो पँडिता ।
कोटिक अगम निगम की सूझै। कोटि कोटि सूरा हुय जूझै ॥ ९ ॥ तोहि० ।
कोटि करै बारै पतसाई । नवाँ खँडामें नोवत वाई ।

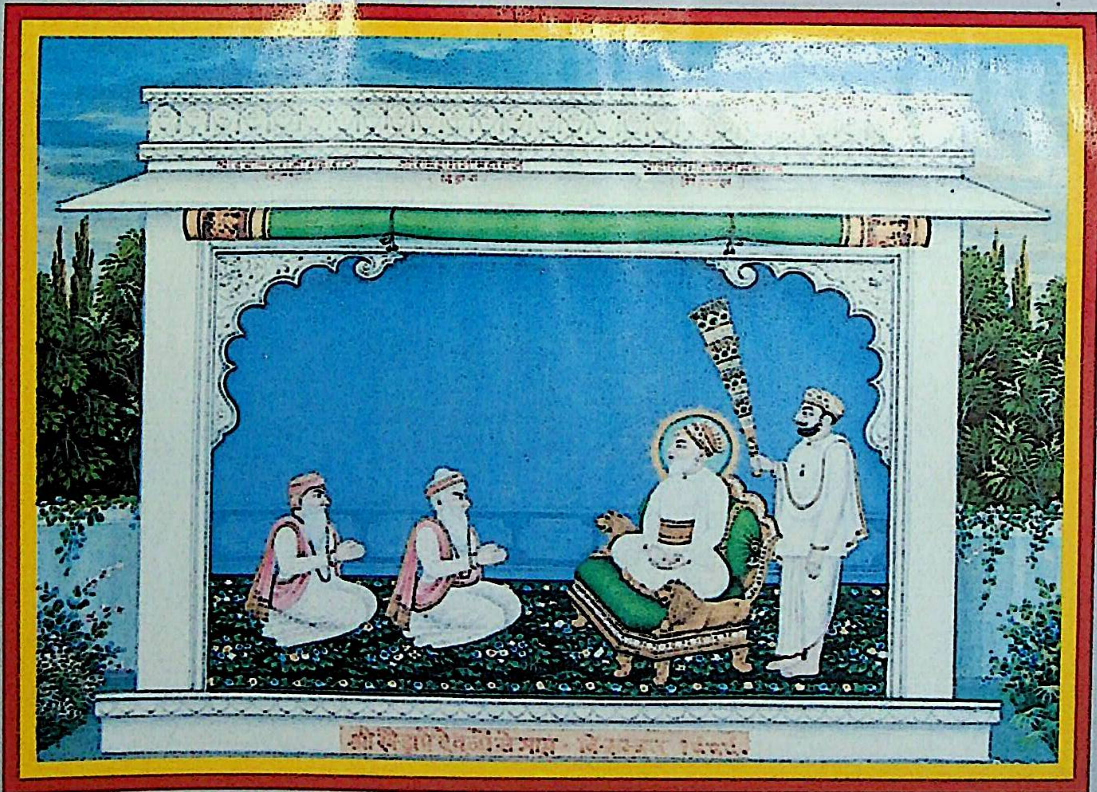
उदय अस्त लग अदल चलावै। विन्धि लोक सुरलोकाँ जावै ॥ १० ॥ तोहि०।
सप्तद्वीप लौं आँण सवाई । एक चक्रवर्ती ठकुराई ।
एको सुक्ख कहीं नहिं भाया। फिर पाछा गर्भवासा आया ॥ ११ ॥ तोहि०।
कोटिक ब्रह्मा विष्णू ध्यावै । शिव शक्ती सूं ध्यान लगावै ।
और देव बहुतेरा सेवै । धूप रूप सो निशि दिन खेवै ॥ १२ ॥ तोहि०।
चवदह भवन काल घर जावै । ब्रह्मा विष्णु महेश डरावै ।
काल डरै अणघड सूं भाई । तासूं संताँ सुरति लगाई ॥ १३ ॥ तोहि० ॥

साखी ।

ता मूरत पर रामदास, वार वार बलिजाय ।
विणज करै ता नामको, जाकूँ काल न खाय ॥ १ ॥

चौपाई ।

शून्य शिखरमें हाट मंडाया । विणजण कूं व्योपारी आया ।
हरि हीरों की घड़ी लगाई । निजनाम की गूण भराई ॥ १ ॥
पांच पचीस वलधिया लाया । गूण घाल अरु लाद चलाया ।
सतगुरु कहै चेला तुम जावो । काया पाटण विणज हलावो ॥ २ ॥
चेला चलकर लारै आया । दिल भीतर बाजार मंडाया ।
चित्त चोहटै आण उतारी । फिर फिर जावै सब व्योपारी ॥ ३ ॥
ततकी तराजू दिल की डाँडी । उर भीतर हम हाट जो माँडी ।
कड़्दा करम परा कर पाखै । तत्त नाम एक हीर जु राखै ॥ ४ ॥
अधः ऊर्ध्व विच रस्त चलाई । जमडाणी अब न्यारा भाई ।
विणजकरै विणजारो जागै । जम डाणी का जोर न लागै ॥ ५ ॥
हाट मँडाई चोड़ै चोहटै । चोर न मुसै लाट नहिं बांटै ।
विणजण कूं जग चलकर आवै । हीरा पारख कोई न पावै ॥ ६ ॥
जौंहरि होय सो पारख पावै । तन मन दे हीरा ले जावै ।
हरि हीरा की नाव चलाई । जगभीतरमें धुरा बंधाई ॥ ७ ॥
धुर बोहरे अब मेल घणेरा । विणज करै अरु सुनमें डेरा ।
आपहि धुर आपहि है बोरा । आपहि विणजै आपहि हीरा ॥ ८ ॥
हरि हीरा का भऱ्या भँडारा । विणज करै है अगम अपारा ।
विणज करै अरु सुनमें आया । सतगुरु सेती शीस निवाया ॥ ९ ॥
शून्य शिखर में गुरू विराजै । रात दिनां नित नोवत वाजै ।
सिख सतगुरु एक मिल हूवा । विणज करै अब कबू न जूवा ॥ १० ॥



सिंहासन पर विराजमान - अनन्त श्री हरिरामदासजी महाराज रामस्नेहि सम्प्रदायाचार्य सिंहस्थल (१)

हाथ जोड़े हुए सम्मुख विराजमान - १. अनन्तश्री रामदासजी महाराज रामस्नेहि सम्प्रदायाचार्य खैड़ापा (१)

२. अनन्तश्री दयालुदासजी महाराज रामस्नेहि सम्प्रदायाचार्य खैड़ापा (२)

साखी ।

सतगुरु समाजु को नहीं, इण जुग ही के माहिं ।
रामदास सतगुरु विना, दूजा दीसै नाहिं ॥ १ ॥
सूरत शुद्ध कबीरसी, दादू सा दीदार ।
हरिरामा हरि सारसा, अनँत जोत अधिकार ॥ २ ॥
हरिरामा गुरु सूरवाँ, ज्ञान ध्यान भरपूर ।
चौरासी सूं काढ कर, किया काल जम दूर ॥ ३ ॥
ऐसा साधू नामदे, जैसा है हरिराम ।
रामैं कूँ शरणैं लियो, मेल निरंजन राम ॥ ४ ॥
हरिरामा प्रह्लादसा, जैसा रामानंद ।
चरण परस चित चेतिया, मनमें भया अनंद ॥ ५ ॥
विष माया सब त्यागकरि, हिरदै ध्यान लगाय ।
रामदास निरभै भया, सतगुरु शरणै आय ॥ ६ ॥
सतगुरु केवल रामदास, सिल्या निकेवल माँय ।
हरिरामा सँत ब्रह्म है, सिखभी निरभै थाय ॥ ७ ॥
चरणा चाकर रासियो, सतगुरु है महाराज ।
च्यार चक्क चवदै भवन, ताहि परै सँतराज ॥ ८ ॥
सतगुरु को मुख देखतां, पाप शरीराँ जाय ।
साधुसंगति सत रामदास, अटल पदी लेजाय ॥ ९ ॥
गुरु गोविंद की महरतैं, रामा पड़ी पिछाण ।
सब संतां के ऊपरै, वारूं मेरा प्राण ॥ १० ॥
दरसण दीठां रासियां, भाज जाय सब भर्म ।
ऐसा गुरु हरिरामजी, परस्यां काटै कर्म ॥ ११ ॥
पूरण ब्रह्म विराजिया, गाम सिंहथल माहिं ।
रामदास जन जाणसी, दूजाँ कूं गम नाहिं ॥ १२ ॥

इति ।

॥ श्रीरामभक्तेभ्यो नमः ॥

अथ श्रीभक्तमालप्रारंभः ।

साखी ।

मैं अबला हौं रामदास, आँधो अंत अचेत ।
तुम सतगुरु हो शीश पर, हमकों करो सचेत ॥ १ ॥
रामदास की वीनती तुमहो, अगम अपार ।
भक्तमाल का भेव दो, सतगुरु करौं जुहार ॥ २ ॥

चौपाई ।

सतगुरु मिल्या नामनिज पाया । सत्तशब्दकों निशिदिन ध्याया ॥
हृदय कमल घर लीया वासा । बीज भक्ति मोहि उपजी आसा ॥ १ ॥
नाभिकमल में राम मिलाया । रोम रोम में रंग लगाया ॥
उलटि शब्द पश्चिम दिशि फिरिया । अधःऊर्ध्व प्रेमरस झरिया ॥ २ ॥
मनवा उलटि अगम घर आया । सब सन्तन का दर्शन पाया ॥
सब सँत मेरे शीश विराजै । सत्त शब्द सन्ताँ मुख छाजै ॥ ३ ॥
सब सन्तन कों राम पियारा । भक्तमाल का करौं उचारा ॥
रामनाम संपति सुखदाई । सब सन्ताँ मिल साख बताई ॥ ४ ॥
रामनाम ध्यावै कुल माँई । सो बांधव है मेरा भाई ॥
रामनाम कों निशिदिन ध्यावै । आवागमन बहुरि नहि आवै ॥ ५ ॥
रामनाम कों निशिदिन ध्यावै । अटल पद्द अमरापुर पावै ॥
रामनाम कों निशिदिन ध्यावै । दुःख दारिद्र हि दूरि गमावै ॥ ६ ॥
रामनाम से बहुता तिरिया । अनँतकोटि अनेक उधरिया ॥
रामनाम की सुनिये साखा । अजामेल पुत्र जिन राखा ॥ ७ ॥
रामनाम की कहौं बडाई । अहिल्याकों जु विमान चढ़ाई ॥
रामनाम का मता अपारा । झींवर कुटुंब सहेता तारा ॥ ८ ॥
रामनाम गजराज उधारे । सब सन्तन का काज सुधारे ॥
रामनाम से शिला तिराई । पाणी ऊपर पाज बँदाई ॥ ९ ॥
रामनाम केहा गुण गाऊं । जुग जुग भक्ति तुम्हारी पाऊं ॥
रामनाम की महिमा भारी । मो अबला कों तार मुरारी ॥ १० ॥
तीन लोक में राम धियाया । सो सन्त जु मेरे मन भाया ॥
रामदास कों राम पियारा । जो सुमरै सो प्राण हमारा ॥ ११ ॥

साखी ।

हरि की महिमा रामदास, कहिये कहा वनाय ।
अनँतकोटि नर उद्धरे, रामनाम लिव लाय ॥ १ ॥

छंद नीसानी ।

सतगुरु स्वामी द्यौ निजनामी निज ही नाम धियावन्दा ।
गणेश गरवा कानाँ सरवा ऋधि सिद्धि बुद्धि मिलावन्दा ॥ १ ॥
दश अवतारूं ब्रह्म विचारूं ररंकार मिल जावन्दा ।
पानी पवन रु धरनी अंबर चन्द सूर गुन गावन्दा ॥ २ ॥
नव भी नाथू बारह पंथू परमल परभू ध्यावन्दा ।
छउ भी जतियाँ सातों सतियाँ चेत जानि जुग जीवन्दा ॥ ३ ॥

एको अच्छर मंडे मच्छर ॐकार उपावन्दा ।
लखचौरासी है अविनासी पूर्णब्रह्म समावन्दा ॥ ४ ॥
है भी न्यारा प्रियतम प्यारा जाहिर जोगी जाणन्दा ।
कोटि अनन्तू सिले निरन्तू रोम रोम रस माणन्दा ॥ ५ ॥
है जुग चारू सन्त अपारू दास दीनता गावन्दा ॥
हम कीड़ी कायर हरि सुख सायर उलटा अभर भरावन्दा ॥ ६ ॥
थाह न पाया ध्याय सिलाया समदाँ बून्द समावन्दा ।
रामादासू सतगुरुपासू नमि नमि शीश नमावन्दा ॥ ७ ॥

साखी ।

सतगुरु सेती वीनती, मनका मत्सर मेट ।
रामदास कों दीजिये, भक्तमाल जश भेट ॥ १ ॥

चौपाई ।

प्रथम हि नाम सदाशिव लीया । पार्वती कों निज तत दिया ॥
सो सुनि नाम सूवा ले भागा । उदरहि माहिं राम लिव लागा ॥ १ ॥
बाहिर आइ वसे वन जाई । रामनाम से प्रीति लगाई ॥
वेदव्यास बहु ज्ञान उपाया । राम राम कहि उलटि समाया ॥ २ ॥
ब्रह्मा विष्णु रामसे रत्ता । कुबेर जोगी राम सुमरता ॥
शेषनाग गुरुज्ञान विचारा । सहस मुखाँ से राम उचारा ॥ ३ ॥
राम रसायन नारद पीया । ऋषि सनकादिक हरिगुण लीया ॥
मारकंड लोमश ऋषि भाई । रामनामसे प्रीति लगाई ॥ ४ ॥
गर्ग ऋषी जु रामसे रत्ता । गौतम कागभुशुंडि सुमरता ॥
जयदेव ऋषि की प्रीति पियारी । उद्धव हरिसे लाई तारी ॥ ५ ॥
पिप्पलाद ऋषि हरि हर ध्याया । ज्ञान पाय अज्ञान मिटाया ॥
कुंभी ऋषि काम को जीता । काया गढ ले भया वदीता ॥ ६ ॥
करणबंध ऋषि राखी काया । नाद विन्द ले गांठ घुलाया ॥
अगस्त्य ऋषि जुगे जुग जीया । सात समँदका पाणी पीया ॥ ७ ॥
भृगुजी ऋषि ब्रह्म को चीन्हा । विष्णुदेवका परचा लीन्हा ॥
सेवा करी श्याम से लागा । काल क्रोध भय अंतर भागा ॥ ८ ॥
नासकेत उद्दालकपूरा । आन सिल्या सुखसागर सूरा ॥
ऋषि समीक भूमंडल गाया । रामनाम को निशिदिन ध्याया ॥ ९ ॥
ऋषि दालभ्य एक धुन धारी । सत्तशब्द से प्रीति पियारी ॥
मुनि वशिष्ठ समाधी सूरा । निशिदिन रहते हरी हजूरा ॥ १० ॥

ऋषभदेव रामसे राता । निजनामसे कीया नाता ॥
गुरु गांगेय राम गुण गाया । जिन माँई को भेद बताया ॥ ११ ॥
विश्वामित्र हि ब्रह्म विचारा । रोम रोम में राम उचारा ॥
बाहुबल बलवन्ता हूवा । मन को जीति सन्ताँ मिल चूवा ॥ १२ ॥
राजा भरत महा पटरानी । दोनां भक्ति निकेवल जानी ॥
महावीर महा तत पाया । केवल होइ मोक्षपद पाया ॥ १३ ॥
केशौ कुँवर काम दल पाला । परदेशी सन्ताँ मिल हाला ॥
चोवीस तिथंकर राम धियाया । केवल होइ मोक्षपद पाया ॥ १४ ॥
भगवन्नाम निरंजन मेला । निजनाम सें कीया मेला ॥
काल जाल जम का डर नाहीं । भगवद मिल्या ताहि घर माहीं ॥ १५ ॥
सरियादे प्रह्लाद उधरिया । रामनाम ले कछू न डरिया ॥
भीड़ पड़ी सन्ताँ पख आया । हिरण्यकशिपु को मार गुड़ाया ॥ १६ ॥
सिंह रूप अवतार धारिया । तिलक दिया प्रह्लाद तारिया ॥
कार्तिकस्वामी हनुमत सूरा । सीता लक्ष्मण राम हजूरा ॥ १७ ॥
त्यागा राज भरत वन लीया । राम रसायन निशिदिन पीया ॥
रिपुहन राम राम गुण गाया । मन्दोदरी विभीषण पाया ॥ १८ ॥
तुलसीदास राम का प्यारा । आठों पहर मगन मतवारा ॥
भूत मिल्या हरि भेद बताया । हनूमान हरि चरणाँ लाया ॥ १९ ॥
राजा जनक राम का प्यासा । खट दिलीप प्रेम परकासा ॥
परीक्षित प्रेम पियाला पीया । जन्मेजय निजतत ले जीया ॥ २० ॥
पारायण सुनिके पद पाया । आवा गमन बहुरि नहि आया ॥
रुक्मांगद पुँडरीक उधरिया । राजा शिवी सत्य से तिरिया ॥ २१ ॥
गूँड राज गोविन्द गुण गाया । सुखसागर में सहज समाया ॥
मोहमर्द निरमोही राजा । दीठा जाय अगम का छाजा ॥ २२ ॥
परजादीप परम तत पाया । हाकम सन्ताँ चरण लगाया ॥
कटिया करम रामको गाया । दिन पैंतीसाँ मोक्ष मिलाया ॥ २३ ॥
मोरध्वज का मता करारा । त्यागी देह राम का प्यारा ॥
सदावर्त दीया सुख पाया । सन्तन को बहु शीश नवाया ॥ २४ ॥
प्रेम भक्ति सूँ प्रीति लगाई । वैकुठाँ चढि नौबत बाई ॥
जन अमरीष रामगुण गाया । चरणामृत लेकर सुख पाया ॥ २५ ॥
दुरवासा ऋषि शापन आए । उलटा दुःख उसीको धाए ॥
तपि लगी तनमें बहुभारी । साहिब सेती अरज गुदारी ॥ २६ ॥
हरिजन हरि को बहुत पियारा । भक्तकाज धरिया अवतारा ॥
उलटा ऋषी लगाए पाप । सन्तन का कारज सुधराए ॥ २७ ॥

द्विज कन्या दिल माहीं दरस्या। उलटी मिली अगम घर परस्या॥
राजा हरिचंद सती कहाया। सत्त न हाऱ्या हाट बिकाया॥ २८॥
बलि जिग माहीं जाग रचाया। बावनरूप छलन को आया॥
बलि नहि छलिया आप छलाया। राज पयालाँ निश्चैपाया॥ २९॥
पांडव पाँच राम का प्यारा। कुन्ताँ माता अगम अपारा॥
पांडव जग में जाग रचाया। चार कोंट का ऋषी बुलाया॥ ३०॥
जाग जीमिया शंख न बोला। स्वामी काहिन अन्तर खोला॥
स्वामी भेद सन्तका दीया। पांडव जाय बाल गुण लीया॥ ३१॥
बालमीकि की शोभा सारी। कीन्हो जाग सँपूरण भारी॥
दूजा बालमीकि इक हूआ। रामनाम कहि निरभै वूआ॥ ३२॥
शतकोटी रामायण कीन्ही। स्वर्ग मृत्यु पातालाँ दीन्ही॥
निश्चै नाम एक की आसा। रामनाम कह ब्रह्म विलासा॥ ३३॥
द्रौपदि प्रेम पियाला पीया। चीर वधार परम सुख लीया॥
विदुर जु भेव भक्ति का पाया। नाम निकेवल निशिदिन ध्याया॥ ३४॥
बथवै हन्दा शाक बनाया। साहिब को परसाद कराया॥
साहिब साधू प्रीति पियारी। कैरव हार गए अहँकारी॥ ३५॥
सूरदास सन्ताँ सुखदाई। रामनाम से प्रीति लगाई॥
कालू कीर राम का प्यारा। रोम रोम में लीया झारा॥ ३६॥
सँत हरिदास सुरति उलटाई। देवहुति भूमि सातवीं पाई॥
ध्रुवजी ध्यान धणीसे लाया। अटल पदी अमरापुर पाया॥ ३७॥
भक्त वंश में सन्त जु सूरा। वैकुँठा मिलिया जन पूरा॥
रतनदास राम सों रत्ता। रोम रोम में लागा तत्ता॥ ३८॥
नरसीदास राम का प्यासा। प्रेम भक्ति पाई परकासा॥
साँई के सँत हुआ हजूरी। कर माहेरो आशा पूरी॥ ३९॥
तिलोकचँद की भक्ति करारी। लेखण स्याही आप मुरारी॥
सुदामा का दारिद हरिया। रामनाम ऐसा गुण करिया॥ ४०॥
प्रेम भीलणी भक्ति पियारी। बोर पायकर शिषा वधारी॥
सरिता नीर निरमला कीया। शबरी रघुवर टीका दीया॥ ४१॥
सर जहँ ऋषी सत्तगुरु पाया। ऋषि मिल हरि दर्शन को आया॥
शबरी भक्ति भली पण कीन्ही। सब ऋषियां मिल माँहे लीन्ही॥ ४२॥
ईश्वर बाप गधा कूं कीया। पिता पुत्र खोला में लीया॥
नेमनाथ नारायण ध्याया। भेदी भेद ब्रह्म का पाया॥ ४३॥
आदिनाथ मिलिया अविनासी। केवल हुआ एक सुखरासी॥
गनिका गुरु सूवा को पाया। सत्तशब्द को निशिदिन ध्याया॥ ४४॥

रंका वंका राम पियासा । नामा छींपा हरि का दासा ॥
देवल फेर रु दूध पिलाया । श्वान रूप हुइ भोजन पाया ॥ ४५ ॥
परचा पूगा परज पतीनी । दशधा भक्ति नामदे कीनी ॥
दत्त दरश दिल भीतर पाया । गुरु चोवींसूं ले गुण गाया ॥ ४६ ॥
निश्चय एक नाम की आसा । रामनाम कह ब्रह्म विलासा ॥
विष्णुस्वामी माधवाचारा । सत्त शब्द ले किया पसारा ॥ ४७ ॥
रामानुज निम्बारक भाई । कलियुग माहीं भक्ति हलाई ॥
राघवानन्द राम का प्यारा । रोम रोम में लीया झारा ॥ ४८ ॥
रामानन्द मुख राम उचारा । निर्गुण भक्ती किया प्रचारा ॥
चार संप्रदा बावन द्वारा । हुआ शिष उजियागर सारा ॥ ४९ ॥
भावानन्द अनँतानँद दासा । रामनाम से लाई आसा ॥
नरहरिनन्द निकेवल लीया । स्वासि गँालवै हरि रस पीया ॥ ५० ॥
धँनै सुरसरै सुरति लगाई । रामनाम मीठो रे भाई ॥
सन्तन के मुख बीज वुहाया । खेती माहिं नाज निपजाया ॥ ५१ ॥
दास कँबीर मगन मत वारा । सहज समाधि वणी इक धारा ॥
सब सन्ताँ में चकवै हूआ । ब्रह्म विलास कबू नहि जूआ ॥ ५२ ॥
हुइ विणजारा वालद लाया । सदावर्त दे सन्त सराया ॥
कमाल कमाली हरि गुण गाया । सुखसागर में सहज समाया ॥ ५३ ॥
कबीर कमाल जमाल जमल्ला । शेख फरीद सुमरिया अल्ला ॥
श्रीसहस्रास्य गुरू गम पाई । वहत्तर शिष सिल पद्धति लाई ॥ ५४ ॥
सेंन सुखा योगँानँद भाई । आय सिल्या सुखसागर माँई ॥
सीता पींपै प्रेम पियारा । रामनाम रटिया इक धारा ॥ ५५ ॥
गेले माँहि किया सिंह चेला । रामनाम से बांध्या बेला ॥
झाँपापात समँद में लीन्ही । छापां आय परगटी कीन्ही ॥ ५६ ॥
राम राम रैदास उचरिया । रोम रोम में नीझर झरिया ॥
काढ़ि जनेऊ विप्र जिमाया । शालग स्वामी मुखाँ बोलाया ॥ ५७ ॥
पद्मावती प्रेम रस पागी । सब सँग छाँडि राम लिव लागी ॥
विष तणां चरणामृत दीया । साहिब सहजाँ अमृत कीया ॥ ५८ ॥
अमृत उलटि सिल्या घट माहीं । जन रैदास सत्तगुरु पाहीं ॥
कुल मारग को काने त्याग्या । मीरा चली गुरां की आज्ञा ॥ ५९ ॥
रतना करमा मीरा बाई । झाली प्रीति राम से लाई ॥
पूली प्रेम पियाला पीया । सतगुरु से सिल निज तत लीया ॥ ६० ॥
थंभण मन कों थिर करि राखा । रामनाम भजिया सुण साखा ॥
धर्मदास ध्यान करि ध्याया । अनहद नाद अखंडित वाया ॥ ६१ ॥

टीलमदास लगावै तत्ता । लाहूदास राम से रत्ता ॥
ज्ञानी ज्ञान चीन्हिया निर्गुण । माया दूर करी सब सर्गुण ॥ ६२ ॥
गेबीराम गैब से सिलिया । सब सन्ताँ सुखदाई भिलिया ॥
गोविन्दराम राम गुण गाया । केवलदास निकेवल पाया ॥ ६३ ॥
अल्हैदास अगम की आसा । भक्ति पदीमें कीन्हा वासा ॥
कोल्ह गैंस कुलशेखर सारा । मुकुन्ददास सिल्या तत तारा ॥ ६४ ॥
मुरलीदास मलूका बेई । आन सिले सुखसागर तेई ॥
चँदरै चित चेतन करि जाण्या । सतरै रोम रोम रस माण्या ॥ ६५ ॥
मुक्ख भीड़ पीया रस बंकी । चवड़े चपट मँड्या चित चोकी ॥
चित से चित चेतन करि ध्याया । आतम में परमातम पाया ॥ ६६ ॥
हीरदास हरि का हित कारी । सत्यशब्द से प्रीति पियारी ॥
कान्हरदास काम कों त्यागा । रामनाम से निशिदिन लागा ॥ ६७ ॥
मगनीराम मगन में रहणा । आठ पहर नित राम सुमरणा ॥
जंगीराम जुक्ति करि जाना । ब्रह्म चीन्ह निज तत्व पिछाना ॥ ६८ ॥
बालकदास ब्रह्म व्योपारी । उलटे आइ लगाई यारी ॥
केशवदास काम कुण काजी । राम राव भजिया हुइ राजी ॥ ६९ ॥
हरचँददास चरणा चित लाया । सतगुरु सेती प्रेम सिलाया ॥
चेतनदास चेत जुग जीया । आतम राम रसायन पीया ॥ ७० ॥
मोहनदास मानगढ मारा । रोम रोम में राम पुकारा ॥
मानादास महा रस पीया । उलटे आइ अगम सुख लीया ॥ ७१ ॥
दास मुरारि सिल्या तन माँए । तिरबेणी चढि ध्यान लगाए ॥
सँत शिवदास श्यामसे सच्चा । सत्त शब्दसे निशिदिन रच्चा ॥ ७२ ॥
बाणारसी राम सों लागा । उलटा सिल्या अगम घर आगा ॥
दरदास दिल माहीं दरसा । रोम रोम में अमृत वरसा ॥ ७३ ॥
जन पयहारी परिपक हूआ । ब्रह्म विलास कबहु नहि जूआ ॥
कृष्णदास राम गुण गाया । वे गलते का महन्त कहाया ॥ ७४ ॥
अगर कील्ह हुआ उजियागर । अनुभवबानि सिल्या सुखसागर ॥
धन्दर नाभै हरि गुण गाया । भक्तमाल कर सन्त सराया ॥ ७५ ॥
लछमन सेऊ प्रेम पियारा । राम राम रटिया इक धारा ॥
धाटमदास जातिका सेणा । सतगुरु सेती सिलिया सेणा ॥ ७६ ॥
डाला भर गेहूं का लाया । सन्तन को परसाद कराया ॥
कीता सिल्या राम से राजी । रोम रोम में झालर वाजी ॥ ७७ ॥
तापै तपस्या करी करारी । लोधिये जाय लगाई यारी ॥
नानक गुरु नाम निज पाया । च्यार कोंट में पन्थ चलाया ॥ ७८ ॥

ईश्वरदास रामका प्यारा। हरि गुण कथिया अगम अपारा॥
आशोदास अगम की आसा। कनक दंडवत की बहुदासा॥ ७९॥
परमानँद आनँद दुइ भाई। रामनाम से प्रीति लगाई॥
धरि अवतार बूढण हुइ आया। दादू कों निज नाम सुनाया॥ ८०॥
दादूदास राम का प्यारा। चार पन्थ ले किया पसारा॥
बावन शिष्य हुए उजियागर। अनुभव बानि मिले सुखसागर॥ ८१॥
दासगरीब गुरू घर आया। भेदी भेद ब्रह्म का पाया॥
रज्जब पिया राम रस भारी। सतगुरु सेती प्रीति पियारी॥ ८२॥
प्रीति लगाय प्रेम रस पीया। नाम निकेवल निशिदिन लीया॥
सुन्दरदास सिल्या सुख माँए। नाम निकेकल निशिदिन ध्याए॥ ८३॥
मुक्ति पन्थ का पाया मारग। दादूराम सिल्या गुरु तारग॥
पीथे प्रेम पियाला पीया। गोरख जोगी दर्शण दीया॥ ८४॥
जो गोरख जोगी तुम आदू। उरभीतर में है गुरु दादू॥
लालदास लागा गुरु घाटी। कीन्ही दूर भर्म की टाटी॥ ८५॥
नान्हूराम निकेवल लीया। जन गोपाल जानि जग जीया॥
दासप्रयाग परम पद पाया। जैमलदास नितो नित ध्याया॥ ८६॥
घड़सी टीलमदास फकीरा। सन्तदास सिलिया सुखसीरा॥
चखना बाजींदा हरिदासा। सदनै राम भज्या इक सासा॥ ८७॥
शोभाराम रामगुण गाया। हरिव्यासी हरि माहिं समाया॥
परशुराम राम मतवारा। सब सन्ताँ से सिलिया प्यारा॥ ८८॥
ततवेता निज तत्व पिछाना। घमडीराम राम कूं जाना॥
वीरम त्यागी तन मन त्याग्या। राम राम भजिया गुरु आज्ञा॥ ८९॥
हरदासी हरि से हित लाया। रामनाम कों निशिदिन ध्याया॥
खोजी खोज पकड़िया सैंठा। सब सन्ताँ माहीं सिलि बैठा॥ ९०॥
केवल कूबा ब्रह्म विलासी। उलटा अलख सिल्या अविनासी॥
खेमदास की आशा पूरी। निशिदिन राखा राम हजूरी॥ ९१॥
शंकर स्वामी सुमरण कीया। अजपाजाप रामरस पीया॥
गोपीचन्द भरतरी पूरा। अनहद अखंड वजाया तूरा॥ ९२॥
गोरखनाथ मछन्दर जोगी। रग रग भेद लिया रस भोगी॥
कोटि निनाणूं राजाहूआ। गाया राम अगम घर वूआ॥ ९३॥
हरीदास पूरा गुरु पाया। नाम निरंजन पंथ कहाया॥
बारह शिष्य मिले सुखमाँई। पाहू माता चेली क्हाई॥ ९४॥
द्वादश पन्थ सन्त वड भागी। छाप निरंजन माया त्यागी॥
अंजन त्यागि निरंजन ध्याए। तातैं निरँजन पन्थ कहाए॥ ९५॥

जगजीवन तुरसी अरु सेवा । रामरसायन पीया मेवा ॥
भुवन भेव भक्तीका पाया । खाँडै खेरतणे लोह वाया ॥ ९६ ॥
राजा जसू जुक्तिकरि जाना । ब्रह्म चीन्ह निज तत्त्व पिछाना ॥
जगतसिंह की प्रीति पियारी । राव पलटि चरणाँ मति धारी ॥ ९७ ॥
देवे पंडे प्रीति लगाई । पत्थर मूरति मूँछ अणाई ॥
गूदड़ रूप होय हरि आया । सन्तदास सँत दरशण पाया ॥ ९८ ॥
किरपा करी नाम निज दीया । सास उसास एक ध्वनि लीया ॥
सन्तदास सिलिया सुख माँई । तिरबेनी चढि ध्यान लगाई ॥ ९९ ॥
अनुभव शब्द सन्त बहु बोल्या । भक्ति पन्थका पड़दा खोल्या ॥
गांव दांतड़े का सँत वासी । चारों कोंट भक्ति परकासी ॥ १०० ॥
बालकदास रामका प्यारा । प्रेम परम तत किया पसारा ॥
गिरधरदास रु खेमकुमारी । परमानन्द लगाई यारी ॥ १०१ ॥
जाहर जोगी जगमें जीता । शूरवीर सँत भया विदीता ॥
दरियासा दिल माँही दरसा । उलटा सिल्या अगम घर परसा ॥१०२॥
सहज समाधी सन्त कहाया । प्रेम पियाला भरि भरि पाया ॥
किसनदास कामकों मेट्या । उलटा चढ्या अगम घर भेट्या ॥ १०३ ॥
नाद बिन्द में सन्त जु सूरा । दशमद्वार निज परसत नूरा ॥
सुखरामा सतशब्द सँभाया । मनकों ले खुरसाण चढाया ॥ १०४ ॥
कर्म काटि सब काने कीया । दीठा जाय अगम का दीया ॥
नानकदास नाम निज पाया । श्वासोच्छ्वास नितो नित ध्याया ॥१०५॥
पूरणदास प्रेमरस पीया । सतगुरु संग मिल जुग जुग जीया ॥
मोहनदास सिल्या सुख माँई । तिरबेनी चढि ध्यान लगाई ॥ १०६ ॥
सेवादास सिल्या सुख माँई । वैकुंठाँ चढि नौबत वाई ॥
सदाराम शून्यका वासी । परम ज्योति सहजाँ परकासी ॥ १०७ ॥
घमडीराम घमड में रत्ता । रोम रोम में लागा तत्ता ॥
चरणदास चरणाँ चित लाया । सतगुरु सेती प्रेम सिलाया ॥ १०८ ॥
जैरामा जन सिलिया जाहीं । काल जाल जमका डर नाहीं ॥
खेतादास खरा हुइ लागा । उलटा सिल्या अगम घर आगा ॥ १०९ ॥
हेमदास हरिका हित कारी । सत्त शब्दसे प्रीति पियारी ॥
हरीदास सन्त जु वडभागी । उलटी सुरति निरन्तर लागी ॥ ११० ॥
साँवलदास सिल्या सुखमांई । पारब्रह्म परमानँद पाई ॥
दास पँचायन परिपक हुआ । हदकों त्यागि वेहदकों वूआ ॥ १११ ॥
टीलमदास रामका प्यारा । रोम रोम विच लीया झारा ॥
पच्छिम दिसा मुसाफिर आए । जैमलदास भणत बतलाए ॥ ११२ ॥

तासेती जैमल जल पाया । जब बालक कों संग बुलाया ॥
सुण रे बालक बात हमारी । तोकों दाखूँ गुंझ हदारी ॥ ११३ ॥
गेलैमें गुरुज्ञान सुणाया । योग सहित निज नाम बताया ॥
जैमलदास जानि जुग जीया । आतम राम रसायन पीया ॥ ११४ ॥
पँचग्राहीके महन्त कहाये । सब सन्तन में सहज समाये ॥
ब्रह्मध्यान सुणियो सुधि पाई । एको नाम सत्य है भाई ॥ ११५ ॥
जबतें रसना राम धियाया । कंठकमल में प्रेम मिलाया ॥
हृदयकमल धमकार सुणीजे । चाली सुरति सतगुरू कीजै ॥ ११६ ॥
जैमलदास सत्तगुरु पाया । जद मनवा मेरा पतियाया ॥
हरिरामा हरि का हितकारी । सहज समाधि बनी अति भारी ॥ ११७ ॥
ब्रह्म विलासी हरिजन सूरा । शिष शाखा मिल हुआ पूरा ॥
सत्य शब्द ले किया पसारा । सप्तद्वीप नव खंड विस्तारा ॥ ११८ ॥
निज्ज नाम की नाव चलाई । तारक मंत्र भक्ति अति भाई ॥
चाँपाँ माता चित करि पीया । उलटे आइ अगम सुख लीया ॥ ११९ ॥
रोम रोम सहजाँ लिव लागी । दास विहारि मिले वडभागी ॥
रुखियाँबाई रामपियारी । अनहद अखंड लगाई तारी ॥ १२० ॥
दासनरायण अमी धियाया । आदूराम रामगुण गाया ॥
लक्ष्मणदास राम लिव लागी । ज्ञान विचार भए वैरागी ॥ १२१ ॥
दईदास गुरुज्ञान सँभाया । मनकों ले गुरुचरण चढाया ॥
सब सिक्खाँ संपति सुखदाई । सतगुरु सेती प्रीति लगाई ॥ १२२ ॥
गाम सींहथल सतगुरु मिलिया । रामदासका अन्तर भिलिया ॥
सतगुरु ब्रह्म एक है साधो । रामनाम निशिदिन आराधो ॥ १२३ ॥
रामदास सन्तां शरणाई । भक्तमाल ले शीश चढाई ॥
भक्तमाल भगवद मन भाई । अनँत कोटि सिलिया इन माँई ॥ १२४ ॥

साखी ।

रामदास रंग से मिल्या, सुन्दर सुख के माहिं ।
सद्गुरु है हरिरामजी, (चाँपा) माता सहज समाहिं ॥ १ ॥
सहज मिल्या गुरु घाटमें, सुखसागरकी तीर ।
सब सन्तनमें मिल रह्या, चुगा नाम निज हीर ॥ २ ॥

छन्द अर्धभुजंगी ।

हँसै हीर पाया नितो सहज ध्याया ।
गदो कंठ लागी चली धुन्न आगी ॥ १ ॥
हदै जाय हिलिया मनो देव सिलिया ।
लगी प्रीति प्यारी चलै गंग भारी ॥ २ ॥

नाभी द्वार आया सतोपद्द पाया।
रोमा लिव्व लागा सोहं हंस आगा ॥ ३ ॥
ररूं रंग राता मनो मन्न माता।
पूर्व फेर भाया पताले लगाया ॥ ४ ॥
उलटि मन्न आगा अगम देश लागा।
वँकी रस्स पीया जुगे जुग्ग जीया ॥ ५ ॥
तीनूं गड्ड जीता चोथे मन्नमीता।
चँदे सूर मेला इके गेह भेला ॥ ६ ॥
पँचूं एक वाटी मिल्या ज्ञान घाटी।
पँचूं घेर आया मुक्ति द्वार पाया ॥ ७ ॥
अक्षय तूर वाजे गगन अंबु गाजे।
वणी प्रेम वरषा मिल्या आदि पुरुषा ॥ ८ ॥
मिले अव्विनासी टली काल पासी।
अलक्षैक पाया टली काल छाया ॥ ९ ॥
रमे सन्त सारा चलै सहस धारा।
पिया नीर मीठा अगम सुक्ख दीठा ॥ १० ॥
लिया पीउ फेरा किया सहज डेरा।
लगी प्रीति प्यारी सुषुम् सहज यारी ॥ ११ ॥
ब्रह्म भेव पाया अटल मठ्ठ छाया।
हुआ जीव जोगी लिया रस्स भोगी ॥ १२ ॥
पँखाँ विन्न हंसा उडे सिद्ध अंसा।
विना चँचु मोती चुगे ओत पोती ॥ १३ ॥
विना पेड तरवर विना पात छाया।
विना चंचु सूवे अगम फल्ल खाया ॥ १४ ॥
विना पाज सरवर विना नीर भरिया।
विना मेघ वर्षा अखंड इन्द झरिया ॥ १५ ॥
विना वाग वाड़ी फुल्या वन्न सारा।
विना घाट नदियाँ पिवै ढार भारा ॥ १६ ॥
विना दोष देवा करी जाय सेवा।
विना नींव देवल पुज्या एक देवा ॥ १७ ॥
विना तेल वाती जगै महल दीया।
विना हाथ वाजा अखंड लाग रहिया ॥ १८ ॥
विना नारि पुरुषा मिल्या गेहवासा।
विना भोग सेजाँ बँधी जाय आसा ॥ १९ ॥

विना मात पित्ता इको राम राया।
अनँत कोटि साधू सबे माहिं आया ॥ २० ॥
कहौं वात ऐसी सुणो पुरुष नारी।
सहजे सिलायं हुआ ब्रह्मचारी ॥ २१ ॥
अनँत कोटि साधू सबे माहिं आई।
इको नाम नित्यं निकेवल्ल ध्याई ॥ २२ ॥

साखी।

अनँत कोटि नर उद्धरे, रामनाम लिव लाइ।
भक्त पदीमें रामदास, सहजाँ रहे समाइ ॥ १ ॥
ॐकार ते ऊपना, दृष्टि कोंट आकार।
वाके ऊपर रामदास, ररंकार ततसार ॥ २ ॥
ॐकार उत्पत्ति भई, धर अंबर कैलास।
वाके ऊपर रामदास, अलख पुरुषका वास ॥ ३ ॥
अधर अखंडी अलख है, रूप रेख नहिं रंग।
रामदास जहाँ मिल रह्या, सतगुरु हंदे संग ॥ ४ ॥
अजब झरोखे अगमके, निरत ब्रह्मका वास।
ॐकार अजपा नहीं, नाद बिन्द नहिं सास ॥ ५ ॥
चन्द सूर नहि संचरे, पाणी पवन न जाहिं।
धर अंवर भी वहँ नही, रामा जिस घर माहिं ॥ ६ ॥

॥ इति श्रीभक्तमाल सम्पूर्णम् ॥

अथ ब्रह्मजिज्ञासा।

चौपाई।

शब्द बाण सतगुरुका भाई। मन कूं वींध लिया छिन माँई।
मन वींधाँ पाँचूँ वींधाँणाँ। पच्चीसांमें उलट समाणाँ ॥ १ ॥
ज्ञान पाय अज्ञान मिटाये। दुर्मति दुविधा दूरि गमाए ॥
काम क्रोध मारे अहँकारा। राम राम रसना रट प्यारा ॥ २ ॥
शील संतोष सहजमें आया। मान गुमान अमान गमाया ॥
शंका भूल भरम सब भागा। कढिया काम ध्यान उर लागा ॥३॥
शब्द किया घट माहिं पसारा। रोम रोम लगिया ररँकारा ॥
तीनों कोट किया चकचूरा। चोथे जाय मंड्या सँतसूरा ॥ ४ ॥
एकल मल्ल अभंगज जूझै। चवदै क्रोड़ जमपुरी धूजै ॥
रसना हृदय नाभि लिव लागी। रोम रोम चेतन हुइ जागी ॥५॥

सप्त पयाल छेद छिन माँई । पातालाँ सुख सीर हलाई ॥
मूल उलट औघटै आया । गुदा छेद पीठ बँध लाया ॥ ६ ॥
पूरब पलट पछिम दिशि लागा । चढिया शब्द मेरु हुय आगा ॥
मेरु दंड हुय चढ़या अकाशा । सहज किया तिरबेणीवासा ॥७॥
अधःऊर्ध्व बिच खेल मँडाया । विना पंख इक पँखि उडाया ॥
बंकनाल वहै अमृत धारा । पी पी संत भया मतवारा ॥ ८ ॥
आया मूल उलट घर आए । ररँकारसूं ध्यान लगाए ॥
ररंकारकी अमृत सीरा । पीवैगा कोइ संत सधीरा ॥ ९ ॥
माला एक फिरै तन माँई । आकाशाँ लिव ध्यान लगाई ॥
रोम रोम विच अणरट लागी । संधि संधि महँ जीव स जागी ॥१०॥
नाभि नैण विच झिलमिलजोती । सुखमण घाट चुगै हंस मोती ॥
सुखमण सीर चहूं दिशि छूटै । रोम रोम अमृत रस फूटै ॥ ११ ॥
धर अंबर विच अरट चलाया । उलटा नीर अकाशाँ आया ॥
जहँ सुख सागर सहज भराया । रोम रोम सींची सब काया ॥१२॥
उलटी गंग अपूठी बाली । फूल्यो बाग बनी हरियाली ॥
धरती माहीं बीज वुहाया । आकाशां फल फूल लगाया ॥ १३ ॥
तीन लोकमें नाल पसारा । बेल किया बहुता विस्तारा ॥
मनसा चाल अगम घर आई । जहँ निज मनवा रह्या समाई ॥१४॥
उलटी सुरत सिली आकाशां । जहँ देख्या एको सुख रासा ॥
तेज पुंज जहँ अपरम नूरा । सहस्रकला ले ऊगा सूरा ॥ १५ ॥
चंद विहूणा देख्या चंदा । जहँ पहुंच्या निर्भय हुइ वंदा ॥
अगम महलमें दीपक बाला । तीन लोक में भया उजाला ॥ १६ ॥
दसवैं जाय परसिया देवा । जहँ मन सहज करत है सेवा ॥
प्रेमहि पाती फूल चढ़ावै । भावहि भोजन भोग लगावै ॥ १७ ॥
प्रेम पलींतो प्रेम हि लावै । प्रेमहि झालर ताल बजावै ॥
प्रेम आरती प्रेमहि गावै । प्रेमहि शुनमें ध्यान लगावै ॥ १८ ॥
घंट घूघरा घमक वजावै । राग छतीसों मंगल गावै ॥
पांच पचीसों रास मंडाई । पडै नगारै नोबत घाई ॥ १९ ॥
बाजै ढोल ढमढमै ढाई । भेर भूंगला शब्द सुणाई ॥
तार तंदूर जंत्र इक डंका । वाजत बरघू हू हू वंका ॥ २० ॥
सुनकै मांही शंख वजाए । श्रवणां मुरली टेर सुणाए ॥
अंबर गाज करै घनघोरा । कोयल बोलै पपिहा मोरा ॥ २१ ॥
बारहमास बहुत झड़ लाये । नदीनाल सब खाल चलाये ॥
धुनकी ध्वजा नेज फहराया । गढजीता नीसाण घुराया ॥ २२ ॥

चवदै लोक ऊपरै राजा। जिनकै वजै अनाहद वाजा॥
देव दुनी सब दरशण आये। नमन करै बहु शीस निवाये॥ २३॥
च्यार कोंट को हासल आवै। सतगुरु आगै आण चढावै॥
सँत का राज अदल गढ़ माहीं। परजा सुखी सरव सुख पाहीं॥२४॥
चेतन चोकीदार दिराया। नाहर चोर सब पकड़ मँगाया॥
तख्त वैस अरु हुकम हलावै। सिंह बकरी सव संग चरावै॥ २५॥
रोमरोममें राम दुहाई। संत करै निर्भय पतसाई॥
सुरत सुंदरी सझ सिणगारा। चाली महल पीव बहु प्यारा॥२६॥
सुखमण सेझ पिया संग खेलै। पलक एक पीव नहिं मेलै॥
पूरण वर पाया अविनासी। पांच पचीसों करत खवासी॥ २७॥
सुरत शब्द शून्य में लोटै। ऋद्धि सिद्धि दोउँ पाँव पलोटै॥
राजपाट पाया पट राणी। वरसिलिया है सारंग पाणी॥ २८॥
जाकै रूप रंग नहिं रेखा। गृह नहिं त्याग नहीं कोइ भेखा॥
ना कोइ पिता मात नहिं जाया। ना ऊ किस की कूखन आया॥२९॥
देखा एक शून्यमें रूँखा। पेड न डाल न लील न सूखा॥
फल नहिं फूल पान नहिं पाती। आपो आपहि अमर अजाती॥३०॥
जीव न जिंद न करम न काया। नाँ कोइ मान मोह नहिं माया॥
धर अंबर नहिं तेज न तारा। मेघ न वरषा इंद्र न यारा॥ ३१॥
पवन न पाणी चंद न सूरा। वाज न वाजै ना कोइ तूरा॥
एको ब्रह्म और नहिं काँई। ररंकार सो सत है साँई॥ ३२॥
ररंकार देवन का देवा। जिनका लहै और नहिं भेवा॥
ररंकार है प्राण अधारा। जाकूं लखै संत जन प्यारा॥ ३३॥
ररंकार सत शब्द हमारा। अनंत कोटि भज उतरे पारा॥
ररंकार गुरुदेव वताया। रामनाम हम निशिदिन ध्याया॥ ३४॥
हरिरामदास है गुरू हमारा। ज्ञान ध्यान बहु अगम अपारा॥
ब्रह्म जिज्ञास ग्रंथ इम भाखूं। उरमें गुरू सीस संत राखूं॥ ३५॥
रामदास सतगुरु का चेरा। सतहै साहिव सिरपर मेरा॥
रामदास संतनका दासा। जुग जुग राम तुम्हारी आसा॥ ३६॥

साखी।

रामदास की बीनती, सांभलिये गुरदेव।
और कछू माँगूनहीं, जुग जुग तुम्हरी सेव॥ १॥
रामदासकी बीनती, सांभलियै गुरु द्याल।
रामनाम सुमराइयै, मेटो विषय जंजाल॥ २॥

इति।

रेखता ।

(१)

गुरू परताप तें राम हम पाविया । गुरू परताप तें भर्म भागा ।
गुरू परताप तें काल दूरै गया । गुरू परताप तें रटण लागा ॥
गुरू परताप तें कंठ परकासिया । गुरू परताप तें जीव जागा ।
गुरू परताप तें चाल हिरदै गया । गुरू परताप तें ध्यान लागा ॥
गुरू परताप तें नाभिमें संचऱ्या । गुरू परताप अजपाजु होई ।
गुरू परताप तें उलट ऊँचा चढ्या । गुरू परताप तें अगम जोई ॥
गुरू परताप तें वंक नाली वहै । गुरू परताप तें मेरु आया ।
गुरू परताप आकासमें रम रह्या । गुरू परताप ब्रह्मांड छाया ॥
गुरू परताप तें तीन धारा मिली । गुरू परताप असनान होई ।
गुरू परताप तें गंग जमुना वहै । गुरू परताप सब कर्म खोई ॥
गुरू परताप तें जोति सूं मिलगया । गुरू परताप जम हाथ जोड़ै ।
गुरू परताप रिधि सिद्धि दासी भई । गुरू परताप चढज्ञान घोड़ै ॥
गुरू परताप तें अखंड नोबत वजे । गुरू परताप तिहुं लोक जीता ।
गुरू परताप तें राज निर्भै भया । गुरू परताप सबमें वदीता ॥
गुरू परताप तें जगत चरणाँ पड़ै । गुरू परताप सुर असुर वंदै ।
गुरू परताप की संत महिमा करै । गुरू परताप सब वात खंदै ॥
गुरू परताप की कहा महिमा कहूँ । गुरू परताप तें ब्रह्म हूवा ।
गुरू परताप तें रामिया राम मिल । गुरू परताप तें नाहिं जूवा ॥ १ ॥

(२)

प्रथम मुख द्वार हम सार सुमरण किया । आठ ही प्रहर हरि नाम ध्याया ।
दूसरै कंठ में प्रेम परकासिया । गला में गदगदी स्वाद आया ॥
तीसरै हृदामें जाय वासा किया । मन्त्रहीमन्त्र मिल झीण गाया ।
वाज मुरली सुणी जोर नीकाँ गुणी । संतकूं बहुत इतबार आया ॥
चतुर्थै नाभिमें शब्द परकासिया । भँवर गुँजार होय एक वाजा ।
छेद पाताल अरु उलट पश्चिम दिसा । देखिया गैबका अगम छाजा ॥
उलँघिया मेरु आकाशमें घर किया । सहज वरषा वणी एक धारा ।
इला अरु पिंगला सुषम गंगा चलै । पीवता बन्न नखसिक्ख सारा ॥
गगन अंबू गजै अनँत बाजा वजै । धिन्न अब धिन्न सँत भागतेरा ।
सद्गुरु महरतें दास रामा कहै । जन्म अरु मरण भव मिट्याफेरा ॥ २ ॥

(३)

राम ही आदि अरु अंत मध राम है । राम ही घरे अरु माहिं बारै ।
रोम ही रोममें राम ही रम रह्या । राम ही राम मिल मुक्ति द्वारै ॥

राम ही जगत अरु भेख षट्दर्शणी। राम ही ग्रह अरु त्याग माहीं।
राम ही जप्प अरु तप्प तीरथ सबै। राम ही राम विन और नाहीं॥
सप्त ही द्वीप नव खंड में राम है। राम ही देश परदेश रमता।
हद बेहद में एक ही राम है। राम ही रहत परगट्ट गुप्ता॥
राम ही तेज अरु पुंज सो देवता। राम आकार निरकार न्यारा।
राम ही दृष्टि अरु मुष्ट सो राम है। राम ही देख अदेख प्यारा॥
राम ही जल जीवादि अरु पवन है। राम ही चंद अरु सूर तारा।
राम ही केतु अरु राहु साढ़ासती। राम ही राम सो सप्त वारा॥
राम ही मात अरु तात बांधव सबै। राम ही नारि अरु पुरुष होई।
राम ही राम तिहुँ लोक में रम रह्या। राम विन और दूजा न कोई॥
राम ही स्वर्ग पाताल भूलोकमें। राम ही धरणि अरु राम गगना।
रामिया एक ही राम सूं मिल रह्या। राम ही राम कछु नाहिं विघना॥३॥

(४)

शहर बाजार का खेल आछा मँड्या। आपका आप साथी बुलाया।
हम्म भी सबै के बीचमें खेलते। गुरांपै जाय सत शब्द लाया॥
राम रसना कह्या चाल हिरदै गया। पिंड भारी भया पाँव थक्के।
दृष्टि कर देखियो मन्न चालै नहीं। जाय अब खेल कुण खाय धक्के॥
और ही खेलता राम कूँ रटत है। थक्के सो थके हम पार बैठे।
सुरत सो उलटि सुन सिखर में संचरी। गुरू के घाट में जाय पैठे॥
संत ही बुद्धि सूं सोझ सोझी करै। एक ही पेड सूं ध्यान लावै।
सुरत उलटाय अरु अगम ऊँचा चढ्या। रामिया राम नीसाण वावै॥४॥

इति।

अथ हरिजस लिख्यते।

राग विलावल।

पद १

जाग जाग रे जोगिया, क्यों नहिं नगर जगावै।
आठ प्रहर जागत रहो, सुन शहर वसावै॥ टेक।
मुख सेती सुमरण किया, कंठ में चल आया।
गद गद लहरां सुषम की, सूता जीव जगाया॥ १॥
हिरदै में हरि आविया, चेतन तन सारा।
बुद्धि कमल परकासिया, जग सेती न्यारा॥ २॥
नाभि कमलमें संत जन, सहजाँ चल आया।
नाद अनाहद संभल्या, सुख रास मँडाया॥ ३॥

स्वर्ग मृत्यु पाताल में, एको धुन होई।
तीन लोक चेतन भया, जाग्या सब कोई ॥ ४ ॥
उलट पयाल आकासमें, चढ उलंघे मेरा।
इला पिंगला सुषमणा, तिरबेणी डेरा ॥ ५ ॥
त्रिकुटीं सूं आगै गया, सुन माहिं समाया।
सुख समाधि सहजाँ लगी, निरभै पद पाया ॥ ६ ॥
मन पवनां पहुँचै नहीं, वुधि जाण न पावै।
रामदास धिन संतजन, ता घर लिव लावै ॥ ७ ॥

पद २

राम सुमर रे प्राणिया। भूले मत भाई।
सुमरण विन छूटै नहीं। जम द्वारै जाई ॥ टेक
सब दुनियाँ भरमी फिरै। तीरथ अरु वरता।
जैसा पाणी ओसका। कोइ काज न सरता ॥ १ ॥
तपसी त्यागी मुनीश्वरा। पढिया अरु पंडिता।
नाम विना खाली रह्या। सिध उडता अरु गडता ॥ २ ॥
क्या आचार विचार है। क्या साधन सेवा।
सतगुरु विन पावै नहीं। आतम निज देवा ॥ ३ ॥
जगत भेख एको मता। एकै दिस जावै।
तत्त नाम जाणै नहीं। फिर गोता खावै ॥ ४ ॥
साधु संगति निशि दिन करै। एक राम धियावै।
रामदास धिन संतजन। निरभै पद पावै ॥ ५ ॥

रागसोरठ।

पद ३

मनरे करो गुरां की सेव। उलटि परसो देव ॥ टेक।
अज्ञानमें मद मोह माता। नामसूं नहिं नेह।
संतका सत संग विन। होयगा सब खेह ॥ १ ॥
साधु सब ही वंस मेलै, कुवँस मूरख जाय।
औघट घाटी लूटसी, सर्व कूं जम खाय ॥ २ ॥
वेद वावर मँडी आडी, हाक तीनों देव।
पारधी जम काल लूटै, आन फररा खेव ॥ ३ ॥
तोड़ वावर ढाहि फररा, दोड़ बाहिर आय।
रासिया गुर ज्ञान लाया, उलट सहज समाय ॥ ४ ॥

पद ४

मनरा तीरथ न्हायलै, क्या भटकणसूं काम ।
अठसठ तीरथ सब किया, एक कह्या मुख राम ॥ टेक ।
मन माहीं मथुरा वसै, दिलहि द्वारका जान ।
काया काशी न्हायलै, आठों पहर सिनान ॥ १ ॥
बाँरै सोलै सहेलड़ी, मिलकर न्हावण जाय ।
तिरवेणीके घाटमें, नित्य स्नान कराय ॥ २ ॥
पाँचों पाखर पहरके, चढ़े पचीसूं लार ।
नोबत वाजै गैबकी, मारलियो अहँकार ॥ ३ ॥
हद छाँडी बेहद गया, अगम रह्या लिव लाय ।
जीव सीव मेला भया, सुखमें रह्या समाय ॥ ४ ॥
दसवैं देवल परसिया, जागी अंदर ज्योति ।
रामदास जहाँ रमरह्या, पाप पुण्य नहिं छोति ॥ ५ ॥

पद ५

चालो मन उणदेस में । जहाँ संतां का वास ।
जहाँ पहुंच्याँ निरभय हुवै । लगै न जमकी त्रास ॥ टेक ।
पूरब दिशिसूं चालिया । कंठ किया परकास ।
उर भीतर वासा लिया । मगन भया निजदास ॥ १ ॥
अधः कमल परकासिया । खुली वंक की वाट ।
वंकनाल हुइ चालिया । वस्या पछिमके घाट ॥ २ ॥
मेरुदंड उलंघिया । ऊर्ध्व कमल परकास ।
चँदसूर मेला भया । गगन किया जाय वास ॥ ३ ॥
पाँच पचीसों एक हुय । मिल्या त्रिकुटी माँय ।
अनहद वाजा घुर रह्या । हंस मिल्या जहँ जाय ॥ ४ ॥
हंस मिल्या परहंसमें । लागी शून्य समाधि ।
रामदास निर्भय भया । मिल्या पूर्व घर आदि ॥ ५ ॥

पद ६

चलो संताँ जहां जाइयै । गुरु गोविंदके पास ।
दर्शनसूं सब दुख मिटै । हिरदै भक्ति प्रकास ॥ टेक
श्रवणाँ सुणिया सतगुरू । मनमें उठ्या हुलास ।
सुणत समय पैंडै चल्या । अति दर्शन की प्यास ॥ १ ॥
दर्शनसूं दुविधा मिटै । नैणा बँध्या सनेह ।
रोम रोम आनँद भया । दूधाँ वूठा मेह ॥ २ ॥

परदक्षिणा दंडोत कर । चरण निवाये शीस ।
किरपा कर गुरु देवजी । नाम किया बकशीस ॥ ३ ॥
मुखसेती सुमरण किया । कंठ जगाया जीव ।
हिरदै हिल मिल होत हैं । नाभि पधारे पीव ॥ ४ ॥
सप्त पयाल हि छेद कै । उलट पछिम के देश ।
अधःऊर्ध्व परकासिया । अगम किया परवेस ॥ ५ ॥
अगम देशमें रम रह्या । गगन रह्या गरणाय ।
त्रिबेणीके तख्त पर । हंस विराज्या जाय ॥ ६ ॥
गढ चढिया नौबत घुरी । थप्या ब्रह्म का राज ।
तिहूं लोक कायम किया । मिल्या राममहाराज ॥ ७ ॥
दसवें देवल परसिया । अरस परस दीदार ।
सुरत मिली जाय ब्रह्म सूं । ब्रह्म आप निरकार ॥ ८ ॥
तज आकार निरकार मिल । राम निरंजण राय ।
रामदास केवल मिल्या । सुखमें रह्या समाय ॥ ९ ॥

राग सारंग ।

पद ७

संतों संचय करो हरि नामको ।
इण संचयसूं बहुत सुख पावै आदि अंत यो काम को ॥ टेक
दुनिया संचै गर्थ भंडारा सोना रूपा दाम रे ।
संचो रह्यो धूलके माहीं जीव गयो बेकाम रे ॥ १ ॥
जगत भेख मायाके कारण पच्च मरै दिन रात रे ।
अंतबेर नागा हुय चालै ना कोई संग न साथ रे ॥ २ ॥
दुनियाँ करै आनकी सेवा दस दिन सरसा थाय रे ।
अंतकाल आडा नहिं आवै जम्म पकड़ लेजाय रे ॥ ३ ॥
सांख्य जोग नवधा अरु तिरगुण स्वर्ग लोक लग जाय रे ।
यासूं नहीं ब्रह्म सूं मेला जन्म धरै घर आय रे ॥ ४ ॥
जोग जग्य जप तप व्रत दाना ये सब फूल कहाय रे ।
फूल देख दुनियाँ लोभाणी अंतकाल कमलाय रे ॥ ५ ॥
नाम विना सब संचय झूठा फास फूस होय जाय रे ।
रामदास इक राम रटीजै अमर लोक लेजाय रे ॥ ६ ॥

पद ८

संतो सुणो संचयरो विवेक रे ।
इण संचयसूं अनेक उधरिया पाया पुरुष अलेखरे । टेक

ब्रह्मा विष्णु शेष अरु शंकर रहे राम लिव लाय रे।
सकल मंड का करता कहिये ज्याँ यो संचो पाय रे॥ १॥
गोपीचंद भरथरी संच्यो संच्यो गोरखनाथ रे।
नव नाथाँ के योही संचय सिल्या निरंजन नाथ रे॥ २॥
चौवीस तिथंकराँ योही संचो केवल सिलिया जाय रे।
वहुरि जन्म धरणि नहिं आया सुखमें जाय समाय रे॥ ३॥
सनकादिक अरु सप्त ऋषीश्वर नवयोगेश्वर पाय रे।
जनक विदेह अरु ध्रुव प्रहलादा रह्या अटलमठ छाय रे॥ ४॥
पांडव हरिचंद वली विभीषण निहचै राज कमाय रे।
शुकदेव व्यास परीक्षत राजा मिल्या मुक्तिमें जाय रे॥ ५॥
राज करंताँ अनेक उधरिया सुणी गुरां की सीख रे।
दुर्वासा ऋषि उलट सिलाया भक्त हेत अंवरीष रे॥ ६॥
वाल्मीकि अरु गनिका शवरी रंका वंका दास रे।
झीवर कुटुंब सहेता ताऱ्या राखलिया हरि पास रे॥ ७॥
नामदेव अरु रामानंदा पीपा धना कवीर रे।
सेना सदना अरु रैदासा सिलिया सुख की सीर रे॥ ८॥
दादू जाय दीनसूं सिलिया सिख साखा बहु लारै रे।
नानग हरीदास ततवेत्ता परसा खोजी पारै रे॥ ९॥
दास मुरारि मलूका ज्ञानी संतदास दरियाव रे।
किसनदास सुखरामा नानग सिल्या ब्रह्म के भाव रे॥ १०॥
अनँत कोटि साधू जन पहुँता जाका अंत न पार रे।
केता पतित पारंगत हूवा सिल्या मुक्तिके द्वार रे॥ ११॥
जन हरिराम चरण हम लागा सब संतन का दास रे।
रामदास गुरु गोविंद शरणै पूरी मनकी आस रे॥ १२॥

राग कानड़ो।

पद ९

राम सरीसा और न कोई। जिन सुमर्‍याँ सुख पावै सोई। टेक
राम नामसूं अनेक उधरिया। अनँत कोटि का कारज सरिया॥ १॥
जो हरि सेती लावै प्रीता। राम नाम ताही का मीता॥ २॥
राम नाम जिण ही जिण लीया। तिण तिण वास ब्रह्म में कीया॥ ३॥
राम दास इकरामहि ध्याया। परम ज्योति के माहिं समाया॥ ४॥

पद १०

ऐसी जड़ी मोहि सतगुरु दीनी। तन मन अर्प अंतरमें लीनी। टेक
श्रवणाँ सुणत बहुत सुख पाया। निरखत जड़ी नयन खुल आया॥ १॥

सूंघत मगन भया मन मेरा । चाखत मिटग्या भरम अँधेरा ॥ २ ॥
पीवत जड़ी हृदयमें ऊगी । चलत लहर नाभी जाय पूगी ॥ ३ ॥
रोम रोममें सर्व वियापी । उलटी जाय अगम घर थापी ॥ ४ ॥
उर अंतर एको धुन लागी । इला पिंगला सुखमण जागी ॥ ५ ॥
मुक्तिद्वारमें प्राण समाया । जन्म मरण दुइ रोग मिटाया ॥ ६ ॥
ब्रह्मादिक सनकादिक जाणै । राम जड़ी शिव शेष वखाणै ॥ ७ ॥
अनंत कोटि संताँ या पाई । रामदास गुरुदेव बताई ॥ ८ ॥

राग विहागड़ो ।

पद ११

गुरु मेरे ऐसी कदर बताई । तातें सुरत शब्द घर आई । टेक
रसना नाम नेम करि लीया । निशि दिन प्रीति लगाई ।
हिरदै माहिं प्रेम परकास्या । आतम की गम पाई ॥ १ ॥
नाभी माहिं नाद परकास्या । सबही बन गूँजाणा ।
पछिम दिसा की बाटी खूली । मेरु दंड हुय जाणा ॥ २ ॥
सहजाँ उलट आदि घर आया । तिरबेणीके तीरा ।
रामदास सुनसागर माहीं । चुगत हंस जहँ हीरा ॥ ३ ॥

पद १२

धिन जाके साधु समागम होई, जाकै विघ्न न व्यापै कोई । टेक
सब तीरथ सन्तनके चरणाँ, सर्व देवता लारै ।
राम निरंजन राय पधारै, साधू आवत द्वारै ॥ १ ॥
साधू राम एक ही कहिये, जा विच अंतर नाहीं ।
दर्शन कियां सर्व अघ जावै, भक्ति उदै घट माहीं ॥ २ ॥
साधुसंगति सत है जग माहीं, जे कोई शरणै आवै ।
रामदास साधाँ के चरणा, साधू राम मिलावै ॥ ३ ॥

इत्यंसकलम्[1] ।

अथ श्रीसुंदर साखी ।

सुंदर सुमरो नाम कूँ, रात दिवस लिव लाय ।
हरिरामदास सतगुरु मिल्या, एक अखंडी ध्याय ॥ १ ॥
रामराम रसणा किया, हिरदै किया प्रकास ।
नाभि कमल अस्थानमें, सुंदर श्वास उश्वास ॥ २ ॥

---

1 समस्त वाणी श्लोकमेधा ४२८४ ।

रोम रोममें रम गयो, नाड़ नाड़ निज नाम।
सुंदर सुख मैं पाविया, जहँ अजपा की धाम ॥ ३ ॥
पाँचों उलटा एक घर, पश्चिम दिशि की वाट।
सुंदर सहजाँ साँपड़ै, तिरवेणीके घाट ॥ ४ ॥
ॐ नहीँ अजपा नही, नहि कहण सुनन की बात।
सुंदर सिल्या समाधिमें, कर सतगुरुको साथ ॥ ५ ॥

॥ श्रीः ॥

अथ श्रीदयालुदासजीमहाराजकी फरमाईहुई अनुभवगिरा।



ब्रह्मस्तुतिः।

नमो राम गुरुदेवजी, जन त्रिकालके बन्द।
विघ्न हरण मंगल करण, रामदास आनन्द ॥ १ ॥

छप्पय छंद।

नमो निरंजन देव सेव किन पार न पायो।
असित अथाह अतोल नमो अनमाप अजायो ॥
एक अखंड अमंड नमो अणभंग अनादम्।
जगमें ज्योति उद्योत नमो निर्भेव सुखादम् ॥
नमो निरंजन आपहो कारण करण अपार गत।
रामदास वंदन करै नमो नूर भरपूर तत ॥ १ ॥
नमो राम रमतीत भज्यां आनंद स्वरूपम्।
करुणामय किरपाल प्रगट तत्काल अनूपम् ॥
संत परम विश्राम राम आधार सदाई।
सदा दयालु निहाल काल व्यापै न कदाई ॥
आप रूप जन जशकरण भगताँ विरद वधारणा।
रामदास वंदन करै नमो परम गति तारणा ॥ २ ॥
नमो राम रमतीत प्रथम गुरुदेव दयालम्।
नमो साधु अनादि काल तीनों रिछपालम् ॥
आदि अंत पुनि एक मध्य दुइ भक्ति बधावत।
महिमा असित अथाह पार वरणन किम पावत ॥

नमो राम कारण करण जुग जुग भक्ति वधार जन ।
रामदास वंदन करै दयापाल किरपाल धिन ॥ ३ ॥
सब प्रतिपाल दयालु चराचर पोषण स्वामी ।
जल थल जेता जीव पीव रक्षक बहु नामी ॥
अनँत रूप ब्रह्मंड करण कारण दातारा ।
रक्षक जीव भूतान स्वासि धिन अगम अपारा ॥
नमस्कार समरथ सदा सबपति सबके ईश तम ।
रामदास वंदन करै लहत कहत गति कोन गम ॥ ४ ॥
नमो राम सर्वज्ञ करण कारण कर्तारा ।
जगमें ज्योति उद्योत ब्रह्म विस्तार अपारा ॥
नमो अछेद अभेद परम परमातम देवा ।
अडिग अनादि अगाध निरंतर नित्य अभेवा ॥
विघ्न हरण मंगल करण चिदानंद व्यापक सकल ।
रामदास वंदन करै नमो अजोनी नित अकल ॥ ५ ॥
नमो निरंजन नाथ वात लखणेमें नाँई ।
शेष रटत पुनि विरंचि पार ताको नहिं पाई ॥
शिव वंदन नित कीन दीन रत पार न पावत ।
तीन कालके संत तत्त रत अगम बतावत ॥
कोटि कोटि ब्रह्मांडके भुक्तमान हुय निमिष अति ।
रामदास वंदन करै नमो परम गति अलख मति ॥ ६ ॥
परम परम निजदेव परम परमातम स्वामी ।
रहै सकल घट पूर अंतर घट अंतर जामी ॥
नमो परम परमेश सकलकूँ आप उपाए ।
चौरासीमें रिछक सकलकूँ चूण चुगाए ॥
बाल तरुण वृद्ध को नहीं वरणाश्रम नहिं माँय ।
रामदास वंदन करै नमो अखंडी साय ॥ ७ ॥
नमन नमन तेहि अधर धरण कारज हद माया ।
अनंत संत जप मुनिंद पार किनहू नहिं पाया ॥
सर्व कहत अप्पार नमो अवगति अनभेदं ।
निगम धार आधार ज्योति उद्योति अछेदं ॥
नमो नकुल अकुला अभंग सदा अजोनी अंत जप ।
रामदास वंदन करै निरालंब सर्वज्ञ अलप ॥ ८ ॥

अथ गुरुस्तोत्र मंत्र ।

छप्पय ।

राम संत गुरु साधु आदि परणाम सदाई ।
नमस्कार दंडोत प्रेम भक्ताँ सुखदाई ॥
मन वच सेवन पूज्य सदा चरणाँको चेरो ।
रामस्नेही दास मानज्यो वंदन मेरो ॥
संध्या मध्य प्रभातलों सुमरों श्वास निकंदना ।
द्यालबाल शरणागती रामजनाँको वंदना ॥ १ ॥
अष्टअंग दंडोत होत गति आनंद आतम ।
पुनि सुपरिक्रमा भाव चाव गुरुगम परमातम ॥
शीश नमाय लगाय गुरू पदपंकज परिमल ।
बहुत भाँति सस्तूति जोरि जुग तज्ञता निरमल ॥
अष्टजाम पल पल महीं उदय कार संध्या सिवर ।
द्यालबालके उर बसो श्वास श्वास गुरुपद विवर ॥ २ ॥
हरि सरवर जल भाव मीन शिख क्रीड़ा करहीं ।
प्रेम उमंगा लेत हेत दूजा परहरही ॥
मच्छ साँप भ्रम जाल कालसा कीर न खावत ।
निर्भय नित्य निगंज सुधा सुमरण रस पावत ॥
त्रिविध जलण शीतल करण सुखसागरमें रमरह्या ।
रामदास गुरु वंदना द्यालबाल शरणा लह्या ॥ ३ ॥

---

१ नमस्कारमंत्र—त्राहि मां पापिनं घोरं धर्माचारविवर्जितम् ।
नमस्कारेण देवेश संसारार्णवपातकात् ॥ १ ॥
२ दंडवतमंत्र—अपराधसहस्रभाजनं पतितं भीमभवार्णवोदरे ।
अगतिं शरणागतं हरे कृपया केवलमात्मसात् कुरु ॥ १ ॥
दंडवत अधिकार—प्रणमेद्दंडवद्भूमौ भक्तिप्रह्वेण चेतसा ।
दशवारं जपेन्मंत्रं ततः स्तोत्रमुदीरयेत् ॥ १२ ॥
(श्रीमद्भागवतस्कं० ६ अ० १९)
जपेदष्टोत्तरशतं स्तुवीत स्तुतिभिः प्रभुम् ।
कृत्वा प्रदक्षिणां भूमौ प्रणमेद्दण्डवन्मुदा ॥ ४२ ॥
(श्रीमद्भागवतस्कं० ८ अ० १६)
इस पुंसवन और पयोव्रतके प्रमाणसे स्त्रियोंकोभी दंडवतका अधिकार है ।
३ प्रदक्षिणामंत्र—यानि कानि च पापानि जन्मान्तरकृतानि च ।
तानि तानि प्रणश्यन्ति प्रदक्षिणपदेपदे ॥ ३ ॥

हरि गुरु संत अनंत कौन वरणत यह शाखा ।
नाम तीन वपु एक जीभ नभ अक्षर भाखा ।
भक्ति विलास प्रकाश दास हेतारथ कारण ।
निर्गुण सहगुण रूप अंध अज्ञान विडारण ॥
शब्द रूप परगट नमो निश्चल सद्गति सिद्ध गुर ।
यह सुस्तोत्र हि मंत्रको दास शिरोमणि वास उर ॥ ४ ॥

इति

धुरमेल ।

हरिरामदास सतगुरु नमो रामनाम परताप सिध ।
भरथखंड उद्योत देस बागड़ वलिजाऊँ ।
सिंहथल शहर सुथान जहाँ नित शीसनमाऊँ ॥
सब संतनको धाम राम भजि भया विख्याता ।
भक्ति मुक्ति दातार ज्ञान अनुभवके दाता ॥
रामदासके प्राणपति अटलवाच भगवान विध ।
हरिरामदास सतगुरु नमो रामनाम परताप सिध ॥ ५ ॥
हरियानंद आनंदघन भक्तिपुंज परगट भये ।
शील साच संतोष दया धीरज गुनवंता ।
प्रेम नेम निज भाव दिव्य दृष्टी बुधिवंता ॥
ब्रह्मज्ञान सनकादि तत्त्ववेत्ता शिव सागर ।
निरभै नाम प्रताप हंस परमहंस उजागर ॥
भरम भूत अज्ञान निशि काल चोर दूरे गए ।
हरियानंद आनंद घन भक्ति पुंज परगट भए ॥ ६ ॥
अनुभव किरण प्रकाश बहु तरणि उदय ब्रह्म नभ जहाँ ।
भक्तिहि मानसरोत रमे निश्चल मन विरती ।
गुरु आज्ञा अनुसार एक रस निर्भय जुगती ॥
कर्म केतु डर नाहिं जलद माया मिट जाना ।
ज्ञान हृदय चख खुले स्वप्न जिव भूल मिटाना ॥
निज स्वरूप निर्खत भए सिख सरोज फूले वहाँ ।
अनुभव किरण प्रकाश बहु तरणि उदय ब्रह्म नभ जहाँ ॥ ७ ॥
रामदासके मुकुट मणि नमो नमो हरिरामजी ।
च्यार वरण आश्रम्म सर्वसूं निरपख न्यारा ।
आशय अगम अगाध रामजन रामपियारा ॥
घीका घी ज्यों भया छाछ मायासे न्यारा ।
जग छोड़ै ज्यों डारि सर्व रस परे पियारा ॥

गुप्त भेद परगट करण आतमके विश्रामजी ।
रामदासके मुकुटमणि नमो नमो हरिरामजी ॥ ८ ॥

सिंहथलग्राममहिमावर्णनम् ।

हरि[1] कन्या[2] पुनि जन्म[3] धुर[4], त अंत[5] कविता खेत[6] ।
हंस[7] ताहि पुर वंदना, श्वेत द्वीप साकेत ॥ १ ॥

धाममहिमावर्णनम् ।

मन गज मारण साधु सिंह, इंद्रिय पशू अहार ।
हेम[8]गिरी अस्थान[9] जंन[10], नवनिधि भक्ति प्रकार ॥ २ ॥
सो प्रथम भिन भिन कही, जन ही के परसाद ।
प्रेमलछन[11] ऊमा[12] जनम, परा[13] शंभु दामाद[14] ॥ ३ ॥

श्रीहरिरामदासजीमहाराजनाममहिमावर्णनम् ।

हरि[15] पधार जिव अघ हऱ्या हरि गजराज सहाय ।
तार लियो भव सिंधुमें जन्मत मौसर पाय ॥ १ ॥
विघ्न हरण मंगल करण जनकसुता[16]पति नाम[17] ।
जय जय मंगल तासु पद कार[18]नमो सर साम[19] ॥ २ ॥
कलीकाल निशि घोरमें हरि[20] हरि कियो प्रकास ।
सत त्रेता द्वापर जहाँ गुरु हरिरामादास ॥ ३ ॥

छप्पय ।

हरि भजत टरत सब फंद द्वंद उप्पाधि विनासत ।
हरि रटत हर न हुय जहर टेर मुख हरि ले निकासत ॥
हरि तत अति उज्जास ज्ञान परकास विज्ञानस ।
हरि सत कल षोडश्श असुर सब मेट अज्ञानस ॥
हरिराम स्वामि समर्थ शरण हरण विघ्न अनेक अब ।
जनरामा उछरंग[21] अगम[22] निगम साख भाखंत[23] सब ॥ १ ॥

---

१ समुद्र । २ लक्ष्मी । ३ सीता । ४ प्रथमाक्षर (सी) । ५ (थ) । ६ पिंगल अंत (ल) । ७ नाम (सीथल) । ८ हिमाचल । ९ स्थल । १० श्रीहरिरामानन्दजी महाराज । ११ प्रेमलक्षणाभक्ति । १२ उमा=पार्वती । १३ पराभक्ति । १४ जँवाई । १५ हरि । १६ राम । १७ (श्रीहरिरामदासजी महाराज) । १८ नमस्कार । १९ मालिक । २० सूर्य । २१ उच्छ्रित=ऊँचा । २२ आगम=शास्त्र । २३ वेद और शास्त्र यही साक्षी देरहे हैं कि हरि नाम ऊँचा है ।

अष्टक ।

छंद त्रिभंगी ।

अपरम ब्रह्म आपं हणत न कापं मंत्र न जापं मिटतापं ।
परमं पद आपं निर्जन तापं मोल न मापं है आपं ॥
रूपं नहि तापं लिप्त न छापं आपो आपं अप्पारं ।
गुरू हमारं रत ररकारं निरकारं जिय निरकारम् ॥ १ ॥
पूरन ब्रह्म आदू सहज समादू मेट उपादू ब्रह्मनादू ।
अज्ञान मिटादू द्वंद हटादू तत्त्व मिलादू प्रमसादू ॥
दिपते जिमि दादू जोग जुगादू कौन वतादू सनकादू ।
गुरू हमारं रत ररकारं निरकारं जिय निरकारम् ॥ २ ॥
ब्रह्मा मुख बाणी सारंग पाणी तद्वत जाणी निरबाणी ।
तिरधा विति जाणी आतम प्राणी घट मध आणी दरसाणी ॥
ब्रह्म सुरत समाणी तहँ ठहराणी लिव्व लगाणी प्रमपारम् ।
गुरू हमारं रत ररकारं निरकारं जिय निरकारम् ॥ ३ ॥
परमं घर मायं उलट समायं सहज सुनायं थिरतायं ।
अचलाचलमायं रतररायं एककहायं उनमायम् ॥
तद्वत पद गायं चितवृतिनायं तीन नथायं इकथारं ।
गुरू हमारं रत ररकारं निरकारं जिय निरकारम् ॥ ४ ॥
अगम अपारू कौन विचारू गाय न पारू गुनथारू ।
सहजं ररकारू एक अधारू नमो सुखारू निजसारू ॥
अपरम विस्तारू संत मिलारू नाय मकारू ततसारं ।
गुरू हमारं रत ररकारं निरकारं जिय निरकारम् ॥ ५ ॥
तहँ लिवलायं एक समायं निरँजन रायं मुखगायं ।
प्राण प्रचायं चाह मिटायं द्वैत न थायं अखरायम् ॥
अधरं घरपायं स्थिरता सायं भय नहि लायं इकतारं
गुरू हमारं रत ररकारं निरकारं जिय निरकारम् ॥ ६ ॥
संतन सब गायं एक बतायं धिन सो ध्यायं पदपायं ।
उलट न आयं जुरा न खायं गर्भ न जायं मिटकायम् ॥
साहिब तुम सायं मिले वधायं धिन धिन थायं विस्तारं ।
गुरू हमारं रत ररकारं निरकारं जिय निरकारम् ॥ ७ ॥
एकं तज अष्टं मिटे दुखष्टं सोई स्पष्टं सब सष्टं ।
अष्टं पुनि दृष्टं गावत नष्टं कहे घटतष्टं एकष्टम् ॥
वेदं पति रष्टं सुरता चष्टं अंत एकष्टं सिधकारं ।
गुरू हमारं रत ररकारं निरकारं जिय निरकारम् ॥ ८ ॥

दोहा ।

नमो तारणा जन समय, परब्रह्म अखिल अनाद ।
यों समाधि मुर्शिद मिले, पूरण अगम अगाद ॥ १ ॥
ज्वाला सुत नभ मध मिले, फेर न सूतर माय ।
यों हरिरामं राम तत, उलट पलट नहिं थाय ॥ २ ॥

अथ उभयगुरुमहिमाअष्टक ।

छंद गीतक ।

नमो नित अवतार हरि जन नमो बार प्रतापयम् ।
सब हरण कल्मष तरण तारण राम मंतर जापयम् ॥
जगजीवतारण दयाधारण दयापाल पधारयम् ।
धिन लोक चवदै माहिं उच्छव भक्ति विरद वधारयम् ॥ १ ॥
जुग सोइ धिन दिन साधुवपुधर समो ज्ञान प्रकाशयम् ।
फुरदस्त अनुभव गस्त आतम त्रिविध ताप विनासयम् ॥
धिन द्वीपजंबू खंडभरतं करण कमज्या भूमयम् ।
उद्योत सिद्धत पंथ हरिपुर मेट माया धूमयम् ॥ २ ॥
तहँ देश मारू मंझ धिन धर गाम जहँ विश्रामयम् ।
धिन सदन हरिजन पतितपावन प्रगट रामसनामयम् ।
धिन वंश अंशज तातमातं सप्त गोतजु उद्धरे ।
जन सकल पावन दरश थावन साधु गंगा अघ हरे ॥ ३ ॥
जन राम निर्मल दर्श उज्वल चरण घाट सरोरयम् ।
शिष हेत भावन उदय कारण मेटि पाप करोरयम् ॥
नित न्हाइ निर्मल साच आज्ञा इष्ट मन वच धारयम् ।
चत वरण नर अरु नारि अंत्यज परश सिद्धत पारयम् ॥ ४ ॥
वड भाग जाग समाज हरिजन काल जीव वँचावना ।
मिल अमरपद सिद्ध अगम आनँद राम अमृत पावना ॥
मिल सर्व तीरथ पुरी सातूं धाम क्षेत्र अनंतयम् ।
सब ग्रंथ अर्थं तत्वसारं मूलमंतर संतयम् ॥ ५ ॥
धिन मोक्षगामी राह अपवर्ग तुल न तोले जासकम् ।
चव ब्रह्म शेष उचार मुख सुख नित्य महिमादासकम् ॥
हुलसाय सो मन नमो सतगुरु नाम हरियानंदयम् ।
सुस्थान सिंहथल प्रणम्य मन वच वारवार सुवंदयम् ॥ ६ ॥
जनपद प्रसादं साधु आदं नमो रामादासयम् ।
मो मुकुट मणि धिन करण कारण चरण शरण निवासयम् ॥

धिन भूमि जोजन पुर स्थानक साधु चरण सधारयम् ।
धिन राम म्होलो विराजतं नित राम ज्ञान उचारयम् ॥ ७ ॥
धिन दरश कर्ता विघ्न हर्ता दीनदाता आपयम् ।
भव भरम आन उपास खंडण एक आतम जापयम् ॥
परमात्मा परसाय सद्गुरु वार वार प्रणामयम् ।
जिव द्यालबालं कर निहालं रामदासं रामयम् ॥ ८ ॥

दोहा ।

राम नाम औपम सदा, तुलै न तोलै आन ।
रामदास पदकंज रज, द्यालबाल धर ध्यान ॥ १ ॥

अथ श्रीरामदासजीमहाराजमहिमावर्णनम् ।

धुरमेल ।

कलि कबीर पुनि प्रग्गटे रामदास महाराज धिन ।
भर्म कर्म भव भंज काज कारण जिवतारण ।
राम नाम उपदेश भक्ति केवल विस्तारण ॥
काजी पंडित सेख द्वैत पख झगरा मेट्या ।
आतम दृष्टि उद्योत परम परमातम भेट्या ॥
हंस ज्ञान शिवसिद्ध मुख नीर क्षीर निरताप भिन ।
कलि कबीर पुनि प्रग्गटे रामदास महाराज धिन ॥ १ ॥
मारू धर पावन करी रामदास अवतार नित ।
आन उपाधि कुपंथ भरम अज्ञान मिटाया ।
अनुभव सूर उद्योत नूर आतम दरशाया ॥
चार वरण नर नारि राम भज कारज कीना ।
साँच वाँच उपदेश साधु संगति लिव लीना ॥
द्याल वाल वलि बलि समो मन वच क्रम उर ध्यानचित ।
मारू धर पावन करी रामदास अवतार नित ॥ २ ॥
भक्त समो भूमंडमें बलि बलि वारंवार नित ।
समत अठार प्रसिद्ध वर्ष नवको भल आयक ।
शुक्ल पक्ष वैशाख तिथी एकादशि लायक ॥
तादिन उदै उद्योत परस सतगुरु पद पूरा ।
आप आप मिल आय रामभज उदै अंकूरा ॥
सद्गुरु मिल सद्गुरु भया द्याल बाल धरि ध्यानचित ।
भक्त समो भूमंडमें बलि बलि वारंवार नित ॥ ३ ॥

अथ गुरुअष्टक ।

छंद त्रिभंगी

वंदन गुरु दाता आप विधाता सुखनिधि साता ततराता ।
परमं सिध वाता ना पछपाता वरण न जाता धिन दाता ॥
सम दिष्ठाता ब्रह्म निजज्ञाता अक्षर दाता इम भारम् ।
धिन करुणासारं गुरू हमारं रत ररकारं जिए ररकारम् ॥ १ ॥
जय जय अविगत्तू निर्गुन तत्तू निश्चल चित्तू नहि जत्तू ।
अधर धरत्तू सृष्टि करत्तू सबही पत्तू गुरु रत्तू ॥
निरकार निरत्तू कवू न अत्तू ब्रह्म न मत्तू नहपारम् ।
धिन करुणासारं गुरू हमारं रत ररकारं जिए ररकारम् ॥ २ ॥
नमो अरंगा रट जिम संगा दृष्टि न अंगा एक रंगा ।
नामी नंगा सब गतरंगा तत मत अंगा अण रंगा ॥
अखर अभंगा सब उपरंगा नाहिन लंघा आधारम् ।
धिन करुणासारं गुरू हमारं रत ररकारं जिए ररकारम् ॥ ३ ॥
नमो दयालं शरण न जालं नाहिन कालं गोपालम् ।
सँत रिछपालं करे निहालं तरुण न बालं प्रतिपालम् ॥
तारण ततकालं एक सवालं जानतबालं उरधारम् ।
धिन करुणासारं गुरू हमारं रत ररकारं जिए ररकारम् ॥ ४ ॥
पह निज सरणं कलाजु तरणं अघ मन हरणं उद्धरणम् ।
रट गत करणं अजराजरणं कदेन मरणं नह डरणम् ॥
सब सिध नरणं जन उच्चरणं चारू चरणं नरनारम् ।
धिन करुणासारं गुरू हमारं रत ररकारं जिए ररकारम् ॥ ५ ॥
गुरु गम गाऊं मोसर पाऊं सीसनिवाऊं बलि जाऊँ ।
स्वासा लिवलाऊं यह नितचाऊं सरणासाऊं मनभाऊँ ॥
तातैं ताऊं एहि सराऊं परो न जाऊं जीवारम् ।
धिन करुणासारं गुरू हमारं रत ररकारं जिए ररकारम् ॥ ६ ॥
जयजय गुरु वंदन सब सुखसंदन अघनिरंदन करकंदन ।
तुम भज्या तरंदन लहर समंदन एक मनंदन कटफंदन ॥
नमो स वंदन मेटण द्वंदन सब घट मंदन तू सारम् ।
धिन करुणासारं गुरू हमारं रत ररकारं जिए ररकारम् ॥ ७ ॥
तुमही तुम सारे जीवनतारे प्राण अधारे अप्पारे ।
तुम इच्छा धारे परा विचारे प्रान हमारे उब्बारे ॥
नाहिन न्यारे प्रीतम प्यारे एही सदारे उजियारम् ।
धिन करुणासारं गुरू हमारं रत ररकारं जिए ररकारम् ॥ ८ ॥

दोहा ।

इष्टहि माहिँ सुदिष्टता, करुनासागर राम ।
अवके मेरी मानज्यो, इन जिव सह्यो विराम ॥ १ ॥
छीन छीन छीनत भए, लीव लीन अघत्रास ।
अरज करूं हितचित सदा, सतगुरु रामादास ॥ २ ॥

अथअष्टक ।

छंदभुजंगी ।

नमस्ते नमस्ते सदासुक्खस्वामी । नमस्ते नमस्ते अहो अंतर्यामी ।
नमस्ते दयालं कृपालं च देवा । नमस्ते भगत्तं समुक्तं स भेवा ॥
नमस्ते पराधर्म शब्दं अतीतं । नमस्ते पँचू तीन मनमोह जीतं ।
नमस्ते रामायं सदायं उधारं । मिले रामदासं सुदासं निर्कारम् ॥ १ ॥
प्रणम्यं च देवादि देवाधिदेवं । अष्टअंग दंडोत उद्योत सेवं ।
वंदन निकंदन जीते संत सारे । त्रिकालं कृपालं भगत विरदवारे ॥
जुगे जुग्गमायं सहायं सुदाता । नमस्ते दयालं कृपालं विख्याता ।
अचिंत्यं असिंत्तं नमस्ते सवारं । मिले रामदासं सुदासं निर्कारम् ॥ २ ॥
मनःशील मीलं विहंगंवुहारं । रतेराम रमतीत भवसिंधुपारं ।
अद्रोहं अछोहं अनामं अकामं । समाधं सुखाधं अगाधं प्रणामं ॥
चतुर्पत्तिमेकं तजे दश्शदोषा । निराकार निर्लेप नहि कालजोषा ।
अभय धाम विश्राम आनंद पारं । मिले रामदासं सुदासं निर्कारम् ॥ ३ ॥
जितं सत्वतत्वं नमस्ते अघादं । धीरं गँभीरं सधीरं समादं ।
अडोलं अबोलं नहीं मान माया । दृष्टं न मुष्टं न कष्टं न काया ॥
अखंडं अमंडं प्रचंडं अपारं । निराकार निर्धार सर्वज्ञ सारं ।
तहाँ जीव सीवं अनेकं गतारं । मिले रामदासं सुदासं निर्कारम् ॥ ४ ॥
(जानं न सेवं अहो देव देवं । पऱ्यो पायपायं अहो रामरायं ।
नमो नाथनाथं भयो साथसाथं । कहा गाथ गातं रखोजीवजातं ।)
भो प्रभो पावन्न परमं दयालं । करंते जहँ तहँ मेरी सँभालं ॥
विकारं हमारं मिटारं मुरारं । अहो देव आनंद आनंद कारं ।
सदा विरद वारू करो क्यों न सहायं। अपत्तं सु सिफ्तं कहा मुक्ख गायं।
अलामं गुलामं तमें भवन जायं । अहो रामरायं अहो रामरायम् ॥ ५ ॥
हमें राम इच्छा करो मन्न भायं । गरीबं निवाजं सदा सुक्खदायं ।
मेरी लाज लाजं तुमें महाराजं । जानो राय रायं सदायं सकाजं ॥
करी जीव रिच्छा सु इच्छा कृपालं । रुद्रादि इंद्रादि ब्रह्मादि ख्यालं ।
मनु इंद्र चंद्रं कवीन्द्रं वतायं । अहो रामरायं अहो रामरायम् ॥ ६ ॥

सबै पात पातं गुरुभ्यो प्रज्ञानं। अनुभ्यो सुनभ्यो यही विद्यमानं।
इष्टं स सिष्टं प्रतिष्टं प्रकासं। सुपष्टं सुदिष्टं सुसिष्टं अभ्यासं॥
दुसष्टं कसष्टं नमस्ते अधारं। तिरष्टं हरष्टं मनष्टं हमारं।
सुचष्टं गुरष्टं एही मंत्र गायं। अहो रामरायं अहो रामरायम्॥ ७॥
मंत्रादि अंत्रादि सासा सदायं। जंत्रादि तंत्रादि ग्रंथादि गायं।
रकारं मकारं गुरू दर्स मत्त्वं। अनादं जुगादं शिखाँ शिक्खतत्त्वं॥
अनुसारं ससारं अपारं त्रिकालं। इडं खंड मंडं अमंडं विचालं।
इमस्तं शिवस्तं गुरुदेव मायं। अहो रामरायं अहो रामरायम्॥ ८॥

दोहा।

कहा अनुज अस्तुति करै, तुम प्रभु अगम अगाद।
आदि अंत भवतारणा, कारण करणा साद॥ १॥
अष्ट छंद आनंद पढ, दूर होय त्रय ताप।
यहि विधि गावत ग्रंथ सब, सतगुरु समरथ आप॥ २॥

इति अष्टक।

अथ साधुको अंग ।

प्रथम साधु मुख रामरत, साच वचन गुरु ज्ञान।
रामदास मन वच करम, परमातम लिव ध्यान॥ १॥
ज्ञान गरीबी धारणा, मन सबसे निरदोष।
शील सत्य संतोषता, सरधा सुमरण मोष॥ २॥
साध साधना शब्दकी, उर अंतर मुख एक।
हितकारी सबका सजन, रामा ज्ञान विवेक॥ ३॥
कहै रहै इकरस दशा, आदि मध्य अँत एक।
रामा गुरुधर्म आसरै, राम नाम निज टेक॥ ४॥
दया भाव छिम्या समँद, गहरा अगम अथाह।
दुर्जनता लू की वजण, उष्ण कदे नहि थाह॥ ५॥
दादुर पर करि है कहा, आप हि शीतल होय।
कठिण बाण दुर्जन वचन, रामा भिदै न कोय॥ ६॥
वाढै काटै झोंकदै, चंदन तजै न वास।
साधु कसोटी जन सहै, हीरा घणकी त्रास॥ ७॥
रामा वानी चढत है, कनक अग्निके माय।
साधु कसोटी ज्ञान मन, कर्म मेल जल जाय॥ ८॥
ब्रह्म अग्नि जनके उदय, जलै वासना मूर।
रामा साधक भजनका, अष्ट नष्ट मल दूर॥ ९॥

जिम था तिम सहजाँ भया, मँद गुण मिट्या विकार।
साधु सनेही रामका, रामा धिन दीदार ॥ १० ॥
निर्मल नयन वायक विमल, अनुभव गिरा उचार।
रामा जनकी पारखा, निर्पख निरणै सार ॥ ११ ॥
हंस दशा एको मता, उन्मत्ता अणराग।
वैर विरोध किणसे नहीं, रामा अगम अथाग ॥ १२ ॥
हरष शोक भय भंजना, शत्रू मित्र समीप।
रामा दश दोषां रहित, हरिजन लखण महीप ॥ १३ ॥
बाहर दशा मिलाप विधि, आतम ब्रह्म इकताय।
रामा सेवक साधुका, पूज्य परमपद पाय ॥ १४ ॥
रामा स्वामी भक्तका, स्वामी अगम अपार।
तन स्वामी खामी घणी, देखो तत्त्व विचार ॥ १५ ॥
स्वामी समर्थ एक है, ता रत स्वामी होय।
पुत्रजु पिता स्वरूप है, रामा पद्धति सोय ॥ १६ ॥
अंश वंश भगवद भक्त, रामा छाना नाहिं।
आतम परमातम मिले, साधु परमपद माहिं ॥ १७ ॥
साधु अंग हरि रंग है, परमारथ परकाज।
रामा सलिता सिद्ध तरु, जीव उधारण ज्याज ॥ १८ ॥
मेह वूठा तूठा हरी, छाना नाहीं कोय।
रामा साखां सायदां, प्रगट पुकारै लोय ॥ १९ ॥
साधू दुतिया नीर सम, उपला रेख असाद।
जल माहीं कोरा रह्या, रामा जड़ता आद ॥ २० ॥
साधूका दिल मोंम सम, काठी हृदय असाधु।
रामा सोना होय कद, पारस मिल्यो न साधु ॥ २१ ॥
काम क्रोध माया मगज, कदे न उपजै अंग।
रामा प्रेमी रामका, साधू मता अभंग ॥ २२ ॥

सोरठा।

ऐसा धिन जन आज, बालबाल शरणागती।
रामदास महाराज, भल आये जग तारवा ॥ १ ॥

इति।

अथ साधुमहिमाकोअंग।

भक्तवछल विर्द रामजी, जन विन कहता कोय।
संताँ हित अवतार धर, भगवद्गीता सोय ॥ १ ॥

रामभक्ति परगट करण, जुग जुग माहीं संत।
संताँ महिमा रामदास, आज्ञा की भगवंत ॥ २ ॥

श्रीभगवानवचन।

मैं लाधूं संताँ महीं, संत हमारी देह।
जे मोकूं तृप्ति करै, संताँके मुख देह ॥ ३ ॥
शवरी जिग पांडव कथा, छिलका विदुर द्वार।
व्यास वचन साखी सदा, जाणै सब संसार ॥ ४ ॥
वालमीकि पंच ग्रासमें, तुल्यो न जिग असमेद।
भाव प्रीतसे हम लिया, संताँ माहीं भेद ॥ ५ ॥
पत्र पुष्प फल आदि दे, अन जल भाव विचार।
साधु समर्पण मम करै, मान लेहु निरधार ॥ ६ ॥
भाव भोग सम भोग नहिं, संतां के आधीन।
प्राण सनेही रामजन, भक्ती परगट कीन ॥ ७ ॥
मम स्वरूप निश्चै करण, आदि अंत निजधाम।
सो संताँ में देखियो, परगट साखी राम ॥ ८ ॥
लक्ष्मी आदि वैकुंठ दे, भक्त समी नहि कोय।
निज निवास निज निधि इहां, रामा परगट जोय ॥ ९ ॥
भक्ती ज्ञान वैराग्य सुत, परगट मेरो वास।
मेरो मग मेरो दरश, परसै रामादास ॥ १० ॥
साधु शब्द मेरी गिरा, अनुभव ग्रंथ अपार।
जो श्रवणाँ नीकाँ करै, जाय संतके द्वार ॥ ११ ॥
भक्ताँ नाकी नाक मम, भक्ताँ साखी साख।
आंख नाक आनन वदन, सीस शिरोमणि राख ॥ १२ ॥
हाथ पाँव नख शिख हृदय, अष्टअंग मन बुद्धि।
सो वरणै जनु संगता, रामा परगट शुद्धि ॥ १३ ॥
भक्त कहै सोई करूं, यह मम टेक निधान।
कुण प्यारो जय विजयसो, रामा धार्‍यो प्रान ॥ १४ ॥
मम पद मेरी ईशता, तजी भक्तके काज।
वाराह नरसिंह मीन हुइ, हयग्रीव कुन साज ॥ १५ ॥
लाज प्रतिज्ञा प्राण मम, बोल बाँह आधार।
रामा परगट देखलो, जुग जुग जन विस्तार ॥ १६ ॥
शरम सहूं आज्ञा वहूं, रखवालो नित नेम।
निरबंधण बंधणमई, बँध्यो भावना प्रेम ॥ १७ ॥

भक्त नचावै तो नचूं, जाचक बलिके द्वार।
वेळ्यो भयो मलूकके, रामा धिन करतार ॥ १८ ॥
पनवाड़ा नाख्या अवश्य, पांडव जिगके माहिं।
रामा लज्जा द्रौपदी, आई तातें ताहिं ॥ १९ ॥
हाली भयोक बालदी, दास खास जनहेत।
नीर पिलायो नारि हुय, रामा नरसी नेत ॥ २० ॥
घट घट माहीं रामजी, जैमलके जुध भीर।
अश्व चढे धायो अवश्य, रामा अपणी पीर ॥ २१ ॥
तनु कासी सारी करी, विपति सही धर रूप।
रामा माधोदासके, आप सिलावण चूँप ॥ २२ ॥
रूखो सूखो ना गिन्यो, लावण पुरस्यो खीच।
करमांकूं कीनी प्रगट, राम जनाके वीच ॥ २३ ॥
भक्ताँ हित केता चरित, महिमा अनँत अपार।
शब्द ब्रह्म साखी सदा, परसापरस वुहार ॥ २४ ॥
रामजना वक्ता जहाँ, श्रोता लक्ष्मी रूप।
रामा संशय भक्तके, वक्ता आप अनूप ॥ २५ ॥
ठाढो राखै जहाँ रहूँ, मेल्है जाऊं जेथ।
भक्तिमान् सो घर वडा, भक्ताँ विना न केथ ॥ २६ ॥
सब प्रतिपालक मैं सदा, सबही मेरा जीव।
भक्ताँ द्रोही द्रोह मम, मेटूं पालण सीव ॥ २७ ॥
मेरो वैरी जगतमें, निंदक सम नहि कोय।
जड़ा मूल खोऊं अवश्य, रामा मारूं जोय ॥ २८ ॥
प्राण घातकी जगतमें, भक्त द्रोह दुख दाय।
कहै भगवत छोडूं नहीं, तीन लोकके माँय ॥ २९ ॥
बंचै न किनके आसरै, शिव कमला अज ठोर।
रामा रक्षा कुण करै, सब पातक को मोर ॥ ३० ॥
दुरवासाकूँ पूछिकै, कीज्यो कोई क्लेश।
शरणो द्विजवर दुखित को, मेट्यो मनाँ अंदेश ॥ ३१ ॥
जनद्रोह जनसे सिटै, हमसे सिटै न कोय।
हूं चाकर भक्ताँ तणो, महिमा प्रग्गट सोय ॥ ३२ ॥
लक्ष्मी दासी भक्तकी, चवड़े कीनी चाय।
च्यार पदारथ मुक्तिचत, रामा संताँ दाय ॥ ३३ ॥
साधु शब्द मेटै दुष्ट, सो मेरे मुखथाप।
रामा देहकृत देखही, चख फोड़नको पाप ॥ ३४ ॥

जनका भाव वधारिकै, पीछै मोला होय ।
रामा भगवत् धर्ममें, वैरी कहिये सोय ॥ ३५ ॥
हास्य करावै भक्तकी, मेरी नाकी घात ।
मस्तक छेदण रामदास, आनदेवकी जात ॥ ३६ ॥
गुरु आज्ञा लोपै दुष्ट, हाथ हमारा लेह ।
नुगुरो हुइ जनसे विडै, रामा पंगुल तेह ॥ ३७ ॥
मेरा पग वाढ़त अवश्य, दासाँ माहिं विखेप ।
रामा भोजन साधुके, हरै स पेट दुखेप ॥ ३८ ॥
वाद करै गुरुदेवसे, जाणीतल मन मोद ।
रामा हिरदै घातकी, लह्यो न उत्तम बोद ॥ ३९ ॥
आन मंत्र भूतां यजै, मूक हमारै सोय ।
मम मारण सम जाणियै, साधू बेमुख होय ॥ ४० ॥
देश कहा परदेशमें, चाहत घर कुशलात ।
मेरो घर है रामजन, सदा हमारै साथ ॥ ४१ ॥
बडे पुरुषके पुत्रकूं, लाड लडावै कोय ।
बैठा सूता रोटियां, दोनूं पख सुख होय ॥ ४२ ॥
राम जनाँके दासकी, मान लेउ अरदास ।
या लोकाँ परलोकमें, ब्रह्मानंद विलास ॥ ४३ ॥
मोसूं वाँधै प्रीतड़ी, राम जनाँके संग ।
मेरो प्यारो होय जद, रामा भक्तां रंग ॥ ४४ ॥
ब्रह्मंड निधि दाता हरी, कमजा कर कोइ लेत ।
केवलपद दाता अवश्य, रामा संताँ हेत ॥ ४५ ॥
अंश वंश परगट करण, जहँ अवतार धरंत ।
रामा नित अवतार जन, महिमा कोटि अनंत ॥ ४६ ॥
कहा पारसका मोल है, कहा साधुकी जात ।
लोहा जिमि कंचन करै, हरिजन ज्ञान विख्यात ॥ ४७ ॥
कामधेनु चिंतामणी, कहा सुरतरुका मोल ।
रामा गुण परगट करै, साधू शब्द अतोल ॥ ४८ ॥
हरिजनकूं हीणो गिणै, मेरै हीणो सोय ।
कहा ब्राह्मण क्षत्री वैश्य, कुलको वटै न कोय ॥ ४९ ॥
रामा धिन माता पिता, पुत्र भया ते साध ।
रामभजन करता रह्या, सस गोत मिट व्याध ॥ ५० ॥

सोरठा ।

धिन जननी जग माहिं, हरिजन जिनके पुत्र होय।
आन विषै दुख दाहि, राम विमुख गंडशूरड़ी ॥ ५१ ॥
कूख सपूती सोय, सूर सती साधू भए।
पक्ष उजाले दोय, रामा वंश भलाइयाँ ॥ ५२ ॥

इति ।

अथ साधुदर्शन–मिलाप–माहात्म्यकोअंग ।

दर्शण च्यार प्रकार जन, कहत मुनीश्वर वेद ।
रामा गुरु प्रसादते, जीव उधारण भेद ॥ १ ॥
श्रवण चक्षु दर्शण जनाँ, परसण ज्ञान विचार ।
शब्द दर्श परगट भया, लख्या आप ततसार ॥ २ ॥
प्रथम श्रवण सुण साधुका, दर्शण कीजै जाय ।
रामा महात्म्य अगम है, भक्ति मुक्ति पद पाय ॥ ३ ॥
जन चितवन फल सहस्र हुय, गमन करत लख होय ।
रामा पद अश्वमेध यज्ञ, फलै मनोरथ सोय ॥ ४ ॥
विघ्न हरै आनंद करै, रामा दर्शण साद ।
चल ताहीं सुख ऊपजै, फलै मनोरथ आद ॥ ५ ॥
आधि व्याधि विक्षेपता, देव चतुर्दश लाग ।
सो सहाय मारग महीं, भक्ती दृढ अनुराग ॥ ६ ॥
धरणि गगन पाणी पवन, चंद सूर पख होय ।
लगन रामजन मिलनकी, उदै पदारथ सोय ॥ ७ ॥
जम चोकी भाजत अवश्य, पंथ पारषद साथ ।
साधू दर्शण जातरा, सहायक त्रिभुवन नाथ ॥ ८ ॥
विघ्नहरण मंगलकरण, आनंद उदय अनंत ।
रामा धिन दिन धिन घड़ी, साधु दर्श भगवंत ॥ ९ ॥
साष्टांग दंडोत करि, देखत शीश नमाय ।
राम राम महाराज मुख, रामा विघ्न विलाय ॥ १० ॥
जन्म करम पातक सकल, हरा गया तत्काल ।
रामा जोरत हाथ जुग, वंदन राम कृपाल ॥ ११ ॥
जमदँड दूरै होय है, अष्टअंग दंडोत ।
चौरासी फेरा मिटै, परिक्रमा फल होत ॥ १२ ॥
दर्शण परसण रामजन, अनंत कोटि संत ज्ञान ।
रामा महातम ज्ञानका, शब्द ब्रह्म आख्यान ॥ १३ ॥

साधू दर्शण देखताँ, मन परसण हुय जाय ।
अमी दृष्टि सतगुरु कृपा, राम वताया माँय ॥ १४ ॥
सूर उदय रजनी मिटै, साधु हरै अज्ञान ।
रामा शशि दरवै अमी, शीतल ध्यान विज्ञान ॥ १५ ॥
सर्वं पदारथ सर्वं सिद्धि, दर्शण च्यार मिलाप ।
रामा महातम अगम है, परसै आपोआप ॥ १६ ॥
रामा लावा लोड़सी, आतम उदै अंकूर ।
जन्म सफल जीवन सफल, नितप्रति साधु हजूर ॥ १७ ॥

इति ।

वक्ताजिज्ञासूप्रतिवचन सुखगामीआख्यान ।

रामा जेज न कीजिये, मिलताँ हरि के संत ।
ज्ञान उदय अघ दूरि हुय, आज मिले भगवंत ॥ १ ॥
शब्द ब्रह्म परब्रह्मका, खोलै भक्ति भँडार ।
रामदास ता भक्तिके, हरिजन वडा उदार ॥ २ ॥
मनरे दासा वंदगी, करियै चित्त लगाय ।
यह मोसर दिन पाहुणा, राम कृपातें पाय ॥ ३ ॥
श्वास श्वास छीजत अवश्य, दुष्कर काल करूर ।
रामा यातें ऊवरै, समरथ साधु हजूर ॥ ४ ॥
क्षणभंगुरको ठाट है, अल्प आयु कलि काल ।
रामा जेज न कीजिये, मिलतां साधु सुकाल ॥ ५ ॥
ज्ञान सीख मन धारिकै, दर्शण कीजे साध ।
रामा भाव वधारिये, यह है धर्म अगाध ॥ ६ ॥
अड़सठ तीर्थ शिरोमणी, गंगा निर्मल नीर ।
सो चाहत जनके चरण, शवरी पद रज खीर ॥ ७ ॥
तुलै न तोलै धर्म कोउ, दर्शण साधु मिलाप ।
ऊणत जन्माजन्मकी, मेटण त्रिविधहि ताप ॥ ८ ॥
जोग जज्ञ तप दान पुनि, अर्चन वंदन सोय ।
रामा तुलै न फल कोउ, राम साधु मिल होय ॥ ९ ॥
राम मिल्या संताँ महीं, संताँ विना न राम ।
आदि अंत मध्य देखलो, रामा जन परणाम ॥ १० ॥

सोरठा ।

घालवाल धिन सोय, क्रोड़ां लाहा जन्मका ।
साधु मिल्या सुख होय, अमिट भाव रहज्यो सदा ॥ १ ॥

इति ।

अथ भक्तिभावकोअंग ।

रामा भक्ती अंग यह, वरतै ज्ञान विचार ।
मन क्रम वच इक धारणा, असिट भाव इकतार ॥ १ ॥
आर्जवता संतोषता, कदे न मन अभिमान ।
श्रवण कथा रुचि राम रति, पूजा साधु विधान ॥ २ ॥
साधु वैण सांचा हृदै, कदे न पलटै मन्न ।
करै कीर्तन एक रस, राम भजन हरिजन्न ॥ ३ ॥
चरणसेव पूजन जना, वंदन दासा निन्त ।
सखा समर्पन भावना, रामा साचे चित्त ॥ ४ ॥
भलाँ पधारे रामजन, आनंद अगम अपार ।
आज भयो पावन भवन, रामा भाव वधार ॥ ५ ॥
रामा भाव वधावना, पलकाँ प्राण अवार ।
आज भयो वैकुंठ घर, चरण रामजन धार ॥ ६ ॥
पदरज जीव उधार मम, मन मंजन शुधि होय ।
चार पदारथ मुक्तिचत, अब संशय नहिं कोय ॥ ७ ॥
आज पधारे रामजी, अमर पुरी एवास ।
रामा व्राजै राम जन, हरै कठिण जम त्रास ॥ ८ ॥
भूत प्रेत छल छिद्रता, डाकण स्यारी जोय ।
मूठ मंत्र भाजै भरम, नवग्रह रहै न कोय ॥ ९ ॥
लाग जाग सारी सिटै, खेड़ा राक्षस दूर ।
आज भए पावन परम, साध चरण धिन धूर ॥ १० ॥
अगड़ बगड़ धिन सोहना, पंथ संत महाराज ।
भला विराजे रामजन, आनंद ब्रह्म समाज ॥ ११ ॥
विष्णु ब्रह्मा शिव संत सब, आए सतगुरु संग ।
रामा केवल भक्तका, प्राप्ती ज्ञान अभंग ॥ १२ ॥
भक्त भाव कारण सफल, परमपदारथ साद ।
रामा भक्ती भाव दृढ़, धरम परायण आद ॥ १३ ॥
भाव विना भक्ती नहीं, भक्ति विना नहि भाव ।
रामा किरणाँ सूर सिल, दृगमध्ये दरसाव ॥ १४ ॥
रामा भक्ती भाव मिल, यह सद्गतिके मूल ।
रामभजन तत मूल है, मेटण संशय सूल ॥ १५ ॥
रामा भक्ती अंग सब, प्रबल भावतें होय ।
राम दिसावर साधुमें, साखी प्रग्गट जोय ॥ १६ ॥

जल माहीं प्रतिबिंब चँद, द्रवै अमी अखंड ।
रामा ब्रह्मंड साधु वपु, पूरण ब्रह्म अमंड ॥ १७ ॥
परम पदारथ संत है, भाव दिसावर आद ।
रामा महँगा भाव है, कारण भाव प्रसाद ॥ १८ ॥
राम दिसावर साधु है, साधुभावके माँय ।
रामा परगट देखलो, साक्षात दरसाय ॥ १९ ॥
लाखां पैसा भावमें, वस्तु देशांतर जाय ।
रामदास इक भाव बिन, रोवै मूल ठगाय ॥ २० ॥
हाथ पाँव नहिं वस्तु कै, नाहिन किणसूं नेह ।
भाव विकावत रामदास, लाखां कोसां तेह ॥ २१ ॥
वस्तु आपणै चाहती, जाको बूझे भाव ।
रामा जाय बजारमें, बूझै नहिं सब भाव ॥ २२ ॥
रामा शब्दां भावमें, ब्रह्मानंद गलतान ।
राम मिल्यॉंकी पारखा, दरशण परसण ज्ञान ॥ २३ ॥
साधु मेह किनके घरे, राम क्रिपा तहँ जाय ।
रामदास आनंद उदय, लीजै भाव वधाय ॥ २४ ॥
तहँ सुगंध जहँ भ्रमर है, मीन नीर अस्थान ।
रामा भक्ती भाव है, जहाँ साधु प्रज्ञान ॥ २५ ॥
समर सिंह सूरा जहाँ, वणिक देस व्यवहार ।
रामजनाँ विचरै अवस, भाव भक्ति जिण द्वार ॥ २६ ॥
भूख तृषा देखै नहीं, जात पाँति धन धाम ।
रामा साँची भावना, संत जहाँ विश्राम ॥ २७ ॥
रामा भोजन भावको, लगै रामके भोग ।
भाव विना अमृत गरल, हरिजन जाणै रोग ॥ २८ ॥
व्यंजन चार प्रकारके, छप्पनभोग विलास ।
रामा एकण भावमें, जाणै हरिके दास ॥ २९ ॥
कहा लूखा सूखा कहा, भोजन भाव प्रसाद ।
रामा महिमा विस्तरी, बोर केल फल आदि ॥ ३० ॥
गर्व अहार समर्थ करै, भाव जिमावै संत ।
रामा तृप्ती होय जद, नमो नमो भगवंत ॥ ३१ ॥
शीरख पथरणा सावटू, भाव समा नहिं कोय ।
आसण वासण भावका, ता पीछै सब होय ॥ ३२ ॥
राम सदन हरिजन अवश्य, रामा साचा भाव ।
सुरत देव निजपद लियो, परसण जादव राव ॥ ३३ ॥

गोप ग्वाल भावन भवन, अवध पुरी तरि सोय।
राम दरस नौका भए, पातक रह्यो न कोय ॥ ३४ ॥
राम रूप हरिजन प्रगट, भाव भक्ति आराध।
जुग जुग माहीं देखलो, रामा तारण साध ॥ ३५ ॥
मन वच क्रम सरधा लियाँ, वणै सजनके हेत।
रामा साची भावना, जन्म सफल कर लेत ॥ ३६ ॥
दृष्टि पदारथ बुद्धि लों, उत्तम ब्रह्मंड माहिं।
रामा अरपै भावसूं, सेवग संशय नाहिं ॥ ३७ ॥
निगम पुराण शास्तर कहै, अनुक्रम भाव समेत।
जैसी विधि चित चाहना, जन्म सफल करलेत ॥ ३८ ॥

सोरठा।

भक्ती भाव अपार। धिन जन सेवग साधुका ॥
सहजाँ भवसिंधु पार। ग्यालवाल संशय नहीं ॥ ३९ ॥

इति।

अथटेककोअंग।

टेक एक साराँ सिरै, राम थंभ शिव शेष।
रामा सता अनेक है, ररंकार रत एष ॥ १ ॥
ब्रह्मंड चवदै लोक सब, रामा एक अधार।
पनँग टेक अविचल सदा, जपै एक ररँकार ॥ २ ॥
राम जना परतीत दृढ़, खरो भरोसो एक।
राम विना मानै नहीँ, पचि पचि गरो अनेक ॥ ३ ॥
रामा आदि अनादिमैं, निरपख निर्भै एक।
राम सुमर अम्मर भया, जुग जुग संत अनेक ॥ ४ ॥
नमो नमो प्रह्लादकी, अविचल टेक सदाहि।
राम कहत रामै मिल्या, रामा वंदौं ताहि ॥ ५ ॥
हिरण्यकशिपु पच पच मरा, कमजा खोई अंध।
अंत टेक साची रही, भक्त टेक परबंध ॥ ६ ॥
रामा हरिजन अगम गति, राम नाम सब टेक।
एकै मांहि अनेक है, एक विना शुन देक ॥ ७ ॥
खंड करूं आकाशका, पछिम उगाऊं सूर।
राम विना मानूँ नहीं, हरिजन उदै अंकूर ॥ ८ ॥
रामा कला अनेक करि, कोटि रचै ब्रह्मंड।
रामविना मानै नहीं, हरि जन टेक अखंड ॥ ९ ॥

सता दिखावै विष्णुकी, आणधरै अवतार।
रामविना मानै नहीं, हरिजनका मत सार॥ १०॥
परगट साखी देखलो, खुदवे टेक कवीर।
रामा रत्ता एकसूं, दूरै झड्या जंझीर॥ ११॥
वालमीकि इक आसरै, परगट परचो होय।
शंख पंचानन पूरियो, हरिजन समो न कोय॥ १२॥
देह धरो केती करो, अंतर गत कहि देत।
संत न मानै राम विन, झूंठ सिधाई नेत॥ १३॥
उडै गडै जल पर चलै, लघु दीरघ हुइ जाय।
मानै नाहीं रामजन, रामा झूठ उपाय॥ १४॥
क्रोड़ पिंड परगट करै, क्रोड़ाँ भुजा अनेक।
रामा हरिजन रामविन, मानै नाहीं एक॥ १५॥
काल काल की जंपना, काल काल व्रतमान।
रामा एकण रामविन, सबही फोकट जान॥ १६॥
शक्ती माया मंडही, नाना रूप अनेक।
हरि जन रता अरूपसूं, रामा कारण एक॥ १७॥
राम टेक छांडै नहीं, आदि अंत इक ध्यान।
रामा चवड़ै देखलो, सूराँ कैसा प्रान॥ १८॥
सती न प्यारा लूगड़ा, दाता गिणै न धन्न।
राम बारणै रामदास, संता कीनो मन्न॥ १९॥
जीव दियो इक राम कूं, राम प्राण पति एक।
तिरो मरो भावै गिरो, रामा डर नहिं नेक॥ २०॥
खरग नर्क संशय नहीं, जे नर रत्ता राम।
मुक्ति न वंछै रामदास, क्या करणीसे काम॥ २१॥
करणी एको राम है, राम विना शुन सोय।
रामा केवल टेक इक, यामें आनंद होय॥ २२॥
धरिया दिक गांवै लग्या, अपणी अपणी टेक।
जाति पांति कुल परखतां, रामा करमां रेक॥ २३॥
जोनि धरै गुण विस्तरै, आकृत जीव सभाव।
रामा हरिजन क्यों तजै, राम भजनको डाव॥ २४॥
शिव गुण कँठ लीयां रहै, राजस अज निगमेक।
प्रतिपालक सात्विक विष्णु, रामा अपणी टेक॥ २५॥
वड़वानल सिंधु ना तजै, अग्नी चुगै चकोर।
रामा इंदर गाजियाँ, प्रगट बोलै मोर॥ २६॥

अनड़ टेक आकाश थिर, जलचर जलके माँय।
थलचर थलमें रहत है, रामा अपणे भाय ॥ २७ ॥
कुरंग मरत है नाद रस, तजै न अपणी टेक।
साधु टेक कैसे तजै, रामा पतिव्रत एक ॥ २८ ॥
देह गेह घर तजत है, कामक्रोधके हेत।
जगसे आया ज्ञानि जन, राम पियाके नेत ॥ २९ ॥
लोभ मोहकी धारमें, झूलत मेंमत होय।
रामा हरिजल झूलता, हरिजन संकै न कोय ॥ ३० ॥
जीव भूत कसणी सहै, श्वासा लेत निधान।
राम टेक जन श्वास है, रामा जीवन प्रान ॥ ३१ ॥
राम टेक जुग जुग अमर, परगट भक्त निसाण।
भक्त विछल विरद विस्तर्‍यो, भगवद वचन प्रमाण ॥ ३२ ॥
राम निभाज्यो टेक इक, यह मेरी अरदास।
जीवत तजै न रामदास, मूवां हरिके पास ॥ ३३ ॥
टेक निभावो रामजी, तन जावो सोवार।
रामदास हरि गुरु कृपा, यह मत जनका सार ॥ ३४ ॥
रामदास अरदास यह, यह सतगुरु वरदान।
मन वच क्रम इक धारणा, राम टेक पख प्रान ॥ ३५ ॥
रामा भवके दुःख को, संशय नहीं लगार।
राम टेक मेरी रखो, आदि अंत इकतार ॥ ३६ ॥
जैसी धारी धारणा, ऐसी अंत निधान।
राम टेक निभज्यो सदा, रामदास गुरु ज्ञान ॥ ३७ ॥

सोरठा।

श्री गुरु समरथ आप, एक भरोसो आसरो।
राम मंत्र जप जाप, घालवाल एकै मही ॥ ३८ ॥

इति।

अथचेतावणीकोअंग ।

छप्पय ।

क्षणिक वीत नरदेह तिनक तूटत कहा वारा।
ज्यों तुषार आदित्य क्षुभित प्रतिबिंब वुहारा ॥
लकरी अग्नि प्रभाव तेल जरताँ वुझ बाती।
सलिता नीरस तीर जात सासा दिन राती ॥
अभ्र छांह सुख सैन कहा यों जग देखत जाहि सब।
जन रामा मोसर दुलभ हरि भज लेखै लाय अब ॥ १ ॥

दुलभ दुलभ नर देह लेह सुमरण रट रामं ।
क्षणिक क्षणिक क्षण भंग जगत अधिपति सब कामं ॥
भगवद् वायक गांय ध्याय दुतिया मध भाखे ।
एकादश प्राकृत्त काव्य हरि निर्णय दाखे ॥
गुरु प्रसाद सब जन कहै दुलभ देह परकर अवै ।
जन रामा वीताँ अवधि फेर न आसी को कवै ॥ २ ॥
तरु तैं तूटा फूल डार धुर लगै न कोई ।
कागद अंक सकेल पुनि सकेला नहि होई ॥
सती साझ सिणगार तेल तिरिया इक बारा ।
औला जल गल सिल्या फेर होवै नहिं सारा ॥
मोह वासना नीर मंझि नर देह कदे नहि गालिये ।
जन रामा हरि प्रेम विच गल्या त भव दुख टालिये ॥ ३ ॥
धरण जीव घट मरण राव राजा पतसाई ।
वृत्रासुर हिरण्याक्ष जोध बलि गया विलाई ॥
दशकंधर मुर अंध हिरणकश्यपु चकचूरा ।
षटचकवै षट होय बाणासुर मरगे सूरा ॥
छपन कोटि क्षोहणि अठार अवतार धरण सोभी गए ।
जन रामा चवदै भवन अवनि अवधि कहो कुण रहे ॥ ४ ॥
भजो भजोरे राम तजो जगकी चतुराई ।
सजो सजोरे साज काच तन जात विलाई ॥
गया सिलै नहिं बहुरि मुकर भंजन नहिं संदत ।
कोड़ जतन सिल प्रज्ञा कहै सोई मति मंदत ॥
जाता निश्चै जाय सब रहता हरि संगी सदा ।
चेत चिंतामणि उरमही तां पाया आतम मुदा ॥ ५ ॥
रहता सतगुरु शब्द एक सरबंग सदाई ।
नमो राम रमतीत गया नहिं भया कदाई ॥
एकै रस अनादि साधु तासूं लिवलायक ।
राम शब्द आराध परम पूरण पद पायक ॥
ज्ञान सूर भरपूर घट तम अज्ञान अघ मेट है ।
जन रामा जीवन सफल सांचा साहिब भेट है ॥ ६ ॥
जन्म सफल कर आज राज सिनखातनु पायो ।
वांछित ब्रह्मा इंद्र करम भोमस कुण नायो ॥
अलभ्य परम अस्थान ज्ञान केवल गति न्यारी ।
योग यज्ञ धर्मज्ञ भरमगी बुद्धि हमारी ॥

नाग लोक तप देव कहा सब वांछित नरदेह धर।
जन रामा खंड भरतमें चोथो पद मिल सोइ कर ॥ ७ ॥
खरची खावण ठोर और अस्थान अथिर इत।
कमज्या करण सुखेत हेत नरदेह चेत चित ॥
केवल शब्द अराध साधु सब याकूं गावत।
निर्भय मिलै सुथान बहुरि भव दुख नहिं पावत ॥
या सुखमें मत भूल नर मंडप मंड केता भया।
जन रामा मेरी मही अंत देख किण दिस गया ॥ ८ ॥
कहाँ वे भोग सँभोग कहाँ मंदिर वे माया।
हीर चीर सिणगार प्रीत युवती रस छाया ॥
चंद वदन तन कुंदन लजत कंदर्प चख सोहै।
कहाँ वे रूप किशोर कंज सुत अंत सको है ॥
नव खंड डंड तप स्वर्ग गति इच्छा चक्र वरतत जगत।
मन प्रकार सुख शक्र लख जन रामा हरि विन अगत ॥ ९ ॥
कहुंक ढरे मैदान चुणत कहुँ कली चढावत।
कहुंक सुन पेवास कहुं जग नगर वसावत ॥
किसी और मन धीर गीरवो किनको करियै।
सब जाता संसार राम भज पार उतरियै ॥
चेत हेत हरिनाम तूं झूंठो मोह निवारियै।
जन रामा मन समझ कर साधु वचन उर धारियै ॥ १० ॥
चेत चेत रे चेत नेति नित ऐसे गावै।
शेष एक आधार पलक वीसर नहिं जावै ॥
ब्रह्मा विष्णु महेश धारणा एक धरावै।
सदा ध्यान सम्माधि आदि अन्नादि समावै ॥
सो मौसर अबही मिल्यो चढ विमाण कह पारषद।
जन रामा गाफिल नरां जोंण चोरासी पारकद ॥ ११ ॥
इन पुर तें दोय माग इच्छा हुय सहजाँ जाना।
एक ब्रह्म अस्थान एक जम हाथ विकाना ॥
उर विज्ञान जन साथ राम पँवडा भर लीजै।
निरभै नित आनंद अगम घर आसण कीजै ॥
पर उपकारी संत धिन जीवन वंध छुडावना।
जन रामा आदू कवल कर सच्चा दिन पाहुना ॥ १२ ॥
सूकर श्वान सियाल रासभा उष्टर जानो।
हरि वेमुख मतिअंध काल भख उनही मानो ॥

वायस आहार निहार साँप घर मंदिर माया।
बैठक गति चमगाद स्थूल अजगरसी काया॥
कुल बुहार मकरी प्रबंध किण कारण नर तनु धऱ्यो।
जन रामा किरकट अवधि नाहिं न हरि मुख उच्चऱ्यो॥ १३॥
औसर मौसर जाय जाय जग सगै रसोई।
कुडुंब मान मनुहार सजन बंधू भूत सोई॥
कुवट कुपंथ कुप्यार प्यार ता और निभावत।
राज काज हमगीर लाज मैं वड मैं ध्यावत॥
आरंभ अनेक उद्यम अशेष मिनखातनु हिम्मत प्रबल।
जन रामा धृक्‌ जासु बुधि हरि गुरु जन दरसण निर्बल॥ १४॥
इति।

अथकालचेतावणीकोअंग।

पुरुष कहत धर मुझह धरणि कह मुझह समावत।
उलट पलट व्यवहार भेद कोऊ नहिं पावत॥
चढे अघ्घ के अश्व सेल राजस प्रभुताई।
अहूं साज सम्माज परत भ्रम कूपमें जाई॥
इंद्र आदि भूपति कहा असुर नाग धर वपुजिता।
जनरामा संख्या कवन विन विचार खावत खता॥ १॥
मरद गरद कइ भया अजूं होवणकी वारी।
महल मंदिर धन धाम रूप युवती सुत नारी॥
राज बाजि गज कोट सहर सबका देशायक।
सुभट सचिव तप तेज गमन गति सूरज जायक॥
खलन दलन माया महा हाहाज काल सब खाय है।
जन रामा स्थिर प्रीति कर रहता राम सदाय है॥ २॥
वादै विणसै देह नेह करियाँ क्या होई।
जाती रहती नाहिं चिंता करजो मत कोई॥
कहता सतगुरु संत नाम नातो इक साचो।
सदा शब्द गुरु संग रंग मनताके राचो॥
यह झूठो पड़ पंच सवै किणतें सम्बन्ध कीजिये।
जन रामा सासाँ थकाँ आदि मित्र कर लीजिये॥ ३॥
हितकारी भवसिंधु एक हरिजन है तेरा।
तात मात कुल भ्रात पुत्र युवती उरझेरा॥
मोह नीर मन ग्राह तनु कृत जलचर जेता।
तो खावण हुसियार लार लागा अघतेता॥

वज्र नाम नौका सधर मान वचन जन लेतिरै ।
जन रामा दाता दयालु यह प्रकार कारज करै ॥ ४ ॥
जाय जाय दिन जाय ताहि लेखै अव लावो ।
गाय गाय इक राम वहुरि मौसर नहिं पावो ॥
साय साय गुरु ज्ञान लाय एकण मन धारण ।
ध्याय ध्याय अव ध्याय आय लागा जोधारण ॥
कटक काल दुष्कर कहीं हरिजन पुरमध्य छूट है ।
जन रामा पासे गयाँ सहीत जमरो लूट है ॥ ५ ॥
लूट मंडी मैदान खूटग्या केइ जोधारा ।
अतिरथी महारथी सरव कालानल चारा ॥
केइ खाधा केइ खाय कई खावणकी वारी ।
नर सुर असुरह नाग कहा पुरुषा रत नारी ॥
सुख विलास रंजन मना भोग भोगावण सव गये ।
जन रामा उर दृष्टि कर को को जनमत को रये ॥ ६ ॥
चेत चेत नर चेत कहा तेरी ठकुराई ।
ज्यों तीतरकूं वाज चुहाकूं लेत विलाई ॥
तस्कर देख्याँ वार जाण दशरावै महीका ।
वैश्य वाट पर भील सेर भख चीत सहीका ॥
कहाँ गीदी बलखाँह अब मीच आय लागी निकट ।
रामा सास सरीरमें के लीया लेसी झपट ॥ ७ ॥
शिशर गई पोगंड किशोरहु तरुण विलायक ।
वृद्ध जरा तनु क्षीण छीन वल रूप घटायक ॥
भय कंपत सव हाड त्वचा सल नेतर झरि है ।
बहरा चूंध विघाट ठीक वोलण नहिं परि है ॥
श्याम पलट श्वेतहु भया सुधि वुधि अंग न सार है ।
जन रामा चेतत नहीं आज काल जम मार है ॥ ८ ॥
लख चौरासी जीव जात सव हीके होई ।
जलचर अनचर पवन गगन अस्थिन भख सोई ॥
तात मात मन कुटुंव मरत मोहकि सब धारा ।
सूरवीर बलवंत सरब मैं वडमें ख्वारा ॥
हरष शोक जहँ तहँ सवै यामें कहो कहा झूठ है ।
जन रामा अवरण विना काल सकलकूं लूट है ॥ ९ ॥

इति ।

अथ हरिजस ।

राग भैरव ।

पद १

श्रीगुरु रामदास नित दर्शन ऊठत उदय प्रभाते हो ।
अष्ट अंग दंडोत सदा ही त्रिविधि ताप मिटाते हो । टेर
गुरुधर्म भाव परिक्रमा दीजै चौरासी मिट फेरा हो ।
दर्शन स्पर्शन मुक्ति ग्रामी जन्मजन्मका चेरा हो ॥ १ ॥
भूरि भाग्य सिख राम सभामें आनंद उदय सदाई हो ।
त्रिविधि पूजन करिये सतगुरु श्रद्धा भाव बडाई हो ॥ २ ॥
येही नेम प्रेम उर मेरे चरण शरण जिव रहज्यो हो ।
घालवाल पर परसन होकर भक्तिदान मोहि दीज्यो हो ॥ ३ ॥

पद २

रामदास गुरु चरणा माहीं रहज्यो चित्त हमारा हो ।
यह वरदान जन्मभर चाहूं परचे प्राण अधारा हो ॥ टेर
गुरु सेवा मोसर वड भागी धिनधिन आज्ञा माहीं हो ।
आये साधु धरम द्वारा सिध भाग्य वडे ओलखाहीं हो ॥ १ ॥
चलता तीर्थ अपवर्ग हरिजन रामकृपाते परसे हो ।
जिग अश्वमेधां फल इक पांवडे वडभागी उर दरसे हो ॥ २ ॥
भाव वधावा साधु उछाहा जावै लावै द्वारे हो ।
घालवाल उधरण यह नाको गुरुमुख ज्ञान विचारें हो ॥ ३ ॥

पद ३

रातगई परभात भयो है जागो जागण हारा हो ।
सतगुरु ज्ञान दृष्टि दिखलावै राम उद्योत अपारा हो ॥ टेर
सार असार पदारथ भासे ब्रह्म शक्ति उर माहीं हो ।
उत्तम सुमिरण सास उसासा कालतणा डर नाहीं हो ॥ १ ॥
अघ अज्ञान भूत भ्रम भागै शंका डाकण दूरै हो ।
ममता नींद मोह मद सुपनो दोऊ दुखांकूं चूरै हो ॥ २ ॥
बीजक दोय अक्षर उर सांचा जीव आद पितु पावे हो ।
जन रामा अब जेज न कीजे सतगुरु ज्ञान जगावै हो ॥ ३ ॥

पद ४

चोथै भाग रहत जब रजनी राम सनेही जागै हो ।
सतगुरु स्वरूप ध्यान उर धरिये राम भजन में लागै हो । टेर

कारज येही रामसनेही गर्भ का कौल सुधारै हो।
या जगमें केता दिन रहणा मोह अज्ञान मिटारै हो ॥ १ ॥
स्वप्ने सुक्ख जगत सब रचना ॥ल भरम नहिं परिये हो।
राम संत गुरु रीझै तेरा सोई कारज करिये हो ॥ २ ॥
मन वैराग लाग गुरुचरना काया माया झूठी हो।
लेखै हरि अरपण अब करियै मनसा फेर अपूठी हो ॥ ३ ॥
जन्म सफल सोई वडभागी रामनाम लिव लावै हो।
द्यालवाल सतगुरुके शरणै साचा हरिजस गावै हो ॥ ४ ॥

पद ५

आवो मिलो मिल राम सनेही सतगुरु द्रसण जाइये हो।
उदै अंकूर भक्ति उर उपजै राम अमीरस पाइये हो। टेर
जामण मरण दोष दोय मेटै कल्मष जीव मिटाइये हो।
गंगा अठसठ तीर्थ यात्रा गुरूधाम परसाइये हो ॥ १ ॥
उधरण घाट सतगुरू आज्ञा हरि जल ज्ञान झुलाइये हो।
प्रेम प्रवाह गलै मन जब ही भरम अज्ञान नसाइये हो ॥ २ ॥
अनत कोटि जनको नित न्हावण परा परायण एही हो।
द्यालवाल मौसर बड भागी साचे भाव सनेही हो ॥ ३ ॥

पद ६

मौसर मिनखा देह मिल्यो है मत कोई गाफिल रहज्यो रे।
छूटा श्वास वहुरि नहिं आवै राम राम भज लीज्यो रे ॥
जानत है शिर मोत खड़ी है चलणो सांझ सवेरो रे।
पांच पचीसूं वडे जोरावर लूटत है जिव डेरो रे ॥ १ ॥
नर नारायण शहर मिल्यो है जामें सूंज अपारा रे।
राम कृपाकर तोहि वसायो यामें काज तुह्मारा रे ॥ २ ॥
जन्म जन्म का खाता चूकै हुय मन रामसनेही रे।
रामदास सतगुरुके शरणै जनूम सफल कर लेही रे ॥ ३ ॥

राग चरचरी।

पद ७

जाग रे वडभागि जीव साधु सूर ऊगो।
ज्ञान पंखि सुरत श्रवण शब्द आदि पूगो ॥ टेर
संत पंथ चलत वृंद मोक्ष द्वार खूलो।
जगत अगत मेट स्वप्न स्वप्न दूर भूलो ॥ १ ॥

निशा भूत जमका दूत सिटी राम माया ।
निशंक दे प्रभात भयो राम नाम गाया ॥ २ ॥
आन चोर जोर भाग भरम जलद नाहीं ।
कमल संवल उदयकार दरस परस माहीं ॥ ३ ॥
भजन काज कीजै आज जनम दरद जावै ।
परिपूरण परम तत्व रामदास गावै ॥ ४ ॥

पद ८

प्रकट निकट राम संत घटस भरम भागो ।
नयन ज्योति रवि उद्योत चरण शरण लागो । टेर
दरश परश सरस नूर सूर साधु सांई ।
कमल उदित मुदित प्रज्ञा खुलत प्रेम वांई ॥ १ ॥
सुगंधि भाव चित्त चाव अरथ आनंद पायो ।
सिकल विकल मेट मनकी अकल आप गायो ॥ २ ॥
शब्द रब्द होय परचै सुरत सरचै दरसै ।
अमर अजर अखर पीव जीव शीव परसै ॥ ३ ॥
कर कल्यान प्रान दान अचल ज्ञान गुरता ।
रामदास यह विश्राम ताप मेट मुरता ॥ ४ ॥

पद ९

राखिये महाराज राज शरण राम तेरी ।
कली काल जिव विहाल सार अवै मेरी ॥ टेर
मन असाध पंच व्याध करत है घणेरी ।
भर्म जाल कर्म काल ठगांमें वसेरी ॥ १ ॥
काम क्रोध लह न वोध चुगल एक चेरी ।
मोह द्वार अंधकार जड़ता जंझेरी ॥ २ ॥
बस्यो वास काल ग्रास सास लेत वेरी ।
द्याल फरियाद राम साध इच्छा आप केरी ॥ ३ ॥

पद १०

दीन छूं जी दीनबंधु दीन को नहेरो ।
महरवान विरदजान प्राण मेट घेरो ॥ टेर
यह पुकार निराधार दरद मेट मेरो ।
जन्म जन्म हार मार तार अबै तेरो ॥ १ ॥
विषम घाट भव विराट वेग ही निवेरो ।
बुहो जात मैं अनाथ नाथ हाथ तेरो ॥ २ ॥

वारवार क्यों विसार घालबाल चेरो ।
रामदास गुरु निवास मेट जन्म फेरो ॥ ३ ॥

पद ११

जुक्ति मुक्ति भक्ति दान शक्ति ब्रह्म दीजै ।
श्रीदयाल गुरु निहाल आज कृपा कीजै ॥ टेर
साधु संग मनूं रंग उमंग प्रेम धारा ।
भाव चाव जन उछाव गाव पीव प्यारा ॥ १ ॥
कुबुद्धि दुविधा अघ अज्ञान मेट माधो जिवका ।
शील सांच उर संतोष नाम दीजै शिवका ॥ २ ॥
मन मनोज मोह रोज जनम ता सतायो ।
दबक सबक डाकनीके भय तें दोर आयो ॥ ३ ॥
अभय राम जिव विश्राम रामदास सांई ।
घालबाल रिच्छपाल कठिन काल मांई ॥ ४ ॥

रागकालेरो ।

पद १२

सइयाँ म्हारी सतगुरु दरशण जासाँ ए । टेर
मन वैरी की एक न मानूं निज मन भाव वधासाँ ए ॥ १ ॥
सो दिन उदै जनम होय लेखै सनमुख शीस निवासाँ ए ॥ २ ॥
अष्ट अंग दंडोत वंदना परिक्रमा तिर जासाँ ए ॥ ३ ॥
पाय प्रसाद व्याध सिट तीनूं आनंद मंगल गासाँ ए ॥ ४ ॥
श्रीगुरुचरण परस होय निर्मल पातक दूर सिटासाँ ए ॥ ५ ॥
निद्रा दारी है वटपारी तिनसूं युद्ध करासाँ ए ॥ ६ ॥
श्रद्धा दीजो सतगुरु म्हारा करुणा विरह जगासाँ ए ॥ ७ ॥
सुमरण परचेकी अभिलाषा प्रेम नेम वर पासाँ ए ॥ ८ ॥
घालबाल गुरु रामदास धिन आदि अंत निभजासाँ ए ॥ ९ ॥

पद १३

सजनी म्हारी रामसभा वलिहारी ए । टेर
रामसनेही परचै हरिजन चरणकमल बलिहारी ए ॥ १ ॥
तन मन धन निछरावल करसाँ अठसिधि नवनिधि सारी ए ॥ २ ॥
रचना ब्रह्मंड सजूँ सँजीवन अरपूँ वार हजारी ए ॥ ३ ॥
सतगुरुसें मैं ऊरण नाहीं जिण दिया रामधन भारी ए ॥ ४ ॥
घालबाल नित लेऊं बलैया निभज्यो टेक हमारी ए ॥ ५ ॥

राग काफी ।

पद १४

म्हांरै रामजना घर आया हो ।
बलिजाऊं देख दरस सुख पाया हो ॥ टेक
अनंत उछाह भयो मन आनंद परम पदारथ पाया हो ॥ १ ॥
हिरदो चौक पुराऊं सजनी चित चंदन चरचाया हो ॥ २ ॥
भाव माट केसर रस घोरी महिमा सुगंधि सुहाया हो ॥ ३ ॥
सूंधो प्रीति रीति हरिजनकी ज्ञान गुलाल सुवाया हो ॥ ४ ॥
पिचकारी विरह प्रेम नीर भर नैंन उमंग झड़लाया हो ॥ ५ ॥
आज वसंत संत धिन दरसण सखियाँ मंगल गाया हो ॥ ६ ॥
घालबाल बलि जाऊं वेलां हरिजन राम सिलाया हो ॥ ७ ॥

राग कल्याण ।

पद १५

सनेहिया तुम आवो आवो राज महाराज ॥ टेर
निरधारां आधार गुसाँई चरण शरणकी लाज ॥ १ ॥
जन्म जन्मकी प्रीति पुरातन क्यों भूलत हो आज ॥ २ ॥
दीजै दरश दयानिधि माधव मेरे है सिध काज ॥ ३ ॥
घालबाल पर कृपा कीजे राम गरीबनिवाज ॥ ४ ॥

पद १६

रामइया शरणैकी प्रतिपाल । टेर
अबलग करी सोई अब कीजै अपने घरकी चाल ॥ १ ॥
जो सूरज परकासै नाहीं रात न कंज विशाल ॥ २ ॥
शशि नहिं अमी द्रवै जो माधव तो निपजै केम रसाल ॥ ३ ॥
विरह कमोदनि जीवन सोई सब लालों सिर लाल ॥ ४ ॥
घालबालके समरथ स्वामी रामदास किरपाल ॥ ५ ॥

कामिनी सोरठ ।

पद १७

बिरहनि कूं दरशन दीजै, साहिब अपनी करलीजै । टेर
मैं राम पिया बलिहारी, प्रभु मेटो तपत हमारी ।
टुक दया दृष्टि भर देखो, जीवानें तारन लेखो ॥ १ ॥
जिव जन्म जन्मको झूरै, आशावंत आशा पूरै ।
हरि आदू विरद विचारो, अब पलकां पलक पधारो ॥ २ ॥

मोहि श्वास कल्प सम जावै, कब प्रीतम दरश दिखावै।
जन घ्यालबाल बलि जावै, कब राम पिया घर आवै ॥ ३ ॥

पद १८

पूरबली प्रीति विचारो, पिया अब क्यूं मोहि विसारो। टेर
धिन प्राण पुरुषोतम प्यारा, सब आपहि किया पसारा।
कायासा महल वणाया, जिव माया मोह लुभाया ॥ १ ॥
धिन आदू सुरत संभारी, सो आयो शरण तुह्मारी।
नित सहायक विर्दां वारूं, यों भक्तवछलता सारू ॥ २ ॥
जिव निर्बल बल अब कांई, सब राम समर्थ शरणाई।
अब आप आज्ञा सोइ कीजे, जन घ्यालबाल जिव जीजे ॥ ३ ॥

पद १९

म्हारो वालो सदा सनेही, धिन प्रीति पूरबली एही। टेर
जिव जन्म धर्‌या नहिं भूलूं, एक सहायक शरणै झूलूं।
धिन यो ठंभन जग माहीं, एक हरि विन दूजा नाहीं ॥ १ ॥
एक चंद कमोद पियासी, जब देख्यां मन परकासी।
तन मन पियाजी सांचा, बलिजाऊं मनसा वाचा ॥ २ ॥
अब घनहर प्रीतम आवो, विरह चातक टेक निभावो।
संतां धिन सतगुरु गायो, जन घ्यालबाल मन भायो ॥ ३ ॥

पद २०

पिया क्यों नहिं अबै पधारो, घर आदू रीति विचारो। टेर
है अबलाके बल साँई, धृक् जीव विना देह काँई।
हो अबलाँ प्राण अधारा, वलिजाऊं प्रेम प्रियारा ॥ १ ॥
प्रथुरोमें[1] सुधा मन भावे, इक नीर विना मर जावे।
धिन हरिजन दर्शण तेरा, याहीमें जीवन मेरा ॥ २ ॥
विरहनि मन वच क्रम प्यासी, पिया जीवन जीव जियासी।
तुम घ्यालबालके स्वामी, अब आवो अंतरयामी ॥ ३ ॥

राग देश।

पद २१

बलिजाऊं सिंहथल सहर सुथान।
हरियानंद आनंद के करता अनुभव प्रगट्यो भान। टेर
मान सरोज नगर सोइ दीवो मेटी निशा अज्ञान ॥ १ ॥

---

1 मछली।

सर्व पदारथ सूझन लागा आतम पायो ज्ञान ॥ २ ॥
भर्म उलू कोचर सिट अविद्या निशिचर पंखी हान ॥ ३ ॥
शिष चकवा दिल आनंद उपज्यो प्रेमी कंज विकसान ॥ ४ ॥
विमुख कमोदनि सोई अमूझ्यो बकता चख हरखान ॥ ५ ॥
द्यालबाल गुरु तरणि एक रस विरदाँ भक्तिप्रवान ॥ ६ ॥

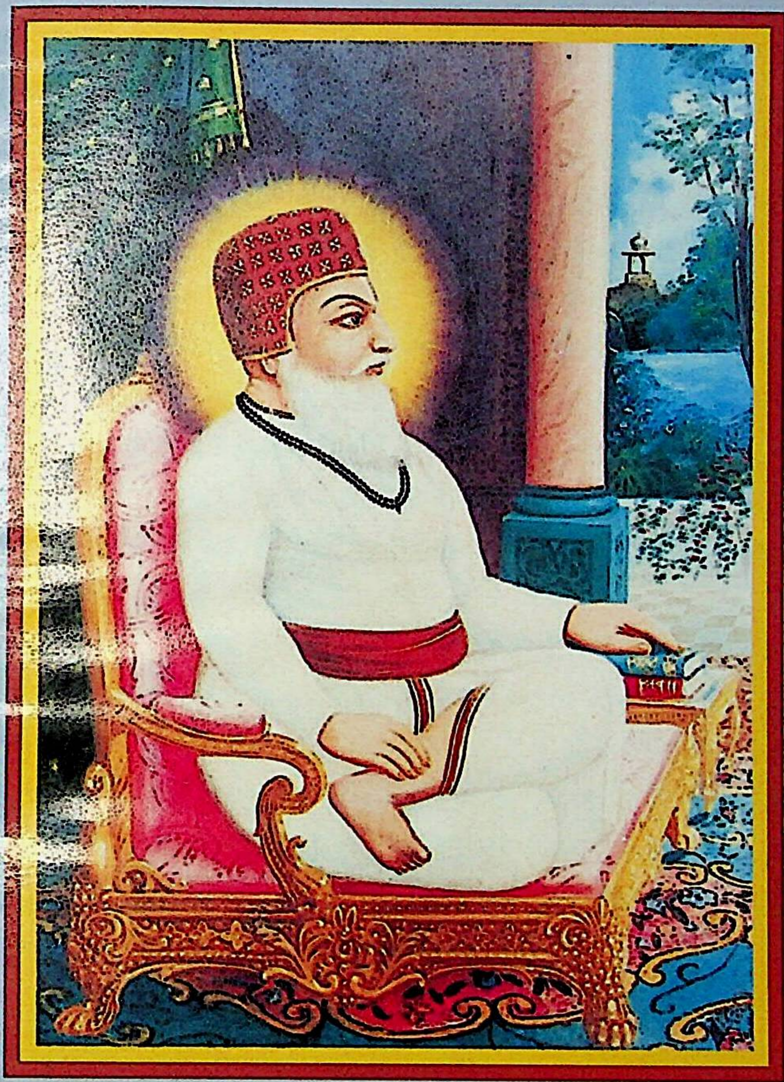
पद २२

ह्मांनै प्यारो लागैछे जी मुरधर आज ।
रामभक्ति निज परगट कीन्ही रामदास महाराज ॥ टेर
चार वरणकूं ज्ञान वतायो पावनपतित जहाज ॥ १ ॥
वडभागी जानै ओ मौसर मंडली संत समाज ॥ २ ॥
दरशन परसन रामसनेही गुरु धर्म भाव सकाज ॥ ३ ॥
अनुभव छोळां उरमें प्रगटै आनंद करता साज ॥ ४ ॥
आन देवकी लाग सिटाई अदल बंधाई पाज ॥ ५ ॥
रसद वस्तु सुख संपति सारी रौरव काल न दाज ॥ ६ ॥
सदा सुभिक्ष देश में नवनिधि रामरायके राज ॥ ७ ॥
सतगुरु चरण शरण घर साचो द्यालबालकी लाज ॥ ८ ॥

मंगल २३

हम परदेसी लोक एक दिन उठ चलैं ।
कहियो रामहि राम बहुरि कबही मिलैं ॥ टेक
वासो वसियो आय प्रभाते पंथ परै ।
गोलूं गोलूं संग क्रमाक्रम ही अरै ॥ १ ॥
डेरा है मैदान सरायां वीच रे ।
जागत रहियो वीर धाड़ बहु मीच रे ॥ २ ॥
राव रंक सुलतान खौसिया भूपती ।
काल महा बलवान सास अति सोखती ॥ ३ ॥
सूरवीर केतान गया सब लोग रे ।
वारो वार विहाय सुपन को जोग रे ॥ ४ ॥
आया एक ही एक एक ही जावणा ।
किणसूं हर्ष न शोक यही मन लावणां ॥ ५ ॥
रामा राम पुकार सत्तगुरुसंग रे ।
निर्भय रमिया संत ज्ञान अणभंग रे ॥ ६ ॥

इति ।



श्री १००८ श्री दयालुदासजी महाराज
रामस्नेहि सम्प्रदायाचार्य खैड़ापा (२)



वक्तव्य ।

एकसमय पहाड़ की गुफा में विराजे हुए श्रीदयालुदासजी महाराज भजन कर रहेथे । उससमय देवताओंसे जिद्द कर महाराज कों छलनेके लिये एक देवांगना स्वर्गसे उतरी और हाव भाव कटाक्ष से मोहित करने को अनेक यत्न किये परंतु सारे निष्फल हुए। उसने कहा कि मैं देवताओं से जिद्द करके आई हूं एकवेर नेत्र भरकर मुझे देखतो लैं। पर आप नही माने । तब देवांगनानें कुपित होकर शाप दिया कि आप असह्य नेत्रों की वेदना से पीडित होवो। यों कह पीछी चली गई। और उसीक्षण आप के नेत्रों में व्यथा शुरु होगई। तो इस कदर हुई कि आप उसे सह नहिं सके। अनेक उपचार किये गये किसीसे कुछ मी नहिं हुआ और दृष्टिभी नष्ट होगई । तब तो अत्यंत दुःखित होकर जिसके अक्षर अक्षर मैं करुणारस मरा है उस "करुणासागरग्रन्थ" की रचना कर भगवत् को सुनाया । तब तो श्रीराममहाराजने ऐसी आप की करुणा सुनी कि उसीक्षण आप के नेत्र खुलगये और नेत्रों की सारी व्यथा मिटगई। बडा भारी परचा हुआ। वह भक्तिप्रधान यही करुणासागर ग्रंथ है जिसका पाठ करनेसे त्रयतापादि अनेक बाधाएँ दूर होजाती हैं । और आबालवृद्ध राम-स्नेह धर्मावलंबी साधु सद्गृहस्थ जिसका नित्यंप्रति पाठ करते हैं । अर्थज्ञान सहित पाठ करनेका शास्त्रों में अधिक माहात्म्य लिखाहैं । इस लिये सर्व साधारण के लाभार्थ करुणासागर की तरणी नामक टीका सेवा में सुस-ज्जित कीगई है पाठकवृन्द अवगाहन करैं ।

इस के निर्माण में रतलामनिवासी श्रीमान् आत्मारामजी महोदय व रामविलासजी महोदयने पूर्णरीति से सहायता दी है जिसका आभारीहूं ।

विनीत—
चतुर्भुजदास वैद्य.

॥ श्रीः ॥

ॐ राँ रामाय नमः ॥

अथ श्रीदयालुदासजी महाराज विरचित सटीक करुणासागरग्रंथप्रारंभः ।



दोहा.

राम गरीबनिवाज को, मोहि बडो विश्वास ॥
जग जामी पालण जगत, सब की पूरै आस ॥ १ ॥

अथटीकाप्रारंभः ।

करुणासागर ग्रंथ की, टीका तरणी नाम ॥
याल स्वप्न आज्ञा दई, रची सु चौकसराम ॥ १ ॥

श्रीराममहाराज गरीबों के आश्रय दाता, जगत् को उत्पन्न तथा पालन करनेवाले और सब की आशा को पूरी करनेवाले हैं इनका मुझे बडा भरोसा है ॥१॥

शरणाई पंजैर विजय, ऐसा समरथ साम ॥
दीनबंधु आनंदता, परमेश्वर परणाम ॥ २ ॥

प्रभु ऐसे सामर्थ्यवान् हैं कि शरणागत प्राणियों को विजय देते हैं और गरीबोंके बंधु और आनंद की खान हैं ऐसे परमात्मा को प्रणाम करता हूं ॥ २ ॥

हूं बंदों जाकूं सदा, सब की सुणै पुकार ॥
अज्ज कीट पर्यन्त लों, भयभंजन भरतार ॥ ३ ॥

मैं जिन स्वामी को सदा भजता हूं वे ब्रह्मा से लेकर तुच्छ कीटों तक सबकी पुकार सुनते हैं और उनके भयों को नष्ट करनेवाले हैं ॥ ३ ॥

निर्बल दुखित अराधियो, प्रगट्यो तहँ परमेस ॥
वृद्धा तरुणा भेद नहिं, कहा ध्रुव बालक बेस ॥ ४ ॥

परमात्मा जिनके यहां छोटे बडे (जवान व बुड्ढे) का कोई भेद नहीं है। उनको तो किसी निर्बल और दुःखित ने जहां आराधा कि वहीं प्रगट होगये यथा ध्रुव बालक ॥ ४ ॥

---

१ मणि माणक महँगे किये, सूँगे तृण जल नाज ।
तुलसी तब मैं जानियो, राम गरीबनिवाज ॥ १ ॥

२ पिता । ३ शरीर, अस्थियोंका ढांचा, प्राणी । ४ स्वामी । ५ अज=ब्रह्मा । ६ वयस=अवस्था ।

छंद सारसी ।

ध्रुव वन सिधाऱ्यो वचन माऱ्यो ध्यान धाऱ्यो एक ए ।
तजि पान[1] नीरू महाधीरू परा पीरू[2] पेखं[3] ए ।
सब ब्रह्म मंजूं[4] उर समंजू सुरत रंजू ताम[5] ए ।
ऐसा गोविंदू कृपासिंधू दीनबंधू राम ए ॥ जी दीनबंधू० ॥ १ ॥
खुल्ले कपाटू विकट घाटू पवन वाटू थक्क[6] ए ।
डुल्ले विराटू शोक काटू भक्त ठाटू शक्क ए ।
षट मास माँई मिले साँई अचल पाई धाम ए ।
ऐसा गोविंदू० ॥ २ ॥

(ध्रुवजी की कथा)

ध्रुवजी माता सुरुचि के ताना देने से पांच वर्ष की अवस्थामें ही वनमें जाकर केवल परम पितामह परमात्मा का ध्यान करने लगे । जिस महाधीर बीर ने सूखे पत्र तथा जल तक परित्याग कर सब से परे दयालु परमेश्वर का दर्शन करने के वास्ते सब ब्रह्मांड जिस ब्रह्म में है ऐसा हृदयकमलमें विराजमान जो ब्रह्म उसमें सुरत लगादी । तदनंतर हृदयकपाट खुलने से अवघट है घाट जिनका ऐसा जो पवन वाट वह थक गया और विराट डुलने लगा । तब भगवान् ने विंचारा कि भक्तों का समूह सशंकित होरहा है तिनका शोक मैं दूर करूं ऐसा विचार कर तत्क्षण छठ्ठे महीनेमें ही भगवान् ने आकर दर्शन दिये । तब तो ध्रुवजी दर्शन पाकर ३६ हजार वर्ष नीतियुक्त राज्य कर जिनकी कृपासे अचल धाम (ध्रुवपद) को प्राप्त हुए । ऐसे परब्रह्म दयासागर दीनबंधु वे राममहाराज हैं ॥ २ ॥

(भक्तमाल)

प्रह्लाद गायो असुरदाह्यो बहु रिसायो मार ए ।
सर्पो खवायो विष पायो गिरि गुरायो जार ए ।
हाथी चुवायो सिंधु वुहायो जहँ जिवायो नाम ए ।
ऐसा गोविंदू० ॥ ३ ॥
कोपे करालू अंध जालू बंध वालू बोल ए ।
सबमें गोपालू है दयालू मारडालू कोल ए ।

---

१ पान=पत्र । २ पर । ३ पेखना=देखना । ४ माँझ=मध्य । ५ तामय=तन्मय । ६ शक=आशंका ।

थंमे विचालू तत्तकालू विरद वालू आमं[1] ए।
ऐसा गोविंदू० ॥ ४ ॥
नक्खां विदारे उदर फारे असुर मारे आप ए।
भक्तीवधारे संत सारे दुःख झारे कापं[2] ए।
केतान तारे यों उबारे सर्वथारे काम ए।
ऐसा गोविंदू० ॥ ५ ॥

(प्रल्हादजी की कथा)

भक्त प्रह्लादने "नहिं छांडूं बाबा राम नाम" गाया तब असुर हिरण्यकशिपु सुनकर जला और बहुत रिसाया, प्रह्लाद को मारने के वास्ते सर्पों से खुवाया, जहर पाया, पहाड़ से गुड़ाया, अग्निमें जलाया, और उनपर हाथी छुडाया, समुद्रमें वहाया, पर जहां तहां उसी नाम ने प्रह्लादजीको जिवाया। तब वह अंधा जाली हिरण्यकशिपु अत्यंत कुपित होकर बोला कि इस बालकको बांधलो। तब प्रह्लादजीने कहा कि–दयालु गोपाल परमात्मा सबमें व्यापक हैं। उस समय उसने प्रतिज्ञा की कि तुझे अभी मारे डालता हूं तब तत्काल थंभे के बीचमें से विरदवहारू (भक्तका वाना वधारणे वाले) नृसिंह भगवान् प्रगट होकर असुर (हिरण्यकशिपु) के उदरको नखोंसे चीर फाड़के उसे मार दिया। जब इस प्रकार भक्ति को वधार संतों के काम सारे तब तो हेप्रभो! मेरे दुःख को भी काटो। क्योंकि आपने कितने ही को तारे और कितने ही को यों उबारे ये सब आप ही के काम हैं ॥ ५ ॥

सवैया।

आरतपाल कृपाल जो राम जहां सुमिरे तेहिको तहँ ठाढ़े।
नाम प्रताप महा महिमा अकरे किय छोटेउ खोटेउ बाढ़े॥
सेवक एक ते एक अनेक भये तुलसी तिहुँ ताप न डाढ़े।
प्रेम वदौं प्रहलादहि को जिन पाहन ते परमेश्वर काढ़े॥ १॥ (भक्तमाल)

देखो अरुण पंगू गिरि उलंगू मनी मंगू सिद्ध ए।
करनाश रक्खू किये नक्खू दीन अक्खू तद्द ए।
"इक गिद्ध गाधू किये साधू दीध आदू धाम ए।"[3]
ऐसा गोविंदू० ॥ ६॥

---

१ आये। २ कापना=काटना। ३ इस छन्दमें दो कथाएँ है।

(अरुणजी की कथा)

(१) जिसपर ईश्वर की कृपा होती है उसका कोई कुछ नहीं विगाड़ सकता है, जैसे सूर्य भगवान् के सारथी अरुण उसकी माता ने जब कि अरुण का अण्डा कच्चा ही था अज्ञान वश पका समझ कर फोड़ दिया उस समय अरुण उसमें से पाँगले निकले । अरुण का विचार हुवा कि क्या मैं भी इस पंगु अवस्थामें कभी पर्वतोंको उल्लंघन कर सकुंगा ? पर ईश्वर की कृपा से वह सूर्य का सारथी हुवा और उसकी मनोकामना सिद्ध होगई और भगवान् ने उसे अक्षयलोक का वास दिया ।

एक समय कश्यपजी ने यज्ञ करने के लिये इंद्रादि देवताओं को आज्ञा दी कि, तुम सब मिलकर यज्ञकाष्ठ लाओ तब सब चले, आज्ञा पाकर अंगुष्ठ प्रमाण साठ हजार बालखिल्य भी चले । वन में जाकर एक लकडी उठा कूदते फांदते पीछे आरहेथे इतनेमेंही अकस्मात् रास्तेमें जलसे भरा हुवा एक गऊका खुर आगया उसमें सबके सब साठहजार ही डूबगए, उधर से इंद्र भी आ पहुंचा । बालखिल्यों को तलफते हुए देखकर हंसी की । ओहो इनके लाए हुए काष्ठ से ही यज्ञ पूर्ण होगा । यों कह इंद्र तो चलबना । इधर डूबते हुए बालखिल्यों ने भगवान् से प्रार्थना की तब हरि अवतार धार उस खुर समुद्र से उन्हें बाहर निकाले, तब बालखिल्य इंद्र पर क्रुधित होकर दूसरा इन्द्र बनाने के लिये तपस्या करनें लगे और दूसरा इन्द्र बनाही दिया । यह सुन इंद्र सहित कश्यपजी वहां आए और कहा इन्द्र पर क्षमा प्रदान करो, आपका बनाया हुवा इन्द्र पक्षियों का राजा होगा । बस बालखिल्य प्रसन्न हो तपस्या के बलसे दो अंडे रच कश्यपजी द्वारा पक्षीमाता विनता को दिलवादिये । तब तो इंद्रादि सब प्रसन्न हो वापिस चले आए । कुछ समय बीतने पर अज्ञान वश माताने कच्चा ही अंडा फोड़ डाला तब उसमें से एक पंगला अरुण नाम का बालक निकला और कहने लगा कि माता ! गजब करदिया । अब दूसरे अंडे को तो पूरा पकने देना जिससे तुमको सुख होगा ऐसा कह अरुण तो भगवत् कृपासे सूर्य का सारथी बन पंगू था तो भी गिरि आदिकों को उल्लंघन करता हुवा अंत में अक्षय लोक को प्राप्त होता भया । तथा हजार वर्ष बीतने पर दूसरे अंडे से पक्षिराज गरुड़जी उत्पन्न हुए जो कि भगवान् के वाहन बने । इति ।

(जटायु की कथा)

(२) मरणोन्मुख जटायु जिसको भगवान् रामचंद्रजी के दर्शन की उत्कट इच्छा थी उसको श्रीभगवान् ने अंतकाल में दर्शन दिया और परम धाम का वासी बनाया ॥ ६ ॥

दोहा ।

गोद शीश धरि पितुसखा, जानि कृपाके धाम ।
झारी धूरि जटायु की, निज जटानसे राम ॥ १ ॥

सवैया ।

दीन मलीन अधीन है अंग विहंग परेउ क्षिति खिन्न दुखारी ।
"राघव" दीन दयालु कृपालु को देखि दुखी करुणा भइ भारी ।
गीध को गोद में राखि कृपानिधि नैन सरोजन में भरि वारी ।
बारहि बार सुधारत पंख "जटायु" की धूरि जटानसों झारी ॥ १ ॥

दोहा ।

मुये मरत मरि हैं सकल, घरी पहर के वीच ।
लही न काहू आज लौं, गीधराज सी मीच ॥ १ ॥
रामविरह तन परिहरे, सत्य प्रेम अवधेश ।
तैसहिं सिय हित तनु तजे, सत्य सखा गृद्धेश ॥ २ ॥ (भक्तमाल)

"शंबरी सदाई भक्ति भाई ऋषि नवाई शीस ए" ।
"शिल्ला तिराई नारि थाई नाव माँई बीस ए" ।
"सूवा पढाई पाप दाई गती वाई पाम ए" ।
ऐसा गोविंदू० ॥ ७ ॥

(बाई शबरी की कथा)

(१) शबरीबाईकी भक्ति सदैव ही भगवान् के मनभाई जिन शबरीबाई को ऋषियों ने मस्तक नवाया ।

"सोइ रघुराज रघुराज पंपा कानन में पूछत फिरत कहो कहाँ मेरी शबरी"

कवित्त ।

आगू चले राम आइ आगू लेन शबरी हू चरण परन धाईं मिलन को धाये हैं ।
गिरि दंड ही सो भुज दंड सो उठाय लई फेर के गिरी सो पुनि भुज पसराये हैं ॥
प्रेमदशा कही नहीं जात रघुराज दोउ तनमन वचन की सुधि विसराये हैं ।
भले आप मिले मोहिं भली मिली तेहूं यह कहत दुहून के भकारे भरि आये हैं ॥ १ ॥
वेर वेर बेरले सराहैं जनि वेरबेर रसिकविहारी देत बंधु कहँ फेर फेर ।
चाख चाख भाखे यह वाहूते महान मीठो लेहुतो लखण यों बखानत हैं हेर हेर ॥
वेरवेर देवे बेर शवरी सुवेरवेर तोउ रघुवीर बेर बेर तेहिं टेर टेर ।
वेर जनि लावो बेर बेर जनि लावो वेर वेर जनि लावो बेर लावो कहै बेर बेर ॥ २ ॥
ब्रह्मके उपासी तपरासी वनवासी वर विपुल मुनीशन के आश्रम सिधायो मैं ।
कीन्हे सनमान तिन सहित विधान तऊ काहू ठोर कबहू न पेट भरि खायो मैं ॥
अमृत समान शबरी के इन बेरन में रसिक विहारी मन भायो स्वाद पायो मैं ।
अवध विहाय वन आयो जबतें हों बंधु तबते विचारो सत्य आजही अघायो मैं ॥ ३ ॥

---

१ इस छन्दमें चार कथाएँ हैं ।

सवैया।

प्रभु चाहत हैं निह केवल भक्ति न चाहत रूप कुलै बल हैं।
रसरङ्गमणी चलि मीलिनको निज मातु समान मिले कल हैं॥
रघुनन्दन भाव सु भूख भरे फल खाय अघाय पिये जल हैं।
शवरी के सुप्रेम पगे भल ये फल हैं कि चहूँ फल के फल हैं॥ १॥

दोहा।

प्रेम पगे चखि चार फल, कौशल्या के लाल।
भक्तन की कवरीमणी, शवरी करी कृपाल॥ १॥
अधिक बढावत आपते, जन महिमा रघुवीर।
शवरी पद रज परसिकै, शुद्ध भयो सरनीर॥ २॥ (भक्तमाल)

(अहिल्याजी की कथा)

(२) जो अहिल्या शापवशात् शिला होगई थी वह भगवच्चरणरज के प्रभाव से तिरकर उत्तम तपोमूर्ति स्त्री होकर पतिलोक को प्राप्त हुई।

(३) केवट ने एक नौका से ही अपने वीसों ही कुटुम्बियों का उद्धार कर लिया।

छन्द।

पद कमल धोइ चढाइ नाव न नाथ उतराई चहौं।
मोहि राम! राउरि आन दशरथ शपथ सब सांची कहौं॥
वरु तीर मारहिं लखन पै जब लगि न पांव पखारिहौं।
तब लगि न तुलसीदास नाथ कृपालु पार उतारिहौं॥ १॥

कवित्त।

प्रभु रुख पाइकै बुलाइ वालक घरनि, वंदि कै चरण चहुंदिशि बैठे घेरि घेरि।
छोटो सो कठौता भरि आनि पानी गंगाजू को, धोय पायँ पियत पुनीत वारि फेरिफेरि॥
तुलसी सराहैं ताको भाग सानुराग सुर, बरषि सुमन जय जय कहैं टेरि टेरि।
विबुध सनेहसानी बानी असयानी सुनि, हँसे राघौ जानकी लखन तन हेरिहेरि॥१॥

दोहा।

पद पखारि जल पान करि, आपु सहित परिवार।
पितर पारकरि प्रभुहिं पुनि, मुदित गयउ लै पार॥ १॥ (भक्तमाल)

(गणिका की कथा)

(४) पापरूप गनिकाने सूवेको पढाया तिससे वह भी गति को प्राप्त होगई॥ ७॥

एक गनिका ने सूवे को राम राम पढाना शुरू किया। एक समय रात्रि में पींजरा खुला रहने से सूवे को तो बिल्ली लेगई और वहाँ एक सर्प धस गया। बेगम गनिका ने अंधेरे में ही पींजरे में हाथ डाल सूवे को पढाना चाहा इतने ही में सांप उसे डसगया। गनिका ने कहा सूवा राम राम कह इस प्रकार कहते कहते सांप के जहर से वह गनिका मरकर नामके प्रताप से सद्गति को प्राप्त होगई। इति।

ईक असुर बईयुँ शरण लइयुँ चिरंजइयुँ भाख ए।
ता सुक्ख दइयुँ मोख भइयुँ दोष नइयुँ साख ए।
"भृत कीश कइयुँ" "भालु सइयुँ प्रीति पइयुँ जामँ ए"।
ऐसा गोविंदू० ॥ ८ ॥

(विभीषणजी की कथा)

(१) एक असुर विभीषण ने रावण से भयभीत होकर रामजी की शरण ली। तब भगवान् उसे "चिरंजीवी हो" इस प्रकार कहकर अभयदानरूपी सुख दिया। बाली के दोषों के समान होते हुए भी उसके दोषों को न देखते हुए भगवान् ने अंत में उसे मोक्ष का भागी बना दिया। बाल्मीकि आदि ग्रंथों में ऐसी साक्षी है ॥

कवित्त।

पाऊँगो हमेश अंग बसन उतारे सबै दीन जानि अधिक कृपालु मन भाऊँगो।
भाऊँगो अहेर संग धाऊँगो बताऊँ पंथ दुर्लभ पुनीत नित्य झूँठनको खाऊँगो ॥
खाऊँगो प्रसाद दास रामको कहाऊँ भलो रसिकविहारी तजि अनँत न जाऊँगो।
जाऊँगो अवध निज जनम गमाऊँ तहाँ गाऊँगो सु कीरति परमपद पाऊँगो ॥ १ ॥

छंद मत्तगयंद।

पोढन कूं तृण के पथरे अरु ओढ़न को पट द्वै बकलीके।
भोजन याम मिलै कबहू कबहूक भखै फल द्वै कदलीके ॥
संपति को परवेस यहै स महादुख देह विदेहललीके।
तादिन लंक दई जो बिभीषण हाथ बदौं रघुनाथ बलीके ॥ १ ॥
वेद विरुद्ध महामुनि सिद्ध सशोक सुरासुर लोक उजार्‍यो।
और कहाकहुं सीय हरी तबहू करुणानिधि कोप निवार्‍यो ॥
सेवक क्षोभ ते छांडि क्षमा तुलसी लख्यो राम सुभाव तुह्मार्‍यो।
तोलौं न दावि दल्यो दशकंधर जोलौं विभीषण लात न मार्‍यो ॥ १ ॥

---

१ इस छन्दमें तीन कथाएँ हैं। २ बी=भय। ३ जांबवंत।

मातको मोह न द्रोह दुमातको तातको सोच न गात दहेको ।
राजको लोभ न प्रानको क्षोभ न वंधु विछोह न ओधि रहेको ॥
नेक न जीवमें आवत केशव सोच न लंकमें सीय रहेको ।
ता रन भूमिमें राम कहै मोहिं सोच विभीषण भूप कहेको ॥ २ ॥

(भक्तमाल)

(हनुमानजी की कथा)

(२) हनुमानजी को प्रभु ने निज का दास बनाया । भक्तवत्सल श्रीरामचंद्र स्वामी ने निज मुख से फरमाया कि हे हनुमान्! तू मेरा सच्चा पायक है ।

"तू म्हारो खरोरे सिपाई रे हनुमंता तू म्हारो खरो रे सिपाई"
"गिरिजा जासु प्रीति सेवकाई । बार बार प्रभु निज मुख गाई"

सोरठा ।

सेइय श्रीहनुमान, भुक्ति मुक्ति हरिभक्ति प्रद ॥
जनरक्षक भगवान, वीर धीर करुणायतन ॥ १ ॥ (भक्तमाल)

(जाँम्बवन्तजी की कथा)

(३) जांववानजी भालू थे परन्तु उनकी भगवान् में सच्ची प्रीति पाई गई ।

दोहा ।

बलि बाँधत प्रभु बाढेउ, सो तनु वरणि न जाइ ।
उभय घरीमें कीन्ह मैं, सात प्रदक्षिण धाइ ॥ १ ॥ (भक्तमाल)

"दुष्टी अशन्नू[2] वेद छिन्नू बहु रुदन्नू अज्ज ए" ।
हा हा विषन्नू[3] हुय प्रसन्नू धारि तन्नू कज्जे[4] ए ।
"मच्छा हय्ग्रीवूँ[5] भक्ति सीवूँ निगम कीवूँ ठाम ए" ।
ऐसा गोविंदू० ॥ ९ ॥

(हयग्रीवावतार की कथा)

(१) दुष्ट शंखासुर ब्रह्माजी से वेद छीनकर लेगया । जब ब्रह्माजी ने हाहाकार कर बहुत रुदन किया तब भक्तिके सीम विष्णुनारायण प्रसन्न हो उनके कार्य के वास्ते हयग्रीव अवतार धारण कर वेदों को पीछा ला ब्रह्माजी के सुपुर्द किये ।

---

१ इस छन्दमें दो कथाएँ हैं । २ अशन=भोजन । ३ विष्णु । ४ काज=कार्य । ५ हयग्रीव ।

(मच्छावतार की कथा)

(२) इसी प्रकार किसी कल्प में मच्छावतार धारण कर राजा सत्यव्रत को उपदेश दे वेदों को ला ब्रह्माजी को सौंपे ॥ ९ ॥

(श्रीमद्भागवतस्कंध ८ अध्याय २४)

वरदान पाए शिव रिझाए भस्म भाए विक्करू[1]।
महा कष्ट पाए ऊठ धाए दीन थाए शंकरू।
शिवा[2] स्वाए आप आए हत्यो ताए छामँ[3] ए।
ऐसा गोविंदू० ॥ १० ॥

(महादेवजी और भस्मासुरकी कथा)

भस्मासुर नामक असुर ने महादेवजी को रिझा कर मनभावता विकराल वरदान प्राप्त किया। वाद में शंकर उस भस्मासुर से महाकष्ट पाकर दीन हो उठ भागे तब भगवान् आप आकर पार्वतीका रूप बना उसे छल तत्क्षण उस दुष्ट को मारडाला।

शकुनीके पुत्र वृकासुर उपनाम भस्मासुरने नारदजी के कहने से शरीर को अग्निमें होम आशुतोष महादेवको प्रसन्न कर क्रूर वरदान मांगा कि जिसके शिरपर हाथ धरूं वही भस्म होजाय। भोलेनाथने कह दिया तथास्तु। तब तो उस दुष्टने शिव ही पर हाथ फेरना चाहा। वरकी परीक्षा होजाय और पार्वती भी हाथ लग जाय। अब तो भगे कैलासपति वह भी लगा पीछे। इस तरह से शंकरको दुखित देख भगवान् पार्वतीका रूप धारण कर बोले प्यारे वृक! कहां जारहाहै? मैं तो कबकी तेरी इंतजारीमें खड़ी हूं। वह मोहित हो हाथ ऊँचा कर नाचने लगा। हाथ शिरपर आते ही बस मुआमिला खातमा उसके भस्म होने से महादेव प्रसन्न हुए। प्रभु ने कहा हेभोलेशंभो! ऐसा वरदान दुष्टों को मत दिया करो। इति।

क्रीडा समंदू[4] गज्ज अंदू ग्राह फंदू रख्ख ए।
करप्यो गयंदू डूब जिंदू[5] शूंड मंदू[6] सख्ख ए।
ररो कहंदू हरि हरंदू मेटि द्वंदू त्रामँ[7] ए।
ऐसा गोविंदू० ॥ ११ ॥

---

१ विकराल=भयानक। २ पार्वती। ३ छिन=क्षण। ४ समुद्र। ५ जिंद=शरीर। ६ मध्य। ७ दुःख।

(गजेन्द्र की कथा)

जब गजेंद्रनें क्रीडार्थ समुद्रमें प्रवेश किया तब ही ग्राहने फंदा रचकर गजेंद्र को अंदर खीचा। शरीर डूब गया। केवल शूंडमें ही सचाई रही। उस समय गजेंद्र ने ररररर ऐसा पुकारा। पुकार सुनते ही हरि अवतार धारण कर उसके कष्ट को हर लिया और गजग्राह के परस्पर का क्लेश मिटाकर दोनों को परम धाम दिया।

कवित्त।

पोढे निज भौंन में सुथान में कृपानिधान एते गज दीन बानि परी आन कान में।
ऊठत ही अचान कमला हू न पाए जान एक पानि चक्र उपधान एक पान में॥
ताही अवसान तजे तारक पयान में स दौरिबे अपान प्रेन्यो चक्र कौं अगानमें।
ग्राह गज तान में न कीनी ढील आन में हकारभो सुबान में रकार भो विमानमें॥१॥

दोहा।

हरे चरैं तापहि बरे, फरे पसारहिं हाथ।
तुलसी स्वारथ मीत जग, परमारथ रघुनाथ॥१॥
वडे दीनको दुख सुनत, देत दया उर आन।
हरि हाथी सूं कब हुती, कहु रहीम पहिचान॥२॥ (भक्तमाल)

द्विज भयो वेल्लू[1] अजामेल्लू कामकेल्लू वाम ए।
जमदूत खेल्लू काल वेल्लू[2] कंठ मेल्लू ग्राम[3] ए।
सुत हेत हेल्लू नामलेल्लू कर उबेल्लू[4] साम ए।
ऐसा गोविंदू०॥१२॥

(अजामिल की कथा)

एक अजामिल नामक ब्राह्मण वेश्या के साथ काम क्रीड़ा में बडा विह्वल होगया था। जब अंत के समय में जमदूतों ने आकर अपना खेल खेला ही। तब कंठ के मिलते हुए ग्राम से अर्थात् दबे कंठ से पुत्रके वास्ते हे राम नारायण! ऐसा नाम लेकर हेला किया तब राम महाराजने उसको जमदूतों से बचाकर परमधाम दिया।

कवित्त।

कीटन पै भृंग जैसे भृंग पै विहंग जैसे विपुल विहंग पै ज्यों वाज जोरवार है।
वाजपै ज्यों मारजार मारजार पै ज्यों स्वान स्वान पै तॅरक्षु[5] तापै गज मतवार है॥

---

१ विह्वल। २ वेला=समय। ३ स्वर। ४ उबारना। ५ जरख।

गज पर सिंह जैसे सिंह हू पै सारदूल सारदूल हू पै जैसे सरभ उदार है।
सरभ पै जैसे नरसिंह भाखै रघुराज पापन पै तैसे हरिनामको उचार है ॥ १ ॥

दोहा।

शक्ति जिती हरिनाम में, पापदहन की होय।
तेतौ पातक पातकी, करि न सकत जग कोय ॥ १ ॥ (भक्तमाल)

लाखा गृहाए जालदाए पांडुमाए राख ए।
द्रोही खपाए समर साए विजैताए भाख ए ॥
दोषण सिटाए पुराण गाए सखा स्वाए भामं ए।
ऐसा गोविंदू० ॥ १३ ॥

(पांडवों की कथा)

दुर्योधन ने पांडवों को लाखागृह के अंदर जलादेने में बडी कोशिश की, परंतु जिन श्रीकृष्ण ने माता सहित पांडवों की रक्षा की और समर में स्वयं सहायक हो शत्रुओं को खपाकर विजय करवाई, और कुंड गोलक आदि दोषण मिटा जिन पांडवों की कीर्ति पुराणों में विख्यात की। देखो जिन कृष्ण महाराज की कृपालुता कि अर्जुन सखा तो था ही, परंतु इसके सिवाय आपने अर्जुन को अपनी बहन सुभद्रा परणाकर अपना बहनोई[1] भी बना लिया। धन्य है प्रभु धन्य है आपकी दयालुता को।

(भक्तमाल)

सभ्भा मँझारी दुष्ट ख्वारी कर उघारी काज ए।
हा हा पुकारी पांडु नारी लाज म्हारी आज ए।
अम्बर[2] वधारी प्रीति पारी कष्ट टारी बाम ए।
ऐसा गोविंदू० ॥ १४ ॥

(द्रौपदीजी की कथा)

सभा के बीच दुष्ट दुःशासन ने द्रौपदी को बेइज्जती के साथ उघाड़ी करना चाहा, उस समय आर्त नाद से द्रौपदी ने पुकारा (अर्जी स्वीकारो स्नेही सांवरिया करुणासिंधु मुरारी) हे प्रभो! मेरी लाज आज की ही है अर्थात् आज लाज चली जायगी। तब आर्तहरण दीनदयालु ने प्रीति पालने के लिये वस्त्र वधार कर द्रौपदी का कष्ट टाला।

---

१ बहिनोई। २ वस्त्र।

कवित्त ।

कोई ना सगैया कोई बात ना कहैया कोई गति ना पुछैया ओरहू को ना तकैया है ।
वादि मे सहैया हाय दैया न गोसैंया कोई सुखको देखैया नहीं सीखको दिवैया है ॥
द्रौपदी विचारै रघुराज आज जाती लाज सव है खरैया पै न टेर को सुनैया है ।
विपति हरैया मेरी पतिको रखैया एक द्वारिका बसैया वलभद्रजीको भैया हैं ॥ १ ॥

सवैया ।

एकहि आश भरोस है एकहि एकहि है बल विक्रम मेरे ।
एकहि जोग संजोग है एकहि और कुरोग कुजोग घनेरे ॥
त्रास को नास को सोच कछू नहिं एकहि सोच लगै हिय हेरे ।
संकट में रघुराज दयानिधि आये नहीं हरि द्रौपदि टेरे ॥ १ ॥

कैधों पुकार गई उतलों नहिं कैधों विचार्‍यो नहीं निज दासी ।
सेवक की सरनाई तजी किधौं की करुनाई ते ह्वैगे निरासी ॥
हाय हरी तुम कैसे भये निठुराइ कहां यह पाइ है खासी ।
द्वारका वासि सुनो रघुराज न लागति लाज जो होयगि हांसी ॥ २ ॥

कवित्त ।

गिरिगई गरुई गदा धों गिरिधारीजू की कैधों कौनो जंगमें सरंग कहूं लै गयो ।
कुंठित भयो है खड्ग मोथरा कै चक्रभयो कैधों गरुडासनको गरुडहू ख्वैगयो ॥
एरे दई कैसी भई दया धों विसारी दई मेरी ना पुकार गई नाथ काह ज्वैगयो ।
रघुराज कैधों आज द्वारिका विलासीजूको विरद वखान हाय हांसी हेत ह्वैगयो ॥ २ ॥

दोहा ।

अस विचारि मन में विलखि; दोऊँ हाथ उठाय ।
कृष्णा कृष्ण पुकारती, कहाँ गये हरि हाय ॥ १ ॥

कवित्त ।

जानतीहूं जियमें जरूर मशहूर यह कुरु कुल संतति विशेष वधि जावैगी ।
परम प्रचंड चक्र चपल चलाइ जीति दैहौ सब राजि धर्मराज की कहावैगी ॥
ऐहो दोरि द्वारिका ते द्वारिका विलासी वेगि रघुराज पांडुपुत्र कीर्ति छिति छावैगी ।
फेरि पछितैहो मोहि बहुत बुझैहो जदुराज लाज गए पुनि लाज नहिं आवैगी ॥ ३ ॥
"जायगी लाज तुम्हारी रे नाथ मेरो क्या विगरैगो" ।

कवित्त ।

दुर्जन दुशासन दुकूल गह्यो दीनबंधु दीन ह्वैकै द्रुपददुलारी यों पुकारी है ।
छाँडे पुरुषारथको ठाढ़े पति पारथ से भीम महा भीम ग्रीवा नीचे करिडारी है ॥
अम्बर ज्यों अम्बर अपार कियो वंशीधर भीषम कर्ण द्रोण शोभा यों निहारी है ।
सारी मध्य नारी है कि नारी मध्य सारी है कि सारी है कि नारी है कि सारीही की नारीहै ॥४॥

कवै आप गयेथे विसाहन वजार वीच कवै बोलि जुलाहा वनाये दर पटसे ।
नंदजी की कामरी न काहू वसुदेवजू की तीन हाथ पटुका लपेटे रहे कट से ॥
मोहन भनत यामें रावरी वडाई कहा राखलीनी आन वान ऐसे नटखट से ।
गोपिनके लीने तब चीर चोरि चोरि अब जोरि जोरि देन लागे द्रौपदीके पटसे ॥ ५ ॥

दोहा ।

त्राहि तीनि कहि द्रौपदी ऊँच उठायो हाथ ।
तुलसी कियो इग्यारहों वसन वेष यदुनाथ ॥ २ ॥
कहा करै वैरी प्रबल जो सहाय रघुवीर ।
दश हजार गज बल हर्‌यो घर्‌यो न दशगज चीर ॥ ३ ॥ (भक्तमाल)

ईक द्विज दीनू रोरं[2]भीनू प्रीति कीनू कान ए ।
मन वांछ लीनू पुर नवीनू अभय दीनू दान ए ।
"धिन सुरतदेवूं भक्तिसेवूं सिद्ध सेवूं काम ए" ।
ऐसा गोविंदू० ॥ १५ ॥

(सुदामाजी की कथा)

(१) एक सुदामा नामक दीन दरिद्र ब्राह्मण ने श्रीकृष्णचंद्र महाराज से प्रीति कर मनवांछित वस्तु पाई और जिन दयालु ने अपने मित्र के लिये सुदामा नामक नवीन पुरी देकर अभय दान दिया ।

कवित्त ।

आवति है लाज भारी जात वृजराजजू पै वसन समाज देखि खरो मरजाइये ।
एकही पिछोरी सोतो ठोर ठोर फाटि रही ओढिये निशा कों जासें प्रात उठ न्हाइये ॥
भेट ऐसी नाहिं जो लेजैये भगवंतजू पै अन्तक भई है नारि कोलौं समझाइये ।
देह पर मांस जोलौं नासिकामें स्वांस तोलौं वडी उपहास माँगि मिंत न सताइये ॥ १ ॥

सवैया ।

हे करतार हों तोसों कहों कवहूं नहिं दीजिये काहुके टोटो ।
और लिखो जनि काहुके भागमें मित्रके काज महीप निपोटो ॥
तूहू तो जानत है अपने जिय मांगिवेतें कछु और न खोटो ।
जो गयों मांगन तू बलिद्वारपें याहितें हैगयो बावन छोटो ॥ १ ॥
"मति मांगि मति मांगि जाको नाम मांगना"

---

१ इस छन्दमें दो कथा एँ हैं । २ हुल्लड, दरिद्र ।

कवित्त।

प्यारीको बिलोकत ललोहै कंज लोयनसों प्यारी पान दैन करकमल उठायो है।
चितवहिं चारों ओर ओचक ही आन परे चारु चख द्वार पैं सुदामा जहँ ठायो है॥
भूलिगयो खान पान भूलिगयो प्यारी नारी उठ्यो परयंकते अनंद अधिकायो है।
मेरो मीत आयो अरी मेरो मीत आयो अरी मेरो मीत आयो ऐसे गाय मुख धायो है॥ २॥

सवैया।

कैसे विहाल बिवाइनसों पग कंटक जाल गडे पुनि जोये।
हाय महादुख पायो सखा तुम आये इते न किते दिन खोये॥
देखि सुदामा कि दीन दशा करुणा करिके करुणानिधि रोये।
पानि परातको हाथ छुयो नहिं नैंननके जलते पग धोये॥ २॥

कवित्त।

बृजमें यशोदामैया मंदिर में माखन औ मिश्री मही मोहन त्यों मोदक मलाई है।
खायो मैं अनेक वार तैसे मथुरामें आय व्यंजन अनेक मोहि जननी जिवाँई है॥
तैसे द्वारिकामें यदुवंशिन के गेह गेह सहित सनेह पायो भोजन मैं लाई है।
रघुराज आजलों त्रिलोकीहूमें मीत ऐसी राउरके चाउरते पाई ना मिठाई है॥ ३॥
"नरलोक नागलोक नगलोक नाकलोक थोक थोक कांपे हरि देखि मुसकातही।
हालो परेउ हालन में लालो लोकपालन में चालो परेउ चक्रिन में चिउरा चबातही॥"
विदा करि दीनो द्विज प्रगट न कीनो कछु मेटि भुज चल्यो मन में विषाद भायो है।
याही तें उदास प्रभु पास न रहन पायो याही तें सुखी हों मोहि कछु न दिवायो है॥
एक दुख भारी मेरी ब्राह्मणी है खुटसारी ताहू को तो उतर मैं सरस बनायो है।
मैं जु निधी पाई ही सो राह में छिनाई काहू मो विन हमारो सब कुटुंब बुलायो है॥ ४॥

दोहा।

यहि विधि दुजवर मन गुनत, हरषत लटपट पाय।
चलत चलत झटपट निपट, गयउ ग्राम निज काय॥ १॥

कवित्त।

कौनके हैं मंदिर मनोहर विराजमान कैधों मघवा न ल्यायो औनि अमरावती।
कैधों अवनी तलतें अति अकुलाय भोगी लाये भोगवती अवनी पै छबि छावती॥
मदन सदन कैधों मायाको वदन कैधों रघुराज कैधों हैं धनेस अलकावती।
आनंद विबस भयो मोहि भ्रम मारग को किधौं आयो फेरि मैं ही मुरकि द्वारावती॥ ५॥
(गुलगुली गिलमें गलीचा हैं गुनीजन हैं चांदनी हैं चिक हैं चिरागनकी माला हैं।
कहै पदमाकर हैं गजक गिजाहू सजी सय्या हैं सुरा हैं और सुराही हैं सुप्याला हैं॥

---

१ सुरा=सुगन्ध.

सिसिर के पाला को न व्यापत कसाला तिन्हैं जिनके अधीन एते उदित मसाला हैं।
तान तुक ताला हैं विनोदके रसाला हैं सुवाला हैं दुसाला औ विसाला चित्रसाला हैं ॥६॥)

"मंदिर देख डरे हो सुदामा मंदिर देख डरे हो"

कवित्त।

याहीते जनमभरि गयो नहिं श्यामजू पै पँडाइनि मेरो कह्यो वाक्य नहिं माने हो।
जाहु जाहु ले रही न मानती अनाज खाय ऐंडी मेंडी वातें मैंतो गोविंदकी जाने हो ॥
द्रौपदीको चीर दिये गोपिन के छीन लिये ग्राह ते बचायो गज रंगभूमि भाने हो।
ब्राह्मणी समेत कहूं खेत तें उपार्‍यो घर यात हूं वचायो वाको कह्यों मैं न माने हो ॥ ७॥
रह्यो याहि ठांउ मेरो गांउ नांउ मेरेही को, दीन्हों को निकार मेरे निकट वसैयाको।
हाय कोई आइ इते पापी क्षितिराइ लूटि लीनो मेरो ग्राम लाय तापी है मढ़ैयाको ॥
विरंचि निकेत इते साहिबी समेत वस्यो कहाँ गइ ह्वैहै कैसे पाऊ मैं लुगैयाको।
कौन फरियाद सुने कौन मेरी याद करे कैसे गोहराऊं दूर द्वारका कन्हैयाको ॥ ८ ॥
चौंतरा उजारि काहू चामीकर[1] धाम कीनों छानतो छवाय डारी छाई चित्रसारीजू।
जो हों होतो घर तोपै काहेको वनन देतो होनहार ऐसी खोटी दशाही हमारीजू ॥
होंतो होतो काहल हलाहल दिखाय करि जाहल उठाइ देतो देइ मुख गारीजू।
लोभकी संवारी दुख भूखकी दलनहारी भैया वनवारी काहू सोऊ मार डारीजू ॥ ९ ॥
आलिन के यूथ ज्यों ज्यों आदर से बोले आय त्यों त्यों डर पाय पग आगेको न देत है।
पंडित न ज्योतिषि न वैद्य वा न कौतुकी हूं रानी जो बुलावति है कहो कौन हेत है ॥
द्वारिका के राजाते मिलेतें घर छीनोगयो रानी कहा छीनेगी फल्यो न मेरो खेत है।
मोसो कहा नातो तुम जाइ कहो वातें मोहिं भूलि न सुहातो कोऊ ऐसे परलेत है ॥ १० ॥

दोहा।

भौन द्वारते निकसिके, आई तिय पिय पास।
फैल रह्यो दशहू दिशन, कोटिन चंद्र प्रकास ॥ २ ॥ (भक्तमाल)

(श्रुतदेवजी की कथा)

(२) भक्ति के मर्म को जाननेवाला धन्य है श्रुतदेव कि जिसने भगवत-सेवा कर अपना मनोरथ सिद्ध किया।

(भक्तमाल)

विदुर सदाई प्रेममाई भक्तिभाई शुद्ध ए।
छिलका खवाई वाह लुगाई प्रसन्नताई तद्दए।
राजा भुँजाई तजी साँई यहाँ न लाई दाम ए।
ऐसा गोविंदू० ॥ १६ ॥

---

1 चामीकर=सुवर्ण.

(विदुरजी की कथा)

विदुरजी सदैव प्रेम में मग्न होकर शुद्ध भक्ति किया करते थे। उनकी स्त्री विदुरानीजी ने भगवान को केलों के छिलकों का भोजन करवाया, तब प्रसन्न हो विदुरजी की स्त्री के तांई वाह लुगाई अर्थात् धन्य है तू इस प्रकार आपने प्रसन्नता दी। आहा हा जिन प्रभु ने राजा दुर्योधन के यहां छप्पन प्रकार के अमूल्य पकवानों को छोडा और विदुर के घर छदाम की कोड़ी भी न लगाकर छिलकों का भोजन किया।

दोहा।

अहह! भइउँ मैं बावरी, रही न तनु सुधि नेक।
ऐसी सुधि भूली कि नहिं, छिलका सार विवेक॥ १॥
कह्यो विदुर सों तब हरी, ये छप्पन पकवान।
मिष्ट मोहि लागत नहीं, वे छिलका न समान॥ २॥
ततवेत्ता तिहुँलोक में, भोजन किये अपार।
कै शबरी कै विदुर घर, रुच पाये दोय बार॥ ३॥

कवित्त।

ठानी मिझमानी जब दुर्योधन माधव की बाजी गजराज निजरानें को वने रहे।
पालक पिछौने रचे मोति मनिमाल खचे चौकन में चंदसे वितान हू तने रहे॥
नारी छत्रधारिन की गारी तहां गायवे कूं आई दर्शकाज नृप चाहत घने रहे।
छोड पाक घीके प्रभु राजी शाक हीके जीके विदुर घरनीके नीके नेहमें सने रहे॥ १॥
आपनी विभूति को दिखावे दूनो दोर शोर गाजे और वाजे सहसाजे गजबाजी कौं।
गुलके गलीचे विछे अतर सुगंधि सिचे शालिग वगीचे बनवाये जो मिजाजी कौं॥
चारि विधि पाक रचि नौंते कृष्णचन्द्रजू कौं तौपै दुर्योधन की देखि दगावाजी कौं।
त्यारी तजि ताजी तर विदुर पधारे घर भूरि भये राजी यदुराज भखि भाजी कौं॥ २॥

दोहा।

भावंते की लात भलि, अण भावत को नेह।
कोने काम कमालिया, फागण वूठो मेह॥ ४॥
मान सहित मरिबो भलो, जो विष देत बुलाय।
अहमद अमी न पीजिये, आदर विना अघाय॥ ५॥
दादू आदर भाव का, मीठा लागै मोठ।
विन आदर व्यंजन वुरा, जीमण वाला ठोठ॥ ६॥ (भक्तमाल)

भीषम सखंत्तू अडिग मत्तू गही अत्तू राख ए।
आयु²द्ध हत्तू भक्तपत्तू दर्शदत्तू पाख ए।
मेले मुकत्तू रामरत्तू गोपगत्तू गाम ए।
ऐसा गोविन्दू० ॥ १७॥

(भीष्म पितामह की कथा)

जो भीष्मजी ने दृढ अचल प्रतिज्ञा की थी वह अंत में रखली । उनकी प्रतिज्ञा सत्य रखने को भक्तपति भगवान ने शस्त्र हाथ में धारण कर समीप में जा दर्शन दिया। और रामरतभक्त जिस गोप्यगति (मुक्ति) में प्राप्त होते हैं तिस मुक्ति में भीष्मजी को भेजे।

पद।

जो मैं सुरसुरि सुवन कहाऊँ तौ प्रण सभा मध्य अस गाऊँ ॥
कौरव पांडव बीच दुहूं दल हरि पूजन अस ठाऊँ ॥ १ ॥
शोणित कणन न्हवाय नाथ कों रण रज बसन उढाऊँ ॥
पांडव सेन मारि गोविंद अंग चंदन कोप चढाऊँ ॥ २ ॥
विविधि वरन को विपुल विकासित विशिख माल पहिराऊँ ॥
सनमुख शत्रु संघारि सहस्रन कीरति सुरभि सुँघाऊँ ॥ ३ ॥
तबहि त्रिविक्रम को तुरंत तहँ विक्रम दीप दिखाऊँ ॥
पारथ सखा समीप जायके प्राण निवेद लगाऊँ ॥ ४ ॥
सकल जगत तें खैंचि प्रीति की वीरी आजु खवाऊँ ॥
विजय बात चलवाय समर महँ जय दक्षिणा दिवाऊँ ॥ ५ ॥
रथसों रथ मिलाय माधव को ध्वज चामरहिं चलाऊँ ॥
नख सिख निरखत रूप अनूपम नैंन निरांजन लाऊँ ॥ ६ ॥
वार वार ध्वनि दंड प्रत्यंचा धनुषहि बाज वजाऊँ ॥
रथ मंडल करि दे परदक्षिण उर आनंद उपजाऊँ ॥ ७ ॥
जदुवर कर सों आज अवशि मैं चक्र प्रसादहि पाऊँ ॥
अर्जुन सर पंजर जंजर है गिरि सनमुख शिर नाऊँ ॥ ८ ॥
यहि विधि रण प्रभुको करि पूजन त्रिभुवन में जस छाऊँ ॥
श्रीरघुराज कृपा हरि की लहि वरबस हरिपुर जाऊँ ॥ ९ ॥

पद।

जदुपति फिरि फिरि हाथ पसारी।
वार वार अर्जुनहि डोलावत माखत वदन उचारी ॥

---

१ सख्त । २ आयुध=शस्त्र ।

धा मरि गये किधौं जीवत हो बोलहु आंख उघारी ।
कहत रहे अस वचन सभामहँ मैं गांडीवहि धारी ॥
दंड द्वैक महँ कौरव दल को करिहौं अवसि सँहारी ।
सो प्रण की सुधि भूलि गये अब कत दीन्हो धनु डारी ॥
उठहु उठहु अब चेत करहु तन तेरी बहु बडबारी ।
आजु पांडव कुलकी मरजादा लगी तोहि महँ सारी ॥
धर्म भूप तव बल चढ़ि आयो दै दुंदुभि प्रचारी ।
होत शिथिल अब तोहिं समर महँ को करिहैं रखवारी ॥
कादर सरिस शिथिल निरखत तोहि विलखत बुद्धि हमारी ।
कैसे के अस विक्रम महँ जग कीरति चली तिहारी ॥
सखा साँच हमसों तुम भाखहु भलकै मनहि बिचारी ।
किधौं निजै अभिलाख अहै कछु किधौं मानि लिय हारी ॥
जामें जीत होइगी तुम्हरी सोइ मति करन हमारी ।
श्रीरघुराज तोहि सम मेरे कौन मीत हितकारी ॥

पद ।

धावत आवत सन्मुख हरिको भीषम निरख परम सुख पाग्यो ।
तजिबो विशिख बंध कर दीन्हो, अनिमिष सुषमा निरखन लाग्यो ॥
दोउ कर जोरि हुलस करि बोल्यो मुख, धन्य धरा मँह मोहि करदीनो ।
निज जन जानि दयानिधि निज प्रन टारि मोर प्रण पूरण कीनो ॥
आवहु आवहु अब न रुको कहुँ मारहु चक्र अवसि मोहि काहीं ।
बिते सातसे संवत जग में अस अवसर हौं पावों नाहीं ॥
समर मरण अस पुनि तव सन्मुख पुनि तव चक्रहितें जो पाऊं ।
तो सुर असुर चराचर देखत हौं वैकुंठ निसान बजाऊं ॥

श्लोक ।

एह्येहि देवेश जगन्निवास नमोस्तु ते शार्ङ्गगदासिपाणे ।
प्रसह्य मां पातय लोकनाथ रथादुदग्राद्भुतशौर्य संख्ये ॥ १ ॥
स्वनिगममपहाय मत्प्रतिज्ञामृतमधिकर्तुमवप्लुतो रथस्थः ।
धृतरथचरणोऽभ्ययाच्चलद्गुर्हरिरिव हंतुमिभं गतोत्तरीयः ॥ २ ॥

कवित्त ।

करीही प्रतिज्ञा अश्वप्रेरक प्रतोद विना लोहक छुऊं न युद्ध आदि की कहानी है ।
ताहि को विसार चक्र स्यंदन को धारि चले भीषम पैं ताहीवार रसा अकुलानी है ॥

ताहि समुझायवेकूं कटितें खुल्यो है पट धूज मत दास की प्रतिज्ञा उर आनी है।
पटको यो अभिप्राय बडे लोग झूठ बोलै ताको संग छोडि देवो नीतिकी निसानी है ॥१॥
(भक्तमाल)

आँवा न झाल्‌ू अस्सराल्‌ू वीच बाल्‌ू सिन्न ए।
राख्या दयाल्‌ू "मृग्गबाल्‌ू अरी काल्‌ू हन्न ए"।
"खेचर कराल्‌ू समर जाल्‌ू रखे बाल्‌ू जाम ए"।
ऐसा गोविंद० ॥ १८ ॥

(सिरियादे की कथा)

(१) आंवेके बीचमें मिन्नीके बच्चोंको जिस दयालुने रखलिये कराल ताप उन कों विलकुल न लगने दी।

दैत्य हिरण्यकशिपुके नगरमें रामनाममें टेक वाली सिरियादे नामक एक कुलाल की स्त्री रहती थी उसके खिड़के हुए नावड़े में मंजारी ने बच्चे देदिये, और यह थी अज्ञात, धोके में अग्नि लगादी तब तो अग्नि की ज्वाला से बिल्लीका तड़फड़ाट व बच्चों का विलविलाट देख आँवे के चौतरफ रामनाम की कार लगादी इस वार्ता को प्रहलादजी देख रहे थे आँवा के ठंडे होते हुए देखते हैं तो बच्चे खेल कर रहे हैं। बस प्रहलादजी को वही रंग लग गया। और वह सिरियादे विश्वासु रामभक्तों में अग्रगण्य हुई। इति।

(मृगबाल की कथा)

(२) मृग के बच्चो को बचाने के लिये शत्रुरूपी काल को जिन परमात्मा ने नाश कर दिया।

छोटे छोटे मृगबालकोंपर एक व्याध ने बडी घात विचारी एक तरफ तो फाँसी विछादी दूजी तरफ श्वान झुकादिये तीसरी बाजू अग्नि लगादी चौथी दिशमें आप धनुष पर बाण चढाके बैठ गया। इस समय में उन अनाथ बच्चों के दीनदयालु प्रभु के सिवाय कौन रक्षक हैं बालकों की विनय सुनते ही जगत्पिता ने अग्नि से तो फांसी जलादी और वर्षा से अग्नि बुझा दी इधर सर्प के डसने से व्याध मरगया मरते हुए व्याध की मुट्ठी खुलने से बाण छूटा उस से कुत्ते हतोराम, बस मृगबाल निर्भय होगये। वाह वाह धन्य है कैसी भगवत् ने रक्षा की है। इति।

(टीटोड़ी की कथा)

(३) महाभारत के कराल समर जाल में टीटोड़ी की "विट्टिट्टि किटीवीटी टिवी टिभ" ऐसी पुकार सुन तत्क्षण गजघंट डार उस के बच्चों को जिस जगत्पिता ने बचालिये। इति।

---

१ इसछन्दमें तीन कथाएँ हैं।

आरत्ति हरणू अभय करणू नमो शरणू सत्त ए।
ऐसा अकरणू अतिरतिरणू वेद वरणू नित्त ए।
हम व्याधि जरणू धरा धरणू वचन फुरणू[1] काम ए।
ऐसा गोविंदू० ॥ १९ ॥
नमो नमामी अँतर्यामी सर्व स्वामी सृष्टि ए।
वंदौं सदाई सुखदाई चित्त आई इष्ट ए।
अन्नाथनाथाँ सदा साथाँ तोहि हाथाँ हामे[2] ए।
ऐसा गोविंदू० ॥ २० ॥

हे आर्तिहर! हे निर्भय करनेवाले!! हे सत्य शरण!!! आपको नमस्कार हो। आप अकर्ता हैं। और अधम उधार हैं। ऐसा आपका नित्य वेद वर्णन करते हैं। हे धराधर! मैं व्याधि से जलरहा हूं। तिस व्याधि के निवृत्तिरूपी कार्य में आपका वचन सत्य हो। हे अंतर्यामी! हे सर्वसृष्टि के स्वामी! आपको वारंवार नमस्कार हो। मैं सदैव आपकी वंदना करता हूं। आप सुखदायक हैं। मेरे चित्तमें यही प्रिय है। हे अनाथों के नाथ! सदैव आप मेरे साथ हैं मेरी उमंग आपके हाथ है।

दोहा।

जैसे सूतर पूतली, चित्रकार चित्राम।
मैं अनाथ ऐसे सदा, तुम इच्छा सोइ राम ॥ १ ॥

जैसे कठपुतली डोरी के आधीन है, जैसे चित्र चित्रकार के आधीन है तैसे सदैव मैं अनाथ आपके आधीन हूं। हे रामजी! जैसी आपकी इच्छा हो वही करैं।

खलखायक साहिक जना, दीनबंधु देवाधि।
घालबाल शरणागती, तुमसे पति हम व्याधि ॥ २ ॥

हे खलभक्षक! हे जनरक्षक दीनबंधु!! देवाधिदेव!!! यह घालबाल आपके शरणागत है। आप जैसे तो पति और मैं व्याधिग्रसित भला यह कैसे हो सकता है।

सहायक विश्वावीस हरि, गायक वेद पुरान।
लायक पायक शरण सुख, यह तव नीति निधान ॥ ३ ॥

वेद पुराम गाते हैं कि लायक जो पायक कहिये सेवक है उसकी वीसही विश्वा पूर्णरीति से हरी सहायता करनेवाले हैं। शरणागत को सुख देना यह आपकी नीति है। क्यों कि सब के आप आश्रय हैं।

---

१ फुर=सत्य। २ हौंस।

जुग जुग योही आसरो, तुम रक्षक महाराज।
तारण विरद अनादि तव, यह मेरो अब काज॥ ४॥

जुग जुग में यह एक आपका ही आश्रय है। हे महाराज! आप रक्षक हैं। भक्तजनों को तारणा यह एक आपका अनादि विरद है तो अब मेरा यह कार्य है क्यों ढील करते हैं।

छंद सारसी।

कांज मेरो तुमे चेरो मेटि झेरो[3] दरद ए।
करि है न हेरो शरण केरो सदा लेरो विरद ए।
"नामा न घेरो सदँन फेरो गउ उबेरो साज ए।"
भक्ती वधारू विरद वारू संत सारू काज ए॥ जी संत०॥ १॥

मेरा कार्य है और मैं आपका दास हूं। नेत्रों के दरद करके जो मैं कायल होगया हूं सो इस दरद को मिटाओ। प्रभो! मेरा हेरा (पीछा) मत करो अर्थात् मेरी करणी मत देखो (मति देखो करणीं हमारी राज लेखो विरद मुरारी) सिवाय आपके मेरे दूसरा किसका शरण है? मेरे तो सदैव आपही का विरद (वाना) है।

(नामदेवजी की कथा)

नामदेवजी को नहीं घुमाया किन्तु मंदिर को फेर दिया और उनके लिये गऊ को उबारा इत्यादि आपने भक्त की विजय करवाई, क्योंकि आप भक्ति के वधारनेवाले हो। विरद की वार (सहायता) करनेवाले हो और संतों के काम सारनेवाले हो।
(भक्तमाल)

जमुना गेहीरू झड़ जँजीरू झाल खीरू ना जले।
बालद[4] वहीरू धर शरीरू नीर नीरू हरि मिले।
निर्भय कबीरू ब्रह्मधीरू शर्ब्दसीरू[6] गाज ए।
भक्ती वधारू०॥ २॥

(कबीर साहबकी कथा)

जिन कबीर साहब के गहरी[5] जमुनाजी के बीच में जंजीरें झड़गई, तथा

---

१ जीव जीव के आसरै, जीव करत है राज।
तुलसी रघुवर आसरै, क्यों विगड़ेगो काज॥ १॥
२ इसछन्दमें दो कथाएँ हैं। ३ झेर=कायल। ४ घर। ५ गहरी। ६ शब्दसीर=वाणी।

खीरों की झाल में नहिं जले, तथा उन कबीर साहब के लिए आपने शरीर को धारण कर बालद वहीर (विदा) करदी, वह कबीर साहब अंतमें नीरमें नीर मिलै ऐसे हरि में मिलगए। ब्रह्ममें स्थिर ऐसे जो निर्भय कबीर ताकी जो शब्द सीर (वाणी) वह आजपर्यंत गर्जना कर रही है।

साखी।

कबीर राम नाम के पटंतरै, देवा कूं कुछ नाहिं।
क्या ले गुरु संतोषिये, हौंस रही मन माहिं ॥ १ ॥
कबीर राम नाम छाडूं नहीं, सद्गुरु सीख दईह।
अविनाशी कूं याद करि, आतम अमर भईह ॥ २ ॥
कबीर सत्यनाम तिहुँलोक में, रामनाम ततसार।
सो विचार हिरदै धऱ्या, शोभा अनँत अपार ॥ ३ ॥
कहै कबीरा मैं कथा, ब्रह्मा विष्णु महेश।
राम नाम निज मंत्र है, सबका यह उपदेश ॥ ४ ॥
कबीर कहताहूं कह जातहूं, सुणता है सब कोय।
राम कहे भल होयगा, नहिंतर भला न होय ॥ ५ ॥
कबीर आपण राम कह, औरां राम कहाय।
जा मुख राम न संचरे, ता मुख लोह जड़ाय ॥ ६ ॥
कबीर लूट सके तो लूटि ले, राम नाम की लूट।
पीछे ही पछिताहिगो, जब तन जासी छूट ॥ ७ ॥
कबीर सुपने ही बरड़ायके, जे मुख कहै जो राम।
वाके पग की पानही, मेरे तन को चाम ॥ ८ ॥
कबीर आंखड़ियाँ झांईं पड़ी, पंथ निहार निहार।
जीभड़ियां छाला पड़या, राम पुकार पुकार ॥ ९ ॥
कबीर आंख्यां प्रेमक सौंइयां, जण कह दूखड़ियांह।
रामस्नेही कारणै, रो रो रातड़ियांह ॥ १० ॥
कबीर हम तुम पें ढूंढत फिरूं, काहे मिलो न राम।
हिरदा भीतर तूं बसे, सकल तुम्हारा काम ॥ ११ ॥
कबीर सुमरण मारग सहज का, सद्गुरु दिया बताय।
सास सास संभारतां, इक दिन मिलसी आय ॥ १२ ॥
कबीर सुमरण सार है, और सकल जंजाल।
आदि अंत सब सोधिया, दूजा दीसै काल ॥ १३ ॥
कबीर ज्ञान कथे कथि मरै, काहे करै उपाय।

सद्गुरु हमकों यों कह्या, सुमरण करै सहाय ॥ १४ ॥
कबीर प्रेम विना धीरज नहीं, विरह विना वैराग ।
नाम विना पावे नहीं, मन मनसा को थाग ॥ १५ ॥
कबीर सोझी विन सुमरण नहीं, भय विन भजन न कोय ।
पारस बिच पड़दा रह्या, लोह न कंचन होय ॥ १६ ॥
कबीर कठिनाई खरी, सुमरंता हरि नाम ।
शूली ऊपर नट विद्या, गिरूं तो नाहीं ठाम ॥ १७ ॥

चरण ।

"जे कोई चाहै परमधाम को, सुणज्यो शब्द हमारा ।
दोय अंछरसे करो दोस्ती, तब उतरो भव पारा ॥"
"ररंकार से सुरत विलंबी, कोटिक सून्य दिखाई ।
या विन शब्द विशेष बतावै, ताकी मूंडूं माई" ॥
"कह कबीर सुणो हो साधो, प्रगट कहूं वजाई ।
रामनाम सो सार शब्द है, और कथन सब वाई" ॥
"रामनाम सब कोई भाखै, ता बिच बहुत विधाना ।
भज रमतीत राम सरबंगी, वेहद ब्रह्म समाना" ॥
"धरिधरि भेख ज्ञान महँ आसी, धरसी छाप हमारी ।
सत गुरु सम हुइ हुइ परमोधै, कहा पुरुष कहा नारी ॥
घर घर ज्ञान ध्यान घण होसी, घटघट वादविवादू ।
कण कूं छाड भखेगा कूकस, विरला बीज अराधू ॥"
"राम नाम सतबीज शब्द है, याकूं पूठ न दीजो ।
जे कोई वाद बकै बहुतेरा, समझबूझ चुपरीजो ॥
बेईमान बहुतेरा होसी, राजा पंडित ज्ञानी ।
जागत सोसी जन्म विगोसी, सब परजा अभिमानी ॥
वीत राग विरला जन होसी, दर्शन परसन कारी ।
सार शब्द कूं पेल चलैगा, कलिजुग भेख विकारी ॥
विन दरस्यां परस्यां विन बहुता, होसी ब्रह्म गियानी ।
वीज विनां बहु ज्ञान कथेगा, धोखे की बीसानी ॥
परजा पख दूतन की करसी, सारपखी जन कोई ।
तज जग भाव निरंतर वासा, समझ मिलेगा सोई ॥
कर्तृम उपासी करम विलासी, सो जासी जम द्वारा ।
हम करता भज करता हूवा, और न को उपकारा ॥
राम कहेगा सो निबहैगा, उलटि रहे जो गाढ़ा ।
धकाधूम बहुतेरा हैगा, रामभजन के आडा ॥"

"सहस बात की एक बात है, आदि रु अंत विचारी ।
भज रमतीत राम भव पारा, कहा पुरुष कहा नारी ॥"

साखी ।

कबीर जाके हिरदै हरि नहीं, सिख साखा की भूख ।
से नर उभा सूखसी, ज्यों दाझे दाधा रूंख ॥ १९ ॥
कबीर बात बनाय रु जग ठग्या, मन पर बोध्या नाहिं ।
वाको स्वारथ लेगया, फिर चौरासी माहिं ॥ २० ॥
कबीर कहते सो करते नहीं, मुंह के बडे लवार ।
काला मुंहडा होयगा, सांई के दरबार ॥ २१ ॥
कबीर कथनी मीठी खांडसी, करनी विषकी लोय ।
कथनी कथ करनी करै, सब विष अमृत होय ॥ २२ ॥
कबीर करनी की किरकी नहीं, कथनी कथै अपार ।
या बातां क्यों पाइये, साहिब को दीदार ॥ २३ ॥
कबीर करणी बिन कथनी कथै, अज्ञानी दिन रात ।
कूकर ज्यों भौंकत फिरै, सुनी सुनाई बात ॥ २४ ॥
कबीर एकोहं आपुहिं भयो, द्वितिया दीन्हों कॉंट ।
एकोहं कासों कहै, महापुरुष की टाँटै ॥ २५ ॥ इति ।

कोपे दुर्वासा अहूं ख्वांसा[2] हतूं दासा राज ए ।
सुदर्श[3] जासा प्राण ग्रासा कंप व्यासा भाज ए ।
सुरदेव[4] पासा भई हासा जन निवासा वाज ए ।
भक्ती वधारू० ॥ ३ ॥

(दुर्वासाजी की कथा)

बडे अहंकारी ऋषि दुर्वासा कुपित हो बोले कि मैं इस दास अंबरीष राजा को मारडालूंगा, तब जिन का दास अंबरीष है उन्हीं भगवान का सुदर्शन चक्र मुनि के प्राण का ग्राहक हुवा । जब तो व्यास (दुर्वासा) कंपायमान हो भागने लगे और उनकी तीनों देवताओं के पास बडी हांसी हुई, तब पीछा भक्त अंबरीष के निवासस्थान में ही आ वाजे अर्थात् जहां भक्त का निवास स्थान था वहां ही आकर विराजे । (भक्तमाल)

---

१ पाठान्तर टकार के स्थान में चवर्गका चतुर्थाक्षर है । २ ख्वाहिश=इच्छा ।
३ सुदर्शन चक्र । ४ तीन ।

करि यज्ञ राजू ऋषि समाजू वेद गाजू[1] गाव ए।
नहिं शंख वाजू पांडुकाजू संतराजू[2] आव ए।
ले पंच कांजू[3] भई वाजू भ्रम्म भाजू राज ए।
भक्ती वधारू० ॥ ४ ॥

(वाल्मीकजी की कथा)

गर्जना के साथ वेदोंको गानेवाले अर्थात् सामग ऋषिसमाजने राजसूय यज्ञ करवाया तो भी यज्ञ पूर्ति का शंख नहीं वजा, तब तो पांडवों के कार्य सिद्धि के वास्ते संतराज (वाल्मीकि) आते भये, जिनके पांच ग्रास लेते ही शंख की बडी आवाज होने से राजा युधिष्ठिर का भ्रम दूर होगया।

"शंख नहीं वाज्यो ताको कारण यही है भूप
आयो ना अनन्य दास एक वो हमारो है।"

कवित्त।

चाकर तिहारो और भवन तिहारो रोज, नगर निवासी है तिहारो चिरकालको।
यथा लाभ तोषी तन रोषित न काहू पै है, अदोषित अनाख भक्त त्यागे जगजालको ॥
साधुन को झूट खात खातभै विमल बुद्धि, नेही नहीं देह गेह बालक हू बालको।
जाति को श्वपच महिपाल वाल्मीक नाम, मोहिं प्राणप्यारो तुम्हें कारक निहालको ॥ १ ॥

दोहा

विप्र द्वादश कोटिको, सबको मान्यो मान।
शंख बजायो शरकरै, कोइ न काढ्यो कान ॥ १ ॥

(भक्तमाल)

प्रतिमा बुलाई साँच पाई गंग आई भवन ए।
तन में दिखाई[4] नोगुणाई जर्द साई सबन ए।
रैदास साई देह थाई जीम जाई ब्राज ए।
भक्ती वधारू० ॥ ५ ॥

(रैदासजी की कथा)

जब रैदासजी ने प्रतिमा को अपने पास बुलाली तब ब्राह्मणों को सांच पाया। तथा जिन रैदासजी के भवन में गंगा आई, और जब रैदासजी ने नवगुणाई (यज्ञोपवीत) अपने शरीर में दिखाई तब तो पीतांबर पहन पहन जितने ब्राह्मण आये थे वे तमामही नमन करने लगे, तथा भोजन के

---

१ गर्जना। २ संतराज=वाल्मीकजी। ३ कवा=ग्रास। ४ यज्ञोपवीत।

समयमें रैदासजी के प्रभाव से जिन ब्राह्मणों की देह रैदास साई होकर अर्थात् रैदास का ही स्वरूप बनकर बैठ बैठकर भोजन करगये ।

(भक्तमाल)

पीपा समर्त्थू अगम गत्तू भक्त चरित्तू नैक ए ।
इच्छा फिरत्तू सोइ सत्तू आप रत्तू एक ए ।
मृगराज कामी शिष्य स्वामी मुक्तिगामी जाज ए ।
भक्ती वधारू० ॥ ६ ॥

(पीपाजी की कथा)

अगम है गति जिनकी एसे समर्थ पीपाजी के अनेक चरित्र हैं । भक्त पीपाजी की जो इच्छा फुरती वही सत्य हो जाती और आप निज स्वरूप में रत रहते थे । देखो उत्तम कामनावाला मृगराज (सिंह) जिन स्वामी पीपाजी का शिष्य हुवा, तथा मुक्ति जानेवालों के लिये तो वह साक्षात् जहाज रूप थे ।

(भक्तमाल) 1

गायाँ चराई भातखाई रामराई रम्म ए ।
खेती निपाई पात्र माई विना वाई श्रम्म ए ।
धन्नो धनाई प्रभूताई जना गाई छाज ए ।
भक्ती वधारू० ॥ ७ ॥

(धनाभक्त की कथा)

जिन धनाभक्तके लिये रामराय ने भातका भोजन कर प्रसन्न हो गौवें चराकर खेल किया, तथा जिनके लिए श्यामने बिना ही बोई हुई उनके पात्र में खेती निपजायदी, उन धनेजी की धन्यता व प्रभुता भक्तोंकरके गाई हुई आज दिन संसार में कैसी शोभित हो रही है । (भक्तमाल)

पैतर सकुन्नू सार मग्गू जन प्रतग्गू राज ए ।
"कर माँग दग्गू जिये जग्गू दुष्ट अग्गू खाख ए" ।
"फिर अश्व अग्गू" "चढे खग्गू समर लग्गू बाँज ए ।"
भक्ती वधारू० ॥ ८ ॥

---

१ कथा थाल अन अर्थ है, घृत्त प्रसंग मिलाय ।
रज्जब ऐसी भाँतिसे, चारों वरण जिमाय ॥ १ ॥

२ कामना । ३ श्याम । ४ सूत्र=काष्ठ । ५ मार्ग । ६ वाजी=घोड़ा ।

---

1 इसछन्दमें चार कथाएँ हैं ।

(चौहान भुवनजी की कथा)

(१) चौहान भुवनजी काष्ठ की तलवार रखते थे। जब रानाजी ने परीक्षा ली तब परीक्षा के समय में म्यान के निकलते ही जिनकी तलवार वीजलसार के समान हो गई इस प्रकार प्रभु ने भक्त की प्रतिज्ञा रखी।

(अरिल्ल)

"भई तलायाँ गोठ, जुरे जहँ चक्कवै।
परचौ निज है आज्ु, खाय ह्वै लक्खवै॥
परमेश्वर पति राखि बात नहिं कहनकी।
विजुरी ज्यों तरवार चमंकी भुवन की"॥ (भक्तमाल)

(हरिभक्त ब्राह्मण की कथा)

(२) एक हरिभक्त ब्राह्मण से दुष्टों ने मार्ग में दगा किया। ब्राह्मण तो भगवत् कृपा से उसी जगह जी गया और दुष्टों के शरीर की खाख होगई।

(भक्तमाल)

(घाटम जी की कथा)

(३) घाटम भक्त के वास्ते राममहाराजने अश्व के अंग का रंग पलटा दिया। (भक्तमाल)

(जैमलजी की कथा)

(४) जैमलजी के वास्ते स्वयं आप भगवान् फौज के संग राजाके घोड़े पर चढ़ कर समर (युद्ध) को उल्लंघन करते भये अर्थात् शत्रुओं को भगाकर जैमलजी की जीत करवादी। (भक्तमाल)

नृप दुष्ट खक्खी गरल दक्खी इष्ट पक्खी सो लए।
धिन प्रेम छकी राम रक्खी निर्भै थकी बोल ए।
मीरां सरक्खी गोपि अक्खी जगत नक्खी लाज ए।
भक्ती वधारू० ॥ ९ ॥

(मीरांबाई की कथा)

दुष्ट राणे ने मश्करी[1] के साथ विषको चरणामृत कहलाकर भिजवाया तब इष्ट का है पक्ष जिनके ऐसी मीरांबाई ने उस विष को चरणामृत समझकर ले लिया धन्य है, प्रेम में छकी निर्भयथकी मीरांबाई बोलती भई कि मेरे राम रक्षक हैं।

---

१ मजाकी।

कहते हैं कि मीरांबाई गोपीके समान थी जभी तो उसने जगत लाज को छोडदी।

(मीरांबाई की सासू ने कहा कुलदेवी को शीस नवाओ)

सवैया।

पल काटो सही इन नैनन के गिरधारि विना पल अन्त निहारै।
जीभ कटै न भजै नँदनंदन बुद्धि कटै हरि नाम विसारै॥
मीराँ कहै जरि जाहु हियो पदकंज विना पल अंतर धारै।
शीश विना व्रजराज नवै वह शीशहिं काटि कुवां किन डारै॥ १॥

दोहा।

मीरां सुत जनम्यो नहीं, सिख्ख न मूंड्यो कोय।
नाम रहैगा नाम से, सुणो सयाने लोय॥ १॥ (भक्तमाल)

हुंडी माहेरो करि घणेरो सुतन केरो व्याव ए।
सभ्भा मँझारी भूप नारी लियाँ झारी आव ए।
नरसी सदारी माल थारी नीर प्यारी पा जए।
भक्ती वधारू० ॥ १० ॥

(नरसीजी की कथा)

प्रभुने नरसीजीके लिए हुंडी सिकारी, तथा उन की दोहिती के विवाह में जिन राममहाराज ने घणा (बहुत) कर माहेरा भरा, तथा स्वयं भगवान् राजा की प्यारी राणी बनकर जल की झारी ले सभा के बीच में आकर कहने लगे कि, हे नरसी! सदाकाल से यह माला तुम्हारी ही है लो पहिनो ऐसे कह जल पा गए।

दोहा।

नरसिहिं दीन्ही रीझिकै, माला नंदकुमार।
राखि लियो अपनी शरण, विमुखनि मुख दै छार॥ (भक्तमाल)

हाथी चुवाए पर्‍यो पाए असुर थाए दास ए।
पाती फिराए दरश धाए साँच आए जास ए।
दादू दयालू हुय कृपालू जीव जालू भाज ए।
भक्ती वधारू० ॥ ११ ॥

(दादू दयाल की कथा)

महात्मा दादूजी के सन्मुख हाथी छोडने पर परचा होने से पातशाह चरणों में पड़कर दास होता भया । "दादू दर्शन जो कोइ जावै तो साते मींडी एक भरावै" इस लेख पत्र के (कोई शब्द) के स्थान में (नहीं शब्द) होगया । जब इस प्रकार लेख फिरने से हज़ारों पुरुष दर्शन के लिए गए तब तो पातशाह को पूरा ही साँच आगया । ऐसे दादू दयाल कृपालु होकर अनंत जीवों के जाल को तोड़ते भए ।

सं० १६०१ को गुजरात अहमदाबाद में आपने जन्म लिया । ईश्वरस्वरूप महात्माओं के कुल का कोई कारण नहीं होता । ईश्वरने भी तो यहाँतक हद्द करदी कि मच्छ कच्छ वराह शरीर भी धारे । परंतु दादूजी महाराज ने तो उत्तम ब्राह्मणकुलमें ही शरीर धारण किया । परम दयालु परमात्मा नें बूढणरूप धारणकर सिरफ ग्यारह वर्ष की अवस्था में दादूजी को दर्शन पान प्रसाद दे अंतर्द्धान हुए तवतो ऐसी अद्भुत अनोखी झांकी को देख आपका मन मुग्ध होगया । उस दर्शन की चाट में विहल हो पद गाने लगे । (आव सलोंना मोहि देखन देरे पल पल में बलिहारी तेरे) आपने पंजावी भाषामें एक पद बहुतही अच्छा विरहका वर्णन किया है ।

पद ।

आवरे सजणां आव सिरपर धरि पाँव ।
जानी मैंढा जिंद असाड़े ।
तू रावैं दा राव वे सजणां आव ॥
इत्थाँ उत्थाँ जित्थाँ कित्थाँ हीं जीवाँ तो नाल वे ।
मीयाँ मैंढा आव असाढे ।
तू लालों सिर लाल वे सजणाँ आव ॥
तन भी डेवाँ मन भी डेवाँ डेवाँ प्यंड पराण वे ।
सचा साँई मिलि इत्थाई ।
जिन्दा कराँ कुरवाण वे सजणाँ आव ॥
तूं पाकौं सिर पाक वे सजणाँ तू खूबों सिर खूब ।
दादू भावै सजणा आवै ।
तू मीठा महबूब वे सजणाँ आव ॥ इति ।

इत्यादि विरह वाणी का वर्णन करतेहुए खाना पीना सब छोड उस सांवली सूरत के लिये तड़फने लगे, उससमय प्रेमाधीन प्रभु ने उनकी अत्यंत आर्तता देख अपना वही सलोना रूप दिखा और आकाश वाणी से कहा कि हे दादू! तू यह स्थान छोड दे, कारण इस स्थान कूं ज्यों ज्यों देखता है त्यों त्यों तेरे विरहसमुद्र उलटता है । अब तू

सांभर चला जा वहां भजन कर मेरी आज्ञा है । तब तो दादू दयाल भगवद् आज्ञा से अहमदाबाद छोड सांभर आय विराजे और भजन करने लगे । यहां पर अनेक परचे हुए उन परचों का परिचय दादूजी महाराज की परची में हैं। फिर बखनाजी की प्रार्थना से आप नराना ग्राम में पधार गए । गरीबदासजी अधिकारी शिष्य हुए यह आपके औरस पुत्र थे । सं० १६३२ में इन का जन्म हुवा था । और दासजी, तथा सुंदरदासजी, मोहनदासजी, जनगोपालजी, रज्जबजी, बखनोजी, साहुसेनजी, बाजींदजी और काजीमहम्मद आदि बडे बडे पहुंचे हुए शिष्य हुए जिनकी बाणी बहुत ही सारगर्भित और वैराग्योत्पादक है । आजकल इस पंथके तुल्य सिवाय कबीर और नानक पंथ के दूसरा बृहत् कोई पंथ नहीं है । सांभर के निकट भराना में सं० १६६० को शरीर छोड आप परम धाम पधारे ।

साखी ।

आपा मेटै हरि भजै, तन मन तजै विकार ।
सब ही सूं निर्वैरता, दादू यो मत सार ॥ १ ॥
एक राम के नाम विन, जिवकी जरनि न जाय ।
दादू केते पचि मरे, करि करि बहुत उपाय ॥ २ ॥
राम नाम गुरु शब्द से, रे मन पेल भरम्म ।
निह करमी से मन मिल्या, दादू काट करम्म ॥ ३ ॥
दादू देख दयालु कों, सकल रहा भरपूर ।
रोम रोम में रमि रहा, तू जनि जाने दूर ॥ ४ ॥
जब मन लागे रामसों, तब अनत काहे को जाय ।
दादू पाणी लूण ज्यूं, ऐसे रहे समाय ॥ ५ ॥
घीव दूधमें रमि रह्या, व्यापक सबही ठौर ।
दादू वक्ता बहुत है, मथि काढे ते और ॥ ६ ॥
केते पारिख पचि मुये, किंमत कही न आइ ।
दादू सब हैरान हैं, गूंगे को गुड़ खाइ ॥ ७ ॥

बोली[1] सवाई तुले ताई प्रीति भाई दास ए ।
"भैंस्याँ मँगाई और थाई व्याज माँई छाँस ए ।"
"बलदाँ जिलाई जसू वाँई राम राई ख्वाज ए ।"
भक्ती बधारू० ॥ १२ ॥

---

१ नाक में पहरने की ।

---

1 इसछन्दमें तीन कथाएँ हैं ।

(ओडाणा रामदासजी की कथा)

(१) भक्त रामदासजी के लिये आप तुले तो नथ की वाली तोल में आपसे सवाई हुई, इस प्रकार दासकी प्रीति भगवान् को अच्छी लगी।

(भक्तमाल)

(ग्वाल भक्त की कथा)

(२) भक्त ग्वाल के लिए जिन रामजी महाराज ने चुराई हुई भैंसें पीछी मंगाई व्याज रूप घृत में भैंसें की बेम (संतान) आई और छाछ के बदले वह भैंसें हाँस नाम का गहणा लाई।

एक संतसेवी ग्वाल भक्त था, वह एक समय सामग्री लेने को ग्राम में चला गया पीछे से चोरों ने भैंसें चुरा ली। माता के पूछने पर डरते हुए ग्वाल भक्त ने बनावटी उत्तर देदिया कि घृत के बदले अर्थात् दूध दही छाछ आदि सब कुछ तुम्हारा, हमतो जितना घृत होगा उतना ले लेंगे। इस शर्त पर एक ब्राह्मण को भैंसें देदी है। माता ने जाना कि पुत्र का कहना सच्चा ही होगा। कई वर्ष होगये। घी कौन लाके दे, अब देखो ईश्वर भक्तों के लिये क्या करता है। जो भैंसें चुरा लेगये थे उन चोरों के ये रिवाज थी कि दिवाली के दिन अपनी अपनी भैंसे को चांदी की हांसली आदि अच्छे अच्छे गहणे पहनाय रात को चराकों से भिड़काते। रीति अनुसार ग्वाल भक्त वाली भैंसे भी भिड़काई गई तो एक वार यह ऐसी भिड़की कि, अपने बेम तथा दो च्यार और भैंसेंको संग लेकर अपना रुणा (खूंटा) याद कर भिड़कती भिड़कती ग्वाल भक्त के घर पर ही पहुँच गई। भक्त दोड़ के माता से कहने लगा कि भैंसें आगई है। व्याज रूप घृत में अपनी बेम लेती आई है। और छाछ की एवज में चांदी की हाँस ले आई है। धन्य है प्रभु धन्य है घर बैठे ग्वाल भक्त को निहाल कर दिया। इति।

(जसूस्वामीकी कथा)

(३) जसू स्वामी के लिए बलदों के ठाणपर पहिले बलदों के जैसे ही दूसरे बलद (बैल) बना दिए ऐसे रामराज निवाजे। (भक्तमाल)

जग नृप्प वादू कौन साधू सिट मर्जादू काढ ए।
जन कह्यो आदू राम साधू इच्छा तादू छाड ए।
कुण देश माया झूठ काया राम राया राज ए।
भक्ती वधारू० ॥ १३ ॥

(श्रीरामदासजी महाराज की कथा)

प्रजा और राजा के परस्पर विवाद हुवा अखीर में वल्लभ संप्रदाय के गुसां-

ईजी के सिखाने से हठ के साथ राजा विजयसिंहजी ने हुक्म दिया कि वह कौन साधू है जिसने मर्यादा मिटादी ? देश से निकाल दो । तब रामदासजी महाराज ने कहा कि हम आदू राम साधू हैं । यदि राजा की इच्छा है तो देश छोड दें । देश किस का है काया माया झूठ है सारे रामराय का राज्य है ।

इच्छा पुरारी[1] शीश धारी है मुरारी[2] साथ ए ।
राखो जहाँरी सींव थारी मैं न म्हारी नाथ ए ।
कुण बलाकारी गर्वहारी[3] अकल वारी गाज ए ।
भक्ती वधारू० ॥ १४ ॥

जिन मुरारी की इच्छा को पुरारी (महादेव) ने मस्तक पर धारण करी है वही हमारे साथ में है जहाँ तक तुम्हारी सींव है वह रक्खो । उन ईश्वर की सींव में मैं और म्हारी नहीं वनती है । उन गर्व अहारी राममहाराज के समान कौन बलवान और अकलवान है, वही सर्वत्र गरजना कर रहे हैं ।

तपस्या ठकुराई छीन थाई मिट दुहाई देश ए ।
चाकर दुजाई पाप माई सुद्ध[4] आई वेस[5] ए ।
करुणा वढाई पुनि बुलाई जन सहाई आज ए ।
भक्ती वधारू० ॥ १५ ॥

रामदासजी महाराज के अनादर करने से जिसकी तपस्या और ठकुराई क्षीण होगई, देश में दुहाई मिट गई, चाकर बदल गए । ऐसा होने से जब राजा विजयसिंहजीकूं पापमय अवस्था याद आई अर्थात् अपराध का समय याद आया तब तो पीछा पधारने के लिये पहले पत्र दिया परंतु नहीं पधारे । बाद में करुणा वढाकर मुसद्दियोंको भेजकर फिर पधारने के लिये प्रार्थना कीगई, तब जन सहायक श्रीरामदासकी महाराज पीछा खेड़ापै पधारे ।

संताँ सहाई राम राई सदा आई प्रत्त[6] ए ।
समरथ सदाई रख्या माई कोन ताई द्रुत्त[7] ए ।
सुरलोक माई गँज न जाई प्राणि भाई माज ए ।
भक्ती वधारू० ॥ १६ ॥

---

१ महादेव । २ नारायण । ३ गर्व के हरणे वाले । ४ सुधि=याद । ५ वयस=अवस्था । ६ सदैव प्रति=हमेशा, पत=प्रतिज्ञा । ७ द्रुत=दयार्द्र; जल्दी ।

रामराय सदैव प्रति संतों के सहायक है। अथवा संतों की सहायता करनी यह रामरायकी सदा प्रतिज्ञा है। वह समर्थ सदैव रक्षा में ही हैं। उन दयार्द्रको छोड किसके पास भागैं। अर्थात् जिसके पास जावें उसके भी तो राम रक्षक है। जिनके राम रक्षक हैं उनका क्या तीन लोक में नाश हो सकता है! उसके लिए सब प्राणी मा जाये भाई हैं।

साखी।

पूठे समर्थं सतगुरू, आगे राम सहाय।
अनंतकोटि सँत शीस पर, रामा विघ्न न काय ॥ १ ॥
अंबर दूझै भूत कमावै, कह्या वचन गुरु देव।
रामदास सांसो तजो, कर संतनकी सेव ॥ २ ॥
रिधि सिधि दासी रामदास, चरण रही लपटाय।
आवै जावै सहज में, रहो राम लिवलाय ॥ ३ ॥

कहा देश देशू रम प्रदेशू है परमेशू संग ए।
दुष्टी विचेसू करि अंनेसू खोंस लेसू कंग ए।
सोई मरेसू जन निर्भैसू सुखावेसू आज ए।
भक्ती वधारू० ॥ १७ ॥

देश प्रदेश विदेश कहां ही रहो, परमेश्वर संग में है। रामदासजी महाराज के वास्ते एक दुष्ट धाड़वी ने बुरी नजर से देखा कि कहाँ चले गये इन को रास्तेके वीच ही खोस लेऊंगा, अथवा इनके कंग कहिये आभूषण उनको खोस लेऊंगा, अथवा इनको खोस कं कहिये मस्तक काट लेऊंगा, वे मेरे हाथ से बच नहीं सकते हैं। इसप्रकार विचार करता हुआ वह दुष्ट तीन ही दिनमें एक स्त्री के हाथ से मारा गया। रामदासजी महाराज निर्भय हो सुखपूर्वक पीछे स्थान को पधार जाते भए।

साखी।

काहूके तो राजबल, काहू के बल देव।
रामदास के रामबल, एक तुम्हारी सेव ॥ इति।

कहा घाट बाटू सुख्ख ठाटू मुज वेराटू राम ए।
गुरु रामदासू चरित गासू नित निवासू नाम ए।
लज्जा सदासू आदि आसू कली कासू राज ए।
भक्ती वधारू० ॥ १८ ॥

---

१ बुरा भाव। २ वाट=रस्ता।

श्रीदयालजी महाराज फरमाते हैं कि रामजी के विराट रूप होने से क्या घाट क्या वाट ! मेरे लिए तो सब सुख का ठाट है । मैं तो गुरु रामदासजी महाराज के चरित गाऊंगा, क्योंकि मेरे तो नित्य उनके नामका ही निवास है। सदैव से आपही के हाथ मेरी लाज है। और आदि अनादि से राज ही की आशा है तो फिर कली कैसा अर्थात् कलियुग मेरा करही क्या सकता है ।

सोरठा।

श्री गुरु समर्थ आप, एक भरोसो आसरो ।
राममंत्र जप जाप, घालवाल एके महीं ॥ १ ॥

दोहा ।

सदाकाल समर्थ धणी, रक्षक राम दयाल ।
कठिन कली कारण कृपा, हरिविन कौन सँभाल ॥ १ ॥

मेरे तो वे दयालु राम महाराज सदैवकाल के समर्थ धणी हैं और वही रक्षक हैं । इस कठिन कलिकाल में विना ही कारण कृपा करनेवाले हरि के विना दूसरा कौन संभाल करनेवाला है।

दोहा ।

नमो नमामी नाथ तू, निर्धारां आधार ।
लज्जा राखण रामजी, आनँद अगम अपार ॥ २ ॥

हे नाथ! आप के अर्थ नमस्कार हो! नमस्कार हो!! आप निराधारों के आधार हैं । हे रामजी! आप लाज को रखनेवाले हैं । आप आनंदस्वरूप हैं । अगम हैं और अपार हैं ।

प्रसन्न जना अपवर्ग[1] सुख, शरणै प्रति पालंत ।
घालबाल शरणागती, क्यों नहिं अरि जालंत ॥ ३ ॥

शरणागत की प्रतिपाल करने में ही भक्तों की प्रसन्नता है और वही उनके लिए मोक्ष सुख है, तो घालवाल आप के शरणागत है इस शरणागत के व्याधिरूप शत्रु को क्यों नहीं जलाते हैं ? ॥

कर्म बडा कि हरि बडा, यह अचरज मोहिँ आय ।
हरि तो लेख अलेख है, साधु बचन यों जाय ॥ ४ ॥
नारि[2] पलट नर तनु भयो, जन तुरसी के हेत ।
अकरण करण दयालु धिन, अपना को सुख देत ॥ ५ ॥

---

१ मोक्ष । २ कई महात्मागण यह कथा जन तुरसीजीकी बतलाते हैं ।

(गोस्वामी तुलसीदासजी की कथा)

कर्म बडे हैं कि हरि बडे हैं इस में मेरे को आश्चर्य आता है। इस विवाद में साधुओंके बचन तो यों प्रमाण देते हैं, कि हरि तो लेख को भी अलेख कर देते हैं जैसे गोस्वामी तुलसीदासजीके वास्ते नारीरूप पलट कर नरतनु हो गया ऐसे अकरण करण दयालु हैं। धन्य है आप अपने जनको सुख देते हैं।

कवित्त।

वेदन की सार काव्य भेदन की सार चारु, चातुरी चमतकार सार रस सानी में।
प्रेम की पढावनी वढावनी विरति ज्ञान, अन्तमें चढावनी श्रीराम रजधानी में॥
भानी भालके कुअंक हाल रंक राज दानी, कहै रसरंगमणी मोदता मिलानी में।
पाई है न प्रानी राम भक्ति सुखखानी मति, जो न रति मानी बसी तुलसी की वानीमें ॥१॥
व्यासने पुराण गायो कपिल सुझायो सांख्य, गौतमने गायो न्याय तर्क जहाँ ताँई के।
जैमिनि करमकांड योग को पतंजलिने, सांडिलहू भक्ति भने साधन सुसाँई के॥
शंकर वेदान्त भाखें मध्वाचार्य द्वैत चाखें, ऐसे रसरंग मत वाद सब ठाँई के।
रामाकार काव्य कर्‍यो जग भक्तिभाव भर्‍यो, राम प्रेम पाले पर्‍यो तुलसी गोसाँईके ॥२॥

श्लोक।

श्रीप्राचेतसरूपिणे सुकवये कोदण्डभृद्व्यापिने।
भाषाकाव्यविधायिने स्वजनताआव्यौघविध्वंसिने॥
श्रीरामामृतवर्षिणे जनकजाप्रेष्ठानुरागाब्धये।
तस्मै श्रीगुरवे नमोस्तु तुलसीदासाय गोस्वामिने ॥ १ ॥

(रामायणमाहात्म्य)

जुग जुग पालत जन पखो, साचा करण सवाल।
सो निर्बल या जगतमें, जाके बल गोपाल ॥ ६ ॥

"(परित्राणाय साधूनां") ऐसा जो आपका वचन है उसको सत्य करने के वास्ते जुग जुग में भक्तजनों की पक्ष पालते हैं। इस जगत में जिसके गोपाल का बल है सो क्या निर्बल है ?

राम सदा सुख रंजना, भय भंजन भरतार।
करुणामय कारणकरण, वारक वारण वार ॥ ७ ॥

हे राममहाराज ! आप सदा सुखरूप हैं चित्त के रंजन कर्ता हैं और भव-भय के भंजन कर्ता हैं, तथा जगत को भरण पोषण कर आप ही तारते हैं, और आपही जगत् के कारण जो पृथिव्यादि पंचमहाभूत तिन के करणेवाले हैं। हे प्रभो ! आप करुणामय हैं तभी तो वारण जो गजेंद्र तिसके वार कहिये समय

में आपने हरि अवतार धार उस गजेंद्र की वारक कहिये बार की अर्थात् सहायता की। तथा वारक कहिये कष्ट स्थानमें उस गजेंद्रकी वार की।

वुहो जात भवसिंधु में, मोहादिक जल पार।
व्याधि ग्राह मोकूँ गह्यो, अब हरि करण उधार॥ ८॥

संसाररूपी समुद्रविषै मोहादिक जलकी तरंगों में वहा जा रहा हूं। व्याधिरूप ग्राहने मेरेको पकड़ लिया है, सो हे हरे! मेरा अब आप ही उद्धार करनेवाले हैं।

हूं संताँ के शरण को, तूं संताँ आधीन।
लायक पायक साँच तब, दीन सहायक दीन॥ ९॥

मैं किन संतों के शरण हूं कि जिन संतों के आप आधीन हो रहे हैं। क्योंकि सच्चा जो आपका पायक कहिये सेवक है वह आपके लायक है सो हे दीनबंधो! आप दीन सहायक हैं और मैं दीन हूं अब देरी काहेकी है?।

माधोदास दयालु के, प्रसन्न भये धिन राम।
क्यों नहिं बंदत जगत यश, भैरव सेवक ताम॥ १०॥

(मैदानी माधोदासजी की कथा)

हे राम दयालु! मैदानी माधोदासजी के वास्ते आप प्रसन्न होते भये। धन्य है जिनका सेवक भैरव है। तिनका यश जगत में क्यों न वंदनीय हो?।

जैसलमेर के राज्यांतर्गत वारू ग्राम में माधोसिंहजी नामक जाति के चोहान एक राजपूत रहा करते थे। वह वीसों आदमियों के संग पूगल तथा वीसलपुर के बीच के जंगल में डेरा डाल सिंध की बार (उजाड़) में धाड़ा दोड़ कतारें लूट लिया करते थे। इस वजह से इनका बडा धाका पड़ता था। एक समय यहां दुष्काल पड़ने के वजह सिंध से नाज की लदी हुई कतार चली आरही थी, जहां इन धाड़वियों का डेरा था उनके पास ही जंगल में एक कूआ बना हुवा था उसपर कतार का पड़ाव अकसर हुवा करता था। विचारे उन लोगों ने भी वहीं रात्रि में कतार डाल दी, और रोटी बाटी वनाते हुए फिकर करने लगे कि भाई! ऐसा न होजाय कि माधोसिंह आकर अपने को लूट लें। यदि ऐसा होगया तो घर में बाल बच्चे और अपने सब मारे भूख के मरजायँगे। इनकी बातों को पास में ही माधोसिंहजी सुन रहे थे। आप के हृदय में दया आगई तुरंत उनके पास गये। माधोसिंहजी को देखते ही यह लो यह आगये यों कह सब रोने लगे तब तो आपने दिलासा दी कि रोओ मत मैं नहीं लूटूंगा। तुम फोरन लदकर चले जाओ। ऐसा न हो कि मेरे साथवाले तुम को लूट लें ऐसा कह बंदूक तलवार आदि जितने आपके शस्त्र थे वह सब तोड़ तुड़ाय लंगोटी लगाय उसी जगह धूणी पर बैठ संगवालों को बिलमाने के लिये रात भर लकड़ियें जलाकर प्रकाश करते रहे। लकड़ियों के खूट जाने से कपड़े जला जला

लड़का कर दिया। प्रातःकाल संगवाले हेरू इकठे हुए। पूछनेपर उन लोगों से आपने कहा कि, बस अपना सीर आजसे टलगया है। अब मेरा सीर तुम से नहीं है किंतु ईश्वर से है। यों क़ह उस जंगल में वहीं भजन करने लगे। बारह वर्ष व्यतीत होने-पर आकाशवाणी हुई कि जायल के महंत वैष्णव मोहनदासजी उज्जैन अंगपात घाट पर निवास करते है उनको गुरु करो जाओ। तब उज्जैन आए भगवत्की आज्ञानुसार मोहनदासजी के शिष्य हुए। गुरुने मैदानी माधोदासजी आपका नाम रखा। कई दिन वहां निवास कर पीछे आए। बीकानेर से पश्चिम सात कोस कोड़म-देसर तालाबपर क्षेत्रपाल भैरव के पास ही धूनी लगाकर बैठ गए। रात्री में भैरव ने कहा ए साधु! यहां से हट कर दूर बैठ जा। आपने चद्दर विछा जगती हुई धूनी उसमें उठा भैरव से कहा, यह थोड़ी मेरी खड़ाऊ तो वहां तक पहुँचा दे। जब भैरव उठाने लगा तो भैरव का हाथ खड़ाऊ से दब गया तब तो लगा चिल्लानें और बोला कसूर माफ करो, मैं आपका दास हूँ, मुझे बचा के आप का शिष्य बनालो। ऐसी विनय सुन आपने दया कर उसको सुखी किया और शिष्य बनाकर खेमदास नाम रखा। उसका मलीन खाना पीना सब छुडवा दिया। अब तो भैरव तन मन से सेवा करने लगा। यों करते कई दिन चले गये तब तो माधोदासजी की सिद्धाई देखने के लिये दशहजार साधुओंकी जमात रात्रि में आई और बोले, गुरुभाई माधोदास! सूर्योदय होते ही अतीतों के लिये भोजन तुम्हारे यहां ही होगा। यों कह जहाँ तहाँ आसन डेरे लगादिए। अर्धरात्रि के समय भैरव गुरुमहाराजकी आज्ञासे मुलतान सहर में बनिये के यहां सीरे का कढ़ाव रंधा हुवा पड़ा था उठा लाया। भगवद्भोग लगाकर महात्माओं को भोजन कराना शुरू किया। तीन दिन तक लगेतार संत भोजन करते रहे परंतु कढाव तो नहीं खूटा, तब तो माधोदासजी से माफी मांग संतोंनें अपना अपना रस्ता लिया। तब माधोदास जी महाराज ने कहा भैरव! मैं प्रसन्न हुवा कुछ मांग। भैरव ने कहा मेरे को तो मेरे ही खान पान की बायड़ आरही है। छुट्टी मिलजाय। आपकी टहल करने को एक चेला ला दूंगा। महाराज ने कहा तेरा प्रारब्ध ही मंद है, मैं क्या करूं? तू जाने। भैरव तुरंत मुलतान गया। जिस सेठ का कढ़ाव लाया था उसीके लड़के को उठालाया। महाराज का टहलवा कर दिया। कई दिन के बाद यात्रा के लिए मुलतान से सेठ कोड़मदेसर आया, देखता है तो कढ़ाव पर अपना और पिताका नाम खुदा हुवा है। इतने में लड़के की तरफ देखता है तो अपना ही मालूम होता है। चकित होके बोला मामला क्या है? तब भैरव ने कहा यह कढ़ाव और लड़का तुम्हारा ही है। माधोदासजी महाराज की सेवा के लिए मैं लाया हूं। यह सुन वह सेठ अपना अहो भाग्य समझ राजी खुशी के साथ उस लड़के को महाराज के चढ़ाकर पीछा चलागया। माधोदासजी महाराज ने शिष्य बना उसका नाम सुंदरदासजी रखा। महाराज के धाम पधारनेपर सुंदरदासजी गद्दीधर हुए। माधोदासजी महाराज के अनेक परचे हुए हैं।

एक समय माधोदासजी महाराजके दर्शन करने को बीकानेरके राजा कोडमदेसर आए। महाराज को तिजारी चढ रही थी। आपने वह तिजारी गूदड़ी को भुलाकर दरबार से बात चीत करनी शुरू की। पासमें पड़ी हुई गूदड़ी थरथर धूज रही है। राजा के पूछनेपर तिजारी का सब वृत्तान्त कह सुनाया तब तो राजाने अपना अहोभाग्य समझा कि मेरे राज्य में ऐसे सिद्ध महात्मा विराजते हैं। यह वृत्तान्त बीकानेर पुरानी ख्यात में लिखा हुवा है।

कोडमदेसर की गद्दी सिंहथल गद्दीकी दादागुरु गद्दी है। इति।

जर नरहरियानंद के, कर दुर्गा आधीन।
नितका ढोया ईंधंणा, अकरण करण नवीन॥ ११॥

(नरहरियानंदजीकी कथा)

भक्त नरहरियानंदजीके लिये आपने दुर्गाको आधीन करदी। विचारी दुर्गाने नित्य लकडियों की भारी ढ़ोई जिस अकरण ने यह नवीन करण किया।

(भक्तमाल)

चंद्रहास को राखियो, केती कष्ट दयाल।
मात आदि चरणा परी, महिपति भक्त विशाल॥ १२॥

(चंद्रहासजीकी कथा)

जिस दयालु ने कितने ही कष्टों से चंद्रहास को रखलिया। मातादि जोगिणियें भी जिस चंद्रहास राजाके चरणों में पड़ी वह चंद्रहास एक विशाल भक्त होता भया।

श्लोक।

विषमस्मै प्रदातव्यं त्वया मदनशत्रवे।
कार्याकार्यं न कर्तव्यं कर्तव्यं किल मत्प्रियम्॥ १॥ (भक्तमाल)

नंददास के हेत जो, गऊ जिवाई राम।
भये खिसाने विप्र सब, जनके सारे काम॥ १३॥

(नंददासजीकी कथा)

जिन राम महाराज ने नंददासजी के वास्ते गऊ को जिवादी। सब ब्राह्मण जिनके ऊपर नाराज हो गये थे तो भी भगवानने भक्त का काम तो सिद्ध करही दिया। (भक्तमाल)

दग्ध देह कमध्वज तणी, किवी पारषद आन।
चारु चलावो शरण सुख, जन महिमा भगवान॥ १४॥

---

१ ईंधण=काष्ठ।

(कमध्वजजीकी कथा)

भगवान के पारषद हनुमानजीने आकर भक्त कामध्वजके मृतक शरीरको जलाया। शरणागतको जीतेजी सुख दिया और अंतमें उसका अच्छा हलावा चलावा किया। इस प्रकार भगवानने भक्त की महिमा बढाई। (भक्तमाल)

हरि पुर से आये जना, पाय गये परसाद।
लालाचारज प्रसिद्ध जग, चकित रहे असाद ॥ १५ ॥

(लालाचार्यजीकी कथा)

वैकुंठ से हरिजन आकर लालाचार्य के यहां प्रसाद पा गये। इस प्रकार लालाचार्यकी आपने जगत में प्रसिद्धि करवाई। इस वार्ता को देखकर दुष्ट तो हक्के वक्के से रहगए। (भक्तमाल)

करमांबाई के सदन, भाव मई परसाद।
नाम लुगाई प्रगट जग, अकरण करण अगाद ॥ १६ ॥

(करमांबाईकी कथा)

करमांबाई के घर में जिन भगवानने भावमय प्रसादका भोग लगाया। करमांबाई जाति की जाटणी एक साधारण स्त्री थी परंतु उनका नाम जगत में प्रगट कर दिया। ऐसे वे भगवान अकरण करण में गंभीर हैं।

"नहिं विद्या कुल जाति अचारा।
रामहिं केवल प्रेम प्रियारा ॥"
"धाबल ओट खीचड़ो धलके।
अपणा दे कपड़ा ओढ़ाय ॥" (भक्तमाल)

कहलौं वरणूँ संत जश, गति अगाध परमेश।
मो बल यो ही आसरो निर्भय गुरु उपदेश ॥ १७ ॥

संतों का यश कहाँ तक वर्णन करूं ? क्योंकि परमेश्वर की गति अगाध है। मैं तो गुरु महाराजके उपदेश से निर्भय हूं। मेरे यही बल है और यही आश्रय है।

नवग्रह चौंसठ जोगिणी, बावन वीर पर्जंत।
काल भक्ष सबको करै, हरि शरणै डरपंत ॥ १८ ॥
ताकी दासी तापत्रय, मो घट व्याधि जराय।
जानराय[1] जानो सबै, यह विरद केरो जाय ॥ १९ ॥
तुम पालक सागे सदा, आगे अबै अनंत।
कर्म विडारण तारणा, नमस्कार भगवंत ॥ २० ॥

---

१ जानकारों में श्रेष्ठ।

नवग्रह चौंसठ जोगिनी से लेकर बावन वीर पर्यंत काल सबको भक्षण करता है वह काल भी भगवद्भक्तों से डरता है। तिसकाल की दासी जो ताप-त्रय रूपी व्याधि सो मेरे घट को जला रही है, हे जानराय! आप सब जानते हो कि ये विरद किसका जा रहा है। आप वही पालक है कि जिन्हों ने पहिले सदैव रक्षा की और कर रहे है और करेंगे। हे कर्मों को विडारणे वाले जगत को तारणेवाले भगवंत! आपको नमस्कार हो।

व्याध एक मार्‍यो मिरग, व्याल[1] डस्यो तरु छाँय।
तृषा मरत शुक सुनि गिरा, नाम प्रगट उरमाँय॥ २१॥
उभय वार श्रवणा सुणे, उभय वार मुख गाय।
अंतकाल ऐसो भयो, ततछिन भए सहाय॥ २२॥
जमकिंकर[2] बंधे महा, बंध छुडाई ताय।
हरिपुरवासी आयके, लेखै न्याव चुकाय॥ २३॥
एके चेलै[3] अघ सबे, एके चेलै नाम।
ऐसी विधि भव तारणा, निर्भय दीधो धाम॥ २४॥

(एक व्याध की कथा)

एक व्याध मृग को मारकर वृक्ष की छाया में आके बैठा। बैठते ही साँप ने उसे डस लिया। उस समय प्यासे मरते हुए उस व्याधने एक सुवे की गिरा सुनी, सुनते ही उसके हृदय में नाम प्रगट आया। दो वार तो नाम को कानों से श्रवण किया और दो वार ही मुख से नाम लिया तो उसका अंतकाल ऐसा हुवा कि तत्क्षण भगवान् उसके सहायक होगये। जमदूतों ने उसको बडे बंधनों से बांध दिया था तो भी भगवत्पारषदों ने आकर उसके बंध छुडा दिये और हिसाब कर उसका इन्साफ चुकाया। तकड़ीके एक पलड़े में तो उसके सब पाप रक्खे और एक पलड़े में भगवन्नाम रक्खा तो पापवाला पलड़ा हलका होगया, इस प्रकार भवतारकने उस व्याधको निर्भय धाम दिया।

मेरी विरियां कहा भयो, दीनबंधु दातार।
करहु कृपा अब औरसी, बिगरत कौन वैहार[4]॥ २५॥

हे दीनबंधु दानी! अब मेरे वक्त क्या हो गया। औरोंपर जैसी कृपा करी है वैसी कृपा मेरेपर भी करो, अथवा औरसी कहिये खास अंतःकरणसे कृपा करो, क्योंकि यह व्यवहार अब किसका बिगड़ रहा है?।

---

१ सर्प। २ दूत, नौकर। ३ चेला=पलड़ा। ४ व्यवहार।

सोरठा।

उलटा समझे राम, ओखांणो[1] साचो कर्‌यो।
शरणागत दुख ताम, यह कारण अबही भयो ॥ १ ॥
आगे अबै न कोय, अजहूँ मैं नाहीं सुन्यो।
यह तो कदे न होय, रांर[2] गमावण रामजी ॥ २ ॥

हे रामजी महाराज! आप समझे तो सही परंतु उलटा समझ गए।

तापें फकीर को दृष्टांत-एक फकीर रास्ते २ जा रहा था उसने चाहा कि अगरचे खुदा चढ़नेके लिए मुझे एक घोड़ा देदै तो कैसा अच्छा हो। ऐसा संकल्प कर आगे को बढ़ा तो क्या आश्चर्य देखता है कि एक राजपूत के चढ़नेको घोड़ी थी उसने बछेरा देदिया। राजपूत जंगल में रास्ते पै खड़ा विचार करता है कि, कोई मजदूर मिलजाय तो बछेरे को उठालै। अकस्मात् फकीरपर निगाह पड़ी और कहा कि फकीर साहब! बछेरे को उठालो, बलात्कार उठा कर चले। अब चलते चलते फकीर साहब विचारते है कि खुदा ने घोड़ा तो दिया पर उलटे समझ गये। मैंने घोड़े पर चढ़ना चाहा था पर उलटा घोड़ा मुझपर चढ़ गया।

इसी प्रकार श्रीद्यालजी महाराज फरमाते हैं कि, आप मेरी विनय को समझे तो सही पर उलटे समझ गए। मैं तो जन्ममरणरूप व्याधि को मेटना चाहता था परंतु वो तो कहीं रही उलटी नेत्रों की व्याधि[3] आ लगी।

तथा हे प्रभो! चोबे वाला आख्यान आपने सांचा कर दिखाया।

("इक चोबे हुते छबे होने चले तहां होय दुबे द्वै गांठ के खोये") एक चोबे थे उनको यह खबर मिली कि अमुक देश में चोबेको छब्बे कहते हैं। आप खुद छब्बे होने को निकले सो चलते चलते एक और ही जगह पहुंचे तो वहां सुना कि चौबे को दुब्बे ही कहते हैं। अब वह चौबा वहां विचार करता है कि मैं अपने देशमें चौबे कहलाता था। छब्बे होने को रवाना हुवा परंतु उलटे यहाँ आकर दो गांठ के खो दुब्बे ही बन बैठा।

इस प्रकार श्रीद्यालजी महाराज फरमाते हैं कि हे प्रभो! मैं अपने समय को सुखपूर्वक बिता रहा था तब मैंने चाहा कि भगवत् भजन कर जन्म मरणरूपी रोग को मिटादूं ऐसा निश्चय कर प्रयत्न किया तो करते ही नैरोग्यावस्था से रहित हो नेत्रों की पीड़ा से पीड़ित होगया, किन्तु आरोग्य अवस्था को गांठसे गमा दुःखी बन बैठा, सो यह आख्यान सच्चाही आपने कर दिखाया क्या? । प्रभो! शरणागत को दुःख होना यह कारण तो अब ही हुआ है ऐसा न तो कभी आगे होगा और न अन्यत्र कहीं ऐसा है और न अबतक मैं ने सुना, यह तो कदापि न हो कि रामजी महाराज नेत्रों को गमा दें।

---

१ आख्यान। २ नेत्र, तकरार, लड़ाई। ३ यह आर्त वचन हैं।

बोल न जाणूं कोय, अल्प बुद्धि मन वेग तैं।
नहिं जाके हरि होय, यातो मैं जाणूँ सदा ॥ ३ ॥

हे महाराज! अल्पबुद्धि होने से मैं बोलना कोई नहीं जानता केवल मन के वेग से आल बाल कर रहा हूँ। जिसके कोई नहीं उसके हरि होवें हैं यह तो मैं सदैव से जानता हूं, और वस इसीपर मैं निर्भर हूँ।

तव जन शरणै आय, हनूवँश इक डांवरो[1]।
नाभा नाम सहाय, चखमा[2] खुल संजय सही ॥ ४ ॥
जन पद पंकज धूर, चख उर मन मंजन कर्यो।
राम शब्द भरपूर, ताहि नेत्र ऐसे खुले ॥ ५ ॥
भुरवेला सूझंत, अद्भुत वरण्यो ब्रह्म पद।
हरि शरणे जूझंत, यालबाल यह आसरो ॥ ६ ॥

(नाभाजी की कथा)

हनुवंश का एक नाभा नाम बालक भक्त आपके शरण आया उस नाभे की आपने सहायता की, उसके हृदय के नेत्र खोल उनको सच्चा संजय बना दिया। जिस नाभाजी ने महात्माओं के चरणकमल की धूली से नेत्र, हृदय और मन को मंजन किया और राम शब्द की भरपूर ध्वनि की तो उनके नेत्र ऐसे खुल गए कि तीनकाल (भूत भविष्यत वर्तमान) की वार्ता सूझने लग गई, तब उन ने अद्भुत ब्रह्मपद का वर्णन किया इस प्रकार मैं भी तो हरि शरणै जूझ रहा हूं, क्यों कि यही आसरा यालवाल के है।

"श्री नाभा नभ उदित रवि, भक्तमाल सो जान।
रसिक अनन्य चकोर है, पान करै रस खान ॥"　　(भक्तमाल)

पावन पतित अनेक, समरथ याही चोज[3] है।
पापी हुलँस[4] विशेष, अबकी वेर उबारियै ॥ ७ ॥

अनेक पापियों को पवित्र करना समर्थवानों के तो एक चोज है और इस बात का पापियों को विशेष हर्ष है तब तो मेरी यह प्रार्थना है कि अब की वेर इस पापी को भी उबार लें।

"भक्तवछल को विरद सुनि, रज्जब दीन्हो रोय।
जब सुनियो पावन पतित, रह्यो नचीतो सोय ॥ १ ॥"

यह जानत महाराज, शरणागत मेटण अँदा[5]।
राम गरीबनिवाज, विघ्नहरण मंगल सदा ॥ ८ ॥

---

१ लड़का। २ नेत्र। ३ चमत्कारपूर्ण उक्ति। ४ आनंद की उमंग। ५ कष्ट, मनकी व्याधि।

यह मैं जानता हूं कि राम महाराज शरणागत के दुःख को मेटणेवाले हैं, गरीब निवाज हैं, विघ्न हरता हैं और सदैव मंगल करता हैं ।

दोहा ।

भक्ति[1]रँस जामैं सकल, छंद सारसी जान ।
हरि सरवर हंसा जना, मुक्ता नाम निधान ॥ १ ॥
भाव नीर निरमल सदा, परिमल[2] भवसिंधु पार ।
रामदास जन रमरह्या, लह्या अखै[3] सुख सार ॥ २ ॥

करुणासागररूपी दिव्य सरोवर में भक्ति के सारे रहस्य समाए हुए हैं, जिसमें छंद सारस है, भक्त हंस है, नाम मोतियों की निधि है, भाव निर्मल जल है, भवसिंधु से पार होना ही मधुर सुगंध है ऐसे सरोवर में जो रामभक्त समुदाय रमण करते हैं वे मोक्ष सुख को प्राप्त होते हैं ।

मन कलियो मोह सिंधु में, काल ग्राह अघ तंत ।
अब लायक स्हायक सदा, नमस्कार भगवंत ॥ ३ ॥

मोहरूपी समुद्रमें कलीजा हुवा जो मनरूपी हाथी तिसको पापरूपी तंतु डालकर कालरूपी ग्राह खेंच रहा है, अब उनकी सहायता करने में आपही समर्थ हैं, हे भगवंत ! आपको सदैव नमस्कार हो ।

छंद रोमकंदी ।

नमो भगवंत सँभारण कारण गँत्ति[4] अपार न कोण लही ।
भव दुःख विडारण काज सुधारण पार उतारण एक सही ॥
बल बाँह बधारण अँघ[5] निवारण जीव जिवारण वँपु[6] धरो ।
भव के दुख टार उधार अँपंपर[7] पार गजेंदर जेम[8] करो ॥ हरि० ॥ १ ॥

रक्षा करणेवाले हे भगवंत ! आपको नमस्कार हो, आपकी अपार गती का किसने पार पाया ? ।

संसार के दुःखों को दूर करनेवाले, कार्य को सुधारनेवाले, पार उतारनेवाले एक सत्यस्वरूप आप ही हैं ।

हे बाँह के बल को बधारणेवाले ! हे पापों को निवारण करनेवाले प्रभो ! आप तो केवल जीवों को जिलाने के वास्ते अवतार धारण करते हैं ।

हे हरे ! संसारके अपार दुःख को टार जिस प्रकार जल में डूबते हुए गजेंद्र का उद्धार किया तैसे ही मेरे को पार करो ॥

---

१ रहस्य । २ उत्तम गंध । ३ अक्षय । ४ गति=लीला, माया । ५ अघ=पाप । ६ वपु=शरीर । ७ जलमें पड़ा हुवा । ८ जिमि=जैसे ।

महा मत्त मनं[1]गय[2] रत्त अनं[3]गय अंध कुसंगय में मतयूं।
ता पंच प्रसंगय वाम भुवंगय काम कमं[4]गय से हत यूं॥
विष अंग तरंगय ग्रीषम अंगय मोह सुरंगय होय गरो[5]।
भवके दुख टार० ॥ २ ॥

महा उनमत्त मनरूपी हाथी कामदेव में रत होकर अंधा हुवा कुसंगति में मस्त होगया।

इसीलिए वह मन पंच प्रसंगोंसे अर्थात् शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध से, स्त्रीरूपी सर्पिणी से, और काम के बाणों से मारा गया।

विषय के आँठ अंग हैं वही मानो विष की लहरें जिस मनके अंग में उठ रही हैं, और काम करके तपायमान जो स्त्री का अंग है वही मानो ग्रीष्म ऋतु है, तिस करके तप्त हो रहा है। अब वह मन स्त्रीसंबंधी मोह रंग में रंगीज कर गर रूप होगया है अतएव हे नाथ! अब आप इससें उवारो।

प्रकृत्ति पँचीस तेतीस प्रचंडय मंर्ड स मंडय पिंडं इता।
हुय थं[10]ड विहं[11]डय जीव स डंडय सूर प्रचंडय मन्न मता॥
तत्काल विकराल विहाल स झंपं[12]ण व्याधि गिरौ[13]ह सं[14]नाह बुरो।
भवके दुख टार० ॥ ३ ॥

पचीस प्रकृति, अन्न[15]मयादि पंचकोष, और तीन[16] गुण ये सब मिल कर तेतीश होते हैं इन्हीं से बडा प्रचंड ब्रह्मांड बन गया और यही पिंड में है (पिंडेषु ब्रह्मांडे)

उक्त प्रकृति आदि समूह विचल होकर जीवों को सुखदुःखरूपी दंड देरहा है। तिस समूह में मत्त जो मन है सो प्रचंड शूरवीर है।

इतने ही में उछल कर विकराल व्याधिरूप ग्राह ने तो तत्काल विह्वलही करदिया, इसका बंधन बहुत बुरा है, हे प्रभो! इस दुःख से आप पार करें।

---

१ मन। २ हस्ती। ३ अनंग=कामदेव। ४ बाण। ५ गर=एक प्रकार का बहुत कडुवा और मादक रस जिसका व्यवहार प्राचीन कालमें होताथा। ६ स्त्रीका स्मरण, कीर्तन, परिहास, निरीक्षण, गुप्तभाषण, भोगनेका संकल्प, भोगनेका दृढ निश्चय, और आठवां स्त्रीसंग अर्थात् दृढ निश्चय कीहुई क्रियाकी सिद्धि। ७ प्रकृति, महत्तत्त्व, अहंकार, शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध, पांचज्ञानेंद्रि पांचकर्मेंद्रि, मन, पृथ्वी, जल, तेज, वायु, आकाश, जीवात्मा। ८ ब्रह्मांड। ९ शरीर। १० समूह। ११ विहंड=विचलना। १२ उछलना। १३ ग्राह। १४ बंधन। १५ अन्नमय प्राणमय मनोमय विज्ञानमय आनंदमय। १६ सत्व रज तम।

जग जाल [1]अंसराल सँभाल छले इन [2]भंक्ख सदा भवसिंधु मही।
[3]नभ नाल [4]तंताल [5]धरोल सिले त्रयलोक [6]सुरप्पति [7]विद्धि सही॥
कइ [8]रस्स [9]डांढ़ाल [10]ढींचाल [11]उंगालण होय [12]अभै खल खाण नरो।
भवके दुख टार० ॥ ४ ॥

इस काल ने संसाररूपी समुद्र में इस जगत जाल को लगातार सदा सँभाल सँभाल कर छला।

नभचर, जलचर, थलचर, इन सहित तीनलोक, तथा इन्द्र, ब्रह्मा आदि तथा दाढोंवाले, बडे बडे शरीरवाले, तथा मनुष्यों को खानेवाले राक्षस आदि ये सब जिसकाल के अनेक रसवाले ग्रास हो चुके हैं उस काल से हे राम महाराज! आप अभय करो।

जग जंतु जनम्म अनंत कषट्टय महा [13]दुषट्टय हाल हुआ।
जिव अघ्घ करष्षय मृत्यु हरष्षय पूर वरष्षय आयु [14]दुआ॥
अंत नाड़ि तटक्कय प्राण सटक्कय छोडि घटक्कय सीर टरो।
भवके दुख टार० ॥ ५ ॥

प्रथम तो जगत जीवों के जन्म में अनंत कष्ट हैं फिर इस जीव के खोटे हाल होते हैं।

इस जीव को पाप तो अपने तरफ खींचते हैं। मृत्यु अलहदी खुशी मनाती है। और आयुके वर्ष पूरे होनेतक दवा दारू देकर वैद्य न्यारे ही विचारे गरीबों को ठग ठग कर मनमें राजी होते हैं।

जब अंतमें नाड़ी तटकती है, घटकों छोड प्राण सटकते हैं, तब इस प्राणी का सब से सीर टल जाता है, उस समय में उस प्राणी को संसार से पार उतारनेवाले एक आप ही हैं।

इम श्वास दमोदम दुःख हमोहम राम [15]रमोरम जान सवे।
[16]ग्रह ग्राह गमोगम जीव भमोभम एक तमोतम ओर नवे॥
यह दीन [17]समो [18]शम क्यों न करो किमु राज नमोनम धीर धरो।
भवके दुख टार० ॥ ६ ॥

इस प्रकार श्वास तो दम दम में घट रहा है। दुःख का हमला पर हमला हो रहा है। हे रमतीतरामजी! तिसको आप सब जानते हैं।

---

१ निरंतर। २ भक्षक=काल। ३ नभचर। ४ जलचर। ५ स्थलचर। ६ सुरपति इन्द्र। ७ विधि=ब्रह्मा। ८ रस=स्वाद। ९ डाढोंवाले। १० बडेशरीरवाले। ११ चबाना। १२ अभय। १३ दुष्ट=बुरा। १४ दवा=औषधि। १५ रमतीतराम। १६ ग्रहं ग्रह की प्रति। १७ समय। १८ शांति।

शरीररूपी गृहगृह के प्रति गमन करते हुए जीव वारंवार सँसार में भ्रमण कर रहे हैं, सो उन जीवों की रक्षा करनेवाले हे प्रभो ! एक आप ही आप हैं, (न वे) किंतु वे शरीर रक्षा नही कर सकते हैं ।

यह दीन का समय है, इस दीन के चित्त को स्थिर क्यों नहीं करते हैं ? इस समय आप किस प्रकार धीरज धारण कर रहे हैं ? आपको नमस्कार हो नमस्कार हो ।

परिवार न वांरण[1] सार संभारण तारण कारण आय लियो ।
आरोह खंगारण[2] धाय धंरारण[3] चक्र चलारण काज कियो ॥
धिन आप अपारण सोह विचारण टेर उचारण एक ररो ।
भवके दुख टार० ॥ ७ ॥

परिवार ने जिस गजेंद्र की सार संभार न ली तब उस को तारने के लिए अवतार धारण कर गरुड़पर चढकर चले, फिर पृथ्वी पर दोड़े, तब भी जल्दी न पहुंचने पर चक्र चलाकर गजेंद्र का कार्य सिद्ध किया ।

एक र र र इस प्रकार की टेर उच्चारण से ही जिस गजेंद्र का उद्धार कर दिया ऐसे आप को धन्य है, आप अपार हैं, आप का विचार भी अपार है ।

गोविंद आनंद नमो चँद बंद पुँरंद[4] सुखंद समंद सदा ।
मो मंद[5] मनंद[6] गँमो[7] सिध[8] तह लेयंद[9] शंयंद[10] उरंद[11] मुंदा[12] ॥
हंद[13] जिंद[14] निकंद[15] सकंद[16] सँदोगति[17] अंद[18] समंद दुरंद[19] हरो ।
भव के दुख टार० ॥ ८ ॥

आनंदस्वरूप हे गोविंद ! आपको नमस्कार हो । कैसे हैं आप ? चंद्र तथा इंद्र करके वंदित हैं, और सदा सुखसमुद्र हैं ।

आप प्रसन्नता के साथ हृदयकमल में शयन कर रहे हैं, उनकी गम लेने के वास्ते मेरा मन वडा सुस्त है, उनकी गम तो सिद्ध पुरुष ही लेते हैं ।

जो हद के शरीर हैं वे सब नाशवंत हैं । हद के अंदर जितने जीव हैं उनके लिये तो वह (हद) अपार समुद्र है, इसलिये हे मोक्षमूल ! उस अंतिम अवधि रूप हद का हरण करो ।

---

१ गजेन्द्र । २ गरुड़ । ३ पृथ्वी । ४ पुरंदर=इंद्र । ५ सुस्त, मूर्ख, खल । ६ मन । ७ गम=खोज । ८ सिद्ध=महात्मापुरुष । ९ लेना । १० शयन करना । ११ उर=हृदय । १२ प्रसन्नता । १३ अवधि । १४ शरीर । १५ नाश । १६ स्कंध=मूल । १७ सद्गति=मोक्ष । १८ अंदर=भीतर । १९ दुरंद=अपार ।

छंद छप्पय ।

द्वंद[1] हरण गोविंद तरण भवसिंधु विश्वंभर।
नमस्कार आधार भूल नहिं परत निशंभर[2] ॥
ग्राह दुखाह अथाह अबै शरणागति तेरी ।
दीनबंधु आनंद टेर यह सुनिये मेरी ॥
निराधार आधार हरि पारवार[3] पावन पतित ।
घालवाल शरणागती कैरी[4] सैरी[5] सो मुनि कथित ॥ १ ॥

हरष शोक को हरणेवाले हे गोविंद ! हे संसाररूपी समुद्र से तराणेवाले ! हे विश्वंभर ! आपको नमस्कार हो । हे प्राणों के आधार दिनरात मेरे से आप भुलाए नहीं जाते हो । अथाह दुख ने मेरे को ग्रहण कर लिया है । अब आपकी ही शरण है ।

हे दीनबंधु आनंद रूप ! मेरी यह टेर सुनिए । हे पतितपावन हे हरे ! संसाररूपी समुद्र में निरधारों के एक आपही का आधार है । यह घालवाल आपकी शरणागत है । मुनिलोग कहते हैं कि गजेंद्र की वेला सरगई तो हे प्रभो ! क्या मुझ घालवाल की वेला नहीं सरैगी ?

दोहा ।

नाँहि न दूजो आसरो यह दुख मेटण आप ।
दाझत जग माया दुखद तीन लोक त्रंय[6] ताप ॥ १ ॥

तीन लोक को दुःख देनेवाले जो तीन ताप इन से माया जगत को जला रही है । सिवाय आप के दूजा कोई आश्रय नहीं है । हे राम ! इस दुख को मेटनेवाले आप ही हैं ।

छंद रोमकंदी[7] ।

त्रयँ ताप सँताप दुखाप दुखंकर पाप कियंकर[8] लार लगा ।
जिय छाप कलाप बिलाप भयंकर बाफ हुतंकर मृत्यु[9] अगा[10] ॥
मन साँप शराप विशेष कायापर मोह मया धर वेश तरै ।
मनते सिध सार अधार रमाँरम[11] आप विना कुण ताप हरै । जी ॥ १ ॥

तीन ताप के संताप से सब प्राणी दुख को प्राप्त हो रहे हैं । वह तीन ताप

---

१ द्वंद्व=युग्म । २ निशिभर अर्थात् रातदिन । ३ पारावार=समुद्र, आरपार, अपरंपार, अनंत । ४ हस्ती । ५ सिद्धहुई । ६ तीन ताप=दैहिक, दैविक और भौतिक व आध्यात्मिक, आधिदैविक, आधिभौतिक । ७ इस छंद में उदाहरण सहित तीन तापों का वर्णन है । ८ किंकर=नोकर । ९ अभि । १० सजावट । ११ विष्णु नारायण ।

यह हैं—जैसे अघासुर, धेनुकासुर आदि कंस के किंकरों ने लारे लगकर जिस प्रकार व्रजवासियों को दुखी किये इस का नाम अधिभूत ताप है और यह तन की है।

कालीदह में निवास करनेवाला जो काली नाग जिस की विषाग्नि से मृत्यु भी अगा कहिये अगाऊ दूर हट रही है इस प्रकारकी छाप जिन व्रजवासियों के आत्मा में लगने से जो भयंकर विलाप कलाप करना है इसका नाम अध्यात्म ताप है और यह वचन की है।

जिस महाजहरीले काली नागके लिये व्रजवासियों का मनसे धिक्कार देना है, और विषसे मृतक बालकों के शरीर पर मोह उत्पन्न होना है इसका नाम अधिदैव ताप है और यह मन की है।

उस समय में आपने नटवर वेषधार काली को दमन कर व्रजवासियों का दुख टाला इसी प्रकार मेरे पर भी दया कर ऐसा वेष धरो जिस से मेराभी दुःख टल जाय।

हे नारायण! हे प्राणों के आधार! मेरे काम को मनसे सिद्ध करो, विना आपके मेरा कौन ताप हरेगा?

अँतकाल[1] अकाल भूताल स डाकण मूठ स नाखण प्राण लिया।
कुवै खाल झुँराल[2] खोगाल फसावण मारग जावण मार विया[3]॥
अधिभूत जॅरावण[4] तामस खावण[5] और न आवण जोणि धरै।
मनतें सिध सार० ॥ २ ॥

अकाल मृत्यु होजाना जैसे भूत लगना, डाकन लेलेना, अथवा प्रान के लेने वाली मूठ का चलाना, कुए में गिरजाना, खाड़ में उतर जाना, ऊंडी खोगाल में फँसजाना, मारग चलते भयसे मरजाना, यह अधिभूत ताप हैं, तमोगुण इसकी खानि हैं। सो हे प्रभो! ऐसी कृपा करो कि फिर आकर किसी भी प्रकार की योनी को न धारें।

ज्वँर[6] व्याधि असाध्य नारु तन दूखण डेरु सह्रूकण रोग किता।
कफजादि रजादि फियादि स सूकण वायु गह्रूगण भोग जिता॥
यह जासु रजोगण दाँझ[7] अध्यातम लाज प्रमातम[8] काज करै।
मनतें सिध सार० ॥ ३ ॥

---

१ इस छंद में अधिभूत ताप का वर्णन है। २ गहरी। ३ भय। ४ ताप। ५ खानी। ६ इस छंद में अध्यातम ताप का वर्णन है। ७ ताप। ८ परमात्मा।

आठ प्रकार का ज्वर होना, असाध्य व्याधियों का होना, वाला निकलना, तथा शरीर में गड़गूमड़ होना, गोडे में डहरवा नामक रोग होना, तथा गुजराती आदि कितने ही होनेवाले रोग तथा कफ पित्त वात से होनेवाले रोग, प्रदर-रोग, प्रमेहरोग, और यकृत् (लीवर) प्लीहादि उदररोग, तथा शोपरोग, गंठिया वायुसे आदि लगाकर वायु के रोग आदि शिरोरोग, मुखरोग, नेत्ररोग करके जिसके जितने भोग भोगने हैं यह अध्यात्म ताप है । रजोगुण इसकी खानि है । हे परमात्मन् ! अब लाज आपही के हाथ है, इसदास का कार्य सिद्ध करैं।

बयाँल[1][2] सियाल[3] उनाल वयाँकुल[4] वारि वर्षाल खुंधाल[5] सयू।
वनाल[6] विचाल गिराल[7] अँसाकल[8] ज्वाल[9] मयाल सखाल लयू ॥
सुंराल[10] विचाल झपट्ट सतोगुण यह्व अधिदैव से बाल टरै।
मनतैं सिध सार० ॥ ४ ॥

वडी जोरदार काली पीली आँधीसे, शीतकाल से, उष्णकाल से, जलके तूफान से, वर्षाकाल से, क्षुधाकाल से वनके मध्यमें पर्वत के मस्तक में खंड पर-खंड में विजली के उत्पात से, नाल खाल से, तथा देवताओं की झपट से, जो ताप है वो अधिदैव ताप है । सतोगुण इस की खानि हैं । हे प्रभो ! ऐसी कृपा करो कि इस ताप से आपका बाल घाल टल जाय ।

क्रियमाण[11] मिलान[12] भोगान संचित्तय प्राणि वसान सुथान जका।
तपतीन विधान समान दहसत्तिय[13] मान अज्ञान सुजान[14] धका ॥
तब आन अचानक हानि करे जिव बानक[15] एक भगवान सरै।
मनतैं सिध सार० ॥ ५ ॥

जिन जिन स्थानों में प्राणियों का निवास है वहाँ वहाँ ही तीन तापों के रीति अनुसार क्रियमाण प्रारब्ध और संचित इन तीन प्रकारके कर्मोंका डर है । जब अज्ञानी अथवा ज्ञानी दोनों ही इस क्रियमाण कर्म करके धकायमान होते हैं तब आन कहिये दूसरे प्रारब्ध और संचित ये अकस्मात् हानि करते हैं । उस समय में जीव का बानक एक भगवानसे ही सरता है अर्थात् भगवान् ही उसके कार्य को सिद्ध करते हैं ।

---

१ वायु । २ इस छंद में अधिदैव ताप का वर्णन है । ३ शीतकाल । ४ व्याकुल । ५ क्षुधाकाल । ६ बन । ७ गिरि=पर्वत । ८ खंड । ९ ज्वालमाला=विद्युत् । १० देवता । ११ इस छंदमें संचित, प्रारब्ध, क्रियमाण, इन तीनूं कर्मोंका वर्णन है । १२ मिलानभोगान=प्रारब्ध । १३ दहशत=खोफ । १४ ज्ञानी चतुर । १५ बेष ।

उर चाय[1] उपाय भमाय सबै घट लाय अथाय[2] जलाय दिया।
मुरझाय दिखाय जमाय[3] तबै शठ ताय बंधाय धकाय लिया॥
कइ खायँ[4] सिराय पचाय जठागनि दाय[5] सहाय सवाय मरै।
मनतैं सिधसार० ॥ ६ ॥

जब प्राणी के हृदय में चाह उत्पन्न होती है तब वह उसको बड़ा भटकाती है, जिस चाहरूप अगाध दावाग्नि ने संपूर्ण प्राणियों के घट जला दिए।

चाह से जला हुवा पुरुष पहिले तो कुछ कर सकता नहीं। जब अंतकाल आता है तब वह मूर्ख यमदूतों को देखते ही मुरझाय जाता है, उसको वे यम-दूत बाँध धक्का देकर यमलोक ले जाते हैं।

उस यमलोकमें कितनेक प्राणियों को तो खाकर खुटादेते हैं, और कितनोंको जठराग्नि करके पचाय जाते हैं, और कोई दयाकर उन जीवों की सहायता करता है तो वे जीव सवाये मारे जाते हैं।

(ऐसी दशामें श्री गुरुदेवजी सहायक हैं)

गुरु ज्ञान घटा वरसान सदा संग दूरि अंदा[6] उन प्राणि मिटे।
उर आन मिटा हरि ध्यान सदा रंग नूर तदा तनु जाँन[7] हटे॥
उर जाल सेवाल मिटायके उज्वल प्रेम सुखाल अमिट्ट[8] झरै।
मनतैं सिधसार० ॥ ७ ॥

जिन्हों ने ज्ञान घटा वरसानेवाले श्रीगुरुदेवजी का सतसंग किया उन प्राणियों के दुःख दूरसे ही मिट गये।

और उस सतसंगति से हृदयमें आन उपासनादि भ्रम मिटकर जिस समय भगवत् ध्यान में निरंतर जिन लोगों के नूर रंगे गये हैं उस समय वे लोग अपने शरीर की सुध बुध भूल गए हैं।

जिन गुरुमहाराज ने सतसंगद्वारा भ्रमरूप जाल मलीनतारूप सेवाल मिटा-कर जिनके हृदय उज्वल कर दिए हैं उन हृदयों में से प्रेमरूप सुंदर झरणे निरंतर झरने लग गये हैं।

दयाल कृपाल संभाल करे जिव झाल कराल विचाल रखे।
जठराल[9] उंधाल[10] खुधाल[11] मरे नभ[12] नाभिनभाल[13] रसाल[14] भखे॥

---

१ चाह। २ अथाह। ३ यमदूत। ४ व्यतीत करना। ५ दया। ६ दुःख। ७ ज्ञान। ८ अमिट=निरंतर। ९ जठर=उदर। १० ऊंधा। ११ क्षुधा। १२ छिद्र, आकाश। १३ नाड़ी। १४ रस।

जनं[1]माल धुरं[2]ाल दुधं[3]ाल सिरज्जत कं[4]ालमें क्यों न गं[5]वांल करै।
मनतें सिधसार० ॥ ८ ॥

वही दयालु राममहाराज कृपालु होकर जीवों की संभाल करते हैं और वही काल की कराल झाल में से जीवों को बचाते हैं।

जब यह जीव माता के उदर में ऊंधे मुख होकर भूखे मरता है तब जिस नाभि के छिद्र है उस नाभि के नाड़ीद्वारा यह जीव रस को भक्षण करता है।

देखो उन कृपालु की दयालुता जन्म के पहिले ही दूध उत्पन्न करदिया तो वह राम महाराज इस काल में क्यों नहिं रक्षा करेंगे ?

छप्पय।

काल दुं[6]काल सँभाल करै करुणा के सागर।
झाल असँ[7]राल त्रिकाल टरै हरि जासु कृपा कर ॥
जर्न्मा[8]जन्म अनंत कहा बरणत दुख जीवस।
अब स्हायक महाराज राज तारण धिन पीवस ॥
राम इंद हरिजन घटा यह वर्षा अब कीजियै।
द्यालवाल शरणागती अपनो करिके लीजियै ॥ १ ॥

काल में दुकाल में वही संभाल करते हैं जो करुणा के सागर हैं। हरि जिस पर कृपा करते हैं वह प्राणी तीनों ही समय में निरंतर काल की झालसे टल जाता है। जन्म से मरणपर्यंत जीवों को अनंत दुःख होते हैं उन दुःखों का कहां तक वर्णन करें ? सो हे राम महाराज ! इस जीव के अब आपही सहायक हैं। राज ही तारनेवाले हैं और राज ही धणी हैं धन्य हैं। हे इन्द्ररूपी राम महाराज ! हरिजनरूपी घटा से अब वह वर्षा करावो कि जिससें करुणाका सागर पूर्ण हो जाय। द्यालवाल आपका शरणागती है इस शरणागत को आप अपणाय लैं।

(एक बेर कहो कृपालु तुलसीदास मेरो)

॥ इति श्रीग्रंथकरुणासागरसंपूर्णम् ॥

इत्यंपूर्णम्.

---

१ जन्म। २ प्रथम। ३ दुग्ध। ४ समय। ५ रक्षा। ६ दुष्काल। ७ असराल= निरंतर। ८ जन्म से लेके जिंदगी भर। ९ गुरु प्रकरण भक्तमाल परची कवित्तबद्ध अंगबद्ध आदि समस्तबाणी श्लोक मेधा २५०००।

पद राग काफी।

कोण हरै म्हारी पीर रे इक करुणासागर विन। टेर।
या कलि मैं मेरो नहिं कोई, कोण बंधावै धीर है कोई वीर हमारो ॥ १ ॥
द्रुपदी की टेर सुणी जब श्रवणां, अनंत बधायो चीर रे हरि लाज रखी जब ॥ २ ॥
जल डूबत गजराज उबाऱ्यो, कर गहि काढ्यो तीर रे ताऱ्यो कीर कुटुँब सब ॥ ३ ॥
भारत में भीषम प्रण राख्यो, धाया होय वजीररे अपणेजन के हित ॥ ४ ॥
बलि औ बिभीषण भया चिरंजिव कियो सिथर शरीर रे रघुवीर विरदपति ॥ ५ ॥
जन पूरण पर फिर कृपा कीजे, समरथ श्याम सधीर रे प्रभु लाज हमारी ॥ ६ ॥

पद

कोण सुणै गोहार रे करुणासागर विन। टेर।
अंगुरी दई श्रवण बिच कांई, दीन्हो विरद विसार रे गजराज तारकर ॥ १ ॥
विगरै कहा गुसाँई मेरो, लाजैगो विरद तिहार रे हंसै जग दे कर तारी ॥ २ ॥
जन पूरण की सुनो वीनती, मार भावै चाहैताररे पऱ्यो शरणागत तेरी ॥ ३ ॥

अथ श्रीपूरणदासजी महाराज के छुटकर शब्द।

साखी।

नमस्कार हरिगुरु जना, आदि अंत मध ताम।
तिनहीको नित करत है, पूरणदास प्रणाम ॥ १ ॥

छंद चित्तइलोल।

संप्रदा मुख चार माहीं, प्रकट रामानन्द।
कठिण कलियुग माहिं कीनी, भक्ति पूरणचंद।
तो सुखकंदजी सुखकंद, सब सुखसारको सुखकंद ॥ १ ॥
नमो अनंतानन्द स्वामी, अनँत हरिगुन गाय।
संत परचै भया सारा, प्रगट परचो ताय।
तो गुणरायजी गुणराय, जन जस गावणो गुण राय ॥ २ ॥
दास कर्मचंद करण कारण, किये कर्म सब दूर।
ताप त्रिविधा मेट तनकी, पंच कर चकचूर।
तो भरपूरजी भरपूर, भक्ती भावसे भरपूर ॥ ३ ॥
अवनि दुतियै जन दिवाकर, भरम निशि चकचूर।
अखंड जोत उद्योत अविचल, काल तस्कर दूर।
तो भलसूरजी भलसूर, मँडमें ऊगिया भलसूर ॥ ४ ॥

दास पूरण मालवी, धिन किये पूरण काम ।
लाज जगकी मेट शंका, लियो मन विसराम ।
तो सतनामजी सतनाम, पूरणदास है सतनाम ॥ ५ ॥
दामोदर कर दमन इंद्रिय, पंच वश करलीन ।
शील साच संतोष शम दम, दांत पदको चीन ।
तो परवीनजी परवीन, हरिरस भजनमें परवीन ॥ ६ ॥
दास नारायण नाम नीको, लियो द्विज अंतवार ।
सकल प्रायश्चित भये छिनमें, कियो पेलैपार ।
तो बलिहारजी बलिहार, नारायणनामकी बलिहार ॥ ७ ॥
दास मोहन मोह माया, दई सकल निवार ।
ध्याय अपणो धणी निश्चय लियो उरमें धार ।
तो सिधसारजी सिधसार, सारी वात कर सिधसार ॥ ८ ॥
ध्यान माधवदास धाऱ्यौ, मँडे जाय मैदान ।
आकाश ओढण भूमि पोढण दशों दिश वखान ।
तो परवानजी परवान, त्याग वैरागमें परवान ॥ ९ ॥
किये नख सिख सर्व सुन्दर, ध्यान सुन्दर धार ।
वाद विरोध विकार परिहर, दिये द्वंदरसार ।
तो चितचारजी चितचार, निरमल कियो मन चितचार ॥१०॥
चरणदास विचार बाणी, राम चरणां चित्त ।
अल्प सुख संसारको, निजनाम साचो वित्त ।
तो वड कृतजी वडकृत्त, संतॉंचरणकी वडकृत्त ॥ ११ ॥
नमो जैमलदास स्वामी, वडे धीर गंभीर ।
धार जन अवतार अवनी, मेटणा परपीर ।
तो सुखसीरजी सुखसीर अमृत धारकी सुखसीर ॥ १२ ॥
दास ज्यूं कबीर चकवै, लियो निर्गुण नाम ।
कियो निरणय नीरक्षीरं, हंस ज्यूं हरिराम ।
तो विश्रामजी विश्राम जीवां कारणै विश्राम ॥ १३ ॥
दास विहारी विमलबाणी, जासु शिष हरदेव ।
तासु मोतीराम धिन, रघुनाथ सतगुरु सेव ।
तो निज सेवजी निजसेव, पायो भक्ति को निजसेव ॥ १४ ॥
हरिराम शिष धिन रामदासजु और नहिं कोइ आज ।
निरख सब निरताय निरणय, करण जीवां काज ।
तो महाराजजी महाराज मंडमें अवतरे महाराज ॥ १५ ॥

तासु गादी आन ब्राजे, प्रगट दूजेद्याल ।
बोल अनुभव गिरा वाणी, व्यास जेम विशाल ।
तो किरपालजी किरपाल जीवां ऊपरै किरपाल ॥ १६ ॥
शरण आयां स्याह्न कीजै, दरश दीजै द्याल ।
लाज पूरणदासकी अब, काटिये कर्मजाल ।
तो रिछपालजी रिछपाल अपने जीवकी रिछपाल ॥ १७ ॥

॥ इति ॥

जन्मलीला ।

(पृष्ठ ३०)

अथ श्रीअर्जुनदासजी महाराज के छुटकर शब्द ।

साखी ।

श्रीहरि गुरु हरिराम धिन, रामदास मुझ साम ।
द्यालपुरुष पूरण प्रती, अर्जुन की परणाम ॥ १ ॥

छप्पय ।

प्रथम करों परणाम, रामदासं गुरु स्वामी ।
दूसर श्री गुरु द्याल, अनँत जीवां हंसनामी ॥
तीसर श्री गुरुदेव, ब्रह्म पूरण गुरु पूरा ।
बानी विमल रसाल, भरम कर्म चकचूरा ॥
संध्या मध्य प्रभात रट, जीव परमपद पाय है ।
अर्जुनदासजु रावरे, चरण कमल चितलाय है ॥ २॥

अथ पूर्वजन्मप्रारंभः ।

दोहा ।

प्रथम राम गुरु वन्दना, पुनि सब सन्त प्रणाम ।
हुइ प्रसन्न आज्ञा करहु, ग्रन्थ उचारण ताम ॥ १ ॥
मेरे मन उपज्यो हर्ष, टीका करण उचार ।
पूर्ण बुधि दीजै सरस, तो मैं पाऊं पार ॥ २ ॥
ग्रन्थ समुद्रहि रूप है, महान गुरू सोइ पोत ।
मम गुरु केवट खेवसी, सहज पार जब होत ॥ ३ ॥

मेरी बुधि अति तुच्छ है, वरण न जानों कोइ।
रोटी टोटी कहत शिशु, पितु मा परसन होइ ॥ ४ ॥

छन्द मनहर।

सम्प्रदा प्रथम रामानन्द प्रसिद्ध करी।
साढे बारा शिष्य मुख्य अनन्तानन्द जानजू।
कर्मचन्द शिष्य भए ताके देवाकर।
द्वितीय मालवी पूर्ण तासु दामोदर मानजू॥
नारायण मोहन जासु नमो माधवदास।
तासु सुन्दर चरण जैमल प्रणामजू।
पाट हरिराम ताके रामदास उजागर।
निर्गुण भक्ति करी घाल गुरु ज्ञानजू ॥ १ ॥

दोहा।

पूर्व जन्म की वार्ता श्रीमुख कही सुनाय।
जिहि कारण यहँ अवतरे बरण सुनाऊं ताय ॥ ५ ॥

छन्द भुजंगी।

हुते नागर मेंहता जूनागढ्ढ माहीं। तिन्है इष्ट धारे दंडी मत्त ताहीं॥
नित्यंप्रत्ति नेमं करै दर्श स्वामी। लही मत्ति ऐसी धरै चित्त धामी॥१॥
भई एकवारं बहु भीर भारी। तहाँ सन्त गेही मिले वर्ण चारी॥
तबै रामकृष्णं मना आनि भिन्नं। महाराज दंडीप्रति कीन्हो प्रसन्नं॥२॥
इन्हैं दर्श दीजै रखो दूर नाथा। द्विजाँ शूद्र मेला बनै नाहिं वाता॥
सुनी वात ऐसी तबै बोल स्वामी। नहीं भक्ति चीन्ही पड़ी तोहि खामी॥३॥
हरी गर्वाशनी तुम्हैं नाहिं जानी। धरो जन्म यामें भई एम बानी॥
सुने वाक्य दंडी तबै वीक लागे। क्षमो नाथ चूकं हम हैं अभागे॥४॥
अहो प्राणप्यारे तज्याँ नाहिं जीऊं। तुम्हें अंश आऊं कृपामृत्त पीऊं॥
तबै ह्वै कृपालं कह्यो तुज्झि इच्छा। फलै भाव सत्यं करै राम रिच्छा॥५॥
सदा दास हेतं धरी देह ऐसी। वाराह नरसिंह हयग्रीव जैसी॥
हमें तुज्झि हेतं धरूं देह आई। करो सोच नाहीं लेहौं मो सिलाई॥६॥
हुयो दास निश्चय भयो मन्न भायो। राधाकृष्ण गावै पदां में लिखायो॥
सदा श्रेष्ठ आशय दढ़ं मत्ति भारी। करै जन्म लेखै आगम विचारी॥७॥

छन्द गीतक।

श्रीपुरुषोत्तम ध्यान धर मन धर्म द्वारा जासही।
दुकान अहमदाबाद जाकी पुत्र स्त्री तहँ वासही ॥ १ ॥

अच्युतगोत्रं सुखी दाता मांग उत्तर ना दयं ।
जल पान भोजन वस्त्र सवकरि सन्त सेवा सुखलयं ॥ २ ॥
कइकाल वीताँ कह्यो स्वामी तजो इह पुर विघ्न ही ।
तब मांगि आज्ञा वास कीन्हो वड़ोदै शुभ लग्न ही ॥ ३ ॥
अति प्रेमयुक्तं कर्त कीर्त्तन रासलीला महँ छके ।
पुनि गिरा गद्गद् पुलक सब तनु नयन जलभर अकबके ॥ ४ ॥
इक दिवस वापी मात्रियां मध दर्श मनमोहन दए ।
सब जान परिचय सन्त पूर्ण राजपूज्य सु जन भए ॥ ५ ॥
धन धाम तन मन पुत्र सुन्दरि सकल हरि चरणन धरे ।
हरिभक्ति सरसी दुतिय नरसी गुर्जर धर पावन करे ॥ ६ ॥

दोहा ।

ता सुत हरिशंकर भए, सखा जु परमानन्द ।
भक्ति अनन्यहि सिल करी, आदि अन्त सुख कन्द ॥ ६ ॥
सँवत् सत्रहसे गुणन्तरै, दशों भाद्र वदि जान ।
रामकृष्ण तनु त्याग करि, मरुधर प्रगटे आन ॥ ७ ॥
माता सुन्दर कूख भल, धाल लियो अवतार ।
रामदास पितु पाय धिन, जीवां करण उधार ॥ ८ ॥

छन्द पद्धरी ।

वय बाल गई पौगंड आय । धुर जन्म आपनी सुरति लाय ॥
गुरु रामदासप्रति विनय कीन । निज ज्ञान गुंझ बकसो जुगीन ॥ १ ॥
फिर जन्म मरणसे रहित होय । साधन अबहि मैं करों सोय ॥
हुइ प्रसन कह्यो गुरुदेव एम । विन पूछे दाखां गुंझ केम ॥ २ ॥
यह मंत्र अगम जानत महेस । सो सती प्रती नाहिन कहेस ॥
हम प्रेम समझि तेरो विशेक । कहुँ रामनाम दृढ़ धार टेक ॥ ३ ॥
रट रसन प्रथम मन पवन साध । सुख देखहु ताको अति अगाध ॥
चित धार गुफा बैठे एकन्त । मन हर्ष पाइके परम तन्त ॥ ४ ॥

दोहा ।

प्रथम रसन में स्वाद ले, द्वितिये कंठ हुलास ।
तृतिये हिरदै फुरक तनु, चतुर्थ नाभि प्रकास ॥ ९ ॥
स्मरण जु चार प्रकार सिध, नाभि थके ममकार ।
सुरति पवन मन मेलकर, चले रकार अगार ॥ १० ॥

चौपाई।

पूरबसे पाताल सिधाया। पछिम घाट हुइ मेरु चढ़ाया॥
आकाशां सुख रहा लुभाई। सुरति शब्द मिल केलि कराई॥ १॥
मच्छी सात समँद तजि दीया। ब्रह्म वृक्ष चढ़ि सो रस पीया॥
वृक्ष अदृष्ट दृष्टि नहिं आई। मूल न डाल न पात न छाई॥ २॥
मुक्ती फल आगे अद्भूता। चाख्या तिके अमर अवधूता॥
माया के गुण रहे जु लारे। सुरति शब्द गत दशमें द्वारे॥ ३॥
इड़ा पिंगला सुषुमन मेला। त्रिकुटी सन्त करै नित केला।
ररंकार ध्वनि शून्य समानी। पंच तीन चत सप्त थकानी॥ ४॥
महमाया ज्योती प्रकृत्तं। सुन आतम इच्छा परसंतं॥
भाव प्रभाव निकेवल हूआ। जोगी जन्म मर्ण से जूआ॥ ५॥
मिली बूंद सायर के माहीं। लौंन पूतली गत मिलताहीं।
हद बेहद द्वै भेद न रहिया। अबर्ण ताहि वर्ण किसि कहिया॥ ६॥

दोहा।

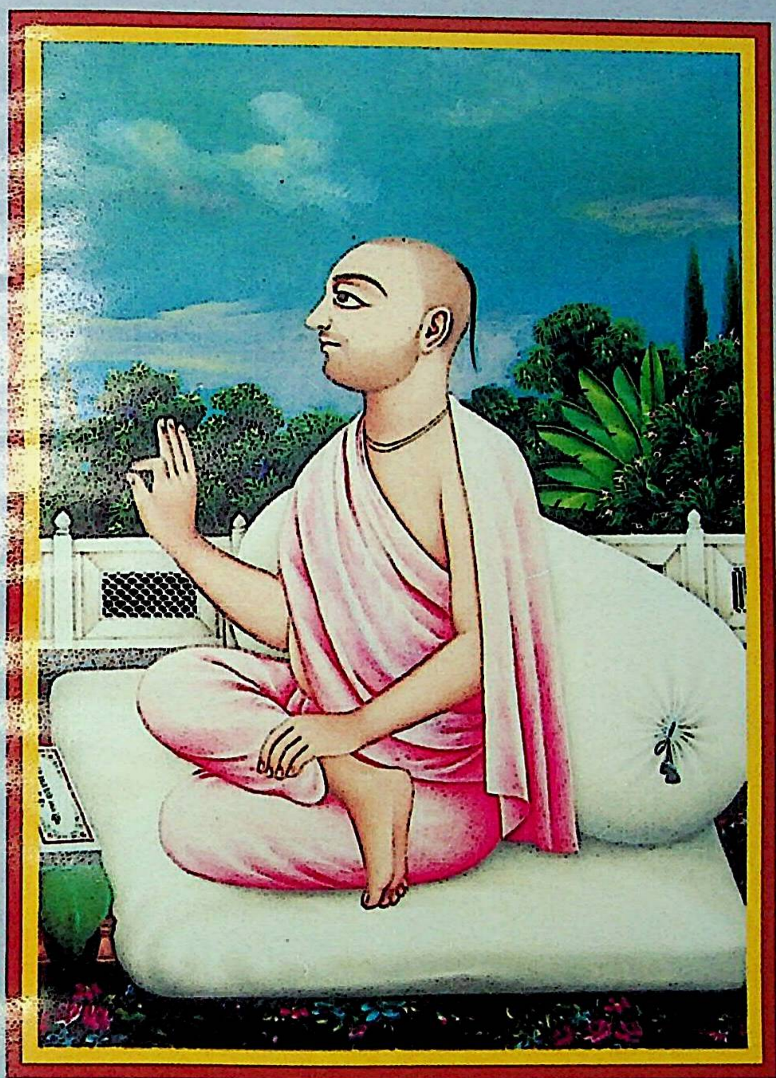
सद्गुरु अविरल वचन सुनि, उर धरि सो विधि कीन्ह।
घट विच औघट प्रकट हुइ, त्वं तत्तजि असि चीन्ह॥ ११॥

छन्द पद्धरी।

इक दिवस गुफा मध विराजमान। सुर पठइ अप्सरा छलन जान॥
तिन हाव भाव अति करे आय। नहिं दृष्टि खोल देखी जु ताय॥ १॥
फिर भेंट धरी बहु मिष्ट चीज। नहिं सन्त वस्तु उन हाथ लीज॥
इसि अडिग भक्ति देखे दयाल। कर नमस्कार चाली सकाल॥ २॥
जब भयो ज्ञान केवल प्रकास। पर आप और के जन्म तास॥
सूझत सब करकी रेख तेम। गुरु पास उचारे वचन एम॥ ३॥
वहँ वृथा पड़ी धुर आथ सोइ। यहँ सदावरत करि सुफल होइ॥
श्रीस्वामी उचरें सुनो दास। तुम सूझत कैसे सो प्रकास॥ ४॥
श्रीराम भजन अरु कृपा आप। तो काहे कीजै दुख सन्ताप॥
जिन दियो जन्म सो कर सँभाल। कण कीड़ी कुंजर मणहि आल॥ ५॥
विश्वास नाहिं तिन दुख अपार। सुनि वचन ग्वाल मन समझिधार॥
सो प्रसिद्ध भई केदिवस पाइ। गुर्जरधर पावन करी जाइ॥ ६॥

दोहा।

सम्वत् अठारहसे प्रसिध, वर्ष तँयास्यो मान।
मिंगसर वदी त्रयोदशी, रामत करी निधान॥ १२॥



विरक्त शाखा प्रवर्तक श्री परसरामजी महाराज
सूरसागर (जोधपुर)

छन्द पद्धरी ।

पूरण सुत राखे राम धाम । तन व्याधि भई नहिं संग स्वाम ॥
गुरु सहर बड़ोदे पहुँच जाय । वहाँ द्विज पति पत्नी पद सुनाय ॥ १ ॥
सो रामकृष्ण के शब्द जानि । आगूं झड़ उचरे आप बानि ॥
इक दिवस शिष्य तन कष्ट जान । चिन्ता करं सुमरे परम प्रान ॥ २ ॥
जब दंडी दीन्हो दर्श आइ । क्यों सोचत हरिशंकर सुखाइ ॥
सुनि वचन भयो आनँद अपार । सब शिष्यांप्रति कहि दुख निवार ॥
तिहि दिवस प्रसिद्धी भई एह । सो हम वरणी जो सुनी तेह ॥
हम हैं अति बालक बुद्धिहीन । गुरु चरित असित कुन लहहि चीन ॥

सोरठा ।

विराजे दीनदयाल, गुर्जरधर पावन करन ।
पाछी सुरति सँभाल, फागण शुदि पूनम सरस ॥ १ ॥

दोहा ।

जो अधिकी ओछी बनी, झड़ कहुँ अक्षर मात ।
अर्जुनदास गुलाम तव क्षमा करहु तुम तात ॥ १३ ॥

इति पूर्वजन्म ।

विरक्तशाखाप्रवर्तक–

श्रीपरसरामजीमहाराजका गुरुशिष्यसंवाद ।

साखी ।

नितप्रति गुरु वंदन करूं, पूरण ब्रह्म प्रणंत ।
परसराम कर वंदना, आदि अन्त मध संत ॥ १ ॥
परसराम शुध आतमा, प्रश्न करै गुरु पास ।
भवसागर क्योंकर तिरूं, किम छूटै जमत्रास ॥ १ ॥
जन्म मरण व्रेदन कटै, चौरासी मिटजाय ।
शिख पूछै सतगुरु प्रती, सो मम भेद बताय ॥ २ ॥
नर्क कुंड में ना पडूं, जीतूं मन जोधार ।
ऐसो मुझ उपदेश दो, सतगुरु कर उपकार ॥ ३ ॥
मुक्ति होय इन जीवकी, अवगुण मिटै अनंत ।
ऐसी युक्ति बताइयै, सतगुरु संत महंत ॥ ४ ॥

श्रीगुरुवचन ।

परसराम सतगुरु कहै, सुन शिष ज्ञान विचार ।
कारज चाहै जीवको तो, कहूं सो हिरदै धार ॥ ५ ॥
प्रथम शब्द सुन साधुका, वेद पुराण विचार ।
सतसंगति नित कीजियै, कुलकी काण निवार ॥ ६ ॥
पूरा सतगुरु परखकर, ताकी शरण संभाय ।
राम नाम उर इष्ट धर, आनइष्ट छिट काय ॥ ७ ॥
रामराम मुख जापजप, करसें कर कछु धर्म ।
उत्तम करतब आदरो, छोडो नीचा कर्म ॥ ८ ॥
झूट कपट निन्दा तजो, काम क्रोध अहंकार ।
दुरमति दुबिधा परहरो, तृष्णा तामस टार ॥ ९ ॥
राग दोष तज मछरता, कलह कलपना त्याग ।
संकलप विकलप मेट कर, साचे मारग लाग ॥ १० ॥
मान वडाई ईरषा, तजो दंभ पाषंड ।
सुमरो सिरजन हारको, जाकी मांडी मंड ॥ ११ ॥
दुनियां घड़िया देवता, परहर ताकी पूज ।
अणघड़ देव अराधियै, मेटो मनकी दूज ॥ १२ ॥
प्रतिपालण पोषण भरण, सबमें करै प्रकास ।
निशिदिन ताको ध्याइयै, ज्यों छूटै जम त्रास ॥ १३ ॥
राम नाम नौका करो, सतगुरु खेवण हार ।
विरदभाण कर भावको, यैं भव जल हुय पार ॥ १४ ॥
राम राम अम्मर जड़ी, सतगुरु वैद्य सुजाण ।
जन्म मरण वेदन कटै, पावै पद निर्वाण ॥ १५ ॥
जगसे चित उलटाय कर, हरि चरणां लपटाय ।
लख चौरासी जोनिमें, जन्म न धारो जाय ॥ १६ ॥
मनसा वाचा कर्मना, रटो रैण दिन राम ।
नर्क कुंडमें ना परो, पावो मुक्ति मुकाम ॥ १७ ॥
पाँचो इन्द्री पालकर, पंच विषय रस मेट ।
या विधि मनकों जीतकर, पिव परमानंद भेट ॥ १८ ॥

इति ।

अथ परमहंसावतंस श्रीसेवगरामजी महाराजका झूलणा छंद ।

नर जाग जगावत सत्तगुरू, अब सोय रह्या कैसे सझिये रे, ।
शठ आग गृहै माहिं काहिं जरै, चल साधु संगत्ति में रजिये रे ॥
नित लागरहो निजनाम सेती, संग विषयनका तजिये रे ।
तेरा भाग बडा भगवंत भजो, कहै सेवगराम समझिये रे ॥ १ ॥
नर नाम निजक्कण छांड दिया, कण कूकस कूटयां न पायगा रे ।
फिर सांइकी सेव विसार धरी, सेवै संबल हाथ क्या आयगा रे ॥
मुख अम्री अचस्मन नाहिं किया, नीर ओसह्यु नाहिं अघायगा रे ।
कहै सेवगराम समझ्झ विना, नर वार वीतां पछितायगा रे ॥ २ ॥
इन देखि दया मोहि आवतु है, नर मार मुगद्दर खायगा रे ।
यहां किये है कर्म न शंक मानी, वहां जाब कछू नहिं आयगा रे ॥
हक पूछै हिसाब हजूर माहीं, जब लेखा दिया नहिं जायगा रे ।
कहै सेवगराम साह चोरभया, नरजम्मके हाथ विकायगा रे ॥ ३ ॥
देखो देखो दुनियनकी दोस्ति रे, मोहि देखं अचंभा हि आतहै रे ।
कछु सार असार विचार नहीं, शठ छाँड अमी विष खातहै रे ॥
नित भोगत भोग अघाय नहीं, फिर वेहि दिना वेहि रातहै रे ।
सुन सेवगराम हैरान भया, कछु बात कही नहीं जातहै रे ॥ ४ ॥
धिक धिक्क जनों हंदा जीविया है, सोइ आतम राम विसार सोया ।
मन तन्न इन्द्री सुख चित्त दिया, दिन रैन विषय रस माहिं भोया ॥
शठ मोह माया माहिं राचि रह्या, देख नैन नारी हंदै रूप मोह्या ।
कहै सेवगराम समझ्झ विना, नरतन्न रतन्न अमोल खोया ॥ ५ ॥
कोऊ जात न पांति कुटुम्ब तेरा, घर धाम धन्या रहि जायगा रे ।
अरु मात न तात न भ्रात संगी, सब सुत्त दारा न्यारा थायगा रे ॥
जब जम्म जोरावर आय घेरै, तब आडा कोऊ नहिं आयगा रे ।
कहै सेवगराम संभार सांई, एतो जीव अकेलाहि जायगा रे ॥ ६ ॥
यहु रूप जोबन्न तो थिर नहीं, दिन चारकि वार वजायगा रे ।
इक रंग पतंग सुरंग बन्या सब, देखतही उड जायगा रे ॥
तृण ओसका नीर केतीक वेरां, उदै सूर हुवा शुष जायगा रे ।
कहै सेवगराम संभार साँई, एसे जिंद तेरी चल जायगा रे ॥ ७ ॥
नर करणा होय सो करलेवो, यहु मोसर जाण न दीजियै रे ।
तुम सांझ करत्त सवेर करौ, दिन माहिं करौ जाम कीजियै रे ॥
महुरत्त करत घटीजु करौ, पलछिन्न माहीं करलीजियै रे ।
कहै सेवग कीयां न ढील बने, एतो सास उसासहि छीजियै रे ॥ ८ ॥

इति द्वितीय परिच्छेदः ।

अथ तृतीय परिच्छेदः।

रामरक्षा।

ॐ अखंडं मंडलाकारं व्याप्तं येन चराचरम्।
तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः॥ १॥

आत्मगुरुभ्यो नमः। परमात्मगुरुभ्यो नमः। आदि गुरुदेव अन्त गुरुदेव शरण गुरुदेव के चरणारविन्द पादुका नमोस्तु से हरन्ते सर्व-व्याधि सकल तन्ताप दुःख दारिद्र रोगपीड़ा कलह कल्पना सकल विघ्न खंड खंडा।

ॐ तस्मै श्रीरामरक्षा ररंकारबाणी। अनुभव तत्व निर्भय मुक्ति जाणी॥ बांधिया मूल देखिया स्थूल गगन गर्जन्त धुनि ध्यान लागा। रहित तीनू गुणां शील सन्तोषमें रामरक्षा हिये आकार जागा॥ पंच तत्व पचीस प्रकृति पंच भूतात्मा पंचवाई। समदृष्टि साम घर आणि प्राण अपान उदान व्यान समान अनहद शब्द सिल खबर पाई॥ उलटिया सूर ग्रह डंक छेदन किया पोखिया चन्द्र तहाँ कला सारी। अग्नि प्रगट भई जरा वेदन टरी डाकिनी शाकिनी घेर मारी॥ धरणि अम्बर विचै पन्थ वहता रहै प्रेत अरु भूत दानव संहारा। वज्रकी कोटड़ी वज्रका दंडले वज्रका खड्गले काल मारा॥ गरुड़ पक्षी उड्या नाग नागिनी डस्या विष की लहर निद्रा न झाँपै। पिंड निर्मल भया पींजरै पढ़त सूवा रोग मथवाय पीड़ा न व्यापै॥ रोम रोम ररंकार उचरन्त बाणी श्रवण सुणत कर चित्त मेला। झिलसिलै ज्योति झण-कार झणकत रहै नाद बिन्दे सिल्या रंग रेला॥ शून्यके नेहरे शून्य सजता रहै आपसे आप सिल आप लागा। शरीरसे शरीर सिल शरीर निरखत रहै जीवसे शीव मिल ब्रह्म जागा॥ नैनसे नैन मिल नैन निरखत रहै मुखसे मुख सिल बोल बोला। श्रवणसे श्रवण सिल नाद सजता रहै शब्दसे शब्द सिल शब्द खोला॥ निरतसे निरत सिल निरत लागी रहे सुरतसे सुरत सिल सुरत आवै॥ ध्यान से ध्यान सिल दम सजतारहै रंगसे रंग सिल रंग गावै। ज्ञानसे ज्ञान सिल ध्यानसे ध्यान सिल जाप अजपा जपै सोई दम जाय सो लाय लेखै। चित्तसे चित्त सिल चित्त चेतन भया उन्मनी दृष्टिमें भाव देखै॥ द्वारसे द्वार सिल शीशसे शीश सिल देह विदेह सिल भेद

भेदा। तिहुँ लोकमें घोर अंधार सब मिट गया श्वेत ही स्फटिकमणि हीर बेधा॥ उघरे नैन उचरे बैन चन्द्र अरु सूर राखिया थीर थीरं। हनुमत हुँकार मचती रहै यों सोखिया पकड़ बावन वीरं॥ गंग उलटी चलै भानु पश्चिम मिलै निकसिया बिम्ब प्रकाश कीया। आत्म माहिं दीदार देखत रहै यों अजर अमर हुइ आप जीया॥ खुणखणी रुणझणी नादरी नाद नादं सुषुम्ना का छकै स्वाद स्वादं। चाचरी भूचरी खेचरी अगोचरी उन्मनी पंच मुद्रा साधन्ते सिद्धा योगेन्द्रा डरे डूंगरे जले थले घाटे अवघटे तसै श्रीरामरक्षा करै वाघ वाघणीका क्रोध जाला। चौंसठ योगिनी का काटकुटका करों खेचरा भूचरा क्षेत्रपाला॥ नवग्रह दूत पाखंड टारों, दुहाई फिरती रहै अलख निरंजन निराकार की, चक्र फिरिवो करै वाटमें घाटमें पंथमें घोरमें शोरमें देश विदेशमें राज का तेजमें सांकड़े पैसताँ तसै श्रीरामरक्षा करै। जागतां सोवताँ खेलताँ मालताँ सन्तका शीश पर हस्त फिरिवो करै॥ चक्र लीयाँ रहै आप रक्षा करै गुरुका जाप ले गुरु सेवा। चन्द अरु सूर घर एक रहिवो करै जीतिया संग्राम देवाधि देवा॥ फेर सूधा किया उलट अमृत पिया विष का जहर सब दूर भागा। कमल दल कमल दल ज्योति ज्वाला जगै भँवर गुंजार आकाश लागा॥ रमत सार सोखन्त रुधिर विन्दु रोम नाड़ी गरजन्त गगन वाजन्त वेणु शंख शब्द ध्वनि त्रिकुटि दास रामानन्द ब्रह्म चीन्हन्ते ब्रह्मज्ञानी। रामरक्षा भणन्ते उद्धरे प्रानी॥ लागिया विचार पारंगता पन्थे घोरे राजद्वारे संग्रामे संकटे सन्ध्याकाले मध्याहे श्रीरामरक्षा उचरन्ते उद्धरे प्रानी पापे न लिपन्ते पुण्ये न हारन्ते जे जपन्ते जनार्दनं मोक्ष मुक्ति फल पावन्ते॥

रेखता।

नाम परतापते कालकंटक टलै नाम परतापते कर्म खोया।
नाम परताप डर डाकणी ना डसै नाम परताप मन मैल धोया॥
नाम परतापते ताप त्रिविधा गई नाम परताप ग्रह नाहिं ग्रासै।
नाम परताप भव भर्म भागा सबै नाम परताप दुख दूर नासै॥
नाम परताप जल जोगिनी चंडिका भैरवा भूत छल छिद्र नाहीं।
नाम परतापते विघ्न व्यापे नहीं नाम परताप तिहुँ लोक माहीं॥
नाम परताप की सन्त महिमा करै विष्णु शिव शेष ब्रह्मादि सारा।
दास हरिराम कहै नाम परतापते जगत जल माहिं जन होइ पारा॥ १॥
नाम निज औषधी भव व्यथा कर्मको शब्द का ध्यान इमान धारै।
साधु सधीर को विघ्न व्यापै नहीं प्रेमका पथ्य दे कुपथ्य गारै॥

वायु गंभीर विष रोग हरजाहिंगे पित्त परिवार सब दूर पीरा।
कफ तनु कास अरु श्वास आधो फिरै डहरवा नहरवा ज्वर जाहिं तीरा॥
ताव तनु तप वेलाज एकान्तरो पच्च गड गूंब गोहान फोड़ी।
दास हरिराम कहै वात ऐसी वणी तत्त के नाम वेदन्न तोड़ी॥ २॥

राम रिछक नवखंड सप्त द्वीपाँ डर नाहीं।
राम रिछक तिहुँलोक भवन चवदै सुख थाहीं॥
राम रिछक तनुमाहिं गेह क्या वनमें वारै।
राम रिछक तिहुँलोक कहो कुण जन को मारै॥
राम रिछक छल छिद्र भूत डाकण डर नाहीं।
राम रिछक परताप तेजरो तनुते जाहीं॥
राम रिछक ते काल दूरि सेती कर जोड़ै।
राम रिछक तिहुँलोक वचन कुण पूठा मोड़ै॥
राम रिछक नवदेव साधुका रक्षक होई।
राम रिछक तेतीस साधुको बन्दै सोई॥
राम रिछक ऋधि सिद्धि साधु के चरणाँ दासी।
राम रिछक परताप पड़ै नहिं जम की पासी॥
राम रिछक गुरुदेव सन्त सो शीश विराजै।
राम रिछक परताप अगम जहँ वाजा वाजै॥
राम रिछक परतापसे सन्त सुमरि निर्भय भया।
रामदास रट राम को अगम देश आघा गया॥ १॥
राम रिछक परताप काल दूरे ही भागै।
राम रिछक परताप जम्मका दूत न लागै॥
राम रिछक परताप जक्ष जोगण डर नाहीं।
राम रिछक परताप संत निर्भय जग माहीं॥
राम रिछक परताप मूठ छल छिद्र न लागै।
राम रिछक परताप विघ्न दूरे ही भागै॥
राम रिछक परताप भैरवा भूत नसावै।
राम रिछक परताप वीर वेताल न आवै॥
राम रिछक परताप ताव तनु व्यापै नाहीं।
राम रिछक परताप रोग दुख दूर नसाहीं॥
राम रिछक परताप नवग्रह निकट न आवै।
राम रिछक परताप इन्द्र पूजा ले थावै॥

राम रिछक परताप चोकियाँ चारों जीता।
राम रिछक परताप जगतमें भया वदीता॥
राम रिछक परताप चढ्या गढ ऊपर जाई।
राम रिछक परताप नोवताँ निर्भय वाई॥
राम रिछक परतापतें सुन सागर में रमरया।
रामा राम प्रतापतें काल विघ्न दूरे गया॥ २॥

राम ररकार तें निजर लागे नहीं अघ मोचन करे अनँत केरा।
राम ररकार तें ताप व्यापै नहीं जम्मका दूत तहाँ दे न घेरा॥
राम ररकार तें अघ दूरां डरे राम ररकार तें काल थरके।
राम ररकार तें डक डाकण डरे राम ररकार तें प्रेत सरके॥
जंत्र अरु मंत्र लोह लाठ लागे नहीं राहु अरु केतु शनि रहत दूरा।
डर डफर तंतार संचार व्यापे नहीं पनग नव नाथ कहै संत पूरा॥
असुर सुर नसि चलै शेष धिन धिन कहै शंभु अरु विष्णु कहै सुजन मेरा।
सप्त पाताल उच्छाह उच्छव करै नमो ररकार परताप तेरा॥
भजन परताप भय काल सबका मिट्या सुमर ररकारकी शरण आया।
जन रामा किया आपसा सहजमें अहो अपार अपार गाया॥ १॥
शरण गुरुदेव की राम रिच्छक सदा विघ्न भव काल जंजाल दूरा।
स्वर्ग पाताल आकाश मृत्यु लोकमें सद्गुरु बाल निर्भयसनूरा॥
देश परदेश घट घाट वट वाटमें रिछक रमतीत सबमें दयाला।
भोर कहा संझ पुल मंझ आनंद कर हरण अनेक अघ मन्न माला॥
असुर सुर पक्षि जलजीव चर अचर सब नवग्रह आदि सहायक सदाई।
एक सँवला जहाँ अनत सँवला सदा अदा जम चोट विघ्न न कदाई॥
चौदह लोक पर लोक निर्भय रमत राम रमतीत बल निर्भय सादू।
जहाँ विचरत तहाँ मगन उद्योत अति रामजन अगम घर अगम तादू॥
नाटकी चेटकी अंत्र मंत्रादि सब तंत्रको जोर कोउ नाहिं लागै।
डाकीणी साकिणी प्रेत छल छिद्र अनँत राम परताप तें दूर भागै॥
राम परताप बल राम सुख संपदा राम अखूट भंडार मेरे।
राम आचार विचार किरिया सबै राम पुनि पाठ गरथाँन हेरे॥
राम मुझ धणी समर्थ शरणा सबल तात अरु मात कुल वंश सारा।
राम पोषण भरण राम प्रतिपाल नित सत्य ही शब्द मेरो आधारा॥
राम संजीवनं प्राण जीवन सदा आस छिनवास रग रोम रिच्छा।
दम ता कदम बल एक कारण करण आदिसे अंत लेवै परिच्छा॥

एक रस एक प्रतिपाल समर्थ धणी घणी सस्तूति परणाम जाकूं।
गर्भ संभाल कृपालु ऐसी करी काढ़ ततकाल धिन वंदि ताकूं॥
जाठरा अग्निमें मग्न आनंद करण हरण अनेक दुख बाप बापं।
छाजनं भोजनं अनँत सुख जिण दिया जीया ता शरण सुर मेट तापं॥
नमस्ते नमस्ते अजब सुख रामजी जयति अनूप जन भूप देवा।
अगम गति अगम गति अगम आनंद अति सत्यही शब्द नित करूं सेवा॥
जाण धिनराय कहा गाय मुख आपणै तरण महाराज तोहि लाज स्वामी।
परम परलोक अहिलोक जानत नहीं करण सहाय इण लोक नामी॥
अपत कहा सिफ्त कहो कौन मुख उचरण शरण अन्नेक अन्नेक तेरे।
कोटि अन्नेक अन्नेक है बहु गुन्हा करण प्रति पाल साईंत मेरे॥
अधर धिन सधर मम तात पूरण ब्रह्म चार पद अर्थ संभाल देता।
भक्ति अरु मुक्ति वैकुंठ रग रोम रम राम भज राम भज राम कहता॥
राम महाराज की गोद चरणारविन्द तीन त्रय कालमें संत सारा।
जन रामा नमो शरण जाकी सदा राम रिच्छा सोइ विरद थारा॥२॥

रक्षाबत्तीसी।

दोहा।

राम इष्ट आधार बल, राम आस विश्वास।
राम भरोसे रम रह्या, निर्भय रामादास॥१॥
राम तेज नटखट्ट में, मुड़ै न हरिका दास।
चरण कमल छाडै नहीं, रहै सत्त गुरु पास॥२॥
कहा दोखी सोखी कहा, कहा देश परदेश।
रामदासके रामजी, रक्षक सदा हमेश॥३॥
शस्त्र अस्त्र छल छिद्र जो, मूठ मंत्र रिपु घात।
व्याल सिंह दामनिदमक, रक्षा राम सु नाथ॥४॥
भवन गवन परवत वनी, अवघट घाट अनेक।
रामदासके रामजी, आस पास बल एक॥५॥
कूप खाड ज्वाला अग्नि, निशा चोर भय धाड़।
रामदासके रामजी, अंध धुंध मँदवाड़॥६॥
समय काल पावक प्रलय, शीत उष्ण सुर ताप।
रामदासके रामजी, रक्षक आपो आप॥७॥

राहु केतु सूरजसुतन, अवनिपुत्र ग्रह घात।
बिगरी में सखरी करण, तिघरी मेटण तात ॥ ८ ॥
तात मात हित प्रसनता, रामदासके राम।
समर्थ प्रतिपालक सदा, खान पान आराम ॥ ९ ॥
चिंता दीन दयालुको, मो मन सदा आनंद।
जायो सो प्रति पालसी, रामदास गोविंद ॥ १० ॥
विघ्न विदारण रामजी, आनंद करण अनेक।
रामदास मन वच करम, तारण कारण एक ॥ ११ ॥
दिवस मास जोगिनि दशा, गज अंतर कृत सोहि।
नखत जोग वाहण असम, राम इच्छा सुख मोहि ॥ १२ ॥
लगन दुघड़ियो शुभ अशुभ, राम वार व्रतमान।
दिशाशूल सन्मुख चन्द्र, कहा साँवण पर ज्ञान ॥ १३ ॥
ऊठत बैठत जागताँ, सोवत स्वप्नै माहिं।
राम धणी प्रेरक सदा, रामदास डर नाहिं ॥ १४ ॥
मंडप मंड अधार इक, घट विच आतम राम।
प्रगट पिंड रक्षा करण, रामदास विश्राम ॥ १५ ॥
सब व्यापक पूरण कला, नमस्कार भगवंत।
राम इच्छा विचरत जहाँ, रामरायके संत ॥ १६ ॥
दशोंदिशा आनंद अगम, चिदानंद भगवान।
रामदासके रामजी, चितवन जीवन प्रान ॥ १७ ॥
स्वर्ग मृत्यु पाताल जो, वा सुर नर अरु नाग।
राम रक्षा सर्वज्ञ सुदृढ, रामदास वडभाग ॥ १८ ॥
आधि व्याधि मेटण सकल, अकल अखंडी देव।
रामदास ता आसरे, सुर विरंचि कर सेव ॥ १९ ॥
सेव देव मूरति धणी, हरि आचार विचार।
मंत्र जाप पूजा परम, नित्यनियम गुण सार ॥ २० ॥
तीरथ व्रत एकादशी, रामदासके राम।
राम पंथ संस्थान निज, क्षेत्र धाम परणाम ॥ २१ ॥
राम धारणा राम सुख, राम हमारे ध्यान।
राम संप्रदा वैष्णव, पूरण ब्रह्म ज्ञान ॥ २२ ॥
तिलक छाप माला मंत्र, नर नारायण भेष।
मंदिर शालग्राम यह, पूजा परम विशेष ॥ २३ ॥
राम बोलाऊ साथ मम, सदा संगि सुखरास।
सजन बंधु बेली कुटुंब, राम रत्न धन पास ॥ २४ ॥

राम आसरो राम पख, दूजा वल नहिं कोइ।
पावन पतित दयालुजी, ता शरणै सुख होइ ॥ २५ ॥
शरणागत प्रतिपालना, पावन पतित कितान।
रामदास विश्वास यह, करणी दिश हैरान ॥ २६ ॥
आथी पोथी रामजी, उद्यम राम रमाय।
राम दिशावर देश मम, रामाज्ञा सो पाय ॥ २७ ॥
रामाज्ञा आवत सोई, रामाज्ञा सो दास।
राम भावना प्रसिद्धता, भवेत रामादास ॥ २८ ॥
ज्ञान भक्ति वैराग्य सिधि, क्रिया जोग गुण आद।
राम सता आसक्तिता, वाणी विमल अगाद ॥ २९ ॥
मस्तक पर गुरु देवजी, हृदै विराजे राम।
रामदास दोनूं पखां, सबविधि पूरण काम ॥ ३० ॥
श्वास श्वास दम दम विचै, रक्षक राम दयाल।
रामा राम उचारताँ, कदे न व्यापै काल ॥ ३१ ॥
रक्षा वतीसी रामकी, जानत हरि गुरु दास।
रामस्नेही रामदास, आनंद अगम विलास ॥ ३२ ॥

अथ आरती।

१

ऐसी आरती घट ही में कीजै, राम रसायन निशिदिन पीजै। टेर।
घट ही में देवल घट ही में देवा। घट ही में सहज करै मन सेवा ॥ १ ॥
घट ही में पांच पचीसों पंडा। घट ही में जागै जोति अखंडा ॥ २ ॥
घट ही में पाती फूल चढावै। घट ही में आतम देव मनावै ॥ ३ ॥
घट ही में शंख शब्द घन तूरा। घट ही में प्रेम परस निज नूरा ॥ ४ ॥
घट ही में गावै हरिका दासा। घट ही में पावै पद परकासा ॥ ५ ॥
जन हरिराम राम घट माहीं। विन खोज्यां कोइ पावै नाहीं ॥ ६ ॥

२

आरती करौं गुरु हरिराम देवा। ब्रह्म विलास अगम घर सेवा। टेर।
आप संत ब्रह्म व्यापारी। राम नाम विणजै बहु भारी ॥ १ ॥
ज्ञान ध्यान अनुभव अनुरागी। रोम रोम में झालर वागी ॥ २ ॥
इड़ा पिंगला सुषमण भोगी। अटल अमर अनुभव पद जोगी ॥ ३ ॥
शील संतोष साच सत धारी। सता समाधि शून्य से यारी ॥ ४ ॥
आय रामियो शरण तुम्हारी। पल पल ऊपर प्राण अँवारी ॥ ५ ॥

३

ऐसी आरती करूं गुरु देवा । तन मन वचन सहज करि सेवा । टेर ।
प्रगटे इसा परम गुरु स्वामी । आदि अंत होते निज नामी ॥ १ ॥
ज्ञान ध्यान ऐसे गुणधीरा । सहज समाधि सदा सुप सीरा ॥ २ ॥
सेवग संत शरण जो आवै । ज्यूं मलियागर भुवंग मिलावै ॥ ३ ॥
सतगुरु करम काटि निरवाला । मलियागर मेटै पँग ज्वाला ॥ ४ ॥
वंदन करै हरिदेव सदाई । सतगुरु चरनकमल चितलाई ॥ ५ ॥

४

निज मनभाव आरती सारी । श्रीगुरुरामदास वलिहारी । टेर ।
सतगुरु ज्ञान ध्यान की मूरति । सतगुरु समी और नहिं सूरति ॥ १ ॥
ब्रह्मा विष्णु शिव सतगुरु माँई । अनंत कोटि जन परचे साँई ॥ २ ॥
दीनदयालु जीवां के तारग । सतगुरु मोक्ष मुक्ति के मारग ॥ ३ ॥
वारंवार करौं परणामा । परम धाम आनंद विश्रामा ॥ ४ ॥
अष्ट विधान आरती षोड़स । द्यालवालके मस्तक मोड़स ॥ ५ ॥

५

आरती करूं गुरुदेव निरंजन । सगुण रूप धरे जिन अंजन । टेर ।
धर अवतार केता जिव तारे । आयां शरण सवै अघ जारे ॥ १ ॥
काल जंजाल जरा डर नाहीं । निरमै निजानंदपद माहीं ॥ २ ॥
जय जय जय जैमलके नंदन । हरिरामा रामा धिन वंदन ॥ ३ ॥
द्यालवाल सतगुरु परणामा । पूरणदास लिया विसरामा ॥ ४ ॥

६

ऐसी आरती करो मन ज्ञानी । पलक न विसरो सारंगपानी । टेर ।
पांच पचीस का करो विचारा । तामें आतम राम पियारा ॥ १ ॥
प्रेम को तेल सुरत की वाती । ब्रह्म की जोत जगै दिनराती ॥ २ ॥
आरती गुरु गोविंदजू की करियै । कहै कवीर भव सागर तिरियै ॥ ३ ॥

७

आरती करौं पति देव मुरारी । चंवर ढुरै बलिजाउं तुम्हारी । टेक ।
चहुं दिश आरती चहुं दिश पूजा । चहुं दिश राम मेरे और न दूजा ॥ १ ॥
आरती कीजै प्रीति लगाई । जन्म जन्म के पातक जाई ॥ २ ॥
आरती कीजै ऐसैहि तैसे । ध्रुव प्रल्हाद करी शुक जैसे ॥ ३ ॥
आनंद आरती आतम पूजा । नामदेव भणै मेरे देव न दूजा ॥ ४ ॥

इति आरती ।

ॐनमः श्रीमद्धरियानन्देभ्यः ।

पूज्यपादाचार्य श्री १०८ श्री हरिरामदासजी महाराज की परची प्रारंभः ।

दोहा ।

वन्दि राम गुरुदेव को, परम भेव दरसाय ।
धार्यो बपु निज जगत हित, सो मम सदा सहाय ॥ १ ॥

चौपाई ।

बन्दौं आदि पुरुष परमेसं । कियो ताहि नरतनु बकसीसं ॥
वन्दौं पर्म धर्म गुरुदेवं । जिन दीन्हो निज भक्ति सुभेवं ॥ १ ॥
अनँत कोटि वन्दौं हरिजनको । ताते करो शुद्ध मनतनको ॥
श्रीमुख भगवत कहत अनूपं । हरिगुरु सन्त एक ही रूपं ॥ २ ॥

दोहा ।

मति उपजावन परम गुरु, उर प्रेरक निज सार ।
नाम सहित परनालिका, वरणौं करि निरधार ॥ १ ॥

छन्द मनहर ।

रामानन्द वन्दि दास वन्दन अनन्तानन्द
वन्दौं कर्मचन्द देवाकर सुखकन्दकों ।
पूरण ही मालवी जू दामोदरदास वन्दौं
नारायण रु मोहन वन्दौं तजि द्वंद्वकों ॥
वन्दौं जन माधौदास सुन्दर चरणदास
जैमल हरिराम वन्दि वन्दौं ता नन्दकों ।
वन्दौं हरिदेव मोतीराम रघुनाथ वन्दि
वन्दौं गुरुदेव गंग वारू मम जिन्दकों ॥ १ ॥

छन्दइन्दव ।

जैमलदास नमो जगतारण, दास नमो हरिराम दयालं ।
जासु के शिष्य नरायणदासहि, पूज्य विहारिय प्रग्गट बालं ॥
ज्ञान प्रकाश उजास भयो उर, बुद्धि लही हरिदेव विशालं ।
तासुके मौतियराम भए जन, ताहि कृपा रघुनाथ कृपालं ॥१॥

छन्द भुजंगी ।

अहं बोध हीनं प्रज्ञा हीन प्रानी । कृपा है सुनाथं दयालं वखानी ॥
कृपा है नरानं सुदासं सुमेवं । सबै काज सिद्धं करूं सन्त सेवं ॥ १ ॥

कृपा है जनं रामदासं विहारी । मनू होय आनन्द सन्तं तिहारी ।
कृपा है हरीदेव देवं तुम्हारी । महा धी प्रकाशं करीजै हमारी ॥ २ ॥
कृपा है सु मोती जु रामं कृपालं । समर्पों जिको भेद रीझै दयालं ॥
कृपा है रघूनाथ कीजै निहालं । जनू देव दीजै सुवाणी विशालं ॥ ३ ॥
कृपा है सु धू प्रह्लादं कवीरं । विराजो हृदै कोटि नन्तं सवीरं ॥
कहौं ग्रन्थ स्वामी कृपादृष्टि कीजै । गुरू रामगंगा इसो भेव दीजै ॥ ४ ॥

सोरठा ।

लिखी पत्रिका दोइ, धरी जु आगे पाटके ।
जो तुम आयसु होइ, तो गुण गाऊं रावरो ॥ १ ॥
जब करि कृपा दयालु, पत्री मनवांछित दई ।
जानि आपनो बाल, आज्ञा कीन्ही मोहिकों ॥ २ ॥

दोहा ।

शुध है अन्तःकरण जू, मन बुधि चित अहँकार ।
वरणों सुयश दयालुको, उपजै हर्ष अपार ॥ १ ॥
वरण न जानत मूढ़ अति, मति जैराम मलीन ।
उर प्रेरक हुइ कहत है, सतगुरु गंग प्रवीन ॥ २ ॥

चौपाई ।

श्रीहरिराम निरंजन श्यामं । प्रगटे आइ सिंहस्थल ग्रामं ॥
निर्गुण निजानन्द निरकारं । पूरण ब्रह्म सन्त अवतारं ॥ १ ॥
हरि अवतार चार परकारं । जानत वेद सन्त संसारं ॥
जिसि बपु धर्‍यो कृष्ण रघुनाथं । सुर नर सबजन करण सनाथं ॥ २ ॥
अज विनती इल भार उतारण । मेटण अधरम असुर सँहारण ॥
इसि अज्ञान हरण अंधारं । प्रगट भए गुरुद्याल मुरारं ॥ ३ ॥
अनुभव कला आदि अवतारं । जा प्रताप वरणूं विस्तारं ॥
परची सहित कथा करि प्रीतं । प्रापत ज्ञान विज्ञान अद्वैतं ॥ ४ ॥
प्रथम भक्ति ऐसी जन धारी । नाम महातम ग्रन्थ विचारी ॥
सुमरण कीन्हो श्वास उश्वासं । जब उर माहीं लह्यो प्रकासं ॥ ५ ॥
तब सबही तें भए उदासी । जानी जगञ्जाल जम पासी ॥
यह निश्चय मनमाहिं विचारा । गुरु विन होइ न भव तें पारा ॥ ६ ॥

दोहा ।

पूछत फिरत सु जननते, ब्रह्मज्ञान कहु भाष ।
महापुरुष जन मिलनकी, अति अन्तर अभिलाष ॥ १ ॥

छन्द मनहर ।

एकसमें गाम रामसर पधारत भए
जहाँ मिले हरिके सनेही पद गाए हैं ।
सुनिके शब्द आप कह्यो वे पुरुष कहाँ
जब वह जन स्वामी जैमल बताए हैं ॥
सो तो विराजमान दुलचासर गाम माहिं
महिमा की बेर बेर बहुत सराए हैं ।
आरत तें तबै संग ह्वैके उदराम ही के,
ऐसे ही सुनत धाए जेज न लगाए हैं ॥ १ ॥

कुंडलिया ।

स्वामी जैमल धिन सदन जहाँ पहूंते जाइ ।
पुर दुलचासर भूमिका सप्तपुरी सम ताइ ॥
सप्त पुरी सम ताइ पुरी परसत फल एका ।
हरि गुरु सन्त मिलंत होहिं जिग पेंड अनेका ॥
श्रीमुखसे भगवत माहात्म्य कह्यो भागवत गाइ ।
स्वामी जैमल धिन सदन जहाँ पहूंते जाइ ॥ १ ॥

दोहा ।

दे पुनि पंच प्रदक्षिणा, अष्ट अंग परणाम ।
स्वामी जैमलदासके परसे पद हरिराम ॥ १ ॥

कुंडलिया ।

गोरख के पद भर्तृहरि पारस के पद नेम ।
परसे जैमलदास पद शिष हरिराम सु एम ॥
शिष हरिराम सु एम प्रेम अरु नेम प्रकाशय ।
ज्ञान ध्यान वैराग्य आइ मिलिय सब आशय ॥
भक्ति मुक्ति तत भावना जोग जुक्ति उन जेम ।
गोरखके पद भर्तृहरि पारस के पद नेम ॥ १ ॥

दोहा ।

यों पदपंकज परस करि, हस्त जोर करि जास ।
मन तन की सब वारता, प्रश्न करी गुरु पास ॥ १ ॥

छप्पय ।

धन्य धन्य मम भाग आज अनुराग दरस्सं ।
धन्य धन्य मम भाग मिले वैराग्य पुरुस्सं ॥

धन्य धन्य मम भाग प्रेम अरु क्षेम प्रकासं ।
धन्य धन्य मम भाग जाग भय भर्म विनासं ॥
धन्य आज मम जन्म धिन तातें तुम दर्शन भयो ।
जा काज सकल पूछत फिरत सो मनवांछित फल लयो ॥ १ ॥

छन्द नाराच ।

करे अभ्यास श्वास मूँदि जोग जासु धारणा ।
धरे उपास वहुत ही विलास ब्रह्म कारणा ॥
निजं निवास ना लह्यो कृपा सु अब्ब कीजिये ।
गुरू अगाध ज्ञान ध्यान भक्तिज्ञान दीजिये ॥ जिय भक्ति० ॥ १ ॥
फिरे सु तीर्थ कर्त काज देश देश मज्झिये ।
सुधाम ठाम ठाम के सनान व्रत्त सज्झिये ॥
सही स भेद पैं विना नही स राम रीझिये ।
गुरू अगाध० ॥ २ ॥
करी जु सेव पूज देवकी जु सो अराधना ।
कछू जपेव नाम तेव भेव भिन्न साधना ॥
अबे तुह्मार संग भो विचारि विर्द लीजिये ।
गुरू अगाध० ॥ ३ ॥
जँगम्म शेख सेवरे न भेवरे सु नाम के ।
रँगे वरे रजोग के सँगे वरे न श्याम के ॥
असार जान पैं तजे न कोइ काज सीजिये ।
गुरू अगाध० ॥ ४ ॥
लगाय छार बप्पुके बधाय भार जट्टिये ।
अपार संग देखिये विकार कान फट्टिये ॥
निराजुकार नाम के आकार में अलूझिये ।
गुरू अगाध० ॥ ५ ॥
जती जु जैन व्यास फेर ढेर सब्ब ही लहे ।
भए उदास पेखिके परं प्रकाश ना कहे ॥
सन्यास कान फूँक पैं कछु न मन्न धीजिये ।
गुरू अगाध० ॥ ६ ॥
पढ़े कुरान काजियं भुलान भर्म होइये ।
मुलाँ मसीत मान सु वहे सकल्ल जोइये ॥
नकल्ल देखि बांग दे दखल्ल देश रोजिये ।
गुरू अगाध० ॥ ७ ॥

वदन्ति पाठ बोधका सु सोधका सिधान्तकूं ।
लियो निहारि के सबे भगत्त सेख पन्थकूं ॥
सिले अलेख मित मोहि आज प्रेम भीजिये ।
गुरू अगाध० ॥ ८ ॥

दोहा ।

जोगी षटदरशण सुमग, लिए निगम वच सोध ।
अहो देव स्वामी अगम, कहो सुगम निज बोध ॥ १ ॥

छन्द भुजंगी ।

अहो देव स्वामी कहो बोध आदू । सिले कोटि अन्नेक जे धाम साधू ॥
अहो देव स्वामी चिदानन्द रूपं । चहूँ वेद को सार भाखो अनूपं ॥१॥
अहो देव स्वामी तुम्हें भेद सारो । बतावो अबै ब्रह्म मोकों उधारो ॥
अहो देव स्वामी सिखावो सु साँई । वुहो जातहूं मैं भवं सिन्धु माँई ॥२॥
अहो देव स्वामी परं ज्योति भासं । दहो दूरि दोषं लहो संग दासं ॥
अहो देव स्वामी अभैदान आपो । दशों दोष पापं तिहूंताप कापो ॥३॥
अहो देव स्वामी निराकार नाथं । अमातं अतातं अभ्रातं अजातं ॥
अहो देव स्वामी अरातं अप्रातं । अनाथं सनाथं सदातं अपातं ॥ ४ ॥
अहो देव स्वामी अजोनी अमोनी । नमोनी तमोनी रजोनी सतोनी ॥
अहो देव स्वामी नही आर पारे । सघन्नं रहे पूर व्याप्यैक सारे ॥ ५ ॥
अहो देव स्वामी त्वमेवं अरूपं । जनं हेत धार्‍यो तत्व पंच स्वरूपं ॥
अहो देव स्वामी सदा वीतरागं । गिन्यो तीन लोकं सुखं विष्ट कागं॥६॥
अहो देव स्वामी न ब्रह्मादि भेवं । अहो देव स्वामी सु देवाधिदेवं ॥
अहो देव स्वामी दयाके सु कन्दं । मया सोइ कीजे हरो मोह फन्दं ॥७॥
अहो देव स्वामी गहो हाथ नाथं । परा भेद दीजे सु कीजे सनाथं ॥
अहो देव स्वामी कृपाभौन दीपं ।प्रकाशो हृदै सोइ मेरे समीपं ॥८॥
अहो देव स्वामी भवं भीति टारो । अहो देव स्वामी परं प्रीति पारो ॥
अहो देव स्वामी महा मोक्ष रासी । अहो देव स्वामी परेशं प्रकासी ॥९॥
अहो देव स्वामी परानन्द ईशं । करो सोइ साचो सु शब्दं वरीशं ॥
अहो देव स्वामी शरण्यं रखावो । परा प्रेम भक्ती सु नेमं वधावो ॥१०॥
अहो देव स्वामी कहो रीति ऐसी । कही जो अनन्तं सु सन्तं हि तैसी ॥
अहो देव स्वामी अपो आदि सेवा । जिके सेव मोकों सिले ब्रह्म देवा ॥११

दोहा ।

अहो देव अस्तुति अगम, हम कछु भेव न जान ।
गावत तव यश वेद सब, निज मुख श्रीभगवान ॥ १ ॥

योग युक्ति तत ब्रुवनि को, अवनि सन्त धरि छाप।
त्रिभुवनपति तव कारणे, भवन पधारे आप ॥ २ ॥

सोरठा।

यह तन मन अरदास, सतगुरु श्रवणाँ सँभलियै।
करो ज्ञान परकास, ध्यान धारणा सब कहो ॥ १ ॥

दोहा।

यह अस्तुति सुनि सिखन की, भए सु गुरु मस्ताक।
उदित करण ततज्ञान उर, वदत भए पुनि वांक ॥ १ ॥
यही महातम जानियो, धन्य धन्य हरिदास।
तुमरो भाव सु देखकरि, उपज्यो बहुत हुलास ॥ २ ॥

छन्द पद्धरी।

आप सु वस्तु गाहक्क आज। सब ज्ञान ध्यान लायक समाज ॥
धन धन्य शिष्य सुरता प्रवीन। करि भिन्न भिन्न यह प्रश्न कीन ॥ १ ॥
अब कहौं सकल मैं ज्ञान अंग। जो परापरी भाख्यो प्रसंग ॥
तुम पूछ्यो आदि सु पन्थ मोहि। है आदि पन्थ हरिनाम सोहि ॥ २ ॥
गह रामनाम की परम ओट। जिहि पन्थ मिले जन अनँत कोट ॥
तुम प्रश्न करी शिष कहौं तोय। है सार वेदको ब्रह्म सोय ॥ ३ ॥
दश चार भवन व्यापक्क नूर। आत्मा सु एक उद्धार मूर ॥
गुरुधर्म मिलै भगवान आप। भगजाय भर्म भय दोष ताप ॥ ४ ॥
तुम अभयदान माँग्यो सु दास। सो अभयदान शिवमंत्र जास ॥
तुम मोह मिटण पूछ्यो विधान। मिटि है स मोह अद्वैतज्ञान ॥ ५ ॥
जाच्यो सु शिष्य तुम परा ज्ञान। वह पराज्ञान विज्ञान जान ॥
गुण तीन प्रकृति पाँचों पचीस। मिल एक सदन परब्रह्म ईस ॥ ६ ॥
परकाश ज्योति जहँ तेजपुंज। मिल जीव शीव दलसहस कंज ॥
वो भवन मिल्याँ भव भीति नाहिं। रह सदा एकरस ब्रह्म माहिं ॥ ७ ॥
तैं सत्यशब्द पूछ्यो सु ईस। मैं कहौं मान सत सत सहीस ॥
रघुनाथ सेतु बाँधत सुवार। सो सत्यशब्द तिरिगे पहार ॥ ८ ॥

दोहा।

नाम महात्म्य जु मैं कह्यो, परचा सहित प्रकास।
प्रेमा परा सु भक्ति के, अब लक्षण सुनु दास ॥ १ ॥
परा सु प्रेमा भक्ति पुनि, तुम माँगी शिष सोइ।
है आनन्दहि करण ए, कहौं सँभल मैं तोइ ॥ २ ॥

प्रेमाभक्ति विधान ।

राम प्रथम सरसत रसन, दरसत चिन्ह सु ऐन ।
तरसत हरिके मिलन कों, जल बरसत नित नैन ॥ ३ ॥

छन्द त्रिभंगी ।

जल बरषै नैना अटपट बैना गद्गद शब्दं होत जही ।
नहिं नींद सु रैना भूख लगैना ह्वै लवलीना राम मही ॥
कबहू वक्तं कबहू झक्तं चित्त द्रवंतं प्रेम सदा ।
ऐसे उन्मत्तं कहै स जक्तं शंक जनंतं नाहिं कदा ॥

कुंडलिया ।

प्रेमा भक्ती मैं कही शिष्य यही समझाय ।
जा उर धारन करतही कर्म सबे कटि जाय ॥
कर्म सबे कटि जाय भर्म भय भूत विलावै ।
जन्म मरण तजि जीव पीव पद ब्रह्म समावै ॥
यही चिन्ह दरशाय सही जन जीवन्मुक्ती ।
शिष्य तोहि समझाय कही मैं प्रेमा भक्ती ॥ १ ॥

पराभक्ति विधान ।

दोहा ।

पराभक्ति अब फिर कहौं, सुनिये चित्त लगाइ ।
सामी सेवक एक हुइ, रहै भिन्न दरशाइ ॥ १ ॥

छन्द त्रिभंगी ।

यह परा जु भक्ती धर्म सु रक्ती कहौं सु उक्ती संजुक्ती ।
अति आतम लुक्ती पति अनुरक्ती निकट निरक्ती यों मुक्ती ॥
मिल एकंमेकं स्वामि विसेकं सेवग लेकं सुक्ख लहै ।
पय औ हवि मेकं सो दरसेकं रस पीवेकं भिन्न रहै ॥ १ ॥

दोहा ।

परा सु प्रेमा भक्ति की, कही सु मैं तुम प्रीति ।
सो प्राप्ती अब होनकी, बहुरि कहौं सब रीति ॥ १ ॥

छन्द पद्धरी ।

है प्रथम सोधि गुरु उतम जास । शब्दादि ब्रह्म ब्रह्महि प्रकास ॥
ऐसे जु गुरू ते लहत ज्ञान । सर्वं जु ताहि परब्रह्म जान ॥ १ ॥
अति आरति करुणा चरण लीन । तजि कपट होइ तन मन अधीन ॥
बिश्वास सहित कर उभय जौर । आज्ञा सु लहत आसीन और ॥ २ ॥

जा विद्ध कहै गुरु जुक्ति जोग। ता विद्ध करै हरि हित सँयोग॥
सम आसण बैठे सहज मारि। वांवैपर द्वै क्षण हस्त धारि॥ ३॥
गुरु मंत्र जबै दै तत्वसार। धारै शिष निश्चय सार धार॥
तब रटै श्वास उच्छ्वासराम। रट मिलै परमपद ब्रह्म धाम॥ ४॥

दोहा।

कऱ्यो प्रश्न अस्तूति करि, जो जो तुम जिज्ञासु।
मैं वात सु हरि मिलन की, सो सो कही जु तासु॥ १॥
ऐसे गुरु के वचन सुनि, उरके खुले कपाट।
ज्यों दिनकर के तेजतें, गयो तिमिर सब फाट॥ २॥

शिष्य वचन।

चौपाई।

दया करो गुरुदेव दयालं। मोकों करो तुम्हारो बालं॥
दीजै परम प्रसादी देवं। तन मन करूं तुम्हारी सेवं॥ १॥

छन्द त्रिभंगी।

शिवमंत्र सु भेवं परं परेवं दीजै एवं परसादं।
तुम कह्यो जनेवं बहुत तरेवं यही सिरेवं है आदं॥
लो विरद सु सेवं शरण तमेवं शिष्य करेवं गुरुदेवं।
जब राम रमेवं अन्तर भेवं अमर अमेवं उरदेवं॥ १॥

दोहा।

गुरुके गुण उत्तम कहे, सो गुरु मिले जु आप।
जुक्ति सहित अब दीजिये, रामनाम को जाप॥ १॥

छन्द त्रिभंगी।

दीजै अब जापं मेटि सँतापं राम अमापं उर प्रगटे।
सद्गुरु परतापं सत्य सु थापं आपं छापं पाप हटे॥
राखो निज नेराचरणा केरा जग उरझेरा हरलीजै।
मेरी यह टेरा बेरंबेरा चेरा तेरा करलीजै॥ १॥

दोहा।

देत भए निज दासकों, दीक्षा जैमलदास।
परिक्षित जैसी शुक परम, ऐसी सुनि अरदास॥ १॥

छन्द त्रिभंगी।

ऐसी अरदासा सुनी जु दासा आन उपासा हरत भए।
अत्यानँद रासा परम उजासा राम प्रकासा करत भए॥

दे निरभै वासा ब्रह्म विलासा आसा पासा दूरि किए।
उर तिमर जु नासा तेज सु भासा सहस्र प्रभासा सूर किए॥१॥

सोरठा।

नव षट चार सुतंत्र, सुमिरत शेष महेशसो।
रामनाम निज मंत्र, वह गुरु कह्यो जु शिषन पें॥ १॥

छप्पय।

परंपरा को धर्म गुरू उर परम शुनायो।
दे करमें परसाद राम निज मंत्र सुनायो॥
नासा निरतर रु सुरति आन घर एक हुयाते।
जोग जुक्ति की वात कही सब परम कृपाते॥
उर भयो जबहि मंगल परम कर्म भर्म सब कप्पिया।
हरिरामदास कों परमगुरु यह उपदेश जु अप्पिया॥ १॥

दोहा।

जो गिरिजा प्रति शिव कह्यो, मंत्र सजीवन जास।
वह उपदेश जु अप्पियो, श्रीगुरु जैमलदास॥ १॥

छन्द त्रिभंगी।

आपे उपदेसं चित्त गहेसं तन मन पेसं करतामं।
सब मेटि अँदेसं काम कलेसं राम रटेसं हरिरामं॥
गुरु युक्ति कहेसं वा विधि लेसं परम परेसं प्रेम पियं।
रसना सुमरेसं पीयूषेसं कंठ प्रवेसं शब्द कियं॥ १॥

दोहा।

कंठ निवासहि करत जू, परम प्रकाशय प्रेम।
जब दयालु उर जानियो, यह जग स्वप्ने जेम॥ १॥

छन्द त्रिभंगी।

जग स्वप्नो जान्यो सुमिरन ठान्यो हिरदै आन्यों अति हेतं।
गुरु वच सत मान्यो मन परचान्यो पीव पिछान्यो निज नेतं॥
उपज्यों वैरागं स्वासि सुवागं अन्तर मागं लिव लागं।
व्रैहं परजागं जग अनुरागं भूषण नागं सम लागं॥ १॥

दोहा।

अंबर गिनै सु अग्नि सम, भवन भाल सम लाग।
यह वैराग्य सु उरन मध, प्रगटै पूरन भाग॥ १॥
कमज्या पूरब जन्मकी, निश्चय परम निधान।
सद्गुरु जैमल महरते, प्रापति भई सु आन॥ २॥

प्रापत भए सु परम पुनि, सबविधि ज्ञान विज्ञान।
राम रूप हरिराम को, सद्गुरु मिले सुजान ॥ ३ ॥
सद्गुरु निरख सु हरष करि, परख धर्म प्रस्तूति।
आप कृतारथ जानि शिष, करत भए अस्तूति ॥ ४ ॥
नमो नमस्ते सत्तगुरु, आतम करण उधार।
यहँ परमारथ काज पर, अवनि धरे अवतार ॥ ५ ॥

छन्द त्रिभंगी।

तो आप तनु धरिके जीव उधरिके तुम ईश्वरके अवतारं।
निश्चय मैं परिके गुन उर धरिके हाथ पकरिके भवतारं ॥
सोऽहं सुमरिके पार उतरिके ह्वै अक्षरके वरदेवं।
दीन्हे शिर हस्तं जय जय जस्तं नमो नमस्तं गुरुदेवं जी० ॥ १ ॥

दोहा।

नमो नमस्ते सत्तगुरु, वारंवार प्रणाम।
शम दम साधन गम सहित, मम सुमराए नाम ॥ १ ॥

छन्द त्रिभंगी।

तो रामं सुमराए भर्म गमाए जुक्ति वताए ततजोगं।
प्रियतम परसाए सुख सरसाए सर्ब नसाए दुखसोगं ॥
मैं चित मैं चाए जैसे पाए निज दरसाए पुरदेवं।
दीन्हे शिर हस्तं० ॥ २ ॥

दोहा।

नमो नमस्ते सत्तगुरु, निजानन्द निरकार।
नृगुण रखाए नाम निज, तृगुण नखाए भार ॥ २ ॥

छन्द त्रिभंगी।

तो तृगुण नखाए कर्म हकाए एक लखाए अंब्रमई।
निजनाम सिखाए राम पकाए अछक छकाए प्रेममई ॥
परब्रह्म दरसाए परंपराए परे वताए सुर देवं।
दीन्हे शिर हस्तं० ॥ ३ ॥

दोहा।

नमो नमस्ते सत्तगुरु, करण सकल सिध काज।
स्वामी जैमलदासजी, जीवां तिरण जहाज ॥ ३ ॥

छन्द त्रिभंगी।

तो जीव जहाजं दीन निवाजं राम सदाजं थिरराजं।
शोभा शिर ताजं परम पराजं ज्ञान समाजं महाराजं ॥

जाने सुरराजं एक तराजं अरु रंकाजं नरदेवं ।
दीन्हे शिर हस्तं० ॥ ४ ॥

दोहा ।

नमो नमस्ते सत्तगुरु, भक्ति दिए निज सेव ।
किए सु बहु गुन आपने, लिए जु शरणै एव ॥ ४ ॥

छन्द त्रिभंगी ।

तो लीन्हे शरणायं ज्ञान गुनायं भर्म भनायं भवनायं ।
हरि कीर्ति सुनायं करि करुनायं अमृत पायं श्रवनायं ॥
रामं रसनायं मोह भनायं साच मनायं उरदेवं ।
दीन्हे शिर हस्तं० ॥ ५ ॥

दोहा ।

नमो नमस्ते सत्तगुरु, अनुभव आप सु इच्छ ।
पर कारज पूरन करन, प्रगट भए कलवृच्छ ॥ ५ ॥

छन्द त्रिभंगी ।

तो प्रगटे कलवृच्छं आप सु इच्छं पूरन मच्छं परकाजं ।
जीवनके रच्छं दयन सु दच्छं परं सुलच्छं उरराजं ॥
तुम सेवा स्वच्छं करन सु अच्छं राखे वच्छं सुरदेवं ।
दीन्हे शिर हस्तं० ॥ ६ ॥

दोहा ।

नमो नमस्ते सत्तगुरु,अपरमपार अपार ।
परा परम परब्रह्मसे, एकमेक दीदार ॥ ६ ॥

छन्द त्रिभंगी ।

तो तुम एकमेकं ब्रह्म विवेकं ज्यों लव नेकं सम गरके ।
मैं भिन भिन पेखं ज्ञान करेकं परम जनेकं तुम हरके ॥
जन कहे जवेकं शब्द सुनेकं साच सुलेकं तुरतेवं ।
दीन्हे शिर हस्तं० ॥ ७ ॥

दोहा ।

नमो नमस्ते सत्तगुरु, लियो जु हाथ सँभाय ।
आतम सुगम उपाय यह, कहे तत्त्व निरताय ॥ ७ ॥

छन्द त्रिभंगी ।

तो तत परम कहाए सुगम उपाए जात समाए जग मगमें ।
दुख काम दमाए नाम प्रमाए राम रमाए रग रगमें ॥

कर जोर लदाए शीश नमाए लागूँ पाए नरदेवं ।
दीन्हे शिर हस्तं० ॥ ८ ॥

दोहा ।

नमो नमस्ते सत्तगुरु, महिमा लहौं न पार ।
त्रिभुवन सुख मैं नाँ चहौं, रहौं चरन चित धार ॥ ८ ॥

सोरठा ।

आदि मध्य अवसान, हुइ प्रसन्न गुरु दीजिये ।
यह माँगूँ वरदान, सेव निरन्तर रावरी ॥ १ ॥
बहुत किए उपकार, तार लिए भव सिन्धुते ।
रामनाम ततसार, वोहित सम मम बगसियो ॥ २ ॥

दोहा ।

यह विनती निज सिखन की, सुनी श्रवन गुरुदेव ।
करि अनुकम्पा कहत मे, सफल सफल तुम सेव ॥ १ ॥

श्रीगुरुवचन ।

कुंडलिया ।

धन्य धन्य शिष धर्म यह, कह्यो निगम लछ जेम ।
दरस्यो मम तव उरन मध, परा परम जन प्रेम ॥
परा परम जन प्रेम नेम नित क्षेम निवासा ।
बहुत बढ़ै परताप मान सत वचन सुदासा ॥
निज हरिजन दिनकर धरणि, गुप्त रहै सो केम ।
धन्य धन्य शिष धर्म यह, कह्यो निगम लछ जेम ॥ १ ॥
यह निज कृपासु वचन सुनि, प्रेम परम परकास ।
जाइपरे गुरुचरनमें, अति करुणा कर दास ॥
अति करुणा कर दास, द्रवति चित रोम हुलासं ।
चले जुगल दृग नीर, सीर सुखरास विलासं ॥
गद गद होइ शरीर सब, शब्द न निकसे जास ।
कहत भए कछु वेर ते, मम तव चरन निवास ॥ २ ॥

शिष्यवचन ।

सोरठा ।

तुमरे शरण निवास, पायो जैमलदासजी ।
हमरे और न आस, स्वामी पदपंकज विना ॥ १ ॥

दोहा ।

जेहि विधि हमने प्रश्न की, तेहि विधि कही सुदेव ।
और सन्देह जु सब दह्यो, वहुरि कहो इक भेव ॥ १ ॥

चौपाई ।

प्रथमहि भक्ति सगुण तुम साधी । सो सब तजी कवन परसादी ॥
निर्गुण भक्ति लही प्रभु कैसे । सो गुरु कहो कृपाकरि जैसे ॥ १ ॥

दोहा ।

शंभू शब्द सु हम सुन्यो, पंथी रूप मिलाप ।
भिन्न भिन्न गुरुदेव अब, कहो कृपा करि आप ॥ १ ॥

श्रीगुरुवचन ।

चौपाई ।

सुनु शिष कहौं यथारथ सहते । हम जब साँवतसरमें रहते ॥
वहाँ एक पन्थी जन आए । नाम गृहस्थ मोहि बतलाए ॥ १ ॥
जैतराम जल पावो बालं । ऐसे वचन कहे ततकालं ॥
जब ही जल तुम्बी भर लायो । तब मैं महापुरुष को पायो ॥ २ ॥
महापुरुष बोले पुनि बैना । मोकों पन्थ बताय सु दैना ॥
जब मैं पन्थ बतावन काजा । चल्यो साथमें ले महाराजा ॥ ३ ॥
चलत चलत पन्थनमें संगा । पूछ्यो एक मोहि परसंगा ॥
साधन कहा करो तुम भाई । सो मोहि अवधू कहो सुनाई ॥ ४ ॥
जब मैं कही ताहि विधिसारी । पाठ करूं अरु सेव मुरारी ॥
सेवा पूज करी अवताँई । निश्चय भयो कि तेरे नाँई ॥ ५ ॥
तब मैं पूछत भयो सु मेवं । निश्चय मोहि बतावो देवं ॥
महापुरुष सामीप्य बुलायो । राम राम निज मंत्र सुनायो ॥ ६ ॥
ब्रह्म मिलन की युक्ति बताई । सेवा पूजा सकल छुडाई ॥
धारी सुरति मूँदकर नैना । लागी राम भजन लिव लैना ॥ ७ ॥
देखे नैन खोलकर जाना । महापुरुष मे अन्तरधाना ॥
तब मैं भयो उदासी मनमें । चहुँ दिशि देखन लागो वनमें ॥ ८ ॥
पूरव कृत्य छुडायो मेरो । संशय उपजि गयो बहुतेरो ॥
विसय भयो सदन चलि आयो । चित चिन्ता अन जल नहिं पायो ॥ ९
रजनी बीति गई जब अरधी । आए देव देखि मोहि दरदी ॥
तब ही भई विष्णु नभ बानी । जब मैं पूछत भयो निदानी ॥ १० ॥

तुम हो कौन कहाँते आए। मोकों यह उपदेश वताए॥
महापुरुष वोले नभ वानी। विरह व्यथा तेरी मैं जानी॥ ११॥
मैं हौं निजानन्द अविनाशी। पूरण ब्रह्म सकल परकाशी॥
तुम कारन आयो तव पुरमें। जन जाने तू जन सतगुरु मैं॥ १२॥
तो तारन आयो हे चेरा। तू है आदि अन्त जन मेरा॥
मान मान सतवचन हमारा। राम राम रटले ततसारा॥ १३॥
संशय डिगमिग छोड़ दहीजे। ज्ञात्त ध्यान में चित्त गहीजे॥
ऐसे वचन कहे गोविन्दं। दूरि किए मेरे दुख द्वंदं॥ १४॥
रामनाम जपियो सुख रासं। जव मेरे आयो विश्वासं॥
शिष तें पूछ्यो राम प्रतापं। इहि विधि मेरे भयो मिलापं॥ १५॥

दोहा।

श्रीसतगुरु के वचन सुनि, उपज्यो अधिक सनेह।
ज्ञान गुप्त सुख मिलन को, मानत भए सु एह॥ १॥

शिष्यवचन।

चौपाई।

हितू नहि सतगुरु तुम जैसा। दीना ज्ञान गुँझ मोहि ऐसा॥
मैं तें मेरी सकल नसाई। भक्ति भाव उर मुक्ति वसाई॥ १॥
प्रथम भए दाता हरि एहा। जिनते पाई मानुष देहा॥
अरु तुम दाता भया सु देवं। नाम महातम दीया भेवं॥ २॥
तुम समान सज्जन नहिं कोई। दीन्हा मुहि अक्षर गुरु दोई॥
रामनाम तत परम परेसं। परम इष्ट शिव सुमिरत शेसं॥ ३॥
यह उपकार कहाँ लगि गाऊं। प्रियतम तोहि पार नहि पाऊं॥
हितू नही तुमसा गुरु मेरे। तन मन वारों ऊपर तेरे॥ ४॥
तुम गुरु अरथ कहे निज एकं। तन मन अनरथ मिटे अनेकं॥
जो गुरु तुम मिलते मुहि नाहीं। आती नहीं सुरति उर माहीं॥ ५॥
वेत्ता सतगुरु सम नहि होते। तो जग संग वृथा तन खोते॥
परम भाग हम दर्शन पायो। होइ प्रसन्न प्रसंग सुनायो॥ ६॥
भाखी परम सुधारस वानी। सतगुरु सबविधि ज्ञान सु जानी॥
धन्य गुरू मोहि दीन्ही धीरा। मेटी आन अज्ञान अधीरा॥ ७॥
तुम गुरु भूमि भानु सम भासे। मम उरके समस्त तम नासे॥
गुन अगमागम लहौं न पारा। विनय करौं मैं वारंवारा॥ ८॥

सोरठा ।

विनती वारंवार, करौं स्वामि कर जोरिकें ।
सद्गुरु रूप तुम्हार, उर में रहो जु अहर्निशि ॥ १ ॥
रामनाम निजनाम, निर्गुण ब्रह्म सनेह जो ।
सद्गुरु समपे स्वाम, ज्ञान ध्यान करिके कृपा ॥ २ ॥
राम मिलन विच रेख, कहूँ न राखी आप मो ।
पुनि वैराग्य विवेक, दियो परम गुरुदेवजी ॥ ३ ॥
प्रेमा भक्ति पुनीत, सव विधि कही जु युक्ति से ।
परंपरा की प्रीत, सो दरसाई मध्य उर ॥ ४ ॥
दीनवन्धु गुरुदेव वारवार यह वीनवों ।
चरणकमल की सेव, करि अनुकम्पा वगसियै ॥ ५ ॥

कुंडलिया ।

स्याही सप्त समुद्रकी पत्र जु धर्तृ होई ।
कलम करत सुरतरुनकी लिखत शारदा सोइ ॥
लिखत शारदा सोइ पार गुन तोहि न पावत ।
आप वुद्धि परमान गुरू महिमा शिष गावत ॥
स्वामी लीजें मान अरज ऐसी गुदराई ।
पत्र जु धर्तृ होइ समद की करौं जु स्याई ॥ १ ॥

सोरठा ।

विनती ऐसी रीति, शिष्य करी गुरुदेवसे ।
देखत भे अद्वैत, एक ब्रह्म घट घट महीं ॥ १ ॥

दोहा ।

ब्रह्मज्ञानको यों भयो, शिष सतगुरु संवाद ।
जिंन जिन कों जब जव मिल्यो, आगम आदि अनाद ॥ १ ॥

घनाक्षरी ।

भयो जू भगवान सुरज्येष्ठ सम्वाद आदि,
वाशिष्ठ रामचन्द्र अर्जुन कृष्णादि कर ।
सप्तऋषि वालमीकि आदि ले सम्वाद भयो,
नारद वसुदेव भयो जैसे प्रह्लाद कर ॥
ध्रुव से लगाइ चित्रकेतु मुनि आदि लेके,
सोई यह वरती जो रीति जन परापर ।
संशय सव गयो ब्रह्म प्राप्ति ज्ञु भई आन,
गुरु शिष मिलाप भयो ज्ञान सम्वाद कर ॥ १ ॥

दोहा ।

उद्धव दसा जु श्याम जिमि, अन्तर मिले सु आप ।
गुरु जैमल हरिराम के, भयो सु एम मिलाप ॥ १ ॥

छन्द मनहर ।

निमि के मिलाप भयो जैसे नव योगिन को ।
जैसे सनकादि भयो हंस जगदीश को ॥
यदु के मिलाप भयो दत्तात्रेय मुनी को जु ।
शुक के मिलाप भयो जनक महीश को ॥
परिक्षित के ज्यों शुकदेव को मिलाप भयो ।
रघु के मिलाप भयो जडभरतीश को ॥
ऐसें हरिराम के मिलाप भयो जैमल को ।
ज्ञान वैराग्य भक्ति नाम बकशीश को ॥ १ ॥

दोहा ।

शिष गुरुदेव मिलाप की, कहाँ कहाँ लगि रीति ।
गुनत चढ़ै रँग ज्ञान को, सुनत बढ़ै अति प्रीति ॥ १ ॥

छप्पय धुरमेल ।

हरिराम सदन आवत भए करि मिलाप गुरुदेव से ।
करि वन्दन करजोर शीश धरिके गुरु आयसु ।
हुइ सनाथ उर हर्ष नाथ पद अंग निवायसु ॥
करिके बहु अस्तुति धर्म निज उर मध धारं ।
शिष सतगुरु के पास विनय करि वारंवारं ॥
इमि जुक्ति सहित सब विधि करी भक्तियुक्त तत भेवसे ।
हरिरामदास आवत भए करि मिलाप गुरुदेवसे ॥ १ ॥

सोरठा ।

दया करी गुरुदेव, जब उर ऐसी विधि बनी ।
भक्ति प्रेमरस भेव, जुक्ति सहित सबही कही ॥ १ ॥

सवैया ।

पुनि कर नमस्कार परदक्षिण आप सु संग सहित उदराम ।
श्रीगुरु तें अति श्रेष्ठ भावसे अष्ट अंग करिके परणाम ॥
ले आयसु हरिराम परम जन आवत भए सींहथल गाम ।
जब मन युगल जु कियो मनोरथ त्यागि चलां सबही धन धाम ॥ १ ॥

नर देहन को दाव वन्यो है कृपा करी है सतगुरु स्वाम।
धकाधूम वहुता गृह माहीं हुइ एकन्त भजाँ हरिनाम॥
शम दम करि धरि ध्यान सुरति सजि विचराँ भूमध ह्वै निष्काम।
गुरुभ्राता ते पन्थ वहत जू ऐसे वचन कहे हरिराम॥ २॥

दोहा।

जगे सु प्रेम प्रकाश उर, मन से भए एकन्त।
राम रटत हरिरामजी, सदन पधारे सन्त॥ १॥

छन्द त्रिभंगी।

सदन पधारे सब सुख खारे लागे प्यारे हरिनामं।
ह्वैवेकों न्यारे कुल व्यवहारे वचन उचारे हरिरामं॥
नहि काम हमारे धंधा खारे मोहिं मुरारे उर प्यारं।
गुरु राह वतारे मो दरस्यारे जग उर झारे दिनच्यारं॥ १॥

दोहा।

चार दिनन को जगत सुख, अति दुख को गंभीर।
तातें तजि वन जाव सां, हरि भजसां सुख सीर॥ १॥

चौपाई।

जब बोले तनके संवंधी। याहीं रहो आप निरवंधी॥
हम भी दर्शण कराँ तुम्हारो। तातें ह्वै कल्याण हमारो॥ १॥
करिं अस्तूति कहत भे सारा। अरु विनवै पुनि वारंवारा॥
धंधा तुमको नाहिं भुलावां। अरु कवहू नहिं ध्यान खुलावां॥ २॥
सब रहसां तुम आज्ञा माँई। घरही माहिं भजो तुम साँई॥
ऐसी सुनी वीनती स्वामी। रहे विराज सु अन्तर जामी॥ ३॥

दोहा।

नहीं काम कछु जगत से, राम भजन से प्रीति।
यों जन बैठे भवन में, सकल मोह गण जीति॥ १॥

चौपाई।

कारण नहीं कछू घर वनको। चित्त एक हरि से हरिजनको॥
ताको मैं दृष्टान्त वतावौं। परम्परा इतिहास सुनावौं॥ १॥

सवैया।

पुनि यदु भूप रहूगण अलरक राजा चित्रकेतु ही जान।
जत मत सहित भोग से निर्वृत जनक विदेह रहे अस्थान॥

एक हि ज्ञान ध्यान दृढ कारण निश्चय एक हि ज्ञान निधान।
यों हरिराम भवन के माहीं पीउ लियो उर माहिं पिछान॥ १॥

दोहा।

लव लागी हरि नाम से, अह निशि एक अखंड।
कबहू तूटत नाहिं जू, जैसे कंठ शिखंड॥ १॥

सवैया।

एक एकन्तं भवन सु आश्रम जामें आप विराजे जाय।
आठों हि याम अखंडित आतम रामहि राम रहे लिव लाय॥
ज्ञान उद्योत ज्योति दिल दीपक ज्यों ज्यों दिन दिन होत सवाय।
परम सु क्षेम उपज अँग अंग सु प्रेम अछक छक नेम सदाय॥ १॥

दोहा।

धिन हरिराम सु धर्म तुम, परम अछक छक प्रेम।
जावत गुरु संगति करन, सप्त कोश नितनेम॥ १॥

चौपाई।

सप्त कोश नितही चलि जावै। परम पुनीत दर्श गुरु पावै॥
रजनी रजनी वहां रहावै। आज्ञा मांगि यहाँ पुनि आवै॥ १॥
श्री सद्गुरु सें प्रीति जु ऐसी। मानों मीन उदक पुनि जैसी॥
संतनकी गति संतहि जानै। हदके जीव सु कहा वखानै॥ २॥

सोरठा।

नही जानै हदजीव, वेहदकी गति वर्णिवो।
गुरु शिष जीव रु सीव, एक मेक उर मिल रहे॥ १॥

छन्द मोतीदाम।

मिले हरिराम सु वेहद माहिं, कभी भिन आदि सु अंत जु नाहिं।
परब्रह्म देव वसे जन वास, लगी धुनि एक अखंड अकास॥
अमी रस नीर चले जव एम, चिदानन्दरूप छके रस प्रेम।
जगी सुनसागर ब्रह्म सुज्योत, इसो गुरुदेव प्रताप उद्योत॥ १॥

दोहा।

शम दम सहित जु राम रटि, पहुँचे शून्य सु गेह।
संत स्वामि गुरुदेव से, दिन दिन अधिक सनेह॥ १॥

छन्द गीतक।

गजराज रेव तटादते, अनड़ादि पक्षि अकाशते।

सफरादि नीर निधादिते, पुंडरीक भानु प्रकाशते।
जिमि बाल मातु निवासते, जिमि पक्षि नेह तरोवरं।
जिमि भृंग पुष्प सुवासते, इमि हंस मानसरोवरं।
पुनि चंद ज्यों जु कमोदिनी, घन मोर चातक स्वांतिज्यों।
गुन प्रेम नारद गानसों, सिध प्रीति जेम सिधान्तसों।
प्रहलाद ज्यों हरि नामसों, अनुराग सन्त एकान्तसों।
हरिराम श्याम सु कारणै, गुरुप्रीति है यहि भाँतसों ॥ १ ॥

दोहा।

तत्त्व वित्त गुरुदेवसे यहि विधि लगी सुप्रीत।
दृष्टि एक कर देखियो, सब घट ब्रह्म अद्वैत ॥ १ ॥

सवैया।

आतम दृष्टि एक करि देखै सृष्टिन से नहिँ वाद विवाद।
सबके जनक सकलके ईश्वर इष्ट राम निजनाम अनाद ॥
जनहरिराम सहत गम शम दम अष्ट याम से लेत प्रसाद।
सहज समाधि अडिग मन आसन गोनिष्ठनके दहत उपाद ॥ १ ॥
भक्ती विना अल्प सुख भासै अन्तर ज्ञान प्रकाशै दीप।
ऐसे गृहतें रहत उदासी जैसे पन्थी नीर समीप ॥
जिमि अरविन्द लिपै नहि अम्बु जु जैसे समुदर माहीं सीप।
जग परपंच समान सु जान्यो जनहरिराम पंच रस जीप ॥ २ ॥

दोहा।

संयम बालमीकि सम, जत मत हनुमत जेम।
वृत्ती जनक विदेह सम, नन्द सुनन्द सु नेम ॥ १ ॥

छन्द गीतक।

परसै सदा सतं पुरी गुरुधाम सो पँच गाँइयाँ।
अस्थान हरिपुर सो दिपै ब्रह्म नीर श्रोत सु न्हाइयाँ ॥
नित नेमसे ढिग सासता पद जासता जनसे लिये।
उदन्वान क्रोश समाज सो षट मास साधत यों भये ॥ १ ॥

दोहा।

नियम सहित गुरु दरश नित, करत भये षट मास।
जब स्वामी भाखत भये, वहीँ भजो हरिदास ॥ १ ॥

श्रीगुरुवचन ।

चौपाई ।

ज्यों निशि बिसिनी जलमें रहै । वसै कलानिधि नभसो वहै ॥
यों तेरा मन मेरे पासा । दूरि नहीं कबहू निजदासा ॥ १ ॥
अब इतनी खेचल मत करो । ध्यान सदा वाहीं तुम धरो ॥
निश्चय कहौं सुनो यह वाचा । सत्य सत्य मानो शिष साचा ॥ २ ॥
स्वामी वचन शीश परधार्‍यो । दश दिन को नितनेम विचार्‍यो ॥
जब बोले स्वामी पुनि सोही । एक मासतें परसो मोही ॥ ३ ॥
तातें तुमको श्रम नहि होवै । अरु निरताय शब्दसे जोवै ॥
तुमतो रहो नहीं शिष छाना । ब्रह्मदेश में सिलिया प्राना ॥ ४ ॥
जगमें बहुत जीव चेतावो । घर बैठा हरिके गुन गावो ॥
स्वामी ऐसी आज्ञा कीन्ही । जब सेवक मस्तक धरलीन्ही ॥ ५ ॥

छन्द मनहर ।

जैसी धरी आज्ञा रामानन्द की कबीर शिर
जैसी धरी रज्जबहू दादूजू दयालकी ।
जैसी धरी आज्ञा शिर खेम पुनि रज्जबकी
धरी चतुरदास आज्ञा सन्तदास ग्वालकी ॥
धरी आज्ञा नामदेव द्विजके स्वरूप जूकी
धरी आज्ञा उद्धवहू नन्दजूके बालकी ।
अनुभव प्रकाशी सन्त हाथ जोर ऐसे शिर
धरी आज्ञा हरिराम जैमल कृपालकी ॥ १ ॥

चन्द्रायणा ।

धरि आज्ञा शिर सन्त सु आया भवन कों ।
सथिर किया असमान सहज मन पवन कों ।
आसन किया अटल्ल सुरति सुन साँइया ।
परिहां उर सद्गुरु को रूप रामगुन गाइया ॥ १ ॥

दोहा ।

ऐसे जन हरिरामजू, बैठे होय निशंक ।
एक समान सु देखिया, राजा अरु पुनि रंक ॥ १ ॥

सवैया ।

धिन हरिराम स्वासि से हिलसिल निशिदिन भजै एक निजनाम ।
पुनि अर्धांगी चाँपा माता सीता माता जैसे राम ॥

जिसि सावित्री चतुरानन के पार्वती जैसे रिपुकाम।
पतिव्रत सहित करै इमि सेवा जिसि पीपाके सीता वाम ॥ १ ॥

चौपाई।

करि शिलोञ्छवृत्ति अनलावै। स्वामी को परसाद करावै ॥
स्वामी करै ध्यान दिन रैना। ना काहूसे बोलै बैना ॥ १ ॥
उन्मन रहै अष्टही पहरों। सुरति लगी साँई सुन सहरों ॥
वा छबि मोपै वरणि न जांई। जानै हरिजन पहुँता ताई ॥ २ ॥
यौं करताँ बीता के वरसों। स्वामी अधिक प्रीति हरिहरसों ॥

अथ परचा।

एक समय सुर अप्सर ध्याई। स्वामी निकट सु बैठी आई ॥ ३ ॥
स्वामी नयन खोल करि देखी। मायाके मन छल करिबेकी ॥
बायें उलटि थाप सें मारी। स्वामी ध्यान लगाई तारी ॥ ४ ॥
ऐसी बात सुनी नरनारी। सबके भाव ऊपज्यो भारी ॥
आज्ञा लैन बहुत शिष आए। स्वामीजीसे वचन सुनाए ॥ ५ ॥
तुमहो जत मत शुकदे जैसा। पुनि बद्रीनारायण तैसा ॥
अरु कबीर जैसा जन पूरा। शील सधीर अडिग मति सूरा ॥ ६ ॥
ऐसे कहत भये जिज्ञासी। दो आज्ञा स्वामी सुखरासी ॥
स्वामी बात साच फरमाई। जामें कसर न राखी काई ॥ ७ ॥
आज्ञा बहुत कठिन है भाई। जो लेसी सो शीश कटाई ॥
जब साचा सो चरणा लागा। काचा सुनत दूरि डर भागा ॥ ८ ॥
पूरब संस्कार तिन देही। सो जन हूवा रामस्नेही ॥
पुनि स्वामीसे शीश निवाए। अपने अपने भवन सिधाए ॥ ९ ॥
पुनि स्वामी सुमिरण में लागे। आतमराम सदा अनुरागे ॥
चाँपा रमा राम गुण गावै। स्वामीजीको बहुत सरावै ॥ १० ॥
हरिके जन प्रगटे घरमाँई। सबहीकूं सुमरावै साँई ॥
ऐसे वचन कहै अर्धंग्या। स्वामी धिन धिन आप प्रतिग्या ॥ ११ ॥

दोहा।

गुरु सिलियाँ पहली भया, एक पुत्र जन सार।
पीछै गिरिजानन्द जिसि, रह्या जत्त मत धार ॥ १ ॥

सवैया।

पुनि स्वामी के भक्ति अंकुरी नन्द विहारी जैसा नन्द।
गुन संपन्न बुद्धिके नायक हरिके गायक रूप अनन्द ॥
नाम विहारीदास जासुको खंड परशुके जैसे स्कन्द।
जिसि कबीरके तनय कमालं अग्नीधर के नाभि नरिन्द ॥ १ ॥

चौपाई ।

सो भी भजन करै दिल साचे । रामनाम से निशि दिन राचे ।
दास विहारी परम सु दीपै । सो स्वामी के रहै समीपै ॥ १ ॥

सवैया ।

पुनि स्वामीके जिज्ञासुनकी ताहि हकीकत कहूं तमाम ।
प्रथम सु दास नारायण लक्ष्मण लीन्हो जन्म जैतपुर गाम ॥
द्वारावती चले युग परसन रमते रमते सहज मुकाम ।
लांबै ग्राम पाँवनी नाडी जहाँ आय कीनो विश्राम ॥ १ ॥
तहाँ एक पूरा जन तापै सेवादास जिन्होंका नाम ।
सो वे कहत भये जन सेती याहीं भजन करो तुम राम ॥
ल्यो प्रसाद उनको तुम वालाँ किसनदासके जावो ठाम ।
जब सो ग्राम टोंकलै ध्याये हरिजन नाहीं पाये धाम ॥ २ ॥
तब सो पुरी सिहंथल आये सहज स्वभाव वहत सो पन्थ ।
स्वामी को दर्शन जब पायो उपज्यो दिलमें हर्ष अनन्त ॥
आपसमाहिं युगल बतलाये सेवादास जिसा यह सन्त ।
लो आयसु अब विलँब न करनी ताते दरशै परम सु तन्त ॥ ३ ॥

चौपाई ।

आज्ञा लैन उभय जन धारी । पुनि स्वामी से अरज गुजारी ॥
स्वामी बोले परम सुजाना । छोडो सबही आन अज्ञाना ॥ १ ॥
एक राम कूं सुमरो भाई । मन निश्चय करि प्रीति सदाई ॥
जब जिज्ञासू हस्त सु जोरे । स्वामी वचन शीश पर मोरे ॥ २ ॥
तब स्वामीजी भये कृपालं । आज्ञा दीन्ही आप दयालं ॥
ले आज्ञा लक्ष्मण गे दूरी । दास नारायण रहे हजूरी ॥ ३ ॥

दोहा ।

छः के वर्ष दयालुसे, मिले नारायणदास ।
आन भर्म भय सब कटे, प्रगट्यो ब्रह्म विलास ॥ १ ॥

(श्रीरामदासजीमहाराजकीदीक्षावर्णन)

सवैया ।

पुनि स्वामी से रामा मिलिया वर्णौं जिकी वारता होय ।
मुरधर माहिं लियो अवतारा हरिके प्रेरे आये सोय ।

पूरा पुरुष कहूँ नहिं पाया लीने द्वादश गुरुकों जोय ॥
जटा विभूति धऱ्या बहु वाना काज सऱ्या नहिं तातें कोय ॥ १ ॥
पुनि नापासर ग्राम जु आये स्वामी के शिष मिलिये ऐन ।
जवतें पढे रेखता जनका तवतें पायो परम सु चैन ॥
रामस्नेहिन से जव रामा बोलत भये सु ऐसे वैन ।
इन शब्दनके वक्ता स्वामी सो तुम मोहि वतावो सैन ॥ २ ॥

रामस्नेह वचन ।

चौपाई ।

पुरी सिंहथल माहिं जु स्वामी । आप विराजै अन्तर्जामी ॥
जाकी महिमा कहा वखानों । परम पारषद हरि के मानों ॥ १ ॥
जब रामा आतुर करि आये । स्वामीजी को दर्शन पाये ॥
स्वामीजीसे करि परणामं । हस्त जोरिके वोले तामं ॥ २ ॥
करि किरपा दीक्षा मोहि दीजै । स्वामी तुम शरणागत लीजै ॥
स्वामी कह्यो वचन जव ऐसे । तुमसे दीक्षा पलै जु कैसे ॥ ३ ॥
तुम तो औघड़ रूप वनेहो । जटाजूट वहु तार तनेहो ॥
रामस्नेही यह नहिं राखै । रामनाम रसनासे भाखै ॥ ४ ॥
इतना कहत हाथ तब जोरें । टामन टूमन सबही तोरे ॥
स्वामी वात हृदय सो चीन्ही । इक सेवक को आज्ञा कीन्ही ॥ ५ ॥
कर चरचा समुझावो सोई । याको साँच मतो जो होई ॥
पुनि सेवक सब धर्म सुनायो । ज्ञानगुह्य करि साच लखायो ॥ ६ ॥
आय कह्यो स्वामीसे ऐसो । है साचो मत पीपा जैसो ॥
स्वामी बहुरि कसोटी दीन्ही । दीक्षा दैन परीक्षा कीन्ही ॥ ७ ॥
जो पीपा जैसो मत साचो । तो कवहू नहिं होवै काचो ॥
स्वामी कह्यो सदन तुम जावो । के दिन गयां बहुरि तुम आवो ॥ ८ ॥
साची टेक होय जो तेरे । राम राम करिके मन घेरे ॥
साधन आन सकल पुनि खोई । तव दीक्षा देसाँ जन तोई ॥ ९ ॥
इतनी सुनि रामा जन बैठा । साचै मतै होय चित सैठा ॥
पुनि स्वामी की कसणी सहिया । केते दिवस अन्न नहिं लहिया ॥ १० ॥
जो प्रभु आज्ञा देवो नाहीं । तो मैं प्राण तजूँगा याहीं ॥
अब स्वामी उर दया विचारी । सेवक को देख्यो मत भारी ॥ ११ ॥

स्वामी साँची प्रीति पिछानी । पीपा जिसि अन्तरमें जानी ॥
करि अनुकम्पा दीक्षा दीन्ही । यों दासन की पारख लीन्ही ॥ १२ ॥

छन्द मोतीदास ।

इसी विधि अप्पिय आयसु देव । निरन्तर जप्पिय अन्तर भेव ॥
छुडाइय जैन शकत्तिय सेव । हरे तम जाल दुगत्तिय देव ॥ १ ॥
भगत्तिय दीध मुकत्तिय भेव । जुगत्तिय जोग उकत्तिय एव ॥
कुगत्तिय दूरि करे सब कर्म । जुगत्तिय बंधिय ज्ञान सु धर्म ॥ २ ॥
भये गुरुदेव सुदत्तिय साम । दियो जिन सर्व सिद्धान्तिय नाम ॥
वदन्तिय एम अमोलख वैन । प्रभाकर जेम छिदन्तिय रैन ॥ ३ ॥

दोहा ।

रामा मिले दयालु से, नौंके वरष निधान ।
पायो पीपादास ज्यों, ब्रह्म जु ज्ञान विधान ॥ १ ॥

छन्दगीतक ।

करि वीनती गुरुदेवसे परणाम पद परसाइया ।
पुनि पंच दीन परिक्रमा अस्तूति ओघ सुनाइया ॥
गुरुआमना धरि शीश जो फिर देश मरुधर धाइया ।
नित रामदास विलास यों हरिरामके गुन गाइया ॥ १ ॥

दोहा ।

श्रीसद्गुरु को ध्यान उर, लगन ब्रह्म से लाय ।
खेड़ापै निज नगर पुनि, जहँ बैठे जन जाय ॥ १ ॥

---

१ अन्तर्यामी अन्तरकी, मानलई तहक़ीक ।
हुइ कृपालु कहने लगे, सब सन्तनकी सीख ॥ १ ॥

२ सन्मुख आसन सहज[1] धरायो । मस्तक कर दे राम कहायो ॥
केवल मंत्र अनादि अनादं । गुरु परताप भजन तत सादं ॥ १ ॥
ॐ से परे निजानँद योही । वर्ण सर्व मध अवर्ण सोही ॥
ररंकार अपरम परपारं । भयो मकार मात सिधकारं ॥ २ ॥
अक्षर उभय संयुक्ति सदाई । ॐ महत्तत्व व्यूह इन माँई ॥
(श्रीराम. परची विश्राम ८)

---

1 सहज आसन=स्वाभाविक आसन । पालथी मारना ।
"सम आसण बैठै सहज मारि बाँवे पर द्वै क्षण हस्तधारि ।
गुरु मंत्र जवे दै तत्तसार, धारै शिष निश्चय सार धार ॥ १ ॥
(श्रीहरि. परची)

सवैया ।

इनसे आदि शिष्य उद्धारे सुनिये आगे चित्त लगाय ।
आदू अमीराम जन आदू साधू देईदास सवाय ॥
जो जो पुरुष भया जन पूरा सो सो लागा स्वामी पाय ।
जाके दिलमें राम मिलनकी ताके ऊणत रही न काय ॥ १ ॥

चौपाई ।

सुरतरु प्रगट भये कलि माहीं । तातें ऊणत रही जु नाहीं ॥
आये जीव उधारण स्वामी । धन्य धन्य तुम अन्तर्यामी ॥ १ ॥

छन्द गीतक ।

नर नारि सो नितनेमसे करि प्रेमसे परसै पदं ।
महिमा करै अनुमोदसे ततवोधसे प्रगटै तदं ॥
सतसंग स्वामि सनेहसे सुख लेत सो अति सेवसे ।
पुनि पद्द धारण दास जो सत भाव सो गुरु देवसे ॥ १ ॥

सवैया ।

डूंगरदास जातको वीको आय मिल्यो स्वामीसे सोय ।
कहियै जिको गामको ठाकुर स्वामी को निज चाकर होय ॥
और सु प्रेमदास पुनि आदिक पीपावंशी भ्राता दोय ।
सो स्वामीका भया शैक्षा कुल अभिमान भर्म कूं खोय ॥ १ ॥

दोहा ।

ऐसे जीवजु आपका, लीया चरण लगाय ।
जगत जाल बन्धन दह्या, रह्या राम गुण गाय ॥ १ ॥

चौपाई ।

स्वामीके जगकी नहिँ आसा । सतासमाधि शून्यमें वासा ।
रामनिरंजन अंजन राता । पर उपकार नामका दाता ॥ १ ॥
रहै दयालु सकल निरदावै । ऐसे रामनाम गुण गावै ॥
कठिन समय इक ऐसा आया । कारण अन्न वेचते काया ॥ २ ॥
तिन पुलमें हरिजन इक आयो । स्वामीजीको दर्शन पायो ॥
स्वामी ऐसे वचन उचार्‍यो । चाँपा रमा शीश पर धार्‍यो ॥ ३ ॥
या जन कूं परसाद करावो । पीछै तुम हरिके गुन गावो ॥
तब ताकों परसाद करायो । स्वामी सहित आप नहिँ पायो ॥ ४ ॥

सतवासेनको प्रसंग ।

सवैया ।

सतवासेन जिसो पत साचो ताको सत्य सु कहूं विवेक ।
आप सु सहित त्रिया सुत नारी सो उन मतो विचार्यो एक ॥
नव दिवसनतें भोजन कीन्हो दीन्हो सवै सन्तको देख ।
अर्धो नकुल भयो कंचनको पांडव जिगसे कियो विसेक ॥ १ ॥

चौपाई ।

स्वामी सत्य जु राख्यो ऐसो । सतवासेन विप्रके जैसो ॥
पुनि जन चल्यो माँग करि आज्ञा । स्वामी वहुरि ध्यानमें लाग्या ॥ १ ॥
पन्थ चलत सो पाछो आयो । रोक रुपैयो भेट चढायो ॥
स्वामी घात चित्त की चीन्ही । भीड़ जानिके भेट जु कीन्ही ॥ २ ॥
हमऐ भीड़ नहीरे भाई । रामप्रताप आनन्द सदाई ॥
पहिले भेट करत तुम आई । तो प्रसन्न हुय लेते भाई ॥ ३ ॥
अबतो नहिं लेवां हरिप्यारा । मान मान ज्या वचन हमारा ॥
जब जन विरह करन कूं लागे । लेट गयो स्वामीके आगे ॥ ४ ॥
नीरधार चाली नैननतें । बोल्यो नाहिं गयो वैननतें ॥
धीरज धार बचन तब बोल्यो । स्वामी भेट करी मैं सो ल्यो ॥ ५ ॥
जब देख्यो व्याकुल ता जनको । स्वामी प्रसन्न कियो वा जनको ॥
ऐसे हठतें भेट रखाई । रंका बंका जेम अचाई ॥ ६ ॥

दोहा ।

तीन लोकको सुख तज्यो, औरनकी क्या बात ।
स्वामी दयालु कृपालु के, जिमि कंकर जिमि धात ॥ १ ॥

चौपाई ।

अबतो भेट आयबा लागी । सेवक चेल्या एकहि सागी ॥
हृदय हर्ष दर्शन कूं आवे । सो स्वामी को भेट चढावे ॥ १ ॥

सवैया ।

कोई आन चढ़ावे कंचन कोई आन चढ़ावे नाज ।
कोई पाट पिताम्बर चाढे कोई चीर चढावे ताज ॥
कोई आन चढ़ावे करहो कोई आन चढ़ावे बाज ।
ऐसे भेट करै सिख सोई स्वामीके नित रहै समाज ॥ १ ॥
जैसे अवधपुरी के माहीं सोहत सुरन संग रघु बीर ।
अति अनुमोद होत चित आतम यों गुरु घाल संग धरि धीर ॥

भाखत सिफ्त भाव उर भीजत चाखत महा प्रेम रस नीर।
परमारथ हित पंथ बतावै स्वामी सब तैं तरक फकीर॥ २॥
राजा रंक एक सम जाने जैसे कंकर तैसे हीर।
हरिभक्ती विन कछू न चाहै ज्यूं पीपा रैदास कबीर॥
वेहद मिले रामके वल्लभ यूं हरिराम धर्मगुरु पीर।
तारण जीव समर्थ अनेकन निर्मलकर ज्यूं गंगानीर॥ ३॥
इल परकाश अर्क ज्यूँ भासत निशिदिन ज्ञान गरक गंभीर।
गारे गर्व सर्व तनमनके मारे पकरि पंच वड मीर॥
राम राम हरिराम बगसिके सबको किये पार भव तीर।
जो मिलिये सो हुये आप सम अभयदान ले रहे न कीर॥ ४॥

दोहा।

बाल विहारीदास पुनि, रटै प्रीतिकर राम।
दास नराण हजूरमें, रहै अष्टही जाम॥ १॥

चौपाई।

दास विहारी कूप पधारे। जल कारण इसि मतो विचारे॥
तहाँ एक बोल्यो नर धेकी। हरिजनसे जानी नहिं नेकी॥ १॥

सवैया।

हरिजनसे संवादो करिके दुष्ट एक जिन कीनो द्वेष।
हरिजन देख जरै निशिवासर नहीं सुहावै साधू भेष॥
हिरण्यकशिपु राक्षसके जैसी तैसी इनके उरमें टेक।
घाल बाल कूँ नीर वासते वचन कहे कटु मूढ़ विशेक॥ १॥

चौपाई।

दास विहारी कछु नहि कहे। दुष्ट वचन हिरदैमें सहे॥
घालबाल यूं धीरज राखी। उद्धव प्रती कृष्ण जिमि भाखी॥ १॥
आये पुनि स्वामीके पासा। हस्त जोर करि वचन प्रकासा॥
वाद वास अब नाहिं खटावै। तातैं चलो रहाँ निरदावै॥ २॥
हरि सुमिरनमें विघ्न न होई। ऐसी बुद्धि विचारो कोई॥
विक्रमपुर जावनके काजा। घालबाल सह शिष्य समाजा॥ ३॥
बीच ग्राम नापासर आया। ठाकुर सन्मुख आन वधाया॥
बहु आदर करिके घर लाया। गुरु चरणाँमें शीश नमाया॥ ४॥
कीन्ही विनय सहित परसंसा। धिन धिन आज पधारे हंसा॥
देवीसिंह बहुत सुख पायो। स्वामीसे करि भाव सवायो॥ ५॥

दरशण करण सकल उठ भागा। आय रु स्वामी चरणाँ लागा॥
स्वामी करै रामकी चरचा। जब आवै सबके मन परचा॥ ६॥
सबही रामभजन कूं लागा। हंस किया पलटाया कागा॥
देवीसिंह प्रीति विस्तारी। पुनि सो करी रसोई भारी॥ ७॥
व्यंजन कीन्हे बहुत प्रकारं। अमृत भोजन बने अपारं॥
लाड्डू पुरी मिठाई मेवा। आप किया सब अर्पण देवा॥ ८॥
देवीसिंह होय आधीना। द्याल सेव करि लाहा लीना॥
पुनि ठकुरानी जैताँ बाई। कीन्हो भाव बहुत विधि आई॥ ९॥
स्वामी के इक राम अवाजू। दादू ज्यों सत्संग समाजू॥
दर्शन करि सबही जन हरषे। वचन द्याल अमृत सम वरषे॥ १०॥
ऐसे सन्त राम अवतारी। प्रगटे अवनि भक्ति विस्तारी॥
शरणागती जीव जो सोध्या। लागि रही नित पुरी अयोध्या॥ ११॥

दोहा।

देवीसिंह दयालुका, उत्सव किया अपार।
हुयो दास करजोर करि, विनवै वारंवार॥ १॥
साचा हरिजन सूरका, जहँ तहँ आदर होय।
ओत प्रोत हरिसे मिले, जगत न जानै कोय॥ २॥

चौपाई।

द्वेष किया तिनमें दुखपरिया। मुर सुत एक दिवसमें मरिया॥
तनधन क्षीण होन कों लागे। साँई कोपे एकण सागे॥ १॥
भक्त द्रोह हरिको नहिं भावै। जो पुनि तीन लोक में जावै॥
छाँडै नही सन्त को द्रोही। जाको जड़ामूलसे खोई॥ २॥
जापर जबै रामजी रूठै। ताकी सब संपत्ती लूटै॥
पुनि सो पाँच दिवस के माँई। घर दुर्जन को गयो विलाई॥ ३॥
रोवै बहुत करै विलपातू। हे प्रभु इसी करी क्यों बातू॥
ऐसो पाप कियो मैं काँई। तातें मोपर कोपे साँई॥ ४॥

दोहा।

पुत्र मरे अति दुख पर्‍यो, क्षीण भयो धन साज।
घर छिरणाट्यो हुयगयो, कहा मैं कियो अकाज॥ १॥

चौपाई।

जब बोले मानुष पुनि सारे। तुम अपराध न कोई पारे॥
स्वामी को विन काज सताए। तातें तुम ऐसे दुख पाए॥ १॥

अब तुम चरण उसीके लागो । जन सबही जावो करि सागो ॥
जेज करी तो है है ऐसी । होरी माहिं भई है जैसी ॥ २ ॥
वे स्वामी प्रह्लाद समाना । तुम जानो नहिं मूढ अयाना ॥
सुनतां वात सबै मनमानी । यामें फेरफार नहिं जानी ॥ ३ ॥
करणीदान हुकुम जब कीया । सामिल होन ढ़ोल तब दीया ॥
पाँचों वास एकठा हूवा । सँग लीया जाका सुत मूवा ॥ ४ ॥
जाय लग्या स्वामी के चरणा । कृपासिन्धु कीजै अब करणा ॥
हम तुमको जान्यो नहिं भेवा । तुमतो अलख निरंजन देवा ॥ ५ ॥
हमरो चूक बगसिये स्वामी । अब तुम चलो सदन घणनामी ॥
जो तुम कहो जेम करिदेसां । ज्यों त्यों करिकै सँग में लेसां ॥ ६ ॥
स्वामी कह्यो कछू नहिं चावै । हमकों एक रामरस भावै ॥
सो तो याहीं लोक सयाना । कहा सदन अरु कहा पयाना ॥ ७ ॥
बहुरि करी अरदासा लोगू । स्वामी मेटो सबही सोगू ॥
तुम विन गाँव भयो भयभीतू । अन्धकार जिमि विनअद्वैतू ॥ ८ ॥
चन्द विना रजनी नहिं सोहै । तुम विन घाल हमारो कोहै ॥
अब तुम ओर न जानो तातू । जलसे आदि ले छोडी बातू ॥ ९ ॥
आप प्रसन्न सोइ करि लेसाँ । और तुरत कागद लिखदेसाँ ॥
दावो उजर करण नहिं पावै । हरिको खूनी सो दरसावै ॥ १० ॥
सही आपसे वचन उचारो । अब तुम स्वामी भवन पधारो ॥
स्वामी सहज कही जब वानी । अब क्यों इतनी विनती ठानी ॥ ११ ॥

दोहा ।

तब लोकन विनती बहुरि, करी बहुत तजि मान ।
हमतो शिशु मतिमूढ़ नर, तुम साक्षात सुभान ॥ १ ॥
धूलि उछाले गगनमें, सूर न लागे कोइ ।
चख फूटै शिर पर पड़ै, मूढ़ सचेतै सोइ ॥ २ ॥
देह देह पहिले कहै, शिरमें लागै आय ।
यही मूढ़ की वारता, तब पीछै करराय ॥ ३ ॥

चौपाई ।

हम तो महामूढ़ हैं प्रानी । तेरी गती नाथ नहिं जानी ॥
तुम तो हो हरिके अवतारा । स्वामी सबके सिरजन हारा ॥ १ ॥
हदके जीव उलझिगे वारा । कैसे जानै मूढ गवारा ॥
दयासिन्धु कृपा अब कीजै । पुरी सिंहथल वेगि चलीजै ॥ २ ॥

दोहा ।

अति लघुता अनुक्रम सहित, करुणा सुनी कृपालु ।
अब लोकन के ऊपरै, करदी दया दयालु ॥ १ ॥

सवैया ।

दीन दयालु दया के सागर आवत भये अयन कूं आप ।
देवीसिंह पहुँचावन आयो अरु कीन्ही मनुहार अमाप ॥
ओर सु रामस्नेही सारे संग चले जपते हरि जाप ।
उत्सव करत द्याल के सबही सिंहथल आये रामप्रताप ॥ १ ॥

दोहा ।

सब शिष शाखा सहित जू, राजे भवन मँझार ।
दर्शण करण दयालु के, सब आये नरनार ॥ १ ॥

छन्द पद्धरी ।

आवै सु दर्श पुनि प्रीति वान । गावै दयालु गुन हर्ष मान ॥
सत्संग स्वासि गंगा प्रभाव । न्हावै सुशिष्य चित कर सुचाव ॥ १ ॥
पद विष्णु हूँत चाली सुगंग । पुनि भई सप्त धारा सुरंग ॥
जैमल्लदास सो विष्णु रूप । भक्ती सु गंग चाली अनूप ॥ २ ॥
धारा जु सप्त पुनि सप्त द्वीप । सुरसरी भई अजके समीप ॥
जंबू सु द्वीप जहँ मिली एक । सो भरतखंड माहीं विसेक ॥ ३ ॥
मारू सुदेश आनन्द कन्द । जंगलथल हेमाचल वरिन्द ॥
परवाह पुरी सिंहथल पुनीत । तहँ भक्ति गंग विस्तरी मीत ॥ ४ ॥
जल ब्रह्म रूप गुरुदेव सोय । पुनि ज्ञान ध्यानके तट सु दोय ॥
नीलोत्पलं च जहँ सुमन नाम । तहँ रहे पेख चंद्रैक स्वाम ॥ ५ ॥
भय लाल प्रभा सन्तोष कंज । रह राज सर्व सरिता सुमंज ॥
अरु घाट घाट आवत अनन्त । झूलन्त जबै होवै अचिन्त ॥ ६ ॥
यूं देश देश के शिष्य वृन्द । पढ़ि सन्त मोक्ष पावै अनन्द ॥
गंगा न करि सकै अवर गंग । गुरु द्याल करै अपने सु रंग ॥ ७ ॥

दोहा ।

भीषम तैं सुत अधिक भनि, द्याल भक्ति सत्संग ।
यह यात्रा शिष परसियाँ, बहुरि धरै नहिं अंग ॥ १ ॥

चौपाई ।

मुरधर से रामा शिष आये । मानौं जिसि कंचन से ताये ॥
राम नाम सुमिरन शिर ताजू । गुरु परताप सऱ्या सब काजू ॥ १ ॥

अरज करी स्वामी से ऐसे। रामानँदसे पीपा जैसे॥
अब प्रभु सदन पधारो मोरे। तन मन धन अर्पन सब तोरे॥ २॥

दोहा।

सुनि अरजी निज शिषन की, करी कृपा गुरुदेव।
चित्त पधारण चिन्तवी, भक्ति वधारण भेव॥ १॥

चन्द्रायणा।

सब शिष शाखा संग पधारे द्यालजी।
जहँ जहँ धारै पाँव करै तहाँ न्यालजी॥
गाँव गाँव के माहिं होवै जु वधावणा।
परिहां हरिजन हरिको रूप लगै जु सुहावणा॥ १॥
करै रसोई बहुत चढावै भेट जू।
रामत करते सन्त पधारे ठेट जू॥
रामा जन विधि बहुरिजु सन्मुख आयके।
परिहां उर उत्सव करि प्रेम लिया जु वधायके॥ २॥

दोहा।

श्रीगुरुदेव दयालु को, लीन्हा प्रम वधाय।
बहुत प्रीति करि वीनती, रामदास लग पाय॥ १॥
आसन वसन विछावना, हाजर किया जु आय।
सदूशिष रामदास के, आनँद अँग न समाय॥ २॥

छन्द पद्धरी।

इमि करत रामदासहि उछाव। धिन धरे सदन गुरुदेव पाव॥
वैकुंठ सहित मिलिये जु विष्ण। मानों सदेह गोलोक कृष्ण॥ १॥
पल पलहि माहिं वारै सु प्रान। गुरुदेव सुरति निरखै निदान॥
मानों सु आज ऐसो उजास। जिमि शरद पूर्णिमा को सो प्रकास॥२॥
पुनि करी रसोई अति पुनीत। नाना प्रकार भोजन सु रीत॥
इमि प्रीति सहित पुरसे जु थाल। देवाधिदेव जीमे दयाल॥ ३॥

दोहा।

रहे द्याल के दिवसलौं, नगर खेड़ापे सोहि।
भक्ति भाव संपति निरखि, अति प्रसन्न हिय होहि॥ १॥

छन्द पद्धरी।

पुनि रामदास बहु करी भेट। सब शिखाँ सहित गुरु चरण लेट॥
तन मन धन संपति आदि ताम। सबके हो मालिक आप स्वाम॥ १॥

तव करी एह इच्छा सु आप । सिंहथल को आवन करि सिलाप ॥
शुकदेव जेम सद्गुरु अचाह । करि सेवा शिष लीन्हे जु लाह ॥ २ ॥

दोहा ।

शिष तो रामा जन जिसा, द्याल जिसा गुरुदेव ।
वे अचाह वे चरण रत, मिले सु एक समेव ॥

चौपाई ।

पुनि आवन की त्यारी कीन्ही । गुरु मूरति शिष हिय धरलीन्ही ॥
घणी दूर आये पहुँ चावा । मन से पाछो करै न जावा ॥ १ ॥
गुरु हरिराम कह्यो जब ऐसे । जैमल कह्यो आप कूं जैसे ॥
अम्बर माहिं वसै जिसि इन्दू । वसै कमोदनि तिसि मध सिन्धू ॥ २ ॥
यूं तुम सदा समीप हमारे । हम तुम तें कबहू नहि न्यारे ॥
अब तुम पीछो करो पयानो । यह शिष सीख हमारी मानो ॥ ३ ॥
तब अस्तूति करे परणामा । फिरे सदन कूं निज शिष रामा ॥
स्वामी आये निजपुर धामू । रामत करते सहज मुकामू ॥ ४ ॥

दोहा ।

इह विधि मुरधर देश कों, करि पावन महाराज ।
आय विराजे आप यहँ, द्याल महोत्सव साज ॥ १ ॥

चौपाई ।

सिंहथलपुरी अयोध्या जैसी । और पुरी नहिँ कोऊ ऐसी ॥
जन साक्षात विष्णु अवतारा । दर्शन आवै लोक अपारा ॥ १ ॥

छन्द त्रोटक ।

कोउ आवत कोश जु एकनतैं, सतसंग दयालु सु पेखनतैं ।
कोउ आवत जोजन आधनतैं, गुरु ज्ञान वैराग्य सु साधनतैं ॥ १ ॥
कोउ आवत कोशजु सो मुरतैं, अति होय अचिन्त्य मनो उरतैं ।
कोउ आवत सो जन जोजनतैं, सत्संगति स्वामि प्रयोजनतैं ॥ २ ॥
कोउ आवत कोशजु पंचनतैं, शुभवस्तु हृदय गुन संचनतैं ।
कोउ आवत जोजन डोढनतैं, गुरुदेव सुसंगति कोडनतैं ॥ ३ ॥
कोउ आवत कोशजु सप्तनतैं, तब द्याल मिटावत तप्तनतैं ।
कोउ आवत जोजन दोइनतैं, निज नाथ विलोकन लोयनतैं ॥ ४ ॥
कोउ आवत कोश तिहूँ षटतैं, ररकार सु शब्द मुखाँ रटतैं ।
कोउ जोजन सोइ सवा दुइतैं, नित आवत दास जनूं हुयतैं ॥ ५ ॥

दोहा ।

सुनि सुनि आवै सकल जन, अनुभव शब्द अवाज ।
रहै घाल महाराजके, नित सतसंग समाज ॥ १ ॥

छन्द त्रिभंगी ।

सद्गुरु है शरणूँ चितधर चरणूँ जामणमरणूँ भवहरणूँ ।
भवसागर तिरणूँ करजन करणूँ अशरण शरणूँ ऊबरणूँ ॥
उर अंतष्करणूँ ध्यानसु धरणूँ सब वीसरणूँ मुरजालं ।
बहु यश विस्तरणूँ करसब निरणूँ परचा वरणूँ गुरुघालं ॥ १ ॥

दोहा ।

गुना चूक तुम बगसियो, मैं अति मूढ अजान ।
घाल रावरो सुयश तो, वरणै सकल जहान ॥ १ ॥

चौपाई ।

नेतराम मुरली जन दासं । वीकानेर सहरमें वासं ॥
माजन जाति राम का प्यारा । शिष स्वामी के वडे सुचारा ॥ १ ॥
जिन दरशण को मतो उपायो । घरकाँ को नाहीं दरशायो ॥
रात जगावन कीयो व्याजू । चित से लायो साधु समाजू ॥ २ ॥
प्रीती करिके सिंहथल ध्याये । आये रातोरात चलाये ॥
यहँ जू सभा बहुड़गी सारी । स्वामी ध्यान लगाई तारी ॥ ३ ॥
पुनि सो अति दर्शन के प्यासी । जव सो दोनों भये उदासी ॥
विनु दीपक दर्शन किमु होवै । अरु अब बहुरि कवन से जोवै ॥ ४ ॥
दिन ऊगालौं नहीं खटाओं । नाम मँदिर को लियो उठाओं ॥
ऐसी करुणा देखि दयालू । अन्तरजामी भये कृपालू ॥ ५ ॥
तब सो ऐसो कियो उजासू । मानों कोटि दिनेश्वर भासू ॥
जब दर्शन पायो उन दासू । हिरदै उपज्यो बहुत हुलासू ॥ ६ ॥
अद्भुत चरित देखि तिन वेरू । अतिशय भये अचंभै चेरू ॥
स्वामी कौन गती यह कीन्ही । चर्म दृष्टितें जाय न चीन्ही ॥ ७ ॥
हमकों दीपक आश न एकू । उदित किये मणि चन्द्र अनेकू ॥
चरणां लपट स्वामिके पासू । करत भये अस्तूति जिज्ञासू ॥ ८ ॥
नमो नमो नित ब्रह्म नमस्ते । एक अखंड आदि मध अस्ते ॥
पूरण ब्रह्म सच्चिदानन्दा । विश्वरूप ईश्वर जग वन्दा ॥ ९ ॥
ज्यों हरि मुख मुर भुवन दिखायो । हमकों ऐसो चरित लखायो ॥
ज्यों कबीर पंडाकों राखे । सेजाँ करी नामदे लाखे ॥ १० ॥

यों तुम स्वामी कला अनंतू । वासर कियो रैन को संतू ॥
जब स्वामी बोले जन सेती । हरि कर्ता क्यूं नहिं है एती ॥ ११ ॥
मेरु करै तृण तें हरि सोइ । पुनि तृण बहुरि मेरु तें होइ ॥
साचै मतै रामकों सेवै । तो इच्छा है सो करि देवै ॥ १२ ॥
याको मती अचंभो मानो । अरु तुम हरि कों समर्थ जानो ॥
यो चरित्र राखीजो छानै । कोउ जाने को नाहीं जानै ॥ १३ ॥
हमरे काम जगत से नाहीं । सिलिये राम अँतरके माहीं ॥
अब तुम दर्श कियो रे भाई । ऊणत मनमें रहै न काई ॥ १४ ॥
यों कहि ख्याल समेटी माया । शिष वंदन कर शहर सिधाया ॥
स्वामी बहुरि समाधि लगाई । शून्यशहर माहीं इकताई ॥ १५ ॥

दोहा ।

श्रीगुरु हरियानन्दके, परचाँ को नहिं पार ।
सुने सो आसी कहन में, और हु गुप्त अपार ॥ १ ॥

छन्द त्रिभंगी ।

जैसे गोपालं संग सु वालं विधि चरितालं दिखरालं ।
द्वै विधि वछ वालं करि ततकालं हृदय कुलालं भ्रम टालं ॥
यों करन निहालं आप चालं अनुभव ख्यालं विस्तारं ।
मेरी बुधि बालं कहाँ कहाँलं परचा ख्यालं नहि पारं ॥ १ ॥

दोहा ।

अगमागम गति ख्याल की, मोपें लखी न जाय ।
विनती गंगारामसे, सदा रहौं शरणाय ॥ १ ॥

चौपाई ।

बारट एक स्वरूपा नामू । जाका भया अडाणा धामू ॥
सो स्वामी के दरशन आया । अति करुणाकर वचन सुनाया ॥ १ ॥
हमसो और अनाथ न कोई । जो कोउ तिहूं लोकमें जोई ॥
ठौर नहीं बैठन कूं काई । अब मैं कहा करूं जनराई ॥ २ ॥
तब स्वामी मन ऐसी धारी । पींपा जैसी परम विचारी ॥
हरिजन सोई पर उपकारी । घट घट आतम राम सँम्हारी ॥ ३ ॥
जापर स्वामी भया कृपालं । तब सो कीयो बहुत निहालं ॥
होइ प्रसन्न दीक्षा दीन्ही । करुणा सिंधु कृपा इसि कीन्ही ॥ ४ ॥
स्वामी तणी कृपासे सोई । संपति विविधि भांति जू होई ॥
जिनको दारिद गयो जु ऐसे । पुनि सो विप्र सुदामा जैसे ॥ ५ ॥

यामें संशय नाहिं कदाई। हरिजन राम एक है भाई॥
तूठे द्याल करी प्रति पारू। चारों तर्फ लक्ष्मी द्वारू॥ ६॥
यों स्वरूप का दारिद भागा। सद्गुरु की सेवामें लागा॥
दर्शन कियाँ इसी रस आई। भक्ती मुक्ति विभूती पाई॥ ७॥

दोहा।

गायो गुन गोविंद को, पायो द्रव्य अमाप॥
आयो साच स्वरूप कों, सद्गुरु राम प्रताप॥ १॥

सोरठा।

बहुरि करी अरदास, रामदास जन आयके।
पावन करो निवास, सब मन भावन सद्गुरू॥ १॥

छन्द तोमर।

पुनि रामदास जु आय। गुरुदेवसे शिर नाय॥
अरजी सु कीधजु एह। पगधारिये फिर गेह॥ १॥
परकाज सारन द्याल। सब प्रान के रिछपाल॥
निरधारके आधार। शरणाय के साधार॥ २॥

श्रीगुरुवचन।

सोरठा।

सुनि ऐसी अरदास, जब सद्गुरु बोलत भये।
दासा करियत दास, बार बार कारन कहा॥ १॥

शिष्यबचन।

चौपाई।

करन करावन हम कछु नाहीं। व्यापक आप सकल के माहीं॥
प्रेरक हो तुमही तन मनके। दयासिंधु बंधू दीनन के॥ १॥
सोई तुम चरणन की सेवा। मैं तो दास तुम्हारो देवा॥
तुम तो सदा अचल हो स्वामी। पर तव वृद्ध अवस्था जामी॥ २॥
बार बार अवसर कब पावों। तातें या अर्जी गुदरावों॥
जब स्वामी अर्जी सत मानी। सेवक की अति प्रीति पिछानी॥ ३॥

सोरठा।

करि अनुकम्पा द्याल, मरुधर देश पधारिया॥
करण शरण प्रतिपाल, रीतिसु आदि अनादिकी॥ १॥

छन्द मनहर ।

साची प्रीति जानि एक, समुचै पधारे श्याम
विप्र श्रुति देव अरु, नृप वहुलास के ।
जैसे जू पधारे प्रीति, हेतु भीलनी के राम
जैसे जू पधारे रामा, नन्द पीपादास के ॥
पीपा जू पधारे तहाँ, श्री रंगदास के पुनि
नारद पधारे भूप, भीम सुखरास के ।
श्याम के सनेही जन, भावना के हेतु एम
ऐसे जू पधारे हरि, राम रामदास के ॥ १ ॥

सोरठा ।

समय पधारत नाथ, खेडापा पुरकों जबै ।
आयो सन्मुख भात, साँच वचन सतगुरु कह्यो ॥ १ ॥

दोहा ।

गांव खेड़ापै जावताँ, सबवातांका ठाट ।
दूध दही घृत मोकला, भरिया रहसी माट ॥ १ ॥

छन्द पद्धरी ।

पुनि रामदास करिके हुलास । आयासु वधावण परमदास ॥
सब लिये शिष्य शाखा जु साथ । चित द्रवति प्रेम रोमांच गात ॥ १ ॥
वाजन्त ढ़ोल वाजा विशेख । सुर मे प्रसन्न सम्माज देख ॥
पुनि अष्ट अंग करते प्रणाम । यों लगे शिष्य पदपद्म स्वाम ॥ २ ॥
आनी सुगन्धि वस्तू अनूप । मृगमद हरिचन्दन पीतरूप ॥
कुंकुम कर्पूर सु काशमीर । चोवा गुलाल चन्दन अबीर ॥ ३ ॥
तिलकार्घ्य आरती करे ताम । पद पाट परत पधराय धाम ॥
सिंहासन आसन धर्यो आय । अति भाव सहित सेज्या विछाय ॥ ४ ॥
कर जोरि भये ठाढ़े सु दास । पुनि करत भये वानी प्रकास ॥
धनि धन्य आज मेरो सु भाग । पायो घर बैठाँ गुरु समाग ॥ ५ ॥

कुंडलिया ।

शिष निज रामादासके वटी वधाई एम ।
दास विदुरके द्वार जो यदुपति आवत जेम ॥
यदुपति आवत जेम तेम पतिवृत हरषाई ।
व्याकुल भई शरीर सुधी बुधि सबै भुलाई ॥
निरखि परम गुरुदेव को छके अछक छक प्रेम ।
शिष निज रामादासके वटी वधाई एम ॥ १ ॥

छन्द मनहर ।

हरष हरष मन विधि विधि भाँति भाँति
चीज भोजन बनायो भल चित भावसे ।
क्षीरहू मिठाई लाडू सीरो पकवान पूरी
चाँवर शकर मूंग घृत करि चावसे ॥
ऐसी विधि बहुत रसाल गुरुदेवजी कूं
सुंदर परोसै प्रीतिभाव के प्रभावसे ।
जीमैं श्रीहरिराम रामदास जू पौंन ढोरै
करै मनुहार मूंगी अधिक उछाह से ॥ १ ॥

दोहा ।

यों नव दश दिन जावताँ, आवन कह्यो अवास ।
राखलिये अनुमोदसे, हटकरि रामदास ॥ १ ॥

चौपाई ।

स्वामी इकदिन वनमें आये । पूरव दिशि परवत नियराये ॥
रामदास शिष साथे लागी । पँदरे वीस ओर वैरागी ॥ १ ॥
गिरि समीप सबको बैठाये । स्वामी हाथ जहाँ सिटियाये ॥
पुनि सो अटल वचन फरमायो । सब शिष हू जनके मनभायो ॥ २ ॥
तुमरा लशकर वहां न मावै । अरु शिष बहुत लगैगा पावै ॥
ताते यहां करो सुस्थाना । देश विदेशाँ रहै न छाना ॥ ३ ॥
रामदास ऐसो तत जान्यो । सतगुरु वचन अटल करि मान्यो ॥
स्वामी कह्यो भूमि जिन स्थानू । वाही ठौर कियो सहनानू ॥ ४ ॥
पुनि स्वामी आसन कों आया । कई दिवसलौं वहाँ रहाया ॥
भूखे भाव सन्त भगवन्तू । औराँ कारज करण अनन्तू ॥ ५ ॥

दोहा ।

रामदास निजदास का, सबही सार्‌या काज ।
बहुत करी प्रतिपालना, द्याल गरीबनिवाज ॥ १ ॥

चौपाई ।

जब आवन की इच्छा धारी । सब सामग्री करी तयारी ॥
रामदास बहु प्रीति वढ़ाई । तन मन धन को भेट चढ़ाई ॥ १ ॥
पहली भेट शिखां जो कीन्ही । सो स्वामी आगै धरदीन्ही ॥
स्वामी कह्यो क्यौं न तुम राखी । अर्पण करी आनकर आखी ॥ २ ॥

रामदास कह तन धन तेरा। मैं तो सदा चरण का चेरा॥
यों सेवा करि लाहा लीया। गुरु कों बहुत प्रसन्न जु कीया॥ ३॥
बहुत दूर पहुँचावण आए। करि प्रणाम पुनि भवन सिधाए॥
स्वामी शनैः शनैः मग माहीं। आये कक्कू गाँव जहाँ ही॥ ४॥
तहँ हरिदास वधावण आये। आय लगे स्वामी के पाये॥
करि अति प्रीति सदन पधराये। बहु भोजन ले भोग लगाये॥ ५॥
टैल करी अतिश्रद्धा सहितू। सेवग भया भेदसे रहितू॥
मग वासी चालण नहिं देवै। स्वामी कों बहुते मिल सेवै॥ ६॥
स्पर्शैं चरण प्रशंसा गावै। रामरूप सबके मन भावै॥
ये हैं कपिल महामुनि ज्ञानी। इनकी कृपा मोक्ष ह्वै प्रानी॥ ७॥

दोहा।

ऐसे उत्सव चालके, ग्राम ग्राम में होत।
सबके उपजै भावना, दर्शन करन उद्योत॥ १॥

चौपाई।

स्वामी जहाँ जहाँ पद्धारै। तहाँ तहाँ महिमा विस्तारै॥
ये तो सन्त इहाँ के नाँई। अमर लोक से आए साँई॥ १॥
नारायणदास हजूरी संगा। ज्यों नन्दादि श्याम निजअंगा॥
पुनि हरिदेव जु शोभित ऐसे। दिव्यरूप सनकादिक जैसे॥ २॥
स्वामी अमृत वचन उचारै। जीवन के त्रय ताप विदारै॥
परमारथको पन्थ बतावै। जिन जिन कों हरिचरणाँ लावै॥ ३॥

दोहा।

साधु लच्छ भगवद कहे, ऐसे सन्त दयाल।
एक भवन की का कहों, त्रिभुवन करै निहाल॥ १॥

चौपाई।

रामत करते करत पयाना। सिंहस्थल आये अस्थाना॥
सुनि स्वामी आयां की वाजा। धाये जन दर्शन के काजा॥ १॥
पूछे समाचार पुनि सारा। स्वामी कहे सकल विस्तारा॥
जिन जिन ग्राम लिया विश्रामू। तिन तिनका जु बताया नामू॥ २॥
जेता दिन खेड़ापै रहिया। तेता भिन्न भिन्न करि कहिया॥
जहाँ जहाँ मिलिये हरि प्यारे। तहाँ तहाँ के नाम उचारे॥ ३॥

दोहा ।

चोतीसै पावन कियो, थाल सु मरुधर देश ।
रामदास के भावसे, दिया भक्ति उपदेश ॥ १ ॥
वरष सईकै आदिलै, इतने भये वदीत ।
अब अगली वर्णन करौं, हरि गुरु कृपा सप्रीत ॥ २ ॥

चौपाई ।

पुनि सो दिवस अष्ट दश जातं । परचा भया जगत विख्यातं ॥
चार पाँच परचे से लगतं । सो सुनि सुख पावै हरिभक्तं ॥ १ ॥

सवैया ।

है चरचा जाकी अति सुन्दर परचा भया मास इक माहिं ।
हरि गुरु की अर्चा करि आखूं लखिबेकी मेरी मति काहिं ॥
गावत ब्रह्मज्ञान दरशावै सुनतां परम मोक्ष मिल जाहिं ।
जो हिरदै निश्चै गहि राखै सो भवसागर आवै नाहिं ॥ १ ॥

चौपाई ।

एक समय सब सिखां विचारी । मेलो करण सूँज विस्तारी ॥
सब जनपैं दीन्हे समँचारू । ग्राम ग्राम हरिजनके द्वारू ॥ १ ॥
चैत्र सु मास कृष्णपष सातम् । तिथि ठहराई हरिजन जातम् ॥
मेदो घिरत शर्करा लीन्ही । विविधि भांति सामग्री कीन्ही ॥ २ ॥
अचरज हुवो एक अति भारी । लखि नहि सकै कोउ तनधारी ॥
पंदर दिन मेलाके आगू । हरियानन्द कियो तनुत्यागू ॥ ३ ॥
नारायण आदिक सब दासू । देखत ही जन भये उदासू ॥
ओ मेलो आरंभ्यो ऐसे । स्वामी विना होय अब कैसे ॥ ४ ॥
यों मिलि सकल करी जो करणा । स्वामी सुनी परमपद शरणा ॥
राखन तीस दिवसलौं काया । हरिसे कौल करे यहँ आया ॥ ५ ॥
आय कियो तनमें परवेसू । मेट्यो सबको शोक अँदेसू ॥
ऐसे समरथ सन्त दयालू । करुणामयीकरण प्रतिपालू ॥ ६ ॥

दोहा ।

कारज करबा कारणे, शरणायक रिछपाल ।
कर वाचा करतार से, आए यहाँ दयाल ॥ १ ॥

चौपाई

सबहि प्रसन्न भये शिष शाषा । पुनि स्वामी पूरी अभिलाषा ॥
ज्यों सरजीत राम लघु बंधू । ऐसे उर में भयो अनंदू ॥ १ ॥

स्वामी बहुरि दिलासा दीन्ही। करुणा परम सकल पर कीन्ही।
केती वस्तू पहिले आई। अरु चाही सो फेर मँगाई ॥ २ ॥
जलको समाधान सब कीयो। दे नाणो जु कवल करि लीयो ॥
सब सामान तयार करायो। जो चाहै सो वहाँ धरायो ॥ ३ ॥

दोहा।

अष्ट सिद्धि नवनिद्धि रिधि, हाजर हुई सु आन।
श्री स्वामी के भवन मध, सब विधि भरे समान ॥ १ ॥

सवैया।

धाये सबै महोत्सव ऊपर जहँ जहँ पूगे समंचार।
बाई भाई रामसनेही सब आये स्वामी के द्वार ॥
रामप्रताप कमी नहिं काई यहाँ धनेश तणा भंडार।
मावै नहीं लोक पुरमाहीं ऐसो थटियो थाट अपार ॥ १ ॥
जलरो काम कठिन दरशायो साकट पलट्यो वचन गवार।
प्यासाँ मरै तड़फड़ै मेलो बालक करै वारही वार ॥
द्वेषी लोक हँसी अति ठानै जानै नाहीं नाथ मुरार।
ओरहु शिष्य चिन्त बहु आनै अब प्रभु कीजै कहा विचार ॥२॥
स्वामी के धीरज मन ऐसी धना जिसी हरिसे इकतार।
सबकों कहै करो मति आतुर तृषित नहीं राखै करतार ॥
मोकों वडो भरोसो वाको नहिं चूकै अवसर निरधार।
यों कहि ढाल विराजे आश्रम निज शिष को बैठाये बार ॥ ३ ॥
हरी हरी करि खरी प्रीतिसे दोय घरी लगि करी पुकार।
जब नभ चढी पवन इक वदली जाको बहुत भयो विस्तार ॥
वर्षण लगी सींहथल ऊपर धरणी एक अखंडी धार।
ठंढी मरत लोक अति धूजै मिटगी प्यास एक छिनवार ॥
तन मन प्राण ढाल पर वारै करै सकल मिल जैजैकार ॥ ४ ॥

दोहा।

जल होवै तहँ थल करै, थल जहँ जल हुय जाय।
हरि करता क्यों नहि हुवै, हरि हरिजन के भाय ॥ १ ॥

चौपाई।

रामजनाँका रुपे निसाना। साकट जब ह्वै परे खिसाना ॥
सब पुर माहिं ऊपज्या भावू। आय लगे स्वामी के पावू ॥ १ ॥

सबही स्तुती करण कौं लागे। अति आधीन होय अनुरागे॥
हम तुमकों जाने नहिं स्वामी। चूक बगसियै अंतरजामी॥ २॥
स्वामी कहै चूक नहिं कोई। हरि सुमरो सबही सुख होई॥
जैजैकार करै नर नारी। धिन धिन स्वामी गती तुम्हारी॥ ३॥
पति समर्थ तुमरे वस साँई। ताल तलाव छले छिन माँई।
स्वामीका इसि करत बखाना। करत सबै पालर जलपाना॥ ४॥

दोहा।

नाणा साटै नीरको, नट गयो वचन उचार।
सो मुख महिमा उच्चरे, ऐसे सरजनहार॥ १॥

चौपाई।

पालर अंबु तालते आवै। सब मेलो अतिही सुख पावै॥
स्वामी पाँच दिनालौं पोषे। बहु भोजन करिके सन्तोषे॥ १॥
मन वांछित सो हाजर कीया। स्वामी सब कूं आदर दीया॥
जब प्रसन्न हुवे जनसारे। आज्ञा माँगि चले पुनि द्वारे॥ २॥
पन्थ पन्थ माहीं गुन गावै। स्वासि स्वरूप हृदयमें लावै॥
पुनि सब आपसमें वतलावै। स्वामीकी गति लखी न जावै॥ ३॥
ऐसे कहते सकल सिधाए। जेते जन उत्सवमें आए॥
रामदास जब माँगी आज्ञा। लागत जान गुरांकी जाग्या॥ ४॥
स्वामी कह्यो रहो तुम याहीं। इन कारण ठहरे जब नाहीं॥
करि प्रणाम बहुत परकारं। आये मरुधर देश मँझारं॥ ५॥
पुनि स्वामी मन भयो उदासू। अब या नरलोकन के वासू॥
चित्त लग्यो अमरापद माहीं। जहँ जग जाल काल डर नाहीं॥ ६॥
आतुर करै पारषद जोई। नन्द सुनन्द आदि ले सोई॥
स्वामी कह्यो रहो सुस्तावूं। कौल कियो जबही मैं आवूं॥ ७॥
यों कहि सब वस्तू पहुँचावै। पाछा वेगा वेग बुलावै।
पुनि सो चार पांच दिन माँई। जो जो आनी सो पहुँचाई॥ ८॥
लागी दिवस कौलको आयो। प्रातसमय स्वामी फरमायो॥
परम लोककी सौंज मँगाई। जब निश्चै सबको दरशाई॥ ९॥
आगम तीन पहर पुनि सोई। बात विख्यात जननमें होई॥
श्रीदयालु वैकुंठ पधारै। ऐसे सबही लोक उचारै॥ १०॥
जहँ जहँ पुरुष खबर हू पावै। तहँ तहँके दर्शनकौं धावै॥
यों सब हलक चोखलो आयो। बहुरि थाट मेलैको थायो॥ ११॥
धाए और सन्त बहुतेरा। स्वामीके चरणों का चेरा॥
दर्शणके कारण जू ऐसे। हरिकारण आये सुर जैसे॥ १२॥

पुनि वैकुंठी आदि तयारी । सामग्री करवाई सारी ॥
वीठू सकल चरण जू चंपै । स्वामीको तन मन धन अर्पै ॥ १३ ॥
पुनि सो एम विलोके नैना । स्वामी एक कह्यो जू वैना ॥
समाचार जीवनको देना । यहँ आवै इतनाही कहना ॥ १४ ॥
एक कहंते उठिया दोई । ले आया निज जनको सोई ॥
ताकूं समंचार कछु कहियो । सो निजदास मान उर लहियो ॥ १५ ॥
जीवनदास समुझि यह सैनूं । बदरी पास चले धरि वैनूं ॥
स्वामी कह्यो वचन पुनि त्यूं ही । दूंबो लाध्यो ज्यूं को ज्यूं ही ॥ १६ ॥

दोहा ।

स्वामी मेले पहिलही दूंबो कीन्हो ताहिं ।
विखर्यो नाहिं जु असलमें, उन समाजके माहिं ॥ १ ॥
ऐसा परचा अनँत है, जाका अन्त न पार ।
गंगाराम इसि बीनवै, बरण्या मति अनुसार ॥ २ ॥

चौपाई ।

शिष दूंबाके हाथ लगायो । लारै समंचार तब आयो ॥
भगवत् ज्योंही कियो पयानो । देखत सबही लोक सयानो ॥ १ ॥
आसण मार विराजे ऐसे । बल बलवीर विराजे जैसे ॥
वैसेहि नैन मूंदि लिवलाई । सुरति ब्रह्म के माहिं समाई ॥ २ ॥
आप स्वच्छंद देह तजि मानू । दशवें द्वार सिलाये प्रानू ॥
सब ही मे अचरजयुत भाऊ । स्वामी की गति लखी न काऊ ॥ ३ ॥
कछु इक लखी जासु के दासू । कबहु न रही तासुके प्यासू ॥
महाप्रसाद नारायण पायो । तबही शब्द तिरकुटी आयो ॥ ४ ॥

दोहा ।

तत्क्षण लेत प्रसाद पुनि, साधु भये शिष सोय ।
गंगाराम दयालु गति, लखी न जावै कोय ॥ १ ॥

चौपाई ।

पुनि वैकुंठ घड़्यो जो मोटो । माप्यो जबै बारणो छोटो ।
कोई कहै दूसरो कीजै । यो वैकुंठ नहीं मावीजै ॥ १ ॥
कोई कहै भींतकों तोड़ो । कोई कहै ढहावो मोड़ो ॥
यों संकल्प करै मनमाहीं । वात तोलमें आवै नाहीं ॥ २ ॥
जब बोल्यो वीदो सूथारू । है स्वामीकी गती अपारू ॥
अटकै नही साच सब मानो । याको मत अंदेशो आनो ॥ ३ ॥

कै तो होय बारणो चोड़ो । कै वैकुंठ हुयजावै सोड़ो ॥
यों कहि जब वैकुंठ उठायो । द्वार माँह नाहीं अटकायो ॥ ४ ॥
उच्छव करत तहाँ चलि आये । दूंवो कियो आप जिहिं ठाये ॥
घृत कर्पूर ससिधि सब लीन्ही । दाहक्रिया देहकी कीन्ही ॥ ५ ॥
चली सुगन्धि बहुतही सुन्दर । मोहे सुर मुनि सहित पुरंदर ॥
बाल युवादिक ले नरनारी । सबके भाव ऊपज्यो भारी ॥ ६ ॥
आनि आनि घृत सींचन लागे । लेत सुधूम कर्म सब भागे ॥
जैसे पुरी अवन्ती माहीं । प्रेत सहस दश मोक्ष मिलाहीं ॥ ७ ॥
ऐसे सकल पवित्र हि भये । सहजे जन्म दोष मिटगये ॥
जब भस्मी शीतल जू होई । तब निजदास सँभाली सोई ॥ ८ ॥
साबित रहिया श्रीफल गादी । पाँच सात पटल्यां जू लाधी ॥
परचा को कोइ पार न पावै । आदि अन्तलौं अगम लखावै ॥ ९ ॥

दोहा ।

पार लहै कुण द्यालको, अपरंपार अनन्त ।
चिदानन्द जुगजुग महीं, सदा चिरंजिव सन्त ॥ १ ॥
यह परचे इन लोकके, सुने सु वरणे सोइ ।
गंगाराम अब कहत जन, सुरपुर उत्सव होइ ॥ २ ॥

छप्पय ।

सँवत अठारह जान वर्ष पुनि शुभ पैंतीसं ।
चैत्र शुक्ल सप्तमी मिले परमातम ईसं ॥
वार सु शुक्कर वार ध्यान तद् ब्रह्म सु धार्‌यो ।
आप सुछन्द शरीर पंच भूतादि निवार्‌यो ॥
शरणाय सीव मेले सकल अनत सु जीव उधारिया ।
नरलोक द्याल परित्याग तनु परम सु धाम पधारिया ॥ १ ॥

सोरठा ।

कर घन तड़ित प्रकाश, पुनि आकाश समाइ है ।
ऐसो होय उजास, सन्त मिले परब्रह्म में ॥ १ ॥

छन्द पद्धरी ।

ज्यों ज्योति ज्योति मिल एक होइ । जल लवन पूतरी भिन न कोइ ॥
यों मिले हरीजन ब्रह्म माहिं । भवजलमें आवै बहुरि नाहिं ॥ १ ॥

सोरठा ।

नमो नमो हरिराम, परम धाम हरिमें मिले ।
संग सदा इक स्वाम, आदि मध्य अवसान में ॥ १ ॥

कहाँ लगि करौं वखानि, पार न पाऊं आपको।
बुधि मेरी तुछ बानि, सो उरहीमें थकि रही ॥ २ ॥

सवैया।

स्वामी श्रीदयालु की परची पावै पढ़त परम विश्राम।
मन तन दोष ताप मिट जावै सुनतां होय सकल सिध काम॥
करि विचार धारै उर निश्चै सो जन मिलै ब्रह्मके धाम।
शिष जैराम के उर विराजके भाखी गुरु श्रीगंगाराम ॥ १ ॥

सोरठा।

अक्षर घट वध होय, लीज्यो सकल सुधारिके।
सबैं सन्तजन सोय, विनती दास जैरामकी ॥ १ ॥
सम्मत उनीसो जान, मिति अषाढ़ शुदि पंचमी।
वार बृहस्पति मान, परची संपूरण भई ॥ २ ॥

इति श्री परची सम्पूर्णम्।

अथ श्रीदयालुदासजी महाराज कृत ग्रन्थ प्रगटबोध।

दोहा।

प्रगट बोध तारण तरण, रामा राम अनाद।
गुरु प्रसाद सद्गति मिलै, प्रगट परायण साद ॥ १ ॥

चरण।

घट विच अघट प्रगट रट रमता, सत्त शब्द सुखदायक।
आगै अबै भया सँत जेता, सिद्ध शिरोमणि वायक ॥ १ ॥
लायक लगन कहै गुरु शिख रत, मति गति मूढ़ विचारं।
काष्ठ मथत प्रगट हुय अग्नी, यों आतम तत निरकारं ॥ २ ॥
सद्गुरु उक्ति युक्ति रस नेता, श्वासोच्छ्वास चलाया।
सूतर दोय रलण मिल आतम, भाव सभाव मिलाया ॥ ३ ॥
तब तत्काल प्रगट दरशाणा, एक अखंडित धारा।
अध मध उत्तम भया प्रकाशा, कारज करण हमारा ॥ ४ ॥
विरह प्रजल उर नीर सु सोख्या, शब्द प्रगट दरशाना।
धम धमकार टेर सुन मुरली, फुरक फुरक फुरकाना ॥ ५ ॥
पीत वदन श्वासा जु सिरानी, नागरवेल शरीरा।
प्रेम नीर विन ऐसे सूकत, नख शिख विचै अधीरा ॥ ६ ॥

मधुरे वैन श्वास शर घायल, अन्दर विरहनि तीरा ।
आदि रु अन्त तलब तत सुमिरण, मन वच कर्म सधीरा ॥ ७ ॥
अबके मिलौं परम परमानँद, जीवनप्राण अधारा ।
निर्मल करण महा सुखसागर, विरहनि का भरतारा ॥ ८ ॥
ऊणत एक पिया भव भंजन, रंजन राम सनेही ।
फीका लग्या सर्व रस रसना, प्रेमा भई विदेही ॥ ९ ॥
लघु निद्रा आलस मिट अंगा, पंथी पंथ अवादै ।
धाय वधाइ देऊँ मुझ साँई, हरिवृत साधन साधै ॥ १० ॥
इकदिन प्रगट अजब अति अचरज, कला अनेक सवाई ।
गोला दग्या शब्द गैतूला, श्वास उश्वासा माँई ॥ ११ ॥
ररर रोम थरर थररार्ट, नाभिकमल सुलटाणा ।
नगर उछाह नारि तरु सरजल, जन्तर तार वजाणा ॥ १२ ॥
चार हजार नाड़ि घरनाभी, ररर शब्द रमाणा ।
नख शिख विचै एक ध्वनि रमता, मनवा पवन मिलाणा ॥ १३ ॥
लेजु सधीर भया ध्वनि डंका, गगन नाद घरराणा ।
आतम भया साध घर परचा, चरचा राम ठिकाणा ॥ १४ ॥
कै दिन रह्या नाभि घर माहीं, इकदिन करण पयाणा ।
मन अरु पवन मिले लिव प्रेमा सुरति शब्द दरसाणा ॥ १५ ॥
भिन भिन भेद लह्या घर निश्चय, आतम तत्त्व प्रकाशा ।
छेदत इला सप्त पाताळूँ उलटा पलट तमाशा ॥ १६ ॥
परा समीप शब्द गत रेला, रसिया सप्त पताळूं ।
पूरब उलटि पछिम दिशि आया, चढ उरधा वँकनाळूं ॥ १७ ॥
अमृतधार वंक झर झरणा, नाद विन्दु इक होई ।
शब्द वेग पंखाँ विन उडणा, जाणेगा जन कोई ॥ १८ ॥
लंबा माग अचंभा भारी, श्वास वेग ततकाळू ।
प्रकट इकीसूं मणिया छेद्या, सुरति शब्द उजवाळू ॥ १९ ॥
पंगा चढ्या मेरु की घाटी, सब वैराट उँचाया ।
पाँचों प्राण सुई के नाके, सूधे रस्ते लाया ॥ २० ॥
सब ले उड्या गगनके माहीं, अद्भुत प्रगट अनन्दा ।
इन्द्र आदि अष्ट सुर जातक, नमस्कार कह वन्दा ॥ २१ ॥
गूंगा वायक अविरल बोल्या, राग अनेक उचारू ।
गगन घोर वाजा तहँ अनता, कहिये कौन विचारू ॥ २२ ॥
बारै मेघ लगी झड़ वरषा, नीर विना सर भरिया ।
वरषी धरणि गगन हुय सरजल, परम पन्थ जन परिया ॥ २३ ॥

दशमें द्वार चढ़्या अवधूता, जरा न झंपै काल्हू ।
जोगी नमो अजोनी अणभँग, राम शब्द मतवाल्हू ॥ २४ ॥
गंगा तीन मिली तट त्रिकुटी, तीर्थ सबै शिरताजू ।
निर्मल न्हाय मिट्या दुख जन्मा, सरिया सब सिध काजू ॥ २५ ॥
बहुर्‌यों जगत जन्म नहिं धरणा, ऐसा करणा स्नानं ।
अनुभव परा पाठ जन उचरत, आतम अद्भुत ज्ञानं ॥ २६ ॥
परगट शब्द सदा जन केरा, पहुँता साख सदाई ।
आगे अबै होयगा अबही, त्रिकुटी तख्त समाई ॥ २७ ॥
मुद्रा पंच सधे अवधूता, ज्ञान भँडार खुलाणा ।
बिछुर्‌या जहाँ उलटिके आसन, सहजाँ आन मिलाणा ॥ २८ ॥
प्रगट श्रवण रसन चख नासा, गावाँ शब्द लुभाणा ।
देखन रूप भये सब निर्मल, दश दरबान मिलाणा ॥ २९ ॥
किल्लादार चारों चित चोखै, पाँचों पंच हटाणा ।
सहजाँ मिल्या शब्दके धोरै, उन्मनि ध्यान धराणा ॥ ३० ॥
परमानन्द महा सुख पूरण, ध्यान अखंडित धारं ।
झीनमें झीन तारमें तारी, सुषमण सुक्ख अपारं ॥ ३१ ॥
निश्चल चित्त गरक गुण तीनों, त्रिगुणी मायात्यागी ।
बेहद मिल्या तजी हद रचना, परम पुरुष वैरागी ॥ ३२ ॥
बेहद वास विदेही निर्भय, अपना कारज कीया ।
बन्धन तोड़ भया निर्बन्धन, परम तत्त्व सुख लीया ॥ ३३ ॥
सहजाँ सुरति शब्द का मेला, सुन पर तख्त विराजै ।
आसण अधर अनूप अवासा, लेजु अखंडित साजै ॥ ३४ ॥
जोत उद्योत अनेक प्रकाशा, सूर अनेक छिपाणा ।
बारै कला मिली थिर सोलै, शीतल लहर समाणा ॥ ३५ ॥
सूत्र भेद रह्या नहिं कोई, सुरता परख विचारी ।
सुषमण सीप अटलपद मुक्ता, कण कारण गुण जारी ॥ ३६ ॥
सरवर शून्य हंस पर हंसा, ब्रह्म वृक्ष पर थिरता ।
निज कण नाम चुगै नित मुक्ता, कदू काल नहिं खिरता ॥ ३७ ॥
अवर्ण कहा वर्ण में आवै, वृक्ष अनादि अगाधं ।
भक्ति विचार दोय अँक चढ़णा, मुक्ति महाफल आदं ॥ ३८ ॥
मीठा कहों तो वले न कोई, हरिया उन सम वोई ।
दीठा जिके सर्व परिपूरण, सरिया कारज सोई ॥ ३९ ॥
छाया तासु रच्यो ब्रह्मंडा, सचराचर सब जीवं ।
मंडप मंड अमंडी सोई, एक अखंडी सीवं ॥ ४० ॥

ब्रह्म अधार पुरुषतें प्रकृति, महतततें हंकारा।
तम रज सत्व उपज गुण तीनों, पंच तत्व विस्तारा॥ ४१॥
प्रथम अकाश वायुते तेजं, जल मंझ अंड पकाया।
ता मँझ विष्णु नाभि कँज ब्रह्मा, विधिते शंभु उपाया॥ ४२॥
छाया प्रवल होत इसि सृष्टं, माया अपरम पारा।
चारप्रकार फिरत सो प्रलयं, जग बंधाण बुहारा॥ ४३॥
घटिका एक चार युग ब्रह्मा, कहत चौकड़ी एही।
बहतर गयाँ शक्र हुय ऊमर, चवदै इन्द्र दिनेही॥ ४४॥
चार हजार जात युग जिनमें, ब्रह्मा दिवस कहीजै।
मुर शत साठ गयाँ हुय सम्वत, शत वर्ष आयु लहीजै॥ ४५॥
क्रोड़ पैंतीस उपज अवतारा, आयु पदूमसुत माँई।
अयुत सहस्र उपज आतमभू, घटिका विष्णु कहाई॥ ४६॥
द्वादश लाख विष्णु हुय जावत, शंभु अर्धघटि जानो।
पाँच हजार चलै जब ईश्वर, माया रंग रँगानो॥ ४७॥
नित्य नैमित्तिक लय आत्यन्तिक, छाया हद या ताँई।
शक्ति शृंगार तहाँ नवयौबन, आप आप विलसाँई॥ ४८॥
माया लाख अनेक अनेकं, ब्रह्म उन्मेष अगाधं।
इकियक ध्यान मध्य यह रचना, नमो अगम गति आदं॥ ४९॥
और न छौर अकथ कुन कथता, कह्या किणीसे जावै।
आदि न अन्त मध्य नहिं जाकी, साक्षी सन्त बतावै॥ ५०॥
रूप न रेख अरंग अजोनी, चढ़िया तिके अडंकी।
सागर लौन पूतली गति ता, वरणत कौन असंकी॥ ५१॥
अपरम अतुल ब्रह्म पर परमं, इस जु वृक्ष बतायो।
नामी नहीं नाम कहाँ ठाहर, रमता राम रमायो॥ ५२॥
गहरा अगम निगम तत निर्णय, पारख जनाँ सदाई।
सबका सार भेद ततं आतम, परमहँस दिखलाई॥ ५३॥
दर्पण वदन कहै चख नामी, यों जन शब्द प्रकासा।
सूर उद्योत परख मिट रजनी, सजनी कमल हुलासा॥ ५४॥
चन्द उदय शीतलता परगट, तरुण उदय ज्यों मदनस।
माया उदय रजोगुण परगट, राम उदय मिट कलमस॥ ५५॥
भोजन परख कहै घट परगट, लक्ष्मी वदन दिखावै।
दृग विच हेत वचनमें प्रज्ञा, दुख तनु नाक लखावै॥ ५६॥
पारख कपट वदन कह परगट, देश परख मुख भासा।
सँस्कृत रसना पद्यं सूत्रं, भाव दिखावै दासा॥ ५७॥

सज्जन परख विप्र विच बेली, कुलवन्ती कुल लाजा।
धर्माध्यक्ष दुभख में दूणा, परमारथ हित जाजा ॥ ५८ ॥
सूरा खाग सती जल देही, आसत सिद्धि सदाई।
परख स्वभाव दिना केइ रहता, गरवा रीस न काई ॥ ५९ ॥
वनिता समय शील की पारख, परगट साख शिरोमन।
अपनी कला दिखावत आपे, जानत सबै मनोमन ॥ ६० ॥
साद अनादि सिल्याँ का निश्चय, परचै शब्द सतोलौं।
निर्गुणसार वज्र अणअक्षर, अपरमपार अतोलौं ॥ ६१ ॥
बीजक सिद्ध मोक्षको मारग, परगट जनाँ सदाई।
नमस्कार ऐसा ततवेता, भूल न परत कदाई ॥ ६२ ॥
जूनो द्रव्य देख अँक पावत, पिता आथ खत साखं।
गुरु प्रसाद साध घट निर्णय, सत्तशब्द मुख भाखं ॥ ६३ ॥
च्यार प्रकार प्रगट धुर बानी, ताका भेद बताऊँ।
अर्थ माहिं सबको परिपूरण, गरथाँ पार न पाऊँ ॥ ६४ ॥
परगट सदा साध घरहासिल, दोय अंक सत विद्या।
प्रथमहि गुरू पढ़ाया हमको, श्वास श्वास पर सिद्धा ॥ ६५ ॥
जिनका दास पास नित चरणाँ, मन वच सुरति हमारी।
अनुभव वाच साच उर आतम, परमपुरुषसे यारी ॥ ६६ ॥
खानाजाद गुलाम गुलामी, नितप्रति एकण धारा।
भूँडा भला रावरा चाकर, घर जाया प्रतिपारा ॥ ६७ ॥
करुणा भाव वीनती दासा, आदि अन्त इक अंगा।
समता लियां सर्ब सुखदायक, निश्चल चित मन चंगा ॥ ६८ ॥
करता राम नहीं मैं करता, सदा दीनता माँई।
अकरणकरण उधारण समरथ, चरण शरण जन साँई ॥ ६९ ॥
इन आशय वायक ब्रह्मबाणी, दास शिरोमणि सारं।
बोध अनेक प्रगट चख आतम, अरस परस दीदारं ॥ ७० ॥
प्रथम जगत ते भयो उदासा, माया भर्म अनेका।
स्वप्न जंजाल तजौं कुलकर्मा, भजौं शुद्ध मन एका ॥ ७१ ॥
प्रथम पकर मन गुरुगम धारण, सत्संगति घर माँई।
ज्ञान खड्ग पासी मोह वाढ़त, निर्भय खाग वजाई ॥ ७२ ॥
सदा निशंक रहै निर्दावै, वन्धन ते निरवाला।
केवल मंत्र जपै उर आनंद, राम शब्द मतवाला ॥ ७३ ॥
अन्तःकरण वासना त्यागी, शान्ती वन मँझ रहता।
वस्ती क्रोध कदे नहिं जावै, सत भिक्षा सत लहता ॥ ७४ ॥

उन्मनि मुद्रा गुफा शिरोमणि, सुरति शब्द का मेला।
ध्यान समाधि अखंडित धारण, अष्ट जाम इकवेला ॥ ७५ ॥
गुणाअतीत नमो अणभंगी, घृत्त छिपै नहिं भोजन।
केवल भया लह्या पद आनँद, ऐसे कहियै सो जन ॥ ७६ ॥
त्यागी नाम सदा वैरागी, जिनको वन्दन मेरी।
आशा तृष्णा अहं कल्पना, जीति लई गोचेरी ॥ ७७ ॥
ब्रह्म प्रकाश गिरा इन आशय, यही उदासा वाणी।
प्रपंच आन करै सब खंडन, पूरा गति सहनाणी ॥ ७८ ॥
उर वैराट रूप भगवानं, ता विच सबै समाहीं।
संभव गिरा अजोनी आनँद, राम विना कछु नाहीं ॥ ७९ ॥
स्थावर जंगम सूक्ष्म स्थूला, सचराचर अविनासी।
जल स्थल धरणि पवन आकाशा, परगट तेज निवासी ॥ ८० ॥
ब्रह्माआदि कीटपर्यन्ता, चींटी गज इकसारं।
सब भरपूर अन्तर्गतजामी, रमता राम हमारं ॥ ८१ ॥
घर वन देश कहा परदेशाँ, स्वर्ग मृत्यु पातालं।
राम इच्छा विचरत आनन्दी, जरा न झंपै कालं ॥ ८२ ॥
कुणसा भूत प्रेत छल भयता, कुण मारत कुण द्रोहा।
सब घट जीव आपसा आपे, निर्दावै गत सोहा ॥ ८३ ॥
जंत्रहु तंत्र मूठ नहिं माया, नवग्रह तिथि नहिं वारा।
नक्षत्र योग लग्नपुल वेला, कुण महुरत अनुसारा ॥ ८४ ॥
तीनों ताप जलण नहिं पावै, आधि व्याधितें न्यारा।
वन्दन नमो निकन्दन साधू, मोह्या प्रीतम प्यारा ॥ ८५ ॥
संभव भया लह्या पद ऐसा, अब खुदवह सिधकारण।
मैं हौं आदि अंत मध जैसा, स्थिर आकाश अपारण ॥ ८६ ॥
प्रथम प्रागभाव परमातम, अन्योअन्य स जीवा।
प्रकट करण इच्छा भइ मेरी, पुरुष प्रकृतिकी सीवा ॥ ८७ ॥
सब विध्वंस काल गति करता, प्रगट्या जेथ सिलाणा।
तत सिल तत्व परम परमातम, एकाएक ठिकाणा ॥ ८८ ॥
सो आत्यंतिकभाव कही जै, अक्षय ब्रह्म निकारा।
ता सिलिबै मारग है अक्षर, सद्गुरु शब्द विचारा ॥ ८९ ॥
अव्यय धाम राम जन रमता, हम तारण हम तरणं।
पोषण भरण सर्वके स्हायक, कारण अकरण करणं ॥ ९० ॥
अनुभव आप जु खुदवह स्वामी, इन परकार कहीजै।
साधु अगाध नमो गति समरथ, ता चरणाँ मन दहिजै ॥ ९१ ॥

के जन दास उदास संभवी, के खुदवह की धारा।
प्रगट बोध सर्वको मारग, राम शब्द ततसारा ॥ ९२ ॥
चार खानि प्रगटे जिव सबही, ताकी वानी चारौं।
चार पदारथ सिध परमारथ, चत गत मुक्ति मिलारौं ॥ ९३ ॥
चार अवस्था आतम उपजत, ज्ञान दृष्टि परकासी।
शुभ जु क्रिया जन सेव सदाई, एकाएक उपासी ॥ ९४ ॥
द्वितिये उपज विरह उर मेले, तृतिये त्रिभुवन मोह्या।
चतुर्थ अरस परस मिल खेलूं, सुरता नैंन संजोया ॥ ९५ ॥
तत्पर सुक्ख छक्या तद बोल्या, अनुभव शब्द रसालूँ।
ज्ञान प्रकाश अंग गलताना, एकसे एक विशालूँ ॥ ९६ ॥
जीव अंकूर भक्त उर अवनी, उदय भया तत्कालूँ।
दुइ दल खुले अक्षर दुइ आदू, वरषा प्रेम विचालूँ ॥ ९७ ॥
सद्गुरु ज्ञान घटा घन वरषत, भक्ति वृक्ष गरजाणा।
तत रत पेड मूल अविनाशी, वाणी डाल वँधाणा ॥ ९८ ॥
ता मध अंग प्रगट उपशाखा, वडनामी विस्तारा।
उपमेय नहीं उपमा कैसी, कहिहौं कछु अनुसारा ॥ ९९ ॥
"नमस्कार[1]" "गुरुदेव[2]" सदाई, जिव सद्गति "गुरुपारख[3]"।
"गुरुवन्दन[4]" "गुरुधर्म[5]" सनातन, चरण शरण भव तारक॥१००॥
"सुमरणअंग[6]" "सार (इक) सुमरण[7]", सुमरण चार प्रकारा।
"अकल[8]" एक अविगत को चीन्है, यह "उपदेश[9]" सदारा॥१०१॥
ताहि प्रसाद "विरह[10]" उर उपजत, पाऊँ प्रीतम प्यारा।
अटपट वैंन श्वास शर घायल, दरशण दो करतारा ॥ १०२ ॥
"ज्ञानसंजोगविरह[11]" नव जोवन, अग्नी सिन्धु जलाया।
मच्छी उडी अकाशां माहीं, आतम "परचा[12]" पाया ॥ १०३ ॥
"परचैसूर[13]" यारि तव लागी, यह साधारण कीजै।
सोंज समेत ज्ञान असवारी, सिल अपना सुख लीजै ॥ १०४ ॥
अम्मर पीव परश "पिवपरचै[14]", परमानन्द सँगाती।
यह है "रस[15]" सर्व्वे ते मीठा, पीयाँ ताप न ताती ॥ १०५ ॥
ताको "लोभ[16]" सदाई कीजै, तत कमँडलु भर नीरं।
पीपी अघप तलब के धोरे, श्वासोच्छ्वास अधीरं ॥ १०६ ॥
हरि विन सर्व भया "हैरांना[17]", पढ़ि पढ़ि झकत कीताना।
आन उपाय करी सो भूला, वे सब जान अजाना ॥ १०७ ॥
"हेरतअंग[18]" बूँद विच गागर, सागर बूँद समावै।
"जरणा[19]" धार पार पुरुषोत्तम, भाव पदारथ पावै ॥ १०८ ॥

पाया तिकाँ वहाँ "लिवँ"[20] लागी, परमपद् गलताना।
पाँचों तीन मन्न नहिं डोलै, यह "पतिवृत"[21] का वाना॥ १०९॥
चेत "चेतावनि"[22] चितके माहीं, धरिया स्वप्न जँजाला।
"मनका"[23] भर्म सकल अघ मेटण, "मनमृतक"[24] जु गुण गाला॥११०॥
मन वृति त्याग वासना त्यागी, तन पर झूठ बँधाणा।
"सूक्ष्ममारग"[25] सन्तका चलना, दास सपूत मँडाणा॥ १११॥
"लम्बामार्ग"[26] विकट गति चलना, विचसैं विघ्न अनेका।
"मांया"[27] तीन प्रकार विलूधा, डाकण भखण विसेका॥ ११२॥
देखत तजै झीन सब खावै, "मांन"[28] सवल घट मांई।
"चाणकअंग"[29] एक विन फोकट, भूल परे सुन जाँई॥ ११३॥
कहिहौं कहा सन्त सब साक्षी, "कामीनर"[30] जु ठगाणा।
तिरिया रूप वाघणी जानो, मदनाँ घाव बचाणा॥ ११४॥
"सहँज(हि)सुक्ख"[31] रामके शरणै, "सांच"[32] वाच नहिं डरणा।
कंचन हाथ काच करि काने, साचा पार उतरणा॥ ११५॥
भ्रम जुंजाल जगत उलझाणो, हाथाँ मंड पुजावै।
"भ्रमविध्वंसनअंग"[33] जनेश्वर, एक अखंडी ध्यावै॥ ११६॥
के तन "भेख"[34] धारि भूलाणा, भला "कुसंग"[35] न होई।
गंगा नीर सिन्धु मध भेला, छोत सिटै नहिं कोई॥ ११७॥
तेल "सुसंग"[36] इत्र दरशाणा, नींव चन्दन के संगा।
भीतर भिद्या विना सब झूठा, वाँश गंठ नहिं रंगा॥ ११८॥
ऐसे रह्या "असांधु"[37] अचेतन, वायस गिरा न कीरं।
उलू कहा सूर सुख पावत, शठ अज्ञान अधीरं॥ ११९॥
"सांधु"[38] सदा सबका सुखदायक, मन वच क्रम इकधारा।
हंसा चुगै नाम निजमोती, निर्पख रह संसारा॥ १२०॥
"देखादेखि"[39] करै नहिं कवहू, कुल मारग को त्यागै।
कीड़ी नाल जान जग उष्ट्र जु जन जग पखै न लागै॥ १२१॥
जग जन अंग एक नहिं कवहू, अनड़ पक्षि गति जैसी।
पाला देख देख जल मोती, विनस स्थिर कुण रैसी॥ १२२॥
"साधूँसाक्षीभूत" सदाई, गुणा अतीत अखंडा।
सागर सीप रहै विन आशय, मुक्ता उर्ध्वं समंडा॥ १२३॥
ता उपमा वर्णन कहा गाऊं, "साधुं (कि) महिमा"[41] भारी।
रामहि राम और नहिं सर भर, इन्द्र जु आदि चिकारी॥ १२४॥
मध सत गह्याँ विना सब स्वप्ना, "मध्यंअंग"[42] जन रत्ता।
यह है "ज्ञानविचार"[43] सनातन, गावै सन्त अनन्ता॥ १२५॥

"सारग्राही"[४४] हंस जनेश्वर, पय पानी निरवाला ।
माया ब्रह्म करै उर निर्णय, ततदर्शी मतवाला ॥ १२६ ॥
"पिंडपहिचान"[४५] लिया घट भीतर, बाहिर कौन मनावै ।
जोत उद्योत सर्वज्ञ अगोचर, पूरण ब्रह्म धियावै ॥ १२७ ॥
यह "विश्वास"[४६] पूर हरि आशा, मन वच कर्म सदाई ।
पोषण भरण सर्व प्रतिपालन, भूलै नाहिं कदाई ॥ १२८ ॥
चिन्ता मेटि धरो उर "धीरज"[४७] हरि है पार उतारण ।
"विरक्तअंग"[४८] सारकी चोटाँ, नटणी वरत विचारण ॥ १२९ ॥
गर्व निवार अगमगति अविगत, "समर्थ"[४९] करै स होई ।
तृण ते वज्र वज्र ते तृण सम, नाच नचावै सोई ॥ १३० ॥
हर्ष रु शोक मिट्या भव संशय, "शून्यसरोवर"[५०] न्हाया ।
जन्म रु मर्ण गया किण दिशिनें, अक्षर मँझ समाया ॥ १३१ ॥
"प्रेम"[५१] प्रवाह भया गलताना, "कुशब्द"[५२] लखै न कोई ।
अजरा जरै कौन है शत्रू, मेरा मंझ स कोई ॥ १३२ ॥
"शब्द"[५३] स तीर भया मन घायल, जानै वाहन हारा ।
ताकी वाज गगन मग निकसी, अनहद शब्द अपारा ॥ १३३ ॥
"कर्म"[५४] अनेक मिट्या जन केरा, पाप पुण्य सब जाना ।
"कौल"[५५] जाल ते भया निदावै, ब्रह्म समँद सुख माना ॥ १३४ ॥
"मच्छी"[५६] नीर लह्या चित निर्मल, अघट अमर सुख पाया ।
ऐसी प्रीति बहुरि नहिं बिछुरत, कीर न जाल बधाया ॥ १३५ ॥
सही "संजीवन"[५७] यही ज औषधि, "चितकपटी"[५८] कहा जानै ।
मनतें मोट तनाँ पर उज्वल, विद्रुम बोर समानै ॥ १३६ ॥
परगट जान असल यह कमसल, मन वच कर्म बुहारौं ।
सत्य असत्य कहो कद एकै, कुन्दन तुस्स निकारौं ॥ १३७ ॥
"गुरुशिखअंग"[५९] मिलै जद महरम, ओतप्रोत दरसाणा ।
बूझै ब्रह्म परम करदेवै, आतम तत्त्व ठिकाणा ॥ १३८ ॥
योही "हेतप्रीत"[६०]सत जानो, दूरापन उरमाहीं ।
गुडनी डौर सुरति के धोरै, मेरा मुझ्झ मिलाहीं ॥ १३९ ॥
"सूरा"[६१] होय खाग सत सुमरण, मन दुर वात हटाणा ।
"जीवतमृतक"[६२]हुया सोपाया, अधरा अमर मिलाणा ॥ १४० ॥
"मांसअहारी"[६३] सोकह जानै, गोजर श्वान भुलाना ।
हीरो जन्म "अपारख"[६४] खोयो, कोडी हाथ विकाना ॥ १४१ ॥
"पारख"[६५]परी जिकाँ शुधि पाई, द्रव्य हमारा येही ।
अन्तर परख शिके इकधारा, हीर अमोलक लेही ॥ १४२ ॥

"आँनदेव"[६६] को कदे न मानै, जौंहरी सन्त हमारा।
सो तो सिल्या ब्रह्मसुखसम्पति, भूला जिके गँवारा ॥ १४३ ॥
ऊँचा नीच इसी विधि कहिये, अष्ट अंग नहिं भेदा।
विन हरिभक्ति नीचसे नीचा, श्रेष्ठ भक्ति कहवेदा ॥ १४४ ॥
"निन्दाँ"[६७] नहीं साच कह साधू, आतम अर्थ विचारो।
हितकी वात सकल सुखदायक, अवगुण सिख्याँ उधारो ॥ १४५ ॥
तृण तुसार निंदै नहिं साधू, रार दुसार दुखावै।
"दयाँनिर्वैरता"[६८] आपै माहीं, सब की पीर मिटावै ॥ १४६ ॥
"सुन्दर"[६९]सार करो अविनाशी, तुम विन कौंन छुडावै।
एक अधार अजोनी आनँद, सायद सन्त वतावै ॥ १४७ ॥
"उपजँनअंग"[७०] हदै यह उपजत, भाग विदेश पयाणा।
षोढ़ शृंगार तज्यां सुख पावै, आतम तत्त्व ठिकाणा ॥ १४८ ॥
नौका नाम तिरो भवसागर, उपजन अंग सदाई।
"कस्तूर्यांमृग"[७१] ज्यों मत भूलो, भ्रमत मुआ दुखदाई ॥ १४९ ॥
जावै नहीं "निर्गुण"[७२] शठ दुर्मति, पर्वत सुधा सिलाणा।
कोटि प्रकार कहो सुख आतम, मनमुख अक्ष बँधाणा ॥ १५० ॥
हरि परताप जिकाँ गति ऐसी, सदा "दीनँता"[७३] माँई।
मैं सो नीच नीचसे नीचा, पतित उधारण साँई ॥ १५१ ॥
यह "तनमाँलाअंग"[७४] धारणा, किनकों दोय वताऊँ।
हिन्दू तुरक कहा षट्दर्शण, पखके दिशा न जाऊँ ॥ १५२ ॥
निर्पख एक निजानँद आनँद, हरि गलतान दिवाना।
"मौला"[७५] श्वास उश्वास सुमरणा, अजपा जाप समाना ॥ १५३ ॥
"कँड़वीवेलि"[७६] जान जग ताँता, तृष्णा आश पसारा।
जोगी जती सिद्ध कहा तंपसी, फल तरवूज विचारा ॥ १५४ ॥
उदय अंकूर आदि सम कड़वा, खिर अरु अवनि सिलाणा।
लकड़ी लगी जली जद वेली, मूल गयाँ फल खाणा ॥ १५५ ॥
"वेँलि"[७७] अनादि साध घर माहीं, "वेँहद"[७८] जाय समाणा।
तीन प्रकार तजी हद रचना, अपरम परम कहाणा ॥ १५६ ॥
सुमरण मेधा विधि अस्थानं, आतम शब्द पयाणा।
"सुँरतिविचारअंग"[७९] सब निर्णय, केवल सुरति समाणा ॥ १५७ ॥
"ब्रँह्मसमाधि"[८०] साध पद पूरण, नव तत गले अखंडा।
"मायाब्रँह्म"[८१] (भयो जद) निर्णय," छाया "वृँक्ष"[८२] अमंडा ॥ १५८ ॥
अक्षर ब्रह्म क्षरै सोमाया, गुरु परसाद प्रकासी।
ररंकार "निर्गुँण[८३] (निजनामी), सगुण" जु ममो थकासी ॥ १५९ ॥

"ब्रह्मएकता" एक अभंगी, ता पर अंग न कोई।
सबके परे प्रगट सब माहीं, रमता राम स कोई ॥ १६० ॥
भक्ति विलास प्रगट जन माहीं, अपरम अनुभव धारा।
देशकाल उपजत परसंगा, अर्थ शिरोमणि सारा ॥ १६१ ॥
वाणी चार अंग चोरासी, उपमेय अंग अपारा।
परगट साख शिरोमणि साखी, सद्गुरु शब्द उधारा ॥ १६२ ॥
शिव अवधूत नमो योगीश्वर, आसण लख चौरासी।
एता छन्दवर्ण शिव परगट, आतम एक उपासी ॥ १६३ ॥
लख मध एक भया चौरासी, सेनापति परवानू।
लख चौरासी जीव उपाया, ब्रह्मा सृष्टि विधानू ॥ १६४ ॥
पोषण भरण सबका पालक, विष्णुदेव सब नायक।
भक्त उपास दास का रक्षक, धर अवतार सहायक ॥ १६५ ॥
केवल मंत्र सबको बीजक, परगट साख बतावै।
तारण तरण परश परमानंद, अनुभव शब्द दिखावै ॥ १६६ ॥
परगट अंग जनाँ की वाणी, सब तत सार पिछान्या।
इसविधि ब्रह्म भया पारायण, महा परम सुख मान्या ॥ १६७ ॥
अक्षर भया लह्या घर आदू, सूत्र रु तत्त्व जलाया।
घण सो काल खाय नहिं सकिहै, वज्र अडंक सवाया ॥ १६८ ॥
परगट शब्द कृपा गुरु कारण, यह कमज्या जन केरी।
इसविधि बीजक द्रव्य दिखाया, कहा कहै मति मेरी ॥ १६९ ॥
अवर्ण कहा वर्ण में आवै, शब्दाँ शब्द दिखाया।
रामदास सद्गुरु के शरणै, उर उद्योत सवाया ॥ १७० ॥

दोहा।

अंधघ तिमिर भ्रम दृष्टिता, दूर करी गुरुदेव।
जन रामा आतम उदय, अनुभव पाया भेव ॥ २ ॥
प्रगटबोध परकासिया, बाणी अंग विचार।
देशकाल संयुक्ति सब, खंडण आन विकार ॥ ३ ॥
गुरु सन्मुख शिख आतमा, प्राप्ति जु जिनके होय।
रामशब्द धारण करै, भूल परै नहिं कोय ॥ ४ ॥
जन अगाध वन्दन सदा, प्रगट दिखायो मोहि।
राम साधु छोडूँ नहीं, जो कल उत्थल होहि ॥ ५ ॥

इति प्रगटबोध[1]।

---

1 यह ग्रंथ अवश्य विचारणीय है।

(ग्रन्थ)

"ज्ञानविवेक[1] ग्रन्थ" जब आयो, "गुरुमहिमा[2]" परताप दिखायो।
"भक्तमाल[3]" चेतो "चेतावनि[4]", "जमफारगती[5]" सन्त करावनि ॥ १ ॥
"मन (से) राड़[6]" करै "जगँजन[7]" धिन, "रणजीत[8]" सूरा सन्त मरमन।
"अमरबोध[9] ग्रन्थ" भव पारा, "मूलपुराण[10]" सोझिया सारा ॥ २ ॥
"उभयज्ञान[11]" दुइ अक्षर पाया, "आदिबोध[12]" तत अर्थ समाया।
दत "आकाशबोध[13]" सर्वंगी, "नाममाल[14]" रतनाम अभंगी ॥ ३ ॥
"आतमसार[15]" लिया तत ताई, "ब्रह्मजिज्ञास[16]" भया घट माँई।
"षट्दर्शण[17]" का निर्णय भया, "पदबत्तीसग्रन्थ[18]" ओर थया ॥ ४ ॥
"बालबोध[19]" जन्मत धुर गायो, "पंचमात्रा[20]" स्वरूप दिखायो।
"सोलहकला[21]" प्रकट घट माहीं "आत्माबेलि[22]" सजीवन ताहीं ॥ ५ ॥
"निरालंब[23]" हरिजन पद पूरा, "नीसाणी[24]" पदब्रह्म निज नूरा।
निर्णय नाम ग्रन्थ अरथाया, साखी अंग सर्व दरशाया ॥ ६ ॥
कवित रेखता हरिजश जेता, कुंडलिया सवैया हरि हेता।
ज्ञानसरोवर झूले जबही, चन्द्रायणा सोरठा सबही ॥ ७ ॥
दास उदास रु संभव[1] खुदवह, अनुभव हरिजन चतविध सिधवह।
(श्रीराम-परची विश्राम १७)

इति श्रीरामस्नेहधर्मप्रकाश सम्पूर्णम्।

श्रीरस्तु कल्याणमस्तु।

अथ श्री १०८ श्रीकबीर साहबके अनुभव शब्द।

कबीर प्रणमत गुरु गोविंद कूं, अब जन वंदौं सोय।
पहल भये परणाम तिहिं, नमो सु आगै होय ॥ १ ॥
कबीर सब कोउ डरपै कालसूं, ब्रह्मा विष्णु महेश।
काल डरै करतार सौं, जय जय जय आदेश ॥ २ ॥

रेखता—

रामरे राम विश्राम या जीवको और विश्राम नहिं कोइ भाई।
स्वर्ग अरु मृत्यु पाताल छूटै नहीं जहाँ जावै तहाँ काल खाई।
आसरै एक निज देवके ऊबरै आनके आसरै नाहिं छूटै।
अचल के आसरै काल भय को नहीं आनके आसरै काल कूटै ॥
जप्प अरु तप्प तीर्थ व्रत थोथरा जोग अरु जग्य सब देख छोई।
नाम निर्वाण विन पार पहुंचै नहीं वेद अरु पुराण सब देख जोई।

---

1 योग्यता, होनेके योग्य।

नाम परताप तिहुँ लोक छाना नहीं भौसिंधु के तिरन कूं वन्या बेरा।
संत अनेक तरि पार पैले गये कहै कबीर निज नाम तेरा ॥ १ ॥
वारही वार रटि राम रस पीवणा भटकि मत भर्म में भूलि जाई।
जहाँ जावै तहाँ सूत सुलझै नहीं उलटि उलझै तहाँ जाय भाई ॥
सुलटि अवजूद में पलटि मन पवन कूं परम सुखधाम जहां प्राण लावै।
कहै कबीर वहाँ अजव विश्राम है रोमही रोम रस राम पावै ॥ २ ॥
मन वारही वार ररंकार रसना रटो सार सुखसीर निज नाम नेरा।
पाप का नास अरु ताप लागै नहीं चतुर अस्सी तणा मिटै फेरा ॥
नाम परताप तिहुँ लोक छाना नहीं शेष शिव विरंचि सव साधु गावै।
कहै कबीर गुरु दई है औषधी पीवै सो पार भवसिंधु पावै ॥ ३ ॥
देह गुण त्यागि अरु लागि हरिनामसूं जागिरे जागि अब कहा सोवै।
ज्ञानसमशेर ले मारि मन मीर कूं पांच कूं पकड़ि ज्यूं पीर होवै ॥
गगन का तखत परि जुगति कर खेलणा रोक नवद्वार ज्यूं कमल फूलै।
कहै कबीर तहाँ काल लागै नहीं सहज दरियाव में प्राण झूलै ॥ ४ ॥
नाम ही ज्ञान अरु ध्यान पर नामही नामही भक्ति वैराग थाई।
नाम ही प्रेम निज नेम सो नाम ही नाम ही जोगकी जुगति भाई ॥
शील अरु साँच संतोष पर नाम ही नाम ही जप्प अरु तप्प कीया।
कहै कबीर यह कृत्य वाकी नहीं रोमही रोम निज नाम पीया ॥ ५ ॥
फेर रे फेर मन पवन कूं घेर रे सुरत की डोर सूं जेर भाई।
अधः अरु ऊर्ध्व के बीच में रोकणा नाम कूं छांडि नहीं अंत जाई ॥
निकट विश्राम निजधाम नेड़ा सही गुरां के ज्ञान तें होय पारा।
कहै कबीर यों नीर मुकलावणा चूहड़ी चाहका करो चारा ॥ ६ ॥
पवन के रोकणे मन्न भी बोलता मन्न के रोकणे तन्न बोलै।
तन्न के रोकणे तेज में खेलिया तेज में खेल के पाट खोलै ॥
देव कृपालु तब होय कृपालुता प्रेम प्रकासका सुक्ख आवै।
दास कबीर तहाँ अलख जपता रहो विना कर तांतियाँ नाद त्रावै ॥७॥
जोगकी जुक्ति बिन मुक्ति होवै नहीं जुक्ति बिन कर्मही नाहिं छीजै।
जोगकी जुक्ति बिन साधु पद ना लहै जोगकी जुक्ति बिन कौन धीजै ॥
सुरति मन पवन कूं फेर उलटा चलो शील अरु सांच संतोष धारो।
कहै कबीर यों राम रसना जपो काम अरु क्रोध मद लोभ मारो ॥ ८ ॥
राम कह राम कह राम कह लीजियो राम विन काम नहिं और कीजै।
सुरति मन पवन कूं फेर उलटा चलो रोम ही रोम रस राम पीजै ॥
आदि ही अंत मध्य एक ही आसरा एक विन दूसरा आन नाँई।
दास कबीर यूं कहत पुकारिके एक तूं एक तूं एक साँई ॥ ९ ॥

भजन के वास्ते संत जन कहत है राम रमतीत यह नाम तेरा।
नाम अरु ठाम कुल गाम नहिं देखिये अगम अरु निगम दुइ थकत चेरा॥
इंद्रियाँ द्वार मन वाक पहुंचै नहीं सकल परकास करि रहै न्यारा।
रूप अरु रेख वपु भेख नहिं पाइये कहै कबीर सोइ पीर थारा॥ १०॥
एक विन दूसरा दृष्टि आवै नहीं एक विन दूसरा कौन दूजा।
एक विन दूसरी सेव कहो कौन की एक विन दूसरी कौन पूजा॥
पांच अरु तीन का सर्व मंडाण है एक प्रकाश ब्रह्मंड कीया।
कहै कबीर अब द्वैत दीसै नहीं एक ही इष्ट गुरु देव दीया॥ ११॥
अलख अल्लाह अबीह समर्थ धणी नाम निर्वाण ते थाह नाहीं।
शेष शिव विरंचि ते पार पावे नहीं उदय अरु अस्त नहिं धूप छाहीं॥
रूप नहिं रेख नहिं वरण वासा नहीं आप अल्लेख सब छोड़ दूरा।
कहै कबीर कहुं लिप्त होवै नहीं लहै कोई सत्तगुरु ज्ञान पूरा॥ १२॥
कथत है ज्ञान अरु ध्यान पुनि धरत है चलत विस्तार करि पंथ माहीं।
सास उसास की गूदड़ी सीवताँ सुरति की सुई तहां अनँत जाहीं॥
रहै निरधार कोइ द्वंद में ना पड़ै मन्न अरु पवन का करत मेला।
कहै कबीर फिर फूट चालै नहीं सहज दरियाव में सहज पेला॥ १३॥
कर्म अरु भर्म संसार सब करत है पीव की परख कोइ संत जानै।
सुरति अरु निरत मन पवन कूं उलटिके गंग अरु यमुनके घाट आनै॥
पांच कूं नाथि कै साथ सोई लिया अधर दरियाव का सुक्ख मानै।
कहै कबीर कोइ संत निर्भय रहै जन्म अरु मरण का भर्म भानै॥ १४॥
चक्र के बीच में कमल अति फूलिया तासका सुक्ख कोइ संत जानै।
कुलफ तब द्वार अरु पवन कूं रोकणा भृकुटी मध्य मन भँवर ठानै॥
सिंधु की घोर चहुँ ओर तहाँ देत है अधर दरियाव का सुक्ख मानै॥
कहै कबीर यूं सुख सिंधु झूल है जन्म अरु मरण का भर्म भानै॥ १५॥
गंग अरु जमुन के घाट कूं खोजले भँवर गुंजार जहाँ जुग्ग भाई।
सरस्वती नीर तहाँ देख निर्मल वहै जासका जल पियाँ पाप जाई॥
पांच की प्यास तहाँ देख पूरी हुई तीन की ताप तहाँ लगै नाहीं।
कहै कबीर तहाँ अगम का खेल है गैब का चानणा देख माहीं॥ १६॥
बोलरे बोल अब चुप्प कूं है रह्या बोल मन सूवटा ब्रह्म वाणी।
पांच कूं पलट करि तीन कूं जीत ले महल चौथैतणी खबर जाणी॥
गगन गरजै तहाँ नीर नीझर झरै पाक पीवै कोई संतपूरा।
कहै कबीर मसतान माता रहै विना मृदंग तहां वजत तूरा॥ १७॥
अगम अस्थान गुरु ज्ञान विन ना लहै लहै कोइ संत गुरु ज्ञान पूरा।
द्वादश पलटि करि षोड़शा प्रग्गटे गगन गरजै तहाँ वजत तूरा॥

इला अरु पिंगला सुषुम्णा सोझि करि अधः अरु ऊर्ध्वं विच ध्यान लावै।
कहै कबीर सोई संत निरभै रहै कालकी चोट फिर नाहिं खावै ॥ १८ ॥
छक्या अवधूत मस्तान माता रहै ज्ञान वैराग सूं छल्या पूरा।
सास उसास का पेम प्याला पिवै गगन गरजै तहां बजै तूरा ॥
पूठ संसार सूं राम राता रहै जतन जरणा लियां जुगति खेलै।
कहै कबीर यूं पीर सूं सर खरू सहज सुखधाम में प्राण मेलै ॥ १९ ॥
संत की चाल संसार सूं भिन्न है सकल संसार में चहल बाजी।
हिंदू मुसलमान दोउं दीन शरहद बने वेद कत्तेव प्रपंच साजी ॥
हिंदू को नेम आचार पूजा घनी व्रत्त एकादशी रहै राजी।
बाकरा मारि मुख मांस भक्षन करै भक्ति नहिं होत या दगाबाजी ॥
सर्व वध जीव अपराध के मूल है कठिन या चूक तुम चेत याजी।
सर्व धर्म ऊपरै कृष्ण गीता कथी कृष्ण का कह्या तू मान याजी ॥
कह्या गीता पढ़ी दृष्टि खूल्ही नहीं यों वकिमुवा नर मूढ़ पाजी।
मुहम्मद या करीम कृष्ण कह्याँ क्या फरक वहल कर सुनो कहा बीन बाजी
मुसलमान कलमा पढै तीस रोजा करै बांग निवाज धुन करत गाढ़ी।
बक्करी मुरगी जीव जह्वै करै गाय पछाड़ि करि कूह काढ़ी ॥
जुलम एता करै विहिश्त काहे मिलै खून अपराध की व्याधि बाढ़ी।
होय हिसाब तब जाब क्या देत है ले चले फरिश्ते पकरि दाढ़ी ॥
होय तंबीर जब कठिन कूंदी करै चाम दल कष्ट तहाँ परै गाढ़ी।
मुहम्मद महरबान दया दिलसे करो जहां रोजा तहां विहिश्त ठाढ़ी ॥
जहाँ रब राज तहाँ बाज अनहदतणी महरपद मुहर्रममें सुरति गाढ़ी।
कहै कबीर जहाँ साहिबी सो करै आप तिन चीन्ह सब कुफुर छाड़ी॥२०॥
तिलक माथै दिया हाथ में लाकड़ी भजन का भेव तो नाहिं पाया।
शील अरु सांच संतोष अंतर नहीं कनक अरु कामिनी जहर खाया ॥
गूदड़ा पहरि करि बक आसन किया मच्छली गिटन सूं हेत भारी।
कहै कबीर जब काल गढ घेर है कौन गति होयगी जीव थारी ॥ २१ ॥
पर्वताँ दोय में जीव बहु उलझिया वनी के वीच में लूट लीया।
पांच पैंडायताँ प्रगट पैंडादिया तासकै वीच कोइ संत जीया ॥
भीर भगवंत अरु शरण गुरु देव की घाटियाँ लंघि करि पार हूवा।
कहै कबीर यूं खेयलै साबती बंहुरि विषधार में नाहिं बूवा ॥ २२ ॥
करत परतीत सो खाय गोता सही रहै निरभै तहां चोर लागै।
अग्नि के संग ज्यूं घीव पिलघल चलै कामिनी संग यूं काम जागै ॥

काम बलवान सब जीव अंधा किया पड़था मन स्वारथी संग झूलै।
कहै कबीर कोइ संत जन ऊबरै नाम निर्वाण नहि पलक भूलै ॥ २३ ॥
तरक संसार से फरक फारक सदा गरक गुरु ज्ञान में सदा जोगी।
अधः अरु ऊर्ध्व के बीच आसन किया वंक प्याला पिवै रस्स भोगी ॥
अधर दरियाव तहाँ जाय डोरी लगी महल बारीक में मोज पाया।
कहै कबीर यूं संत निरभै भया परम सुख धाम जहां प्राण लाया ॥२४॥
देव निर्वाण तहाँ बाण लागै नही सकल कालां सिरै काल देवा।
विष्णु शिव शेष अज पार पावै नही चंद अरु सूर दोउं करत सेवा ॥
तेज क्षिति पवन जल रहत आज्ञा महीं निगम ह्न कहत नहिं पार आवै।
कहत अग्गाध सब साध सेवै सदा दास कबीर तहाँ शीश न्यावै ॥२५॥
सच्चा साँइयाँ एक तूं अवर दूजा नही दृष्टि दीसै जिकी सवै माया।
गुणां के कृत्य परपंच सब विनसही दीसता नही कोइ रहण पाया ॥
घट्ट अरु मठ्ठ महदादि थिर नाँ रहै रहैगा आदि सोई अंत माँई।
कहै कबीर मैं तासकी बंदगी एक भरपूर सर्वज्ञ साँई ॥ २६ ॥
पाव अरु पलक की आरती कौनसी रैण दिन आरती संत गावै।
घुरत नीसाण जहाँ गैब की झालराँ गैब की घंट का नाद आवै ॥
तहाँ नींव विन देहरा नाम निर्वाण है गगनका तख्त पर जुक्ति सारी।
कहै कबीर तहाँ रैणदिन आरती पातियाँ पाँच पूजा उतारी ॥ २७ ॥
साँइयां आप की सेव तो आप ही जान हो आप का भेव कहो कौन पावै।
आपनी आपनी बुद्धि अनुमान है वचन विलास करि लहर लावै ॥
हसो मोहि आत है देख वा उक्ति को निगमह्न कहत नहिं पार पावै।
कहै कबीर हथ सैन गूंगातणी गूंग होवै सोई सैन पावै ॥ २८ ॥
रजा तुम साँइयाँ करो सो होयगी आपकी रजा कहो कौन मेटै।
बूडता जीव तारे तुझे पलक में केई असंख्य जुग नाहिं मेटै ॥
उलटका पलट अरु पलटका उलट है आपका खेल कहो कौन पावै।
पलक में भांज करि फेरि रचना करै कहै कबीर मैं रह्या हावै ॥ २९ ॥
खेल अवधूत का महा अद्भूत है दूत परपंच का लेस नाहीं।
गुणमयी कृत्य सब कालकी दाढमें शेष शिव विरंचि अरु विष्णु ताहीं ॥
रहै निर्धार आधार थिर नां रहै विसर संसार आधार माहीं।
कहै कबीर यह खेल निश्चय किया जन्म अरु मरण का भर्म जाहीं ॥३०॥
देख अवधूत का ज्ञान का घेसला कालके जाल कूं दूरि तोड़ै।
गुणमई कृत्य कूं काटि पायमाल करि पांच पचीस कूं पलटि मोड़ै ॥
राग अरु दोषकी भींत कूं ढ़ाहि करि भरम के कोटकों फेर फोड़ै।
कहै कबीर यूं प्रेम परकास करि सुरत अरु निरत का तार जोड़ै ॥३१॥

सेलियाँ वांकियाँ देख अवधूत की जीवता मरै सोइ ठोड़ पावै ।
तीर खुरसाण का वहुत तीखा वहै लगै उर माहिं डिग नाहिं जावै ॥
राजसा माहिं गदगोल वहु ऊपज्या तामसा माहिं अंधार भाई ।
कहै कवीर निह सत्तका तापियै जीव की वृत्ति क्यूं ठीक थाई ॥ ३२ ॥
तत्त्व कूं छाँडि निह तत्त्व कूं सव कथै भ्रम्म मैं पड़्या सव भेष धारी ।
मुकुट करि जटा शिर तव जोगी भया पहर करि मुंदरा कान फारी ॥
एक नागे भये सर्व लज्जा तजी वज्र कच्छोट कस काम जारी ।
छेद अव जुज घर गूघरू वाय करि पाखंड केते कहुं गर्व प्रहारी ॥
आकाश मौनि मुख उरध वाहु नखी दीह निशि रहै ठाढेज वारी ।
बंध पग खंभ से उरध मुख झूलत रहै धूम घोटत रहै कस्स कारी ॥
अन्न भोजन तजै दूध रोगन करै वजै जग माहिं मैं दूध धारी ।
लूण कूं त्याग करि भये अलूणिया वैठ कै गुफा में लाय तारी ॥
तिलक छापा किया मूर्ति पूजा लिया शंख धुन आरती जोति जारी ।
सेव कीन्ही सही देव, चीन्हा नही आपरा मत्त तजि जड़ पुजारी ॥
ज्ञानी पंडित वडे गीता[1] भागवत पढ़े कर्म की भूतना नाहिं टारी ।
इतना विटंवसे वस्तु न्यारी रही ज्ञान की दृष्टि से लीज्यो विचारी ॥
भरम कूं त्याग करि लागि निज परम से इसे जन कोइ निज ब्रह्मचारी ।
कहै कबीर सोइ संत जन जौंहरी काटि जम फंद सब को संघारी ॥३३॥

इत्यलम् ।

अथ श्रीनामदेवजी महाराज के अनुभव पद ।

१

जौंलगि रामनाममें हित न भयो तौंलगि मेरीमेरी करतां जन्म गयो । टे०
लाग्यो पंक पंक ले धोवै निर्मल न होवै जन्म विगोवै ॥ १ ॥
भीतर मैला वाहिर चोखा पाणी पिंड पखालै धोखा ॥ २ ॥
नामदेव कहै सुरभी परहरिये भेड़ पूंछ कैसे भवजल तिरिये ॥ ३ ॥

---

१ श्रीमद्भगवद्गीता, पिंगलगीता, शंपाकगीता, मंकिगीता, बोध्यगीता, विचख्युगीता, हारीतगीता, वृत्रगीता, पराशरगीता, हंसगीता, अनुगीता, ब्राह्मणगीता, अवधूतगीता, अष्टावक्रगीता, ईश्वरगीता, उत्तरगीता, कपिलगीता, गणेशगीता, देवीगीता, पांडवगीता, ब्रह्मगीता, भिक्षुगीता, यमगीता, व्याउगीता, शिवगीता, सूतगीता, सूर्यगीता, इत्यादि.

पद २

माइ गोविंद रु बाप गोविंद जाति पांति गुरु देव गोविंद । टेर
गोविंद ज्ञान रु गोविंद ध्यान सदा आनंदी राजाराम ॥ १ ॥
गोविंद गावै गोविंद नाचै गोविंद भेष सदा नृत्य काछै ॥ २ ॥
गोविंद पाती गोविंद पूजा नामो भणै मेरे देव न दूजा ॥ ३ ॥

पद ३

इतना कहत तोहि कहा लागत । रामनाम ले सोवत जागत । टेर
ध्रुव प्रह्लाद इह गुण तारे । रामनाम अक्षर हृदै विचारे ॥ १ ॥
रामनाम सनकादिक राता । रामनाम निर्भयपद दाता ॥ २ ॥
भणत नामदेव भाव है ऐसा । जैसी मनसा लाभ है तैसा ॥ ३ ॥

पद ४

जब तब रामनाम निस्तारै ।
साठ घड़ी में एक घड़ी रे सोई सकल अघ जारै ॥ टेर
काशी पुरी मँझ गवरांपति अह निशि सदा पुकारै ।
कीट पतंग सुनत गति पावै गोविंद गुण विस्तारै ॥ १ ॥
अजामेल गनिका शुक पंक्षी रसना नाम उचारै ।
गज पशु व्याध तिरे हरि सुमिरत महिमा व्यास विचारै ॥ २ ॥
परम पुनीत स्वरूप हरि वासर निजजन हरि ब्रत धारै ।
नामदेव कहै सोइ दास कहावै जीवतें छिन न विसारै ॥ ३ ॥

पद ५

राम भक्ति विन गति न तिरनकी कोटि उपाव जो करही रे नर ।
जल सींचे करि जतन प्रवाले आंव बँबूर न फलही रे नर ॥ टेर
आपा थाप और कूं निंदै गर्व मान के मारे ।
फिर पीछै पछिताहुगे बौरे रत्न न मिलहिं उधारे रे नर ॥ १ ॥
यह ममता अपनी जनि जानो धन जोबन सुत दारा ।
बालू के मंदिर विनस जाहिंगे झूठा करो पसारा रे नर ॥ २ ॥
जोग न भोग मोह नहिं माया कहा भयो वनमें वासा ।
चरनकमल अनुराग न उपज्यो तब लग झूठी आशा रे नर ॥ ३ ॥
मनुष्य जन्म आय नहिं चेते अंधे पशू गवारा ।
तेरे शिर काल सदा शर सांधे नामदेव करत पुकारा रे नर ॥ ४ ॥

पद ६

जिह्वा बोले तो रामहि बोल । नहितर वदन कपाट न खोल ॥ टेर ॥
जो बोलिये तो कहिये राम । आन बकन से नाहीं काम ॥ १ ॥

राम नाम मोरे हिरदै लेख। राम विना सब फोकट देख॥ २॥
नामदेव भणै मेरे एको नाम। रामनाम की मैं बलि जाम॥ ३॥

पद ७

हरि भज हरि भज हरि भज मूल विन हरि भजन परै मुख धूल। टेर
अनेकबार पशु है अवतर्‍यो। लख चौरासी भर्मत फिर्‍यो।
पायो नहीं कहीं विश्राम। सतगुरु शरण कह्यो नहिं राम॥ १॥
राज काज सुत वित सब जाय। अविनाशी से प्रीति लगाय।
यह अनुमान भक्त व्रत धारै। जरा मरण भव संकट टारै॥ २॥
गुण सागर गोविंद गुण गाय। अपनो विरद विसर जनि जाय।
प्रणमत नामदेव संत सधीर। चरण शरण राखो हरि तीर॥ ३॥

पद ८

रामनाम मेरे पूंजी धना। जा पूंजी मेरो लागो मना। टेर।
साह की पूंजी आवै जाय। कबहू आवै मूल गमाय॥ १॥
यह पूंजी है अगम अपार। ऐसा कोइ न साहूकार॥ २॥
जाली जलै न खाई खाय। राजा डंडे न चोर लेजाय॥ ३॥
अलख निरंजन दीन दयाल। नामदेवके धन श्रीगोपाल॥ ४॥

पद ९

भक्ति आप मोरे बाबुला। तेरी मुक्ति न माँगूं हरि वीठुला। टेर
भक्ति न आपै तो तन आडूं। कोटि करै तो भक्ति न छाँडूं॥ १॥
अनेक जन्म भ्रम तो फिर्‍यो। तेरो नाम ले ले उधर्‍यो॥ २॥
नामदेव कहै तूं जीवन मोरा। तूं सायर मैं मच्छा तोरा॥ ३॥

पद १०

सन्त प्रवेणी भक्ति आपिला नहिं आपिला तो प्राण त्यागिला। टेर
हमचा थाती तुम्ह वस भइला अमचा जीवला किमचा लागिला॥ १॥
च्यार मुक्ति आष्टा सिधि आपूं भक्ति न आपूं दास नामह्या॥ २॥
नामदेव वीठुल सनमुख भक्ति आपिला मुक्ति त्यागिला॥ ३॥

इत्यलम्।

अथ श्रीरैदासजी महाराज के अनुभव

पद १

ऐसी भक्ति न होई रे भाई।
राम नाम विन जो कछु करिये सो सब भर्म कहाई। टेर

भक्ति न रसदान भक्ति न कथै ज्ञान
भक्ति न वनमें गुफा खुदाई ।
भक्ति न ऐसी हास भक्ति न आशा पास
भक्ति न यहु सब कुलकामिनि गाई ॥ १ ॥
भक्ति न इंद्री बांधे भक्ति न जोग साधे
भक्ति न अहार घटावे यह सब कर्म कहाई ।
भक्ति न निद्रा साधे भक्ति न वैराग्य बांधे
भक्ति नहीं यह सब वेद बडाई ॥ २ ॥
भक्ति न मूंड मुंडावे भक्ति न माला दिखावे
भक्ति न चरन धुवावे यह सब मुनिजन कहाई ।
भक्ति तोलौं न जानी जोलौं न आपको आप बखानी
जोइ जोई करै सोई सोई कर्म चढाई ॥ ३ ॥
आपो गयो तब भक्ति पाई ऐसी है भक्ति भाई
राम मिले आप गुण खोयो ऋद्धिसिद्धि सब जगवाई ।
कहै रैदास छूटी आशा तब हरि ताही के पासा
आत्मा स्थिर तब सब निधि पाई ॥ ४ ॥

पद २

परचै राम रमै जो कोई पारस परसे दुबुधि न होई । टेर
जो दीसे सो सकल विणास अण दीठे नाहीं विश्वास ।
बरण रहित कहै जो राम सो भक्ता केवल निष्काम ॥ १ ॥
फल कारण फूली वनराई उपज्यो फल तब पहुप विलाई ।
ज्ञानहि कारण कर्म कमाई उपज्यो ज्ञान तब कर्म नसाई ॥ २ ॥
बटक बीज जैसा आकार पसन्यो तीन लोक विस्तार ।
जहाँ का उपजा तहाँ समाई सहज शून्यमें रह्यो लुकाई ॥ ३ ॥
जो मन बंदे सोई वन्द अमावस में जैसे दीसे चंद ।
जल में जैसे तूंबा तिरै परचै पिंड जीवै नहिं मरै ॥ ४ ॥
सो मन कौन जो मनकूं खाई विन द्वारै त्रैलोक्य समाई ।
मनकी महिमा सब कोइ कहै पंडित सो जो अनुभव रहै ॥ ५ ॥
कह रैदास यह परम वैराग रामनाम किन जपहु सभाग ।
घृत कारण दधि मथै सयान जीवनमुक्त सदा निर्वान ॥ ६ ॥

पद ३

अवतो मैं हान्यो रे भाई ।
थकित भयो सब हाल चालतें लोकन वेद बडाई । टेर

थकित भयो नाचण अरु गावण थाकी सेवा पूजा।
काम क्रोध ते देह थकित भइ कहूं कहाँ लगि बूजा ॥ १ ॥
राम जन होउं न भक्त कहाऊं चरण पखालुँ न देवा।
जोइ जोइ करूं उलटि मोहि बाँधै ताते निकट न सेवा ॥ २ ॥
पहिले ज्ञानका किया चानणा पीछे दिया बुझाई।
शून्य सहज में दोऊं त्यागे राम कहूं न खुदाई ॥ ३ ॥
हरि वस है षटकर्म सकल अरू दूरब कीन्ही सेऊं।
ज्ञान ध्यान दोउं दूरब कीन्हे दूरब छाँडे तेऊं ॥ ४ ॥
पाँचूं थकित भए हैं जहाँ तहाँ जहाँ तहाँ थिति पाई।
जा कारन मैं दोन्यो फिरतो सो अब घट में पाई ॥ ५ ॥
पाँचूं मेरी सखी सहेली तिन निधि दई दिखाई।
अब मन फूल भयो जग महियां उलट आपमें समाई ॥ ६ ॥
चलत चलत मेरो निज मन थाक्यो अब मोपै चल्यो न जाई।
साँई सहज मिले सो सन्मुख कह रैदास बताई ॥ ७ ॥

पद ४

गाइ गाइ अब क्या कहि गाईं गावन हाराकों निकट बताई। टेर
जबलग है या तन की आशा तबलग करै पुकारा।
जब मन मिल्यो आश नहिं तनकी तब को गावण हारा ॥ १ ॥
जबलग नदी न समुद्र समावै तब लग बढै अहंकारा।
जब मन मिल्यो रामसागर से तब यहु मिटी पुकारा ॥ २ ॥
जबलग भक्ति मुक्ति की आशा परमतत्त्व सुण गावै।
जहाँ तहाँ आश धरत है यहु मन तहाँ तहाँ कछू न पावै ॥ ३ ॥
छांडै आश निराश परम पद तब सुख सत कर होई।
कहै रैदास जासे और कहत है परम तत्त्व अब सोई ॥ ४ ॥

पद ५

रामजन होउँ न भक्त कहाऊँ सेवा करौं न दासा।
गुनी जोग जिग कछू न जानौं तातें रहौं उदासा। टेर
भक्त हुआ तो चढै बडाई जोग करौं जग मानै।
गुणी हुआतें गुणि जन कहै गुणी आपकों तानै ॥ १ ॥
ना मैं ममता मोह न महिमा यह सब जाय विलाई।
दोज़ख़ बिहिश्त दोउ सम करि जानौं दुहुवातें तरक है भाई ॥ २ ॥
मैं तैं ममता देख सकल जुग मैं तैं मूल गमाई।
जब मन ममता एक एक मन जबहि एक है भाई ॥ ३ ॥

कृष्ण करीम राम हरि राघव जब लग एक एक नहिं पेखा।
वेद कतेब पुरान कुरानन सहज एक नहिं देखा ॥ ४ ॥
जोइ जोइ कर पूजिये सोई सोई काचा सहज भाव सतहोई।
कह रैदास मैं ताहि कूं पूजूं जाके गाम न ठाम नाम नहिं कोई ॥ ५ ॥

पद ६

भाई रे भरम भक्ति सो जान जोलौं नहिं साचसे पहिचान। टेर
भरम नाचण भरम गावण भरम जप तप दान।
भरम सेवा भरम पूजा भरम से पहिचान ॥ १ ॥
भरम षट कर्म सकल सहिता भरम ग्रह वन जान।
भरम करि करि कर्म कीये भरम की यह वान ॥ २ ॥
भरम इन्द्री निग्रह कीये भरम गुफामें वास।
भरम तोलौं जाणिये शून्य की करै आस ॥ ३ ॥
भरम शुद्ध शरीर तोलौं भरम नाम विनास।
भरम भणै रैदास तोलौं जोलौं चाहै ठाम ॥ ४ ॥

पद ७

भाई रे राम कहां है मोहि बतावो सत्य राम ताके निकट न आवो। टेर
राम कहत सब जगत भुलाना सो यह राम न होई।
कर्म अकर्म करुणामय केशव करता नाम स कोई ॥ १ ॥
जिहि रामहि सब जग जानै भ्रम भूलै रे भाई।
आप आपतैं कोई न जानै कहै कौन से जाई ॥ २ ॥
सत तन लोभ परस जिव तन मन गुन परसन नहिं जाई।
अखिल नाम जाके ठोर न कितहूं क्यों न कहो समुझाई ॥ ३ ॥
भणै रैदास उदास ताही तें करता कोहै भाई।
केवल करता एक सही कर सत्य राम तिहि ठाई ॥ ४ ॥

पद ८

ऐसो कछु अनुभव कहते न आवै साहिब मेरो मिलै तो को विगरावै। टेर
सब में हरि है हरि में सब है हरि आपनपो जिन जाना।
अपनी आपा साखी न दूसरि जाननहार समाना ॥ १ ॥
बाजीगर से रहन रहीजे बाजी का मर्म अब जाना।
बाजी जूठ सांच बाजीगर जाना मन पतियाना ॥ २ ॥
मन स्थिर होय तो कोई न सूझै जानै जानन हारा।
कह रैदास विमल विवेक सुख सहज सरूप संभारा ॥ ३ ॥

पद ९

नरहरि चंचल मति मोरी कैसे भक्ति करौं राम तोरी। टेर
तू मोहि देखै हौं तोहि देखूं प्रीति परस्पर होई।
तू मोहिं देखै न हौं तोहि देखूं यह बुधि सब मति खोई॥ १॥
सब घट अंतर रमसि निरंतर मैं देखत ही नहिं जाना।
गुन सब तोर मोर सब अवगुन कृत उपकार न माना॥ २॥
मैं तैं तोर मोर असमंजस कैसे करि निस्तारा।
कह रैदास कृष्ण करुणामय जय जय जगत अधारा॥ ३॥

पद १०

प्रभुजी तुम चंदन हम पानी जाकी वास अंग अंग समानी। टेर
प्रभुजी तुम दीपक हम बाती जाकी जोति जगै दिन राती॥ १॥
प्रभुजी तुम घन वन हम मोरा जैसे चितवत चंद चकोरा॥ २॥
प्रभुजी तुम मोती हम धागा जैसे सोन ही मिलत सुहागा॥ ३॥
प्रभुजी तुम स्वामी हम दासा ऐसी भक्ति करै रैदासा॥ ४॥

इत्यलम्।

वैष्णवधर्ममंत्र।

कवित्त।

धूणी गिरनार मंत्र तारक धाम रामनाथ
विलास[1] चित्रकूट इष्ट सीता जान है।
ऋषि वशिष्ठ वेद ऋग देव हनुमान तीर्थ
क्षेत्र है धनुष बीज अग्नि वखान है॥
रमाचारज शाखा है अनंत मुक्ति सामीप्यकं
अच्युत गोत्र वर्ण शुक्ल सुख खान है।
राघव उपासी धर्मशाला अयोध्या है पर-
दक्षिणा गोदावरी अखाड़ा निर्बान है॥ १॥

यज्ञोपवीतधारणमंत्र।

ॐ यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं प्रजापतेर्यत् सहजं पुरस्तात्।
आयुष्यमग्र्यं प्रतिमुञ्च शुभ्रं यज्ञोपवीतं बलमस्तु तेजः॥ १॥

---

1 सुखविलास।

कंठी माला धारणमंत्र ।

तुलसीकाष्ठसंभूते माले विष्णुजनप्रिये ।
त्वां धारयाम्यहं कण्ठे कुरु मां रामवल्लभम् ॥ १ ॥

यज्ञोपवीतवद्धार्या सदा तुलसिमालिका ।
क्षणमात्रपरित्यागाद् विष्णुद्रोही भवेन्नरः ॥ २ ॥

चरणामृतमंत्र ।

अकालमृत्युहरणं सर्वव्याधिविनाशनम् ।
विष्णुपादोदकं पीत्वा शिरसा धारयाम्यहम् ॥ १ ॥
एकादशीव्रतं गीता गंगाम्बु तुलसीदलम् ।
विष्णोः पादाम्बु नामानि मरणे मुक्तिदानि च ॥ २ ॥

तीर्थं प्रसादस्वीकारानन्तरं वैष्णवो द्विजः ।
न हस्तक्षालनं कुर्यात् न तत्राचमनक्रिया ॥ ३ ॥

तुंबिकाकमण्डलुशुद्धिमंत्र ।

ॐ जलं दहति पापानि कमण्डलुगतं तु यत् ।
गंगातोयसमं नित्यं जलपात्रं च शुद्ध्यति ॥ १ ॥

कठारीशुद्धिमंत्र ।

ॐ जले चाग्निः स्थले चाग्निरग्निश्च वायुमण्डले ।
त्रिभिरग्निप्रकाशैश्च काष्ठपात्रं च शुद्ध्यति ॥ १ ॥

कई महात्माओं के आविर्भाव और तिरोभावका समय वि. सं. ।

नाम	ग्राम	प्रादुर्भाव	दीक्षा	मोक्ष
श्रीशंकर स्वामी	कालपी (दक्षिण)	८४४		८७६
श्रीरामानुज स्वामी	कांचीपुरी	१०७४		११९४
श्रीरामानंद स्वामी	काशी	१३५६		१५०५
श्रीकबीर साहब	काशी	१४५५		१५७५
श्रीहरीदासजी म.	डीडवाँणा	१४७५		१७००
श्रीजांभाजी	पीपासर (बीकानेर)	१५०८		१५९३
श्रीगुरुनानक साहब	पंजाब	१५२६		१५९५
श्रीजसूनाथजी	कतरियासर (बीकानेर)	१५३९		१५६३
श्रीसूरदासजी	वृंदावन	१५४०		१६२०
श्रीगोस्वामी तुलसीदासजी	काशी	१५८९		१६८०
श्रीस्वामीजी दादूदयालजी म.	नराणा	१६०१	१६१२	१६६०
श्रीसुन्दरदासजी म.	कोषाणा	१६५३		१७४६
श्रीसन्त दासजी म.	दांतड़ा	१६८६	१७४२	१८०६
श्रीचरणदासजी म.	डहरा (अलवर)	१७६०		१८३९
श्रीजैमलदासजी[1] म.	दुलचासर (बीकानेर)		१७६०	१८१०
श्रीदरियासाजी म.	रैण	१७३३	१७६९	१८१५
श्रीहरिरामदासजी म.	सिंहथल		१८००	१८३५
श्रीनारायणदासजी म.	सिंहथल		१८०६	१८५३
श्रीरामचरणजी म.	साहपुरा	१७७६	१८०८	१८५५
श्रीरामदासजी म.	खेड़ापा	१७८३	१८०९	१८५५
श्रीदयालदासजी म.	खेड़ापा	१८१६		१८८५
श्रीपरशरामजी[2] म.	जोध. सूरसागर	१८२४		१८९६

१ श्रीरामस्नेहसद्धर्मोपदेष्टा मूलाचार्य । २ विरक्तशाखाप्रवर्तक श्रीपरशरामजी म. सं. १८६० में जोध. सूरसागर विराजे । आपकी अनुभववाणी १५००० श्लोक संख्याकी है ।

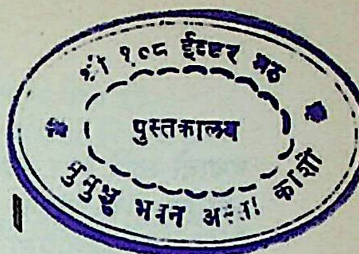
॥ श्रीः ॥

संग्रह–सार ।

अथ निर्गुण-भजनमाला ।



वधावा ।



॥ श्रीः ॥

संग्रह—सार ।

अथ निर्गुण-भजनमाला ।

वधावा.

१

म्हांरा हरिजन आइजो म्हांरे आंगणिये थानें ले मोतीड़ा बधाऊं । टेर।
सुरे गायरो गोबर मंगाऊं घर आंगणियो लिपाऊं ।
कंचनकलस बधाय गुरांने मोतियां चोक पुराऊं ॥ १ ॥
कदली बनरो हस्ती मँगाउं अंबाड़ी झुकाऊं ।
घेहरा गदरा गुरुजी बिराजै ऊपर चँवर ढुलाऊं ॥ २ ॥
जल जमुनारो नीर मँगाऊं तातो तुरत कराऊं ।
चोवा चंदन और अरगजा अपणे हाथ न्हवाऊं ॥ ३ ॥
नख छोल्या सा चावल मँगाउं काचे दूध धुआऊं ।
खीर खांड घृत अमृत भोजन अपणे हाथ जिमाऊं ॥ ४ ॥
कंठी माला कड़ा किलंगी सतगुरु अरपण लाऊं ।
दिखण दिशारी मंगाय फाँबरिया अपणे हाथ ओढाऊं ॥ ५ ॥
कहै कबीर सुणो भाई साधू आनंद मंगल गाऊं ।
भवसागर गुरु दयाल खेवटिया भवजल बहुरि न आऊं ॥ ६ ॥

२

चालो ए सइयाँ आपे गुरां ने बधावण जासां ए । टेर ।
सतगुरु स्वामी म्हारा अंतर जामी चरणाँ में शीस निवासां ए ॥ १ ॥
कुंकुम केसर री गार घलासां मोतिड़ां रो चोक पुरासां ए ॥ २ ॥
सोनेरी झारी रूपेरी थारी कंचन कलस बधासां ए ॥ ३ ॥
घर घर री सब सखियां तेड़ासां हिल मिल मंगल गासां ए ॥ ४ ॥
मीरां कहै प्रभू गिरधर नागर हरिचरणा में चित लासां ए ॥ ५ ॥

३

चालो रे मनां सतगुरुजीरै चरणां । टेर ।
वा चरणाँ सूं आवागवन मिटत है पीछे क्या करणा ॥ १ ॥
देह धर्‌यां की याही है परम गति साधु संगति करणा ॥ २ ॥
चितरा चंवर करूं गुरां ऊपर मनमें ले उर धरणा ॥ ३ ॥
मीरां कहै प्रभू हरि अविनाशी छांड सकल भरमना ॥ ४ ॥

४

बधावो म्हांरे नित नवलो म्हांरै सतगुरांजी रो परताप। टेर।
सतगुरु आया पाहुना मैं काँई करूं मनुहार।
हितरा करूं विछावना तन मन ऊपर वार॥ १॥
केसर चंदन गार घलाऊं घर आंगणो निपवाय।
कंचन कलस वधावस्यां हिलमिल मंगल गाय॥ २॥
आंगण वाही एलची हुयगई अम्बर बेल।
आज गुरुजी म्हांरे पाहुना हिवड़ा में कूंपल मेल॥ ३॥
सदगुरु चंदन बावना सिख सतगुरुके दास।
सतगुरु हाट हीरा तणी म्हांरै हिरदै भयो प्रकास॥ ४॥
कहै कबीर धर्मदासनें अमृत पियो अघाय।
यो मन सदा रलियावणो म्हारै कुण आवै कुण जाय॥ ५॥

५

म्हांरे मन आज उमावो हो, रामसनेही आविया निज भाव बधावो हो॥ टेर॥
जन्म आज लेखै भयो धिन उदित अंकुरा हो,
परम भाग्य परगट भयो मिल पंकज सूरा हो॥ १॥
पाँच सखी मेली भई मिल मंगल गाया हो,
उर सरोजके चौक में सुख रास मंडाया हो॥ २॥
रंग राग वाजा अनँत घर वटत बधाई हो,
मन गुलाल अबीर चित प्रेमा सरसाई हो॥ ३॥
क्रोड़ क्रोड़ आनँद भयो क्रोड़ाँ क्रोड़ बधाई हो,
ज्ञान भक्ति वैराग मिल मेरे घर आई हो॥ ४॥
भावसदन ओप्यो अजब गुरुदेव विराजे हो,
सर्व मनोरथ पूरवै हरिराम निवाजे हो॥ ५॥
रामदास धिन धिन घड़ी धिन मोसर एही हो,
धाल बाल मिलज्यो सदा म्हांने राम सनेही हो॥ ६॥

६

या दिनको मैं बलि जाऊँ हो, मिले पियारे रामजन सन्मुख शिर नाऊँ हो॥ टेर॥
करूं दंडोत परिक्रमा वन्दन वारंवारा हो,
आज पधारे सतगुरु धिन भाग हमारा हो॥ १॥
चोरासी फेरा टल्या जम दंड मिटाया हो,
भर्म जाल भव भाजग्या आतम सुख पाया हो॥ २॥

विधि वैकुंठ सदन फबै अठसठ तीरथ गंगा हो,
रामदास पदकंज परस उर भक्ति अभंगा हो ॥ ३ ॥

७

लोकां थानैं लाख वधाई हो म्हारा सतगुरु आया आज
लोकां थानैं लाख वधाई हो ॥ टेर ॥
भलीभई म्हांरे आंगण आया, जाण पुराणो नेह ।
आनंद भयो मन भावनो म्हांरे दूधां बूठो मेह ॥ १ ॥
भावतड़ा सतगुरु भेट्या मेट्या आल जंजाल ।
प्रभुजी दीनी प्रीत सूं म्हांने भक्ति श्रीगोपाल ॥ २ ॥
कर प्रणाम परिक्रमा देसां दुख दालद भव दूर ।
ऊगो सहेली आज नो म्हारे सोना हंदो सूर ॥ ३ ॥
हस्तराम प्रभु हरिमुख निरखै नैणा नैण निहार ।
बलिहारी गुरुदेवजी री मैं रही छूं लूण अवार ॥ ४ ॥

८

सइयां ज्ञानी गुरुजी वधासां हे, ऐसो मोसर
चूक के फेरूं कब पासां हे ॥ टेर ॥
चित कर चंदन अगर कस्तूरी कुंकुम लेसां हे ।
करणी री केसर घोल के वाके मस्तक देसां हे ॥ १ ॥
प्रेम फुलेल ले सनमुख जासां अमी रस पीधा हे ।
गुण की गुलाल उड़ाय गुरां पर सांच को सूधा हे ॥ २ ॥
धीरज थाल धरूं ले आगे करूं मन मोती हे ।
इस विध आरती संजोय गुरां की झिगमिग जोती हे ॥ ३ ॥
पाट पितांबर पांवड़ा बिछावां सिरे पधरासां हे ।
दिल की दुरमति दूरकर विनती गुदरासां हे ॥ ४ ॥
भोजन भाव जिमाय गुरां नें ले मन्दिर माहीं हे ।
तीन लोक संपति सब वारूं तोहि ऊरण नाहीं हे ॥ ५ ॥
सतगुरु शरणै अभयपद पाया अमीरस पीसां हे ।
काल करम सबै मिट जासी जुगे जुग जीसां हे ॥ ६ ॥
ज्ञान गवाड़ विच सतगुरु भेट्या मेट्या मन खतरा हे ।
सुरतराम कहाँलों जस गावै जाणूँ किया जितरा हे ॥ ७ ॥

९

सइयां सतगुरुजी रे जासां हे, सोई आज्ञा गुरुदेवकी
म्हे तो शीश चढ़ासां हे ॥ टेर ॥

कंठ कमल में फूली गुल क्यारी अमीरस पीया हे ।
गुपता सा नैन गुरां म्हारा खोल्या ज्यों मन्दिर दीया हे ॥ १ ॥
पूरणचंद चौक बिच ऊगो हिरदै उजियाला हे ।
झिलमिल नूर गुरांजीरा बरस्या ज्यूं दीपक माला हे ॥ २ ॥
भँवर गुंजार नाभ घर माहीं मंगल गासां हे ।
प्रेमरा कलस गुरां नें बधासां बधाई बटासां हे ॥ ३ ॥
घमकै छै घूघर बाजें छै मुरली रास रच्यो छै हे ।
तूं चढ बैठी गगनरा गोखां में श्रवना सुन्यो छै हे ॥ ४ ॥
धिन शरणो सुखराम कहै नित फिरूं छूं फूली हे ।
सुखरा सागर गुरु दरियासा दुखड़ो सब भूली हे ॥ ५ ॥

१०

आवो ए गावो सइयां अणद बधावो म्हारे पाहुणा परम गुरु आज । टेर ।
सोनेरो सूरज सइयां इण पुल ऊगो म्हारे घर बैठा गंगा आई आज ॥१॥
कथा कीर्तन सइयां हरि गुण गासाँ म्हारे आंगणिये छै संतारो समाज ॥२॥
लख चौरासी सइयां दुखड़ैरी पासी कोई हुवा छै बहुत अकाज ॥ ३ ॥
इण भवसागरसे म्हारा सदगुरु तारे कोई आपणे बिरद की लाज ॥४॥
सुखदेव सागर में म्हारो मनड़ो झूले म्हारे सन्त सदाई सिरताज ॥५॥

११

घर आज हमारे आया परम गुरु पाहुणा ॥ टेर ॥
कंचन कलश शीश धर कर में भर मोतियन को थाल ।
जय जय शब्द होत चहुँ दिशि तैं दर्शन दिया दयाल ॥ १ ॥
केसर चन्दन तिलक चढ़ाऊं पुष्प माल पधराय ।
प्रेम प्रीति सूं करूं आरती सखियाँ मंगल गाय ॥ २ ॥
वीण मृदंग शंख सहनाई बाजा बजत अपार ।
जरी पाट पर परत पांवडा आये भवन मंझार ॥ ३ ॥
कर दंडोत शीश धर चरणां तन मन अर्पण कीन ।
जन भावन सतगुरु पद परसत लाभ जनम को लीन ॥ ४ ॥

१२

सूरज सोनारो ऊगो सखीरी धिन आजनो ॥ टेर ॥
पावन भवन करण पग धारे सतगुरु सबही संत ।
कथा कीरतन हरि गुण गावै आनंद उदै अनंत ॥ १ ॥
दरशन करत सबै नर नारी साचो राम सनेह ।
प्रेम भाव चित चाव परस्पर दूधाँ वूठा मेह ॥ २ ॥

शीत प्रसाद लेत चरणामृत उरमें अधिक उमंग।
पावन पतित होत पल माहीं कर संतन को संग ॥ ३ ॥
संत समाज आज भल पायो दूर भया दुख द्वंद।
जन भावन सतगुरु दर्शन तें पायो परमानन्द ॥ ४ ॥

१३

राजभोग।

राग गूढ़ विलावल।

सतपुरुषांरै भोग लागै शब्द अनाहद घंटा बागै ॥ टेर ॥
प्रेम प्रीतिसे करी है रसोई अमृत भोजन पारस होई ॥ १ ॥
कंचन झारी सुकृत थाल जीमन बैठे श्रीराम दयाल ॥ २ ॥
पाय प्रसाद अँचवन कीनो महाप्रसाद दास कूं दीनो ॥ ३ ॥
दास एक कणका भर लीनो तारैं काल भयो आधीनो ॥ ४ ॥
कहै कबीर हम भये हैं सनाथ जब सतगुरु मस्तक धरिया हाथ ॥५॥

१४

सतगुरु भोजन जीमो प्यारे, अपने जनपर कृपा कीजे जाउं सदा बलिहारे ॥ टेर ॥

पारब्रह्म परमेश्वर स्वामी आवो कृपा धारे।
श्री गुरुदेव दयानिधि आनंद संतनके हितकारे ॥ १ ॥
भाव भक्ति ले करूं रसोई श्रद्धा साग सवारे।
सुरत शब्द का चौका लाऊं चरण कमल बलिहारे ॥ २ ॥
करमाँबाई खीच पवायो उठ परभात सवारे।
शुचि संजम किरिया नहिं देखी प्रेम भक्ति के प्यारे ॥ ३ ॥
झूँठे करकर वन सूं लाये जाति अपावन नारे।
शवरी के फल रुचिकर पाये मीठे गिणे न खारे ॥ ४ ॥
दुर्योधनका मेवा त्यागे व्यञ्जन न्यारे न्यारे।
साग विदुर घर रुचिकर पाये पर्णकुटी पग धारे ॥ ५ ॥
भिलनी के बोर सुदामा के तन्दुल लीने बदन पसारे।
नामा का दूध धनाकी रोटी जुग जुग जन विस्तारे ॥ ६ ॥
मैं अजान कछु सेव न जानूं सेवा अगम अपारे।
सनक सनन्दन अर्जुन नारद ब्रह्मादि पचहारे ॥ ७ ॥
दीन हीन मतिहीन महा जड शरण पड्यो दरबारे।
रामदास की श्रद्धा राखो लीजे भोग मुरारे ॥ ८ ॥

वसंत.

पद १

नर क्यों सुमिरै नहिं राम नाम, तेरी निकमी रसना कौन काम । टेर.
झगरा झगरी करत झूठ । पखा पखी परनिंदा पूठ ।
सीखत भाखत सुनत ज्ञान । आतम को नहिं धरत ध्यान ॥ १ ॥
सकल वरण में एक अंश । ऊंच नीच कुण होय वंश ।
जा मुख हरि की नाहिं वान । सोई जनम कुल हीन जान ॥ २ ॥
जो सिनखातन पाय जीव । प्राण थके मुख उचर पीव ।
निशि दिन ऊमर घटत जाय । जुरा पसारो करत आय ॥ ३ ॥
काल कसी सा कर कबाण । मारै आजक कल विहाण ।
गाफल कांई सूतो नचीत । जाग अभैपद करलै मीत ॥ ४ ॥
काटत भरम करम का फास । मेटत जनम मरण की त्रास ।
हरिरामा भज परम तन्त । शिव सनकादिक कहत सन्त ॥ ५ ॥

पद २

अब राख शरणें राम मोहि । बहुवेर भरम्यो विना तोहि । टेर.
का बहु लालच करत लोभ । का अपनी कर भरत सोभ ।
का मन वंधे आल जाल । जब जीव पकड़ ले जाय काल ॥ १ ॥
का विषिया मन काम क्रोध । का करि मूवो वाद व्रोध ।
का मन वंधे आन पास । विना भक्ति भयो फूस फास ॥ २ ॥
मैं कब नाना करत नेह । का मन त्यागी वचन देह ।
का मन माया वीच गाड । मैं केतिवेर गयो छाड छाड ॥ ३ ॥
मैं कब आसन बैस पूर । का तन तीरथ फिरत दूर ।
का मन आशा अनंत पास । का मन हुय बैठे निरास ॥ ४ ॥
का मैं आलस करत ऊंघ । का फिर सूंघा करत सूंघ ।
का मन मूरख विकल जास । का हुइ बैठे वेदव्यास ॥ ५ ॥
का लघु का दीर्घ ता जान । का मुझ मान बडाई ठान ।
का साझे अष्टांग जोग । का नाना विधि करत भोग ॥ ६ ॥
कब मुंडित कब रखत केस । कब कुल काया पलट भेस ।
कब करते सन्यास करम । कब कुल मारग लोक सरम ॥ ७ ॥
मैं कब शूकर सिंघ स्याल । मैं कब राव रंक भूपाल ।
मैं कब आया हुइ अचेत । मन सिरगे ज्यूं चरत खेत ॥ ८ ॥
लख चौरासी धार जौन । कब बोलत कब गहत मौन ।
जन्म जन्म दुख बहुत पाय । जब राम नाम सूं विमुख थाय ॥ ९ ॥

का सीखत का सुनत ज्ञान। का चौके चतुराई ठान।
का तप तीरथ व्रत्त नेम। जब पारब्रह्म सूं नाहिं प्रेम ॥ १० ॥
जन हरिरामा सकल जान। राम नाम की परी पिछान।
तन मन सोंप्या गुरुके पास। दिया अभैपद मिटगी त्रास ॥ ११ ॥

पद ३

मन राम सुमर निशि दीह तोय। जनम मरण दुख मिटै दोय। टेर.
राम नाम निज परम तंत। सुमर सदा होय पार संत।
गिरा अगम अब भव जगाय। सोइ शब्द सुने सुरती लगाय ॥ १ ॥
ज्ञान सुनो मन कर विचार। उभै अंक रसना उचार।
सुमरै मन तन सहत संत। आदि अंत उधरे अनंत ॥ २ ॥
सुनो नाम परताप सोय। भज्यां सहत भव पार होय।
लिखे सिला सिर अंक सार। पान तरू जिम तरे वार ॥ ३ ॥
सोई नाम तुम ध्याय जीव। मिलै सहज इन सहत पीव।
भालि मनु हरदेव आख। राम अंक ए रसन भाख ॥ ४ ॥

पद ४

ऐसी कृपा तुम करो देव। रमूं फाग सोइ ब्रह्म सेव। टेर.
विना तोहि हम चिंत व्याप। महर करे हरि मिलो आप।
दरस देवो मुझ पूर्व भाग। जिम निज खेलूं वसंत फाग ॥ १ ॥
अवर फाग नह करू मेल। सोई काल घर तणो खेल।
सोई फाग तेरे शरण नेह। मुझै रमावो रंग एह ॥ २ ॥
विना तोहि मो पति अभंग। किना रमूं ऋतु वसंत रंग।
अरज करै हरदेव तोहि। अंतर मेलो देवो मोहि ॥ ३ ॥

पद ५

रमत पियारी पीव संग। तन मन अरपै सबै अंग। टेर.
फाग रमण को चल मुरार। सब सखियन मिल मांग स्वार।
प्रेम प्रीत की झार गुलाल। शून्य महल में मँड्यो ख्याल ॥ १ ॥
पांच पचीसूं एक ठाँय। सुरत शब्द के मिली माँय।
रमत पियारी पीउ पास। रोम रोम में मंड्यो रास ॥ २ ॥
अलख निरंजन अमर देव। जहाँ सुरत निरत मिल करत सेव।
रमत पिया संग आदि अंत। अनत कोट जहाँ मिले संत ॥ ३ ॥
सतगुरु मोहि मिलाय पीव। उलट जीव जहाँ होत सीव।
कहत रामप्रियो अगम अपार। सुर नर नागा लह न पार ॥ ४ ॥

पद ६

रमै संत जहाँ वसंत फाग। मिले पीव जन वडे भाग। टेर.
प्रथम मुक्ख पीउ शोर गाय। रमत रमत हिरदा में जाय।
जहाँ मुरली की टेर सुणाय। बंधी प्रीति अब प्रेम अघाय ॥ १ ॥
नाभि कमल में नाद घोर। यक डंके पर लागत टोर।
रोम रोम में सुख अपार। पीव पधारे नाभि मंझार ॥ २ ॥
वंकनाल पिचकार कीन। पांच पचीसों संग लीन।
अधः ऊर्ध्व विच मंड्यो ख्याल। पिवजु पधारे महल चाल ॥ ३ ॥
अनहद वाजा घुरै अपार। जहाँ अलख निरंजन अमर मुरार।
मिले संत ता माहिं जाय। अनत कोट रहे फाग रमाय ॥ ४ ॥
रमत नारद सनकादि शेष। ब्रह्मा विष्णु रु आदि महेश।
सुखदेव अरु ध्रुव प्रह्लाद। सुखसागर जहाँ सुख समाद ॥ ५ ॥
जनक विदेह मिले तहाँ आय। वालमीक पांडुता माय।
गोरख भरथरी गोपीचंद। सुखसागर मिलकर आनंद ॥ ६ ॥
नामदेव अरु रामानंद। नामा कवीर तिलोकचंद।
पींपा धना सजन रैदास। रंका वंका सैना ख्वास ॥ ७ ॥
नानग दादू हरीदास। केवल कूवा संतदास।
जनदरिया अरु महर रंग। किसनदास सुखराम संग ॥ ८ ॥
अनत कोटि रहे फाग रमाय। जन हरिराम मिले तहां आय।
रामदास जहां चरण निवास। गुरुगोविंद मिल पूरी आस ॥ ९ ॥

पद ७

देखो देखो संतो नर की भूल। सींचत शाखा तजत मूल। टेर.
राम निरंजन देह समान। ताहि छोड़ पूजै पखान।
जल पीवै पाषाण धोय। सो तो आदि अंत पाषाण होय ॥ १ ॥
आकाश शीस पाताल पाय। सो संपुट में कैसे समाय।
राम निरंज आवै न जाय। सो दियो तुमारो कैसे खाय ॥ २ ॥
वार वार मैं कहुं पुकार। सो शब्द न माने करत रार।
कहै कवीर कोइ लहै न खोज। भटक मरे जैसे वनके रोझ ॥ ३ ॥

पद ८

कहां जाइये घर लागो रंग। मेरो चित न चलै मन भयो पंग। टेर.
इक दिन मनमें भयो उमंग। घस चोवा चंदन चरच अंग।
पूजन लागे ठाँय ठाँय। गुरु ब्रह्म वतायो आप माँय ॥ १ ॥

अंजन मंजन तज विकार । अठसठ तीरथ सब नामलार ।
रे मन मूरख कहाँ जाय । तेरे घट ही में तीरथ क्यों न न्हाय ॥ २ ॥
जहाँ जाइये जहाँ जल पाषान । पूर रहे प्रभु सब समान ।
वेद स्मृति सब लिया जोय । वहाँ जाइये हरि यहाँ न होय ॥ ३ ॥
सतगुरु मैं बलिहारी तोय । मेरा सकल विकल भ्रम दिया खोय ।
रामानन्द स्वामी रमत ब्रह्म । गुरु एक शब्द काटे कोटिकर्म ॥ ४ ॥
आडा पर्वत विषम घाट । सुर नर मुनि कोई लहेन वाट ।
कहै कबीर मन भया अनंद । जब हरष मिले गुरु रामानंद ॥ ५ ॥

पद ९

तज तज रे भँवरा कमल पास । तेरी भँवरी रोवे अति उदास । टेर.
तैने बहु पुष्पन को लियो है भोग। तेरे सुख न भयो तन वढ्यो है रोग ।
मैं जो कहूं तोहि वार वार । मैं सब वन ढूंढ्या हार हार ॥ १ ॥
दिवस चार को सुरंग फूल । ताहि देख क्या रह्यो भूल ।
जब वनस्पती में लगेगी आग । तब तुम भँवरा कहाँ जावोगे भाग ॥ २ ॥
पुष्प पुराणो भयो है सूख । तब भँवरे को लगिहै भूख ।
उड़ि न सके पर गये हैं तूट । तब भँवरी रोवै शिर कूट ॥ ३ ॥
दोऊ दिशि जोवे मधुप राय । तब भँवरी चाली शीस चढाय ।
कहै कबीर मनका सभाव । राम भज्याँ विन जमको दाव ॥ ४ ॥

होरी अलियो विलावल ।

पद १०

दुलहा विन फाग दुहेली ।
नैन सूं नैन वैन सूं वैना प्यारे पास गहेली । टेर.
सुरत संदेशा देत रैन सुनहो श्याम सुजाना ।
तज कुल काज लाज लोकन की मिलबो मुझ महमाना ॥ १ ॥
नाकोई देह न गेह संजोगा भई अगम गति न्यारी ।
दिल दशवें घर दिया महोला अलख पुरुष सूं यारी ॥ २ ॥
विन करताल डंक विन तूरा पग विन पातर नाचै ।
अखंड मंडल में रास रच्यो है जहाँ मेरा मन राचै ॥ ३ ॥
सदा सुमंगल हरण सकल भ्रम ब्रह्मानंद विराजै ।
जन हरिराम सुरत किया वासा अधर महलके छाजै ॥ ४ ॥

पद ११

अवसर आयो यार असीनो ।
आज सुदिन भयो भाग पूरवले पायो परम रसीनो । टेर.
रह सूं राम सदा रंग राती आन भरमना भागी ।
अंतर तार कबहु नहिं तूटै लिव चेतन सूं लागी ॥ १ ॥
अहनिशि ध्यान धरूं आतमको एके तन मन होई ।
ना कुल मात पिता नहिं जायो श्याम हमारे सोई ॥ २ ॥
पांच पचीस मिल्या निज मनसूं भया अचंभा भारी ।
उलटा नाद बिन्दु वरषाना गगन भरै पनिहारी ॥ ३ ॥
इला पिंगला पास सहेली सुखमण सूं घरवासा ।
राम निरंजन रमैं अकेला शून्य महल में वासा ॥ ४ ॥
निरभै राज भयो पतनीको अजर अमर वर कीना ।
जन हरिराम मिले महरम सूं अरस परस लिव लीना ॥ ५ ॥

पद १२

मैं तो राम पिया संग खेलूंगा होरी ।
साधु संगत मिल फागण आयो ज्ञान गुलाल उडोरी । टेर.
पांच सखी मिल खेलन निकसी आज वसंत उदोरी ।
प्रेम नीर पिचकारी दिलसूं छूटत असिट सजोरी ॥ १ ॥
सूंधो प्रीति चित्तको चंदन केसर महिमा घोरी ।
तन वृंदावन गोप ग्वाल मिल दशमों द्वार खुल्योरी ॥ २ ॥
रास विलास अखूट सदाई वाजत है घन घोरी ।
पिव पत्नी मिल तत रंग भीनी सो शिव जानत गोरी ॥ ३ ॥
इला पिंगला सुषमण ना उन पायो वर घर जोरी ।
द्यालबाल सतगुरु कृपातें धुन विच ध्यान सझोरी ॥ ४ ॥

पद १३

ऐसे साधुसंगति मिल खेलोरी होरी ।
साधुसंगति अज शंकर चाहै सुर नर नाग सकोरी । टेर.
चोरासी फिर नर तनु पायो पूरव पुण्य मिलोरी ।
छूट गयां पीछे पछितासो क्यू न सफल करलोरी ॥ १ ॥
पर हित संत पुकार कहत हैं यो जग जाल तजोरी ।
कोटि निनाणू राजा रसिया सो सुन साख भरोरी ॥ २ ॥
गुरु गम फाग खेल हुय सनमुख ज्ञान गुलाल गहोरी ।
प्रेम सजल पिचकारी छूटत नख शिख भीज रहोरी ॥ ३ ॥

चित चंदन गुरु गाल अरगजो चोवा गुन चुनोरी ।
सूंघो सुरत लगाय रैन दिन अनहद नाद सुनोरी ॥ ४ ॥
भक्ति परा जिव पाय परम पद निश्चल होय रहोरी ।
जनम मरण फेरा मिट जावै नव तत देह दहोरी ॥ ५ ॥
अनँतकोटि रम पार पहूंता गुरु गोविंदसे जोरी ।
सेवगराम सतगुरु संग खेलै औ सरसाज सझोरी ॥ ६ ॥

पद १४

राम रसीले से रंग रच्यो म्हारै आज वसंत को खेल । टेर.
प्रेम नीर पिचकारी दिलसे छूटत चहुं उर झेल ॥ १ ॥
अधः ऊर्ध्व विच खेल मँड्यो है सुरत शब्द को मेल ॥ २ ॥
धुनविच ध्यान ज्ञान जहाँ अनुभव जनम मरण दुख पेल ॥ ३ ॥
ग्रालवाल रस राम रमैयो रामदास गुरु खेल ॥ ४ ॥

पद १५

नितही वसंत नित फाग मंगल होरी खेलो । टेर.
दया धर्म की केसर घोरी प्रेम प्रीति पिचकार ।
भाव भक्ति से भर सतगुरु संग जनम सफल नर नार ॥ १ ॥
क्षमा अवीर चित चंदन सुमरण ध्यान धमार ।
ज्ञान गुलाल अगर कस्तूरी उमग उमग रंग डार ॥ २ ॥
चरणोदक अरु महाप्रसाद अपणे शीस चढाय ।
लोक लाज कुल काँण छाँडिदे निरभै निसाण वजाय ॥ ३ ॥
कथा कीर्तन मंगल महोत्सव कर संतन से सीर ।
कबहु न काज विगरै नर तेरो सत सत कहत कबीर ॥ ४ ॥

पद १६

खेलन बहुरि न आवूं ऐसा खेलूंगा मैं खेल । टेर.
सुलट खेल बहु जनम वदीता अवके उलटा खेल ॥ १ ॥
रसना कंठ हृदय हुय हिल मिल नाभि कमल रंग रेल ॥ २ ॥
पैठ पयाल आकाश उलट चढि वंक नीझरझर झेल ॥ ३ ॥
त्रकुटी घाट न्हाय हुय निर्मल जन्म मरण दुख पेल ॥ ४ ॥
फागुन साधु संगति गुरु समरथ सेवगराम मिल्यो मेल ॥ ५ ॥

पद १७

श्याम से खेल सखी री नित आनंद मंगल होरी । टेर.
सुषमण होरी खेलण निकसी ज्ञान कुमकुमा घोरी ।

सुरतारी कर पिचकारी रंगभर हरि के सनमुख डारी।
पाप अब सब ही भग्यो री ॥ १ ॥
किरपा कर मोय फगावा वगस्या रंग भर लीनी झोरी।
हरि के सन्मुख हुय कर खेलूं सुंदर भाग फल्योरी।
सबै मिल खेलोरी होरी ॥ २ ॥
बहुत जनम की भई दुहागण अबके सुहाग मिल्योरी।
कहत कबीर अमर सुख विलसे सब दुख दूर भयोरी।
सबै मिल हरि कूं रटोरी ॥ ३ ॥

पद १८

होरी खेलो या संत नगर में मत जावो जी दूरा डरमें। टेर.
काल कटक फिरे चहुँ फेरा आस पास सब लूटे।
इन भय भाग लाग सतगुरु संग हरि जन पुर मध छूटे ॥ १ ॥
दानव दैत्य रहत नहिं साँवत सुरनर नागा सोई।
जे जे इन पुर बाहिर रहग्या वंच सक्या नहिं कोई ॥ २ ॥
संत नगर निरभय भय नाहीं कै सतगुरु की लारा।
सेवगराम दूरा मत जावो सबही काल पसारा ॥ ३ ॥

पद १९

रसना भई वैरन मोरी करै मनसूं मिल चोरी। टेर.
हरि सूं वियोग कियो अलबेली विषरस मीठो लगोरी।
हरि विन रैन बजर सी लागत तलफत भोर भयोरी।
उठी तन विरह की होरी ॥ १ ॥
इक रसना दूजी मनसा नारी दोय मिल द्वंद रच्योरी।
निशि दिन फिरै विषय रसमाती नगर उजार कर्योरी।
मानी नहिं बहुत कह्योरी ॥ २ ॥
कहेरी सुरता सुणरी सुमता यो तन जात भग्योरी।
या तन की अब होय फजीती शिर पर जम गरज्योरी।
चोरासी में भटक रह्योरी ॥ ३ ॥
एक पुरुष ताके पांच सुंदरी यो घर जानो गयोरी।
मनसा नारी फिरै डहैकाणी खट रस चाख लियोरी।
परस्पर शोर मच्योरी ॥ ४ ॥
लड़ने कूं आ सूरी पूरी झूठी साख भरोरी।
नेह लग्यो है हरामी छैल सूं प्रीति पाछली तोरी।
ऐसी मतवारी गोरी ॥ ५ ॥

अजहूं चेत कछुहु ना विगर्‍यो रसना राम कह्योरी।
सुषमणदास शरण सतगुरु की हरि सुमर्‍यो सो तिर्‍योरी।
मैं तो तेरे शरण पर्‍योरी ॥ ६ ॥

पद २०

करुणानिधि अरज हमारी राम सुनलीज्यो मुरारी। टेर.
जन्म मरण को पार न पायो ये दुख वहुत बुरारी।
हाथ जोड़ विनती करूं माधव संकट मेटो भारी।
राम शरणागत थारी ॥ १ ॥
ध्रुव प्रहलाद विभीषण तार्‍यो तारी गौतमनारी।
अजामीलसे अधम उधारे गनिका सी तुम तारी।
नाथ कहा ढील हमारी ॥ २ ॥
धनाभक्त बाजींद कबीरा नामदेव लियो उवारी।
अनत कोटि प्रभु तार दिया है कहा तकसीर हमारी।
राम भूलो मत म्हारी ॥ ३ ॥
रोम रोम गुन्हगार भर्‍यो हूं खूनी वहुत विकारी।
हमसे अधम पार कर करता छीतमदास विचारी।
राम रज छूं मैं तिहारी ॥ ४ ॥

पद २१

मन भावन फागन आयो जामें रसियो राम रिझायो। टेर.
या तनकी मैं मटकी बणाऊं भाव सो रंग भरायो।
सुमता की करले पिचकारी ज्ञान अबीर उडायो।
प्रेम को रंग वरसायो ॥ १ ॥
सुरत निरत की ताल बजत है ध्यान को चंग मढायो।
मनसा की मृदंग मनवो वजावै गुरु के वचन सोई गायो।
मनुष्य तन मौसर पायो ॥ २ ॥
सुबुद्धि गुलाल जुगत की केशर शील वदन छिरकायो।
मृगमद घोरी संतोष कटोरी पियाजी सूं खेल मचायो।
क्षमाको चँवर ढुलायो ॥ ३ ॥
भक्ति मुक्ति का फगवा वँटत है विरले हरि जन पायो।
जाके चरण की रज धर मस्तक सेवादास जस गायो।
रामजी को शरण सुहायो ॥ ४ ॥

पद २२

ऐसी होरी को मौसर आयो ।
सुर दुरलभ ब्रह्मादिक चाहैं सो नर तन तैं पायो ।
अरे क्यों हरि विसरायो । टेर.
जा दिन तैं हरि तैं बिछुन्यो जब तैं जीव नाम धरायो ।
प्रभु वेमुख कर मन तैं प्रेन्यो जोनी अनेकन धायो ।
जहाँ जम हाथ विकायो ॥ १ ॥
सुरपुर कबहु देव तनु पायो कबहु पाताल पठायो ।
कबहु पशु पक्षी को तन थिर कबहू नहिं थायो ।
पलक विसराम न पायो ॥ २ ॥
निज मुख नाम सुधारस कूं तजिके तैं विषय विष खायो ।
हरिसो हीर अमोलख हान्यो काच किरच मन लायो ।
वृथा नर देह गमायो ॥ ३ ॥
परवस होय मूढ मरकट ज्यूं निशि दिन नाच नचायो ।
जन भावन अब राम सुमरले वेद पुराणा में गायो ।
कहा भव माहिं भुलायो ॥ ४ ॥

पद २३

होरी खेलन की ऋतु आई ।
संतन की सत संगत में हरि रंगन की झरि लाई ।
उमग नहिं मनमें समाई । टेर.
इला पिंगला सुषमण सी सजनी रजनी में रमाई ।
आतम रूप पिया अलबेला ताहिसे खेल खिलाई ।
लली लखि के ललचाई ॥ १ ॥
सुरत निरत की भर पिचकारी सुमति सखी ने चलाई ।
प्रानप्रिया प्रभु के उरलागी हरष हिये लपटाई ।
सुहागन साची कहाई ॥ २ ॥
अध ऊरध के अंबर में अनुभव की अबीर उडाई ।
ज्ञान गुलाल चली चहुं दिशि झुकि प्रेम घटा वरषाई ॥
नेह नदियां उमगाई ॥ ३ ॥
आदि पुरुष अविनाशी के संगमें शून्य की सेज विछाई ।
जन भावन तज आवन जावन पावन प्रीति वढाई ।
सखी सुख माहिं समाई ॥ ४ ॥

पद २४

होरी खेलन की ऋतु भारी ।
नरतनु पाय भजन कर हरि को ओ मोसर दिन चारी ।
अरे अब चेत अनारी । टेर.
ज्ञान गुलाल अबीर प्रेम कर प्रीति तणी पिचकारी ।
सास उसास राम रंग भरभर सुरति सरीसी नारी ।
खेल इन संग रचारी ॥ १ ॥
सुलटो खेल सकल जग खेलै उलटो खेल खिलारी ।
सतगुरु सीख धार शिर ऊपर सतसंगति चल जारी ।
भरम सब दूर गमारी ॥ २ ॥
ध्रुव प्रहलाद विभीषण खेलैं मीरां करमा नारी ।
जन भावन जगमें इमि खेलैं सो नहि आवत हारी ।
सखी सुन लीज्यो हमारी ॥ ३ ॥

पद २५

होरीया रंग खेलन आवो ।
इला पिंगला सुषमण नारी ता संग खेल खिलावो ।
सुरत पिचकारी चलावो । टेर.
काचो रंग जगत को छाडो साचो रंग लगावो ।
वाहिर भूल कवहू मति जावो काया नगर वसावो ।
तबै निरभै पद पावो ॥ १ ॥
पांचू उलट घेर घट भीतर अनहद नाद वजावो ।
सब वकवाद दूर तज दीजै ज्ञान गीत नित गावो ।
पिया के मन तव भावो ॥ २ ॥
तीनूं ताप तीन गुण त्यागो संशय शोक नसावो ।
जन भावन हित सूं नित गावो फेर जनम नहिं पावो ।
जोति में जोति समावो ॥ ३ ॥

होरी सोरठ ।

पद २६

तुम पी रे अवधू हुय मतवाला प्याला प्रेम हरी रसका । टेर.
वालपणो हंस खेल गुमायो तरुण भयो तिरिया वसका ।
वृद्ध भयो कफ वायुज घेर्‌यो पड़्यो रह्यो नहिं जाय मुसका ॥ १ ॥
पाप पुण्य दोय भुगतण आयो कुण तेरा और तूं किसका ।
केई दिनजीवड़ा हरी गुण गायले तन जोबन सुपना निशिका ॥ २ ॥

चकोर अग्नि को चुगता है पहले ध्यान धरै शशिका ।
राम रसायन हरिजन पीवै और जगत गाहक विषका ॥ ३ ॥
चोरासी सूं छूट्यो चाहै तज कनक कामिनी का चसका ।
चरणदास शुकदेव कहत है नख शिख सर्व भन्या विषका ॥ ४ ॥

पद २७

तुम संतो खेलो संभारी जग होरी मचरही बहु भारी । टेर.
जड़ चेतन दोय रूप बन्या है एक कनक दूजी नारी ।
पांच पचीस लियाँ संग अबला सबला हस मिल गावै गारी ॥ १ ॥
ब्रह्म कपाट है या करमें ड़फ मैं वड़ मैं वड़ की तारी ।
त्रिगुण तार तंबूरा वाजै आशा तृष्णा गति न्यारी ॥ २ ॥
पाप पुण्य दोय भर पिचकारी छूटत है वारंवारी ।
सन्मुख हुय जो नर खेलै ताकै छींट लगै नहिं कारी ॥ ३ ॥
कुमति गुलाल डार मुख मींडै काम कला पटली भारी ।
सुर नर मुनिजन पीर अवलियां भीज रह्या सब संसारी ॥ ४ ॥
चोवा चंदन और अरगजा माया की गागर भारी ।
षट दरशन छिनवै पाखंडा पकड़ किये सब वेगारी ॥ ५ ॥
चतुरा फगवा देदे छूटा मूरख को लागै प्यारी ।
कहै कबीर सुणो भाई साधो निरगुण ज्ञान गली न्यारी ॥ ६ ॥

पद २८

उठरी होरी होय रही तूं कहा पड़ सोवैरी । टेर.
रैन गई तो जानदे सजनी दिन मत खोवैरी ॥ १ ॥
और सखी मिल वसंत वधावै तूं क्या जोवैरी ॥ २ ॥
खेलन खेल वण्यो अति नीको सब जग मोवैरी ॥ ३ ॥
कहै कबीर सुणो भाई साधो बहुरि जन्म नहिं होवैरी ॥ ४ ॥

पद २९

सइयां वेदिन कद आवैला केसू फूलैला । टेर.
केसू फूलै आंबा मोरै कोयल अंवलैरी डाल ।
हस्ती घोड़ा माल खजाना सुपने कैसा ख्याल ॥ १ ॥
बीण वजंती रह गई सजनी टूट गई सब तार ।
बीण विचारी क्या करै गये वजावण हार ॥ २ ॥
धमण धमंती रहगई सीला पड़्या अंगार ।
अहरण का ठमका मिट्यारी लाद चले लोहार ॥ ३ ॥
सदा न जोबन थिर रहै सदा न वाग फुलाय ।
शाह अकबर कबीर गुसाइयां वारी गये बजाय ॥ ४ ॥

लोय

पद ३०

वो घर सतगुरु क्यों न बतावो जिण घर सूं जिव आया वे ।
काया छाँडि चलै जब हंसो कहो नी कहाँ समाया वे टेर.
मैं मेरी ममता के कारण वारंवार ठगाया वे ।
समझ न पड़ी ज्ञान गुरुगमकी तातें फिर भटकाया वे ॥ १ ॥
रज वीरज दोऊँ नहिं होता जद जीव कहाँ समाया वे ।
ब्रह्मा विष्णु महेश न होता आदि न होती माया वे ॥ २ ॥
चंद न सूर दिवस नहिं रजनी जहां जाय मट छाया वे ।
सुरत सुहागण पाव पलूसे पीव आपणा पाया वे ॥ ३ ॥
मेरी प्रीति पिया सूं लागी उलट निरंजन ध्याया वे ।
कहै कबीर सुणो भाई साधो परे ही के परै बताया वे ॥ ४ ॥

पद ३१

तन धर सुखिया कोइ न देखा जो देखा सो दुखिया वे । टेर.
शुक आचारज दुखके कारण गर्भ में माया त्यागी वे ।
घाटाँ वाटाँ सब जग दुखिया क्या गृही वैरागी वे ॥ १ ॥
सांच कहूं तो कोई न मानै झूठी कही न जाई वे ।
ब्रह्मा विष्णु महेश्वर दुखिया जिन या मांड रचाई वे ॥ २ ॥
जोगी दुखिया जंगम दुखिया तपसी को दुख दूना वे ।
आशा तृष्णा सब घट व्यापै कोई महल नहिं सूना वे ॥ ३ ॥
राजा दुखिया परजा दुखिया रंक दुखी धन रीता वे ।
कहै कबीर सबे जग दुखिया कोई साधु सुखी मन जीता वे ॥ ४ ॥

पद ३२

अवधू जोगी जुग जुग जीवै हरि रसका प्याला पीवै । टेर.
ज्ञान भानु अंतर में प्रगट्या भया उजाला सब सूझै ।
परचा प्राण रमैं ब्रह्मंड में या विधि कोइ विरला बूझै ॥ १ ॥
सहजाँ चढ्यो अगम को पाणी वरषै धरणि गगन भीजै ।
सींच्या बाग बनी हरियाली उस वाड़ी में चित दीजै ॥ २ ॥
फूटी वास बहुत फूलन की भँवर वस्या वाड़ी के माहिं ।
रह्या लुभाय लह्या सुख सारा अब पीछा आवन का नाहिं ॥ ३ ॥
अम्मर रूंख कबू नहिं सूखै दावा झोला लगै न कोय ।
मूलदास ताका फल पावै वो जोगी अम्मर होय ॥ ४ ॥

पद ३३

शब्द फकीर अनाहद राता मैं घर अकुला के जाऊंगा।
ब्रह्मा विष्णु महेश्वर तीनूं दश अवतार न ध्याऊंगा। टेर.
बैठा रहूं न फिर कर लाऊं भूखा रहूं न अघाऊंगा।
पंथड़ै जाय पांव नहिं तोडूं घर बैठा ऋधि पाऊंगा ॥ १ ॥
तीरथ जाउं न जलमें न्हाऊं जलका जीव न सताऊंगा।
अड़सठ तीरथ गुरू लखाया घटही भीतर न्हाऊंगा ॥ २ ॥
पाती तोड़ पथर नहिं पूजूं देवी देव न ध्याऊंगा।
पात पात में है पुरुषोत्तम वाकूं नाहिं सताऊंगा ॥ ३ ॥
जड़ी बूँटी औषधि नहिं साधूँ नाड़ी वैद्य न लाऊंगा।
सतगुरु वैद्य मिल्या अविनाशी ताकूं नाड़ि दिखाऊंगा ॥ ४ ॥
चंद सूर दोउं सम कर राखूं सुन में सुरति समाऊंगा।
कहै कबीर सुनो भाई साधो ब्रह्मजोति मिल जाऊंगा ॥ ५ ॥

पद ३४

ऐसा हाल फकीरों हंदा सुणलीज्यो सब कोई वे।
स्वर्ग मृत्यु पाताल लोकता फिक्कर फक्कीरां खोई वे। टेर.
टोपी तत्व सुमरणा चिंतवन सींगी अनहद सोई वे।
नाम निरंतर चोला पहर्‍या सेली सुरत सुमोई वे ॥ १ ॥
जत कोपींद आड़बंध सत का मगन मतंगा सोई वे।
सिरजनहार तिलक शिर ऊपर सुमरण कंठी पोई वे ॥ २ ॥
धूणी ध्यान लगाय रैणदिन फिक्कर पावोड़ी पोई वे।
आशा तृष्णा अधिक लाकड़ी धूणी माहिं धसोई वे ॥ ३ ॥
भिक्षा भाव सहज की चीपी झोली अक्कलज टोई वे।
जो मांगै ताही कों देवै ऊंच नीच नहिं कोई वे ॥ ४ ॥
सेज्या भूमि आकाश ओढ़णा जोति चंद्रमा जोई वे।
निशि दिन पवन करत खवासी दृढ आसण पर सोई वे ॥ ५ ॥
सदा उदास रहत जगत सूं निस्पृही निरमोही वे।
तातें तीव्र वैराग्य धारणा राग द्वेष नहिं कोई वे ॥ ६ ॥
एका एकी रहत रैण दिन दिलकी दुर्मति खोई वे।
कहत कबीरा अलमस्त फकीरा रावरंक नहिं कोई वे ॥ ७ ॥

राग सूहा।

पद ३५

कहोनी सखी माधोजी कब मिलै सांचो म्हारो सिरजन हार। टेर.
म्हारै आंगणे हे सखी मौरी अंबलारी डाल।
जिण पर बैठी कोयली बोलै शब्द रसाल ॥ १ ॥

किस विधि काली कोयली किस विधि राता नैण।
किस विधि आमण दूमणी क्यूं थारा मधुरा वैण ॥ २ ॥
विरह व्यथा तन साँवली रोय रोय राता नैण।
राम विछोहे आमणदूमणी सुमरण मधुरा वैण ॥ ३ ॥
थारै कोयल पाँखड़ी उड मिल क्यों नहिं जाय।
जाय मिल सगुणा श्याम सूं विरहनि धान न खाय ॥ ४ ॥
गल विच डारूं गूदड़ी करलूं जोगण भेश।
जाय मिलूं सगुणां श्याम सूं तो साँचो उपदेश ॥ ५ ॥
मो में अवगुण अति घणा तुम गुणवंता श्याम।
दयाकर दरशण देवो कान्हड़ के पति राम ॥ ६ ॥

पद ३६

आशा में अलूझी रामैयो कब मिलै मिलियां हरिने जाण न देह।
अंचलो झालीने हरिने राखलूं नैणा म्हारै नीर भरेह। टेर.
राम रह्या को म्हारै मनवस्यो विसारूं पण विसर्‍यो न जाय।
एक घड़ी जो वीसरूं हिरदै खटू के आय ॥ १ ॥
जब सोऊं जब रोय जणां जब जागूं जब एक।
सेज ढूंढ़ोरी पिव पायो नहीं हिवड़ा में पड़ गयो छेक ॥ २ ॥
वेर लगाई म्हारा बालमा विरहिन करत विलाप।
कोइयक आडा होगया पूरब जनम रा पाप ॥ ३ ॥
बालपणेरी प्रीतड़ी वूढापै लग दीठ।
कहै बखनो आवो हरी जरतां बुझावो अंगीठ ॥ ४ ॥

पद ३७

बालूँ रे विधाता थारे लेखने हरि विच लिख्यो रे विजोग।
करम रेख कद पालटै कब हरि मिलन संजोग। टेर.
दव की दाधी लाकडी सिलग सिलग धूंधाय।
त्रास भली विरहजु बुरा मोपैं सह्यो न जाय ॥ १ ॥
सांप लड़ो विच्छण डसो सिंहज मारो मोय।
अग्नि जलूं जलमें बहूं राम न छाँडूं कोय ॥ २ ॥
गजके हित हरि आविया प्रगट्या हित प्रह्लाद।
चीर वधार्‍यो द्रौपदी वाकी राखी लाज ॥ ३ ॥
बालखिल्य राख्या डूबता हरि धार्‍यो अवतार।
दास कबीरो बीनवै गया समंदाँ पार ॥ ४ ॥

राग सोरठ लंगड़ी।

पद ३८

पिया तोरे नाम लुभानी हो।
नाम लेत तिरता सुण्या जैसे पाहन पानी हो। टेर.
सुकृत कबहू ना कियो बहु काम कमानी हो।
गनिका कीर पढावतां वैकुंठ पठानी हो ॥ १ ॥
अर्ध नाम कुंजर लियो वाकी अवधि घटानी हो।
गरुड़ छाँड हरि आविया पशु जूण छुडानी हो ॥ २ ॥
जो नाम हमारे गुरु दियो सोइ वेद वखानी हो।
मीरां दासी वारणै अपनी कर जानी हो ॥ ३ ॥

पद ३९

पिया तैं प्रीति न जानी हो।
तलफ मुई तुम कारणै तुम चित्त न आनी हो। टेर.
मीनजु तलफै नीर कूं नहिं जानत पानी हो।
दया न आई देखतां मन ऐसी ठानी हो ॥ १ ॥
पड़त पतंगा आगमें कछु दीप न मानी हो।
प्रीति की रीति विचारतां भइ देह की हानी हो ॥ २ ॥
प्रीति करी मृग नाद सूं कछु नाहिं ज छानी हो।
मुखसें वैणु वजाय के शर मार्‍यो तानी हो ॥ ३ ॥
प्रीति गयाँई क्यों वनै सुनो सारंगपानी हो।
दास कूं अंग लगाइये तुम हो सुख दानी हो ॥ ४ ॥

पद ४०

काहू से नेह न करिये रे।
नेह कियां निश्चै सही विन पावक जरिये रे। टेर.
जग की झूठी सिलनता सिल बंधन परिये रे।
बंध छोड़ निरबंध हो सुख सिंधु विचरिये रे ॥ १ ॥
यो जग पावक रूप है जामें पाँव न धरिये रे।
यो ही ज्ञान विचार के हरि पंथ विचरिये रे ॥ २ ॥
सुत दारा सब झूठ है येतो देखत मरिये रे।
तुरसी तन मन वारकै हरि नाम उचरिये रे ॥ ३ ॥

पद ४१

रामैयो मित्र हमारो हो।
तुम विन बीजो को नहीं जोयो जग सारो हो। टेर.

आव हमारे पीतमा बलि जाउं मैं तेरे हो।
ज्यूं चातक जल बूंदकूं विरहनि यूं टेरे हो॥ १॥
वाट तुमारी जोवतां केता दिन वीता हो।
तुमरे तो खातर नहीं हुय रह्या नचीता हो॥ २॥
राम विछोहै मैं दुखी मन करत अनोहा हो।
पाचूं वैरण हुय रही वां कियां विछोहा हो॥ ३॥
दुख मेटण सुखसागरा निरधारां आधारा हो।
सहजराम की वीनती घर आवो मेरा प्यारा हो॥ ४॥

पद ४२

ऐसी मोहि रैन विहाई हो।
कौन सुनै कासूं कहूं वरनी नहिं जाई हो। टेर.
पूरण ब्रह्म विचारते मोहि नींद न आई हो।
जागत जागत जागियो सूते न सुहाई हो॥ १॥
कारण लिंग स्थूल की सब शंक मिटाई हो।
जाग्रत स्वप्न रु सुषुप्ति तीनों विसराई हो॥ २॥
तुरिया पद अनुभव भयो ताकी सुध पाई हो।
अहंब्रह्म के कहत ही हूं यो गयो विलाई हो॥ ३॥
वचन तहाँ पहुंचै नहीं यों सैन बताई हो।
सुंदर तुरियातीत में सुरती ठहराई हो॥ ४॥

पद ४३

सखी म्हारी नींद नसानी हो।
पिव को पंथ निहारताँ सारी रैण विहानी हो। टेर.
सब सखियां मोहि सीखदै मन एक न मानी हो।
विन दरशन कल ना परै मन ऐसी जानी हो॥ १॥
अंग क्षीण व्याकुल भई मुख मधुरी बानी हो।
अंतर वेदन विरह की पिव पीर न जानी हो॥ २॥
चातक ज्यूं घन कों रटै मछली विन पानी हो।
जन तुरसी पिव विन मिले सुध बुध विसरानी हो॥ ३॥

पद ४४

दरद की कासे कहिये हो।
बेदरदी जाणै नहीं अपणे तन सहिये हो। टेर.
पड़दे पावक परजली उर अंतर दाधी हो।
धूंवा झाल दीसे नहीं विरहिन डस खाधी हो॥ १॥

ज्यूं सूरा रणखेत में लोहा तन सहिये हो।
व्यावर केरी पीर को वंझा किम लहिये हो ॥ २ ॥
हुलस्यां नर हासी करै वेदरदी विचारा हो।
परमानंद की वीनती सुन साहिव प्यारा हो ॥ ३ ॥

पद ४५

लगै मोहि राम पियारा हो।
प्रीति तजी संसार से किया मन न्यारा हो ॥ टेर.
सतगुरु शब्द सुनाइया दिया ज्ञान विचारा हो।
भरम तिमर भागे सबै घट भया उजियारा हो ॥ १ ॥
मैं बंदा उस ब्रह्म का जाका वार न पारा हो।
ताहि भजै कोइ साधवा जिन तन मन मारा हो ॥ २ ॥
चाख चाख सब छोडिया माया रस खारा हो।
राम अमीरस पीजिये छिन वारंवारा हो ॥ ३ ॥
आन देव को ध्यावसी जाके मुख छारा हो।
राम निरंजन ऊपरे जन सुंदर वारा हो ॥ ४ ॥

पद ४६

ऐसा जन रामजी को भावै हो।
कनक कामनी परिहरै नहिं आप वंधावै हो। टेर.
सब ही तें निरवैरता काहू न दुखावै हो।
शीतल बाणी बोल के अमृत वरसावै हो ॥ १ ॥
कैतो मुनी होय रहै कै हरि गुण गावै हो।
भरम कथा संसार की सब दूर भगावै हो ॥ २ ॥
पाँचूं इंद्री वस करै मनही मन लावै हो।
काम क्रोध मद लोभ को खिण खोद वधावै हो ॥ ३ ॥
चोथे पद को चीन्ह के वहां जाय समावै हो।
सुंदर ऐसे साधु के ढिग काल न आवै हो ॥ ४ ॥

पद ४७

समझ मन मूरख गैला रे।
बाहिर धोयां क्या भयो घट भीतर मैला रे। टेर.
काम दिवानो यों फिरै जैसे छाल्यां में छैला रे।
वढ़ी वढ़ी कर छोलसी छुरियां घाव सहैला रे ॥ १ ॥
मन कहै मीठो जीमलै माणीजै महिला रे।
सुख जेता दुख ऊपजै चोरासी सहैला रे ॥ २ ॥

ठकुराई दिन चारकी सुखपाल वहैला रे ।
नाम विना पहुंचै नहीं यहां को यहां ही रहैला रे ॥ ३ ॥
पांच संगाती संगमें गुरजाँ बाण सहैला रे ।
कहै कबीर समझ्यां विना कांई उत्तर दैला रे ॥ ४ ॥

राग सोरठ रायसा ।

पद ४८

पिया तुम देखो मेरी ओर हो ओर ।
कांई होयरहे चितचोर हो चितचोर । टेर.
ऊंचा तरवर गहरी छाया शाखा पात सदन फल लाया ।
तापर टाली सदन बनाया नाहिंन दूजी ठोर हो ठोर ॥ १ ॥
पूर्व जन्म की प्रीति विचारो अवगुण मेरा चित्त न धारो ।
ज्यूं वायस बल जहाज विचारो नाहिंन दूजी दोर हो दोर ॥ २ ॥
भँवरी भारत माहिं पुकारी लज्जा राखी पांडवनारी ।
मंजारी सुत अग्नि प्रजारी गज के तंतू तोर हो तोर ॥ ३ ॥
उत्तरा जरत गरभ को राखे प्रीति काज अर्जुन रथ हांके ।
झूठे बोर भीलनी के चाखे भीषम को पण जोर हो जोर ॥ ४ ॥
करमा खीच प्रीतिकर पायो विनतेड़ै विदुर घर आयो ।
विप्र सुदामो तंदुल लायो सो लीने पट छोर हो छोर ॥ ५ ॥
शरण आयां की सहाय करीजै बांह गह्यां की लाज वहीजै ।
जन पूरण को दरशन दीजै गुरु मस्तक के मोर हो मोर ॥ ६ ॥

पद ४९

पिया तुम देखो मेरी पीरहो पीर ।
तुम गुणवंता गंभीर हो गंभीर ॥ टेर.
जग जीवन जग अंतरजामी सकल शिरोमणि सबके स्वामी ।
विरद तुमारो है घननामी तुम सुखसागर की सीर हो सीर ॥ १ ॥
अपने स्वारथ में रंग राता परकी पीर न जान हो दाता ।
समरथ स्वामि निरंजन नाथा आन बंधावो धीर हो धीर ॥ २ ॥
अजामिल कुब्जा कूं तारे बहुता अपती पतित उधारे ।
इन सबहिन के कारज सारे मोमें कहा तकसीर हो तकसीर ॥ ३ ॥
विनती वार वार कहा कीजै लाज विरद की राज वहीजै ।
जन पूरण को दरशण दीजै पार उतारो तीर हो तीर ॥ ४ ॥

राग सोरठ।

पद ५०

अबै म्हाने पार उतारो महाराज प्रभु थानें निज भगतांरी आन। टेर.
काम क्रोध मद लोभ मोहमें भूलो पद निरबान।
बुहो जात हूं भवसागर में तारो श्याम सुजान ॥ १ ॥
लख चोरासी भरमत भरमत मोड़ी पड़ी पिछान।
अब तो शरण आयो चरणाँरी थे मत दीज्यो जान ॥ २ ॥
मैं हूं कुटिल अधम अपराधी भजियो नहिं भगवान।
कह नरसी तुम पतित उधारण गावै छै वेद पुरान ॥ ३ ॥

पद ५१

थे थांके कानी जोज्यो राज अवगुण म्हाँरा मति देखो। टेर.
अधम उधारण नाम तुम्हारो एतो मनमें हिल सिल पेखो ॥ १ ॥
माणसछां म्हांने नहीं ठिकाणो तुम विन किणपर करां परेखो ॥ २ ॥
ब्रजनंदजी म्हांने थांका कहै छै जेज करो छो राज ओ कांई लेखो ॥ ३ ॥

पद ५२

कायमां कीर्ति करूंला रे तू मोटो दातार।
सबतें सिरजीला साहिबजी तू मोटो करतार। टेर.
चौदह भवन भाँजै घड़ै घड़त न लावै वार।
थापै उथपै तू धणी धिन धिन सिरजनहार ॥ १ ॥
धरती अंबर तैं किया पाणी पवन अपार।
चांद सूरज दीपक रच्या रैण दिवस विस्तार ॥ २ ॥
ब्रह्मा शंकर तैं किया विष्णु लियो अवतार।
सुर नर साधु सिरजिया करले जीव विचार ॥ ३ ॥
आप निरंजन हुय रह्या कायमो कोतकहार।
दादू निर्गुण गुण कहै जाऊंगा बलिहार ॥ ४ ॥

राग सोरठ सूवा।

पद ५३

कोई प्रीतम राम मिलावै रे।
प्यासलगी चातक ज्यूं सजनी और न कछु सुहावै रे। टेर.
सहज शृंगार भयो पावक सम दिन दिन विरह संतावै रे।
है कोई ऐसा पर उपकारी हरिजीने आन मिलावै रे ॥ १ ॥
सोई साधु सो पर उपकारी मो उर साल मिटावै रे।
स्वाति बूंद ज्यों सींच सनेहा अब मोहि मरत बँचावै रे ॥ २ ॥
कहा करूं करुणानिधि स्वामी अब कछु कहत न आवै रे।
अब तुरसी विरहनि व्याकुलता विन दरसन विललावै रे ॥ ३ ॥

पद ५४

वाहवारे मोज फकीरांदी । टेर.
कभी इक खासा मलमल मौसर कभी इक गुदड़ी लीरांदी ॥ १ ॥
कभी इक वासी टुकड़ा मौसर कभी इक चावल खीरांदी ॥ २ ॥
कभी इक आसण राजमहल में कभी इक गली अहीरांदी ॥ ३ ॥
वात जगत की कछु न सुहावै सीख सुणी गुरु पीरांदी ॥ ४ ॥
कहत कवीर सुणो भाई साधो चालैचाल अमीरांदी ॥ ५ ॥

पद ५५

सुलतानी सियाँ बलख बखारेदा ।
धिन या वांदी गुरू हमारे राहचताया पिवप्यारेदा । टेर.
चेरी सूती खरी विगूती चाबुक चोट चकारेदा ।
पातशाह सूं किया जवाबू येही हाल तुमारेदा ॥ १ ॥
सवा टाँक तन चोला पहरे पाँच टाँक तन सारेदा ।
अब तो बोझ उठावण लागा गूदड़ सेर अठारेदा ॥ २ ॥
चंगीचीज निवाले लेता ताती तुरत तयारेदा ।
अब तो टूका पावण लागा सीला सांझ सवारेदा ॥ ३ ॥
दलवादल ले लश्कर चढ़ता पड़ती धीह नगारेदा ।
अब तो प्यादा चालणलागा त्याग लिया पेजारेदा ॥ ४ ॥
इतनी तजकर लिवी फकीरी धिन आकीन विचारेदा ।
कहै कवीर सुणो भाई साधो फक्कर ज्ञान अखारेदा ॥ ५ ॥

राग सोरठ ।

पद ५६

वे दिन कब आवै हे माय ।
जा कारण या देह धरी मिलवो अंग लगाय । टेर.
जे जाणूं मैं हिल मिल खेलूं तन मन सुरत समाय ।
या कामना करो परिपूरण समरथ हो रामराय ॥ १ ॥
मैं उदास माधव नित चाहूं चितवत रैण विहाय ।
सेज हमारी सिंह भई है जब जागूं जब खाय ॥ २ ॥
यह अरदास दासन की सुणियै तनकी तप्ति बुझाय ।
कहै कबीर मिलो सुखसागर मिलकर मंगल गाय ॥ ३ ॥

पद ५७

माई मेरी हरि नहिं पूछी वात ।
पिंड माँहिलो प्राण पापी निकस क्यों नहिं जात । टेर.

पाट न खोलै मुखाँ न बोलै साम नहीं परभात ।
अबोलणे में अवधि वीती काहे की कुशलात ॥ १ ॥
स्वप्नमें हरि दरशण दीन्हो मैं न जाण्यो हरिजात ।
नैन हमारे उघरि आए मरोंगी विष खात ॥ २ ॥
रैन अंधेरी विरहिन घेरी तारा गिणत विहात ।
काढ खड्ग कंठ कापलोंगी करोंगी अपघात ॥ ३ ॥
आवन आवन कहि गये मोहि मिलनकी ख्यात ।
दास मीराँ भई व्याकुल बालकज्यों विललात ॥ ४ ॥

पद ५८

जोगिया ने राखो रे विलमाय । टेर.
ऊठो पांच सहेलियाँ लागाँ जोगिया रे पाय ।
इण जोगियारे मन कांई वसी जी म्हारी नगरी छोड्याँ जाय ॥ १ ॥
तो विन जोगी झूँपड़ीरे वाला जंगल बंधेली जाय ।
इण नगरी री वातड़ी कुण कहैला आय ॥ २ ॥
शरणै आयो बहु सुख पायो अब क्यूं छोड्याँ जाय ।
कमर कशी परदेशने कबै मिलौगे आय ॥ ३ ॥
शरणो त्याग्यो बहु दुख पायो दियो चोरासी माँय ।
कहत कबीर सुणो भाई साधो कुण आवै कुण जाय ॥ ४ ॥

पद ५९

जोगियाजी हो मत जाज्यो वचना पेल । टेर.
आवतड़ां आनंद हुवो रे जोगी जातां करगयो हेल ।
थारा शब्द सुहावणा रे जोगी म्हारै अंतर वहगयो शेल ॥ १ ॥
म्हारो जिवड़ो थांमें वसे रे जोगी ज्यों दीपक में तेल ।
म्हें तो मनमें जाणियो रे जोगी करसी म्हासूं खेल ॥ २ ॥
सूरत थारी जीवनम्हारी रे जोगी योही रामत खेल ।
रूपदास की वीनती रे जोगी कदे मिलेगो मेल ॥ ३ ॥

राग सोरठ ।

पद ६०

मेरो मन हरि हठ नाहिं तजै । टेर.
ज्यों युवती अनुभव प्रसवंती दारुण दुख उपजै ।
हुय अनुकूल विसार शूल शठ पुनि खल पतिहि भजै ॥ १ ॥
इंद्रिय लोलुप गृह पशूज्यूं जहाँ तहाँ शिरत्राण वजै ।
तदपि अधम विचरे तेहि मारग तोउ न मूढ लजै ॥ २ ॥

मैं हाऱ्यो कर जतन विविध विधि अतिशय प्रबल अजै।
तुलसीदास बस होय तबै जब प्रभु प्रेरक बरजै ॥ ३ ॥

पद ६१

मन पछितैहो अवसर बीते।
दुर्लभ देह पाय नर हरि भज कर्म वचन मन ही ते। टेर.
सहस्त्राबाहु दशवदन आदि नृप बचे न काल बलीते।
हम हम कर धन धाम सँवारे अंत चले उठ रीते ॥ १ ॥
सुत बनितादि जान स्वारथ रत नाँ कर नेह इन्हीते।
अंतहु तोहि तजैंगे पामर तू न तजै अब हीते ॥ २ ॥
तज अनुराग जाग जड़ मूरख त्याग दुरासा जीते।
बुझहि न काम अग्नि तुलसी के विषय भोग रस घीते ॥ ३ ॥

पद ६२

हे हरि वो दिन क्यों न करै।
कर करवा कोपींद कमर पट मैं ममता निवरै। टेर.
मोह द्रोह दुख सुख संशय भ्रम कामादिक विछुरै।
ज्ञान वैराग्य संत जन संगति यो मन विपुल धरै ॥ १ ॥
विजित इंद्रियाँ विमद मत्सर तजि क्रोधाग्नि न जरै।
यथालाभ संतोष मानिके लोलुपता न करै ॥ २ ॥
तृष्णा दंभ लोभ हठ तजिके उत्पथ पग न धरै।
समता सत्व शुद्धि धीरज धरि निर्भय है विचरै ॥ ३ ॥
मित्र असित्र आपनो दूजो मैं तैं चित न धरै।
दया विवेक शील संग लेके दृढ मन मौन करै ॥ ४ ॥
तजि संकल्प विकल्प कल्पतरु तव पद ध्यान धरै।
कर्म जाल संसृति अनेक के सो सब ही पर जरै ॥ ५ ॥
मन क्रम बचनं निसारि विषयरस रामहि राम ररै।
स्वर्ग मुक्ति ब्रह्मादि लोककी अभिलाषा न करै ॥ ६ ॥
एकाकी दृढ निस्पृह आसन गुरुवच मनन करै।
चिन्मय निखिल अखंडरूप तब तासूं पल न टरै ॥ ७ ॥
तूं सर्वज्ञ सर्व कारण पर निजप्रण क्यों न धरै।
बालकृष्ण कूं दीन जानि के क्यों नहिं पार करै ॥ ८ ॥

पद ६३

अब हरि कहांगये करुणा केत। टेर.
अधमउधारण पतिताँ पावन कहत पुकाऱ्या नेत ॥ १ ॥

मोहि भरोसो लाखौंवाताँ खाली जाय न खेत ॥ २ ॥
सुत अपराध करै वहुतेरा जननी तजत न हेत ॥ ३ ॥
पूरणदास पर अति निठुरता अजहूं सार न लेत ॥ ४ ॥

पद ६४

अजहू न निकसत प्राण कठोर । टेर.
अवधि वदीती अजहू नहीं आये कितहू रहे चितचोर ॥ १ ॥
चार पहर चारों जुगवीते रैण गुमाई भोर ॥ २ ॥
दरसण विना बहुत दिन वीते सुंदर प्रीतम मोर ॥ ३ ॥
कबहू नैण निरख नहिं देखे मारग चितवत तोर ॥ ४ ॥
दादू ऐसे आतुर विरहिन जैसे चंद चकोर ॥ ५ ॥

पद ६५

अब हरि भूल्यां नाहिं वने । टेर.
विपति विदारण तुमहो गिरधर सुखमें सित्र घने ॥ १ ॥
मैं आधीन कछू नहिं लायक तुम विन कोन गिने ॥ २ ॥
ज्यूं त्यूं कर मोहि पार उतारो व्रजनिधि लाज तुमें ॥ ३ ॥

पद ६६

हरि विन ये दिन जात दुखारे ।
सेज शृंगार सकल सुख त्यागे जादिन तें भये न्यारे । टेर.
सुणरी सखी वरषा ऋतु आई वरसे सब वन प्यारे ।
हमरी देह अजूताँई ऊन्हीं विरह अनेसो जारे ॥ १ ॥
कोन सुने कोन या मानें उर विच करवत सारे ।
मन ही माहिं विसूरै विरहिन मूरछ नैणजल डारे ॥ २ ॥
आरतवंत चातक ज्यूं सजनी सारी रैण पुकारे ।
जन तुरसी प्रभु प्रीति जानिके घन ज्यूं आन मिलारे ॥ ३ ॥

पद ६७

हरि मेरे तारण तरण जहाज । टेर.
भव भव में कोऊ चैन न पायो अब मेरी तुमही को लाज ॥ १ ॥
आन देव पूज्या बहुतेरा सच्यो न एको काज ॥ २ ॥
अब तो शरण राख जगतपति वखताके महाराज ॥ ३ ॥

पद ६८

हमारे प्रभु अवगुण चित न धरो ।
समदर्शी है नाम तुमारो सोही पार करो । टेर.

एक नदियाँ एक नाल कहावत मैलो नीर भरो।
जब मिलिगे तब एक बरण मे गंगानाम परो ॥ १ ॥
एक लोहा पूजा में राखत एक घर वधिक परो।
सो द्विविधा पारस नहि राखत कंचन करत खरो ॥ २ ॥
एक माया एक ब्रह्म कहावत सूरश्याम झगरो।
के याको निर्वाह करो प्रभु नहिं प्रण जात टरो ॥ ३ ॥

पद ६९

गोविंद गाढ़ाछोजी दिलड़ारा मीत। टेर.
प्रीति करो तो ऐसी कीज्यो ज्यूं गजगीरी भीत ॥ १ ॥
कपटी मित्रसें प्रीत न कीजै छोडचले अघवीत ॥ २ ॥
जब जम आय पकड़ लेजावै होसी बहुत फजीत ॥ ३ ॥
कहै बखतावर हरि को भजन कर निर्भय होय नचीत ॥ ४ ॥

पद ७०

ऊमर थारी जावे छै जी दियां रे दगो। टेर.
श्याही गई सपेती आई हुय गयो श्वेत बगो ॥ १ ॥
ओ संसार ओसको पानी चाल्यों जात भगो ॥ २ ॥
मात पिता सुत कुटुम्ब कबीलो स्वारथ लार लगो ॥ ३ ॥
भूप विजयकी याही है वीनती प्रभुविना कोई ना सगो ॥ ४ ॥

पद ७१

प्रिय म्हांने लागै छै जी श्रीसिंहथल गुरुधाम।
जहाँ रटत अहोनिशि राम। टेर.
श्रीजैमल शिष्य शिव पदसु जाहि पद विराजे संत हरिराम ॥ १ ॥
भवभ्रमहारी बलिहारी विहारी शरणागति विसराम ॥ २ ॥
धिन हरिदेव देव तरु सादश तादश मोतीराम ॥ ३ ॥
श्रीरघुनाथ चेतन चरणाश्रित नरसिंहदास गुलाम ॥ ४ ॥

पद ७२

चलो चलो सखी सिंहथल धिन महाराज।
जन हरिराम है भेष उजागर जीवां तारण जहाज। टेर.
देव सृष्टि दरशण को आवै मन वांछित सब काज ॥ १ ॥
शिवसनकादिक और ब्रह्मादिक ऐसो वण्यो समाज ॥ २ ॥
च्यार मुक्ति अरु च्यार पदारथ इण मौसर है आज ॥ ३ ॥

भरतखंड उधार करण कूं आये हैं महाराज ॥ ४ ॥
सत हरिचंद कबीर नामदे काशी शंकर राज़ ॥ ५ ॥
लाखूरामकूं शरणे राखो अपने विड़द की लाज ॥ ६ ॥

राग कालिंगड़ो।

पद ७३

निमिष मन नां करों न्यारो हे।
रूड़ो सतपुरुषांरो धाम, सिंहथल लागे प्यारो हे। टेर.
सिंहथल लागे सुहावणो, धोला धोरांमाहिं।
मानस्रोत शिवपुरी समसोहै, दरस्यां भव दुख जाहि ॥ १ ॥
अवधपुरी मथुरा द्वारावती, काशी गया प्रयाग।
तीर्थगुरुसे अधिक कोटि फल, परसे ते वडभाग ॥ २ ॥
चेतन महन्त भये जहां चकवे, ज्यों भागीरथ भूप।
हरिपुरसों आये इलऊपर, भक्ती गंगस्वरूप ॥ ३ ॥
दयावन्त गुणवन्ता ज्ञानी, जनकराय ज्यों जान।
रामचन्द्र जैसे मर्यादी, सत हरिश्चन्द्र समान ॥ ४ ॥
तिहँ गादी सोहै मनमोहै, श्रीश्रीरामप्रताप।
प्रीति सहित पद परसै कोई, हरै पाप तृय ताप ॥ ५ ॥
रामचोकमें दिपै रवीसम, मुख शोभा जिसि चन्द।
शुद्धमना सतपुरुष शान्तिचित, गावत गुण गोविंद ॥ ६ ॥
दया करो दीनानाथ दयालू, रामप्रताप महाराज।
माँगूँ दोउँकर जोड़ देह मोहि, रज चरणांरी राज ॥ ७ ॥
जन्म जन्म सिंहथल गुण गाऊं, नहिं पाऊं मैं पार।
भाखै मुक्त महर यों भजन्यो, सिंहथल को आधार ॥ ८ ॥

राग कामिनी सोरठ।

पद ७४

मतिदेखो करणी हमारी। राज लेखो विरद मुरारी। टेर.
कहाकियो गजराज धर्म नेमा। डूबत मुख ररर प्रेमा।
सुनताँ ततकाल पधारे। वाके फंद काट दुख टारे ॥ १ ॥
कहा अजामेल कियो आचारा। वाकी करणी नाहिं लिगारा।
सुत हेत नारायण गायो। जमदूतां पास छुडायो ॥ २ ॥
कहा कुबूजा कियो तप भारी। वाकूं सूँज परापतिसारी।
वाकी कीरति मुख मुख गावै। शुक श्रीभागवत वतावै ॥ ३ ॥

कहा गनिका पतिव्रतधारी । सो बैठ विमान सिधारी ।
तुम पतितउधारण देवा । सुरनर मुनि लहत न मेवा ॥ ४ ॥
शरणागत लेत उबारी । यह आदूरीति तुम्हारी ।
गुरु द्याल दरस बलिहारी । जन पूरण तन मन वारी ॥ ५ ॥

पद ७५

करुणानिधान सुनिये । कछु करुणा का न मेरी । टेर.
प्रहलाद के हितकारी । खंभ फाड़ के देहधारी ।
नरसिंह रूप कहायो । सब संतन के मन भायो ॥ १ ॥
गजकी अरज तुम मानी । सो तो वदत वेद वानी ।
ग्राह के जो फंद काटे । अघ कोटि कोटि दाटे ॥ २ ॥
तुम केते पतित उधारे । सो तो कविजन गिनगिन हारे ।
अब मेरी बेर राघो । तुम सूता हो कि जागो ॥ ३ ॥
मैं बेर बेर प्रभु टेरूं । प्रभु वाट तुम्हारी हेरूं ।
महाराज अवधविहारी । जन रामसखे बलिहारी ॥ ४ ॥

पद ७६

बूझूं बूझूं पंडित जोसी । म्हारो राम मिलन कद होसी । टेर.
म्हारी आंख फरूके बाँई । म्हांनै साधु मिलै के साँई ।
म्हारा पिया परदेसां छाया । किन वेरण ने बिलमाया ॥ १ ॥
म्हारी रोय रोय अंखियाँ राती । म्हारो तन दिवलो मन वाती ।
म्हारा झुर झुर पिंजर खीना । जैसे जल विच तलफै मीना ॥ २ ॥
उड उड रे काला कागा । म्हारे पियाने घणा दिन लागा ।
बाजींदो विरह विसूरे । मेरी आस गुसाइयां पूरे ॥ ३ ॥

पद ७७

पोथी जो खोल पांडे । साजन हमारा कित है । टेर.
मैं सुणी सजन की वतियाँ । मेरे चली कलेजे कतियाँ ।
मोहि नींद न आवै सारी रतियाँ । आली आई निगोड़ी रत है ॥ १ ॥
कोई सजन संदेशा लावै । मोहि मिठोड़ी सी बात सुणावै ।
म्हारा साजन कब घर आवै । वाही सें म्हारो चित है ॥ २ ॥
दादुर मोर कोकिला बोलै । चपला चित्त चहुं दिशि डोलै ।
बखने को दरशण दीजे । म्हारो योही संदेशो नित है ॥ ३ ॥

पद ७८

जिव सतगुरु विन दुख पावै । म्हारै नैणां नींद न आवै । टेर.
वे परम शून्यके वासी । अब यहां से भये उदासी ।
वे अमर लोक में पहुंता । अब राम जना यहाँ जोवता ॥ १ ॥
अब वा सूरत कब पाऊं । मैं रात दिनां बिललाऊं ।
मैं एक घड़ी भी न रहता । वे वायक अमृत कहता ॥ २ ॥
अब धीरज कोण बंधावै । मोहि राम अमृत कुण पावै ।
वे पूरण ब्रह्म अवधूता । है अर्जुन जाको पूता ॥ ३ ॥

राग सोरठ ।

पद ७९

कांई सूतो नींद वटाऊड़ा । वीर वाट घणी रे । टेर.
आवेली नींद सोय मत जाइयो । सोवाने रैण घणी रे ॥ १ ॥
इन निद्रा में नफो नही है । पूछेला जाब धणी रे ॥ २ ॥
अवघट घाट विषम का मारग । खांडेकी धार अणी रे ॥ ३ ॥
मात पिता सुत नारि कवीलो । तेरो कोई नाहिं धणी रे ॥ ४ ॥
कहै वखतावर सुणो व्रजनंदजी । अवै जमसे आण बणी रे ॥ ५ ॥

पद ८०

शरणै आया श्याम विहारी जी । राज तान्यां सजेला । टेर.
अधम उधारण साहिब सांचा । जे जग जान भजेला ॥ १ ॥
आयलई मैं ओट रावरी । प्रभु गहि बांह तजैला ॥ २ ॥
ललनासखी मेरो कहा विगरैगो । रावरो विरद लजैला ॥ ३ ॥

पद ८१

शरणै आयां री साँवरा वरग वहोला । टेर.
नेह न घट तो बढ़ तो वारिद ज्यूं एकरस सदा रहोला ॥ १ ॥
ओगुण दपट धरो जाजम तल हरि अंग बांह गहोला ॥ २ ॥
ललनासखी प्रभु कमल वदन सूं कब मोहि वचन कहोला ॥ ३ ॥

पद ८२

आऊं कहां तजि चरण तुम्हारे । टेर.
काको नाम पतित पावन जग किहि अति दीन पियारे ॥ १ ॥
कौन देव विरदाइ विरद हित हठि २ अधम उधारे ॥ २ ॥
खग मृग व्याध पाषाण विटप जड़ यवन कवन सुरतारे ॥ ३ ॥

देव दनुज मुनि नाग मनुज सब माया विवस विचारे ॥ ४ ॥
तिनके हाथ दासतुलसी प्रभु कहा अपनपो हारे ॥ ५ ॥

राग जैजैवन्ती ।

पद ८३

आज तो आलीरी म्हारे आंगन वधावना। टेर.
आये गुरुदेव आज करन हमारे काज ।
कंचनकलश साज सन्मुख जावना ॥ १ ॥
कंचनको थार हाथ आरती संवारनाथ ।
तिलक चढाय माथ घर पधरावना ॥ २ ॥
तन मन भेट कीजै लोचनको लाभ लीजै ।
चरण पखाल पीजै भवन सींचावना ॥ ३ ॥
किये जप जोग जाग तीरथ गया प्रयाग ।
भावन हमारे भाग भये मन भावना ॥ ४ ॥

राग जैतश्री ।

पद ८४

यो तन पाहुणो रे मति कोई करो रे गुमान ।
परसूं आज क काल में रे छोड चलै सिमान। टेर.
नदियां नाव संजोग है रे विछड्यां मेलो नाहिं ।
गया सो फेर न आवसी रे समझ देख मनमाहिं ॥ १ ॥
छत्र सिंहासन छोडकै रे मर मर गये अमीर ।
तू क्यों गाफल हो रह्यो रे काचो धार शरीर ॥ २ ॥
मोत खड़ी शिर ऊपरै रे जीवन झूठी आस ।
कहा जाणूं कब आवसी रे वाट वटाऊ सास ॥ ३ ॥
झूठी जग की मोहनी झूठा तन धन धाम ।
रामचरण अब चेतके रे सुमरो सत ही राम ॥ ४ ॥

पद ८५

राम गुण गायलै रे साजा थकां शरीर ।
पीछै याद न आवसी रे पिंजर व्यापै पीर। टेर.
जोबन थकां भज लीजिये रे जेज न कीजै वीर ।
फेर वुढापो आवसी रे नैना ढरसी नीर ॥ १ ॥
अवसर वीतो जात है रे ज्यूं अंजरीको नीर ।
फेर न हंसो आवसी रे इण सरवर की तीर ॥ २ ॥

भाग भला सतगुरु मिल्या रे पड्‌यो समंद से सीर।
हंसा होय चुग लीजिये रे नाम अमोलख हीर ॥ ३ ॥
सब देवन को देव है रे सब पीरन को पीर।
सहजराम भज लीजिये रे दुख मेटण सुखसीर ॥ ४ ॥

पद ८६

म्हारा मन माँहिला रे चलणो आज कै काल।
झूठा झगड़ा छोडदे रे साहिब में चित चाल। टेर.
फरीदा घोर निमाणिया रे महलाँ माल न लाय।
खाफण सेती राखले रे और फकीरां खुलाय ॥ १ ॥
अम्मा साँई साच है साँई सच्च सुहाय।
सतगुरुसेती मिलरहो रे खाफण देह कहाय ॥ २ ॥
भणै फरीदो सांभलो रे झूठो जगको नेह।
राम भजो म्हारा भाइयाँ रे माटी मिलसी देह ॥ ३ ॥

पद ८७

सजन सनेहिया रे छाय रह्यो परदेश।
बालपणो भोलै गयो रे पंडर होगया केश। टेर.
मैं तो जाण्यो ओरही रे तैं कछु जाणी ओर।
तुम करसो ज्यों होवसी रे मेरी झूठी दोर ॥ १ ॥
मैं जान्यो अवसर भलोरे पीव मिलेंगे आय।
तेरे भावें कछु नहीं रे तलफ २ मर जाय ॥ २ ॥
मैं अबला अतिशय दुखीरे तुम जानो सब वात।
जब ही दृष्टिभर देखिहो रे मेरे खुद कुशलात ॥ ३ ॥
चातक ज्यूं टेरों सदा रे देवो प्रभु जल दान।
सुंदर विरहनि कहत है रे दो दरसन दिनमान ॥ ४ ॥

पद ८८

जारे निरमोहिया रे कहां रह्यो करवास।
पहली प्रीत लगाय के रे अब क्यूं भयो उदास। टेर.
लाड लडायो अति घणो रे हौंस न पूरी मोर।
विणजारेरी आगज्यूं रे गयो धुकंती छोर ॥ १ ॥
घड़ी पलक जुग जात है रे क्यूं कर राखूं प्रान।
मैं तो जाण्यो संग रहै रे तैं तो तोड़ी तान ॥ २ ॥
अब तो ऐसी कीजिये रे प्रियतम प्यारा लाल।
सुंदर विरहन कहत है रे दरशन द्योनी दयाल ॥ ३ ॥

पद ८९

विचाले आंतरो रे म्हारो हरि विन भाजे माहिं।
कहा जाणू कब भाजसी रे ऊमावो मनमाहिं। टेर.
आडा परवत वीच है रे नदियां नीर अनंत।
पिंजर आयां पांखड़ी रे सिलसिल आऊँ नित्त॥ १॥
चरण विहूणो चालणो रे धरणि विहूणी वाट।
आडा परवत हुय रह्या रे किसविधि लंघूँ घाट॥ २॥
पोथी प्यारा पीवकी रे बाँचन दे नहिं नैन।
याद करूं तो आवसी रे प्रीतम दर्शन दैन॥ ३॥
कुंजर झूरे वन्न कूं रे चकवो पैले पार।
बखनो झूरे रामकों रे म्हारी आवागवन निवार॥ ४॥

पद ९०

रामने संदेशड़ोरे वालो कोइक जन लेजाय। टेर.
चितवंती चक्रितभई ज्यूं मृग नाद सुनाय।
मैं अबला आतुर भई रे वाला दरशन दीज्यो आय॥ १॥
रूप विहूणी कुलच्छणी रे नारी शरणै आय।
दीन दयाल दयानिधि देवा विरदवहोघणराय॥ २॥
अंग आभूषण साझ सुंदर ऊभी सेझ विछाय।
वेग पधारो वालमा विरहन लो वतलाय॥ ३॥
अधम उधारण पतितां पावन अशरण शरण सहाय।
सांवतराम के समरथ स्वामी धेनु वछा ज्यूं धाय॥ ४॥

पद ९१

घड़ी न आवड़ै रे वाला तुम दरशण विन मोय।
तुम विन मोरे प्राण पियारे जीवन किस विधि होय। टेर.
दिवस न भूख रैण नहिं निद्रा विरह संतावै मोय।
घायल ज्यूं घूमूँ खड़ी म्हारो दरद न जाणै कोय॥ १॥
दिन गमायो खायके रैण गमाई सोय।
प्राण गमायो झूरके नैण गमाये रोय॥ २॥
जो मैं ऐसी जाणती प्रीति कियां दुख होय।
नगर ढंढोरो फेरती प्रीति करो मति कोय॥ ३॥
पल पल पंथ निहारती नीठ रही मग जोय।
मीरां कहै प्रभु गिरधर नागर तुम मिलियाँ सुख होय॥ ४॥

रेखता ।

पद ९२

जगत सब रैणका स्वप्ना । समझ दिल को नहीं अपना ।
कठिन है मोह की धारा । वुहो सब जाय संसारा । टेर.
सजन परिवार सुत दारा । सबै उस रोज है न्यारा ।
प्राण जब निकस जावेगा । कोई नहिं काम आवेगा ॥ १ ॥
पता जिम डारसे तूटा । घड़ा ज्यों नीरदा फूटा ।
ऐसी नर जान जिंदगानी । चेते क्यूं न फेर अभिमानी ॥ २ ॥
भूलेमत देख तन गोरा । जगत में जीवना थोरा ।
तजो मद लोभ चतुराई । रहो निःशंक जग माई ॥ ३ ॥
सदा मत जान या देहा । लगावो राम से नेहा ।
कटै जम जालदा घेरा । कहे गंगादास जन तेरा ॥ ४ ॥

पद ९३

इश्क गुरु रामदा लागा । खलक का भर्म सब भागा ।
छक्या रस प्रेम पिव प्यारा । भया हूं मगन मत वारा । टेर.
प्रीति की रीति इम जाणी । तलफ है मीन बिन पानी ।
भँवर का हाल है ऐसा । जियै वो कमल विन कैसा ॥ १ ॥
बाण गुरु ज्ञानदा मार्‍या । कलेजा छेद कर डार्‍या ।
जगत का रंग सब खोया । हृदय मैं प्रेम से धोया ॥ २ ॥
घूमे गजराज की नाँई । रहै मस्तान मन माँई ।
गूंगो मिष्टान कछु खावै । मगन सुख कहत नहिं आवै ॥ ३ ॥
ऐसे गुरु शरण सिष पूरो । पावै गुरु मुखी सिष सूरो ।
जगत की मेट दे आसा । कहै गुलाब जन दासा ॥ ४ ॥

पद ९४

शब्द गुरु बाण भर मार्‍या । कलेजा छेद कर डार्‍या ।
सूती इक विरहनी जागी । आरत पिव मिलनकी लागी । टेर.
रोम रोम फैल गई पीरा । चलत है सास अति सीरा ।
गले गद गद से चैना । बोलत है अटपटे वैना ॥ १ ॥
वदन पर पान ज्यूं पीरा । चलत है नैन में नीरा ।
दिवस कछु धान नहिं भावै । रैण टुक नींद नहिं आवै ॥ २ ॥
नहीं कोइ महरमी मेरा । ताही सैं दाखिये वेरा ।
कहो दुख कौन से कहिये । आपने आप तन सहिये ॥ ३ ॥

तलफ ज्यूं नीर विन मीना। वे दरदी मरम नहिं चीना।
व्यावर की पीर कूं वंजा। करै क्या ज्ञान कूं गंजा ॥ ४ ॥
वीती सो वैद पुनि होई। न जाणै दूसरा कोई।
दीनी सो महरमी होई। भेदी उर जानसी सोई ॥ ५ ॥
दरद की पीर अति भारी। लगै नहि दूसरी कारी।
सेवगराम विरहनी गावै। सिल्यां पिव प्राण सुख पावै ॥ ६ ॥

पद ९५

भया हूं इश्क मस्ताना। कहै सब लोग दीवाना।
दिलों का दरद को जानै। कहे से सत्य को मानै। टेर.
हम न दिन रैन रोते हैं। दमन से जान खोते हैं।
सूली की सेज सोते हैं। विरह के ये निसाने हैं ॥ १ ॥
तजी खिदमत उजीरी की। पाई लज्जित फकीरी की।
चढा किस्ती सबूरी की। फकर के ए मकाने है ॥ २ ॥
हम न हक़ यार है जानी। पिया हरि नाम का पानी।
आखिर होयगा फानी। अलू राम ही समाने हैं ॥ ३ ॥

पद ९६

लगन की वात न्यारी है। कटारी से करारी है। टेर.
लगी मन सूरके ऐसी। करी उन देखलो कैसी।
अनलहक यूं कही वानी। चढ़े सूली नहीं मानी ॥ १ ॥
लगी सुलतान के भाई। बलख की तजी बादशाई।
अठारे लाख तजे तुरियाँ। सोलह सहँस तजि हुरियाँ ॥ २ ॥
जनन की पीर है भारी। न जानै बांझवा नारी।
लगी सो आदि अंताई। कबीर यूं कहै भाई ॥ ३ ॥

पद ९७

विरहनि मग पीव का जोवै। नहिं सुख रैण दिन सोवै।
पड़त है विरह का झोला। खिनक मासा खिनक तोला। टेर.
भवन मुझे भाखसी होई। भयावन वाग था सोई।
शब्द पिक सेलसी अनिया। ऐसी गति आयके वनिया ॥ १ ॥
लगत है सेज मुझे सूनी। पिया विन एकली रूनी।
विरह की ताप अति भारी। न लागै दूसरी कारी ॥ २ ॥
खाना पहरना फीका। लगे नहिं स्वाद कछु नीका।
भूषण भुजंग जिम खावै। असन वा वसन नहिं भावै ॥ ३ ॥

आरति अत पीवकी मनमें । निसिष भर चेन ना तनमें ।
हियो भर नैंन जल आवै । दरशन कब पीव दिखलावै ॥ ४ ॥
रैन सब वीत गई सजनी । रही अब पीछली रजनी ।
रहे नहिं जात यो तन ही । अबै पिव आयाँ ही वनही ॥ ५ ॥
सेवग को स्वासि सुख दीजै । निपट ही अंत नहिं लीजै ।
झूरै नित आतमा दासी । सिलो प्रभु आप अविनासी ॥ ६ ॥

पद ९८

पिया टुक देख तू मोसूं । तेरे विन प्राण मैं सोसूं ।
ऐसा क्या हुंवा वेदरदी । जरद तन होरहा हरदी । टेर.
करवत वहत है मेरे । महर कर तू न हेरे ।
हरि हर वचन नित टेरूं । तिहारो पंथ नित हेरूं ॥ १ ॥
दिवस मोहि अन्न नहिं भावै । रात्युं नींद नहिं आवै ।
तिहारो देखवो भावै । नाथ कब दरश दिखलावै ॥ २ ॥
किशोर जन विरह अति भारी । लगी है दरश की यारी ।
खड़ी कबकी पुकारूं रे । तेरे पर प्राण वारूं रे ॥ ३ ॥

पद ९९

सजन इक अर्ज है मोरी । मुझे हैं आशिकी तोरी ।
कलेजा कटत है माहीं । तुझे कछु खबर भी नाहीं । टेर.
ऊवके रैण दिन छाती । लिखी नहिं जात है पाती ।
वहै नित नैन में पानी । पिया मेरी पीर नहिं जानी ॥ १ ॥
डरावै रैण अंधियारी । विजलियां चमक है भारी ।
टहूका मोर कां सालै । हिये में हूक सी चालै ॥ २ ॥
परत मुरझाय के धरती । तपत तन विरह की जरती ।
पपैया पीव मति बोलै । सुनत मन परत है झोलै ॥ ३ ॥
कोयलियाँ कूक है झीनी । मानुँ मोहि सेल की दीनी ।
कबीरो विरहनी गावै । सिल्याँ प्रभु प्राण सुख पावै ॥ ४ ॥

राग कालेरा ।

पद १००

बाट घणी दिन थोड़ो रे वटाऊड़ा वीरा वाट घणी दिन थोड़ो रे । टेर.
ले कमची वीख ना चोरो हाक घणेरो घोड़ो रे ॥ १ ॥

है घर दूर सूर घर हालो दोड़ सकै तो दोड़ो रे ॥ २ ॥
नगर पहूंताँ निरभै होसी वीच रह्यां रो फोड़ो रे ॥ ३ ॥
पंथ दुहेलो संग न कोई जग में जीवण थोड़ो रे ॥ ४ ॥
आशाराम अणघड़ के शरणै मारग पायो मोड़ो रे ॥ ५ ॥

पद १०१

सतगुरुजी म्हारा नैणाँदे आगल रहियो रे । टेर.
यो संसार मोह जल भरियो सार हमारी लहियो रे ॥ १ ॥
मो निगुणी में गुण नहिं कोई ओगुण म्हारा सहियो रे ॥ २ ॥
इण संसार में कोइ न अपणो के नेह लगाऊँ कि नेहियो रे ॥ ३ ॥
मीरां कहै प्रभु गिरधर नागर लाज विरद की वहियो रे ॥ ४ ॥

परज

पद १०२

एरी सुख सुंदरि श्याम मिला वे, यारी एक लगी आतम सूं ।
और भई निरदावै । टेर.
प्रेम भाव का पहर पटोरा सुरत निरत कर नाचूँ ।
अनहद तार तत्तझणकारा एक अखंड धुनि राचूं ॥ १ ॥
अमल कमल का सझ सिणगारा जागूं संजम राती ।
तन मन जोड़ करूं दासातन रहूँ रामरंग राती ॥ २ ॥
जाग्या भाग भये जग न्यारा पीव पुरातन पाया ।
जन हरिराम श्याम अरु सुंदरि अरस परस लिवलाया ॥ ३ ॥

पद १०३

मानोंगी मानोंगी गुण तेरा ऊधो मैंतो मानोंगी गुण तेरा । टेर.
जादिन ते विछुरे मनमोहन हृदै बीच वसेरा ।
नैन हमारे नीर न खंडै कंचन भवन वसेरा ॥ १ ॥
जिम तिम करि कोइ हरि ही लावे कर उपदेश घनेरा ।
एकवार जो हरि ही सिलावे प्राणजीवन धन मेरा ॥ २ ॥
या जीवन से मरण भलेरो यातें करो निवेरा ।
सूरश्याम प्रभु छोड चले हैं बाँध गेह का बेरा ॥ ३ ॥

पद १०४

छिन बिन मोय को कछु न सुहावै तरफत चित अति ही अकुलावै । टेर.
एरी सखी हमरे प्रीतम को जाय कोई यह बात सुनावै ।
यह जोबन छीजत है छिन छिन बीत गये पर फिर नहिं आवै ॥ १ ॥

बहुत कोल वीते आवन के गिनत गिनत जियरा घवरावै ।
हाय दैया अंखियाँ तरसत है विरह विपत नित मोय जरावै ॥ २ ॥
मरन न देत आश मिलवे की जीवन छिन विन नहिं भावै ।
सुध बुध सबही भूलगईरी यह दुख तो अव सह्यो न जावै ॥ ३ ॥
मतलब को गरजी जग सारो अरजी मोरी कोन सुनावै ।
तनमन जीति रीति सब करके भजहु राम काम वनि आवै ॥ ४ ॥
हे जगदीश ईश विश्वंभर तुम विन यह दुख क़ोन मिटावे ।
करहु कृपा करुणानिधि मोपें मिले पिय जिय हरष न मावे ॥ ५ ॥
ज्ञानी याहि ज्ञान कर देखै रसिक याहि रस पच्छ लगावै ।
योग भोग गति दोइ एक करि सुमति अजित पद सहज वतावै ॥ ६ ॥

मंगल

पद १०५

घड़ी एक विलंव करो नगरी हंदा राजवी ।
ऐसो मेवासो छाँड उदासी क्यूं करी । टेर.
काया करत पुकार जंगल विच क्यूं धरी ।
पहिलां कियो सनेह अवै क्यूं परहरी ॥ १ ॥
हम मानसरोवर के हंस तेरी संग ना रहाँ ।
हमहैं वटाऊ लोक सजन तुमसे कहाँ ॥ २ ॥
चलरी अगम के देस जहां देख्यां जम डरै ।
जहाँ भर्या प्रेम का होद हंस केलाँ करै ॥ ३ ॥
कहै कबीर विचार समझ सत भावना ।
हंस गया ब्रह्मलोक वहुरि नहिं आवना ॥ ४ ॥

पद १०६

चलो सतगुरुजी री हाट ज्ञान वुद्धि लाइये ।
लीजै रामजी रो नाम परम पद पाइये । टेर.
सतगुरु रूठा होय तो तुरत मनाइये ।
हुइकर दीन आधीन गुना वकसाइये ॥ १ ॥
सतगुरु दीन दयाल दैणा सो सव दिया ।
मैं रही अभागण नारि अमृत तज विष पिया ॥ २ ॥
सतगुरु ऐसा दयाल दया चित हेरवै ।
कोट करम करि जाय पलक चित फेरवै ॥ ३ ॥
कहै कबीर विचार समझ हिरदै धरै ।
जुग जुग कीजै राज क दुरमति परहरै ॥ ४ ॥

पद १०७

हाथ आम की डार डगर विच क्यूं खरी।
चल्यो जा मूरख गंवार मेरी तुझै क्या परी। टेर.
पीव चल्या परदेस क पतियाँ दे गया।
छतियाँ वजर किंवार जंजीरी दे गया ॥ १ ॥
कूंची पिया के हाथ क ताला प्रेम का।
शील संतोष शृंगार पिया के नेम का ॥ २ ॥
काजल तिलक तंबोल क ऊपर आरसी।
सतगुरु है सुभियान लखे मेरी पारसी ॥ ३ ॥
गगन मंडल के बीच उडै दोय पंखिया।
राम मिलण के काज झुरै मेरी अंखिया ॥ ४ ॥
गावै दास कबीर मंगल के भावना।
हंस चल्यो सतदेश बहुरि नहिं आवना ॥ ५ ॥

पद १०८

चली भवन के माहिं अकेली गोरियाँ।
जाय खड़ी पिव पास हाथ जुग जोरियाँ। टेर.
चले नीर दोउँ धार प्रेमकी नारियाँ।
हिरदो सजल होय भूली सुधि सारियाँ ॥ १ ॥
कह न सकी मुख बैन चैन नहिं जीव में।
जैसे चित्रकनैन रुपे जाय पीव में ॥ २ ॥
रोम रोम थरराय पाँव कर डिगमिगे।
साहिब देख उदास त्रास अति ही भगे ॥ ३ ॥
कहै कबीर विचार सार प्रभु लीजिये।
विरहन को दुख देय गमन मत कीजिये ॥ ४ ॥

पद १०९

इण आंगणिये हे सखी हम खेलण आया।
केई खेल्या केई खेलसी केई खेल सिधाया। टेर.
आवो पांच सहेलड्याँ सींवो मेरा चोला।
मैं अबला भई विरहनी साहिब मेरा भोला ॥ १ ॥
एक निमाणी कोहड़ी जाकी नेजू है झूठी।
नैण हमारे यूं झरै जैसे गागर फूटी ॥ २ ॥
वड़ तल आण उतारिया संगी कुरलाया।
तुमतो तुमारे घर चले हम भये जी पराया ॥ ३ ॥

काजी मुहम्मद यूं भणै अब यहाँ नहिं रहणा।
आया संदेशा मेरे राम का कछु नहिं कहणा ॥ ४ ॥

पद ११०

दुख सुख मन नहिं आणिये घट साथे घड़िया।
टाल्या किसका ना टले रघुनाथजी जड़िया। टेर.
सीता सरीसी भारजा रघुपति मोटा स्वामी।
लंकारो पति लेगयो वनमें विपति जामी ॥ १ ॥
हनूमानसा महाबली कारज किया मोटा।
प्रारब्ध को पायवो पाया तेल लँगोटा ॥ २ ॥
हरिश्चंद्रसे राजवी तारादे रानी।
काशी नगर के चोहटे शिर ढोया पानी ॥ ३ ॥
नल सरीसा नर नहीं दमयंतीसी रानी।
वन वन भटकत वे फिऱ्या विन अन अरु पानी ॥ ४ ॥
पाँचू पांडव रामका वन माहिं विगूता।
बैठण जागाँ ना मिली सुखभर नहिं सूता ॥ ५ ॥
भीड़ पड़ी महादेव में सुमऱ्या अंतरजामी।
भीड़ को भंजन भूधरो गावै नरसीलोस्वामी ॥ ६ ॥

राग आसावरी।

पद १११

भजन विन सिरगै ने खेत उजारा। टेर.
सिरगो एक पांच है हरिणी जामें तीन छिकारा।
अपने अपने रसके लोभी चरत है न्यारा न्यारा ॥ १ ॥
आंबा खाय आमली खाई केसर केरी वाड़ी।
कायानगरमें कछुइ न राख्यो ऐसो मृगो उजाड़ी ॥ २ ॥
मन सिरगैने किस विधि राखौं विड़रत नाहिं विड़ारी।
जोगी जंगम जती सेवड़ा पंडित पच पच हारी ॥ ३ ॥
शील संतोषकी वाड़ करायलो गुरूशब्द रखवारी।
कहै कबीर सुणो भाई साधो विरियां भली संभारी ॥ ४ ॥

पद ११२

चित चंचल बहुत हमारो राम कैसे करू मैं भजन तुम्हारो। टेर.
पाचको मंत्री पचीस को संगी उनसे बनी है हमारी।
भजन करूं मनवो उठ भागै थिर ना रहत लगारी ॥ १ ॥

मनवो पड्यो कुमति के पीछै तजदियो ज्ञान ध्यान सारो ।
साधु संतोंका कह्या न मानै ऐसो है धूतारो ॥ २ ॥
या मनवा को लाज न आवै साखभरै केई वारो ।
छूटां पीछै हात न आवै जैसे ढ़ोर उजारो ॥ ३ ॥
चोरी में चौकस और परनिंदा खाणेमें हुसियारो ।
हरिजीकी भक्ति साधुकी सेवा उनसे लेरह्यो टारो ॥ ४ ॥
शास्त्र पुराण भागवत गीता सुण सुण गयो जमारो ।
कहै कबीर सुणो भाई साधो इन मनवारो काँइ पतियारो ॥ ५ ॥

पद ११३

अरे मन धूरत क्यों न अघावै । टेर.
भोगत भोगत बहुत दिन बीते शांति नहीं कबु आवै ॥ १ ॥
जिन विषयन में बहु दुख पायो जिनमें फेर उरझावै ॥ २ ॥
यथा श्वान श्वानी सूं उरझ्यो पुनि पुनि चोटाँ खावै ॥ ३ ॥
क्षण में शांति मौन गहि बैठत क्षण में फिर ललचावै ॥ ४ ॥
धनके हित मूढन के आगै सो सो नाच दिखावै ॥ ५ ॥
पूत मिंत ममता सूं बंध्यो नाना सांग बनावै ॥ ६ ॥
सबके देखत जमने पकड्यो श्रद्धा कौन छुड़ावै ॥ ७ ॥

पद ११४

मनरे क्यूं नहिं राम संभारे । टेर.
या जगमें बहु मान बढ़त है पुनि परलोक सिधारे ॥ १ ॥
कहा भयो सुख संपति पाई अरु धन धाम चोबारे ॥ २ ॥
धिक विद्या धन रूप बाहुबल विन हरिनाम उचारे ॥ ३ ॥
हट व्रत नेम यज्ञ तप कीना जटा लोम नख धारे ॥ ४ ॥
जो पै रामनाम नहिं गायो लोकविडंबन सारे ॥ ५ ॥
इत उत देखत अवध विहानी रे मन निठुर निकारे ॥ ६ ॥
अबहु संभार कछू नहिं विगड्यो श्रद्धा वेद पुकारे ॥ ७ ॥

पद ११५

मन तूं निपट भयो सेलानी । तैं संत सीख नहिं मानी । टेर.
तन धन जन जग संपत्ति देखिके तेरी मति बोरानी ।
काम क्रोध मद लोभ मोह सब बन्यो फिरे अभिमानी ॥ १ ॥
देख विचार मोत नहिं छोडै राव रंक भय पानी ।
कित हरिश्चंद्र दधीचि गये कहाँ रहगई प्रगट कहानी ॥ २ ॥

मनुष्य देह देवन को दुर्लभ जाचत है मुनि ज्ञानी।
ताकूं पायके व्यर्थ गमावत करत निपट नादानी ॥ ३ ॥
प्रभुमय जग लखि नैन सफल कर राममंत्र जप बानी।
दान पुण्यकर कर शुचि करले होय सफल जिंदगानी ॥ ४ ॥
शरणागत पालक सुखदायक दीनबंधु सुखदानी।
प्रभु स्वतंत्र को आय बचावो अपनो सेवक जानी ॥ ५ ॥

पद ११६

मन तू ऐसो नीच संगाती। टेर.
निशिदिन रहत नीच नीचन में आठ पहर दिन राती।
विषयकी वात लगे अति प्यारी हरि चरचा न सुहाती ॥ १ ॥
आवत जावत लग रही मनमें कुकरम रोपे छाती।
मृगतृष्णा जग छोड बावरे चढ़े न सुखकी घाटी ॥ २ ॥
बैठ सभा में मीठो बोलै मनमें राखै भ्रांती।
जानबूझकर नर पड़े नरक में वीतत है दिनराती ॥ ३ ॥
कहा कहौं इण मन की घाती लगै न तिलभर वाती।
कहत कबीर सुणो भाई साधो आवागवण मिटाती ॥ ४ ॥

पद ११७

मन तोहि किसविधि कह समझाऊं। टेर.
सोनो होय तो सोगी मिलाऊं करड़ो ताव दिराऊं।
पंच रंग नाल जुगत सूं फूंकूं पाणी ज्यों पिघलाऊं ॥ १ ॥
हस्ती होवै तो मावत बुलाऊं अंकुश दे चलवाऊं।
सुरत निरत का पहर घूघरा साहिब में मिलजाऊं ॥ २ ॥
लोहा होय तो ऐरण मंगाऊं घणकी चोट दिराऊं।
ले हथोड़ो साट वधाऊं जंत्री तार कढाऊं ॥ ३ ॥
ज्ञानी होय तो ज्ञान सुणाऊं पंडित वेद पढाऊं।
कहै कबीर सुणो भाई साधो फेर जनम नहिं पाऊं ॥ ४ ॥

पद ११८

मन तू विरछन की मति लेह। टेर.
काटे जासूं वैर नहीं है सींचे जासूं नेह ॥ १ ॥
अपने शिरपर ताप सहत है ओर न को सुख देह ॥ २ ॥
जो कोई वाकूं पत्थर मारै तो वाकूं ही फल देह ॥ ३ ॥
कहै कबीर सुणो भाई साधो साधू का लछ एह ॥ ४ ॥

पद ११९

मन रे अब तू जग तें छूटो ।
शीस उघाड़ो गल में कंथा करमें कमंडलु फूटो । टेर.
फाटा पाँव मैल तन ऊपर उघरत नाहीं अँखियाँ ।
मतवाले ज्यूं घूमत डोले एक न माने सँकियाँ ॥ १ ॥
ऐसा होय चल्या वस्ती में भिक्षा कारण डोलै ।
पांच सात छोरा चोगड़दे वैंड़ो कहि कहि बोलै ॥ २ ॥
ऐसी विधि विचरै जग माहीं संग न कोई साथी ।
धताधूत वैराग इसी विधि ज्यों मद छकियो हाथी ॥ ३ ॥
छांड्या स्वाद दिया तन आडा रामनाम लिवलाया ।
तुलसीदास गुरु परतापे यूं अमरापुर पाया ॥ ४ ॥

पद १२०

भरथरी भूप भयो रे वैरागी ।
विरह वियोगी वन वन डोले सुरत शब्द सूं लागी । टेर.
हस्ती घोड़ा गाम गढ़ गूड़र कनड़े पायक आगी ।
जोगी भयो देख जग जातो नगर उजीणी त्यागी ॥ १ ॥
छत्र सिंहासन चवर ढुलंता राग रंग बहो रागी ।
गोखां बैठी रंभा राणी तासूं सुरत न लागी ॥ २ ॥
सब सुख छाँड़ भज्यो इक साँई राम नाम लिव लागी ।
सूरवीर सेंठा पग रोप्या जरा मरण भव भागी ॥ ३ ॥
मनसा वाचा और कर्मना गंधर्व सुत वड़भागी ।
कहै कबीर जूझ मन अपने अमर भयो अणरागी ॥ ४ ॥

राग कालिंगडा ।

पद १२१

मना यह मोसर नीको रे ।
देहड़ली दिन दोय करीजै कारज जीको रे । टेर.
चोबारा चहुं ओर अटारी चाकर भूषन चीर ।
रंग पतंग चार दिन चंगा अंत विरंगा वीर ॥ १ ॥
मात पिता परिवार पसारा सुत वित नारि सँजोग ।
साजन संग सराय वसेरा वीर विराना लोग ॥ २ ॥
हरि गुरु संत चरण की सेवा कीजै और न काम ।
मानुष तन को मोसर मेंहगो भावन भजिये राम ॥ ३ ॥

पद १२२

पड़्यो जश क्यूं नहीं लीजै रे। मना मुख राम रटीजै रे। टेर.
ना कोई घासै जीभड़ी ना कोई लागै दाम।
ना कोई पंथ निहारणो बंदा क्यों सुमरै नहिं राम ॥ १ ॥
काया माया पाहुणी ओर कन्या घर होय।
राखी काहू की ना रहै ऊठ चलै पत खोय ॥ २ ॥
ओ मन मेरो गोड़ियो हुनर किया अनेक।
मन वांछा माया रची अंट लिख्या फल देख ॥ ३ ॥
सब दोझकरै कारणै देत पईसा खोल।
विना पईसा मुक्ति है जे कोई लेवै मोल ॥ ४ ॥
लख चोरासी भुगत कर पाई मिनखा देह।
सुखसारण भज राम ने अवसर आयो एह ॥ ५ ॥

राग विलावल

पद १२३

जोगियाने ढूंढत जुग भयो कहुं देख्यो री माई।
कोई रे वतावै जोगी आवतो जाने लाख वधाई। टेर.
पाना छाई रे जोगी रावटी फूलां सेज विछाई।
आयो जोगी रम गयो भिक्षा देण न पाई ॥ १ ॥
जोगियारी झोली हीरां जड़ी मांहे माणक भरिया।
जो मांगै जाकूं देत है ऐसा दिल दरिया ॥ २ ॥
एक जोगी दूजो मित्र है तीजो मस्त दिवाना।
चोथा तकिया रालके धरती असमाना ॥ ३ ॥
शेष नाग सेवा करै चंद्र पूरै चराकी।
लेखण वाके हाथ है कछु काढत वाकी ॥ ४ ॥
देखो जोगी री करामातड़ी मनसा महल वणाया।
बिन थांभा बिन थोभली असमान ठहराया ॥ ५ ॥
कहै कबीर मैं क्या कहूं क्या कहिके गाऊं।
अलख निरंजन राम है वाका पार न पाऊं ॥ ६ ॥

पद १२४

मीठा लागै माधवा निजनाम तिहारा।
से भी आसण ना रहे धरती गिलगई सारा। टेर
मनु सरीसा राजवी कुंजर क्रोड़ अठारा।
लाल लंगूरा नेजा फर हरै बाजे बंब नगारा ॥ १ ॥

ऊंचा मंदिर चुणावते बिच कोटिक धारा।
झालर बाजे देहरा जाँरा अंत न पारा ॥ २ ॥
भीम सरीसा महाबली दल ठंभण हारा।
सहदेव सरीसा जोतिषी वाचै पुराण अठारा ॥ ३ ॥
पीर पैकंबर अवलिया जोगी जंगम धारा।
कहै कबीर सुण साधवा हमभी चालण हारा ॥ ४ ॥

पद १२५

अब तो नाथ दया करो मेरे समरथ दाता।
जीव तड़फै दरशण बिना फिनसौं कहुँ वाता ॥ टेर.
आठ पहर नहिं बीसरौं नित डगर निहारौं।
हौं तेरे नाम के ऊपरे मेरा तन मन वारौं ॥ १ ॥
मेरा घट में तलफता जैसे घन विन मोरा।
लगत पियारा मित्र सौं जैसे चंद चकोरा ॥ २ ॥
वरषा विन दादर दुखी निरधन धनकाजा।
जनकी या गति जानके बुझावो दाझा ॥ ३ ॥
करणी दिशा न देखियो पूरण अविनासी।
शरणां की प्रतिपालियो नहिं तो विरद लजासी ॥ ४ ॥
धीरप दे अपनो करो विरहा विश्वासो।
फनीराम कूं दरस द्यो मेटो सब साँसो ॥ ५ ॥

राग परभाती।

पद १२६

जाग पियारे अब क्या सोवै, रैण गई दिन काहे कूं खोवै टेर.
जो जाग्या सो माणक पाया, मैं मंद भागण सोय गमाया ॥ १ ॥
पियोजी चतुर मैं मूरख नारी, पियाजी की सेज कबू न सँवारी ॥ २ ॥
मैं भोली भोलापण कीनो, भरजोबन में नाम न लीनो ॥ ३ ॥
कहै कबीर मन तानक तैया। तज अभिमान मिलै रामैया ॥ ४ ॥

पद १२७

हिल मिल मंगल गावो मेरी सजनी। भयो परभात बीतगई रजनी। टेर.
नाटक चेटक तजदे फेना। सतगुरु शब्द साँच गहलेना ॥ १ ॥
अमृत वेली मीठा फल लागा। चाखैगा कोई संत सुभागा ॥ २ ॥
उर्ध शिखर तहाँ फूली फुलवारी। मनसा मालन करै रुखवारी ॥ ३ ॥
कहै कबीर गुरु रामानंदा। उनकी कृपा मोय भया अनंदा ॥ ४ ॥

पद १२८

श्रीगोविन्द परमानन्द भक्तन हित कारी । टेर.
दीनबंधु दामोदर मधुसूदन मुरलीधर विश्वनाथ विश्वंभर व्रजपति वनवारी ॥ १ ॥
जनपर जब परत भीर तुरत धरत नर शरीर क्षणभरमें हरत पीर साँवरो विहारी ॥२॥
टेऱ्यो झट दीनगज धाये झट खगपति तज धन्य धन्य गरुड़ध्वज भक्तनभयहारी ॥ ३ ॥
दुःशासन दुष्टराज नग्न करन चहत आज देखरह्यो सब समाज लाज भय विसारी ॥ ४ ॥
करुणाकर कष्टहरन वीरोत्तम धीरधरन अब तो हूं चरण शरण हैं प्रभुतिहारी ॥ ५ ॥
वेग आय लोवचाय नहिं तो यह लाज जाय फिर तुम कहाकरिहो आय जब ना रहै सारी ॥६॥
हेगोविन्द हेगिरधर हेयदुपति हेश्रीधर ऐसे कही आंसुभर द्रौपदी पुकारी ॥ ७ ॥
खगपति हो सवार धाये यशोदाकुमार वधादियो पट अपार झटपट असुरारी ॥ ८ ॥
धन्य धन्य ज्ञानवान भक्तों ये तुमसुजान जगमें को प्रभु धर्मध्वजाधारी ॥ ९ ॥
जो जन है परम भक्त हरिहरि दिनरात जपत उनको नहिं देख सकत दामोदर दुखारी ॥१०॥

पद १२९

दीनदुखहरन देव सन्तन सुखकारी । टेर.
अजामेल गीध व्याध इनमें कहो कौंन साध पक्षीहू पद पठात गनिकासी तारी ॥ १ ॥
ध्रूके शिर छत्रदेत प्रह्लादको उबार लेत भक्तहेतु बांधसेतु लंकासी जारी ॥ २ ॥
तंदुलसें रीझजात शाक पात तें अघात गिनत नाहिं झूटे फल खाटे और खारी ॥ ३ ॥
गजको जब ग्राह ग्रस्यो दुःशासन चीर खस्यो सभावीच द्रौपदी कृष्णको पुकारी ॥ ४ ॥
इतने ही हरि आयगये वचन आरूढ़ भये सूरदास द्वार ठाढ़ो आंधलो भिखारी ॥ ५ ॥

पद १३०

तूँ दयालु दीन हूँ तूँ दानी मैं भिखारी ।
हूँ प्रसिद्ध पातकी तूँ पापपुंजहारी । टेर.
नाथ तूँ अनाथ को अनाथ कोन मोसो ।
मो समान आरत नहीं आरत हर तोसो ॥ १ ॥
ब्रह्म तूँ हूँ जीव तूँ ठाकुर हूँ चेरो ।
तात मात गुरु सखा तूँ सब विधि हित मेरो ॥ २ ॥
तोहि मोहि नाते अनेक मानिये जो भावे ।
ज्यों त्यों तुलसी कृपालु चरण शरण पावे ॥ ३ ॥

पद १३१

देव दीनको दयालु दानी दूसरो न कोई ।
जाहि दीनता सुनाय दीन देखों सोई । टेर.
मुनि सुर नर नाग असुर साहिब तो घनेरे ।
जोलों तोलों रावरे न नेक नैन हेरे ॥ १ ॥

त्रिभुवन तिहुं काल विदित वदत वेद चारे।
आदि अंत मध्य राम साहिबी तुम्हारे॥ २॥
पाहन पशु विटप विहंग अपने करलीने।
महाराज राज दशरथ के रंक राव कीने॥ ३॥
तोहि मांग मांगनो न मांगनो कहायो।
सुन स्वभाव शील सुजस जाचन जन आयो॥ ४॥
तूँ गरीब को निवाज हूँ गरीब तेरो।
एक बेर कहो कृपालु तुलसीदास मेरो॥ ५॥

पद १३२

मोसम कोन कुटिल खल कामी।
तुमसे कहा छिपी करुणानिधि तुम उर अंतर्यामी। टेर.
भरभर उदर विषय रस पीवत जैसे शूकर गामी॥ १॥
जो तन दियो ताहि विसरायो ऐसो लूण हरामी॥ २॥
जहाँ सत संग तहाँ अति आलस विषयन संग विरामी॥ ३॥
श्रीपतिचरण छोड ओरन की निशिदिन करत गुलामी॥ ४॥
पापी कोन बड़ो है मोसम सब पतितनमें नामी॥ ५॥
कीजै कृपा दास तुलसी पर सुनिये श्रीपति स्वामी॥ ६॥

पद १३३

मोसम कोन अधम अज्ञानी। टेर.
हम हमके बस प्रभु नहिं हेरे भयो देह अभिमानी॥ १॥
सेवत विषय भोग निशिदिनमें उलटे फास फसानी॥ २॥
धन धन कर ऊमर सब बीती तृष्णा नाहिं अघानी॥ ३॥
लाख सुनी मानी नहिं एकहु साधु संतकी वानी॥ ४॥
आपे की कछु सुधि नहिं राखी तक तक आस विरानी॥ ५॥
निरभैराम यह पंचरंगी चादर होत पुरानी॥ ६॥

रागटोडी।

पद १३४

एक राम विन अवर न मानूं मेरे सतगुरु यों फरमाया है। टेर.
पाणी की भींत पवन का थंभा दशमुख भवन बनाया है॥ १॥
देवी देव चंद रवि राया सबही हरि उपजाया है॥ २॥
भक्ति किवी जाँ किया चोगणा मूरख मूल ठगाया है॥ ३॥
दारा दोलत संग न साथी ना संग सुंदर काया है॥ ४॥
विष्णुदास प्रभु तुम्हारे मिलन को हरि चरणां चित लाया है॥ ५॥

पद १३५

सतगुरु कह समझाया हो ।
परम पुरुष विन ओर न परतूं पीव निरंजनराया हो । टेर.
सवसे ऊपर मेरा साँईं तापर कोई न वताया हो ।
मनसा वाचा और कर्मना वाही से चित लाया हो ॥ १ ॥
घटधारी सें प्रीति न मेरी जो अवतार कहाया हो ।
वे हम भया बंधु आप में एके जननी जाया हो ॥ २ ॥
ब्रह्मा विष्णु महेश विचारा वहाँ लग जाण न पाया हो ।
वाजी माहिं बीच ही अटके मोहलिये सव माया हो ॥ ३ ॥
जहाँ गये गोरख भरथरी तहाँ धूप नहिं छाया हो ।
जहाँ कबीर गुरु दादू पहुंते सुंदर वे दिस ध्याया हो ॥ ४ ॥

पद १३६

तुम सुणियो नाथ वीनती दयालु दीनकी । टेर.
पूरण ब्रह्म परमातम आगम ओपम सागरकी ।
भीड़ पड़ी जब द्रौपदी में पत राखी है नागर की ॥ १ ॥
भक्तवछल थांरो विरद है पत राखजो जनकी ।
तुमसे का छिपाउं नाथ वात जो मरम की ॥ २ ॥
अविगत थारी लखी न जावे रूप वरण की ।
दीन कहै मोहि राखो नाथ शरण चरण की ॥ ३ ॥

पद १३७

मैं सुण्यो नाथ नाम तेरो पतितपावन को । टेर.
व्याध गीध भालु कीस सजन से कसाई ।
गनिका कुब्जा भीलणी निज धाम को पठाई ॥ १ ॥
डूवतही गजराज अरध नाम उच्चर्यो ।
प्यादे ही उठ धाये काज चक्रसों कर्यो ॥ २ ॥
अनेकही अधम उधारे नाम नरहरी ।
दीनको उधारवेकी ढील क्यों करी ॥ ३ ॥

राग जैजैवंती ।

पद १३८

दीनबंधु दीनानाथ काहेते कहाये हो । टेर.
कैसे तुम द्वारिका में द्रौपदी की टेर सुनी ।
कैसे गजराज काज नंगे पाँव ध्याये हो ॥ १ ॥

कैसे तुम गनिकाके औगुण विसारे नाथ।
कैसे तुम भीलनीके झूठे बेर खाये हो ॥ २ ॥
कैसे तुम भारथ में भीष्म को प्रण राख्यो।
कैसे वसुदेवजीको बंधन छुडाये हो ॥ ३ ॥
करुणा निधान कान्ह मेरी बेर बूँदे कान।
अशरण शरण श्याम सूर मन भाये हो ॥ ४ ॥

पद १३९

दीनबंधु दीनानाथ मेरी सुध लीजिये। टेर.
सोने को सोनैयो नाहीं रूपे को रूपैयो नाहीं।
कोडी पैसो पास नाहीं विणज कासूं कीजिये ॥ १ ॥
भाई नाहीं बंधु नाहीं कुटुम्ब कबीलो नाहीं।
ऐसो कोउ मित्र नाहीं जाके पास जीजिये ॥ २ ॥
हाट औ हवेली नाहीं चोवारा औ महल नाहीं।
ऐसो कोउ मंदिर नाहीं जामें वास दीजिये ॥ ३ ॥
कहत है मलूकदास छांडदे बिड़ानी आस।
हरिको भजन कर हरिमें समीजिये ॥ ४ ॥

पद १४०

लाखां वातां तारसी भरोसो रघुवीर को। टेर.
द्रुपदसुताकी लज्जा राखी पार न पायो उन चीरको ॥ १ ॥
रंका ताऱ्या वंका ताऱ्या कुल ताऱ्यो काल्लू कीर को ॥ २ ॥
केता ताऱ्या पार नहिं पाऊं ताऱ्यो छै अधम अहीर को ॥ ३ ॥
जाझूराम कहै बालद लाये दालद हऱ्यो जी कबीर को ॥ ४ ॥

पद १४१

केसां हो दीनानाथने मनड़ारी बातां केसां हो रघुपति नाथने। टेर.
ज्ञान ध्यानसुं गुंज करांगा सतसंग मांग मांग लेसां हो ॥ १ ॥
दिलका दलीचा उरका ओसीसा खमाजी खमाजी करलेसां हो ॥ २ ॥
राजरो मिलाप खुशी दिन भावे हाजर हजूर हुय जासां हो ॥ ३ ॥
दीन कहै लवलीन भजन में तन मन थांपर वारवार देसां हो ॥ ४ ॥

राग सारंग।

पद १४२

समझ बूझ दिल खोज पियारे आशिक हो फिर डरणा क्यारे। टेर.
सतगुरु बांण विरह का मान्या घायल होय फिर सोणा क्यारे ॥ १ ॥

जो तोरे नैणा में नींद सतावै तकिया और बिछोणा क्यारे ॥ २ ॥
जो तोरे मनमें क्षुधा सतावै लूखा और सलूणा क्यारे ॥ ३ ॥
जो तूं आया प्रेम गलीमें सीस दिया फिर रोणा क्यारे ॥ ४ ॥
साह्व सेन फकीर साँईदा जादू ऊपर टूणा क्यारे ॥ ५ ॥

पद १४३

साजन हो तेरे संग चलूंगी फेंट पकर इक बात कहोंगी । टेर.
जो शिर काटो तो अंग न मोडूं प्राण जाय तोइ प्रीति न तोडूं ॥ १ ॥
प्रीति पुराणी नेह नवेलो बिछुरन है पण सिलन दुहेलो ॥ २ ॥
काजी मुहम्मद चेरी में तेरी बल जल भई भस्म की ढेरी ॥ ३ ॥

पद १४४

आव सलोंना मोहि देखन देरे पल पल मैं बलिहारी तेरे । टेर.
सब गुण तेरा अवगुण मेरा पीव हमारी आहन लेरे ॥ १ ॥
आव पिया अब सेज हमारी निशिदिन देखूं मैं वाट तुम्हारी ॥ २ ॥
सब गुणवंता साहिब मेरा लाड गहेला जन दादू केरा ॥ ३ ॥

पद १४५

राते माते नाम तुम्हारे काहेकी परवा है हमारे । टेर.
झिलसिल झिलसिल नूर तुम्हारा परगट खेलै प्राण हमारा ॥ १ ॥
नूर तुम्हारा नैणा माहीं तनमन लागा छूटे नाहीं ॥ २ ॥
प्रेम मगन मतवारे माते रंग तुम्हारे दादू राते ॥ ३ ॥

राग मलार ।

पद १४६

वहोनी वाला कोन विरद की लाज ।
जे तुम सहो कसोटी हितकी निरणो निकसै आज । टेर.
मैं अति दुखित दीन गुरु द्विजवर अशरण शरण तुम्हारो ।
तुमसैं एक भक्ति को नातो थोरो घणो विचारो ॥ १ ॥
सांची कहुं सुणो दुरवासा मोरी सुरत स्वतंत्र नाहीं ।
मोहि भक्ताँ ऐसे वस कीनो कीर पींजरा माहीं ॥ २ ॥
भक्त के हितकी खबर पड़ी जब भागो मनको भोर ।
अग्रदास साचा हरिजनकी सार भज्यां कछु है ओर ॥ ३ ॥

पद १४७

सुण्यो मैं भक्तवत्सल विरद तेरो ।
जनकी घटै सौ तुम्हारी घटत है मान वचन सत मेरो । टेर.

जन प्रह्लाद खंभसे वांध्यो असुर चहुं दिशि घेरो।
खंभ फाड़ नरसिंह हुय प्रगटे नखसें उदर विदेरो ॥ १ ॥
द्रुपदसुता को आण सभा विच खांच्यो चीर घणेरो।
वाको चीर अनत लग वधियो दुष्ट पच्यो वहुतेरो ॥ २ ॥
स्याल कूं छोड शरण आयो सिंघकी कहाँ रह्यो भय नेरो।
निरभै रहै ताकूं भय नाहीं सवलै वास वसेरो ॥ ३ ॥
कर करुणा हरिजन यूं विनवै हरि कर ऊपर मेरो।
कहै रैदास शरण सतगुरु की जन्म जन्म को चेरो ॥ ४ ॥

पद १४८

माया रंग वादलीरे जामें हरि चंदा दीसै नाहिं। टेर.
लोभ मोह के वादल छाये गरज रह्यो अहंकार।
तृष्णा विजली चमकन लागी भीज रह्यो संसार ॥ १ ॥
काम क्रोध की नदियां चलत हैं गहरी वहै चौधार।
पीर पैगंवर और अवलिया वहगया ऊंडी धार ॥ २ ॥
ज्ञान पवन जव छूटण लागी वादल दिये उडाय।
कहत कवीर जब फूली कमोदिनि चंदो निकस्यो आय ॥ ३ ॥

पद १४९

लटको छोड़दे रे जोगिया असल फकीरी धार। टेर.
पत्थर पूज्याँ हरि ना सिले रे सब कोइ पूजो जाय।
पूजोनी घररी घरटियां सब जग पीस रु खाय ॥ १ ॥
मूंड मुडायाँ हरि ना सिले रे सब कोई लेवो मुंडाय।
छठे महीनें लूणे गाडरी सो कांई अमरापुर जाय ॥ २ ॥
न्हायाँ धोयाँ हरि ना सिलेरे सब कोई लेवोनी न्हाय।
जलमें न्हावे माछली सो कांई अमरापुर जाय ॥ ३ ॥
राख लगायाँ हरि ना सिलेरे सब कोई लेवोनी लगाय।
लुटे गधेड़ा राखमें सो कांई अमरापुर जाय ॥ ४ ॥
नागा हुयाँ हरि ना सिलेरे सब कोई नागाहुय जाय।
नागा फिरे पशु जिनावरा सो कांई अमरापुर जाय ॥ ५ ॥
लिया पातरा हाथमें रे घर घर अलख जगाय।
दास कबीर की वीनती हरि सुमरो लिवलाय ॥ ६ ॥

पद १५०

कोइ नाहक कष्ट करावै विन राम मुक्ति नहि पावै। टेर.
कोइ लटक अधोमुख झूलै कोइ धूम्रपान कर फूलै।
कोइ पंचा अग्नि जलावै सो राजपाट को पावै।

काशीमें करवत सारे कोइ नींद भूख तिस मारे।
दे ग्रहण समय गऊदान करे सनमानक मनमें भावै ॥ १ ॥
कोइ करत गुफा में वासा वाके बहु जीवन की आसा।
कोइ नग्न होय कर डोलै कोइ मौन पकड़ नहिं बोलै।
कोइ वन वन फिरत उदासा वाके मनमें और ही आसा।
आसा जो अपनी फिरे जन्म बहु धरैक चौरासी में जावै ॥ २ ॥
कोइ देत बहुत तन त्रासा वनमें रहे होय निरासा।
कोइ गलै हिमालय माहीं सो स्वर्ग लोक को जाहीं।
कोइ कंद मूल फल खावै उद्भिज का जीव संतावै।
तनको देत सुकाय करे दुख दाय ले हाथ चढ़ावै ॥ ३ ॥
कोइ च्यार धाम फिरि आवै मुक्ति को राह नहिं पावै।
कोइ तीरथ सेवे जाई वाकी आसा अंबर माँई।
कोइ झंपापातहि लेवै सुतहेत देहको देवै।
सो फलहीको पाय मरे दुखदायक जन्म गमावै ॥ ४ ॥
कोइ शकुन सरोधा मानै ओरन को भरम वखानै।
कोइ होम जाप मख लावै कोइ अनुष्ठान ठहरावै।
कोइ आनदेव को ध्यावै वह पशुवा पशू चढावै।
वो लै सिर वदला धरै नरक में पडे क जमपुर जावै ॥ ५ ॥
ये रामसनेही साधू जिन झेल्यो धर्म अनादू।
जिन झूठी तज बकवादू इक रामनाम धन लादू।
गुरु रामदास शरणाई जन पीथल वलि बलि जाई।
गुरु कन्हीराम महाराज भक्ति की जाज शरण में आवै ॥ ६ ॥

पद १५१[1]

देखोनी साधो नावमें[2] नदियाँ[3] डूबीजाय[4] कहा कहों समझाय। टेर.
एक अचंभा हमने देखा कूंएमें[5] लगगई लाय[6]।
पाणी कचँरा[7] सबही जलगया मछी[8] होगई स्यांय[9] ॥ १ ॥

---

१ श्रीकबीर साहिब नामदेवजी सुन्दरदासजी आदि महात्माओंकी बाणीमें विपर्यय अंग है। परन्तु वाममार्गी (कूंडापन्थी) वेसिरपैर के ऊटपटांग मन घडंत शब्द बनाकर कवीरसाहब आदि महात्माओंकी छाप लगा देते हैं और उनका ऊल जलूलही अर्थ किया करते हैं। उनके अनुयायी उन्हीको पंडित ब्रह्मज्ञानी व साध मानते हैं। दूसरे चाहे षट्शास्त्रनिष्णात पूर्ण महात्माही क्यों न हो उनको स्थूल कहते हैं।

२ ज्ञान। ३ आशा आदि। ४ समाना। ५ अन्तःकरण। ६ ज्ञानाग्नि। ७ मल-विक्षेपादि आवरण। ८ वृत्ति। ९ स्याह अर्थात् वृत्तिका वदल जाना।

कीड़ी[1] चाली सांसरे[2] नैव[3] मण काजल सार।
हस्ती[5] वाके गोदं[6] में ऊंठलियो[7] लंलकार[8] ॥ २ ॥
जंल[9] जाई थंल[10] ऊपनी जल में कियो न पाप।
एक अचंभो देखियो बेटी[11] जायो बाप[12] ॥ ३ ॥
घड़ो न डूबै बेड़ियो हंस्ती[13] मल मल न्हाय।
कोट[14] कांगरे पाणी आयो पक्षी[15] प्यासा जाय ॥ ४ ॥
सांसू[16] कवारी वंहूं[17] हमल में नणंदल[18] फेरा खाय।
देखण[19] वाली पुत्र[20] जन्मियो पाडोसण[21] हालोगाय ॥ ५ ॥
अंडा[22]था जब बोलता बच्चा[23] बोले नाहिं।
पंडित होय सो अर्थ करै अज्ञानी गम नाहिं ॥ ६ ॥
बेटी[24] पूछै बापने[25] अणजायो वर लाव।
अणजायो वर नां मिलै तोरे मोरे ब्याव ॥ ७ ॥
कहत कबीर सुणो भाइ साधो साची कहुं समझाय।
या पद को कोइ अर्थ विचारै तो सहज मोक्ष मिल जाय ॥ ८ ॥
इति।

अथ विनय-वैराग्योपदेशमंजरी।

जय जगवंदन नंद के नन्दन पांडव स्यंदन हांकनहारे।
चर्चित चंदन कष्ट निकंदन ग्राह गयंदन ग्राह विदारे ॥
इंद्र फनिंद्र कविंद्र मुनींद्र रु छन्द गुणीगन वृन्द उचारे।
आनंदकंद गोविंद मुकुंद करो दुख द्वंद निकंद हमारे ॥ १ ॥

कवित्त।

जनम गमायो राम नामको न गायो कबु कीनो ना उपाय भवसिंधु के तरन को।
शरण में जैहो कौन वदन दिखैं हों हाय औगुण भरैं हों गुण एको ना शरन को ॥
रसिक विहारी है न आपको भरोसो रंच को सहाय शोकनद पार के करन को।
परो मजधार बीच हों तो निराधार अब एक ही अधार रघुराय के चरन को ॥ १ ॥

---

१ सूक्ष्मवृत्ति। २ आत्माका संग। ३ नवतत्व। ४ दग्ध होजाना। ५ निजमन। ६ एकता। ७ मिथ्या अहंकार। ८ सूक्ष्म शरीर। ९ अन्तःकरण जलाशय में प्रेमजल। १० स्थूल वैराट। ११ माया। १२ जीव। १३ मन। १४ नेत्र। १५ शुष्क-वेदान्ती। १६ शुद्ध सत्वगुणी माया। १७ अविद्या जीवकी स्त्री। १८ वासना। १९ बहिर्मुखवृत्ति। २० अज्ञान। २१ बैखरी बाणी। २२ जिज्ञासू। २३ पूर्ण। २४ माया। २५ ब्रह्म।

एक ही भरोसो उर आवत खरोसो यह उपल निषाद गीध अधम विचारे हैं।
शबरी औ शाखामृग रीछ कौन वेदपाठी जाते इनऔर कृपा कोरते निहारे हैं॥
दीन हैं पियारे दीनबंधु को स्वभाव मृदु रसिक विहारी सोही रक्षक हमारे हैं।
काहू ते न घाट पातकी हों क्यों तजेंगे मोहि वेगि अपने हैं जो पे इतने उधारे हैं॥२॥
व्याधहूते विहद असाध अजामेलहू ते ग्राह ते गुन्हाइ कहा तिनमें गिनावोगे।
शवरीहूँ न सिद्धहूँ न केवट कहूंको त्या न गौतम त्रिया वामें पगधर आवोगे॥
रामसों कहत पदमाकर पुकार तुम मेरे महा पापन को पार हू न पावोगे।
सीता सी सती कूं तजी झूठोइ कलंक सुन साचो मैं कलंकी ताहि कैसे अपनावोगे॥३॥
दाराके कुबोलन को झोंकसो गलेमें तोक हाथ हथकरी परी लोभ की बनायके।
सुत औ सुताकी ममता के मद पाके सू रही है जालिम जोर जंजीरें जकरायके॥
काम क्रोध पाहरु सो काढ़त कृपानसीस गाढ़ो कैदखानो घर घेरो दाव पायके।
हे हरि कितेहो कबी हित सूं हितेहो अब ऐसी ही वितैहो कि चितेहो चित लायके॥
काम क्रोध लोभ मोह मान मद भट नाना जिनके सरवरकी कहाँलों सेन जोरोगे।
तृष्णा है अपार कहूं पार को न पारावार कौन के निकेत सेतु करिवेको छोरोगे॥
सकलपाप ईशन को ईश हूं कृपानिधान मंत्री है कुवोध ताहि कौनविधि फोरोगे।
अघको अमोघ गढ वंका है बुलिंद मेरे लंका हत नाहिं ताहि डंका दे तोरोगे॥५॥
रावरो कहावों गुण गावों राम रावरोई रोटी द्वै हों पावों राम रावरी हि कानि हों।
जानत जहान मन मेरेहू गुमान वडो मान्यो मैं न दूसरो न मानत न मानि हों॥
पांचकी प्रतीति न भरोसो मोहि अपनोई तुम अपनाइ हो तबही परि जानि हों।
गढ़ि गुढ़ि छीलिछालि कुंदकीसी भाई वातें जैसी मुख कहो तैसी जीय जब आनि हों॥६॥
वेदकूं छदामा धना जाट राख्यो कामा छींट रंगबेको नामा सो प्रणामी के उधारो है।
आपकी हजूर सेना राख्यो है हजामतको जूती तंग तोबराकूं रविदास जिन भारो है॥
कपराकी खातर कवीरा पै कृपा करी कारीगर जान अति भवसागर तारो है।
एते जन तारे तब कोन पें अहसान कियो विना भक्ति तारो तो तरिबो तिहारो है॥७॥
तारे प्रहलाद जन तात हू की घात सही तारे तुम ध्रुव सो तो बारो तन गारो है।
तार्‍यो तुम मोरध्वज पुत्र पर धर्‍यो हरि तार्‍यो हरिश्चंद्र सोतो नेकहू न हारो है॥
निपट निरंजन कहै भक्त विभीषण तारे सोतो घर फार्‍यो तद लंक भेद पारो है।
जिनही जिन भक्ति करी तिनही कूं तारे तुम विना भक्ति तौर प्रभु तारिबो तिहारो है॥८॥
कर्म खुटेला वरणआश्रम टुटेला मंजु धरम छुटेला जाति पांति ते उठेला है।
दीन को जुटेला और मलीन को लुटेला सदा आन वान कान सान मान ते रुठेला है॥
मनको मुटेला पातकीन को पुटेला चित चाह को चुटेला झूठ यश को झुठेला है।
रसिकविहारी तोहि नीकी भांति जानू राम द्विज को कुटेला भीलनीको तू झुठेला है॥९॥
शवरी अहल्या गणिकादि दुराचारी भारी ऐसी ऐसी घनी अधम कुनारिनको रंगी तू।
वायस निषाद गीध राक्षस अपावन ये गज कपि रींछ भूरि कूरन को अंगी तू॥

काम क्रोध लोभ मोह विवस मलीन दीन दुःखित दरिद्री इमि रागिन को ढंगी तू।
रसिकविहारी भली भांति पहिचानों राम हों तो तोहि जानूं हूं सदातें नीच संगी तू॥ १०॥
कूबरा कसाई जाट कीर डूम नाई कोली छीपा रु चमारन की भक्ति मन भाई है।
गूजर गवारन कूं संगले विहार कियो ताकी तो पुरानन में कथा व्यास गाई है॥
गनिका और भीलनी को तारी सो प्रसिद्धवात दासी को खवासी खासी ऐसी चतुराई है।
नीचको निवाजवे की तुमही को परी बान मेरी जात ऊंच प्रभु काहे को बनाई है॥ ११॥
गोकुल में जन्म लीनो जल जमुनाको पीनो सुवल सुमीत कीनो जाको जग जाप है।
भनत मुरारी जाकी जननी जसोदा जैसी उद्धव निहार नंद जैसो तेहि बाप है॥
काम बामते अनूप तजी व्रजचंद मुखी रीझ्यो संग कूबरी कुरूप सो अमाप है।
नेह वीर नयको न पंचतीर, भय को न वयको न पूतना के पय को प्रताप है॥ १२॥

दोहा।

पंगुल गूंगो रोग युत वनिक क्षुधातुर जीव।
भय युत बालक प्रिय अचख सुनत अनाथ सदीव॥ १॥

छप्पय।

पंगु कुब्जा संपाति गुंग जमलार्जुन गावत।
रोगी माधवदास वनिक तिरलोचन ध्यावत॥
क्षुधित सुदामा विप्र भीत युत व्रजकी भामिनि।
बालक ध्रुव प्रहलाद अवल द्रुपदादिक कामिनि॥
है अंधसूरलों हम सुने हाथ विके तिनके हरी।
जग के निवास सब गुननयुत स्वरूपदास विनती करी॥ १॥

कवित्त।

ज्ञान औ विराग दोउँ पायन विनाहू पंगु भक्ति रसना ते हीन गूंगहू निहारोगे।
त्रिधा ताप रोगी कर्म वानिज वनिकहूं मैं भूखो दसधाको केउ जन्म को विचारोगे॥
काल भीति बालबुद्धि आत्मा है अबला औ अंध तत्त्व अंजन के विनाहु नेक धारोगे।
एक अंग के अनाथ ताके विके सुने हाथ आदि अंत में अनाथ नाथ क्यों विसारोगे॥ १३॥
मनसे महीपति के मुंशी मतंग मोह मदनं महुर्रिरकी मदत मतवारी है।
क्रोध कोतवाल लोभ नाजर की मिसलत ज्ञान मुद्दई की जिन मिसल विगारी है॥
अहंकार अहलमद करत ना रपोट भली तृष्णा चपरासी की दस्तग नित्त जारी है।
दीन की दरख्वास्त यही डिगरी न होवै केशव अरजी हमारी आगै मरजी तुम्हारी है॥१४॥

गीत।

अद्भुत नाथ न लोपै आज्ञा इन्द्र ब्रह्मा शंकर ले आप।
भावतणो लोंदारो भूखो बांदारो बांदो मा बाप॥

कोटि २ ब्रह्मांड़ जो करता कोटि २ दैत्योंका काल।
बोलांरो साचो निरबंधण गोलांरो गोलो गोपाल॥
ईश्वर दखां अचंभो आवै घट सूरापण निपट घणो।
ठावो सकल सकलरो ठाकुर तूं चाकर चाकरां तणो॥
दास ब्रह्म झूठ नहिं दाखै केशव अर्ज सुणो दे कान।
तिलोचंद घर रह्यो टहलवो छींपे तणी छजाई छान॥ १॥

कवित्त।

रूठै क्यों न राजा तातें सरे नहीं काजा एक तूसे महाराजा और कौन को सराहिये।
रूठै क्यों न भाई तातें कछु ना वसाई एक तू ही है सहाई और कौन पास जाइये॥
रूठै क्यों न मित्र शत्रु तत्त्व आठों याम एक रावरे चरण केरे नेह को निवाहिये।
संसारी ही रूठा एक तूही है अनूठा सब चूमेंगे अगूंठा एक तू न रूठा चाहिये॥ १॥

दोहा।

जितने तारे गगन में, तितने वैरी होय।
कृपा होय श्रीराम की, बाल न बाँको होय॥ १॥
कहा करै वैरी प्रबल, जो सहाय रघुवीर।
दश हजार गज बल घट्यो, घट्यो न दश गज चीर॥ २॥
सांई टेढी अख्खियां, वैरी खलक जहान।
टुकेक झोला महरदा, लख्खों करै सलाम॥ ३॥
लग्न मुहूरत योग बल, तुलसी गनतन काहि।
राम भये जेहि दाहिने, सबे दाहिने ताहि॥ ४॥
गंगा जमुना सरस्वती, सात समुद्र भरपूर।
तुलसी चातक के मते, विन स्वाती सब धूर॥ ५॥
सीतापति रघुनाथजी, तुम लग मेरी दौड़।
जैसे काग जहाज को, अंत न वाकूं ठौड़॥ ६॥
काहू के धन धाम है, काहू के परिवार।
तुलसी मोसम दीनके, सीताराम अधार॥ ७॥
नहिं विद्या नहिं बाहुबल, नहिं खरचनको दाम।
तुलसी मोसम पतित की, तुम पत राखो राम॥ ८॥
सब देखे परखे लिखे, बहुत कहे क्या होय।
तुलसी सीताराम विन, अपनो नाहीं कोय॥ ९॥
माधव मा भव होहु मम, माधव मम होहु आन।
माधव मेरे उर वसो, सदा सकल सुखखान॥ १०॥
वारन को तारन अहो, वार न लागी तोहि।
वार न कीजै हे प्रभो, वारन भटकन मोहि॥ ११॥

क्या मुख ले विनती करूं, लाज आवत है मोहि।
तुम देखत अवगुण करों, कैसे भाऊँ तोहि ॥ १२ ॥
मैं अपराधी जन्मका, नख शिख भऱ्या विकार।
तुम दाता दुख भंजना, मेरी करो संभार ॥ १३ ॥
मुझ अवगुण है तुझ्झ गुण तुझ गुण अवगुण मुझ्झ।
जो मैं विसरूं तुझ्झ को, तुम न विसारो मुझ्झ ॥ १४ ॥
मोमैं गुण कुछ है नहीं, तुम गुण भरेहो जहाज।
गुण अवगुण न विचारिये, वाँह गह्यां की लाज ॥ १५ ॥
अवगुण किये तो वहु किये, करत न मानी हार।
भावै वंदा वखसिये, भावै गरदन मार ॥ १६ ॥

सोरठा।

कवलों गिणूं कृपाल, मो अवगुण गुण रावरे।
देखहु करन दयाल, गनिकाको सो घूंघटो ॥ १ ॥

दोहा।

हरियो देख हरामड़ो, रोस न कीजै राम।
अब तो तेरो हुय रह्यो, और न मेरे काम ॥ १७ ॥
विड़द तुम्हारो रामजी, लेवहिये महाराज।
हरियै गुण अवगुण किया, तोही तुम कूं लाज ॥ १८ ॥
हरियै अवगुण बहु किया, करत न कोई छेह।
जो तूं अवगुण याद कर, होय न छूटण केह ॥ १९ ॥
हरियै दोषण बहु किया, शंक न मानी काय।
भावै तो मुझ बगसियै, भावै कुंद मराय ॥ २० ॥
काहू के शिर को धणी, कूडा करत कलाप।
हरियै के शिर तू धणी, तूंही माय रु वाप ॥ २१ ॥
जन हरियै की बीनती, सांई करिये कान।
वंदे कूं मुश्किल घणी, साँई तुझ आसान ॥ २२ ॥
हरियै का दिल तुझ्झ सूं, तेरा मुझ्झ सेतीह।
ज्यों सोनो अरु सोहगी सिलिया अग्गेतीह ॥ २३ ॥
हमसा तेरे बहुत है, तुमसा मेरे नाहिं।
हरियो तुझको छांडिके, और न किसपे जाहिं ॥ २४ ॥
पाप किया से मुझ किया, हरिया फेर न सार।
भावै तो मुझ मेटकर, भावै दोज़ख डार ॥ २५ ॥
कलम हमारी रामजी, होय तुम्हारे हाथ।
जनहरियै कूं राखिये, सदा तुम्हारे साथ ॥ २६ ॥

कवीर तेरा जोर न ज़ुलम है, मेरा होय अकाज।
विड़द तुम्हारो लाजसी, शरण पड्यां की लाज॥ २७॥
कवीर अवके जे साँई मिलै, सव दुख अपणा रोय।
पाहण ऊपर शीश धर, कहूँज कहणा होय॥ २८॥
कवीर साँई मेरा सुनहगे, वूझैंगे कुशलात।
उन साँई से कहूंगा, मेरे मनकी वात॥ २९॥
कवीर मो मरने को नेम है, मरूँ तो हरिके द्वार।
कवहू तो हरि पूछि हैं, कौन मर्‍यो दरवार॥ ३०॥
जा मरनें सौं जग डरै, मेरे है आनंद।
कव मरिहौं कव भेटिहौं, पूरण परमानंद॥ ३१॥
साँई तोसों वीनती, भावै भूल मभूल।
करीजिका शिर ऊपरे, करसी जिका कवूल॥ ३२॥
डाल हनै फल कूं भखै, पातन कूं फाड़ेह।
ये अवगुण पंछी करै, तोउ तरवर नहिं ताड़ेह॥ ३३॥
वडे दीनको दुख सुनत, देत दया उर आन।
हरि हाथी सूं कवहुती, कहु रहीम पहिचान॥ ३४॥
मूंड़ चढाये हू रहै, पर्‍यो पीठ कच भार।
रह्यो गरे पर राखिये, तोऊ हिये पर हार॥ ३५॥
हरे चरै तापहि वरै, फरै पसारहि हाथ।
तुलसी स्वारथ मीत जग, परमारथ रघुनाथ॥ ३६॥
राम अवलंव अनन्य गति, राम विना वेहाल।
वाकीलार हरि फिरत है, ज्यों जननी संग वाल॥ ३७॥
लार फिरै रक्षा करै, गिरत पकरलै वाँह।
जनि[1] दुख पावै दास मम, यों जानै मन माँह॥ ३८॥
दो पैंड हरि सन्मुख चले, हरि आवत पैंड पचास।
ज्यों जननी लघु वालकी, दोरि के आवत पास॥ ३९॥

टीका—जैसे माता ऊपरी पर काम करै है नीचे घर में वालक खेलै है, जहां ताऊ वालक अपने ख्याल में मग्न है तहां ताऊ माता भी चुपचाप होरही है। जब वालक कों भूख लगी तव रोवण लाग्यो तव माता भी दिलासा देने लगी। जव वालक सीढी के नजदीक आयो तव माता को चिंता उपजी सो देखन लगी, जव वालक एक दोय सीढी पर चढ्यो तव तो माता के धोखो भयो। अव जो गिरेगो तो हाथ पांव टूट जायगो। तव तो माता ऊपर सूं बहुत सीढी उतर के वालक कूं कंठ लगाय लेत हैं।

---

1 तुम आवो डग आठभर, हम आवें डग साठ।
तुम मे करड़े काठ से, हम लोहे की लाठ॥ १॥

दृष्टांत—तैसे माता की नांई नारायण है, सो भी सब के ऊपर अपनो स्वस्वरूप में वर्ते है। और जीव जो है सो नारायण को अंश है तातें बालककी नांई अज्ञ है, सो नीचे संसार में स्त्री पुत्रादि विषय ख्याल में जबताऊ आत्मसक्त होय रह्यो है तबताऊ नारायण हू याकी उपेक्षा कररह्यो है, जब जीव के बालककी नांई विषय सूं वैराग्य भयो अरु नारायण की चाह भई तब विरह करिके रोवणे लाग्यो तब माता की नांई नारायण हू गुरू शास्त्रद्वारा जीव कूं समझावणे लाग्यो जब जीव बालक की नांई भगवत् प्राप्तिका साधनरूप सीढी के नजीक आयो तब माता की नांई नारायणहू जीवपर कृपादृष्टी सूं देखने लाग्यो जब जीव बालककी नांई एक दोय साधनरूप सीढीपर चढ्यो तब माता कीसी नांई हरि दोरिके अंग लगावे है।

नित्य स्वाधीन स्वल्पमूल्य के, मन रुचि जाणन हार।
ऐसे सेवक हरि दिये तैं, भज्यो न ताहि गंवार ॥ ४० ॥

टीका—स्वल्पमूल्य=सेर नाजके १४ चाकर हैं, सेर नाज कूंभी सब ही बांटि खावै है, झगर नहिं मरै है। काम ऐसो करै है हजार रुपिया का चाकर सूं भी नहीं होय। धर्म अर्थ काम मोक्ष जो मन चावै सोई अर्थ कूं साधी देत हैं तातें देखरे गंवार जीव! परम दयालु नारायण ने ऐसा सेवक दिया तो भी उन सेवकोंसेई सेवा नारायण की नहीं कराई, तू तो करेई काय की।

पकरि रह्यो प्राणां कूं, अरु प्रेरत इंद्रियग्राम।
सहायक सब व्यवहार में, भजत न लूण हराम ॥ ४१ ॥

टीका—देहरूप फूटा पिंजरा में चंचल प्राणरूप पक्षी कूं पकड़ रह्यो है तातें प्राण ठहर रह्यो है। नहीं तो कबकोई कोइ द्वार होके निकस जातो। फेर श्वासारूप करके बाहर जावे है तोभी शिकारी बाज की नांई ज्यांको खेंच्यो फेर उलटि के ठिकानेपर आय बैठे हैं नहीं तो नारायण विना पवन कूं पीछो फेरने वालो कौन है? ऐसे सब इंद्रिय समुदाय कूं आप आपके व्यवहार में नारायण प्रेरे हैं।

झूलणा.

देह आज पड़ो चाहै काल पड़ो दिन च्यार पड़ोजी झड़ाक झड़ेगी।
पांच पचीस पचास पड़ो दस तीस पड़ोजी खडाक खड़ेगी॥
ऐस पड़ो भावे पोर पड़ो परार पड़ोजी दड़ाक दड़ेगी।
दीन कहै कहा देहको सोच है सो वरष रहै तोही देह पड़ेगी ॥ १ ॥
फिट फिट्ट कहै दुनि घट्ट तेरा इस घट्ट का घाट घड़ायगाजी।
खट पट्ट तें खेद वधाय रहा झटपट्ट सिताव झड़ायगाजी॥
केई कूड़ कपट्ट निपट्ट करे अवधूत अपट्ट अड़ायगाजी।
साँइ दीन दपट्ट झपट्ट कहै जी जन्म जंजीर झड़ायगाजी ॥ २ ॥
जिव थेट के सूलतो भूलगया यहाँ पेट के काज भटकता है।
वहो कूड़ कपट्ट झपट्ट रह्या लालच्च लपट्ट लटकता है॥

हराम के काम तो बोत करे साहब्ब के नाम अटकता है।
सांई दीन कहै आखड़ मती पकड़ के काल पटकता है ॥ ३ ॥

सवैया।

गर्भ चढे पुनि सूप चढे पलना पे चढे चढे गोद घना के।
हाथी चढे फिर अश्व चढे सुखपाल चढे चढे जीमें घना के ॥
बेरी औ सित के चितचढे कवि ब्रह्म भने दिन वीते पना के।
ईश कृपालुको जान्यो नहीं अब कांधे चढे चले चार जनाके ॥ ४ ॥
पेट में पोढ़के पोढ़े मही जननी संग पोढ़ के बाल कहाये।
त्योंहि त्रिया संग पोढ़न लागे तो सारी निशा हंस खेल गमाये ॥
क्षीरसमुद्र के पोढ़ न हारेको ध्यान कियो न कभी चित लाये।
पोढ़त पोढ़त पोढ़ रहे तो चितापर पोढ़न के दिन आये ॥ ५ ॥
देह अचेतन प्रेतदरी रज रेत भरी मल खेत की क्यारी।
व्याधि की पोट अराधिकी ओट उपाधिकी जोट समाधिसे न्यारी ॥
रे जिय देह करे सुख हान इते पर तो तोहि लागत प्यारी।
देह तो तोहि तजेगी निदान पें तूहि तजे किन देहकी यारी ॥ ६ ॥
विक्रम भोज दधीचि भखे बलि करण कुबेर जिसा थिर नाईं।
भीषम द्रोण भखे दुर्योधन पंचहु तत्व समुद्र सुखाई ॥
वेद कतेब पुकार कहै नर जीमगईं अवतार सदाईं।
खायगई सगरे जगकूं इक मोत निगोडी को मोत न आई ॥ ७ ॥
जलमें उपज्यो जलमाहिं रह्यो जल पोखत है जल छूवत नाहीं।
तापक जो रवि सोषत है नित कंज ज्यूं ताहि देख्यां विकसाहीं ॥
तैसे यो जीव विषयसंग फूलत ता विन जीव अती मुरझाही।
हरि सूं उपज्यो हरि पोखत है हरिमाहिं रह्यो हरि कूं विसराही ॥ ८ ॥
पशुअ भले उनते जग में नहि कर्म करी दुख बीज को बोवै।
कियो भुगते पशु देह धरी सुख दुःख के पाप के कर्म कूं धोवै ॥
आचार मलीन चरै अपनो उनके संगते कोऊ भ्रष्ट न होवै।
उनतें यो नीच भयो नर माणक गांठ के सींग रु पूंछ को खोवै ॥ ९ ॥
जननी क्यों बोझ मरी इनकी जाने ऐसे पशू को पेट में राखो।
कलंक जणी अपणे कुलको अधवीच नहीं क्यों गर्भ तें नाखो ॥
जन्मत ही मरि क्यों न गयो जाने जीव के रामको नाम न भाखो।
मरेतें भलो निज मूरख को जीवत करेगो यो सरब को साखो ॥ १० ॥
आछो सो काछ कछ्यो तननें मननें नहीं आछो सो नाच यो नाच्यो।
राम गुलाम कहावत है पै गुलामं भयो जगको दाम जाच्यो ॥

कूड़ कपट्ट विकार भऱ्यो मन नेक नहीं हरि सूं भयो साच्यो।
कैसे के राम रीझे अब माणक यो मन रामके रंग न राच्यो ॥ ११ ॥
आछो सो नर्त करो मन नर्तक जैसे तैं आछो यो काछ कछ्यो है।
आदर नेम करी हरि को नित चिंतन ध्यान यो नर्त अछ्यो है ॥
प्रेमकरी हरि को रस पीवहु पीवत दूध ज्यूं वालवछ्यो है।
माणक सूर ज्यों आगे ही दोरत नेक न धारत पांव पछ्यो है ॥ १२ ॥

कवित्त।

भैया जगवासी तू उदासी है के जगतसों एक छ महीना उपदेश मेरो मानु रे।
और संकल्प विकल्प के विकार तजि बैठि के एकंत मन एक ठोर आनु रे ॥
तेरो घट सरिता में तूही है कमल ताको तूही मधुकर ह्वै सुवास पहिचानु रे।
प्राप्ति न ह्वै है कछु एसो तू विचारतु है सही ह्वै है प्राप्ति स्वरूप यों ही जानु रे ॥ १ ॥
करिले रे सुकृत सुमरिले रे नरहरि परिहरि ओढ़र ढ़रनि मोहजाल की।
रसरास तेरे हाथ चिंतामनि हेरे यातें ओट गहिले रे प्रहलाद प्रतिपाल की ॥
करत कहा है कहा करिवे को आयो कहि कोहै तूं कहां है कैसी गति काल की।
गई सो तो गई अब रही सो तो राख मूढ एक एक लव जात लाख लाख लाल की ॥ २ ॥
श्वासके भरोसे गढ मास में निवास कियो आशा मन माहिं राखि मानत सरीरा की।
वड़े २ सूरवीर छोड गये देख मूढ रही ना निसानी तहां साह अरु वजीरा की ॥
भजरे निरंजन दुखभंजन कुल आलम को नित्य रोज खबर लेत पाहन में कीरा की।
कहै कवि प्यारामल सुमरणकी यही पल एक एक घड़ी जात लाख लाख हीरा की ॥ ३ ॥
काहू घर पुत्र जायो काहू के वियोग आयो कहूं राग रंग कहुं रोवारोव करी है।
जहां भानु ऊगत उच्छाह गान गीत देखे सांझसमें ताही स्थान हाय हाय परी है ॥
ऐसी जगरीति देख को न भयभीत होत हा हा नर मूढ़ तेरी मति कौन हरी है।
मानुषजन्म पाय सोवत विहायो जाय खोवत किरोरन की एक एक घरी है ॥ ४ ॥
चौरासी समुद्र चूर मिल्यो है मनुष्यतन कहीं भूरि भागतें किनारे आनथीयो है।
ऐसी या अनूप देह नाक कान नेन बेन ऐन करतार जू करार कर कीयो है ॥
ताही को तू पाय करत डावा डोल पशू ज्यूं भरत पेट विषय पान पीयो है।
गोविंद नरदेह पाय प्रभू को न जान्यो ताय धूरि वाके धन में धृकार वाको जीयो है ॥ ५ ॥
नंदकी नोनिधि धरी वीसल की वीस टरी रावन की सबै जरी खाख में समावोगे।
हेम हीर चीर हाथी काहू के न भये साथी वाट के बटाऊ जेम ठाठ छिटकावोगे ॥
वहां सूं न लाये हाथ यहां सूं न चाले साथ यहां ही की जोर जोर यहां ही लों खावोगे।
कहत है छजू पवार सुनोरे मायाके यार बँधी मूठी आये हो पसार हाथ जावोगे ॥ ६ ॥
इत उत फिरत है हरत धरत कछु करत अनर्थ बहु जात दिन बीते है।
रात्रि पड़े घरमांही आयके भोजन करि नारी कंठ लाय करि सोवत नचीते हैं ॥

ऐसे ही करत सब जन्म व्यतीत भयो राम को न नाम लेत यम सूं न भीते हैं।
माणक जुवारी मूल गाँठ कूं गमाय जैसे आये बांध मूठी फिर जात हाथ रीते हैं॥ ७॥
राम को न लेत नाम काम को भयो गुलाम दाम दाम पीछै लागि पाप बहु कीते हैं।
औरन को देत दुःख आपको चहत सुख रामसूं विमुख होय फिरत नचीते हैं॥
सुखन के काज बहु दुख को सजत साज विषय विष लेह माहिं घोरि घोरि पीते हैं।
राम को विसारि नरजन्म में धूरि डारि आये बांध मूठी फिर जात हाथ रीते हैं॥ ८॥
फिरत है फूले २ माया के भर्म भूले वैठे सब हारि अरु माने जगजीते हैं।
जवानी के जोर माहिं मानकी मरोर माहिं कोई कूं गिने नाहिं विषय चित्त दीते हैं॥
मोह मद माते अति विषय हू के रंग राते विषय के यत्न माहिं दिन सब वीते हैं।
जनम को हारि सब काजकूं विगारिकरि आये वांध मूठी फेर जात हाथ रीते हैं॥ ९॥
पाय प्रभुताई कछु कीजिये भलाई यहाँ नाहीं थिरताई वैन मानिये कविन के।
यश अपयश रहिजात वीच पहुमी के मुल्क खजाना वेनी साथ गये किन के॥
और महिपालन की गिनती गिनावे कोन रावण से ह्वैगये त्रिलोकी वश जिनके।
चोपदार चाकर चमूपति चंवरदार मंदिर मतंग ये तमाशे चार दिन के॥ १०॥
हय हाथी हेम हीर हुरम हिरननैनी हींसत हौंकरत फिरत घर घेरे है।
वंधु सुत सुता सुत सुत सुतहू के सुत सज्जन सगेन से कहत मेरे मेरे हैं॥
चोहटा न चाकर चहुंधा चहैं चोकीदार चोवारा न चहल चुहुल चेरी चेरे हैं।
तिनको तो तू है ते हैं तेरे तोलूँ तेरो तन तन गये तिनको तो तूं न ते न तेरे हैं॥ ११॥
माया के समूह माँझि वंधिके शिथिल भयो मान कह्यो मेरो ओतो झूठो घट घेरो है।
काल है करेरो आनि दहैगो दरेरो सो तो पर्यो ही रहैगो सब घरको वखेरो है॥
कुटुम्ब घनेरो बहु वेर झक झेरो सो पंखिन को रेरो जैसे दरखत वसेरो है।
चलत सवेरो दरकूच माँझि डेरो तेरो मेरो मेरो कहै यामें कौन साज तेरो है॥ १२॥
एरे मन मेरे तेरे कौन हाल ह्वैंगे अव गेरे अजाण दीह गोविंद नहिं गाये हैं।
ऊठि के सवेरे सांझ दोरन की करी एक लेरे बहु जोरि ढेरे धन में लुभाये हैं॥
साधू कहैं वेर वेर तोहू न समझै शठ पूर्व भलेरे पुण्य मोसर यह पाये हैं।
रे रे अजाण जीव पीव क्यूं न हृदय रखै खेरे खंखेरे काल केते नर खाये हैं॥ १३॥
कौरव दल पांडव सगर सुत जादू जेते जात हू न जाने ज्यूं तरैया परभात की।
वलि वैणु अंवरीष मानधाता प्रहलाद कहिये कहांलों कथा रावण जजात की॥
वेहू न वचन पाये काल कौतुकी के हाथ भांति भांति सेना रची घने दुख घात की।
च्यार च्यार दिन को बचाव सब कोउ करो अंत लुटिजैहै जैसे पूतरी वरात की॥ १४॥
कासों करों मोहि मोहि मोही को परी है देव मोहन से मोही महामाया में मिलागये।
मीनसे मुनीस महा मनु से मनुज मानधाता सम मानी महामद सो खिरागये॥
वामन से रावन से रामजू से खेलिखेलि खलन की खोपरी खिलोनासी खिलागये।
काटे महाकाल व्याल बली बलभद्र ऐसे बालि ऐसे बली ऐसे बुलासे विलागये॥ १५॥

ऊंची ऊंची चित्रसारी रंग के झरोखे भारी ताके मध्य सभा सोहै खान सुलतान की ।
चोपदार छरी लिये बोलत अगारी खरे सेन्या जो चढत है हजारन के खान की ॥
एते ही में औचक अचानक ही मोत आई होदा ही में फेलगई जानु लगी वान की ।
गढ कोट तोडिवे की मिसलत भूल गये मिसलत होन लगी चलन मसान की ॥ १६ ॥

जीती दशूं दिशा देश देश के नरेश जीते औज औज लाखों माल भंडार भरे रहे ।
कंचनके आसन सुवासन सब कंचनके पलंग अवास सोतो अलग ढरे रहे ॥
हाथी हथशालनमें घोड़े घुड़सालनमें कुलके कुटुम्ब लोक देखत खरे रहे ।
तजी देह अंबर दिगम्बर चल्यो निदान आसन विभूतिके सिंघासन धरे रहे ॥ १७ ॥

रूनी तरुनी झूली वही दुख झूनी मांझ देखत अभूनी पंथ पीलन खरी रही ।
पाटन बिछूनी छूनी मंदिर पिशूनी तज दूनी सोभ चित्रसारी सूनीसी परी रही ॥
कहत कल्याण बात सारी ही अलूनी भई कूनी ग्रह चिलनमें चूनी जरी रही ।
जूनी तज काया हंस खूनी तो वहीर भयो मूनी अवधूतनकीसी धूनी धरी रही ॥ १८ ॥

नितही कमातो ध्यातो लातो वन मांझ सांझ तातो सो न खातो रातो पहऱ्यो ना हटाऊसो ।
जेतो आतो बारमें सुहातो एतो कोऊ नाहिं ऐसे घुररातो मानो श्वान है कटाऊसो ॥
माया मद मोह मातो कोडी हू न लातो दान पीछे पछितातो जब भयो है लटाऊसो ।
राम सू न रातो रे परातो अब काल आयो देखो रे खटाऊ चल्यो जात है वटाऊसो ॥ १९ ॥

धरेही रहेंगे धरा धूरि मांझ गाढे धन भरेही रहेंगे भंडार बहु वानी के ।
जरेही रहेंगे गजराज हू जंजीरन से खरेही रहेंगे मानों अश्वपंथ पानी के ॥
काल आय गहै जब करैगो सहाय कौन कृष्ण रहेंगे जंग जोधा मरदानी के ।
थकै मुखवानी माया होयगी विरानी जब छांड रजधानी वासी होयगो मसानी के ॥ २० ॥

रामको लियो न नाम दियो न कणूको दान कूर नहिं खायो धाप राच रह्यो कूर में ।
कोडी कोडी जोड वैसे कहायो करोरी तामें छात माखी जेम छायो मायाहूके पूर में ॥
बाई को न भाई को न पिता हू को हूवो नाहि मलिन स्वरूप रह्यो देखियो न नूर में ।
सांकडी वणाणी घाटी कालकी झपाटी लागी हालियो मडांकी हाटी खाटी रही धूर में ॥ २१ ॥

रह्या है न कोई यहां रही है न कोई यह जाने सब कोई पै न माने मोह परिगे ।
हाथी और घोड़े जोड़े छोडे सब ठौर ठौर भौनन में मांडे भूरि भांडे ते बिसरिगे ॥
कहै छविनाथ एक राम के भजन विनु ऐसे ही विचारे जन्म कोटिन निसरिगे ।
जंगवाले जोरवाले जाहिर जरबवाले जोसवाले जालिम चिताकी आग जरिगे ॥ २२ ॥

ढहीसी सराय काय पंथी जीव वस्यो आय रत्न त्रय निधि जामें मोक्ष जाको घर है ।
मिथ्या निबि कारी जहाँ मोह अंधकारी भारी कामादिक तस्कर समूहन को थर है ॥
सोवै जो अचेत सोई खोवै निज संपदाको तहां गुरु पाहरू पुकारे दया कर है ।
गाफिल न हूजे भ्रात ऐसी है अंधेरी रात जागरे बटोही यहां चोरन को डर है ॥ २३ ॥

हाथी के दांतन के खिलोता वने भांति भांति वाघन की खाल शिव संकर मन भावेगी ।
मृगनकी खालनको ओढत हैं जोगी जती बकरे की खाल आछापानी भर लावेगी ॥

सांभर की खालन को बांधत सिपाई लोक गेंडे की खाल राव औ राजा मन भावेगी।
कहै दयाराम एक राम के भजन विन मानुष की खाल कछु काम नहिं आवेगी ॥ २४ ॥
खालही की खोलमें अखिल ख्याल खेलिखेलि गाफिल है भूल्यो दोष दुख की खुसाली तें।
लाख लाख भांति अभिलाष लखे खोटे अरु अलख लख्यो न लखी लाखन की लाली तें ॥
पुलकि पुलकि देव प्रभुतें न पाली प्रीति दे दे करताली न रिझायो वन माली तें।
झूठी झलमल की झलक ही में झूल्यो झलमलकी पखाल खल खाली खाल पाली तें॥ २५॥
जासूं तूं कहत यह संपदा हमारी सोतो साधने अडारी ऐसें जैसे नाक सिन की।
जासूं तू कहत हम पुण्य जोग पाई सोतो नरक की साई है वडाई डेढ दिन की॥
घेरा माहिं पऱ्यो तू विचारे सुख आंखिनको माखिन के चूटत मिठाई जैसे भिन की।
एते पर होहि न उदासी जगवासी जीव जगमें असाता है न साता एक छिन की॥ २६॥
रेतकी सी गढ़ी किधों मढ़ी है मसान कीसी अंदर अंधेरी जैसी कंदरा है शैल की।
ऊपरकी चमक दमक पट भूषन की धोके लागी भली जैसी कली है कनैल की॥
औगुन की ओंडी महा भोंडी मोहकी कणोंडी मायाकी मसूरती है मूरती है मैल की।
ऐसी देह याही के सनेह याकी संगति सों है रही हमारी गति कोल्हूकैसे वैल की॥ २७॥
केतीवार सिंह स्वान सांभर सियार सांप सिंधुर सारंग सुसा सूरि ऊदरै पऱ्यो।
केतीवार चील चमगादर चकोर चीरा चक्रवाक चातक चंडूल तन भू धऱ्यो॥
केतीवार मच्छ कच्छ मींडक गिंडोरा मीन शंख सीपि कोड़ी है जलूका जलमें तिऱ्यो।
कोऊ कहै जारे जिनावर तब माने वुरो यों न जानै मूढ मैं अनेकवार है मऱ्यो॥ २८॥
मूष चूस कहत हमारो तहखानो यह चिरियां कहत खसखानो मैं वनायो है।
मकरी कहत यह हमारो मगसखानो भमर कहत काठ महल मैं उपायो है॥
माछर पखारी कांठे छांडिदे हमारो धाम नोर रु विलाव छिपकाढू अपनायो है।
ऐसे झगरे को घर तजिके गये हैं संत करता निमित्त नित्य अति सुख पायो है॥ २९॥
जिनके है परायोघर कुटी सो न धाम जामें मूसे रु विलाई साँप न्योला जो रहत है।
भाजन तो मृत्तिका के फूटे खाली धान नाहीं तूटीसी खरेड़ी खाटमल जो लहत है॥
करकस कठोर नार कानी काली कलहगारी करकस वचन बोलै अवगुण की महंत है।
हाहारे कर्मनकी विटंबना कही न जाय ऐसो गृह पाय मूढ त्यागो न चहत है॥ ३०॥
चंचला चलाचल ज्यों घनमें विलोकियतु जलमें कलोल भूरि भासत भगतु है।
पानी मृग प्यास को विलास ठग चातुरी को रैनन में जोति जैसे जुगनू जगतु है॥
नगर गंधर्व को पिनाक ज्यों पुरंदर को ऐसे वनवाद मन प्रीति को पगातु है।
झूठो है रे झूठो जग राम की दुहाई काहू साँचे को वनायो तातें साँचो सो लगतु है॥३१॥
दिया है प्रभूने जामें खुशी करो ग्वाल कवि खावो पीवो लेवो देवो यही रहजाना है।
बादशाह आदि ले अमीर उमराव सब कूच करगये जाका लगा ना ठिकाना है॥
हिलो मिलो भिलो नरेंद्र की वा राहचलो जिंदगी जरासी जामें दिल वहलाना है।
आवै परवाना तब वने ना वहाना यहां नेकी कर जाना फिर आना है न जाना है॥ ३२॥

मुक्ताफल कल्हार कमल तहाँ कुंदनसे मणिनसों जरी पाल चहूं और सांकरी ।
विहरत सुर मुनि वेद धुनि उचरत सुखसुं समेटि रास विधि तहाँ हांकरी ॥
वासी उही पुरको उदासी भयो काशीराम तोउ वह विछुरत एसी आशा हू नांकरी ।
पर्‍यो कोऊ काल तातें आन तक्यों तुच्छ ताल लख्यो ऊ मराल तो चुगेगो कहा कांकरी ॥३३॥

एकता कूं लिये भावे बैठ तू अटन कर ज्ञान धन हूतें तू तो साहन को साह है ।
आशा और तृष्णा और चिंता को विसारडार आतम स्वरूप तू तो सदाई अचाह है ॥
मन बानी जीत्यो जब सकल जगत जीत्यो द्वंदभाव गयो तातें भयो वे प्रवाह है ।
जैसो घर तैसो वन सदाई आनंद घन योंही वाह वाह फेर योंभी वाह वाह है ॥ ३४ ॥

कवहु क ऐंट बैठे चूंतरा अडालचके कवहु क पायन हू पैनी झुन झुनिया ।
संपति में सुक्ख होय विपति में दुःख होय संपति रिझाय औ विपति सिर धुनिया ॥
संपति में विपति औ विपति में संपति है संपति विपति दोनूं एक देव गुनिया ।
संपति में काँय काँय विपति में भाँय भाँय काँय काँय भाँय भाँय देखी सब दुनिया ॥३५॥

जाँचवे न कहूं जावे राजक रिजक दावे पावे के न पावे दिल नावे दिलगीरी पें ।
धीरी मन धारै यादगीरी करतार हीरी पीरी हू न चहै तहाँ कहा सोभ मीरी पें ॥
खालिक खलक माहिं और कछु देखै नाहिं पर्‍यो रहै सीनो भीनो लग्यो सुखसीरी पें ।
करी आदि अंत कीरी भली वंछवेकी भीरी कोटिक अमीरी वारडारूं या फकीरी पें ॥ ३६ ॥

गुहा हू का रहना कहना नहिं काहू सेती साहब से प्रीति अरु काकी परवाह है ।
चित्तकी सुराही लिये प्रेम हू का प्याला पिये खलककी खुसालीका सदा चित चाह है ॥
ज्ञान हू की गूदड़ी में पेमद फकीरी फबै निपट निरंजन कहै नाम निर्वाह है ।
चिंता चितचीरी लोभ लालच तगीरी तजी दफै दिलगीरी तो फकीरी वाहवाह है ॥३७॥

सवैया ।

धूत कहो अवधूत कहो रजपूत कहो जुलहा कहो कोऊ ।
काहू की बेटी से बेटो न व्याहबो काहू की पांति विगार न सोऊ ।
तुलसी सरनाम गुलाम है राम को जाको रुचै सो कहो कछु ओऊ ।
मांगिके खैबो मसीत को सोइबो लेबे को एक न देबे को दोऊ ॥ १ ॥

खेतनहीं रु तिजारत नां करनी नहिं काहु की व्याह सगाई ।
ग्रंथ बनावनो ना कछु बाग त्यूं मंदिर की नहिं नींव खुदाई ॥
दासस्वरूप न सोच या लोकको ना परलोक को सोच सगाई ।
आज मरै तोही खूब हैं बांधव काल मरै तोह खूब है भाई ॥ २ ॥

झूलणा ।

हरिनाम रटै गुरु ज्ञान थटै लपटै न जठै करतूतन को ।
भटकै न अठै भटकै न कठै खटकै न जठै जमदूतन को ॥

घटमें घट गोतलियो घटिके घट औघट घाट अछूतन को ।
सांईदीन कहै मज़बूत गुरू अदभूत मतो अवधूतन को ॥ ३ ॥
मैड़िहि मंदिर छांड दीजै वन माहिं न झूंपड़ा बांध टटीदा ।
रूखी हु सूखी हु खाय रहो काला मूंह करो जिय खट्ट मिठीदा ॥
रूप सिंगार तो उनहू को लोड़िये जो कोउ आशक होत लटीदा ।
फकीर की राह कठिन्न अलू पगधरतहि निकसत दूध छटीदा ॥ ४ ॥
निशिवासर वस्तु विचार सदा मुख सांच सदा करुणा धनहै ।
अघनिग्रह संग्रह धर्म कथा न परिग्रह साधुन को गन है ॥
कहै केशव भीतर जोति जगै अरु बाहर भोगनको तन है ।
मन हाथ सदा जिनके तिनके वनही घर है घरही वन है ॥ ५ ॥

कुंडलिया ।

खटकेवाली वस्तु को दीन्ही जिसने डार ।
भावै रहो उजार में भावै वीच बजार ॥
भावै वीच बजार पर्‍यो रह मुखा न बोलै ।
अथवा वात अनेक करे निशि वासर डोलै ।
कहै गिरिधर कविराय चीज जो च्यारों पटके ।
सुत दारा धन धाम गये सब तिनके खटके ॥ १ ॥
विरकत सोई जाण बसै वस्ती से न्यारा ।
अहनिशि आठों याम रामजी लागै प्यारा ॥
छाजन भोजन नीर जिको पर इच्छा आवै ।
चेराचेरी तजै पक्ष के दिसा न जावै ॥
आठ पहर चोसठ घड़ी एकाएकी रामजी ।
जनरामा विरकत सोई चोथेपद विश्रामजी ॥ २ ॥
विरकत कहियै भरतरी कै गोपीचंद मीर ।
ढाको बलख उजीण तजि तीनूं भया फकीर ॥
तीनूं भया फकीर अलख सूं पलक लगाई ।
गिरि डूंगर वनवास समयसर वस्ती आई ॥
अणचाहिक अवधूत जन चखी शब्द की सीर ।
विरकत कहियै भरतरी कै गोपीचंद मीर ॥ ३ ॥

दोहा ।

जोड़ी तज जोड़ी तजी फिर जोड़ी का त्याग ।
रज्जब जोड़ी रामसूं ते कहिये वैराग ॥ १ ॥
तुलसी जाके दो नहीं घर घरनी धन हीन ।
ताको वन वसिवो भलो कर करवा कोपीन ॥ २ ॥

दमड़ी चमड़ी बीच में हरिया बिरो होय।
दमड़ी सूं दावा किसा चमड़ी मां कर जोय ॥ ३ ॥

कुंडलिया।

खंडी हंडी हाथ में बंडी सी कोपीन।
रंडी दिस देखै नहीं काया दंडी कीन।
काया दंडी कीन दीन वायक नहिं बोलै।
भोग योग संयुक्त उक्त वह मन में तोलै ॥
उर धर गुरु को ज्ञान मोह ममता सब छंडी।
सो वैरागी राम कहै हरिराम अखंडी ॥ १ ॥
तीनटूक कोपीन के अरु भाजी बिन नोंन।
तुलसी रघुवर उर बसै इंद्र बापुरो कौंन ॥ १ ॥
कबीर सात गांठ कोपीनके मन में रहै निशंक।
राम अमल मातो रहै गिनै इंद्र को रंक ॥ २ ॥
कर अरु जीभ लंगोटड़ी यह तीनों वसरख्ख।
निरभय होय निशंक रम वैरी मारो झख्ख ॥ ३ ॥

कवित्त।

कोऊ राजहंस उडिआयो हो समुद्रहूते, वीतगये वासर समुद्र फिर जावणो।
ताही मघ बीच एक भऱ्यो हो सुभगसर, रैन विसराम लेय भोर उड़जावणो ॥
कहै करजोर ताल बैठे रहो कोउ काल, राज बैठे डेरो पाल लगत सुहावणो।
चरण कहत सर काहेको विलाप करै, रोक्यो नाँ रहै गोरे विदेशी हंस पावणो ॥ १ ॥

दोहा।

मत हो समँद उतावलो, लांबी छोल न लेह।
आपेही उडजावसां, पांख संवारण देह ॥ १ ॥
हंसा सरवर मत तजो, जो जल खारा होय।
डाबर डाबर डोलतां, भला न कहसी कोय ॥ २ ॥
सरवर हंस मनायले, नेड़ा थका वहोड़।
जा बैठां रलियावणा, तासूं तान न तोड़ ॥ ३ ॥
रहताने वरजूं नहीं, जाता न लाऊं बहोड़।
सरवरमें मोती घणा, तो हंसा लाख करोड़ ॥ ४ ॥
और घणा ही आवसी, चिड़ी कमेड़ी काग।
हंसा फेर न आवसी, सुण समदर मंद भाग ॥ ५ ॥
जा जल तूं पाछो जा, तुझ मुझ रह्या न रंग।
कड़वा बोल्या बोलड़ा, फेर न मिलसी अंग ॥ ६ ॥

पाल कहै रे सायरा लागै आज बुरोह।
मैं हंसता हंस ने कह्यो वो जातो रह्यो परोह ॥ ७ ॥

सोरठा।

मनमेलू गयो मार हितरूपी हथियार से।
सक्यो न आप सँभार निरबल थयो निरंजना ॥ १ ॥
शिष हुतो क शरीर पिंजर हुतो क प्राणिया।
धरै न यो मन धीर नाम निरंजन के बिना ॥ २ ॥
चेला थारी चिन्त कहो किणीने दाखवुं।
मिले न दूजो मित नव खंड फिरूं नारायणा ॥ ३ ॥
चेला छतरी चूक मरतां तैं मूवो नहीं।
हिवड़ै हालै हूक नींद न आवै नारायणा ॥ ४ ॥
सांभल ज्यो सेणाह वैणा वीसरसाँ नहीं।
नित झुरसी नैणाह मैंमत सावण मेह ज्यूं ॥ ५ ॥
धारे चरणा धाम बलवंतरो मन यों वसै।
सेवगरो सतराम अनदाता छेहलो अबै ॥ ६ ॥
मोती हुतो अमोल वीछडताँ कहिया वचन।
बलवँत थारा बोल खारा निशिदिन खटकसी ॥ ७ ॥
अंडा अनड़ तणाह माले बिन ही मेलिया।
पंखी पोख विनाह जीवै किणविध जेठवा ॥ ८ ॥
ताला सजड़ जड़ेह कूंची ले काने करी।
ऊघड़सी आयेह जड़िया रहसी जेठवा ॥ ९ ॥
प्यारी ना कोइ पूत बंधव ना कोई बेनड़ी।
दोला हुवा जमदूत नाम छुड़ासी नानिया ॥ १० ॥
मात तात ने मीत सगा सजन नाती सरब।
जम लेजासी जीत नाम छुड़ासी नानिया ॥ ११ ॥
कण माणक कोठार पटा गाँव घर परगना।
यां सूं नाहिं उबार नाम छुड़ासी नानिया ॥ १२ ॥
बख़्तर ढ़ाल बन्दूक पाखरिया कमधज पड़्या।
करसी कूका कूक नाम छुड़ासी नानिया ॥ १३ ॥
तोप तमंचा तीर हाथी अश्व हजार सूं।
चलै न वालम चीर नाम छुड़ासी नानिया ॥ १४ ॥
हाजर हुसी हकीम पलक न खुलसी प्राणरी।
अँवरो लेसी जीम नाम छुड़ासी नानिया ॥ १५ ॥

लेसी तन धन लूट दृग देखत दोफाररा।
ताँता जासी तूट मोह तणा जब मोतिया ॥ १६ ॥
करसी कूका कूक हाथो हाथ हकावसी।
फलसे बाहिर फूँक कोई न चलसी कानिया ॥ १७ ॥
लीन्ही करणी लार पाप पुण्य हरि जाप री।
ओ तन देवो उतार मृतक कहै सब मीरिया ॥ १८ ॥
तागो लेसी तोड़ बंधन कोइ बाँधे नहीं।
चांपर च्ल्यो चहोड़ मरहट हक मैं मीरिया ॥ १९ ॥
घड़िया घट जेताह जाता सह दीसै जगत।
जन धन तन जेताह सब ही अंत सिधावसी ॥ २० ॥

दोहा।

कहँ जाये कहँ ऊपजे कहां लडाये लाड़।
क्याजानूं किस खाडमें पड़े रहेंगे हाड़ ॥ १ ॥
अर्ब खर्ब लों द्रव्य है उदय अस्त लों राज।
जो तुलसी निज मरन है तो आवहि किहिकाज ॥ २ ॥
लाड्डू तूं परलोकरो कर साधन ततकाल।
हालंता नह लागसी ताली इतरी ताल ॥ ३ ॥
छहसो सहस्र इकीस दम जावत है दिन रात।
एतो तोटो तास घर काहेकी कुशलात ॥ ४ ॥
जाणाहै रहणा नहीं चलणा विश्वा वीस।
रज्जब तनक सुहाग को कोन गुथावै शीस ॥ ५ ॥
आंख झपंती ना लहै अस मुख माहिं गिरास
लख लख लानत नानगा दमदा करै विश्वास ॥ ६ ॥
छींकत डेरी पग दियो पीछे दीनो रोय।
असगुन तो पहिले भयो कुशल कहांते होय ॥ ७ ॥
सुन प्रानी सदगुरु कहै देह खेह की खानि।
धरै सहज दुख दोष को करै मोख की हानि ॥ ८ ॥
जसवंत शीशी काचकी जैसी नरकी देह।
जतन करंता जावसी हरिभज लावा लेह ॥ ९ ॥
जसवंत वास सरायका क्या सोवत भरि नैन।
श्वास नकारे कूचके बाजत है दिन रैन ॥ १० ॥
दश दुवारका पींजरा तामें पंछी पौन।
रहन अचंभा है जसा जात अचंभा कौन ॥ ११ ॥

सम्मन रोवै कौन को हंसै सु कौन विचार।
गये सो आवन के नहीं रहे सो जावन हार ॥ १२ ॥
नदी किनारे देखियै सम्मन सब संसार।
के उतरे के उतरिके बुकचा बाँधि तयार ॥ १३ ॥
पान झडंताँ देखिके हँसी जु कोंपलियाँह।
मो वीती तो वीतसी धीरी बापड़ियाँह ॥ १४ ॥
केइ फूले केइ फूलिगे सुंदर नये नयेह।
केते बाग जहान में लगि लगि सूक गयेह ॥ १५ ॥
धन जोबन का मत करो गुमाना जानो तरुवर पाका पाना।
लागै वायु अंत झड़ पड़ना तो ते पर एता क्या करना ॥ १ ॥
बहुत गई थोरी रही नारायण अब चेत।
काल चिरैया चुग रही निशिदिन आयू खेत ॥ १६ ॥
काल करंतो आजकर आज करंतो अब्ब।
अवसर वीतो जात है फेर करेगो कब्ब ॥ १७ ॥
रात गमाई सोयकरि दिवस गमायो खाय।
हीरा जन्म अमोल था कवडी वदले जाय ॥ १८ ॥
धन जोवन यों जाहिंगे जिन विधि उडत कपूर।
नारायण गोपालभज क्यों चाटै जगधूर ॥ १९ ॥
हाथ जोरि हाजर रहे जिनके सन्मुखकाल।
नारायण ऐसे नृपति परे कालकें गाल ॥ २० ॥
जिनके सहज हि पग धरत रज सम होत पषान।
नारायण तिन को कहूँ रह्यो न नाम निसान ॥ २१ ॥
रे मन क्यूं भटकत फिरै भज श्रीनंदकुमार।
नारायण अब भी समझ भयो न कछु विगार ॥ २२ ॥
ऊठ फरीदा जागरे झाड़ू देह मसीत।
तूँ सोवै रब जागता किसविधि वनै परीत ॥ २३ ॥
ऊठ फरीदा जागरे जागन की कर चौंप।
यह दम हीरा लाल है गिन गिन रब कों सौंप ॥ २४ ॥
कहताहों कह जातहों कहा बजाऊँ ढोल।
श्वास श्वास में जात है तीन लोक को मोल ॥ २५ ॥
आयू नेजरु देह घट जातकूप भव माहिं।
शेष सँभालै सो धारिहै सुधरै विगरै नाहिं ॥ २६ ॥

टीका=मरुस्थल में भ्रमतो वटाऊ प्यास मरै है वाने उजाड़ में कूप मिल गयो विलस्त नेज बाहिर रही है यह भी गई तो कलस नेज प्राण सबही गया।

बहुत गई थोड़ी रही अजहूं चेतै नाहिं।
रे जड़ फिर कित पावही यो औसर जग माहिं ॥ २७ ॥
काम को किंकर हुइ रह्यो वाम को भयो गुलाम।
दाम दाम से वंधियो पामर भज्यो न राम ॥ २८ ॥
द्वै वातन को भूल मति जो चाहै कल्यान।
नारायण एक मोत कूं दूजे श्रीभगवान ॥ २९ ॥
नारायण द्वै वात को दीजे सदा विसार।
करी बुराई और ने आप कियो उपकार ॥ ३० ॥
कबिरा कहै कमाल कूं दो वाताँ लिख लेह।
कर साहिबकी वंदगी भूखे कूं कछु देह ॥ ३१ ॥
देह धरेको एह फल देह देह कछु देह।
आगै हाट न वाणियां लेना होय स लेह ॥ ३२ ॥
खाय खुलाय लुटायदै करले अपना काम।
चलती विरियाँ रे नराँ संग न चलै छदाम ॥ ३३ ॥
गांठी होय सो हाथ कर हाथ होय सो देह।
देह खेह हो जायगी फिर कोन कहेगो देह ॥ ३४ ॥
धन दीये धन नाँघटै नदियाँ घटै न नीर।
अपनी आंखे देखलो यों कहै दास कवीर ॥ ३५ ॥
तुलसी पंछिन के पियां सरवर घटै न नीर।
धर्म किये धन ना घटै जोसहाय रघुवीर ॥ ३६ ॥
कुंजर मुख ते गिर पड़्यो घट्यो न ताहि अहार।
लाखों कीड़ी ले चली पोखन को परिवार ॥ ३७ ॥
लेवे कूं हरिनाम है देवेकूं अनदान।
तरने कूं आधीनता डूवन कूं अभिमान ॥ ३८ ॥
माया मेरे रामकी धरणीधर की देह।
पूंजी विराने साह की करसें जशकर लेह ॥ ३९ ॥
पानी वाढ़ो नाव में घरमें वाढ़ो दाम।
दोनों हाथ उलेचियै यही सयानो काम ॥ ४० ॥
खाया सोतो खूटग्या खरच्या सोई साथ।
जशवँत धर पोढाविया माल विड़ाणै हाथ ॥ ४१ ॥
सबै सुनत प्रिय लगत है दान मान जुधवात।
स्वरूपदास कहिवो सुगम करिबो कठिन दिखात ॥ ४२ ॥

सोरठा ।

बहुताई बालेह वालंताँ वोली नहीं ।
नाणै सूँकी नेह कारण ता कूकी करण ॥ १ ॥

गीत ।

वावरज्यो खाज्यो विलसज्यो हिम्मतह्वै तो दीज्यो हाथ ।
दियाँ विना जातो नहिं दीठो सोनो रूपो साथ ॥ १ ॥
साजाँ पगाँ आपरी संपत मरदाँ खाज्यो मीठी ।
जोड़णहारे लार जावताँ दोलत किणी न दीठी ॥ २ ॥
खावो खुलावो भलपण खाटो जिणघर संपत जेती ।
मेलण काज इतो नहिं सिलियो रावण के मुख पकरती ॥ ३ ॥
ओपो कहै दियाँ ऊबरसी गाडी जिकाँ गमाणी ।
बीस क्रोड़ वीसलदे वाली पड़ गइ ऊंडै पाणी ॥ ४ ॥

(प्रेम)

परा भक्ति अरु ज्ञान में तनक नहीं कछुभेद ।
नारायण मुख्य प्रेम है कहै शास्त्र अरु वेद ॥ ४३ ॥
परा भक्ति याको कहै जित तित श्याम दिखात ।
नारायण सो ज्ञान है पूरण ब्रह्म लखात ॥ ४४ ॥
प्रेम बराबर योग नहिं प्रेम वरावर ध्यान ।
प्रेम भक्ति विन साधिबो सबही थोथा ज्ञान ॥ ४५ ॥
जेहि घट प्रीति न प्रेमरस पुनि रसना नहिं राम ।
नर आया संसार में उपज खप्या वेकाम ॥ ४६ ॥
जिन्हें प्रेम प्याला पिये घूमत जिनके नैन ।
नारायण वा रूप मद छके रहै दिन रैन ॥ ४७ ॥
रूप छके घूमत रहै तनको तनक न ज्ञान ।
नारायण दग जल भरे यही प्रेम पहिचान ॥ ४८ ॥
फुटो नैन फाटो हियो जरो सु तन केहि काम ।
श्रवै द्रवै पुलकै नहीं तुलसी सुमिरत राम ॥ ४९ ॥
प्रेम छिपाया ना छिपै जा घट प्रगट होय ।
जो कै मुख बोलै नही नैंन देत है रोय ॥ ५० ॥
रहिमन अँसुवा नयन ढरि जिय दुख प्रगट करेय ।
जाहि निकारो गेह तें कस न भेद कहि देय ॥ ५१ ॥
लागी लागी क्या करै लागी नाँही एक ।
लागी सोई जाणियै करै कलेजै छेक ॥ ५२ ॥

सुरत लगी वा ध्यान में सुनत और की वात।
नारायण उत्तर दियो मृदुल मनोहर गात ॥ ५३ ॥
पलक निगम मधि ध्यान धर वरुणी जटा वनाय।
नैन दिगंवर होरहे रूप विभूति लगाय ॥ ५४ ॥
तन वंदूक मन जामकी हियो रिजक जिय साज।
प्रेम पलीता दगगई निकसी आह अवाज ॥ ५५ ॥
जरे जरे सो जर बुझे बुझर जरेऊ नाहिं।
अहमद दाझे प्रेम के बुझ बुझके सिलगाहिं ॥ ५६ ॥
धन दे नीके राख तन तन दे राखिय लाज।
लाज प्राण तज दीजियै एक प्रेम के काज ॥ ५७ ॥
दारा और सिकंदर हि फूल पना महमद्द।
वहराम रु मजनू कियो प्रेम सु हद्दोहद्द ॥ ५८ ॥
जोगी जंगम सेवड़ा सन्यासी दरवेस।
विना प्रेम पहुंचे नही दुर्लभ सतगुरु देस ॥ ५९ ॥
मन पक्षी तवलगि उडै विषय वासना माहिं।
प्रेम वाजकी झपट में जवलगि आवै नाहिं ॥ ६० ॥
खिनक चढै खिन ऊतरै सोतो प्रेम न होय।
अघट प्रेम जा घट वसै प्रेम कहावै सोय ॥ ६१ ॥
उपजै इश्क जु अंगतें रहत अंग के वीच।
हाड मांस गलवो करै इश्क न जानत नीच ॥ ६२ ॥
हाड़ गोड़ रग माँस सो तो विरहा ले चल्यो।
अहमद रह्यो जु साँस वाही को साँसो पड़्यो ॥ १ ॥
अहमद अपने चोर कुं सव कोउ कहै हनेउ।
जो मनहरन जु मो मिलै तो वार फेर जिव देउ ॥ ६३ ॥
दीन्हो होय सो पाइहै कहते वेद पुरान।
मन दे पाई वेदना वाहरे मेरा दान ॥ ६४ ॥
नेह नगर में पग धरै फेर विचारै लाज।
नारायण नेही नहीं वातनको महाराज ॥ ६५ ॥
नारायण घाटी कठिन जहाँ नेहको धाम।
विकल रु मूर्छा ससकिवो यह मगमें विश्राम ॥ ६६ ॥
नारायण हरि लगन में यह पांचों न सुहात।
विषय भोग निद्रा हसी जगत प्रीति बहुवात ॥ ६७ ॥

इति।

छप्पय।

पारब्रह्म पतसाह ज्ञान कहियै सहजादो
सांख्यजोग अरु भक्ति वड़े उमराव अनादो।
और क्रिया सब रैत जोग जिग जपतप जेते
तीरथ अटन स्नान दान यम नेमसु केते
ज्यों ब्याह समय अपने सुतहि सहजादो कर गाइयो
कहै सुन्दर सहजादो वहै पातसाह उरलाइयो ॥ १ ॥

दोहा।

रमा शंख विष धनु सुरा वैद्य धेनु हय हेय।
मणि रंभा गज कल्पतरु सुधा सोम आदेय ॥ १ ॥

कवित्त।

लक्ष्मी है सुबुद्धि अनुभूत कौस्तुभ मणि वैराग्य कल्पवृक्ष शंख सु वचन है।
ऐरावत उद्यम प्रतीति रंभा उदे विष कामधेनु निर्जरा सुधा प्रमोद घन है ॥
ध्यान चाप प्रेम रीति मदिरा विवेक वैद्य शुद्धभाव चन्द्रमा तुरंग रूप मन है।
चौदह रतन ए प्रगट होहि तहां जहां ज्ञान के उद्योत घट सिंधु को मथन है ॥ १ ॥
भेख में न ज्ञान नहीं ज्ञान गुरु वत्तन में मंत्र जंत्र तंत्र में न ज्ञान की कहानी है।
ग्रन्थ में न ज्ञान नहीं ज्ञान कवि चातुरी में वातन में ज्ञान नाहीं ज्ञान कहा बानी है ॥
तातें भेख गुरुता कवित्त ग्रन्थ मंत्र वात इतने अतीत ज्ञान चेतन निशानी है।
ज्ञानही में ज्ञान नहीं ज्ञान और ठौर कहूं जाके घट ज्ञान सोइ ज्ञान को निदानी है ॥ २ ॥

दोहा।

आपन कह सब स्वर्ग में, औरन नर्क निवास।
सब मत की गति सुनि भयो, दास स्वरूप उदास ॥ १ ॥
इष्ट धर्मके भजन को, पऱ्यो जु झगरो आय।
ताते मैं डऱ्यो खरो, पऱ्यो ब्रह्मकुंडमें जाय ॥ २ ॥
पढने की हद समझ है, समझन की हद ज्ञान।
ज्ञान हद हरिनाम है, यह सिद्धान्त उर आन ॥ ३ ॥

कवित्त।

जैसे काहू दासीने जुगल पुत्रजने जिन एक दियो बाम्हन के एक घर राख्यो है।
बाम्हन कहायो तिन मद्य मांस त्याग कियो दासहू कहायो तिन मद्य मांस चाख्यो है ॥
तैसे एक वेदनीकर्म के जुगल पुत्र एक पाप एक पुण्य नाम जिन भाखयो है।
दुहूं माहिं दौर धूम दोऊं कर्म बंधरूप याते ज्ञानवंतनि न कोउ अभिलाख्यो है ॥ १ ॥
जैसे महिमंडल में नदी को प्रवाह एक ताही में अनेक भांति नीर की ढरनि है।
पाथर को जोर तहाँ धार की मरोर होत कांकर की खानी तहाँ झाग की झरनि है ॥

पौंन की झकोर तहां चंचल तरंग उठै भूमिकी निचान तहाँ भौंर की परनि है।
तैसे एक आत्मा अनंत रस पुदगल दुहूं के संजोग में विभावकी भरनि है॥ २॥

दोहा।

पलित वृद्धके शीशपर सोतो पलित न पेख।
गई जवानी भजन विन वानी परी विशेख॥ १॥

छप्पय।

मिनख जन्म अवतार वरष चालीसां मीठो।
कड़वो लगै पचास साठमें क्रोध हि दीठो॥
सत्तर सगो न कोय असी में आस न काई।
नाहिं निवे में होय हँसै सब लोग लुगाई॥
डगडग हालै नाड़ की सादज पड़गयो खोखरो।
सुत नारी परिवार कहै ओ मरै तो सुधरै डोकरो॥ १॥
चरण प्रवल चूरता चरण अँगणे न चलै।
पाँण हाथी पेलता पोत छूटती न पलै॥
नेणां नग निरखता नारी ओलखै न नेणा।
श्रवण नाद सुणता साद ओलखे न सेणा॥
बोलती जीभ बडबड वयण लड़ थड़ करती लल्लरा।
जोबन गमाय जग निरखता जका कीध गेल्ली जरा॥ २॥
नयन श्रवण नासिका रूप रव गंध सुमुक्किय।
रसन न रस आचरहि चरण मग चलत सुचुक्किय॥
दंत दलित कच पलित त्वचा संवलित सलन ते।
असन वसन बल गलित मलिन तन सकल मलन ते॥
क्रिय सखा सकल सुरपुर सदन लकरिपकरि विहरति विमति।
यह दशा भई भावन तदपि तजत न जिय जीवन सुरति॥ ३॥

सवैया।

लकरी पकरी सु खरी कर में पग पंथ परे न भरे डगरी।
न घरी भर बैठि भज्यो सु हरी कथ कूर करी जगरी सगरी॥
नगरी तनरी सु पुरानि परी भगरी अब लूटतु हैं ठगरी।
अबरी विरधापन वात बुरी सु अरी सम होत सबै सुतरी॥१॥

माया।

दोहा।

माया तो ठगनी भई ठगत फिरी सब देश।
जा ठगनें ठगनी ठगी ता ठग को आदेश॥ १॥

कबीर माया पापिणी लुल लुल लागै पाय ।
हिरदा भीतर बैठकर काढ़ कलेजो खाय ॥ २ ॥
कबीर माथा ऊपर सींगड़ा लांबा नव नव हाथ ।
पाछै मारै लात सूं आगै दांतां खात ॥ ३ ॥
कबीर माया मोहिनी मांगी मिलै न हाथ ।
मना उतारी ऊठकर भागी डोलै साथ ॥ ४ ॥
कबीर मोटी माया सब तजै झीणी तजी न जाय ।
सिध साधक जोगी जती झीणी सबकूं खाय ॥ ५ ॥
माया नाना भांति की हरिया जगमें जान ।
काहू सुत वित अस्तरी काहू अनुभव बान ॥ ६ ॥

पद ।

माया जग ठगनी हम जानी, त्रिगुणी पास लियां कर डोलै बोलै मधुरी बानी ॥ टेर ।
जोगी के जोगन हुय बैठी राजाके घर रानी, पंडा के मूरति हुय बैठी तीरथ जायरु पानी ॥१॥
केशव के कमला हुय बैठी ब्रह्माके ब्रह्मानी, ईशर के गौरी हुय बैठी इन्दर के इन्द्रानी ॥२॥
भक्तों के भक्तन हुय बैठी तुर्कों के तुर्कानी,लखचौरासीचुनचुनखायेतोइइहिकिननपिछानी॥३
काहू के हीरा हुय बैठी काहू के कोडीकानी, दासकबीरसाहबकाबन्दाजिनकेहाथबिकानी॥४

पद ।

धोबनियाँ हम जानी घर घुघरु रही बजाय । टेर.
मारकण्डेय के लारे लागी दुर्वासा के रंग में पागी
नैना सैन चलाय पलक में कियो पाराशर ख्वार ॥ १ ॥
सुर तैतीसां लारे लागी शृंगी ऋषि के बन में पागी
भींडी ऋषि झण्डे के नीचै दियो पलक में डार ॥ २ ॥
अजामील कालू क्या कीना पकड़ मछन्दर भोगल दीना
उद्दालक तिरिया के कारण गयो ब्रह्म दरबार ॥ ३ ॥
नवूं नाथ पलकां में राखी सिद्ध चौरासी झुल झुल भाखी
कच्छ देश सलिता के बिचमें दियो गोरख शिर भार ॥ ४ ॥
गौतमऋषि की नारि अहिल्या दिया श्राप धोबण घर घाल्या
शशि को कलंक इन्द्र सहस्र भग अंजनि पुत्र कुमार ॥ ५ ॥
मोहिनि रूप धर्यो भगवाना शंकर होद भरे हम जाना
ग्रह को नाच नचाय गवरजा लियो भसासुर मार ॥ ६ ॥
खर को रूप धर्यो मृग नैनी ताणा तोड़या सो हम जानी
उड़ती आभ गरज दामिनि जाती उड़ागइ छार ॥ ७ ॥
काशी में कीरति सुण आई दास कबीर कथा सुनाई
गुरु रामानन्द बदन के ऊपर डारूँ धोबनिया बार ॥ ८ ॥

श्लोक ।

सततधृतिरप्युच्चैः शान्तोऽप्यवाप्तमहोदयो-
प्यधिगतनयोप्यन्तः स्वच्छोप्युदीरितधीरपि ।
त्यजति सहजं धैर्यं स्त्रीभिः प्रसारितमानसः
स्वयमपि यतो मायासंगात् पुमानिति विश्रुतः ॥ १ ॥

दोहा ।

तनक न रहै विरक्तता लगै द्दगन की थाप ।
कहुं गीता माला कहूं कहुं बटवा कहुं आप ॥ १ ॥
पण्डित पूजा पाक दिल यह दिमाग़ मति लाय ।
लगै जरब अंखियान की तो सबै गर्वं उड़िजाय ॥ २ ॥
और ठोर जो दबत है निकसै मौसर पाय ।
जो नर नारी से दबै दबत दबत दबजाय ॥ ३ ॥
कबीर दोय घाटी दोरी खरी कही न लंघी जाय ।
जो कोउ लंघन की करै सोउ अलूझै आय ॥ ४ ॥
कबीर एक कनक अरु कामिनी विष फल दोऊं पाय ।
देखेही सौं विष चढ़ै खाया सूं मरजाय ॥ ५ ॥
छोटी मोटी कामिनी सबही विष की बेल ।
बैरी मारै दाव सूं या मारै हंस खेल ॥ ६ ॥
कामिनि खोड़ो कील सुत पोरायत परिवार ।
रामचरण गृह भाकसी मोहका जड़्या किवार ॥ ७ ॥
कबीर नारी कहूँक नाहरी करै निजर की चोट ।
कोइक हरिजन ऊबरै पारब्रह्म की ओट ॥ ८ ॥
कबीर नारी नहिं या नाहरी वाघण वडी बलाय ।
जीवत सोखै कालजो मुवां नरक लेजाय ॥ ९ ॥
कबीर जहाँ जलाई सुंदरी तू मति जाहि कबीर ।
भस्मीहुइ अंग लागसी सो नासवे शरीर ॥ १० ॥
कबीर राता कपड़ा पहर कर गाढ़ा बंध्या केश ।
हाथां मँहदी लायकर वाघण खाया देश ॥ ११ ॥
नारि निसरड़ी कूकरी क्या राती क्या काली ।
हिड़काव चढ्यां दोनूं बुरी क्या परकी क्या पाली ॥ १२ ॥
घरका गिणै न बारला हंस हंस देवै गाली ।
रामचरण धीजो मती या नारी चिरताली ॥ १३ ॥
विषय विगोई टीकली क्या विन टीके होय ।
तुकता माहिं निसरड़ी शरम विगाड़ै दोय ॥ १४ ॥

विष सो गुण ढिग अग्नि सो चितवन बाण समान ।
हित ठग सो मद सो मिलन सुख चुड़ेल पकवान ॥ १५ ॥

सवैया ।

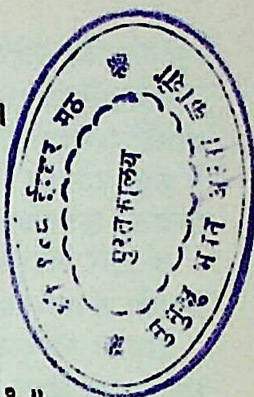
राम से पूत को दे वनवास कुमत्ति ले केकइ कंथ को रोई ।
जमदग्नी कि त्रिया के कहे सहस्रार्जुन ने तपस्या जो विगोई ॥
शूर्पनखा सिय की सुध दे दशकन्ध की साहिबी लंकते खोई ।
रांड तणे पुरुषार्थ ते जु कहो किन को घर भांड न होइ ॥ १ ॥
मुई चुड़ेल उतार को लेइके छोडत है फिर नाम न लेवै ।
जीवति या नित लेय उतार को छाँड़त नाहिं महा दुख देवै ॥
जीवति सार हरे मन देहको मुए पीछे याहि नर्क पठेवै ।
माणक जे बुधवान नहीं ऐसी जानिके याही के चरण को सेवै ॥ २ ॥

टीका=चुड़ेल दो-प्रकार की है एक मरिके चुड़ेल भई । एक जीवती चुड़ेल बनी है तब बडी कोन होयगी ? तहाँ कहै हैं डाकिनी । नाहिं क्यूं कि डाकिनी है सो और कूं लागि के दुःख देवे है घरका पुरुष पर तो दया करै है फेर बल लियां वा पीछो तो छोडि देवे है । अरु यातो घरका ही पुरुष कूं लागिके महा दुःख देवे है बल लियां सू भी छोडती नाहीं । तातें वासे या भिन्न ही है । तातें मरी चुड़ेल से जीवती में अधिकता दिखावे है कि मरी चुडेल है सो अपनो बल लेकर पुरुष को छोड देति है, अरु या जीवती है, सो नित्त मूंह माँग्यो अन्न वस्त्र आभूषणादि बल कुं लेवे है तोभी पुरुष को छोड़ती है नाँही अरु या लोकका पर लोकका जो महादुःख ताकुँ देवे है ।

सोई कहे है कि पुरुष जीवते तो या देह को सार वीर्य बलादिक, मनको सार जो धैर्य, विवेक, वैराग्य, ध्यान, स्मरणादि ताकूं पुरुष के चित्त में धसिके खेंचिलेतहैं, अरु चिन्ता शोकादि महादुःख को देत है, फेर मरे के पीछे स्त्री के अर्थ किये जो अनर्थ ता अनर्थ करिके पुरुष को नरकादिक के विषे पठाइ के नरक यातनादि महादुःख को देत है । ताते जो बुद्धिमान् पुरुष है सो याको ऐसी महा अनर्थ को कारण जानि के या स्त्रीका चरण को न सेवै । किन्तु ध्यान स्मरण चरणसेवा नारायण की ही करै ।

कुंडलिया ।

पगां कड़ी सजडी जड़ी तिमण्यो कंठ बंधाय ।
नाक कान घाली कड़ी दांताँ मेख लगाय ।
दांता मेख लगाय लंक कस बेणी बांधी ।
बाजू पुणचा हाथ जड़्या सोना कै चांदी ।
एता बंधन बांधिके घरमें रखी लुकाय ।
तोहू दाबी ना दबै नारी बड़ी बलाय ॥ १ ॥



छप्पय ।

कामण चढ़ी शिकार काम घोड़े चढ़ि घरमें ।
कुच दोय लागा श्वान कोरड़ो वेनी करमें ।
आभूषण धरि तुपक नैन भाला अगवानी ।
सिष्ट वचन समशेर ढ़ाल घूंघट की जानी ।
विचल्या नर कूं देखि पछाड़ै अपना वलसूं ।
पटके चरणां हेठ सार सोखै केइ छलसूं ।
सूरा सो टल नीसरै कायर कूं ले मार ।
जगन्नाथ साची कहै वड़ी शिकारण नार ॥ १ ॥

कवित्त ।

सज्जन सुजान कहूँ सुनो सवै साची वात ।
नारी और नाली एकस्यानी वनी वाली है ॥
देखत की सयानी पर मौत की निशानी फेर ।
करै धूरधानी जमजातना की जाली है ॥
आवत की आछी फेर फूटत की पाछी परै ।
रवीराम माहीं तम ऊपर उजाली है ॥
एक नाली लगे गिरि गाढ़े से गिरत जात ।
कौन गति होत जाकूं लागत छनाली है ॥ १ ॥
डेडरा से डरै सींगी मच्छ को मरोड़ डारै ।
कानन के वीच जाय कुंजर को पकरे ॥
सायर तिरत डूव जात है कठोती नीर ।
सौंदरी की संके छांय सर्प को जकरे ॥
फूलन से मरै भार गिरि कूं उपार लेय ।
वड़े वड़े कुंजर पछारिवे की धकरे ॥
तोरिवे को अम्वर के तारों की हिमत रखै ।
त्रिया को विश्वास ज्ञानी नेमी जन नकरे ॥ २ ॥

श्लोक ।

बाला मासियमिच्छतीन्दुवदना सानन्दमुद्वीक्षते
नीलेन्दीवरलोचना पृथुकुचोत्पीड़ं परीरंभते ।
का त्वामिच्छति का च पश्यति पशो मांसास्थिभिर्निर्मिता
नारी वेद न किंचिदत्र स पुनः पश्यत्यमूर्तः पुमान् ॥ १ ॥
कान्तेत्युत्पललोचने नु विपुलश्रोणीभरेत्युन्नमत्
पीनोत्तुङ्गपयोधरेति सुमुखांभोजेति सुभ्रूरिति ।

दृष्ट्वा माद्यति मोदतेऽभिरमते प्रस्तौति विद्वानपि
प्रत्यक्षाशुचिपुत्तिकां स्त्रियमहो मोहस्य दुश्चेष्टितम् ॥ २ ॥
याजस्त्रं जगदासुरामरमुखं बद्ध्वालकोद्‍बन्धनैः
कृष्ट्वा नर्तयति क्षणैश्च सकलं हावाञ्चितैर्लीलया ।
सम्प्रेताः कुरवश्च रावणमुखा दैत्याश्च यस्याः कृते
तां द्वारं निरयस्य को नु वृणुयाद्वामां सुखेप्सुः कदा ॥ ३ ॥
आवर्तः संशयानामविनयभवनं पत्तनं साहसानाम्
दोषाणां सन्निधानं कपटशतमयं क्षेत्रमप्रत्ययानाम् ।
स्वर्गद्वारस्य विघ्नो नरकपुरमुखं सर्वमायाकरण्डम्
स्त्रीयन्त्रं केन सृष्टं विषममृतमयं प्राणिनामेकपाशः ॥ ४ ॥
मायाकरण्डी नरकस्य हण्डी तपोविखण्डी सुकृतस्य भण्डी ।
नृणां विखण्डी चिरसेविता चेद् वृथा गतं तस्य नरस्य जीवनम् ॥ ५ ॥
दर्शनाद्धरते चित्तं स्पर्शनाद्धरते बलम् ।
सम्भोगाद्धरते वीर्यं नारी प्रत्यक्षराक्षसी ॥ ६ ॥
योषानलोदधिभवं मनुजस्तथायस्कान्ताङ्गना च पुरुषस्त्वप ईरितं वै ।
संसर्गतो द्रवति चाशु विकृष्यतेऽतः संगं त्यजेदनिशमेव बुधोऽङ्गनानाम् ॥
गौड़ी माध्वी तथा पैष्टी विज्ञेया त्रिविधा सुरा ।
चतुर्थी स्त्रीसुरा ज्ञेया ययेदं मोहितं जगत् ॥ ८ ॥
स्त्रियो हि मूलं निधनस्य पुंसः स्त्रियो हि मूलं व्यसनस्य पुंसः ।
स्त्रियो हि मूलं नरकस्य पुंसः स्त्रियो हि मूलं कलहस्य पुंसः ॥ ९ ॥
मलमूत्रवपाकृमिसम्पुटके नखरोमकफान्त्रचये खलु यः ।
रमतेऽस्थिशिरापिशितैर्विचिते स कथं न कृमिः प्रमदावपुषि ॥ १० ॥
अमेध्यपूर्णे कृमिराशिसंकुले स्वभावगन्धेऽप्यशुचौ च सद्रवे ।
कलेवरे मूत्रपुरीषभाजने रमन्ति मूढा विरमन्ति पंडिताः ॥ ११ ॥
चर्मखण्डं द्विधाभिन्नमपानोद्गारधूपितम् ।
ये रमन्ति नरास्तत्र कृमितुल्याः कथं न ते ॥ १२ ॥
अधस्ताच्छिद्रितं चर्म दुर्गन्धिपरिपूरितम् ।
मूत्रक्लिन्नस्य तस्यार्थे मा राजन् ब्राह्मणान् वधीः ॥ १३ ॥
काकमांसं शुनोच्छिष्टं स्वल्पं तदपि दुर्लभम् ।
किं तेन भक्षितेनापि क्षुधा नैव निवर्तते ॥ १४ ॥

टीका—जैसे कागला को तो मांस फेर कुत्ता का मुख को ऐंठो सो भी थोड़ो पेट भरे नहीं सो भी कुत्ता का मुखमें ताते दुर्लभ । अरे एसा मांस खाये ते कहा प्रयोजन सिद्ध होयगो क्यों के जाते अल्प क्षुधा भी निवृत्त नहीं होत है ।

तैसे परस्त्री परधनादिक विषय है सो भी काकमांस के नाँइ अति निषिद्ध है सो भी कुत्ता सरीसा पुरुष को उच्छिष्ट है शुद्ध नाहीं । औ धनादिक की प्राप्ति स्वल्प कहिये थोडी है मनोर्थ पूर्ण करे इतनी नहीं सो थोड़ो भी पावणो महा मुश्किल है ताते विवेकी है सो कष्ट सहै परन्तु ऐसा विषय की इच्छा न करै ।

कबीर नारी भांडा नर्क का बुरा भला के बीच ।
उत्तम ते अलगा रहै नेड़ा रहैस नीच ॥ १ ॥
यह अस्थिन को पींजरो मांस लपेट्यो जाहि ।
ऊपर चादर चामकी भीतर भिष्टा आहि ॥ २ ॥
रज्जब तिनकी कौन गति जो नित नारीसंग ।
जाकी लघु लावण लगे अंधे होत भुजंग ॥ ३ ॥

व्यभिचारनिषिद्ध ।

सन्तु विलोकन-भाषण-विलास-परिहास-केलिपरिरंभाः ।
स्मरणमपि कामिनीनामलमिह मनसो विकाराय ॥ १ ॥
अदर्शने दर्शनमात्रकामा दृष्ट्वा परिष्वंगरसैकलोलाः ।
आलिंगितायां पुनरायताक्ष्यामाशास्महे विग्रहयोरभेदम् ॥ २ ॥

छप्पय ।

अप्रतीति अपजश झूठ छलछिद्र मोह मंड ।
द्रोह छोह चख मान रहस्य रस दोष भोग झंड ॥
स्वाद वाद अरु शोक नाश प्रज्ञा दुख रासी ।
पराधीन औ चिंत कलंक दुर्जन हरखासी ॥
विरह वियोग सन्ताप तन अभरोसो अन्तःकरण ।
जनरामा पर त्रिया स्पर्श इता दोष शिरपर मरण ॥ १ ॥

कवित्त ।

जिहि पुरुष को परप्रमदासे प्रेम लग्यो अरु पुरुष से नेह लग्यो जिहि नारीको ।
नरक निवास त्रासदायक तेहिको होत जगत में जश न रहत जारीकारी को ॥
धिक अवतार ताको होत धरणीतलपै जिनहीं लजायो कुल तात महतारी को ।
सो प्रवीण नहीं पुनि नहीं रस सागरसो चुल्ले में चतुरपनो पर्‍यो विभचारी को ॥ १ ॥

लंकेश्वरो जनकजाहरणेन वाली
तारापहारकतयाप्यथ कीचकाख्यः ।
पाञ्चालिकाग्रहणतो निधनं जगाम
तच्चेतसाऽपि परदाररतिं न कांक्षेत् ॥ १ ॥

पयोनिगते बिन्दौ कोटिपूजा विनश्यति ।
जपहानिस्तपोहानिर्ब्रह्महत्या पदे पदे ॥ २ ॥
मद्यपाने महापापं नारीसंगे तथैव च ।
तस्मात् द्वंद्वं परित्यज्य न तेऽद्य नरकं यते ॥ ३ ॥

तमाखूखण्डन ।

आखूपे विड़ाल तैसे ताकत तमाखूपर
चाखत ना चोखे माल विष मे विलम के ।
सूक जात साफी जब माफी माँग जाचै जल
आगहित लागै जाय पाय वे इलम के ॥
ठठाठोल रोल में अंगार गिरि जात जबै
जाते जरि जात गद्दी गदरा ओगिलमके ।
चारि वरणहू को थूक चाटन को चेता चूक
ह्वैगये उलूक केते चाकर चिलमके ॥ १ ॥
नासका नहीं है घर नासका निसानी यह
कहै इम ताकों गाली बोलत वटाक दे ।
करै मनवार कोउ औरप्रति डिब्बी खोल
पोलदेख बीच आप झाँपत झटाक दे ॥
नाक ह्वै निकाम जाको देखत उलाक होत
नाक सुख खोय गिरे नरक गटाक दे ।
चिमटी चटाक भरि सूंघत सटाक देर
वेर वेर ढ़ेर मुख छींकत छटाक दे ॥ २ ॥

(नीतिः)

छप्पय ।

वात वात में वात करै निजमुख प्रभुताई ।
जन जन तें सित्रता जुगल बाँधे समुदाई ॥
सब कामन तें अरुचि दाय आनैं न महा पटु ।
आलसी विपुल असाधु कहै दुरवाद वैन कटु ॥
यों राजनीति चाणक्य कहै जग प्रसिद्ध शिक्षा परम ।
राखबे योग नाहीं नृपति ऐसे षट्र सेवक अधम ॥ १ ॥

दोहा ।

पीर तीर चकरी पथर, और फकीर अमीर ।
जोय जोय राखहु पुरुष, सोगुण होय शरीर ॥ १ ॥

छोरा बन्दगी दारा हुड़दंगास्तृतीयकः ।
मुठिया सींगाश्च नागा वै षष्ठोतीतो मतो बुधैः ॥ १ ॥

छप्पय ।

हाकिम जिणदिन होय विधी षट मेख वणावै ।
दोय श्रवण में दिये शब्द नहिं काहि सुनावै ॥
मेख दोय चख माहिं सबल निर्बल नहिं सूझै ।
मेख एक मुख माहिं विपति नहिं किणरी वूझै ॥
पदहीण होय हाकिम जबै छठीमेख तलद्वारमें ।
पांचही मेख छिटकै परी सरल वहै संसारमें ॥ १ ॥

दोहा ।

जो नृप पै अधिकारले, करे न परउपकार ।
पुनि ताके अधिकार में, रहत न आदि अकार ॥ १ ॥
धन जाताँ धर जावताँ, त्रिया पड़ंताँ ताव ।
तीनूं दिन है मौतका, कहा रंक कहा राव ॥ २ ॥
रण जीतण कंकण वँधण, पुत्र वधाई चाव ।
तीनूं दिन है त्याग का, कहा रंक कहा राव ॥ ३ ॥
तन संदूक गुन रत्न चुप, ताही दीजै ताल ।
गाहिकविन नहिं खोलियै, कूंची वचन रसाल ॥ ४ ॥

प्रशंसा ।

अद्यापि दुर्निवारं स्तुतिकन्या वहति कौमारम् ।
सद्भ्यो न रोचते साऽसन्तस्तस्यै न रोचन्ते ॥ १ ॥

षट् नकार ।

मौन गमन दूरी अवधि, अधचख क्रोध उचार ।
स्वरूपदास पर भाषणा, षट विधि चतुर नकार ॥ १ ॥
जैसी जाकी बुद्धि है, तैसी कहै वनाय ।
ताको वुरो न मानिये, लैन कहाँ से जाय ॥ २ ॥

सोरठा ।

सुधहीणो सरदार, मतहीणा राखै मिनख ।
अस आंधो असवार, राम रुखालो राजिया ॥ १ ॥
नान्हा मिनष नजीक, उमरावां आदर नहीं ।
ठाकर जिणनें ठीक, रणमें पड़सी राजिया ॥ २ ॥

अथ चौरासी बोल।

दोहा।

नक्कारो नीरस वचन, नटतहिं उपजै दुःख।
यों चौरासी जाहिगा, नटै तो वरते सुक्ख ॥ १ ॥
मनुष्य जन्म कों पाइके, टाले इतना दोष।
जगन्नाथ नर नारिको, सुधरे लोक प्रलोक ॥ २ ॥

छन्द एक पय।

राम सुमरतां थकिजे नहीं ॥ १ ॥ गुरु सेवामें सँकिजे नहीं ॥ २ ॥
करणी कर गरबाजे नहीं ॥ ३ ॥ नितको नियम घटाजे नहीं ॥ ४ ॥
दानदेत अलसाजे नहीं ॥ ५ ॥ सन्त देख टलजाजे नहीं ॥ ६ ॥
लछ विन शीश नमाजे नहीं ॥ ७ ॥ साची वात उठाजे नहीं ॥ ८ ॥
नीची संगति कीजे नहीं ॥ ९ ॥ साची परिहर दीजे नहीं ॥ १० ॥
नृपसे वाद वधाजे नहीं ॥ ११ ॥ ओछी अकल उपाजे नहीं ॥ १२ ॥
दया पालतां लजिजे नहीं ॥ १३ ॥ भाग भरोसो तजिजे नहीं ॥ १४ ॥
आप वडाई कीजे नहीं ॥ १५ ॥ दान उदक फिर लीजे नहीं ॥ १६ ॥
दान देत पछिताजे नहीं ॥ १७ ॥ गुरु को ज्ञान लजाजे नहीं ॥ १८ ॥
आन आसरो लीजे नहीं ॥ १९ ॥ न्याव अदल विन कीजे नहीं ॥ २० ॥
परमार्थ से मुड़जे नहीं ॥ २१ ॥ ऊझड़ मारग खड़जे नहीं ॥ २२ ॥
मन को मान्यो कीजे नहीं ॥ २३ ॥ दगो किसीको दीजे नहीं ॥ २४ ॥
दिन आथ्या से सोजे नहीं ॥ २५ ॥ शोक भणंते रोजे नहीं ॥ २६ ॥
रणमें पूठ वताजे नहीं ॥ २७ ॥ हाथां कुरब घटाजे नहीं ॥ २८ ॥
अणछाण्यो जल पीजे नहीं ॥ २९ ॥ कुयश किसीको लीजे नहीं ॥ ३० ॥
झूठी कविता करजे नहीं ॥ ३१ ॥ साची कहताँ डरजे नहीं ॥ ३२ ॥
झूठी निन्दा कीजे नहीं ॥ ३३ ॥ पर नारी चित दीजे नहीं ॥ ३४ ॥
घर तजि विषय कमाजे नहीं ॥ ३५ ॥ जहर जाणताँ खाजे नहीं ॥ ३६ ॥
काछ विकल मग लीजे नहीं ॥ ३७ ॥ कपटी मित्रजु कीजे नहीं ॥ ३८ ॥
सम्पति में ऋण रखजे नहीं ॥ ३९ ॥ धन योबन में छकजे नहीं ॥ ४० ॥
राज पुकारू जाजे नहीं ॥ ४१ ॥ वुरी पराई कीजे नहीं ॥ ४२ ॥
चोरी जारी कीजे नहीं ॥ ४३ ॥ पूठ धणी कों दीजे नहीं ॥ ४४ ॥
सूने मन्दिर जाजे नहीं ॥ ४५ ॥ जगमें वुरो कहाजे नहीं ॥ ४६ ॥
ओछी वस्ती वसजे नहीं ॥ ४७ ॥ तात्पर्य विन हसजे नहीं ॥ ४८ ॥
चुगल पाड़ोसी कीजे नहीं ॥ ४९ ॥ धाम परायो लीजे नहीं ॥ ५० ॥
भरम्या भटका खाजे नहीं ॥ ५१ ॥ अलगा उत्तर जाजे नहीं ॥ ५२ ॥

भांग तम्बाकू खाजे नहीं ॥ ५३ ॥ उपर खेती वाजे नहीं ॥ ५४ ॥
वेश्या के घर जाजे नहीं ॥ ५५ ॥ कुलकों दोष लगाजे नहीं ॥ ५६ ॥
पर धन काको हरिजे नहीं ॥ ५७ ॥ नीची संगति करिजे नहीं ॥ ५८ ॥
सूतो सिंह जगाजे नहीं ॥ ५९ ॥ चूड़ेलण वतलाजे नहीं ॥ ६० ॥
हरिकी भक्ति विसरजे नहीं ॥ ६१ ॥ विकर्म कवहू करजे नहीं ॥ ६२ ॥
वाद विवादू है जे नहीं ॥ ६३ ॥ हलकी वाणी कहजे नहीं ॥ ६४ ॥
झूठी हामल भरजे नहीं ॥ ६५ ॥ वचन काढ़के फिरजे नहीं ॥ ६६ ॥
राँड भाँड से अड़जे नहीं ॥ ६७ ॥ गतराड़े से लड़जे नहीं ॥ ६८ ॥
नदी वहाला तिरजे नहीं ॥ ६९ ॥ डूंगर सेती गिरजे नहीं ॥ ७० ॥
सुणी वात फैलाजे नहीं ॥ ७१ ॥ अनजान्या फल खाजे नहीं ॥ ७२ ॥
सुलझ्यां को उलझाजे नहीं ॥ ७३ ॥ निर्धन कों डरपाजे नहीं ॥ ७४ ॥
अपयश कांना सुणजे नहीं ॥ ७५ ॥ चचो मम्मो भणजे नहीं ॥ ७६ ॥
जामन किसका हुइजे नहीं ॥ ७७ ॥ अरि से गाफिल रहिजे नहीं ॥७८॥
झूठो दोषण दीजे नहीं ॥ ७९ ॥ निर्वल शरणो लीजे नहीं ॥ ८० ॥
मूर्ख को वतलाजे नहीं ॥ ८१ ॥ धन विन अर्थ गमाजे नहीं ॥ ८२ ॥
लेताँ देताँ लजिजे नही ॥ ८३ ॥ भल माणस को तजिजे नहीं ॥ ८४ ॥

दोहा ।

यह चौरासी शुभ अशुभ, कही ठामकी ठाम ।
जगन्नाथ करिये सवै, जवलग गृह विश्राम ॥ ३ ॥
इन चलगत चालै सुघर, भला कहै सव लोय ।
निश्चय या वा लोकमें, पला न पकड़ै कोय ॥ ४ ॥
यह चौरासी चित धरै, वह चौरासी वाद ।
अपनी अपने हाथ है, मन माने सो साथ ॥ ५ ॥
वार वार नरतनु नहीं, कहै शास्त्र अरु सन्त ।
ताते सुकृत कीजिये, कै भजिये भगवन्त ॥ ६ ॥
जैन यवन शिव धर्म कहै, करणी सुधरे काम ।
दया धर्म इकतार से, जगन्नाथ कह राम ॥ ७ ॥

॥ इति श्रीचौरासी बोल ॥

हरदम कृष्ण कहे श्रीकृष्ण कहे तू जवाँ मेरी,
यही मतबल खातर करताहूँ खुशामद मैं तेरी,
दही और दूध शक्कर रोज खिलाताहूँ तुझे,
तो भी हररोज हरनाम न सुनाती मुझे,
खोई जिंदगानी सारी सोई गुनाह माफ तेरा,
दया मत भूले प्रभुनाम आखिर वक्त मेरा ॥ १ ॥ (दया)

नथा कुछ तो खुदा था कुछ न होता तो खुदा होता,
डुबोया मुझको होने ने न होता मैं तो क्या होता,
हुई मुद्दत कि गालिब मरगया पर याद आता है,
वह हर एक बात पर कहना कि यों होता तो क्या होता ॥ १ ॥ (गालिब)
खुदा पूछेगा महशर में यह तकसीर किसकी है।
कहूँगा वरमला में तकदीर में यह तहरीर किसकी है ॥ १ ॥
न कुछ हम हंसके सीखे हैं न कुछ हम रोके सीखे हैं।
जो कुछ थोड़ासा सीखे हैं किसीके होके सीखे हैं ॥ १ ॥ (अजीज)

नजीर।

दुनिया अजब बाजार है कुछ जिन्स यहां की साथ ले।
नेकी का दरजा नेक है बद से वदी की बात ले ॥
आराम दे आराम ले आफात दे आफात ले।
मेवा दिये मेवा मिलै फल फूल दे फ़ल पात ले ॥
कलजुग नहीं कर जुग्ग है यहां दिनकों दे और रात ले।
क्या खूब सौदा नक्द है इस हाथ दे उस हाथ ले ॥ १ ॥
कांटा किसी के मत लगा गो मिस्ले[1] गुल फूला है तू।
वो तेरे हक में तीर है किस वात में भूला है तू ॥
मत आग में दे और कूं फिर घास का पूला है तू।
सुन रक्ख यह नुक्ता बे खबर किस बात पर भूला है तू ॥ कलजुग ॥२॥
चाहे सो लेलै इस घड़ी सब जिन्स यहां तैयार है।
आराम में आराम है आजार[2] में आजार है ॥
दुनियां न जाने इस को मियाँ दरिया की यह मँझधार है।
औरों का बेड़ा पार कर तेरा भी बेड़ा पार है ॥ कलजुग ॥ ३ ॥
शोखी[3] शरारत[4] मकरो[5] फन्द सबका बसेखा है यहां।
जो जो दिखाया और कूं वो आप भी देखा है यहां ॥
नेकी बदी जो कुछ करे सबका परेखा है यहां।
जो जो पड़ा तुलता है दिल तिल तिल का लेखा है यहां ॥ कलजुग ॥४॥
जो ओर की वस्ती रखे उसका भी वस्ता है पुरा।
जो ओर की तोड़े धुरी उसका भी टूटे है धुरा ॥
जो और के मारे छुरी उसके भी लगता है छुरा।
जो और की चीते बुरी उसका भी होता है बुरा ॥ कलजुग ॥ ५ ॥

---

१ मानिंद। २ तकलीफ। ३ चालाकी। ४ वदी। ५ धोका।

जो और कूं फल देवेगा वो भी सदा फल पावेगा।
गेहूं से गेहूं जों से जों चाँवल से चाँवल पावेगा॥
जो आज देवेगा यहां वैसाही वो कल पावेगा।
कल देवेगा कल पावेगा कलपायगा कलपावेगा॥ कलजुग॥ ६॥
तू और की तारीफ[1] कर तुझको सनाखानी मिले।
कर मुश्किल आशां और की तुझ को भी आसानी मिले॥
तू और को मेहमान रख तुझको भी महमानी मिले।
रोटी खिला रोटी मिले पानी पिला पानी मिले॥ कलजुग॥ ७॥
करले जो करना है अब यह दम[2] तो कोई आँन है।
एहसान[3] में एहसान है नुकसान में नुकसान है॥
तुहमत में यहां तुहमत मिले तूफान में तूफान है।
शैतान[4] कूं शैतान है रहमान[5] कूं रहमान है॥ कलजुग॥ ८॥
यहां ज़हर दे तो ज़हरले शक्कर में शक्कर देखले।
नेकों को नेकी का मजा मूंजी को टक्कर देखले॥
मोती दिये मोती मिले पत्थर में पत्थर पेखले।
गर तुझको यह बांवर[6] नहीं तो तूभी करके देखले॥ कलजुग॥ ९॥
जो हारसें दे और को सो वह भी हारा जायगा।
खोवे सहारा और का उसका सहारा जायगा॥
यहां आज जिसके हाथ से कोइ मर विचारा जायगा।
गाफिल न हो इस बात पर कल वो भी मारा जायगा॥ कलजुग॥ १०॥
गफलत कि यह जागे नहीं यहां साँहिबे इर्दराक रहु।
दिल शाद[9] रख दिल शाद रहु गमनाक[10] रख गमनाक रहु॥
हर हाल में तू भी नजीर अब हर कदम की खाक रहु।
यह वो मकां है अय सियां यहां पाक रहु बेबाक[11] रहु॥ कलजुग॥ ११॥

बनजारानामा।

इक हिर्स[12] हवा को छोड़ सियां मत देश विदेश फिरे मारा।
कज्ज़ाक[13] अजल[14] का लूटे है दिन रात बजाकर नकारा॥
क्या भैंसा बधिया बैल सुतर[15] क्या गोने पल्ला सर भारा।
क्या गेहूं चावल मोठ मटर क्या आग धुआँ और अंगारा॥
सब ठाट पड़ा रहजावेगा जब लाद चलेगा बनजारा॥ १॥

---

१ तारीफ करना। २ घड़ी। ३ नेकी। ४ दुष्ट। ५ परमेश्वर। ६ यकीन। ७ मजबूत। ८ दरयाफ्त। ९ खुश। १० तकलीफ। ११ बेखोफ़। १२ चाह। १३ बटपाड़। १४ मोत। १५ ऊंठ।

गर है तू लक्खी बनजारा और खेप भी तेरी भारी है।
अय गाफिल तुझसे भी चढ़ता एक और बड़ा वोपारी है॥
क्या शक्कर सिश्री कंद गिरी क्या साँभर मीठा खारी है।
क्या दाख मुनक्का सोंठ मिरच क्या केसर लोंग सुपारी है॥ सब ॥२॥
तू बधिया[1] लादे बैल भरे जो पूरब पच्छिम जावेगा।
या सूद बढ़ाकर लावेगा या घाटा वाढ़ा पावेगा॥
बटमार अजल का रस्ते में जब भाला मार गिरावेगा।
धन दौलत नाती पोते क्या इक कुनबा[2] पास न आवेगा॥ सब ॥३॥
हर मंजिल में अब साथ तेरे यह जितना डेरा डांडा है।
जर दाम दिरमका भांडा है बन्दूक सिपर[3] और खांडा है॥
जब नायक तनका निकल गया जो मुल्कों मुल्कों हांडा है।
फिर टांडा है न भांडा है न हलवा है न मांडा है॥ सब ॥४॥
जब चलते चलते रस्ते में यह गोन तेरी ढ़ल जावेगी।
एक बधिया तेरी मट्टी पर फिर चरने घास न पावेगी॥
यह खेप जो तूने लादी है सब हिस्सों में बट जावेगी।
धी पूत जँवाई बेटा क्या बनजारन पास न आवेगी॥ सब ॥५॥
क्यों नाहक बोझ उठाता है इन गोनों भारी भारी के।
जब काल लुटेरा आन पड़ा फिर दूने है वोपारी के॥
क्या साज जड़ाऊ जर जेवर क्या गोटे थान किनारी के।
क्या घोड़े जीन सुनहरी के क्या हाथी लाल अम्बारी के॥ सब ॥६॥
जो खेप भरे तू जाता है यह खेप सियां मत जान अपनी।
अब कोई घड़ी पल सायत में यह खेप बदन की है खपनी॥
क्या थाल कटोरे चांदी के क्या पीतल के ढ़कना ढ़कनी।
क्या बरतन सोने रूपे के क्या मट्टी की हंडिया चपनी॥ सब ॥७॥
मगरूर न हो तलवारों पर मत भूल भरोसे ढ़ालों के।
सब पतातोड़ के भागेंगे मुंह देख अजल के भालों के॥
क्या डिब्बे हीरे मोती के क्या ढ़ेर खजाने मालों के।
क्या बुगचे तास मुशज्जर[4] के क्या तख्ते साल दुसालों के॥ सब ॥८॥
कुछ काम न आवेंगे तेरे यह लाल जमुर्रद[5] सीमो[6] जर[7]।
सब पूंजी बाट में बिखरेगी जब आन बनेगी जी ऊपर॥
क्या मसनद[8] तकिये मुल्क मकां क्या चौकी कुर्सी तख्त छतर।
क्या माल खजाने मुल्क मकां क्या दौलत हशमत[9] फौजे लश्कर॥ सब॥९

---

१ छोटा बैल। २ परवार। ३ ढाल। ४ खेनखाप। ५ पन्ना। ६ चांदी। ७ सोना। ८ विछौना। ९ घबराहट=दबदबा।

यह धूम धड़ाका साथ लिये क्यों फिरता है जंगल जंगल ।
इक भुनगा पास न आवेगा मोकूफ हुआ जब अन्न रु जल ॥
घर बार अटारी चौबारे क्या खाशा तनसुख और मल मल ।
क्या चिलमन तकिये रेशम के क्या लाल पलंग क्या रंगमहल ॥ सब १० ॥
क्यों पुख्त मकां बनवाता है है खंभ तेरे तनका पोला ।
तू उंची गढ़ी उठाता है यहां घोर गढ़े ने मुंह खोला ॥
क्या रेवनी खंद करंद बड़ा क्या कोट कंगूरा अनमोला ।
क्या बुर्ज रेहकला तोप किला क्या शीशा दारू और गोला ॥ सब॥११॥
जब काल फिराकर चाबुक को यह बैल वदन का हांकेगा ।
कोइ नाज समेटेगा तेरा कोई गोंन सिये और टांकेगा ॥
हो ढ़ेर अकेला जंगल में तू खाक लहद² की फांकेगा ।
उस जंगल में जब आह नजीर एक भुनगा आन न झांकेगा ॥ सब ॥ १२ ॥

धोकेकी टट्टी ।

यह पैठ अजब है दुनिया की और क्या क्या जिन्स इकट्ठी है ।
यहां माल किसी का मीठा है और चीज किसी की खट्टी है ॥
कुछ पकता है कुछ भुनता है पकवान मिठाई पट्टी है ।
जब देखा खूब तो आखिर को न चूल्हा भाड़ न भट्टी है ॥
गुल शोर बबूला आग हवा और कीचड़ पानी मट्टी है ।
हम देख चुके इस दुनिया को सब धोखे कीसी टट्टी है ॥ १ ॥
कोइ ताज खरीदे हंस हंस कर कोइ रख्त खड़ा बनवाता है ।
कोइ कपड़े रंगे पहिने है कोइ गुदड़ी ओढ़े जाता है ॥
कोइ भाई बाप चचा नाना कोइ नाती पूत कहाता है ।
जब देखा खूब तो आखिर को न रिश्ता है न नाता है ॥ गुल ॥ २ ॥
कोइ सेठ महाजन लक्खपती बजाज कोई पन्सारी है ।
यहां बोझ किसी का हल्का है और खेप किसी की भारी है ॥
क्या जाने कौन खरीदें है और किसने जिन्स उतारी है ।
जब देखा खूब तो आखिर को दल्लाल न को बोपारी है ॥ गुल ॥ ३ ॥
कोइ फूल के बैठे मशनद पर कोइ रोवे अपनी दौलत खो ।
कोइ बोले अपना मुझसे लो और मेरा है सो मुझको दो ॥
कोइ लड़ता है कोइ मरता है कोइ झगड़े हक और नाहक को ।
जब देखा खूब तो आखिर को कुछ लेना एक न देना दो ॥ गुल ॥ ४ ॥

१ पड़दा । २ कब्र ।

रम्माल नजूमी आमिल है और फाजिल मुल्ला स्याना है।
कोइ आसिल कासिल दाना है कोइ मस्त सिड़ी दीवाना है॥
तावीज फतीला फाल फिसूँ और जादू मंतर लाना है।
जब देखा खूब तो आखिर को सब हीला मकर बहाना है॥ गुल॥ ५॥
कोइ लौटे कूचे गलियों में तैयार किसी का घोरा है।
कोइ बाग कुआँ बनवाता है और घेर किसी ने घेरा है॥
नित कजिये झगड़े रल्ले हैं यह मेरा है यह तेरा है।
जब देखा खूब तो आखिर को न मेरा है न तेरा है॥ गुल॥ ६॥
कोइ टोपी टोप बनाता है कोइ बाँध फिरै अमांमा है।
कोइ साफ बरहना फिरता है न पगड़ी है न पजामा है॥
कमखाब गंजी और गाढ़े का नित कजिया और हंगामा है।
जब देखा खूब तो आखिर को न पगड़ी है न जामा है॥ गुल॥ ७॥
कोइ बाल बढ़ाये फिरता है कोइ सर को घोट मुंड़ाता है।
कोइ कपड़े रंगे पहिनें है कोइ नंग मुनंगा आता है॥
कोइ पूजा कथा बखानें है कोइ छापा तिलक लगाता है।
जब देखा खूब तो आखिर को सब छोड़ अकेला जाता है॥ गुल॥ ८॥
कोइ रोता है कोइ हँसता है कोइ नाचे है कोइ गाता है।
कोइ छीनै झपटै ले भागै कोइ घूँस का डर दिखलाता है॥
कोइ माल इकट्ठा करता है कोइ कुंजी कुल्फ लगाता है।
जब देखा खूब तो आखिर को सब झगड़ा रल्ला जाता है॥ गुल॥ ९॥
कोइ बेचै भंग शराब अफियून कहीं दूध दही की फेरी है।
कोइ पल्ला सर पर लाता है कोइ लादे बैल मुकेरी है॥
कोइ झगड़े अपनी जागाह पर यह मेरी है यह तेरी है।
जब देखा खूब तो आखिर कोन तेरी है न मेरी है॥ गुल॥ १०॥
कहिं बल्ली टेकी थूनी है कहिं घास कड़ब की पूली है।
कहिं चलनी छाज पिटारी है कहिं चूल्हा चक्की चूल्ही है॥
तरकारी बैंगन साग हरा गुड़गांडा गाजर मूली है।
जब देखा खूब तो आखिर को सब बिकरी देखत भूली है॥ गुल॥ ११॥
कहिं बान अटेरन टाट गजी कहिं दमरख चमरख तकला है।
कहिं रोक रुपैये का खुरदा कहिं कौडी पैसा धेला है॥
कहिं छटना छाज पिटारी है कहिं बिकता खाट खटोला है।
जब देखा खूब तो आखिर को न पीढ़ी खाट खटोला है॥ गुल॥ १२॥

---

१ रमली। २ जोतसी। ३ मंत्रतंत्रवादी। ४ पूरा। ५ वत्ती। ६ मुहूरत। ७ मंत्र फूंकना। ८ बहाना। ९ धोका। १० साफा। ११ दोवदी। १२ लड़ाई।

कोइ शिकरा बाज उड़ाता है कोइ हाथ में रक्खै तुतली है।
शहवाज कोई ले बैठा है और दौड़ किसीने दुतली है॥
है तार किसी के हाथों में और नाचत फिरती पुतली है।
जब देखा खूब तो आखिर को न रेशम सूत न सुतली है॥ गुल॥ १३॥
अब किसका रंग बुरा कहिये और किसका रूप भला कहिये।
इक दम की पैठें लगी है यह अम्बोह मजा चरचा कहिये॥
यह सैर तमाशा देख नजीर अब जा कहिये बेजा कहिये।
कुछ बात नहीं बनआने की चुपचाप भला है क्या कहिये॥ गुल॥ १४॥

बुड्ढा।

वटमार[१] अजल का आ पहुँचा टुक इसको देख डरो बाबा।
अब अश्क[३] बहाओ आँखों से और आहें शैर्द भरो बाबा॥
दिल हाथ उठाकर जीनेसे बेबस मन मार मरो बाबा।
जब बाप की खातिर रोतेथे अब अपनी खातिर रो बाबा॥
तन सूखा कुबड़ी पीठ हुई घोड़े पर जीन धरो बाबा।
अब मौत नकारा आ बागा चलने का फिकर करो बाबा॥ १॥
अब जीने को तुम रुखसत दो और मरने को महमान करो।
खैरात करो अहसान करो या पुण्य करो या दान करो॥
या पूरी लड्डू बँटवाओ या खासा हलवा नान[५] करो।
कुछ लुत्फ नहीं अब जीनेनें अब चलने का सामान करो॥ तन॥ २॥
दिल काटो अपने जीनेसे अब और गले को मत काटो।
अब चाट फर्ना की टुक चक्खो और खून किसीका मत चाटो।
धुन छोड़ो हिस्से बखरे की तुम भाजी अपनी मत बाँटो॥
नौकंद बछेरे कूद चुके अब और दुलत्ती मत छाँटो॥ तन॥ ३॥
यह अस्प बहुत कूदा उछला अब कोड़ा मारो जेरकरो।
जब माल इकट्ठा करते थे अब तनका अपने ढ़ेर करो॥
गढ़ टूटा लश्कर भाग चुका अब म्यान में तुम शमसेर करो।
तुम साफ लड़ाई हारचुके अब भागन में मत देर करो॥ तन॥ ४॥
सर कांपा चांदी बाल हुए मुंह पीला पल्कें पलट गई।
कद टेढ़ी कान हुए बहरे अरु आँखें भी चुंधियाय गई॥
सुख नींद गई और भूख घटी दिल सुस्त हुआ आवाज मही।
जो होनी थी सो हो गुजरी अब चलने में कुछ देर नहीं॥ तन॥ ५॥

---

१ हाट। २ भीड़भाड़। ३ आंसू। ४ ठंढी। ५ रोटी। ६ मरना। ७ जिस-परसवारनहो। ८ घोड़ा।

इस पाँव घसिट कर चलने से मत रस्ते को हैरान करो।
और पोपले मुंह से रोटी को मत मल मल कर हलकान करो॥
अब आप हुए तुम पानी से मत पानी का नुकसान करो।
कुछ लाभ नहीं इस जीनेमें अब मरने से पहिचान करो॥ तन॥ ६॥
गर अच्छी करनी नेक अमल[1] तुम दुनिया से ले जाओगे।
तो घर भी अच्छा पाओगे और सुख से बैठे खाओगे॥
और ऐसी दौलत छोड़ के तुम जो खाली हाथों जाओगे।
कुछ बात नहीं वनआने की घबराओगे पछिताओगे॥ तन॥ ७॥
घर बार रुपैये पैसे में मत दिल को तुम खुर्शन्द[2] करो।
या घोर बनाओ जंगल में या जमुना पर आनंद करो॥
मौत जो आन लताड़ेगी आखिर मकर करो या फन्द करो।
बस बहुत तमाशा देख चुके अब आँखें अपनी बंध करो॥ तन॥ ८॥
बोपार तो यहां का बहुत किया अब वहां का भी कुछ सौदा लो।
जो खेप उधर को चढ़ती हो उस खेप को यहां से लदवालो॥
उस राह में जो कुछ खाते हो उस खाने को भी मंगवालो।
सब साथी पहुँचे मंजिल पर अब तुमभी अपना रस्ता लो॥ तन॥ ९॥
दो चार घड़ी या दो दिन में अब तन से जान निकलनी है।
यह हड्डी पसली जितनी है या गलनी है या जलनी है॥
है रात जो बाकी थोड़ी सी कोइ दम को वह भी ढ़लनी है।
उठ बांधो कमर सबेरे से तुम को भी मंजिल चलनी है॥ तन॥ १०॥
यह दौलत काम न आवेगी मत इसको तुम जंजीर करो।
यह खाक़ बदन की पारा है मन मार इसे अक्सीर[3] करो॥
जो पार उतारे दरिया से उन बातों को गुरु पीर करो।
अब नाव किनारे आ पहुँची अब चढ़ने की तदबीर करो॥ तन॥ ११॥
कुछ देर नहीं अब चलने में या आज चलो या काल चलो।
जो कपड़े लत्ते लेने हैं सो जल्दी बाँध सँभल निकलो॥
अब शाम नहीं अब सुबह हुई चूं मोम पिघलकर ढ़ल निकलो।
क्यों नाहक धूप चढाते हो बस ठंढ़े हि ठंढे चल निकलो॥ तन॥ १२॥
यह ऊंठ गिरावेगा यारो सन्दूक जनाजा[4] अर्थी[5] है।
जब इसपै हो असवार चले फिर घोड़ा है न हस्ती है॥
किस नींद पड़े तुम सोते हो यह बोझ तुम्हारा भारी है।
कुछ देर नहीं अब आह नजीर तैय्यार खड़ी असवारी है॥ तन॥ १३॥

---

१ बरताव। २ खुश। ३ कीमिया। ४ सीढी। ५ रथी।

खुदमस्ती।

कोइ हाल मस्त कोइ माल मस्त कोइ तूती मैना सूवे में।
कोइ खान मस्त पहिरान मस्त कोइ राग रागिणी धूवे में॥
कोइ अमल मस्त कोइ रमल मस्त कोइ शतरंज चौपड़ जूवे में।
एक खुद मस्ती बिन और मस्त सब पड़े अविद्या कूवे में॥ १॥
कोइ अकल मस्त कोइ शकल मस्त कोइ चंचलताई हाँसी में।
कोइ वेद मस्त कत्तेब मस्त कोइ मक्के में कोइ कासी में॥
कोइ ग्राम मस्त कोइ धाम मस्त कोइ सेवक में कोइ दासी में।
एक खुद मस्ती बिन और मस्त सब पड़े अविद्या फासी में॥ २॥
कोइ पाठ मस्त कोइ ठाठ मस्त कोइ भैरव में कोइ काली में।
कोइ ग्रन्थ मस्त कोइ पन्थ मस्त कोइ श्वेत पीत रंग लाली में॥
कोइ काम मस्त कोइ खाम मस्त कोइ पूरण में कोइ खाली में।
एक खुद मस्ती बिन और मस्त सब बंधे अविद्या जाली में॥ ३॥
कोइ हाट मस्त कोइ घाट मस्त कोइ वन परवत औजारा में।
कोइ जाति मस्त कोइ पाँति मस्त कोइ तात मात सुत दारा में॥
कोइ कर्म मस्त कोइ धर्म मस्त कोइ मस्जिद ठाकुरद्वारा में।
एक खुद मस्ती बिन और मस्त सब बहे अविद्या धारा में॥ ४॥
कोइ राज मस्त गज बाज मस्त कोइ छप्पर में कोइ फूले में।
कोइ जुद्ध मस्त कोइ क्रुद्ध मस्त कोइ खड़्ग कुठार वसूले में॥
कोइ प्रेम मस्त कोइ नेम मस्त कोइ छींके में कोइ झूले में।
एक खुद मस्ती बिन और मस्त सब जले अविद्या चूल्हे में॥ ५॥
कोइ शाक मस्त कोइ खाक मस्त कोइ खासे में कोइ मलमल में।
कोइ जोग मस्त कोइ भोग मस्त कोइ स्थिति में कोइ चंचल में॥
कोइ रिद्धि मस्त कोइ सिद्धि मस्त कोइ लेन देन की गलगल में।
एक खुद मस्ती बिन और मस्त सब फँसे अविद्या दलदल में॥ ६॥
कोइ ऊर्ध्व मस्त कोइ अधः मस्त कोइ बाहिर में कोइ अन्तर में।
कोइ देश मस्त विदेश मस्त कोइ औषधि में कोइ मंतर में॥
कोइ आप मस्त कोइ ताप मस्त कोइ नाटक चेटक तंतर में।
एक खुद मस्ती बिन और मस्त सब भ्रमे अविद्या जंतर में॥ ७॥
कोइ सुष्ट मस्त कोइ तुष्ट मस्त कोइ दीरघ में कोइ छोटे में।
कोइ गुफा मस्त कोइ सुफा मस्त कोइ तूंबे में कोइ लोटे में॥
कोइ ज्ञान मस्त कोइ ध्यान मस्त कोइ अस्ली में कोइ खोटे में।
एक खुद मस्ती बिन और मस्त सब रहे अविद्या टोटे में॥ ८॥

यह लौकिक मस्त कहाँ लौं वरणूं हैं माया के दंगल में।
कौन करे तिनकी गिनती सब जकड़े हैं दृढ़ संगल में ॥
छिन में रुष्ट तुष्ट इक छिन में स्थिति सदा अमंगल में।
एक खुद मस्ती बिन और मस्त सब भुले अविद्या जंगल में ॥ ९ ॥

॥ श्रीहरिः ॥

विविधपुष्पगुच्छः।

श्लोक।

अस्तिगिरिसमं स्यात्कज्जलं सिंधुपात्रे
सुरतरुवरशाखा लेखनी पत्रमुर्वी।
लिखति यदि गृहीत्वा शारदा सर्वकालं
तदपि तव गुणानामीश पारं न याति ॥ १ ॥

प्रह्लादनारदपराशरपुंडरीकव्यासांबरीषशुकशौनकभीष्मकाद्याः।
रुक्मांगदार्जुनवसिष्ठविभीषणाद्या एतानहं परमभागवतान्नमामि ॥ २ ॥
यावन्निरंजनमजं पुरुषं जरंतं संचितयासि सकले जगति स्फुरंतम्।
तावद्बलात्स्फुरति हंत हृदंतरे मे गोपस्य कोपि शिशुरंजनपुंजमंजुः ॥ ३ ॥

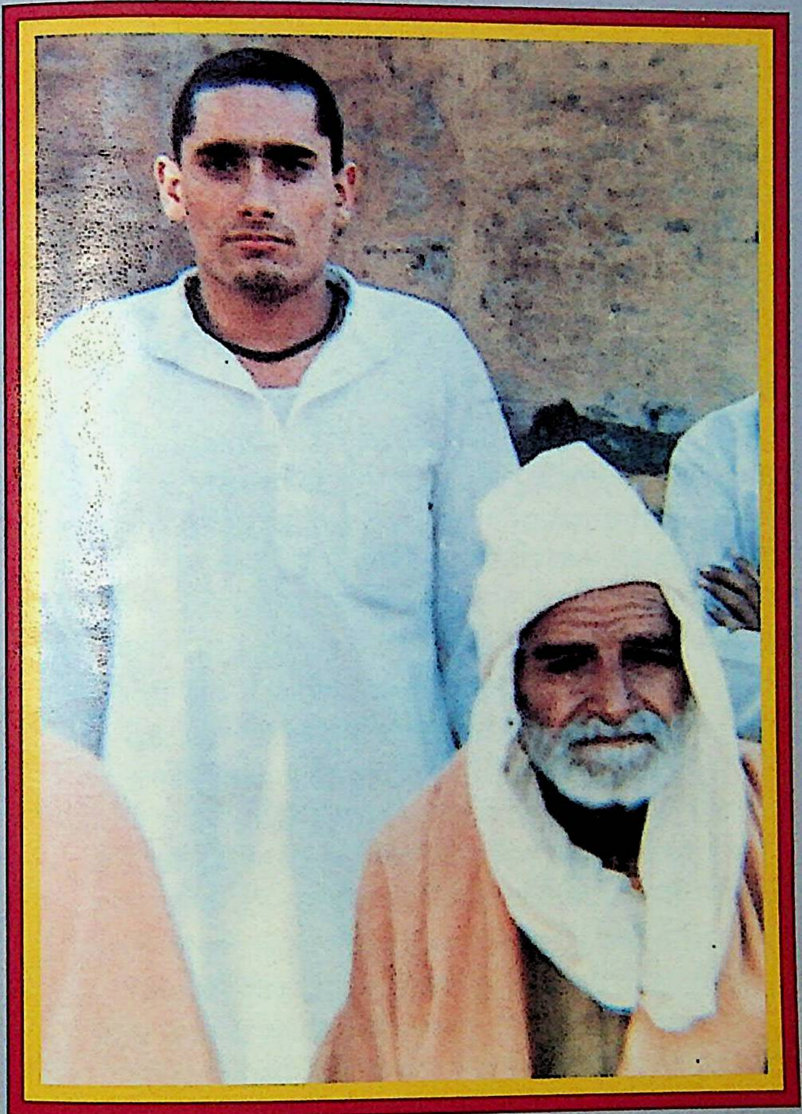
ध्यानाभ्यासवशीकृतेन मनसा यन्निर्गुणं निष्क्रियं
ज्योतिः किंचन योगिनो यदि परं पश्यंति पश्यंतु ते।
अस्माकं तु तदेव लोचनचमत्काराय भूयाच्चिरं
कालिंदीपुलिनेषु यत्किमपि तन्नीलं महो-(तेजः) धावति॥४॥

अद्वैतवीथीपथिकैरुपास्याः स्वानंदसिंहासनलब्धदीक्षाः।
शठेन केनापि वयं हठेन दासीकृता गोपवधूविटेन ॥ ५ ॥

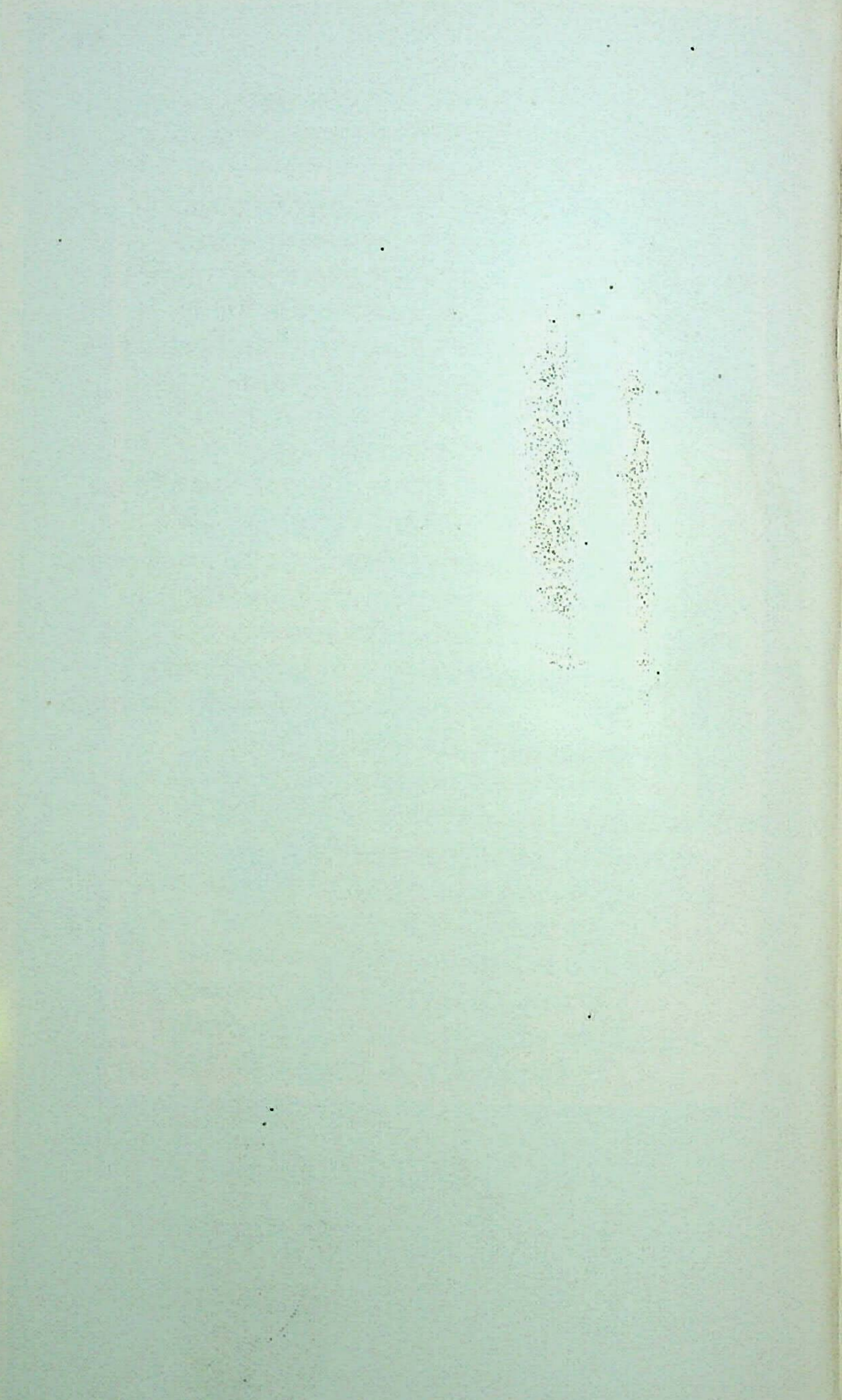
शास्त्रं भूरि निजस्वरूपमतये स्वाराधनार्थं वपुः
स्वध्यानाय मनश्च शुद्धिमनघां लब्धं च तीर्थादिकम्।
तत्वान्यप्युपदेष्टुमुत्तमगुरून् दत्वानुगृह्णाति नः
संसारे तदपि भ्रमेमाह स किं कुर्वीत सर्वेश्वरः ॥ ६ ॥

रे कंदर्प करं कदर्थयसि किं कोदंडटंकारितै
रे रे कोकिल कोमलैः कलरवैः किं त्वं वृथा जल्पसि।
मुग्धे स्निग्धविदग्धमुग्धमधुरैर्लोलैः कटाक्षैरलं
चेतश्चुंबितचंद्रचूडचरणध्यानामृतं वर्तते ॥ ७ ॥

का चिंता मम जीवने यदि हरिर्विश्वंभरो गीयते
नो चेदर्भकजीवनाय जननीस्तन्यं कथं निःसरेत्।
इत्यालोच्य मुहुर्मुहुर्यदुपते लक्ष्मीपते केवलं
त्वत्पादांबुजसेवनेन सततं कालो मया नीयते ॥ ८ ॥



बैठे हुए - साधु वैद्य श्रीहरिप्रकाशजी "आयुर्वेदरत्न"
खड़े हुए - साधु रामपालजी रामस्नेही



नाहं विप्रो नच नरपतिर्नापि वैश्यो न शूद्रो
नो वा वर्णो न च गृहपतिर्नो वनस्थो यतिर्वा ।
किन्तु प्रोद्यन्निखिलपरमानंदपूर्णामृताब्धे-
र्लक्ष्मीभर्तुः पदकमलयोर्दासदासानुदासः ॥ ९ ॥
आनीता नटवन्मया तव पुरः श्रीकृष्ण या भूमिका
व्योमाकाशखखाम्बराब्धिवसवस्त्वत्प्रीतयेऽद्यावधि ।
प्रीतस्त्वं यदि चेन्निरीक्ष्य भगवन्मत्प्रार्थितं देहि मे
नो चेद्ब्रूहि कदापि मानय तनूस्त्वेतादृशीर्भूमिकाः ॥ १० ॥
अहल्या पाषाणः प्रकृतिपशुरासीत् कपिचमू-
र्गुहोऽभूच्चांडालस्तदपि गमितास्ते निजपदम् ।
अहं चित्तेनाश्मा पशुरपि तवार्चादिकरणात्
क्रियाभिश्चांडालो रघुवर न मामुद्धरसि किम् ॥ ११ ॥

यद्याज्ञया व्यापकता हता ते भिदैकता वाक्परता च तुल्या ।
ध्यानेन बुद्धेः परता परेश जात्याऽजता क्षंतुमिहार्हसि त्वम् ॥ १२ ॥
आत्मा नदी भारतपुण्यतीर्था सत्यावहा शीलतटा दयोर्मिः ।
तत्राभिषेकं कुरु पांडुपुत्र न वारिणा शुद्ध्यति चान्तरात्मा ॥ १३ ॥
भूमौ जले नभसि देवनरासुरेषु भूतेषु देवि सकलेषु चराचरेषु ।
पश्यंति शुद्धमनसा खलु रामरूपं रामस्य ते क्षितितले समुपासकाश्च॥१४

ये पापं शमयंति संगतिभृतां ये दानशृंगारिणो
येषां चित्तमतीव निर्मलतरं येषां न मानव्रतम् ।
ये सर्वान्सुखयंति हि प्रतिदिनं ते साधवो दुर्लभा
गंगावद्गजगंडवद् गगनवद् गांगेयवज्ज्ञेयवत् ॥ १५ ॥
अनंतशास्त्रं बहुला च विद्या अल्पश्च कालो बहुविघ्नता च ।
यत्सारभूतं तदुपासनीयं हंसो यथा क्षीरमिवाम्बुमध्यात् ॥ १६ ॥
अर्च्ये विष्णौ शिलाधीर्गुरुषु नरमतिर्वैष्णवे जातिबुद्धि-
र्विष्णोर्वा वैष्णवानां कलिमलमथने पादतीर्थेऽम्बुबुद्धिः ।
सिद्धे तन्नाम्नि मंत्रे कलिकलुषहरे शब्दसामान्यबुद्धिः
श्रीशे सर्वेश्वरेशे तदितरसमधीर्यस्य वा नारकी सः ॥ १७ ॥

नृदेहमाद्यं सुलभं सुदुर्लभं प्लवं सुकल्पं गुरुकर्णधारम् ।
मयानुकूलेन नभस्वतेरितं पुमान् भवाब्धिं न तरेत्स आत्महा ॥१८॥
जातोऽहं जनको ममैष जननी क्षेत्रं कलत्रं कुलं
पुत्रो मित्रमरातयो वसु बलं विद्याः सुहृद्बांधवाः ॥
चित्तस्पंदितकल्पनामनुभवन्विद्वानविद्यामयीं
निद्रामेत्य विघूर्णितो बहुविधान् स्वप्नानिमान्पश्यति ॥ १९ ॥

वसतु गह्वरकाननकोटरे तपतु चोग्रतपोऽब्दशतैरपि।
पठतु शास्त्रकदंबमहर्निशं नहि विचारमृते सुखमेधते ॥ २० ॥
तपन्तु तापैर्निपतन्तु पर्वतादटन्तु तीर्थानि पठन्तु चागमान्।
यजन्तु यागैर्विवदन्तु वादैर्हरिं विना नैव मृतिं तरन्ति ॥ २१ ॥
धनानि भूमौ पशवश्च गोष्ठे भार्या गृहद्वारि जनः श्मशाने।
देहश्चितायां परलोकमार्गे कर्मानुगो गच्छति जीव एकः ॥ २२ ॥
त्यक्त्वांशुकं जीर्णमथापरं नरो गृह्णाति नव्यं च यथोरगस्त्वचम्।
शष्पं जलौका च यथा तथा ह्यसौ देही शरीरं किमिहाज्ञ शोचसि ॥२३॥
यच्चिंतितं तदिह दूरतरं प्रयाति यच्चेतसा न गणितं तदिहाभ्युपैति।
प्रातर्भवामि वसुधाधिपचक्रवर्ती सोऽहं व्रजामि विपिने जटिलस्तपस्वी॥
न शास्त्रतुल्यं नयनं न सत्यसमं तपस्तोषसमं न लाभम्।
विरागतुल्यं न सुखं च रागसमं न दुःखं कवयो वदन्ति ॥ २५ ॥
मृत्युर्नृत्यति मूर्ध्नि शश्वदुरगी घोरा जरारूपिणी
त्वामेषा ग्रसते परिग्रहमयैर्गृध्रैर्जगद्ग्रस्यते।
धूत्वा बोधजलैरबोधबहुलं तल्लोभजन्यं रजः
संतोषामृतसागरांभसि मनाङ्‌ मग्नः सुखं जीवति ॥ २६ ॥
न जातु कामान्न भयान्न लोभाद्धर्मं त्यजेज्जीवितस्यापि हेतोः।
धर्मो नित्यः सुखदुःखे त्वनित्ये जीवो नित्यो हेतुरस्य त्वनित्यः ॥ २७ ॥
न जनको जननी नच सोदरोऽवति बलं न कुलं द्रविणं तथा।
स्वकृतधर्मसृतेहममुत्र वै सततमेव तमेव ततश्चरेत् ॥ २८ ॥
हंसस्तथेंदुश्च नभोऽवनिर्जलं वह्निश्च वायुश्च दिनं निशा यमः।
पश्यंति यद्यत्कुरुते जनो हि ते जानाति मूढस्तु न कोप्यवेक्ष्यते ॥ २९ ॥
संपूर्णं जगदेव नन्दनवनं सर्वेऽपि कल्पद्रुमा
गांगं वारि समस्तवारिनिवहाः पुण्या समस्ता क्रिया।
वाचः प्राकृतसंस्कृताः श्रुतिशिरो वाराणसी मेदिनी
सर्वावस्थितिरस्य वस्तुविषया दृष्टे परब्रह्मणि ॥ ३० ॥
कथा इमास्ते कथिता महीयसां विताय लोकेषु यशः परेयुषाम्।
विज्ञानवैराग्यविवक्षया विभो वचो विभूतिर्नच पारमार्थ्यम् ॥ ३१ ॥
आयुःपगं कृमिकुजन्तुमहं कृतान्तं वैश्वानरानलमथामयदूतबाधम्।
चिन्तार्कतापमथ कामसुखासिपत्रं दृष्ट्वापि देहनरकं न विरज्यतेऽज्ञः ॥३२
मेदांत्रक्षतजाकुलं कृमिगणैर्व्यग्रं शिरासन्ततं
लिप्तं मांसचयैश्चितास्थिनिवहं चर्मावृतं सर्वतः॥
दौर्गन्ध्येन परिप्लुतं नवमुखाकीर्णेन रोगालयं
सज्जन्ते मलिनं कलेवरमिदं ये वेक्ष्यते रासभाः ॥ ३३ ॥

निःस्वोप्येकशतं शती दशशतं सोपीह लक्षेशतां
लक्षेशः क्षितिराजतां क्षितिपतिश्चक्रेशतां वाञ्छति ।
चक्रेशः सुरराजतां सुरपतिर्ब्रह्मास्पदं वाञ्छति
ब्रह्मा विष्णुपदं हरिः शिवपदं तृष्णावधिं को गतः ॥ ३४ ॥
गर्जसि मेघ न यच्छसि तोयं चातकपक्षी व्याकुलितोऽहम् ।
दैवादिह यदि दक्षिणवातः क्व त्वं क्वाहं क्व च जलपातः ॥ ३५ ॥
सर्वोद्वेगकरं मृगादनममुं संत्यज्य हा धिक् त्वया
लोकस्यानपकारिणं गिरिनदीतीराटवीनिर्वृतम् ।
अश्नन्तं तृणमेणशावमदयं व्याध प्रतामुं वृथा
देवो दुर्बलघातकोऽयमिति सा गाथा यथार्थीकृता ॥ ३६ ॥
कान्तं वक्ति कपोतिकाऽऽकुलतया नाथान्तकालोऽधुना
व्याधोऽधो धृतचापसज्जितशरः श्येनः परिभ्राम्यति ।
इत्थं सत्यहिना स दष्ट इषुणा श्येनोपि तेनाहत-
स्तूर्णं तौ तु यमालयं प्रति गतौ दैवी विचित्रा गतिः ॥ ३७ ॥
क्लमो न वाचां शिरसो न शूलं न चित्ततापो न तनोर्विमर्दः ।
न चापि हिंसादिरनर्थयोगः श्लाघ्या परं क्रोधजयेहमेका ॥ ३८ ॥
क्रुद्धे स्मेरमुखोऽवधीरणमथाविष्टे प्रसादक्रमोऽ-
व्याक्रोशे कुशलोक्तिरात्मदुरितोच्छेदोत्सवस्ताडने ।
धिग्जंतोरजितात्मनोऽस्य महती दैवादुपेता विपत्
दुर्वारेति दयारसार्द्रमनसः क्रोधस्य कुत्रोदयः ॥ ३९ ॥
ददतु ददतु गालीर्गालिमन्तो भवंतः
अहमपि तदभावे गालिदानेऽसमर्थः ।
जगति विदितमेतद्दीयते दीयमानं
नहि शशकविषाणं कोऽपि कस्मै ददाति ॥ ४० ॥
रे चित्तकाक फलपुष्पविकीर्णमात्माऽऽरामं विधर्ममथ विश्वखगालयं च
शांत्यावहं निकटगं शठ संविहाय संसारभोगशमले वद किं रतोऽसि॥४१॥
एतस्माच्च किमिन्द्रजालमपरं यद्गर्भवासस्थितं
रेतश्चेतति हस्तमस्तकपदप्रोद्भूतनानांकुरम् ।
पर्यायेण शिशुत्वयौवनजरावेषैरनेकैर्वृतं
पश्यत्यत्ति शृणोति जिघ्रति तथा गच्छत्यथागच्छति ॥४२॥
शूद्रे श्रुतिर्न सिकतासु यथा च तैलं वृक्षो न खे करतले न च रोम जातु ।
वह्नौ न शैत्यमुडुपेपि यथोष्णता वै मुक्तिर्न रागिणि तथैव बुधा वदंति४३
भिक्षाशनं तदपि नीरसमेकवारं शय्या च भूः परिजनो निजदेहमात्रम् ।
वस्त्रं च जीर्णशतखंडमलाढ्यकंथा हाहा तथापि विषया न परित्यजंति४४

जिह्वा रसाय नयनं सुविलोकनाय श्रोत्रं तथा कलरवश्रवणाय नर्म ।
स्पर्शाय कर्षति सुगंधकृते नु नासा प्रत्यर्थिनोऽध्वगमिव प्रलुनंत्यविज्ञम् ॥
कुरंगमातंगपतंगभृंगमीना हताः पंचभिरेव पंच ।
एकः प्रमादी स कथं न हन्यते यः सेवते पंचभिरेव पंच ॥ ४६ ॥

वपुः कुब्जीभूतं गतिरपि तथा यष्टिशरणा
विशीर्णा दंतालिः श्रवणविकलं श्रोत्रयुगलम् ।
शिरः शुक्लं चक्षुस्तिमिरपटलैरावृतमहो
मनो मे निर्लज्जं तदपि विषयेभ्यः स्पृहयति ॥ ४७ ॥

पत्रं यथा चलदलस्य च वैद्युताभा
केत्वंशुकं च ललनाक्षिशिखानलस्य ।
शाखामृगश्च कमठस्य शिरस्तथैव
च्चित्तं समेति तरलं स्थिरतां न जातु ॥ ४८ ॥

अजानन्माहात्म्यं पततु शलभो दीपदहने
स मीनोऽप्यज्ञानाद्बडिशयुतमश्नातु पिशितम् ।
विजानन्तोप्येते वयमिह विपज्जालजटिलान्
न मुञ्चामः कामानहह गहनो मोहमहिमा ॥ ४९ ॥

कृशः काणः खञ्जः श्रवणरहितः पुच्छविकलो
व्रणी पूयक्लिन्नः कृमिकुलशतैरावृततनुः ।
क्षुधाक्षामो जीर्णः पिठरककपालार्पितगलः
शुनीमन्वेति श्वा हतमपि निहन्त्येव मदनः ॥ ५० ॥

गात्रं संकुचितं गतिर्विगलिता भ्रष्टा च दंतावलि-
र्दृष्टिर्नश्यति वर्धते बधिरता वक्त्रं च लालायते ।
वाक्यं नाद्रियते च बांधवजनो भार्या न शुश्रूषते
हा कष्टं पुरुषस्य जीर्णवयसः पुत्रोऽप्यमित्रायते ॥ ५१ ॥

संगाल्लघुत्वमगमज्जलधिश्च धार्तराष्ट्रो हतश्च तपसः स्खलितो मृगीजः ।
लंकाधिपस्य शकुनेश्च तथांगनायास्तस्मात्यजेदविरतं हि बुधः कुसंगम् ॥
निःसंगता मुक्तिपदं यतीनां संगादशेषाः प्रभवंति दोषाः ।
आरूढयोगोपि निपात्यतेऽधः संगेन योगी किमुताल्पसिद्धिः ॥ ५३ ॥

स्वार्थं धनानि धनिकात् प्रतिगृह्णतो य-
दास्यं भजेन् मलिनतां किमिदं विचित्रम् ।
गृह्णन् परार्थमपि वारिनिधेः पयोपि
मेघोयमेति सकलोऽपि च कालिमानम् ॥ ५४ ॥

समारंभा भग्नाः कति कति न वारांस्तव पशो
पिपासोस्तुच्छेऽस्मिन् द्रविणमृगतृष्णार्णवजले ।

तथापि प्रत्याशा विरमति न ते मूढ शतधा
विदीर्णं यच्चेतो नियतमशनिग्रावघटितम् ॥ ५५ ॥
फलं स्वेच्छालभ्यं प्रतिवनमखेदं क्षितिरुहां
पयः स्थाने स्थाने शिशिरमधुरं पुण्यसरिताम् ।
मृदुस्पर्शा शय्या सुललितलतापल्लवमयी
सहंते संतापं तदिह धनिनां द्वारि कृपणाः ॥ ५६ ॥
प्रथमतः पठनं कठिनं कृतं पुनरहो परदेशनिषेवणम् ।
वदति दीनमयं वचनं सदा कठिनता विधिना विदुषां कृता ॥५७॥
अर्धं दानववैरिणा गिरिजयाप्यर्धं शिवस्याहृतं
देवेत्थं जगतीतले स्मरहराभावे समुन्मीलति ।
गंगा सागरमंबरं शशिकला नागाधिपः क्ष्मातलं
सर्वज्ञत्वमधीश्वरत्वमगमत् त्वां मां च भिक्षाटनम् ॥ ५८ ॥
जातः शूली कदनविषयात् भैक्ष्ययोगात्कपाली
वस्त्राभावाद्गगनवसनः स्नेहरौक्ष्याज्जटावान् ।
युष्मत्सेवापरिचयवशादीश्वरत्वं मयाप्त-
मद्यापि त्वं मम नरपते ह्यर्धचंद्रं न दासि ॥ ५९ ॥
तावत्सर्वगुणालयः पटुमतिः साधुः सतां वल्लभः
शूरः सच्चरितः कलंकरहितो मानी कृतज्ञः कविः ।
यावन्निष्ठुरवज्रपातसदृशं देहीति नो भाषते
तस्माद्वाक्यमिदं मम शृणु सखे मा ब्रूहि दीनं वचः ॥ ६० ॥
रेरे चातक सावधानमनसा मित्र क्षणं श्रूयता-
मंभोदा बहवो वसंति गगने सर्वेऽपि नैतादृशाः ।
केचिद्वृष्टिभिरार्द्रयंति वसुधां गर्जंति केचिद्वृथा
यं यं पश्यसि तस्य तस्य पुरतो मा ब्रूहि दीनं वचः ॥ ६१ ॥
हस्तौ दानविवर्जितौ श्रुतिपुटौ सारस्वतद्रोहिणौ
नेत्रे साधुविलोकनेन रहिते पादौ न तीर्थं गतौ ।
अन्यायार्जितवित्तपूर्णमुदरं गर्वेण तुंगं शिरो
रेरे जंबुक मुंच मुंच सहसा नीचस्य निंद्यं वपुः ॥ ६२ ॥
लोभाद्वयो निपतिता गहने स कूपे दुर्योधनश्च सबलोऽन्तकवेश्म यातः ।
सद्यो वियंति सुगुणा गुणिनां यशश्च तस्मात्त्यजेन्नरकदं हि बुधस्तु लोभम्
संत्येते मम दंतिनो मदजलप्रम्लानगंडस्थला
वातव्यायतपातिनश्च तुरगा भूयोपि लप्स्ये परात् ।
एतल्लब्धमिदं लभे पुनरिदं लब्धाधिकं ध्यायतां
चिन्ताजर्जरचेतसां बत नृणां का नाम शांतिः कथा ॥ ६४ ॥

रात्रिर्गमिष्यति भविष्यति सुप्रभातं
भास्वानुदेष्यति हसिष्यति पंकजश्रीः ।
इत्थं विचिंतयति कोषगते द्विरेफे
हा हन्त हन्त नलिनीं गज उज्जहार ॥ ६५ ॥
शेषोऽशेषधराधरश्च गिरिशः सर्वांतकश्चात्मभू-
र्लोकोद्भूतिकरश्च कोणपरिपुस्त्रैलोक्यसंपालकः ।
येऽन्ये काकभुशुंडलोमशमुखा योग्याः स्म नो कुर्वते
गर्वं त्वल्पधनः क्षणायुरवशो मर्त्यः करोतीत्यहो ॥ ६६ ॥
मूर्खत्वं सुलभं भजस्व कुमते मूर्खस्य चाष्टौ गुणा
निश्चिंतो बहुभोजकोऽतिमुखरो रात्रिंदिवं स्वप्नभाक् ।
कार्याकार्यविचारणांधबधिरो मानापमाने समः
प्रायेणामयवर्जितो दृढवपुर्मूर्खः सुखं जीवति ॥ ६७ ॥
न संध्यां संधत्ते नियमितनिमाजं न कुरुते
न वा मौंजीबन्धं कलयति न वा सुन्नतविधिम् ।
न रोजां जानीते व्रतमपि हरेर्नैव कुरुते
न काशी मक्का वा शिव शिव न हिन्दुर्न यवनः ॥ ६८ ॥
मूर्खस्य पंच चिह्नानि गर्वी दुर्वचनी तथा ।
हठी चाप्रियवादी च परोक्तं नैव मन्यते ॥ ६९ ॥
मूर्खस्य चाष्टचिह्नानि शीका टीका च मालिका ।
प्रतिष्ठा लम्बधोत्राणि हांजी हौंजी च योग्यता ॥ ७० ॥
सिंहो व्याकरणस्य कर्तुरहरत्प्राणान्प्रियान्पाणिने-
र्मीमांसाकृतमुन्ममाथ सहसा हस्ती मुनिं जैमिनिम् ।
छंदोज्ञाननिधिं जघान मकरो वेलातटे पिंगलं
ह्यज्ञानावृतचेतसामतिरुषां कोऽर्थस्तिरश्चां गुणैः ॥ ७१ ॥
वह्निस्तस्य जलायते जलनिधिः कुल्यायते तत्क्षणान्
मेरुः स्वल्पशिलायते मृगपतिः सद्यः कुरंगायते ।
व्यालो माल्यगुणायते विषरसः पीयूषवर्षायते
यस्यांगेऽखिललोकवल्लभतमं शीलं समुन्मीलति ॥ ७२ ॥
प्राणाघातान्निवृत्तिः परधनहरणे संयमः सत्यवाक्यं
काले शक्त्या प्रदानं युवतिजनकथामूकभावः परेषाम् ।
तृष्णास्रोतोविभंगो गुरुषु च विनयः सर्वभूतानुकंपा
सामान्यः सर्वशास्त्रेष्वनुपहतविधिः श्रेयसामेव पंथाः ॥ ७३ ॥
सानंदं सदनं सुतास्तु सुधियः कांता प्रियालापिनी
इच्छापूर्तिधनं स्वयोषिति रतिः स्वाज्ञापराः सेवकाः ।

आतिथ्यं शिवपूजनं प्रतिदिनं मिष्टान्नपानं गृहे
साधोः संगमुपासते च सततं धन्यो गृहस्थाश्रमः ॥ ७४ ॥
सर्वौषधीनाममृता प्रधाना सर्वेषु सौख्येष्वशनं प्रधानम् ।
सर्वेन्द्रियाणां नयनं प्रधानं सर्वेषु गात्रेषु शिरः प्रधानम् ॥ ७५ ॥
किं वाससैवं न विचारणीयं वासः प्रधानं खलु योग्यतायाः ।
पीताम्बरं वीक्ष्य ददौ तनूजां दिगंबरं वीक्ष्य विषं समुद्रः ॥ ७६ ॥
नाभिषेको न संस्कारः सिंहस्य क्रियते मृगैः ।
विक्रमार्जितराज्यस्य स्वयमेव मृगेन्द्रता ॥ ७७ ॥
धन्या द्विजमयी नौका विपरीता भवार्णवे ।
तरंत्यधोगताः सर्वे उपरिस्थाः पतंत्यधः ॥ ७८ ॥
चितं जीर्णैः पर्णैर्गृहमपि तथैश्वर्यविकलं
विशीर्णं चैलं चाशनमपि कदन्नं गतरसम् ।
कुरूपाङ्गा योषित् कटुवचनसंभाषणपरा
तथाप्यज्ञो लोकः क्षणमपि न हन्तोपरमते ॥ ७९ ॥
नैवात्र काव्यगुण एव तु चिन्तनीयो
ग्राह्यः परं गुणवता खलु सार एव ।
सिन्दूरचित्ररहिता भुवि रूपशून्या
पारं न किं नयति नौरिह गन्तुकामान् ॥ ८० ॥
सान्द्रानन्दपुरंदरादिदिविषद्वृन्दैरमन्दादरा-
दानम्रैर्मुकुटेन्द्रनीलमणिभिः सन्दर्शितेन्दीवरम् ।
स्वच्छन्दं मकरन्दसुन्दरगलन्मन्दाकिनीमेदुरं
श्रीगोविन्दपदारविन्दमशुभस्कन्दाय वन्दामहे ॥ ८१ ॥
मङ्गलं लेखकानां च पाठकानां च मङ्गलम् ।
मङ्गलं सर्वलोकानां भूयो भूयोऽस्तु मङ्गलम् ॥ ८२ ॥
सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः ।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद्दुःखभाग्भवेत् ॥ ८३ ॥

श्रीरामस्नेह धर्मप्रकाश ग्रंथका शुद्धिपत्र।

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१	९	क्रिया	क्रियाजु
३	१२	आपने	अपने
१०	१२	अवनीपति	अवनीपती
१३	१०	यौ	ऐसे
१५	१७	नहि	न
१५	२०	तनमनधन	तन धन
१६	२९	साधुहम	साधु
१९	१२	मुरधर	मरुधर
१९	१९	नव	तव
२०	२२	मुरधर	मरुधर
२१	३१	बरषायो	बरषावो
२३	२५	सारंगी	सारंगो
२४	१	अधू	अघू
२९	हेडिंग	परचीसार	परिचय
३१	२०	मुरधरा	मरुधरा
३३	१८	मुरधर	मरुधर
३३	२८	सब	सद
३३	३२	निरधारां	निर्धारांके
३५	१६	उतम	उत्तम
३६	६	सकेविस्तारं	सक विस्तार
४१–४३	हेडिंग	परचीसार	परिचय
६३–६९	हेडिंग	परचै	चेतावनी
६३	४	नाहत	न्हावत
६३	२५	कोय	लोय
६७	३२	डोली	झंखर
६८	१०	पसवा	पशुवा
६९	९	रोयज	रोवै
७१	१३	तिमिर	तिविर
७४	१४	बाबरा	बावरा
७७	१	अहवास	आभास
८७	३३	जिदंगानी	जिंदगानी

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१३१	३	विन्दु	बिन्दू
१३३	१२	हिन्दु	हिन्दू
१३८	२०	दशम	दशमे
१३८	२८	दशम	दशमो
१३९	४	कसी	तव कसी
१३९	१३	की देखै	देखै
१४२	१५	अज	अजयों
१४२	२५	मूई	मुइ
१४३	६	आप	आपा
१४४	५	हे	हाँए
१४४	८	वाहिरो	बाहि ने
१४४	२०	रय	रया
१५५	चौकड़ा अर्थात् लोहेकी काँटेदार लगाम		
१५६	साहि अर्थात् पकड़ना		
१५८	४	जल स्नान	जलकरस्नान
१५८	१३	तुमारि	तुम्हारि
१६१	२२	रामदास	रामादास
१६८	१	भाय	भाँय
१६८	४	धिरकार	धिक्कार
१७०	१६	पिलाया	मिलाया
१७१	२६	ज़िवेणी	त्रिवेणी
१७२	३	नहि अंधन	नाहीं अंध-
१७८	९	राणै	राण
१८१	८	निर्मल	विमल
१८२	१०	सेव	सेवा
१८२	१६	ग्रह	गेह
१८४	२	सुणौ	सुनिहौ
१९१	२८–२९	दारुण	दाझण
१९२	२७	दारुण	दाझण
१९२	३०	जाय	आय

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१९३	२१	दारुण	दाक्षण
१९७	२३	मुरधर	मरुधर
२०५	३	जिग	जग
२०६	३	परज	प्रजा
२२०	९	वली	बली
२२६	९	सो	सोहं
२२७	९	सनकादू	सनकादं
२२७	१२	विति	वृत्ति
२२७	२८	ज़ुरा	जरा
२३१	१२	जीते	जिते
२३२	७	अनुसारं	असारं
२३५	५	खास	ख्वास
२५४	७	मुरधर	मरुधर
२६७	१६	सरंग	सारंग
२६८	२१	मेट	भेट
२७३	१	धा	धौं
२७७	३२	कथि	कथि जग
२७८	२८	वीज	बीज
२९३	८	जर	जन
३११	२१	साधन	साधना
३१५	१४	साह	से
३१९	२६	डाकीणी	डाकिणी
३२३	१८	निरमै	निर्भय
३४१	२०	नही	नहिं
३४५	३०	मुरधर	मरुधर
३५२	३१	मुरधर	मरुधर
३५५	१६	मुरधर	मरुधर
३८४	१६	पंक्षी	पक्षी
अकारादि पताठि-कानेका नोट	१	भेखा	भेख
,,	१३	पलाना	नागौर, पलाना

---

१६१ पृष्ठकी विज्ञप्ति का नोटः—

श्रीखेड़ापे में तथा खेड़ापे के अन्यस्थलों में भी श्रीसिंहथलमहन्तमहाराज के विराजते हुए जो वाणी पाठ होता है वह श्रीसिंहथल पाठक्रमानुसार ही होता है केवल श्रीपूरणदासजी महाराज श्रीअर्जुनदासजी महाराज तथा अपने २ ठिकाणों की वाणी का पाठ विशेष होता है।

"ॐ रॉं रामाय नमः"

वन्दे महापुरुष ते चरणारविन्दम्

श्री रामस्नेही सम्प्रदाय

सिंहस्थल - खैड़ापा

का

मूल रूप

श्री नाद वृक्ष

पूर्व प्रकाशन वि० संवत् १६८५

ईसवी सन् १६२८

संशोधित व रूपान्तरित प्रकाशन

वि०सं० २०५१ सन् १९९४

महापुरुष परब्रह्म राम

(दुलचासर, रोड़ा)

श्री जैमलदासजी महाराज

(वि० संवत्-१७६०-१८१०)

रामस्नेहिसम्प्रदाय की सिंहस्थल पाट गादी

श्री हरिरामदासजी महाराज

[अग्रिम पृष्ठ पर आपकी पाट गादी (आचार्य) एवं शिष्य प्रशिष्य परम्परा द्रष्टव्य है ।]

।। श्रीरामाय नमः।।

।। राम ।।

श्री रामस्नेहिसम्प्रदाय सीथल पीठ की (आचार्य) पाट-गादी

(१) श्री हरिरामदासजी महाराज
[वि० सं० १८००-१८३५ चेत्र शु० ७]
[ॐ] श्री बिहारी दास जी महाराज
निर्वाण १८२५-१८३४ के मध्य

(२) श्री हरदेवदासजी महाराज
[वि०सं० १८३५-१८६४
फाल्गुन कृ० ५]

(३) श्री मोतीरामजी महाराज
[वि०सं० १८६४-१८६६
आषाढ़ कृ० १०]

(४) श्री रघुनाथदासजी महाराज
[वि०सं० १८६६-१६०६
मार्गशीर्ष कृ० १०]

(५) श्री चेतन दास जी महाराज
[वि०सं० १६०६-१६५०
आश्विन कृ० १४]

(६) श्री रामप्रतापजी महाराज
[वि०सं० १६५०-१६६६
ज्येष्ठ कृ० १]

(७) श्री चौकसरामजी महाराज
[वि०सं० १६६६-१६६८
भाद्रपद शु० १५]

(८) श्री रामनरायणजी महाराज
[वि०सं० १६६८-२००५
गद्दी त्याग एवं निर्वाण-वि०सं०
२०२१ मार्गशीर्ष कृ० ११]

(६) श्री भगवद्दासजी महाराज
[भाद्रपद शु० १५ वि० सं० २००५ से
वि०सं० २०३८ चैत्र शु० १३]

(१०) श्री क्षमाराम जी महाराज
वि०सं० २०३८ से वर्तमान

आचार्य पीठ सिंहस्थल की थांभायत शिष्य शाखा

१. (सिंहस्थल)
श्री नारायणदासजी महाराज
(वि०सं० १८०६-१८५३ माघ शु० ६)
[आप की आठ थांभायत
शिष्य-प्रशिष्य शाखाओं का प्रस्तार
अगले पृष्ठ पर द्रष्टव्य है ।]

२. (खेड़ापा)
श्री रामदास जी महाराज
[इस आचार्य पीठ के पीठाचार्य के
रूप में सिंहस्थल प्रस्तार विवरण के
बाद द्रष्टव्य है ।]

३. (मुल्तान)
श्री लक्ष्मणदासजी महाराज

४. (लालमदेसर)
श्री आदूरामजी महाराज
प्रीतमदासजी
चतुरदासजी
तिलोकरामजी

५. (सिंहस्थल)
श्री अमीररामजी महाराज

६. (सिंहस्थल)
श्री दईदासजी महाराज

श्री नारायणदास जी म० सिंहस्थल (थांभा-१) का प्रस्तार क्रम

१. (ऊढसर)
सदारामजी
मानारामजी
योगीदासजी
गिरधारीदासजी
जमनादासजी
ईश्वरदासजी
आत्माबाई

(बरसीसर)
ध्यानदासजी
शिवरामदासजी
कनीरामजी

३. (गीगासर)
मयारामदासजी
प्रेमदासजी
(बेलासर)
लक्ष्मणदासजी
शालगरामजी
जयकृष्णदास जी
अक्षयराम जी
भगवानदास जी

६. (सिंहस्थल)
विजैराम जी

७. (सिंहस्थल)
सांवतराम जी
दूदारामजी
मुकनदासजी

२. (कालू)
मूलदासजी
राघोदासजी
गोविन्दरामजी
रामसुखदासजी
अमरदासजी
नानकरामजी
भक्तीरामजी
मनमोहनरामजी
पुरुषोत्तमदासजी

४. (पलाणा)
चैनदासजी
चतुरदासजी
सेवारामजी
शिवरामदासजी
रामसुखदासजी

५. (सूढ़सर)
कान्हडदासजी
उदैरामजी
अमृतराम जी

८. (जैतपुर)
गजारामजी
हरीरामजी
मुक्तीरामजी
रामीबाई

(बामटसर)
बालकदास जी

(गुसांईसर बड़ा)
ढावारामजी
पदमदासजी

(सिनावड़ा)
रामकिशनदास जी

(श्री डूंगरगढ़)
उमारामजी
अक्षयरामजी
हीरांबाई

(सूरतगढ़)
नरोत्तम दास जी
च्यवनराम जी

(पदमपुरा)
रतीरामजी
भगवानदासजी
आत्मारामजी

(श्री डंगरगढ़)
गंगारामजी

(गुसांईसर)
दूल्हारामजी
चैनरामजी

(बीकानेर)
चन्दणाबाई
आशारामजी पं०

सिंहस्थल पीठाचार्य [३]
श्री मोतीरामजी महाराज
की खालशाही शाखा

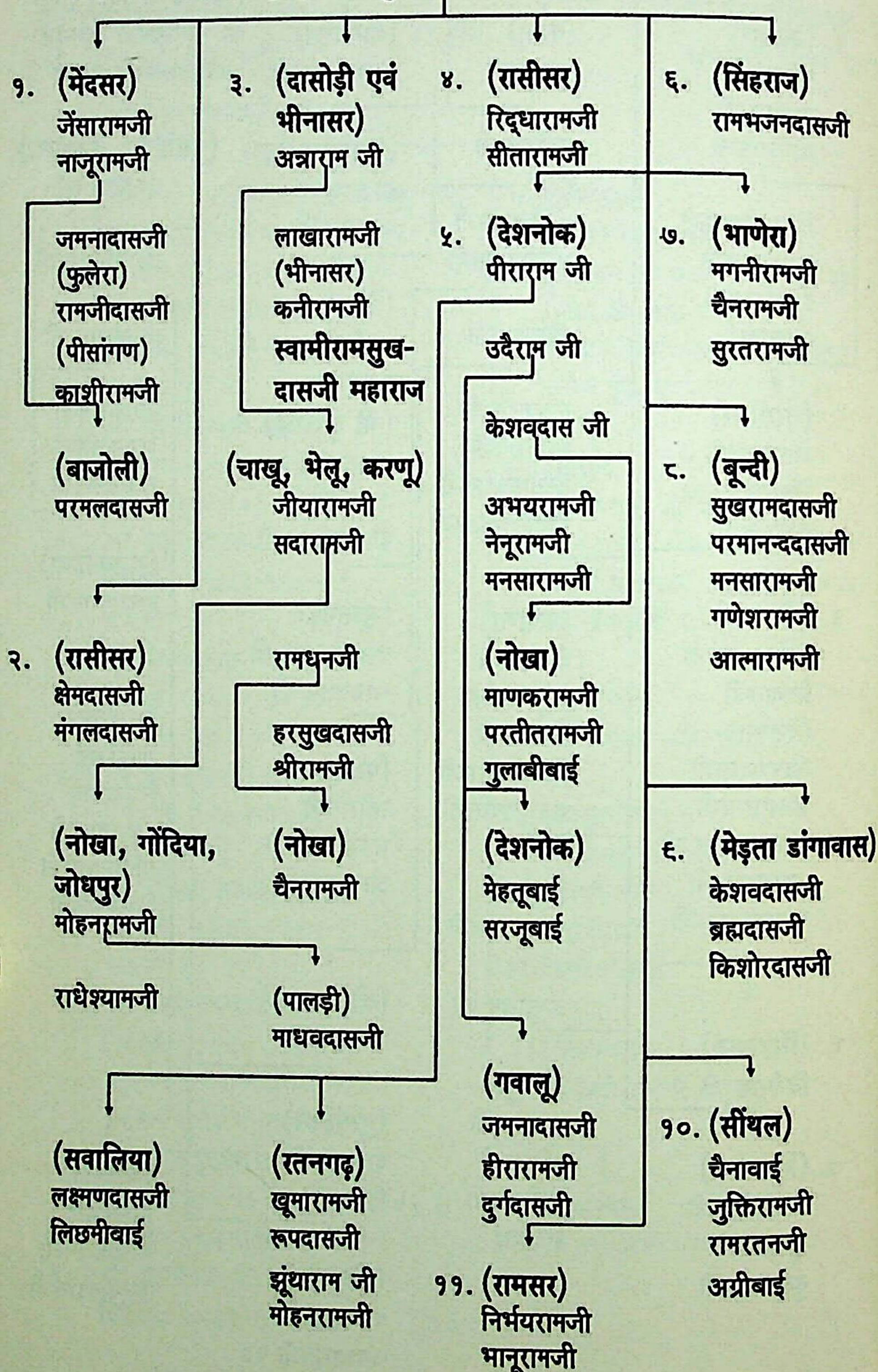
(गुसांईसर, कोषाणा)
ज्ञानदास जी
जगरूपदास जी
जरणाराम जी
आशारामजी
भजनदासजी
रामस्वरूपजी

(रातकूड़िया)
सुमरणरामजी

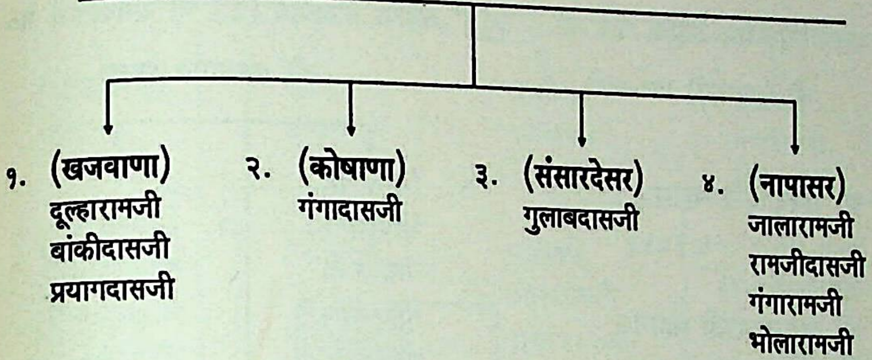
(साथीण)
गुल्लांबाई
रिद्धांबाई
मलूकदासजी
गोपालदासजी
निर्भयरामजी

(गंगारडा)
आत्माबाई
माणकरामजी
हनुमानदासजी

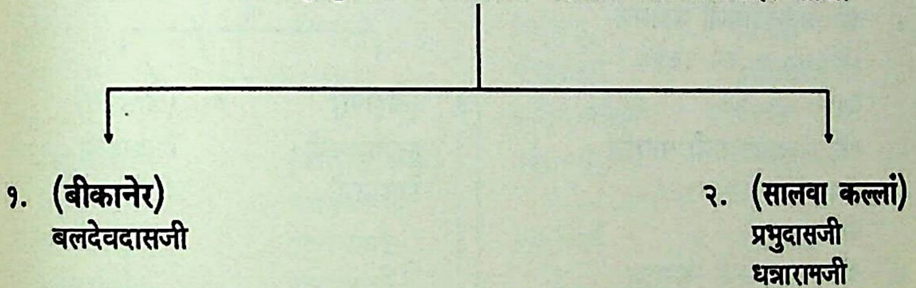
सिंहस्थल पीठाचार्य [४] श्री रघुनाथदासजी महाराज की खालशाही शाखा



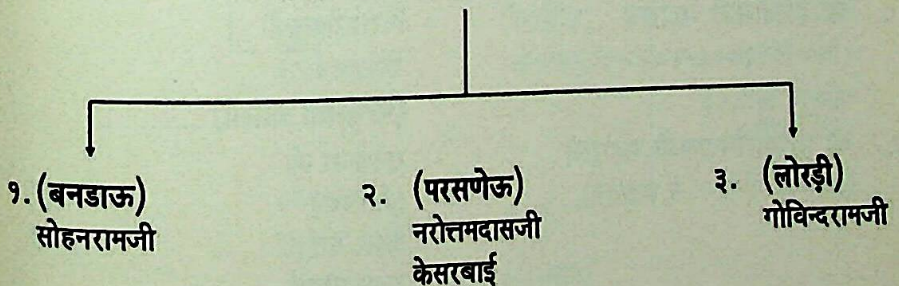
सिंहस्थल पीठाचार्य [५] श्री चेतनदासजी महाराजकी खालशाही शाखा



सिंहस्थल पीठाचार्य [६] श्री रामप्रतापजी महाराज की खालशाही शाखा



सिंहस्थल पीठाचार्य [६] श्री भगवद्दासजी महाराज की खालशाही शाखा



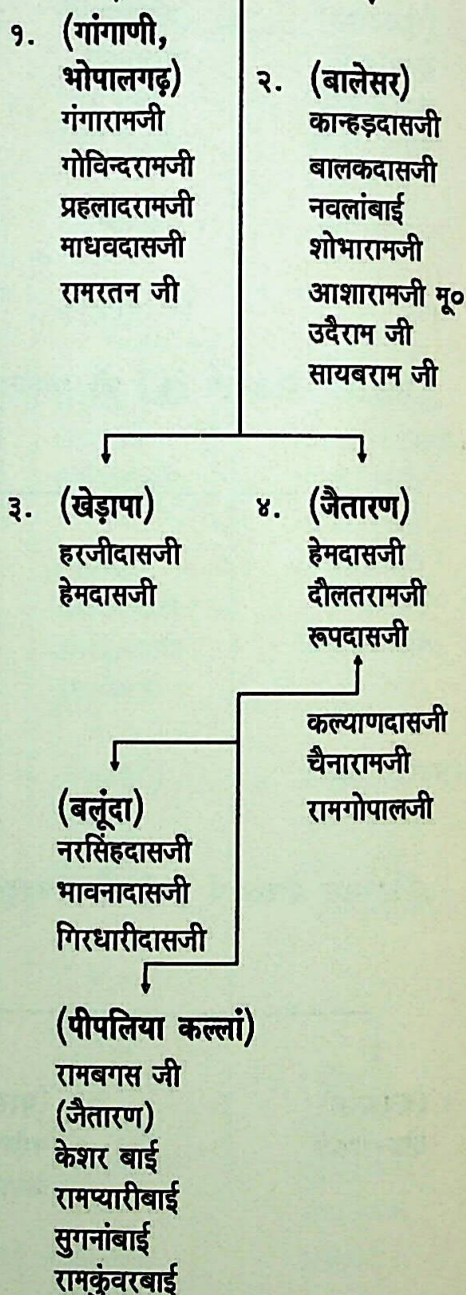
।। श्री रामाय नमः ।।

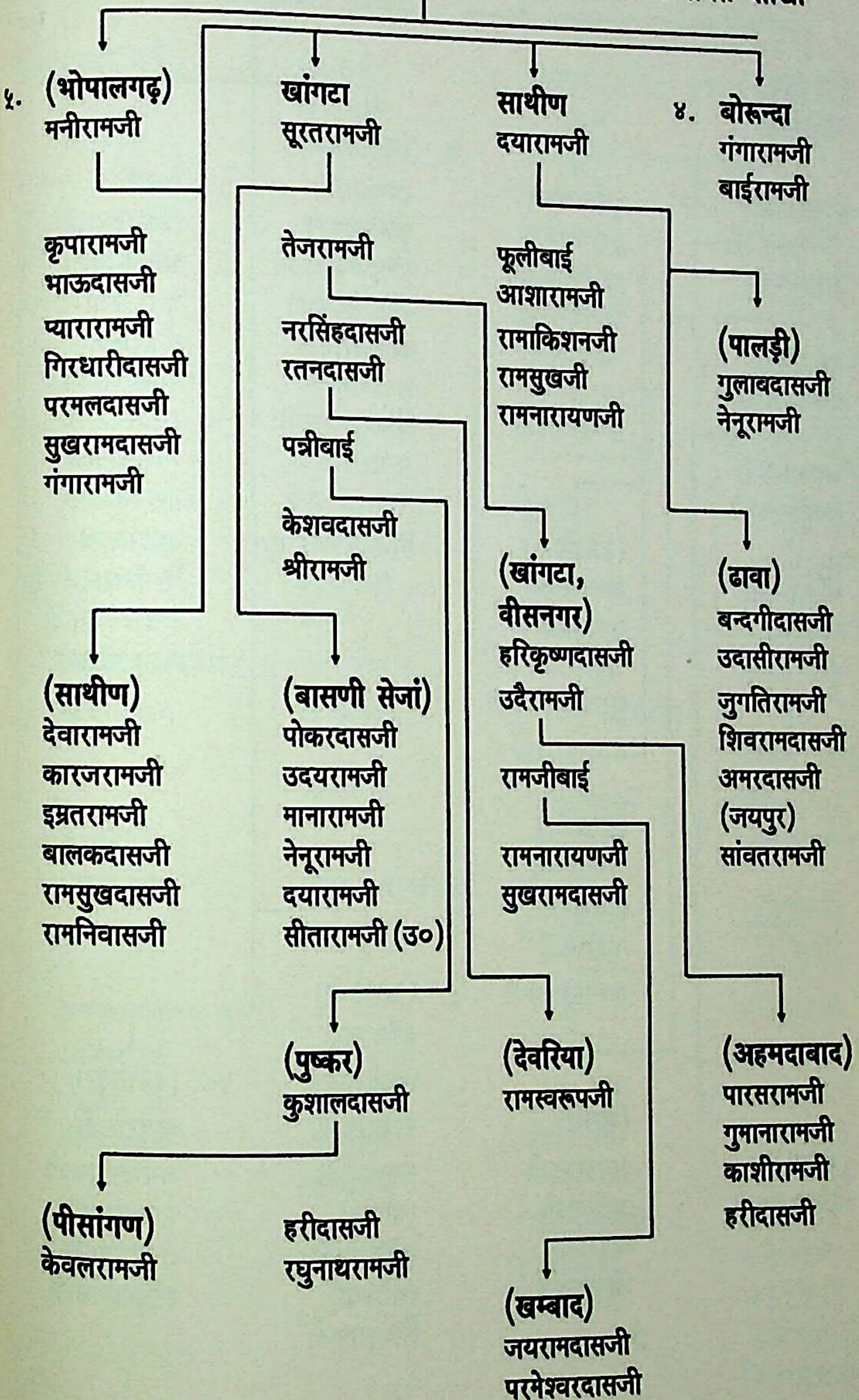
श्री रामस्नेहिसम्प्रदाय खेड़ापा पीठ की | राम | खेड़ापा पीठाचार्य [१] श्री रामदासजी म०

की (आचार्य) पाट-गादी

१. श्री रामदासजी महाराज
(वि० सं० १८०६-१८५५
आषाढ़ कृ० ७)
२. श्री दयालुदासजी महाराज
(वि०सं० १८५५-१८८५
माघ कृ० १०)
३. श्री पूरणदासजी महाराज
(वि० सं० १८८५-१८६२
कार्तिक शु० ५)
४. श्री अर्जुनदासजी महाराज
(वि०सं० १८६२-१६५०
वैसाख कृ० १०)
५. श्री हरलालदासजी महराज
(वि०सं० १६५०-१६६८
पोष कृ० ७)
६. श्री लालदासजी महाराज
(वि०सं० १६६८-१६८२
भाद्रपद कृ० ४)
७. श्री केवलरामजी महाराज
(वि० सं० १६८२-२००६
पोष शु० ३)
८. श्री हरिदासजी महाराज
(वि०सं० २००६-२०२२
फाल्गुन शु० ८)
६. श्री पुरुषोत्तमदासजी महाराज
(वि०सं० २०२२ से वर्तमान)

की थाम्भायत शाखा




खेड़ापा पीठाचार्य [१] श्री रामदास जी महाराज की थांभायत शाखा
५. (भोपालगढ़)
मनीरामजी
कृपारामजी
भाऊदासजी
प्यारारामजी
गिरधारीदासजी
परमलदासजी
सुखरामदासजी
गंगारामजी
खांगटा
सूरतरामजी
तेजरामजी
नरसिंहदासजी
रतनदासजी
पन्नीबाई
केशवदासजी
श्रीरामजी
साथीण
दयारामजी
फूलीबाई
आशारामजी
रामकिशनजी
रामसुखजी
रामनारायणजी
४. बोरून्दा
गंगारामजी
बाईरामजी
(पालड़ी)
गुलाबदासजी
नेनूरामजी
(खांगटा,
वीसनगर)
हरिकृष्णदासजी
उदैरामजी
रामजीबाई
रामनारायणजी
सुखरामदासजी
(ढावा)
बन्दगीदासजी
उदासीरामजी
जुगतिरामजी
शिवरामदासजी
अमरदासजी
(जयपुर)
सांवतरामजी
(साथीण)
देवारामजी
कारजरामजी
इम्रतरामजी
बालकदासजी
रामसुखदासजी
रामनिवासजी
(बासणी सेजां)
पोकरदासजी
उदयरामजी
मानारामजी
नेनूरामजी
दयारामजी
सीतारामजी (उ०)
(पुष्कर)
कुशालदासजी
(देवरिया)
रामस्वरूपजी
(अहमदाबाद)
पारसरामजी
गुमानारामजी
काशीरामजी
हरीदासजी
(पीसांगण)
केवलरामजी
हरीदासजी
रघुनाथरामजी
(खम्बाद)
जयरामदासजी
परमेश्वरदासजी

खेड़ापा पीठाचार्य [१] श्री रामदास जी महाराज की थांभायत शाखा

६. (रतलाम)
पीथोदासजी
कनीरामजी
उदयरामजी
सादूरामजी
कल्याणदासजी
आत्मारामजी
रामविलासजी
भक्तिरामजी
गोपालदासजी

(गौतमपुरा)
दूदारामजी
कुशालदासजी
विजयरामजी
नवलरामजी
घणसीरामजी
हिम्मतरामजी

(डाबड़ियाँ)
रूपदासजी
सूरदासजी
जयरामदासजी
पुरुषोत्तमदासजी

(ईगणोद)
मोडीरामजी
हीरारामजी
नन्दरामजी
रामनारायणजी

(डेलनपुर)
गंगाबाई

(सरसी)
अमरदासजी
बाईरामजी
बाईरामजी
शोभारामजी

(पंचेवा)
गोविन्दरामजी

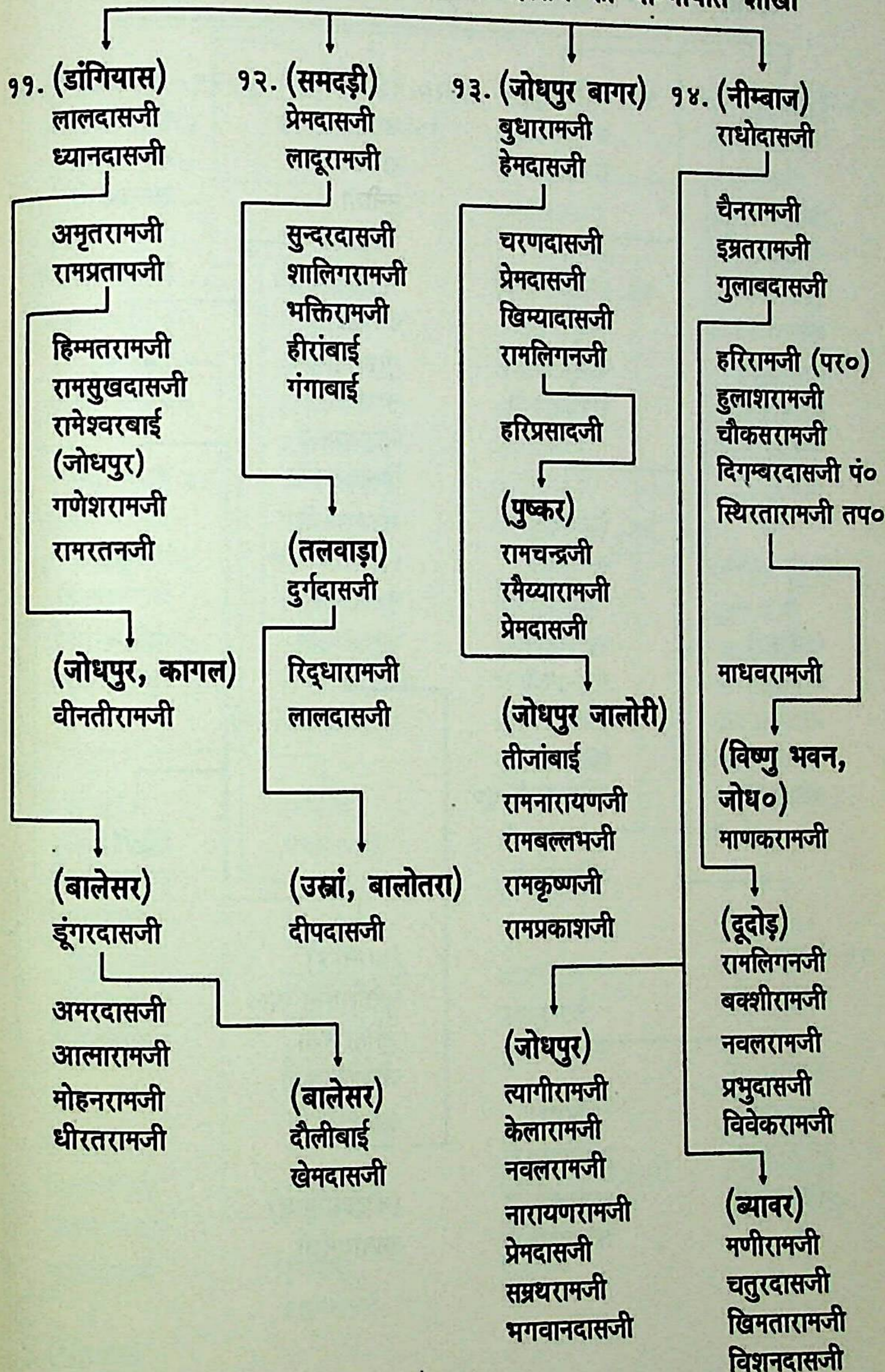
७. (कालाऊना)
ज्ञानदासजी
कृष्णदासजी
हरिकृष्णदासजी
जगरामदासजी
दिगम्बरदासजी
भक्तीरामजी
शिवरामदासजी
गणेशदासजी
नरायणदासजी
चिमनीरामजी सू०

८. (पाली)
निर्मलदासजी
बचनारामजी
बाईरामजी
गंगारामजी
नानकरामजी
रघुवरदासजी
भल्लारामजी
तुलसीदासजी
आदूरामजी
खिमतारामजी सू०
सुखरामदासजी
लक्ष्मणदासजी

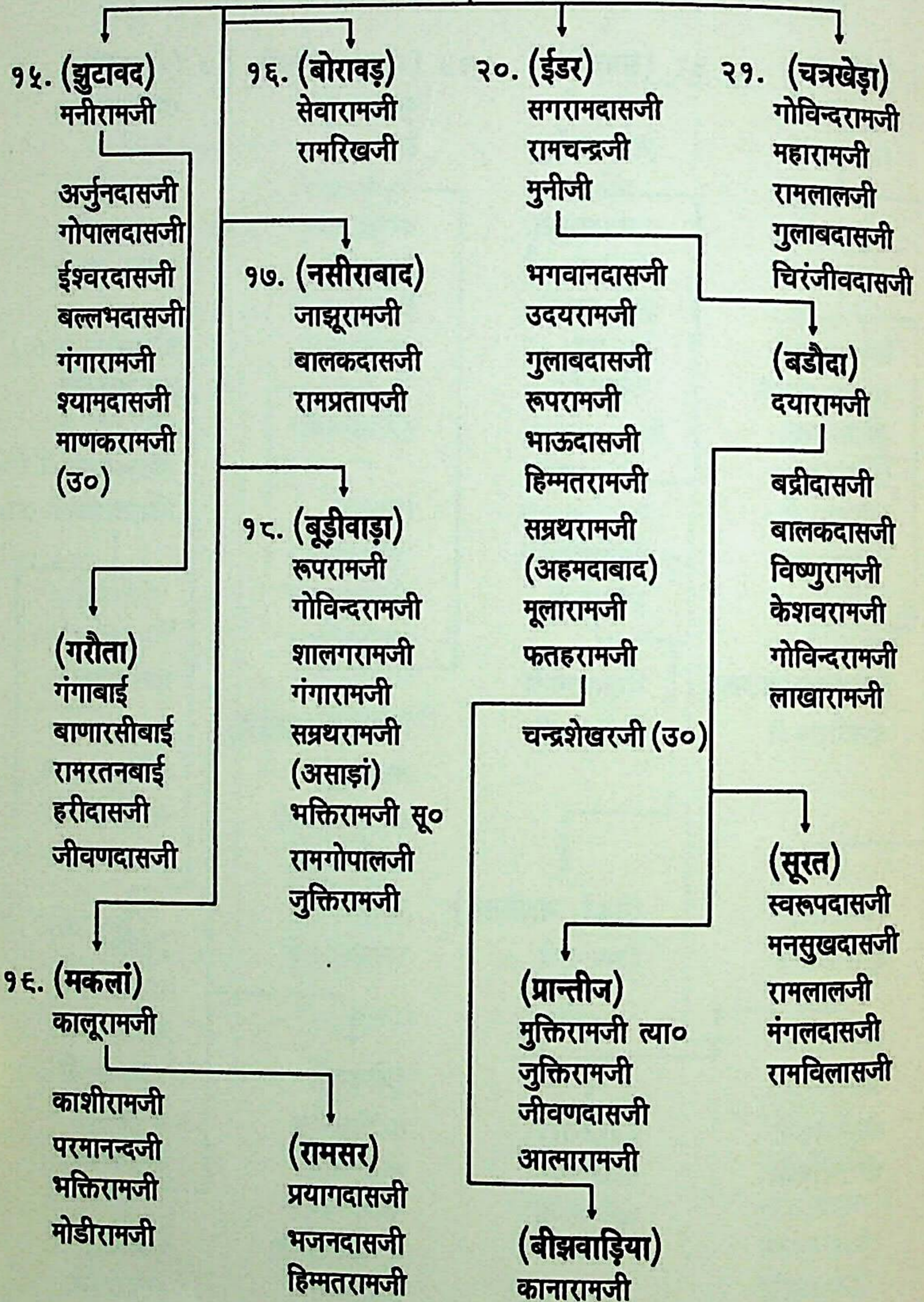
९. (अरटिया)
हरीदासजी
लच्छीरामजी
टीकूरामजी
रामलालजी
(बोयल)
जुक्तिरामजी
(बांसिया)
विष्णुरामजी

१०. (देवातड़ा)
बालूरामजी
जगरामदासजी
सरूपदासजी
रामप्रतापजी
हरसुखदासजी

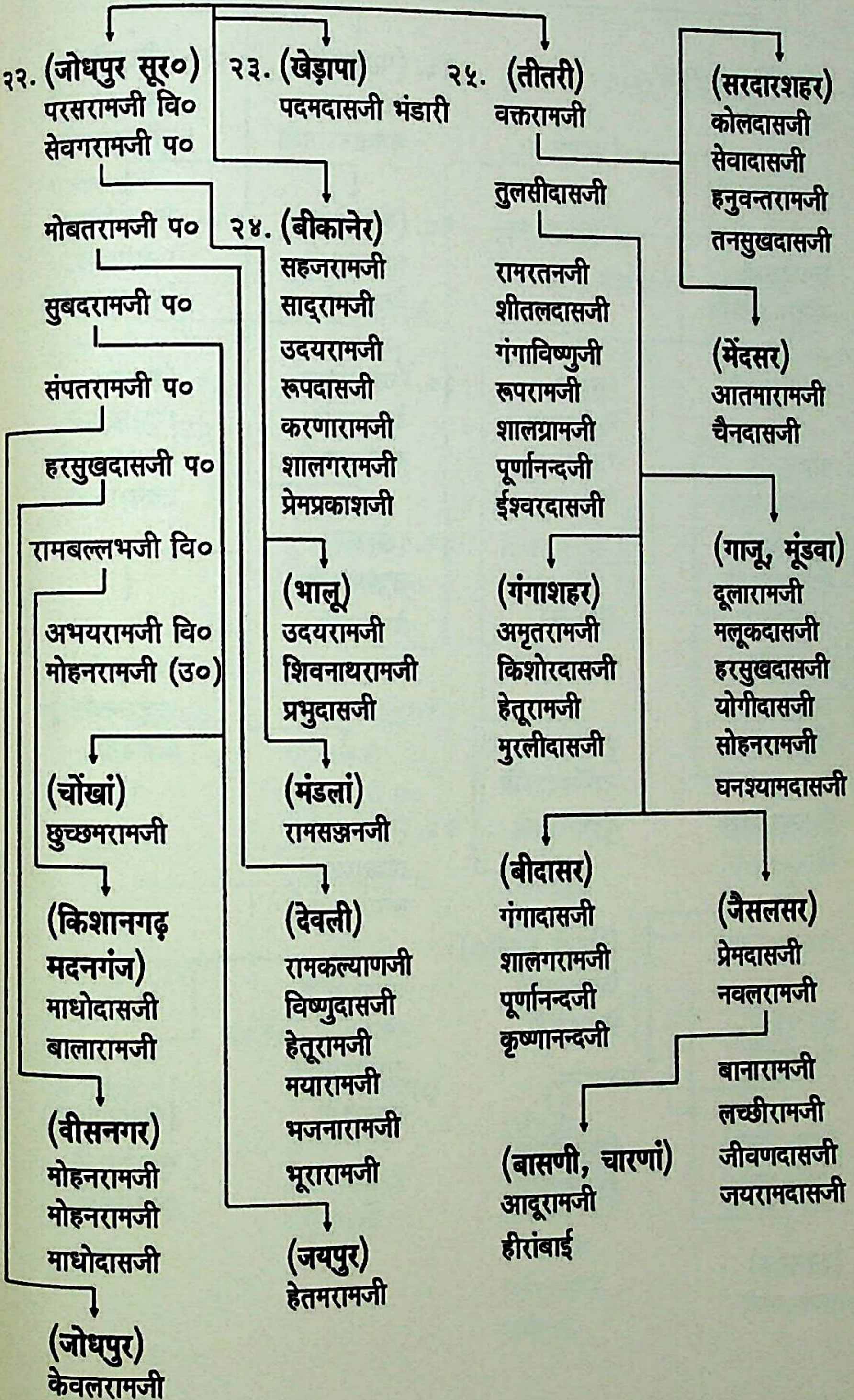
खेड़ापा पीठाचार्य [१] श्री रामदासजी महाराज की थाम्भायात शाखा



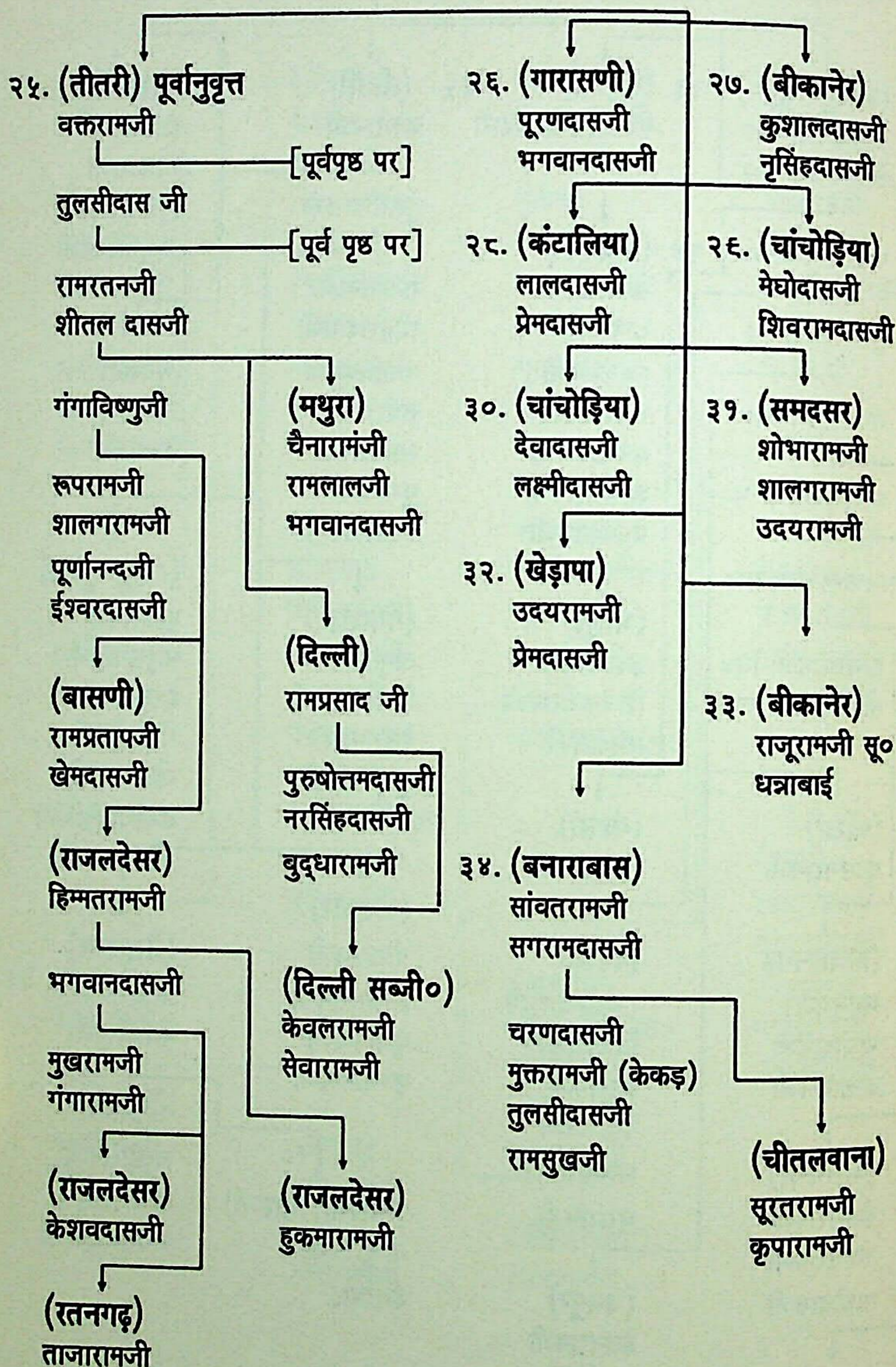
खेड़ापा पीठाचार्य [१] श्री रामदासजी महाराज की थाम्भायत शाखा



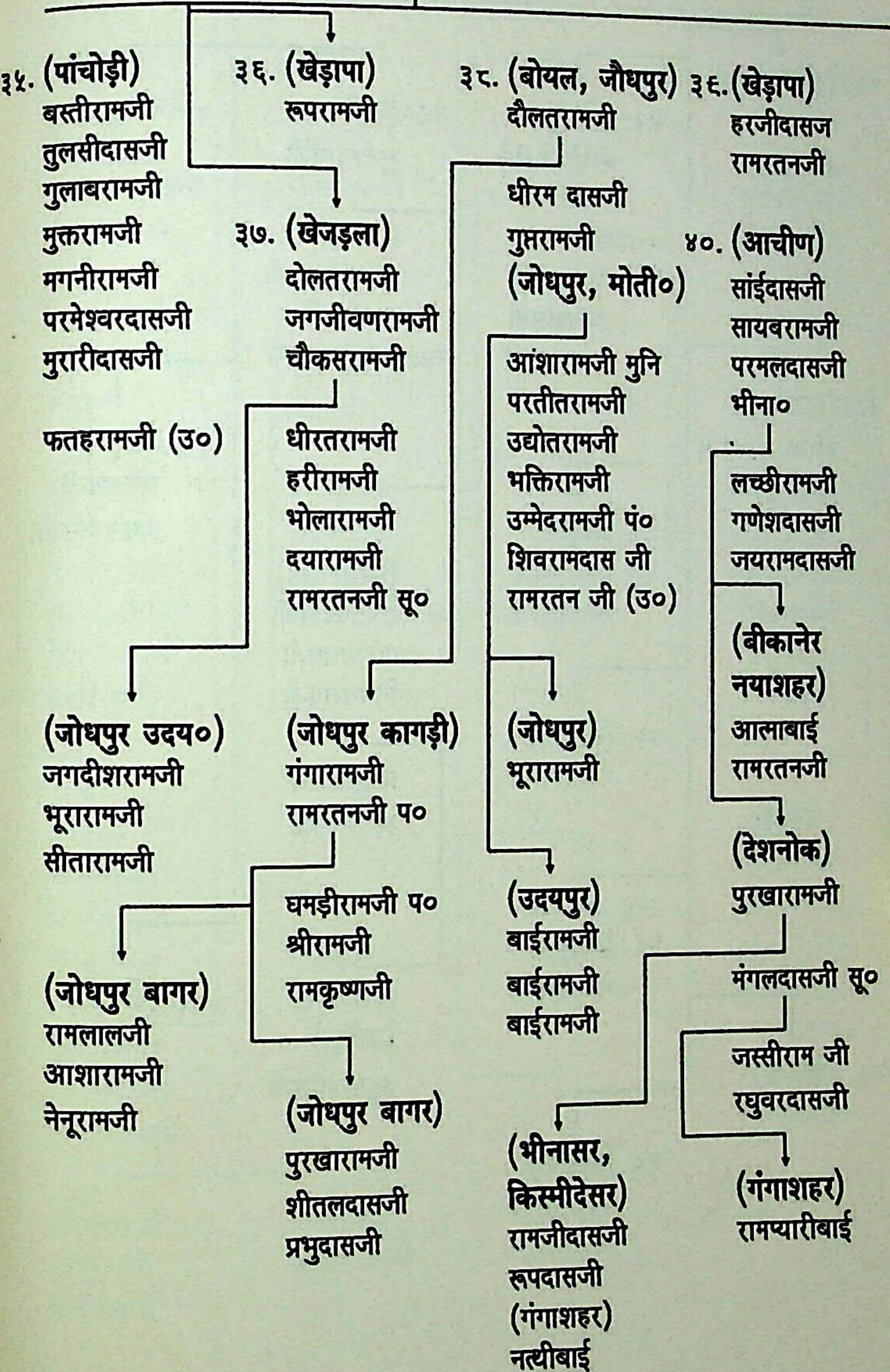
खेड़ापा पीठाचार्य [१] श्री रामदासजी महाराजकी थाम्भायत शाखा



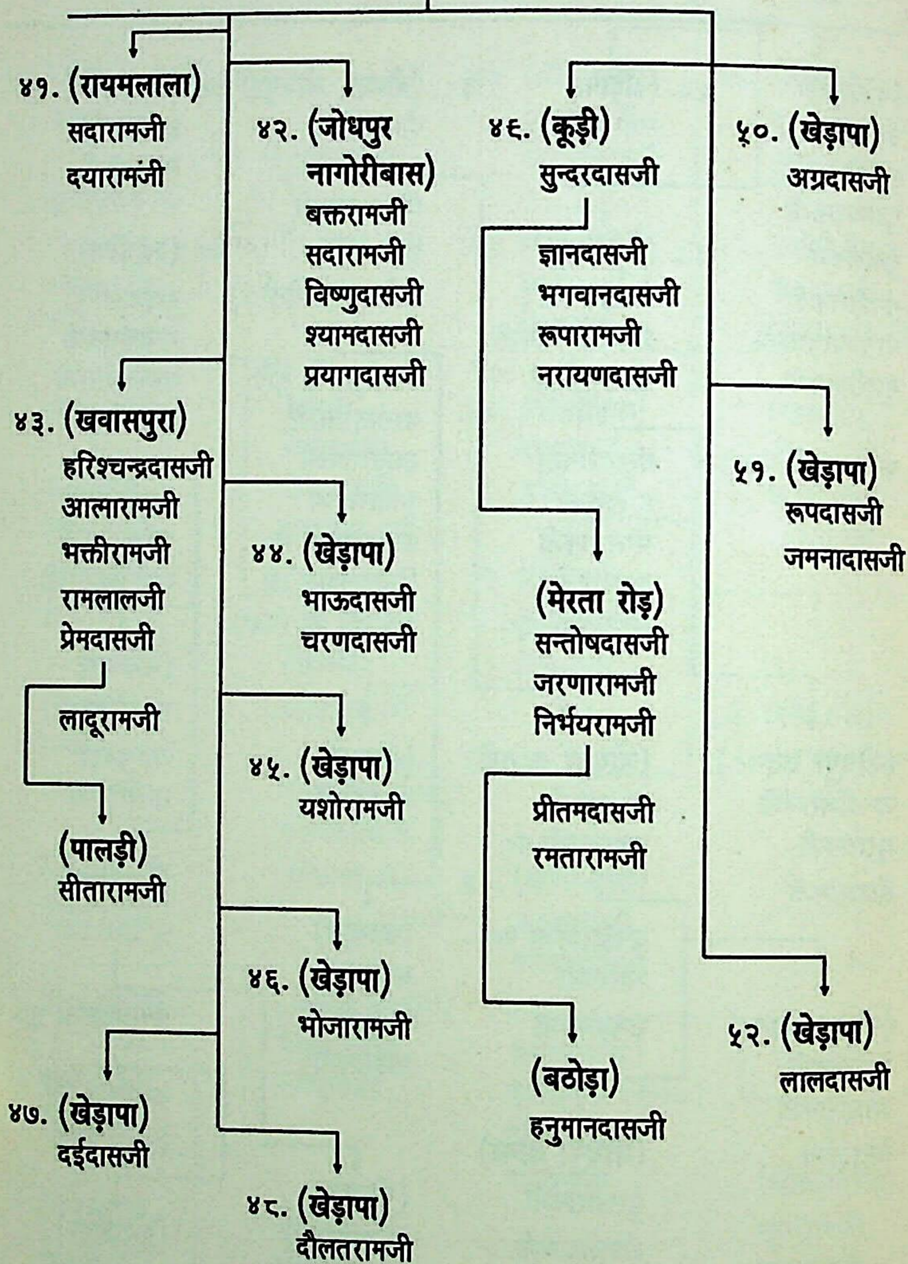
खेड़ापा पीठचार्य [१] श्री रामदासजी महाराजकी थाम्भायत शाखा



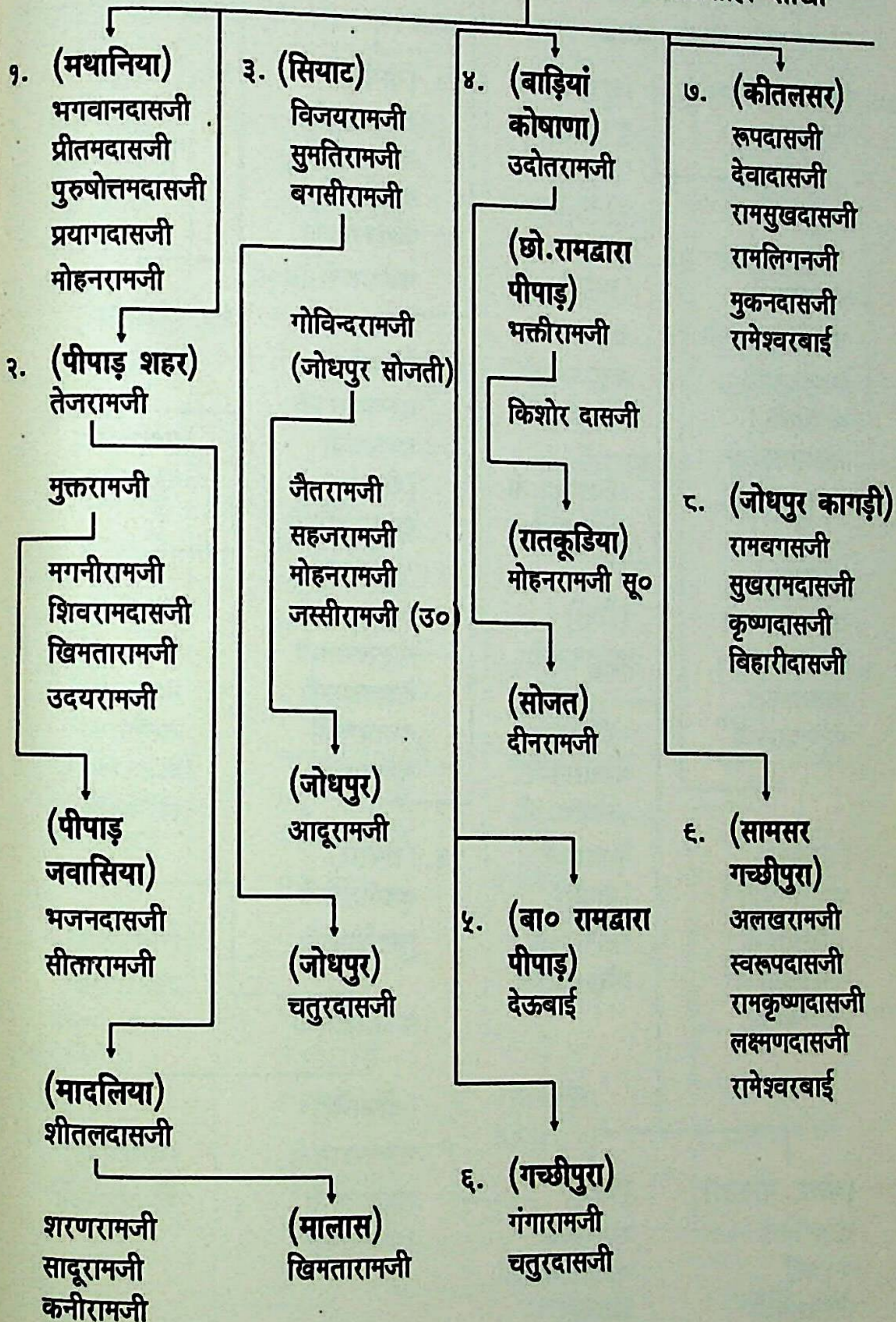
खेड़ापा पीठाचार्य [१] श्री रामदासजी महाराज की थाम्भायत शाखा



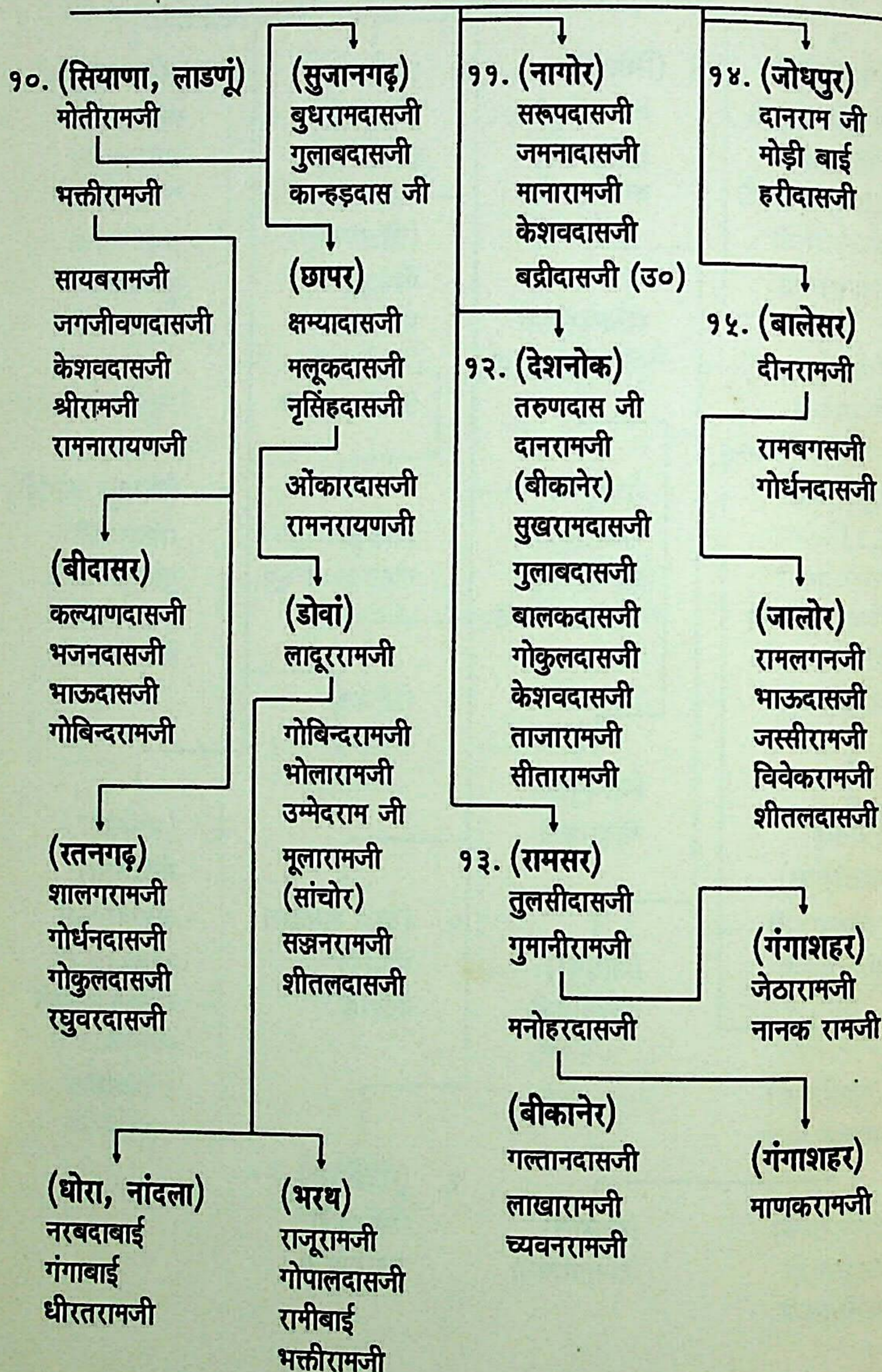
खेड़ापा पीठाचार्य [१] श्रीरामदासजी महाराजकी थाम्भायत शाखा

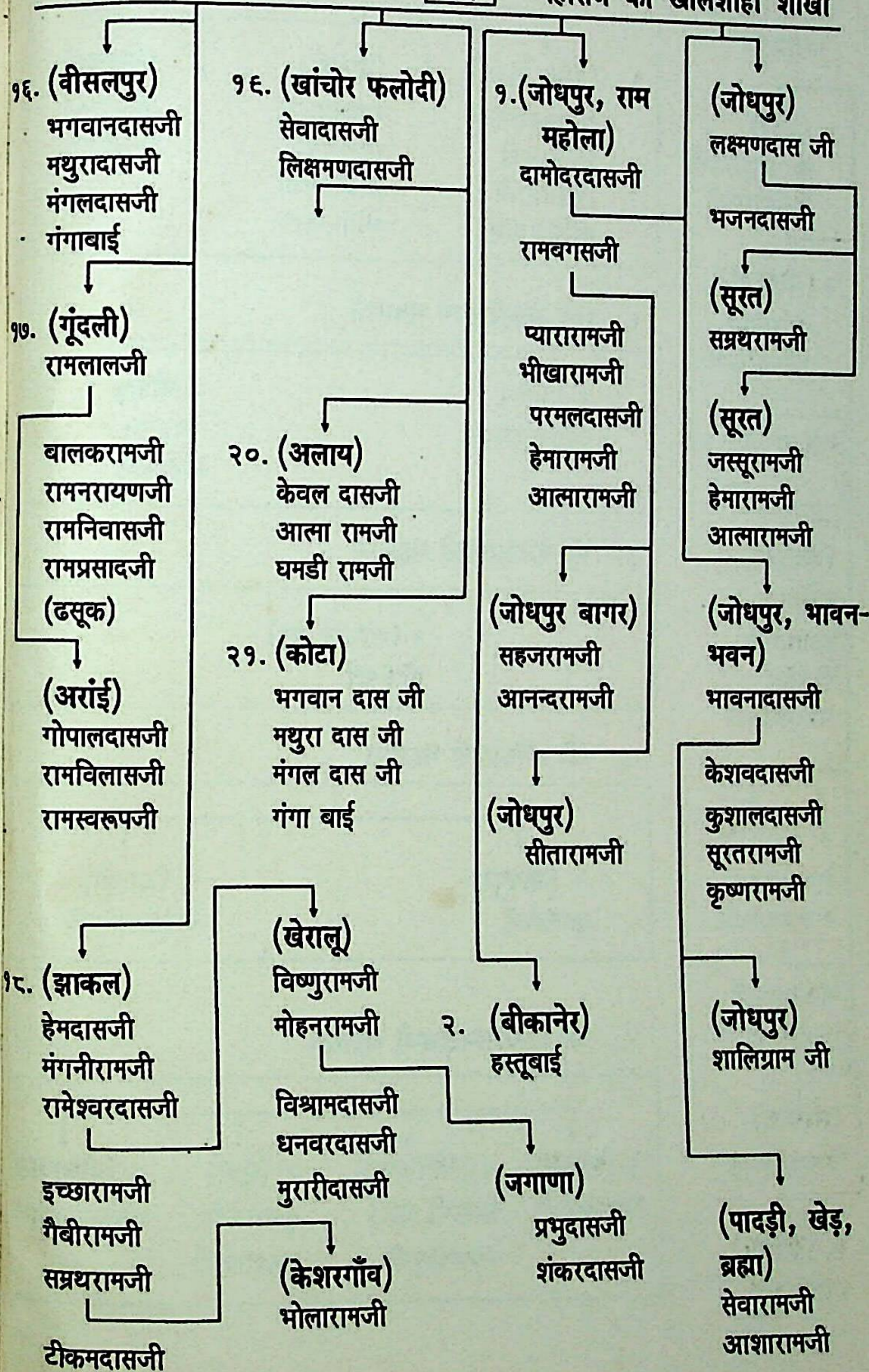


खेड़ापा पीठाचार्य [२] श्री दयालुदासजी महाराज की खालशाही शाखा



खेड़ापा पीठाचार्य [२] श्री दयालुदासजी महाराज की खालशाही शाखा





खेड़ापा पीठाचार्य [२] श्री दयालुदासजी महाराज की खालशाही शाखा
राम
खेड़ापा पीठाचार्य [३] श्री पूरणदासजी महाराज की खालशाही शाखा
१६. (वीसलपुर)
भगवानदासजी
मथुरादासजी
मंगलदासजी
गंगाबाई
१७. (गूंदली)
रामलालजी
बालकरामजी
रामनरायणजी
रामनिवासजी
रामप्रसादजी
(ढसूक)
(अरांई)
गोपालदासजी
रामविलासजी
रामस्वरूपजी
१८. (झाकल)
हेमदासजी
मंगनीरामजी
रामेश्वरदासजी
इच्छारामजी
गैबीरामजी
सम्प्रथरामजी
टीकमदासजी
१६. (खांचोर फलोदी)
सेवादासजी
लिक्षमणदासजी
२०. (अलाय)
केवल दासजी
आत्मा रामजी
घमडी रामजी
२१. (कोटा)
भगवान दास जी
मथुरा दास जी
मंगल दास जी
गंगा बाई
(खेरालू)
विष्णुरामजी
मोहनरामजी
विश्रामदासजी
धनवरदासजी
मुरारीदासजी
(केशरगाँव)
भोलारामजी
१.(जोधपुर, राम महोला)
दामोदरदासजी
रामबगसजी
प्याराराामजी
भीखारामजी
परमलदासजी
हेमारामजी
आत्मारामजी
(जोधपुर बागर)
सहजरामजी
आनन्दरामजी
(जोधपुर)
सीतारामजी
२. (बीकानेर)
हस्तूबाई
(जगाणा)
प्रभुदासजी
शंकरदासजी
(जोधपुर)
लक्ष्मणदास जी
भजनदासजी
(सूरत)
सम्प्रथरामजी
(सूरत)
जस्सूरामजी
हेमारामजी
आत्मारामजी
(जोधपुर, भावन-भवन)
भावनादासजी
केशवदासजी
कुशालदासजी
सूरतरामजी
कृष्णरामजी
(जोधपुर)
शालिग्राम जी
(पादड़ी, खेड़, ब्रह्मा)
सेवारामजी
आशारामजी

खालशाही शिष्य शाखा-खेड़ापा पीठाचार्य

४. श्री अर्जुनदासजी महाराज

१. (नगर)
कल्याणदासजी
नृसिंहदासजी

२. (बीकानेर)
दुर्गदासजी
चरणदासजी
जय राम दास जी

(बीदासर, दड़ीबा)
बंशीरामजी
हीरांबाई
बालकदासजी

३. (पोकरण)
केशवदासजी
बालकदासजी
भजनदासजी
प्रभुदास जी

(खीचन्द)
परमलदासजी

४. (सांचोर)
रमतारामजी

५. (श्री हरलालदासजी महाराज)

१ (डीसा केम्प)
भगवानदासजी
मोतीरामजी
जुक्तीरामजी
मुरारीदासजी

२ (सिरोही)
श्यामदासजी
रमतारामजी
जस्सीरामजी
मगनीरामजी

३ (जोधपुर)
खेतारामजी
(गवैय्या)

६. (श्री लालदासजी महाराज

१ भादरेज
रणछोड़दासजी

२ पीपाड़
केशरबाई
खम्याबाई

७. श्री केवलरामजी महाराज

१ (भोपाल गढ़)
भोलीबाई

८. श्री हरिदासजी महाराज

१ (जोधपुर)
कृष्णाबाई

२ (द्यावड़ी)
जगदीशरामजी

६. श्री पुरुषोत्तमदासजी महाराज

१ (माणसा)
निर्मलरामजी

२ (भोपालगढ़ बासणी चाः)
भजनदासजी

३ (झूठा)
पूनारामजी
रामप्रसादजी

४ (वीलावास)
घनश्यामदासजी